अष्टाचार्य गौरव गंगा



मुनि ज्ञान



प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, बीकानेर (राज.)

मूल्य –६५ रुपये

प्रथम सस्करण १६८८



मुद्रक

जैन आर्ट प्रेस
समता भवन, बीकानेर

अनुक्रमणिका

प्रकाशकीय

साधुत्व को पवित्र–पावन धारा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए बडे-बडे आचार्यों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भगवान् महावोर के वाद अनेक बार आगमिक धरातल पर क्रान्ति का प्रसग आया है, जिसका उद्देश्य श्रमण सस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने का रहा है। ऐसो क्राति धारा मे क्रियोद्धारक महान् आचार्य श्री हुक्मोचन्दजो म सा का नाम विशेष रूप से उभर कर सामने आता है। तत्कालोन युग मे जहा शिथिलाचार व्यापक तौर पर फैलता जा रहा था, शुद्ध साधुत्व को स्थिति विरल हो परिलक्षित होतो थी। बडे–बडे साधु भी मठो को तरह उपाश्रयो मे अपना स्थान जमाये हुए थे। चेलो के पोछे साधुता विखरती जा रही थी। ऐसे युग मे आचार्य श्री हुक्मोचन्दजो म सा ने उपदेशो से नहो, अपितु अपने विशुद्ध एव उत्कृष्ट सयममय जोवन से जनमानस को प्रभावित किया। आचार्य प्रवर केवल तपस्वी अथवा सयमी हो नहा थे वरन् श्रमण सस्कृति के गहरे अध्येता श्रुतधर थे। आपके जोवन का ही प्रभाव था कि हजारो स्त्री–पुरुष आपके चरण-सान्निध्य को पाने के लिए लालायित रहते थे। 'तिन्नाण तारयाण' के आदर्श आचार्य प्रवर ने योग्य मुमुक्षुओ को दोक्षित किया और जो देशव्रती बनना चाहते थे, उन्हे देशव्रती बनाया। इस प्रकार सहज रूप से हो चतुर्विध सघ का प्रवर्तन हो गया।

समुद्र मे जिस प्रकार दूर तक गगा का पाट दिखाई देता है वैसे ही जैन धर्म के समुद्र मे आचार्य प्रवर को यह धारा एकदम अलग-थलग सो परिलक्षित होने लगी। यहा से फिर साधुमार्ग मे क्राति घटित हुई। जो क्राति को धारा पश्चात्वर्ती आचार्यों से निरन्तर आगे वढी।

हमे वडी प्रसन्नता है कि इसी परम्परा के अष्टम आचार्य समता विभूति, विद्वद् शिरोमणि, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिवोधक परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालालजी म सा के सान्निध्य को आज हमे प्राप्ति हुई है। आचार्य प्रवर का व्यक्तित्व एव कर्तृत्व अनूठा व मह–नोय है। आपने एक साथ २५ दोक्षाए देकर सैकडो वर्षो के अतोत के इतिहास को प्रत्यक्ष कर दिखाया है। ऐसो एक नहो अनेक जिनशासन प्रभावक क्रातिया आचार्य प्रवर के सान्निध्य मे घटित हो रहो है। विशुद्ध सयम पालन के साथ–साथ आपके सान्निध्य मे आपके शिष्य–शिष्या रूप साधु–साध्वी वर्ग ने सम्यक्ज्ञान विज्ञान की दिशा मे भी आश्चर्यजनक विकास किया है।

प्रस्तुत कृति—**'अष्टाचार्य गौरव गंगा'**

आचार्य श्री नानेश के अन्तेवासो विद्वान् शिष्य पण्डितरत्न श्री ज्ञानमुनिजो के विस्तृत अध्ययन गम्भोर चिन्तन एव ऐतिहासिक अनुसधान का सुपरिणाम है। इसमे प्रारम्भ मे मुनिश्री ने साधुमार्ग और उसकी परम्परा का अनुशीलन करते हुए भगवान् महावीर के पश्चात् होने वाले निर्ग्रन्थ श्रमण परम्परा के महान् आचार्यो—सुधर्मा स्वामी से लेकर ७३ वे आचार्य श्री

लालचन्दजी म. सा. तक सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है । इन्ही आचार्य श्री लालचन्दजी म.सा के पट्टधर शिष्य महान् क्रियोद्धारक आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा जिनकी परम्परा के वर्तमान मे अधिकारी अष्टम आचार्य श्री नानालालजी म.सा हैं, जिनका सान्निध्य हमे प्राप्त है ।

इस ग्रन्थ के नाम के अनुरूप ही इसमे आठ आचार्यों–आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा, आचार्य श्री शिवलालजी म. सा आचार्य, श्री उदयसागरजी म. सा, आचार्य श्री चौथमलजी म सा, आचार्य श्री श्रीलालजी म सा, आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा, आचार्यश्री गणेशीलालजी म. सा., आचार्यश्री नानालालजी म. सा के गौरव की समुज्ज्वल जीवन गगा प्रवाहित हुई है । ग्रन्थ के लेखक श्री ज्ञानमुनिजी आगमज्ञ विद्वान् होने के साथ–साथ सस्कृत और हिन्दी के सफल कवि सुमधुर गीतकार एव उपन्यासकार भी हैं । प्रस्तुत ग्रन्थ मे मुनिश्री ने अष्टाचार्यों के सयमनिष्ठ जीवन और उत्कृष्ट साधना के प्रति अपनी अनन्य भक्ति और सादर विनय भावना प्रकट की है ।

इस पुस्तक का महत्त्वपूर्ण प्रतिपाद्य विषय है अष्ट आचार्यों के जीवन व्यक्तित्व, कर्तृत्व और सयम–साधना का विवेचन–विश्लेषण । मुनिश्री ने बडे श्रम अध्यवसाय और निष्ठा के साथ यत्र–तत्र बिखरी पडी सामग्री का आकलन कर उसे प्रामाणिकता के साथ रोचक और व्यवस्थित बनाकर प्रस्तुत किया है । ग्रन्थ को सर्वोपयोगी बनाने की दृष्टि से यथा स्थान परि–शिष्ट मे विविध सामग्री सकलित की गई है । धार्मिक क्राति के इतिहास के अध्येताओ के लिए यह ग्रन्थ अपना विशेष महत्त्व रखता है ।

शात क्राति के अग्रदूत स्वर्गीय आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा की स्मृति मे श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ ने रतलाम मे श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार की स्थापना की है । ज्ञान भण्डार मे अनेकानेक प्रकाशित एव हस्तलिखित ग्रन्थो का सग्रह हुआ है । हस्त–लिखित अप्रकाशित ग्रन्थो का सचयन कर उन्हे भी अ. भा. साधुमार्गी जैन साहित्य समिति सवर्जन हितार्थ प्रकाशित कर रही है । इसी सकल्प की क्रियान्विति मे इस कृति को भी श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार से प्राप्त कर प्रकाशित करने मे सघ हार्दिक सतुष्टि का अनुभव कर रहा है ।

पण्डित रत्न श्री ज्ञानमुनिजी ने इस कृति के माध्यम से उत्कृष्ट सयम–साधक महान् आचार्यों की जो प्रेरणादायी जीवन गाथा सर्व जनहितार्थ एव प्रेरणार्थ प्रस्तुत की है, इसके लिए सघ मुनिश्री का आभारी है । सत्य तथ्य को स्पष्ट करने हेतु आये चर्चनीय विषयो का दायित्व प्रकाशक का है । पडित रत्न श्री विजय मुनिजी ने 'अन्त स्फूर्त' के रूप मे प्राक्कथन लिखने की कृपा की, एतदर्थ हार्दिक आभार ।

आशा है यह कृति आत्म-क्राति एव जागृति मे प्रेरक सिद्ध होगी ।

चुन्नीलाल मेहता — अध्यक्ष
धनराज बेताला — मत्री
गुमानमल चोरडिया — सयोजक, साहित्य समिति

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर

सुश्रावक स्व. सेठ श्री मेघराजजी हीरावत

जिनकी स्मृति मे अर्थ सहयोग प्रदान किया गया है

श्री मेघराजजी हीरावत ने बीकानेर जिले के विख्यात मगरा क्षेत्र की पुण्य धरा पर बीठनोक ग्राम मे श्री लिखमीचन्दजी हीरावत की धर्मपत्नी श्रीमती तीजीबाई की कुक्षि से वि स. 1952 मे जन्म लिया था। आपके बड़े भाई श्री चुन्नीलालजी और दो बहिनो का उस जमाने के विचार से मर्यादित परिवार था। श्री मेघराजजी का धर्मपरायणा राजाबाई के साथ विवाह हुआ और स 1990 मे आपकी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। धर्मपत्नी के स्वर्ग-गमन के समय आपकी उम्र मात्र 38 वर्ष की थी, किन्तु आपने जवानी की इस वेला मे शादी का परित्याग कर दिया। उस समय तक आप सपरिवार देशनोक में रहने लगे थे। देशनोक विराजित तपस्वी मुनि श्री सूरज मलजी म सा. ने पत्नी के देहावसान के सन्दर्भ मे श्री मेघराजजी से पूछा–कैसे हैं ? तो उत्तर मे सहज भाव से बोले–सीख दे दी है।

यह आत्म अनुशासन आपके जीवन का सहज स्वभाव था। पत्नी के देहावसान से पूर्व ही आपने 'लिखमीचन्द चुन्नीलाल फर्म' से मर्यादा पूरी होते ही अपना हिस्सा निकाल लिया। आत्म सतोष और अपरिग्रह का यह उदात्त आदर्श आपने मात्र 33 वर्ष की वय मे समाज के समक्ष उपस्थित कर दिया था। परिजनो के फर्म से सम्बन्ध तोडने के प्रबल आग्रह-अनुरोधो के बीच भी आप अपने सकल्प पर अचल रहे। आपकी निर्णय और सकल्प की शक्ति अनूठी थी। फर्म से सम्बन्ध विच्छेद के साथ ही आपने अपना सब कुछ बड़े पुत्र को सौंप दिया और स्वयं के पास कुछ भी परिग्रह नही रखा। साधुवत् जीवन जिया।

आपके चार पुत्र सर्वश्री लूणकरणजी, तोलारामजी, रामचन्द्रजी और जतनमलजी हैं। चारो भाइयो मे राम-भरत सा प्यार है। पूरा परिवार सत्विचार और सत्सस्कार से ओतप्रोत है और आपके जीवन आदर्श से अनुप्राणित है। आपकी बहुओ को सैकडो थोकडे कठस्थ हैं। एक बार आदर्श श्रावक स्व सेठ श्री भैरोदानजी सेठिया ने परिवार के धार्मिक वातावरण और गहन ज्ञान पर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की थी।

स्व श्री मेघराजजी ने न केवल धार्मिक और व्यापारिक अपितु सामाजिक क्षेत्र मे भी आदर्श प्रस्तुत किए। उस जमाने की घोर रूढिवादिता के अन्धेरे में आशा का उजाला चमकाते हुए आपने अपने

परिवार मे पर्दा प्रथा की रूढि को तोडा। आपने भारतीय सस्कृति के आदर्श 'अतिथि देवो भव' को अपने जीवन मे ढाल लिया था। आप अतिथि सत्कार मे बेजोड थे। कभी भी कोई अतिथि आ जाता तो आपके पैरो मे घु घरू बन्ध जाते थे। आपसे कभी भी कोई भी मिलता तो मात्र धर्म-ध्यान की बात पूछते। व्यापार से निवृत्ति लेने के बाद आपने कभी पुत्रो तक को व्यापारिक परामर्श नही दिया। कभी सम्पत्ति पर ध्यान नही दिया। आप सच्चे अर्थों मे एक निष्काम और निस्पृह साधक थे। वर्षों से आपके चौविहार था।

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री नानालालजी म सा के आप अनन्य भक्त थे। साधु-साध्वियो की सेवा मे आप सर्वविध समर्पित थे। आप जिनशासन के आचार धर्म को अपने जीवन मे साकार करके दिखा देने वाले आदर्श सुश्रावक थे। आपके शुद्धाचार और गृहस्थ जीवन से समाज युग-युग तक प्रेरणा प्राप्त करता रहेगा।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ ने आपके श्रावकाचार के प्रति अपना सम्मान प्रकट करने और आपके निरभिमानी शासन समर्पित धर्मनिष्ठ जीवन से सम्पूर्ण देश के सुश्रावको-सुश्राविकाओ को परिचित व प्रेरित कराने के व्यापक उद्देश्य से अपने देशनोक अधिवेशन मे आपको अभिनन्दन पत्र भेंट कर गुणपूजा के अपने आदर्श को व्यवहार मे परिणत किया था।

आपके सुपुत्रो मे भी धर्मानुराग, शासन सेवा समाज और साहित्य सेवा के गुण कूट-कूट कर भरे हैं। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री लूणकरणजी हीरावत, श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ के उपाध्यक्ष तथा उनसे छोटे श्री तोलारामजी हीरावत वर्षों तक सघ कार्यसमिति के सदस्य रहे हैं व श्री रतनलालजी वर्तमान कार्यसमिति के सदस्य हैं। चारो भाई भजनानन्दी हैं और सत-सती वर्ग व सघ सेवा मे सदैव तत्पर रहते हैं। आपके पुत्रो ने आपकी स्मृति मे देशनोक मे स्व श्री मेघराजजी हीरावत स्मृति भवन का निर्माण किया है जो ज्ञान-ध्यान और साधना के साथ ही सामाजिक कार्यो हेतु भी प्रयुक्त होता है। अपने पिताश्री की स्मृति मे उनकी धार्मिक-वृत्तियो को ध्यान मे रखते हुए हीरावत बन्धुओ ने प्रस्तुत ग्रन्थ हेतु अर्थ सहयोग देकर ज्ञान पथ के पथिको को पाथेय प्रदान करने का सात्विक प्रयास किया है। वे साधुवाद और समाज की शुभाशसाओ के पात्र हैं।

अष्टाचार्य गौरव-गंगा (भाग १)

—मुनि ज्ञान

समर्पण



जिनका जीवन ही

एक स्वर्णिम इतिहास है

ऐसे

आचार्य परम्परा के महानतम श्रुतधर

ध्रुवनैष्ठिक क्रान्ति के उद्गाता

आचार्य श्री नानेश

जिन्होने मुझे

पतित-पावनी धारा मे

निमज्जित किया

उन्हीं के

कर कमलों

मे

-मुनि ज्ञान

मगलवार
१६-१०-१६८४
राजेन्द्र नगर, बोरीवली (पूर्व)

अन्तः स्फूर्त

साहित्य की अनेक विधाओ मे इतिहास लेखन की विधा भी महत्वपूर्ण रही है। इतिहास के आवृत तत्वो को खोज-खाज कर प्रस्तुत करना अत्यन्त दुरूह एवं श्रम साध्य है। ऐसे विषयो का सकलन-लेखन आज के युग मे महान् उपयोगी एव सार्थक सिद्ध होता है। इतिहास लेखन की यह परम्परा आज की नही अपितु प्राचीन रही है। इतिहासवेत्ताओ ने इतिहास लिखकर अतीत के अनेक पुरखो नर–पु गवो की स्मृति सहेज कर अनल्प उपकार किया है। इसी उपकृति की कडी मे एक महत्वपूर्ण कडी जुड़ी है—

अष्टाचार्य गौरव–गंगा:–

निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के उज्ज्वलतम चमकते सितारे, महान् क्रातिकारी आचार्य परम्परा मे अष्टाचार्यों का गौरव भी प्रख्यात रहा है। निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति पर जब–जब शिथिलाचार के काले बादल मडराए है तब-तब महामुनियो ने क्राति का विगुल बजाकर सस्कृति की सुरक्षा का साहसिक कदम उठाया है।

महातपस्वी, आचार्य वरेण्य पूज्यपाद श्री हुक्मीचदजी म.सा. से लेकर अद्यावधि तक के अष्ट आचार्य भगवतो ने जिस तरह श्रमण सस्कृति के ध्वज को सम्भाले रखा है, वह गौरव का विषय रहा है साथ ही श्रमण सस्कृति प्रेमियो के लिए आदर्श रहा है। पूज्य आचार्य भगवतो का यह तुमुल उद्घोष रहा है कि हम हमारे प्रयत्नो से अनन्य श्रमण सस्कृति की सुरक्षा अभिवृद्धि न कर सके तो कम से कम उसे रसातल तक पहुचाने के प्रयास तो न करें। हमारे प्रयत्न तो ऐसे होने चाहिए जिनसे श्रमण सस्कृति की अद्वितीयता मे चार चाद लगे। इन भावनाओ का मूल्याकन आज की विकट परिस्थितियो मे करना आवश्यक ही नही वरन् अनिवार्य बन गया है। आज के कई साधक आत्म साधना को छोडकर लोक रजन एव भौतिकी यान्त्रिक साधनो की अन्धाधु ध दौड मे भागते ही चले जा रहे हैं। युग-परिवर्तन के वातावरण मे आत्म परिवर्तन सशोधन के उद्बोधन को तिलाजली देने वाले स्वेच्छानुसार सयमीय मर्यादाओ मे परिवर्तन करने वाले साधको से क्या अपेक्षा की जाय कि वे युगीन चेतना को अध्यात्म का सम्यग् दिशा बोध दे सकेंगे ? अध्यात्मवादी कहलाने वाले स्वय भौतिकता के बन्धन मे जकडते चले जा रहे हैं। साधना के नाम पर दंभ, पाखण्ड एव विद्वेष को फैलाते जा रहे हैं। वे क्या तनावग्रस्त मानव समाज को तनाव मुक्ति एव आत्म शाति दे सकेंगे ?

ऐसी परिस्थिति मे दिव्य चरित्र आत्माओ के जीवन वृत्त, भटकती-भूलती जन मेधा को एक नई जागृति, नई स्फूर्ति, नई क्राति देने वाले बनेंगे। जिन दिव्य चरित्र निष्ठ आत्माओ ने हिमानी की भाति अटल रहकर श्रमण सस्कृति पर आये झझावातो का मुकाबला किया।

हर कोमत पर अपने सर्वस्व को न्यौच्छावर कर इसकी सुरक्षा की, मान-सम्मान, यश-कीर्ति की लोकैषणाओ से दूर, अति दूर रहकर स्वेच्छा से गृहीत नियम, मर्यादाओ का अक्षुण्ण रूप से पालन किया। सैद्धातिक अखण्डता को कायम रखते हुए श्रुत चरित्र की निर्मल मदाकिनी प्रवाहित करन वाले पुरुप युगाधार, युगावलम्ब ज्योतिर्धर आचार्य भगवतो से ही यह सस्कृति शोभायमान रही है। सस्कृति की शोभा श्री को बढाने मे विक्रम की १९वी शताब्दी के महान् क्रातिकारी विचारक, उद्भट विद्वान्, गम्भीर तत्व-विश्लेषक आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा का योगदान भी इतिहास का एक स्वर्णिम आलेख बन कर रहा है। आचार्यश्री जवाहर को जैन सस्कृति के महल का एक स्तम्भ भी कहे तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी आचार्यश्री जवाहर ने जो तत्कालीन विकट परिस्थितियो मे साधु समाज मे जो शिक्षा के आयाम खोले थे, वे वस्तुत बेजोड थे और उनकी साहसिक दूरदर्शिता के परिचायक थे। आचार्य प्रवर ने तात्कालिक समय की नब्ज को पहचानते हुए यह स्पष्ट उद्घोष किया था कि अगर साधु-समाज शैक्षणिक दृष्टि से कमजोर रहा तो आने वाला बुद्धिवादी वर्ग इसको रूढिवादी, अर्थहीन, परम्परा का वाहक आदि न जाने किन-किन सम्बोधनो से पुकारेगा ? यह ठीक है कि साधु चरित्रनिष्ठ रहे, चरित्र की न्यूनता या शिथिलता कतई पसन्द नही है। पर चरित्र के साथ ज्ञान की भी विराट्ता अपेक्षित है। चरित्र एक आख है तो ज्ञान दूसरी आख है। ज्ञान के विकास के लिए उन्होने अपने दो शिष्यो को वैतनिक अध्यापको से सस्कृत-प्राकृत साहित्य का अध्ययन करवाया, उस समय सारे समाज मे एक खलबली-सी मच गई। लोगो ने विरोध के स्वर भी बुलन्द किये, पर हिमानी की भाति अटल रहने वाले आचार्यप्रवर ने किसी की परवाह नही की। समाज को वास्तविक स्थिति से अवगत कराते रहे। इसी तरह आचार्यश्री जी ने तत्कालीन चली आ रही, अनेक मूढ मान्यताओ का भी विरोध किया विरोध ही नही किया बल्कि उनकी अर्थहीनता आगमो के धरातल पर प्रतिपादित की। अल्पारभ, महारभ, दया-दान, कृषि कर्म के सम्बन्ध मे युगो से चले आ रहे विवादो का तर्क पुरस्सर अनुभूतिपरक आगम मूलक समाधान प्रदान करके समाज को एक नई दृष्टि दी। जिससे तत्वज्ञ बुद्धिवादी मानस सदा-सदा के लिए उनका ऋणी रहेगा।

इस शिक्षा-रथ को और गति दी—गुरुणागुरु शात क्राति के जन्मदाता, महामनस्वी, पूज्य आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा –ने आचार्य देव के विराट् व्यक्तित्व एव कर्तृत्व को व्यक्त करना बुद्धि गम्य नही है। यह काम सूर्य को दीपक बताने के भाति होगा।

पूज्य गुरुदेव श्रमण सस्कृति के कट्टर हिमायती थे उन्होने श्रमण सस्कृति की रक्षार्थ अपने मान-सम्मान, पद-प्रतिष्ठा सब का परित्याग, बिना हिचक बिना झिझक कर दिया। इस क्रातिकारी कदम पर समालोचना करते हुए एक दैनिक गुजराती पत्र फूल छाब के सम्पादक ने लिखा—ऐवु मान-सम्मान पद प्रतिष्ठा पडखे मुकी ने सस्कृति नी सुरक्षा माटे जे पगला पाडवा मा आव्या ते खरेखर सस्कृति ना गौरव छे अने ऐतिहासिक कहेवाशे।

पूज्य आचार्य गुरुदेव स्वय एक प्रखर वाग्मी एव महान् विचारक रहे है। क्रातिकारी इस परम्परा के क्रांत पुरुष स्वर्गीय आचार्य देव के योग्यतम सुशिष्य वर्तमान आचार्य प्रवर ने शिक्षा रथ को प्रगति की दिशा मे आशातीत गतिशील किया है।

आचार्य प्रवर का सर्वतोमुखी व्यक्तित्व महान् प्रभावक रहा है। आपने अपने आराध्य गुरुदेव की अनन्य श्रद्धा भाव के साथ सर्वतोभावेन समर्पित रहकर उनके चरणो मे जिस ज्ञान

श्री को आत्मसात किया है। अनवरत आगम-रत्नाकर की गहराई से छुआ हुआ है, वह आज चमत्कृत कर देने वाला बना है। आचार्यश्रीजी ने अनेक आगम स्थलो की तथ्यात्मक, अनुभूति मूलक, तर्क पुरस्सर, वीतराग दर्शन से अविरुद्ध, सरल-सरल, सुबोध देशना-विवेचना, प्रस्तुत की हैं वे आपके अगाध ज्ञान की गहराई के परिचायक हैं। आपके द्वारा प्रस्तुत आचाराग की विवेचना को सुनकर अनेक प्रौढ विद्वानो ने मुक्तकठ से प्रशसा की है।

प्रखर विद्वत्ता के साथ आपकी चरित्र निष्ठा भी अनन्य है। प्रभु महावीर के द्वारा प्रतिपादित आचार सहिता का विशुद्ध रीति से परिपालन करने एव करवाने मे आप सतत प्रयत्नशील रहते हैं। आपका चारित्रिक प्रभाव ही समझा जायेगा कि सैकडो मुमुक्षु आत्माओ ने अपने पतझड से वीरान जीवन मे सयम का वसन्त खिलाने मे आपश्री को महामाली के रूप मे स्वीकृत किया, अनगढ जीवन पत्थर को तराशने-सजाने के लिये आपश्री को कुशल शिल्पी के रूप मे चयनित किया।

साथ ही आपने गृहीत मर्यादाओ मे मजबूत रहकर मालव प्रात की धरा पर फैले दलित पतित शोषित मानव कल्याण का महान् कार्य किया। आज वे हजारो मानव 'धर्मपाल' सज्ञा से सम्बोधित किये जाते हुए जैनत्व का अनुपालन कर रहे हैं। आपके बौद्धिक अतिशय का ही चमत्कार समझिए कि आपने आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होते ही विश्व शाति का अमोघ उपाय 'समता दर्शन' व्याख्यापित किया। इसी कडी मे आपने व्यक्ति-व्यक्तित्व को तनाव से मुक्त कर आत्मशाति के लिए समीक्षण ध्यान-साधना पद्धति का सूत्रपात किया। आज सैकडो व्यक्ति उससे लाभान्वित हो रहे हैं। इसी तरह आपके अनुशासन तले, चतुर्विध सघ ने आशातीत सफलता के चरण छुए हैं जो सर्वतोमुखी प्रगति कर रहे है।

आपके अनुशासन का ही गजब प्रभाव है कि आपकी आज्ञा से ही साधु-साध्विया अपनी हर प्रवृत्ति मे सलग्न होते हैं– शिक्षा–दीक्षा, चातुर्मास, विहार आदि समग्र विषयो पर सर्वोपरि निर्णय आपका ही मान्य होता है। आपश्री वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि की भाति रहकर सदैव सघोन्नति के लिए चिन्तनशील रहते हैं।

क्रातिकारी इस आचार्य परम्परा की साध्विया भी शुरु से क्रातिकारी रही हैं जिसके नाम स्मरण से आज भी सहस्रो मस्तक उनके सयमी व्यक्तित्व एव कर्तृत्व के प्रति सादर प्रणत हो जाते है। शासन प्रभाविका विदुषी महासती श्री रगजी म श्री खेतूजी म. श्री मौताजी म. इसी तरह प्रवर्तनी महासती आनन्द कुमारी जी म महासती श्री सरदार कवरजी म आदि सैकडो धर्म वीरागनाओ ने इस क्रातिकारी समर मे अपना अद्भुत योगदान दिया, जिसको भुलाया नही जा सकता। इसी कडी मे वर्तमान आचार्य प्रवर की शिष्याओ के सम्बन्ध मे सोचा जा सकता है। आचार्यश्री जी के शिष्य वर्ग जैसे आज विकास यात्रा का मार्ग निरन्तर प्रशस्त कर रहे है, वैसे ही शिष्या समूह भी द्रुत गति से विकसित हो रहा है, आचार्यश्री जी की अनेक शिष्याए गम्भीर विचारिका, प्रखर व्याख्यात्री एव कुशल प्रभाविका के रूप मे उभर कर आ रही हैं। साहित्य के क्षेत्र मे भी आशा की किरणें उभरेंगी ऐसा विश्वास है। यह सब आचार्यश्री के कुशल अनुशासन एव गहरी सूझ–बूझ का ही परिणाम है।

आचार्यश्री ने अपने अनुशासन मे कभी अनुसरणात्मक पद्धति को महत्त्व नही दिया है। आपश्री सदा यह चाहते रहे हैं कि जो कुछ हो वह स्वत स्फूर्त हो। इधर-उधर की नकल

या अनुसरण कतई स्वय का विकास नही करने देता । स्वय की प्रतिभा से कुछ प्रादुर्भूत होगा चाहे वह दिखने मे स्वल्प हो पर सही माने मे ठोस होगा और समाज मार्ग दर्शन करने वाला, नई चेतना लाने वाला होगा ।

यही कारण है आज जो कुछ भी नजारा नजर आ रहा है उसके पीछे आचार्य प्रवर का मूलभूत योगदान रहा है । वीज से लेकर विराट् वृक्ष तक की यात्रा का श्रम स्वय पूज्य गुरुदेव का ही है । दिव्य चेतना से निकलने वाला आलोक भी दिव्य होगा इसमे कोई सशय नही ।

जैसे सूर्य से सम्वन्धित किरणें सुदूर तक अग-जग को प्रकाशित करती हैं, किरणो के इस प्रकाश मे मूलभूत हेतु सूर्य ही होता है । सूर्य के विना किरणें स्वय प्रकाशमान नही हो सकती । वैसे ही आचार्य देव रूपी दिव्य सूर्य की प्रकाश किरणें शिष्य-शिष्याए साहित्य जगत् को प्रकाशमान कर रही हैं और करेगी, ऐसी आशा है ।

अष्टाचार्य गौरवगगा के प्रणयनकर्त्ता विद्वद्वर्य उदीयमान व्यक्तित्व श्री ज्ञान मुनि जी ने क्रातिकारी महापुरुषो के जीवन वृत्त को अत्यन्त श्रम पूर्वक खोजकर व्यवस्थित रूप से उभारने का सुप्रयास किया है । वस्तुत यह स्तुत्य है । एक लम्वे अर्से से चली आ रही कमी की पूर्ति इससे हुई है । मुनिश्री का सक्षेप मे परिचय होगा—अष्टाचार्य गौरव गगा के एक दिव्य चारित्र महामहिम आचार्य देव श्री नानेश के सान्निध्य में दीक्षित, उन्ही के द्वारा शिक्षित, अनुशासित एवं विकसित यह पुष्प महकता हुआ अग-जग मे अपनी सुवास महका रहा है ।

मुनिश्री ओजस्वी प्रवक्ता हैं साथ ही नव नवोन्मेषिनी प्रतिभा के धनी भी हैं । आप इसके पूर्व अष्टाचार्यों की जीवन झलक 'अष्टाचार्य एक झलक' के नाम से सस्कृत काव्य के रूप मे प्रस्तुत कर चुके हैं । मुनिश्री का परम सौभाग्य है कि उन्होने आचार्यश्री नानेश के श्री चरणो मे अपने जीवन का रथ १३ वर्ष की वाल्यवय से ही समर्पित किया है और शीघ्र ग्राही बुद्धि वल के आधार पर श्री साधुमार्गी परीक्षा वोर्ड की सर्वोच्च परीक्षा रत्नाकर को केवल १८ वर्ष की अत्यन्त लघु वय मे उत्तम अको से उत्तीर्ण कर अध्यात्म शिक्षा मे वरीयता प्राप्त की । सघ की विरल विभूतियो मे आप एक हैं । सघ को आपके व्यक्तित्व से वहुत कुछ आशा है । मुनि श्री की ससार पक्षीया भगिनी श्री ललिता श्री जी भी दीक्षित हुई है जो कि ओजस्विनी प्रख्यात्री एव विदुषी साध्वीजी है । उन्होने भी रत्नाकर परीक्षा उच्च अकों मे उत्तीर्ण कर शासन गौरव मे वृद्धि की है ।

वैसे मैं और मुनिश्री सह वैरागी एव सहपाठी, पूज्य धायमातृ पद विभूषित कर्मठ, सेवाभावी, शासन प्रभावक श्री इन्द्रचन्दजी म सा के सान्निध्य मे रहे हैं । पूज्य महाराजश्री का भी हम वच्चो को इस योग्य वनाने मे असीम उपकार रहा है । विद्वान् मुनिश्री के इस उपक्रम से जैन जगत् लाभान्वित होगा । ऐसी शुभाशसा है ।

—मुनि विजयकुमार

पर्युषण
२५ अगस्त १९८४
राजेन्द्र नगर, वोरीवली (पूर्व)
वम्वई

साधुमार्ग और उसकी परंपरा

दुग्ध के साथ धवलता कबसे चली आ रही है ?
अग्नि के साथ उष्णता का सम्बन्ध कब से है ?

इन विषयो की प्रादुर्भूति के विषय मे कुछ भी नही कहा जा सकता । जब से दुग्ध है, तभी से उसकी धवलता है । जब से अग्नि है तभी उसके साथ उष्णता का सम्बन्ध बना हुआ है । ठीक इसी प्रकार जब से भू, तोय, अनल, अनिल आदि प्राणी समूह एव जड तत्त्व चले आ रहे हैं, तभी से धर्म एव सस्कृति भी चली आ रही है ।

पृथ्वी आदि मूलभूत तत्त्व, अनादि काल से चले आ रहे हैं और अनन्तकाल तक चलते रहेगे । आविर्भाव-तिरोभाव हो सकता, सर्वथा प्रणाश नही । धर्म एव सस्कृति का स्वरूप भी यही है । धर्म भी अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्तकाल तक चलता रहेगा । धर्म का भी क्षेत्र-काल की दृष्टि से ह्रास-उत्थान हो सकता है, सर्वथा अभाव नही ।

इस दृष्टिकोण से धर्म की अनादिता को ऐतिहासिक तटबधो से अनुबधित नही किया जा सकता । ऐतिहासिक दृष्टि, धर्म की अनादि शाश्वत सत्ता को स्पष्ट नही कर सकती । तथापि सामान्य जन-मानस, धर्म की प्राचीनता अर्वाचीनता के लिये ऐतिहासिक तथ्यो को, अधिक महत्त्व प्रदान करता है ।

इसी दृष्टि से साधुमार्ग के ऐतिहासिक तथ्यो पर कुछ बतला देना उपयोगी होगा ।

जैन दर्शन मे प्रवहमानकाल की अनवरत परिक्रमा का उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल, षट् आरक के रूप मे विभाजित किया है । प्रथम तीन काल खण्डो के व्यतीत होने पर भोगभूमिज व्यवस्था के बाद कर्म भूमिज जीवन निर्वाह की प्रणाली के प्रारभ होने पर तीर्थकर महाप्रभु ऋषभदेव ने जनमानस का ध्यान, साधुमार्ग की परपरा की ओर आकर्षित किया । अत इस काल चक्र की अपेक्षा ऋषभदेव भगवान् साधुमार्ग की परपरा के उद्गाता कहे जाते हैं । तदनन्तर उत्तरवर्त्ती प्रभु अजिननाथ से प्रभु महावीर तक के सभी तीर्थकरो ने अपने-अपने शासनकाल मे साधुमार्ग का प्रतिपादन किया ।

नमस्कार महामत्र द्वारा यह, अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है । नमस्कार महामत्र समग्र जैन समाज को एक स्वर से मान्य है । इसे सपूर्ण आगमो का सार कहा जाता है । इससे भी प्रचलित जैन साधुमार्ग के रूप मे ही फलित होता है ।

नमस्कार महामत्र के पाच पद ये हैं—

❀ णमो अरिहताण

❀ णमो सिद्धाण

❀ णमो आयरियाण

❀ णमो उवज्झायाण

❀ णमो लोए सव्व साहूण

इन पाच पदो मे चार पद साधु के और एक पद सिद्ध भगवान् का है। पाचवा पद तो 'सव्व साहूण' की दृष्टि से साधु का है ही, किन्तु अवशेष द्वितीय पद से अतिरिक्त तीन पद भी साधु की कोटि मे ही आते है। साधु मे ही जब उपाध्याय योग्य विशेषता आती है, तब उसे उपाध्याय बनाया जाता है और जिस साधु मे आचार्य जितनी विशेषता आती है, उसे आचार्य बनाया जाता है, किन्तु जो साधु घनघनाती कर्म को क्षय करके केवलज्ञान प्राप्त कर लेता है, वह अरिहत पद मे आता है। उपाध्याय, आचार्य या अरिहत पद आ जाने से साधु पद चला नही जाता किन्तु इन पदो के मूल मे साधुत्व तो बना ही रहता है। इस बात का स्पष्टीकरण उत्तराध्ययन सूत्र के २० वे अध्ययन की पहली गाथा 'सिद्धाण च नमोकिच्चा सजयाण च भावओ' द्वारा भी किया गया है।

नमस्कार मत्र के पाच पदो को इस गाथा मे सिद्ध और सयति इन दो पदो मे ही सम्मिलित कर लिया है। अत इस दृष्टि से अरिहत भी मूल मे साधु-श्रमण होते हैं।

जिस प्रकार मनुष्य-मनुष्य एक होते हुए भी राष्ट्रपति, प्रधानमत्री, मुख्यमत्री आदि अलग-अलग पद पर होने पर उन्हे उन-उन पदो से सबोधित किया जाता है तथापि वे मूलत तो मनुष्य ही होते हैं। इसी प्रकार मनुष्य की तरह सामान्य रूप से अरिहतादि भी साधु ही हैं। किन्तु वे चार पदो की अपेक्षा सर्वोत्कृष्ट साधु है और ये सर्वोत्कृष्ट साधु ही अपने विशिष्ट ज्ञान के बल पर मोक्ष-मार्ग प्रतिपादित करते हैं। उन विशिष्ट साधु द्वारा मोक्ष-मार्ग प्रतिपादित होने से यह स्वत सिद्ध हो जाता है-साधु द्वारा निर्देशित मार्ग —'साधुमार्ग' ही होगा।

'साधो आगत मार्ग साधुमार्ग' साधु से जो मार्ग आया या साधु ने जो मार्ग बतलाया वह साधुमार्ग के रूप मे प्रचलित हुआ।

साधु के ही अपरनाम भिक्षु, निर्ग्रन्थ, श्रमण आदि होते हैं। इसीलिए आगमो मे भगवान् के प्रवचन एव स्वय भगवान् को श्रमण शब्द से सबोधित किया है यथा—"तएण सुवाहुकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स, अतिए धम्म सोच्चा, णिमम्म हट्ठ-तुट्ठे उट्ठाए-उट्ठेई, उट्ठित्ता जाव एव वयासी—सद्दहामिण भते णिग्गथ पावयण।" (सुखविपाक सूत्र)

उपर्युक्त पाठ मे भगवान् को श्रमण और उनके प्रवचन को निर्ग्रन्थ प्रवचन कहा है इस प्रकार के उल्लेख अन्य अनेक आगमो मे स्थान-स्थान पर उपलब्ध भी होते हैं। आगम मे तथा व्यावहारिक भाषा मे भी पहले श्रमण लगाते हैं जैसे कि—श्रमण भगवान् महावीर जिसकी

पुष्टि शास्त्रकार स्वय करते हैं। शास्त्रो मे श्रावक को श्रमणोपासक कहा है, भगवदोपासक नही। अत नमस्कार महामत्र से साधुमार्ग की अभिव्यक्ति निर्विवाद रूप से स्पष्ट हो जाती है। तेरापथ सघ की साध्वी सघमित्राजी के द्वारा लिखित 'जैन धर्म के प्रभावक आचार्य' नामक पुस्तक मे भी साधुमार्ग की प्राचीनता को स्पष्ट किया गया है।

जब सर्वाधिक प्राचीन साधुमार्ग ही रहा है तो यह जिज्ञासा सहज परिस्फुटित होनी है कि वर्तमान मे प्रचलित दिगम्बर, श्वेताम्बर, देरावासी, स्थानकवासी, तेरापथ आदि का आविर्भाव कब और किस प्रकार हुआ ?

जिज्ञासा के विस्तृत समाधान के लिये 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' ग्रन्थ द्रष्टव्य है। सक्षिप्त रूप मे इसका समाधान इस प्रकार है—

प्रभु महावीर के जन्म राशि पर भस्मगृह एव पचक काल के प्रभाव से इसमे उतार चढाव आना स्वाभाविक था। इसी प्रसग का कल्पसूत्र मे स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि साधु-साध्वियो की उदय-उदय पूजा नही होगी।

जप्पमिह चण से खुद्दाए भासरासी महग्गहे दो वास सहस्सठिइ समणस्स भगवओ महावीरस्स जन्मनक्खत्त सकते तप्पमिइ चणसमणाण णिग्गथाण णिग्गथीण य नो उदिए-उदिए पूजा सक्कोरपवत्तइ। (कल्प सूत्र)

प्रभु महावीर के निर्वाण होने के अनतर ६०० वर्ष तक साधुमार्ग निराबाध गति से चलता रहा है। किन्तु वीर निर्वाण की सातवी शताब्दी पूर्वार्द्ध मे एकान्त मान्यता के कारण साधुमार्ग की परपरा से एक शाखा विलग हुई जो शरीर पर वस्त्र नही रखने के कारण जो 'दिगम्बर' शब्द से प्रचलित हुई। दिगम्बर मत के प्रवर्तक शिवभूति अनगार थे। जो हठाग्रहवश वस्त्र छोडकर निकल पडे। इनकी बहिन उत्तरा भी साधुमार्ग मे प्रव्रजित थी, वह भी भाई के मोहवश निर्वस्त्र ही निकल पडी। किन्तु स्त्री का निर्वस्त्र शरीर बीभत्स लगने के कारण गृहस्थो ने उसे जबरन कपडे पहना दिये। बाद मे शिवभूति के कोडिण्य और कोट्टवीर दो शिष्य हुए और उनकी परपरा चल पडी।

दिगबर मत के विलग होने का समय वीर निर्वाण के ६०९ वर्ष बाद का बतलाया गया है। जैसा कि 'जैन धर्म के प्रभावक आचार्य मे बतलाया गया है—'वीर निर्वाण की सातवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे अविभक्त जैन श्रमण सघ श्वेताम्बर और दिगम्बर इन दो विशाल शाखाओं मे विभक्त हो गया। श्वेताम्बर मान्यता के अनुसार वीर निर्माण ६०९ मे दिगम्बर की स्थापना हुई।

इस मत का नाम निर्वस्त्र होने के कारण, (दिशा ही है अम्बर-वस्त्र जिसका) दिगम्बर प्रचलित हुआ तो इधर साधुमार्ग की अविरल धारा मे आगमानुकूल साधना करने वाले साधक जो कि श्वेत परिधान से युक्त थे। अत यहा से साधुमार्ग ही श्वेताम्बर (श्वेत ही है वस्त्र जिसका) नाम से प्रचलित हुआ।

यह श्वेताम्वर नाम इस समय साधुमार्ग का ही उपनाम था ।

वीर निर्वाण के सातवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे बारह वर्ष का भयकर दुष्काल पडा था, इस समय साधुमार्ग की वहुत क्षति हुई । अनेक श्रमण श्री भद्रवाहु स्वामी के साथ उत्तर भारत से दक्षिण भारत की ओर चले गये । किन्तु जो श्रमण अकालग्रस्त क्षेत्र को छोडकर नही गए, वही पर रह गए, वे साधक अपनी मर्यादाओ को अक्षुण्ण नही रख सके । जीवन-निर्वाह करने के लिये उन्होने अपनी मर्यादाओ मे तत्कालीन अनेक परिवर्तन कर डाले । जिसकी लम्बी चर्चा है । लेकिन इन परिवर्तनो के विस्तार से आगे चलकर भगवान् के पगलिये एव मूर्त्ति का प्रसग भी उपस्थित हुआ ।

यह वही प्रसग था, जिससे श्वेताम्वर साधुमार्ग दो विभागो मे विभक्त हो गया । जो मदिर मे आस्था रखने वाले थे, वे मूर्त्तिपूजक के नाम से प्रचलित हुए । इसकी उद्भूति का समय वीर निर्वाण के ६९० वर्ष वतलाया जाता है । किन्तु वीर निर्वाण ८८२ से इनका स्पष्ट रूप से विभक्तीकरण हो गया था ।

जैसा कि 'जैन धर्म के प्रभावक आचार्य' मे लिखा है—

'श्वेताम्वर परम्परा का मुनि समुदाय–वीर निर्वाण ८८२ मे दो भागो मे स्पष्ट रूप से विभक्त हो गया था । एक पक्ष चैत्यवासी सप्रदाय के नाम से और दूसरा पक्ष सुविहितमार्गी के नाम से प्रसिद्ध हुआ । चैत्यवासी मुक्त भाव से शिथिलाचार का समर्थन करने लगे थे । चैत्यवासी को देरावासी भी कहा जाने लगा । किन्तु जो साधु वीतराग की आज्ञा के अनुसार आचरण-प्ररूपण करते चले आ रहे थे, उनकी क्वचित् सुविहित मार्गी एव स्थानकवासी के नाम से प्रसिद्धि हुई । इस प्रकार दक्षिण भारत मे स्थानकवासी या सुविहितमार्गी के नाम से साधुमार्ग का प्रवाह चलता रहा और इधर उत्तर भारत मे यति समाज का प्रावल्य वना रहा ।

कालान्तर मे शिथिलाचारिता के वीच लोकाशाह ने क्रान्ति की आवाज उठाई । किसी घटना विशेष के होने पर लोकाशाह ने आगमो का गभीर अध्ययन किया । जिससे आपके अन्तर्चक्षु खुल गए । अपने धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझा और उसका खुलकर प्रचार-प्रसार करना प्रारभ कर दिया । 'पढे सूत्र तो मरे पूत्र' की तत्कालीन भ्रान्त मान्यता को आपने शास्त्रीय उद्धरण से खडित कर सत्य के आलोक से जन-मन को आलोकित करना प्रारभ कर दिया । यही वह समय था जव वीर प्रभु की जन्मराशि पर लगे भस्मग्रह की परिसमाप्ति हो चुकी थी ।

इस प्रकार उत्तर भारत मे पुन लोकाशाह ने क्रान्ति का शखनाद फूका, जिससे साधुमार्ग का त्वरित गति से प्रचार प्रसार होने लगा । जिससे सप्रेरित होकर अनेक भव्यात्माओ ने भगवती दीक्षा अगीकार की, जो कि (२२) वाईस सिंगाडो मे विभक्त होकर ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए साधुमार्ग का प्रचार प्रसार करने लगे ।

दूरस्थ क्षेत्रो मे विचरण होने मे तथा एक-दूसरे के साथ विशेष सपर्क स्थापित नहीं हो पाने के कारण, अलग-अलग दीक्षाएं होते रहने से, अलग-अलग वाईस समूह का विस्तारीकरण हो जाने से वे ही वाईस सिंघाटक, वाईस सप्रदाय या वाईस टोले के रूप मे प्रचलित हुए ।

तत्कालीन पूज्य श्री धर्मदासजी म सा की सप्रदाय बाईस विभागो से विभक्त होने से २२ सप्रदाय या टोला नाम प्रचलित हुआ, ऐसा भी उल्लेख मिलता है ।

यति समाज की ओर से उन्हे कई उपसर्ग भी दिये गये । ठहरने के लिये मकान उपलब्ध नही होने पर कोई साधु सिंगाडा एक टूटे-फूटे खडहर मकान मे ठहर गया । जिसे तत्कालीन भाषा मे ढूढा भी कहा जाता था । इस ढूढे मे ठहर जाने से साधुमार्गी सतो को 'ढु ढिया' के नाम से भी पुकारा जाने लगा ।

अत स्थानकवासी, बावीस सप्रदाय, बावीस टोला और ढू ढिया साधुमार्ग के ही अपर नाम हैं ।

लोकाशाह ने कोई नया धर्म नही चलाया था, अपितु साधुमार्ग को विकसित करने मे अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया । इस प्रकार अनेक सकटो को सहन करता हुआ, उपनामो से प्रसिद्धि को प्राप्त करता हुआ 'साधुमार्ग' आज भी अनवरत प्रवाहित हो रहा है ।

वीर निर्वाण सवत् २२८० के आस-पास आचार्य श्री रुघनाथजी म. सा के शिष्य कठालिया ग्राम के श्री भीखणजी स्वामी ने दयादान के मूलभूत सिद्धान्त की उत्थापक मनकल्पित प्ररूपणा करना प्रारभ कर दिया । बहुत कुछ समझाने पर भी जब वे नही माने तो आचार्य श्री रुघनाथजी म सा ने भीखणजी स्वामी को अपने सघ से बहिष्कृत होकर इन्होने नये पथ की स्थापना की, जो कि 'तेरह पथ' के नाम से समाज के समक्ष आया ।

इस प्रकार 'साधुमार्ग' अनेक सप्रदाय, पथ, मत मे विभक्त होता हुआ भी मूलभूत रूप मे साधुमार्ग आज भी अपने अक्षुण्ण अस्तित्व के साथ निरन्तर गतिमान है । जिस साधुमार्ग मे अभिनव क्रान्तिया घटित हुई हैं और आज भी घटित होती जा रही है वर्तमान मे साधुमार्गी सघ के एकमात्र अनुशास्ता आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य मे एक साथ सपन्न २५ दीक्षाओ ने सैंकडो वर्षों के अतीत इतिहास को प्रत्यक्ष कर दिखाया है । जिनके कुशल नेतृत्व को पाकर साधुमार्ग निरन्तर श्रेयस् की ओर गतिशील है । इसीलिये प्रभु ने पूर्व मे फरमा दिया था कि मेरा शासन २१ हजार वर्ष पर्यन्त चलता रहेगा ।

"जम्बू दीवेण भते" दोवे भारएवासे इमीमे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाण केवत्तिय काल तित्थे अणु सिज्जस्सइ ?

गोयमा-जम्बूद्दीवे भारएवासे इमोसे ओसप्पिणीए मम एगविसे वास-सहस्साइ तित्थे अणुसिज्जस्सई (भगवती सूत्र. श २० ३, ६)

महाविदेह क्षेत्र की अपेक्षा से तो साधुमार्ग अनादिकाल से अनवरत रूप मे गतिशील है और अनन्तकाल तक अक्षुण्ण रूप तक चलता रहेगा । किन्तु 'भगवती सूत्र' के उपर्युक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि जम्बूद्वीप के भारत क्षेत्र मे भी २१ हजार वर्ष तक साधुमार्ग अनवरत गतिशील रहेगा ।

प्रभु महावीर के पश्चात् इस साधुमार्ग की धारा को अनवरत रूप से प्रवाहित करने वाले धर्म-धुरधर, अनेको महान् आचार्य हुए है सक्षिप्त निदर्शन करना उपयोगी होगा ।

भगवान् महावीर के वाद अब तक के आचार्य भगवतो की गुर्वावली इस प्रकार है—

भगवान् महावीर के निर्वाण होने के वाद श्री गौतम स्वामी और श्री सुधर्मा स्वामी दो गणधर ही अवशेष रहे थे । शेप नव गणधर प्रभु के पहिले ही मोक्ष पधार चुके थे । जिस रात्रि को भगवान् महावीर मोक्ष पधारे, उसी रात्रि गौतम स्वामी ने घनघातिक कर्म क्षपित कर केवल ज्ञान-दर्शन प्राप्त किया था । केवली आचार्य पद पर नही आते । अत श्री सुधर्मा स्वामी भगवान् महावीर के पाट पर विराजे ।

(१) सुधर्मा स्वामी

ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए सुधर्मा स्वामी राजगृह नगर मे पधारे तव ऋषभदत्त नाम का सुश्रावक अपने पुत्र जम्बूकुमार के साथ सुधर्मा स्वामी की सेवा मे उपस्थित हुआ । उपदेश सुनते ही जम्बूकुमार की सुषुप्त आत्मा जागृत हो उठी और वह आकर माता-पिता से दीक्षा स्वीकार करने की आज्ञा मागने लगा । अति आग्रह करने पर माता-पिता ने उसे समझाया कि जिन आठ कन्याओ के साथ तुम्हारा सवध निश्चित हुआ उनसे विवाह करने के वाद ही दीक्षा ले सकते हो । जम्बूकुमार को यह वात माननी पडी । कुमार का आठो कन्याओ के साथ विवाह हो गया । उन आठ पत्नियो समक्ष प्रथम रात्रि के दिन ही कुमार ने स्वय दीक्षा लेने का अभिप्राय रखा । पति और पत्नियो के वीच विविध प्रकार का वार्तालाप होने लगा । इसी समय एक प्रभवकुमार नामक राजपुत्र, जो राजगद्दी नही मिलने के कारण लूट-खसोट करता था । वह अपने पाच सौ चोरो के साथ इनके घर आ गया । लेकिन जम्वूकुमार के वैराग्यपूरित वचनो से इन सभी को वैराग्य हो आया । इधर कुमार की पत्निया तथा माता-पिता भी दीक्षा के लिए तत्पर हो गये । इस प्रकार जम्वूकुमार, उसकी आठ पत्निया, माता-पिता, प्रभवकुमार तथा उसके पाच सौ साथी सभी एक ही दिन दीक्षित हो गए ।

(२) जम्बू स्वामी

सुधर्मा स्वामी के पश्चात् जम्बू स्वामी पाट पर विराजित हुए । आपने अपनी दीक्षा व कैवल्य ज्ञान का ६४ वर्प पर्यन्त पालन किया । ८० वर्प की अवस्था मे मथुरा नगरी से मोक्ष पद प्राप्त हुए ।

(३) आचार्य प्रभव स्वामी

जम्बू स्वामी के वाद प्रभव स्वामी पाट पर विराजे । जिन्होने अपने ज्ञानोपयोग से राजगृहवासी शय्यभव भट्ट को आचार्य पद के योग्य समझकर प्रतिवोधित किया ।

(४) आचार्य शय्यभव स्वामी :

शय्यभव स्वामी चतुर्थ पाट पर विराजे। आपने जब दीक्षा ली थी उस समय आपकी पत्नी गर्भवती थी, उसके बाद में मनक नामक एक पुत्र हुआ। जिसने भी अपने पिता के पास दीक्षा ली। अपने श्रुतज्ञान द्वारा उसे अल्पायुष्क जानकर उसे अल्प-समय में ही शास्त्रो का ज्ञान कराने के लिये दशवैकालिक सूत्र का प्रणयन किया। शय्यभव स्वामी वीर निर्वाण ९८ में स्वर्गस्थ हुए।

(५) आचार्य यशोभद्र स्वामी :

आप तुगीयायन गोत्रीय क्रियाकाण्डी ब्राह्मण तथा प्रकाण्ड वेदाभ्यासी थे। तत्कालीन राजवश एव उसके मत्री वश पर आपका अच्छा प्रभाव था। विदेह मगध अगादि देशो मे आपने अहिंसा की धर्म-ध्वजा फहराई। आप २२ वर्ष तक गृहस्था-वस्था मे ६४ वर्ष तक सयमी जीवन मे और ५० वर्ष तक युगल प्रधान आचार्य पद पर रहे। कुल ८६ वर्ष की आयु पूर्ण कर वीर स १४८ मे स्वर्गवासी हुए। आप शय्यभव स्वामी के शिष्य थे। आपके प्रधान शिष्य महान् प्रभावक सभूति-विजय थे।

(६) आचार्य सभूति विजय

आप माठर गोत्री ब्राह्मण थे। आपका शिष्य परिवार विशाल था। आप आचार्य यशोभद्र के पाट पर विराजे। जैनाकाश के उज्ज्वल नक्षत्र मुनि स्थूलिभद्र आपके ही शिष्य थे। अनेक शिष्यो मे आपके १२ प्रमुख शिष्य थे। महामत्री सकडाल की सातो पुत्रिया, जो कि स्थूलिभद्र की बहिनें थी, वे भी आप ही के सान्निध्य मे दीक्षित हुई। आप ४२ वर्ष तक गृहवास, ४८ वर्ष तक साधु जीवन मे जिसके अ तर्गत (आठ) वर्ष युग प्रधान आचार्य पद पर सुशोभित हो, ९० वर्ष की आयु पूर्ण कर वी स १५६ में स्वर्गवासी हुए।

(७) आचार्य भद्रबाहु

आप प्राचीन गोत्रीय ब्राह्मण थे। दर्शन शास्त्र के उद्भट विद्वान, ज्योतिष शास्त्र में पारगत चौदह पूर्वधारी ज्योतिर्धर आचार्य थे। आपके एक भाई वराह मित्र भी महान् ज्योतिषाचार्य थे। आप दोनो ने आचार्य यशोभद्र स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण की थी।

श्रुत केवली परपरा मे पचम श्रुत केवली थे। आपके बाद कोई १४ पूर्वधारी नहीं हुआ। कहते है आप ही ने 'उपसर्ग-हरस्तोत्र' की रचना की। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त आचार्य भद्रबाहु स्वामी के अनन्य भक्त थे।

आपश्री के जीवन का एक उल्लेखनीय प्रसग है—पाटलीपुत्र मे जब आगमो की प्रथम वाचना पूर्ण हुई थी, तब स्थूलिभद्र की अध्यक्षता में श्रमण सघ ने ११ अगो का सकलन तो कर

लिया पर बारहवे अग का नही हो सका क्योकि उसके ज्ञाता मात्र भद्रबाहु स्वामी ही थे। और वे नेपाल मे ध्यान महाप्राण की साधना में तल्लीन थे, तब आचार्य श्री को बुलाने हेतु दो मुनियो को नेपाल भेजा गया। मुनियो ने जाकर आचार्य श्री के समक्ष सघ के विचार रखे तब भद्रबाहु स्वामी ने फरमाया कि महाप्राण ध्यान की साधना मे व्यस्त होने के कारण मैं आ नही सकता। तब सघ की ओर से दो मुनि पुन प्रेषित किये गये और उनके द्वारा आचार्य श्री को यह सदेश दिया गया कि संघ की आज्ञा न मानने पर क्या दण्ड होगा ?

आचार्य भद्रबाहु समझ गये और उन्होने कहा कि सघ की अवज्ञा करने वाले को बहिष्कृत कर देना चाहिये। मैं स्वय भी उस दण्ड का भागी हू।

तदनन्तर आपने विनम्रता से सन्देश कहलाया—सघ अगर योग्य मुनियो को अभ्यासार्थ यहा भेजने की व्यवस्था करे तो सघ की आज्ञा का पालन एव महाप्राण ध्यान साधना भी हो सकती है। यदि ऐसी व्यवस्था बन सके तो मैं महाप्राण ध्यान साधना को स्थगित कर भी उपस्थित हो सकता हू।

सघ इस विनम्र उत्तर से आचार्य श्री के प्रति श्रद्धावनत हो गया और अध्ययन के लिये स्थूलिभद्र आदि ५०० साधुओ को नेपाल प्रेषित किया। किन्तु अन्य मुनि अध्ययन से उद्विग्न होकर लौट आये। केवल स्थूलिभद्र ने आठ वर्षों तक आठ पूर्वो का अध्ययन किया। इसी बीच इन्होने भी आचार्य श्री से प्रश्न किया अब कितना अवशेष है तब आचार्य प्रवर ने फरमाया—'अभी तक तुम बूद जितना पढ पाए हो, अभी समुद्र जितना अवशिष्ट है।' यह सुन स्थूलिभद्र स्वामी और अधिक तन्मयता के साथ जुट गए तथापि आप दो वस्तु न्यून दसवे पूर्व तक ही अध्ययन कर पाए। अग्रिम चार पूर्वो का केवल मूल ही पढ पाए।

आचार्य भद्रबाहु स्वामी का स्वर्गवास वीर सवत् १७० मे कलिग (उडीसा) कुमारगिरि पर हुआ। भद्रबाहु स्वामी ४५ वें वर्ष मे दीक्षित हुए। ६२ वर्ष में युगप्रधान आचार्य पद प्राप्त किया। ७६ वर्ष की आयु पूर्ण कर स्वर्गवासी हुए।

(८) आचार्य स्थूलिभद्र :

आचार्य भद्रबाहु के पाट पर महान् प्रतापी काम विजेता आचार्य के रूप में आप प्रसिद्ध हुए। आर्य महागिरि और आर्य सुहस्ती आपके प्रधान शिष्य थे, वीर स २१४ में होने वाले अव्यक्तवादी निह्नव भी आपही के समय मे हुए थे। आपने श्रावस्तिनगरी के धनदेव श्रेष्ठी को भी जैन धर्म मे दीक्षित किया था।

आचार्य स्थूलिभद्र के सम्बन्ध मे एक उपदेश प्रधान कथा इस प्रकार पढने को मिलती है—

उन दिनो पाटलीपुत्र मे कोशा नामक एक अत्यन्त ही रूपवती वैश्या रहती थी। स्थूलिभद्र उसी वैश्या के प्रेमपाश में बधकर वही रहने लगे। इनके पिता शकडाल की मृत्यु होने पर राजा इनके छोटे भाई श्रियक को प्रधान मत्री का पद देने लगे। इस पर श्रियक ने राजा से

कहा कि "मेरे अग्रज को ही यह पद दिया जावे, जो गत १२ वर्षो से वैश्या के यहा निवास कर रहे हैं, तब राजा की ओर से उन्हे आमन्त्रित किया गया। उन्होने सोचा कि जिस राजा के निरर्थक क्रोध का परिणाम पिता की मृत्यु के रूप सामने आया, वही परिणाम भविष्य मे फिर सम्मुख आ सकता है। इस विचार से उन्हे वैराग्य उत्पन्न हो गया। और साधुवेष धारण कर वे राज सभा मे उपस्थित हुए। वहा राजा के सामने इन्होने अपने स्पष्ट विचार रखे तथा प्रधानमन्त्री पद अस्वीकार कर सभूति विजय आचार्य जी से दीक्षा ग्रहण कर ली और बडे ही भक्ति भाव से ज्ञान–अभ्यास करने लगे।

जब चातुर्मास निकट आया तब शिष्य वर्ग ने आचार्य जी से अपने–अपने चातुर्मास भिन्न–भिन्न स्थानो पर व्यतीत करने का निवेदन किया। एक ने सिंह गुफा मे चातुर्मास की आज्ञा मागी तो दूसरे ने सर्प के बिल पर। तीसरे ने कुए के थाले (ढाणे) पर अपना चातुर्मास व्यतीत करने की आज्ञा चाही। किन्तु स्थूलिभद्र ने एक ऐसे स्थान का चयन किया जो जनसाधारण के लिए तो क्या बडे-बडे तपस्वी और मुनियो तक के लिए सकट से कम नही हो सकता। वह स्थान था कोशा वैश्या का निवास स्थान। आचार्य जी ने चारो शिष्यो को उनके द्वारा मागे गये स्थानो पर चातुर्मास निर्गमन की स्वीकृति प्रदान कर दी।

कोशा वैश्या के आश्चर्य का ठिकाना नही रहा, जब साधु वेषधारी स्थूलिभद्र उसके यहा चातुर्मास के लिये पहुचे। उसने सोचा यह कोमलागो वाला साधु इतने घोर कठोर व्रतो का पालन करने मे कभी समर्थ नही हो सकता, इसीलिए यह मेरे प्रेम पाश मे पुन बधने हेतु यहा आया है। कोशा ने बडे आदर भाव से साधु स्थूलिभद्र का यथाविधि स्वागत–सत्कार किया। उसने उनसे विनम्र निवेदन किया–"मैं आपकी दासी हू। आपकी हर आवश्यकता पूर्ति हेतु प्राप्त आज्ञा का बराबर पालन करूगी।"

निर्मोही निर्विकार स्थूलिभद्र ने कहा—"मुझे तेरे निवास स्थान मे चातुर्मास व्यतीत करना है।" कोशा ने अपने निवास स्थान का एक भाग उन्हे सहर्ष सुपुर्द कर दिया। इसके पश्चात् वह साधु के सामने भिन्न भिन्न प्रकार के व्यञ्जन तैयार करके प्रस्तुत करती और अपनी विभिन्न शृगारिक मुद्राओ के द्वारा स्थूलिभद्र के सामने अपने रूप लावण्य का प्रदर्शन करती। किन्तु वैराग्यधारी स्थूलिभद्रजी के ऊपर उसका कुछ भी असर नही होता। अन्त मे कोशा भी उनकी भक्ति-भावना मे तल्लीन होकर उनके उपदेशामृत मे स्वय भी दृढ व्रतधारी श्राविका बन गई।

चातुर्मास पूर्ण कर स्थूलिभद्रजी एव उनके तीनो अन्य साथी सिंह गुफा, नाग बिल व कुए के ढाणे पर से आचार्य श्री के पास आये।

आचार्य जी ने तीनो शिष्यो का स्वागत तो "धन्य है, धन्य है"—कहकर किया। किन्तु स्थूलिभद्र का विशेष–उन्होने "धन्य है, धन्य है, धन्य है"—कहकर किया। इस प्रसग मे सिंह गुफावासी शिष्य को इनसे ईर्ष्या हुई। उसने आचार्य जी से निवेदन किया वे उसे भी अगला चातुर्मास वैश्या के यहा व्यतीत करने की आज्ञा दे।

आचार्य श्री सभूति विजयजी ने, जिन्हे १४ पूर्व का ज्ञान था, जान लिया कि सिंह गुफावासी का चरित्र वैश्या के यहा जाने से निर्मल नही रह सकेगा। इसलिए उन्होने कुछ कहे मौन ही रखा। इधर उस सिंह गुफावासी शिष्य ने गुरु का मौन, स्वीकृति सूचक मान लिया अत वह अपना अगला चातुर्मास व्यतीत करने इसी कोशा वैश्या के यहा पहुचा। वहा इस शिष्य का मन चचल हो उठा। उसने वैश्या के रूप सौन्दर्य से अत्यधिक आकर्षित होकर अपना वैराग्यपन नष्ट करने तक का निश्चय कर लिया, किन्तु क्योकि कोशा ने श्राविका-धर्म स्वीकार कर लिया था, अत उसने मुनि को अत्यन्त ही सावधानी पूर्वक भ्रष्ट होने से बचा लिया और उन्हें उनके आचार्य श्री के पास पहुचा दिया।

(९-१०) आर्य महागिरि और आर्य सुहस्ति

दोनो ही आचार्य सर्वश्रेष्ठ मेघावी, बहुश्रुत सयमी थे। आप दोनो ने ११ अग एव दस पूर्वों का कठस्थ अध्ययन किया।

आपके शासनकाल मे भयकर दुष्काल पडा तथापि श्रावकगण अन्नादि से निस्पृह जैन साधको को भक्ति भावपूर्वक अशनादि से प्रतिलाभित करते। एकदा गोचरी लाते हुए एक मुनि के पीछे-पीछे चलता हुआ एक क्षुधा पीडित भिक्षुक, उपाश्रय मे आ गया। तब आर्य सुहस्ति ने समझाया कि हमारे आहार-पानी का अधिकार साधु के अतिरिक्त अन्य कोई नही हो सकता। क्षुधापीडित भिक्षुक ने तत्काल भागवती दीक्षा अगीकार कर ली। अत्यधिक आहार करने से मारणातिक कष्ट होने लगा। श्रावको ने भक्तिभाव से उपचार करवाया, जिसे देखकर भिक्षुक के मन मे विचार आया कि अहो साधुवेष लेने मात्र से मेरा इतना सम्मान हो रहा है तो वास्तविक जैन साधु का तो कहना ही क्या ?

भिक्षुक ने वेदना को समभाव के साथ सहन किया और वहा से चलकर पाटली पुत्र के राजा कुणाल के यहा पुत्र के रूप मे आया।

यहा पर भी आर्य सुहस्ति के समागम से उसे जाति स्मरण ज्ञान हो गया। परिणामस्वरूप बारह व्रत अगीकार किये। गाव-गाव मे जिन धर्म प्रचारित किया।

इसी प्रकार एक बार जब आर्य सुहस्ति उज्जैन पधारे तो उनके मुख से उच्चरित स्वाध्याय मे नलिनी गुल्म विमान का वर्णन चल रहा था जिसे श्रवण करने से बत्तीस स्त्रियो के देवोपम विषय सेवन करने वाले एवन्तकुमार को जाति स्मरण ज्ञान हो गया, और वह पुन उसी नलिनी गुल्म विमान मे जाने के लिये सब कुछ छोडकर जैन साधु बन गया। अल्प समय मे ही गुरु आज्ञा पाकर श्मशान में भयकर कष्टो को समभाव से सहते हुए ध्यान साधना में तल्लीन हो गया। परिणाम स्वरूप एवन्तकुमार पुन अपनी इच्छानुसार नलिनी गुल्म विमान में पहुच गये।

आर्य महागिरि व आर्य सुहस्ति वीर निर्वाण के २४५ व २६५ वर्ष के पश्चात् हुए।

(११) आर्य बलिसिहजी (बलिस्सहजी)

वीर निर्वाण के २४५ वर्ष मे आर्य महागिरि के स्वर्ग गमन के पश्चात् आर्य वलिसिंह गणाचार्य नियुक्त हुए । इन्होने अपने गण का नाम उत्तर वलिस्सह रखा । यहा जिज्ञासा उठती है कि वहुल एव वलिसिंह इन दोनो स्थविरो मे वहुल के ज्येष्ठ होने पर भी वलिसिंह को गणाचार्य क्यो नियुक्त किया गया ?

ऐसा प्रतीत होता है आर्य बहुल ने आर्य वलिसिंह से ज्येष्ठ होते हुए भी अपनी अल्पायु आदि के कारणो से स्वय आचार्य न बनकर आर्य वलिसिंह को आचार्य वनाया । आर्य वलिसिंह ने भी ज्येष्ठ का आदर करते हुए अपने गण का नाम 'उत्तर वलिस्सह' रखा । ऐसा सभव है ।

आर्य वलिसिंहजी के शिष्य आर्य उमास्वामी और इनके शिष्य श्यामाचार्य थे । जिन्होने पूर्वो मे से प्रज्ञापना सूत्र को उद्धृत किया था ।

(१२) आर्य स्वाति .

आर्य वलिस्सह के पश्चात् आर्य स्वाति आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए । नदी सूत्र मे स्थविरावली के अनुसार आपश्री हारित्र गौत्रीय ब्राह्मण परिवार के थे, वीर निर्वाण ३३६(३३५) मे आप स्वर्गस्थ हुए ।

(१३) श्यामाचार्य (कालकाचार्य)

नदी सूत्र स्थविरावली के अनुसार आर्य श्यामाचार्य आर्य स्वाति के पश्चात् आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए । आपने वीर निर्वाण स ३०० मे २० वर्ष की अवस्था मे दीक्षा ग्रहण की । ३५ वर्ष तक श्रमण धर्म की पालना के पश्चात् आपको वाचनाचार्य और युगप्रधान पद प्रदान किया गया । वीर नि ३७६ मे ९६ वर्ष की आयु मे आप स्वर्गस्थ हुए ।

श्यामाचार्य द्रव्यानुयोग के अपने समय के प्रकाड विद्वान् थे । इन्ही श्यामाचार्य को निगोद व्याख्याता प्रथम कालकाचार्य कहा गया है–इनके सम्बन्ध मे एक घटनाक्रम इस प्रकार मिलता है—

एक समय महाविदेह क्षेत्र मे सीमधर स्वामी निगोद की व्याख्या फरमा रहे थे । उसे सुनने के पश्चात् सौधर्मेन्द्र ने सीमधर प्रभु से प्रश्न किया—भगवन्, क्या भरत क्षेत्र मे इस प्रकार निगोद का वर्णन करने वाला कोई श्रुतधर आचार्य आज विद्यमान है ? उत्तर मे भगवान् ने फरमाया—हां भरत क्षेत्र मे आर्य श्यामाचार्य द्रव्यानुयोग के विशिष्ट ज्ञाता हैं । वे श्रुतवल मे निगोद का भी यथार्थ रूप वता सकते हैं । सौधर्मेन्द्र को यह सुनकर तीव्र उत्कठा हुई और वह भरत क्षेत्र मे श्यामाचार्य को वन्दन करने पहुचा । उसने आचार्य श्री से निगोद का स्वरूप पूछा

और उनके मुख से यथार्थ स्वरूप सुनकर सौधर्मेन्द्र बडा प्रसन्न हुआ । आचार्य को वन्दन करने के पश्चात् लौटते समय सौधर्मेन्द्र ने आर्य श्याम के शिष्यो को अपने आगमन से अवगत कराने के लिये चिह्न स्वरूप उपाश्रय का द्वार दूसरी दिशा की ओर मोड दिया। यही श्यामाचार्य पन्नवणासूत्र के रचयिता भी है । यह सूत्र आज भी ३६ पदो अर्थात् प्रकरणो मे विद्यमान है । जीवाजीवादि समस्त पदार्थो के प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से इस शास्त्र को तत्वज्ञान का अनुपम भण्डार कहा जा सकता है । जैन दर्शन के गहन तत्वज्ञान को समझने मे इस सूत्र का अध्ययन बडा सहायक माना गया है ।

(१४) आर्य षाडिल्य

श्यामाचार्य के पश्चात् कौशिक गोत्रीय आर्य षाडिल्य वाचनाचार्य हुए । इनको स्कदिलाचार्य भी कहा जाता है । आप जीत व्यवहार के प्रति अधिक जागरूक थे ।

(१५) आर्य समुद्र

ये बहुत ही अनासक्त विचार वाले थे । इनको भिक्षा मे जैसा सरल-नीरस आहार मिलता, उसको बिना स्वाद के बाबी मे सर्प के प्रवेश की तरह प्रशान्त भाव से सेवन कर लिया करते थे । इस प्रकार स्वाद और लाभ के प्रति अनासक्त होने के कारण आचार्य देवर्द्धि ने "अक्खुभिय समुद्र गभीर" पद से आपकी स्तुति की है ।

आर्य समुद्र सोलह वर्ष गृहस्थावस्था मे रहे और सत्ताईस वर्ष मुनि जीवन मे रहे और उसके बाद ७ चउपन वर्ष तक आचार्य पद को सुशोभित करके सत्तानवे वर्ष की आयु मे वीर नि स. ५०८ मे स्वर्गस्थ हुए ।

(१६) आर्य मगू .

आर्य समुद्र के शिष्य आर्य मगू थे । आर्य मगू वीर निर्वाण ४५४ मे वाचनाचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए । आप भक्तिपूर्वक सेवा करने वाले, कुशलता के साथ शिष्यो को अध्ययन कराने वाले तथा जिन शासन की विशिष्ट प्रभावना करने वाले के रूप में प्रख्यात थे ।

(१७) आर्य नन्दिल :

आर्य मगू के पश्चात् वाचक परपरा मे आर्य नन्दिल वाचनाचार्य हुए । आपका जीवन तप प्रधान था एव कठिन से कठिन स्थिति मे भी प्रसन्न रहने वाले थे ।

(१८) आर्य नागहस्ति :

आर्य नन्दिल के पश्चात् आर्य नागहस्ति वाचनाचार्य हुए । आप कर्मप्रकृति के विशिष्ट ज्ञाता तथा जिज्ञासाओ का समुचित समाधान करने वाले थे ।

(१९) आर्य रेवती नक्षत्र :

आर्य नागहस्ति के पश्चात् आर्य रेवती नक्षत्र वाचनाचार्य हुए। युग प्रधान आचार्य रेवती मित्र और आर्य रेवती नक्षत्र एक ही आचार्य थे या अलग-अलग इसका स्पष्टीकरण प्राप्त नही होता।

(२०) आर्य ब्रह्मदीपिक सिह .

आचार्य रेवती नक्षत्र के पश्चात् आर्य ब्रह्मदीपिकसिह वाचनाचार्य हुए, आपकी श्रमण दीक्षा अचलपुर मे हुई थी। आचार्य देवर्द्धि ने नन्दी सूत्र की स्थविरावली मे "वभगदीवगसीहे" पद से आपको ब्रह्मदीपिकसिह एव कालिक श्रुत की व्याख्या करने मे अत्यन्त निपुण, धीर और उत्तम वाचक पद की प्राप्ति करने वाला बताया है। आचार्य देवर्द्धि ने सिह नाम के अनेक मुनियो से आर्य सिह को भिन्न वताने के लिये इन्हे "ब्रह्मदीपकसिह" इस नाम से अभिहित किया है।

इस नाम के साथ ब्रह्मदीप शब्द देखकर सहज ही ब्रह्मदीपिकी शाखा की स्मृति हो जाती है, जो आर्य सिह गिरि के शिष्य आर्य समित से प्रारभ हुई थी, और ऐसा अनुमान होना स्वाभाविक है कि आर्य सिह ब्रह्मदीपिका शाखा के मुनि होगे किन्तु जव आर्य रेवती नक्षत्र के साथ गुरु शिष्य सम्बन्ध और देवर्द्धिगणी द्वारा कथित वाचकपद पर ध्यान जाता है, तव यह अनुभव होता है कि ये आर्य सिह वाचक परम्परा के ही विशिष्ट आचार्य होने चाहिये। कल्पसूत्र स्थविरावली में स्थविर आर्य धर्म के शिष्य आर्य सिह का नाम उपलब्ध होता है। यदि उन्हे ब्रह्मदीपिकी शाखा का आचार्य मानकर स्कन्दिलाचार्य का गुरु माना जाये तो समय का मेल वैठ सकता है। किन्तु नन्दीसूत्र की चूर्णी, वृत्ति आदि में स्कन्दिल को वाचक आर्य सिह के शिष्य रूप में किया है। सभव है ब्रह्मदीपिकसिह का वाचनाचार्य काल वीर निर्वाण की ८ वी शताब्दि का अन्तिम काल रहा हो।

श्रमणसघ स्तोत्र के अनुसार युग प्रधानाचार्य सिह का काल इस प्रकार मान्य किया है।

वीर निर्वाण स ७१० मे जन्म, १८ वर्ष पश्चात् वीर निर्वाण स ७२८ मे दीक्षा, २० वर्ष सामान्य साधु पर्याय और ७८ वर्ष युग प्रधान काल पूर्ण कर निर्वाण स ८२६ मे स्वर्गवास।

वाचक आर्य सिह को युग प्रधान सिह से भिन्न मानने पर आर्य स्कन्दिल का कार्यकाल २६ वर्ष अधिक होता है, जवकि युग प्रधान आर्य सिह को ही वाचक आर्य सिह मानने पर आर्य स्कन्दिल का कार्यकाल वीर निर्वाण स ८१७ में आता है।

(२१) आर्य स्कन्दिल

वाचक वश परपरा के महान् प्रभावक, आर्य स्कन्दिल आचार्य हुए है। आपने अति

विषमकाल मे भी श्रुत ज्ञान की रक्षा कर सघ की अनुपम सेवा की है–हिमवन्त स्थविरावली के अनुसार आर्य स्कदिल का सक्षिप्त परिचय निम्न है —

मथुरा के ब्राह्मण मेघरथ और ब्राह्मणी रूप सेना के यहा आपका जन्म हुआ । गर्भकाल मे माता ने चन्द्र का स्वप्न देखा अत पुत्र का नाम सोमरथ रखा गया । आपके माता-पिता प्रारम्भ से ही जैन धर्मावलम्वी थे ।

एक वार ब्रह्मदीपक आचार्य सिंह विहार कर क्रम से मथुरा पधारे । उनके धर्मोपदेश को सुनकर सोमरथ ने वैराग्य भाव से श्रमण दीक्षा ग्रहण की । गुरु ने दीक्षा के समय आपका नाम स्कन्दिल रखा । मुनि स्कदिल ने अपने गुरु आर्य ब्रह्मदीपकसिह की सेवा मे निरत रहते हुए एकादशागी एव पूर्वो का ज्ञान प्राप्त किया । आर्य सिह ने स्कदिल को सुयोग्य एव प्रतिभाशाली समझकर अपना उत्तराधिकारी घोषित किया । तदनुसार आर्य सिह के स्वर्ग गमन के पश्चात् आर्य स्कदिल को सघ द्वारा वाचनाचार्य पद पर नियुक्त किया गया ।

आपका कार्यकाल वीर निर्वाण ८२३ से ८४० के आसपास माना गया लेकिन स्थविरावलीकार ने वी स १५३ आर्य स्कदिल को सघ द्वारा मथुरा मे साधु-साध्वियो को एकत्रित करने का उल्लेख किया है ।

(२२) हिमवन्त क्षमाश्रमरण

आर्य स्कदिल के पश्चात् आर्य हिमवन्त वाचनाचार्य हुए । आपका यश सुदूर तक विस्तृत था । अन्य विशिष्ट प्रतिभा–सपन्न वादी, मानमर्दक, परिषह सहिष्णु आदि अनेक विशिष्ट गुणो से युक्त थे ।

(२३) आचार्य-नागार्जुन :

हिमवन्त क्षमाश्रमण के पश्चात् आर्य नागार्जुन वाचनाचार्य हुए । आपने पादप्ति सूरि के सान्निव्य मे अनेकविध वस्पति-विज्ञान के साथ आकाशगामी उडान की विधि सीखी थी ।

आचार्य नागार्जुन का जन्म वीर नि स ७९३ मे एव वी नि स ८०७ में दीक्षा हुई । १९ वर्ष मे साधु पर्याय का पालन करने वाद वी नि स ८२६ युग प्रधान पद और ७५ वर्ष तक आचार्य पद से जिन शासन की वृद्धि की । वीर नि स ९०४ मे १११ वर्ष की उम्र मे स्वर्गवास हुए ।

(२४) आर्य भूत दिन्न :

आर्य नागार्जुन के पश्चात् आर्य भूत दिन्न वाचनाचार्य हुए । आप तत्कालीन भारतवर्षीय साधुओ मे प्रमुख माने जाते थे ।

युग प्रवान यंत्र के अनुसार इन्हे युगप्रधान माना जाय तो इनका कार्यकाल इस प्रकार है -

वीर नि. स. ८६४ मे जन्म, ८८२ मे दीक्षा, ९०४ मे युगप्रधान पद, ९८३ मे स्वर्गवास तदनुसार १८ वर्ष गृहवास, २२ वर्ष सामान्य श्रामण्य पर्याय, ७९ वर्ष युगप्रधान पद, कुल मिलाकर ११९ वर्ष की आयु पूर्ण कर स्वर्गस्थ हुए ।

(२५) आर्य लोहित्य

आर्यभूत दिन्न के पश्चात् वाचनाचार्य आर्य लोहित्य हुए । आप सूत्रार्थ के सम्यक् धारक तथा पदार्थो के नित्यानित्य स्वरूप की व्याख्या करने मे अति कुशल थे ।

(२६) आर्य दूष्य गरिण :

आर्य लोहित्य के पश्चात् आर्य दूष्य गणि वाचनाचार्य हुए । आप तत्कालीन युग के विशिष्ट वाचनाचार्य थे । आपके पास अन्य अनेक गच्छो के ज्ञानार्थी श्रमण, श्रुतज्ञान के अध्ययन हेतु आया करते थे । अत आप श्रुतार्थ की खान, प्रकृति से मधुर भाषी, तप-नियम सत्य सयम प्रधान आदि विशिष्ट गुणो से सम्पन्न थे ।

(२७) आर्य देवर्द्धि क्षमा श्रमरण-(वाचवाचार्य-गरणाचार्य) :

आचार्यों की इस परपरा मे देवर्द्धि क्षमा श्रमण का नाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । क्योकि आज से १५२० वर्ष पूर्व वल्लभी नगरी मे आप ही ने एक श्रमण सघ का सम्मेलन कर आगमवाचना द्वारा द्वादशाङ्गी के विस्तृत पाठो को सुव्यवस्थित सकलित किया । भविष्य मे विना हानि के आगम यथावत् वने रहे इसके लिये आगमो को पुस्तको के रूप मे लिपिवद्ध करवाकर अपूर्व दूरदर्शिता का परिचय दिया । परिणाम स्वरूप आगमो का यह अविरल प्रवाह पचम आरे के अन्त तक चलता रहेगा । आपका जीवन घटनाक्रम इस प्रकार वतलाया जाता है—

आपका जन्म सौराष्ट्र प्रान्त मे वैरावल पाटण मे शासक अरिमर्दन के सामान्य अधिकारी काश्यप गौत्रीय कामिर्द्ध क्षत्रिय की पत्नी कलावती की कुक्षि से हुआ । आप हरिनैगमेषी देव के रूप से व्यवकर मनुष्य जीवन मे आए थे । आपकी माता ने ऋद्धिशाली देव का स्वप्न देखा, अत आपका देवर्द्धि नाम रख दिया । वडे होने पर आप कुसगति के कारण आखेट शिकार आदि व्यसनो मे पड गए । यह देखकर नवोत्पन्न देव हरिनैगमेषी ने आपको प्रतिवोधित किया । तव आपने आर्य लोहित्य के पास श्रामण्य दीक्षा अगीकार की थी ।

आपको पहले गणाचार्य के पद पर तथा दुष्यगणि के स्वर्गवास अनतर वाचनाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया ।

इस प्रकार सत्ताइस पाट परपरा के आचार्यो का—अनेक ग्रन्थो के आधार से सक्षिप्त जीवन यहा प्रस्तुत किया गया ।

आर्य वलिसिह के पश्चात् देवर्द्धिगणि, क्षमाश्रमण तक के पूर्वाचार्यों की दो परपराए

प्राप्त होती है । नदी सूत्र की परपरा के अनुसार जिन आचार्यो का वर्णन प्राप्त है, ग्रहण किया गया है । जानकारी हेतु अन्य परपरा का भी नामोत्लेख किया जा रहा है ।

आर्य सुधर्मा मे लेकर आचार्य देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमरण तक की आचार्य परपरा आगम युग का प्रतिनिधित्व करती है । पट्टावलियो के अनुसार यह आचार्यो की परम्परा कई रूपो मे उपलब्ध है । विभिन्न पट्टावलियो मे से कुछ पट्टावलिया नीचे दी जा रही है—

देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण की गुरु परम्परा

१ आचार्य सुधर्मा   २ आचार्य जम्बू   ३ आचार्य प्रभव
४ आचार्य शयभव   ५ आचार्य यशोभद्र
६ आचार्य सभूतिविजय भद्रबाहु   ७ स्थूल भद्र   ८ आचार्य महागिरि सुहस्ती
९ आचार्य सुस्थित-सुप्रतिबद्ध   १० आचार्य इन्द्र दिन्न   ११ आचार्य दिन्न
१२ आचार्य सिहगिरि   १३ आचार्य वज्र   १४ आचार्य रथ
१५ आचार्य पुष्टगिरि   १६ आचार्य फाल्गुनमित्र   १७ आचार्य धनगिरि
१८ आचार्य शिवभूति   १९ आचार्य भद्र   २० आचार्य नक्षत्र
२१ आचार्य रक्ष   २२ आचार्य नाग   २३ आचार्य जेहिल (जेष्ठिल)
२४ आचार्य विष्णु   २५ आचार्य कालक   २६ आचार्य सपलित तथा भद्र
२७ आचार्य वृद्ध   २८ आचार्य सघपालित   २९ आचार्य हस्ती
३० आचार्य धर्म   ३१ आचार्य सिंह   ३२ आचार्य धर्म
३३ आचार्य शाडिल्य   ३४ आचार्य देवर्द्धिगणी

माथुरी वाचनानुसार स्थविर क्रम

१ आचार्य सुधर्मा   २ आचार्य जम्बू   ३ आचार्य प्रभव
४ आचार्य शयभव   ५ आचार्य यशोभद्र   ६ आचार्य सभूति विजय
७ आचार्य भद्रबाहु   ८ आचार्य स्थूल भद्र   ९ महागिरि
१० आचार्य सुहस्ती   ११ आचार्य वलिस्सह   १२ आचार्य स्वाति
१३ आचार्य श्यामार्य   १४ आचार्य शाडिल्य   १५ आचार्य समुद्र
१६ आचार्य मगू   १७ आचार्य नदिल   १८ आचार्य नागहस्ती
१९ आचार्य रेवतिनक्षत्र   २० आचार्य ब्रह्मदीपिका सिह   २१ आचार्य स्कन्दिलाचार्य
२२ आचार्य हिमनन्त   २३ आचार्य नागार्जुन वाचक   २४ आचार्य भूतादिन्न
२५ आचार्य लोहित्य   २६ आचार्य दुष्यगणी   २७ देवर्द्धिगणी

वल्लभी वाचनानुसार स्थविर क्रम

१ आचार्य सुधर्मा   २ आचार्य जम्बू   ३ आचार्य प्रभव

४ आचार्य शयभव	५ आचार्य यशोभद्र	६ आचार्य सभूति विजय
७ आचार्य भद्रवाहु	८ आचार्य स्थूल भद्र	९ आचार्य महागिरि
१० आचार्य सुहस्ती	११ आचार्य कालकाचार्य	१२ आचार्य रेवतीमित्र
१३ आचार्य समुद्र	१४ आचार्य मगू	१५. आचार्य धर्म
१६ आचार्य भद्रगुप्त	१७ आचार्य श्रीगुप्त	१८ आचार्य वज्र
१९ आचार्य रक्षित	२० आचार्य पुष्पमित्र	२१ आचार्य वज्रसेन
२२ आचार्य नागहस्ती	२३ आचार्य रेवती मित्र	२४ आचार्य ब्रह्मदीपिका सिंहसूरि
२५ आचार्य नागार्जुन	२६ आचार्य भूतदिन्न	२७ आचार्य कालकाचार्य

नन्दी सूत्र मे उल्लिखित स्थविरावली

१ आर्य सुधर्मा स्वामी	२. आर्य जम्बू स्वामी	३ आर्य प्रभव स्वामी
४ आर्य शयभव स्वामी	५ आर्य यशोभद्र स्वामी	६ आर्य सभूति विजय
७ आर्य भद्रवाहु स्वामी	८ आर्य स्थूलभद्र स्वामी	९ आर्य महागिरि
१० आर्य सुहस्ती	११ आर्य बलिस्सह	१२ आर्य स्वाति स्वामी
१३ आर्य श्यामाचार्य	१४ आर्य शाण्डिल्य स्वामी	१५ समुद्र स्वामी
१६ आर्य मगू स्वामी	१७ आर्य धर्म स्वामी	१८ आर्य भद्रगुप्त स्वामी
१९ आर्य वज्र स्वामी	२० आर्य रक्षित	२१ आर्य नन्दिल
२२ आर्य नागहस्ती	२३ आर्य रेवतीनक्षत्र	२४ आर्य सिंह
२५ आर्य स्कन्दिल	२६ आर्य हिमवन्त	२७ आर्य नागार्जुन
२८ आर्य नागार्जुन वाचक	२९ आर्य गोविन्द स्वामी	३० आर्य भूत दिन्न स्वामी
३१ आर्य लोहित्य	३२ आर्य दुष्यगणी	३३. आर्य देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण

इनमे से पहली पट्टावली देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण गुरु शिष्य क्रम की परम्परा मानी गई है जिससे वहा "गुरु-परम्परा" विशेषण दिया है । शेष पट्टावलिया प्राय युग प्रधानाचार्यों और वाचनाचार्यों का सकेत करती है ।

इन पट्टावलियो मे आर्य सुहस्ती के नाम तक तो कोई विशेष अन्तर नही है । और पश्चात्वर्ती नामो मे अन्तर दिखने का कारण यह है कि श्रमण भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् समय-समय पर पडने वाले दुर्भिक्षो से उत्तर-भारत मे विचरण करने वाले श्रमण सघ को दक्षिण की ओर बढना पडा । परन्तु इस स्थिति मे जो वृद्ध अथवा शारीरिक दृष्टि मे चलने मे असमर्थ श्रमण थे वे उत्तर भारत मे विचरते रहे । जिससे श्रमण सघ दो भागो मे विभक्त हो गया । प्रथम दुष्काल की समाप्ति के बाद पुन सम्मिलित भी हुए किन्तु सम्प्रति मौर्य और आर्य वज्र के समय पडने वाले दुर्भिक्षो के कारण जो श्रमण सघ दक्षिण, मध्य और पश्चिम भारत मे आ गया था वह दीर्घ काल तक उत्तर भारत मे विचरने वाले श्रमण सघ मे मिल नही सका । जिसके कारण उत्तर, दक्षिण और पश्चिम भारत मे विचरण करने वाले श्रमण सघ के अलग अलग स्थविर हो गये । दक्षिणवर्ती श्रमण सघ एक सौ सत्तर वर्ष तक अपनी स्वतन्त्र परम्परा

चलाता रहा और उसके वाद विक्रम की दूसरी शताव्दी के मध्य मे पुन उत्तर मे के श्रमण सघ सम्मिलित हो गया । अतएव पट्टावलियो के नामो और उनके क्रम मे अन्तर हो जाना स्वाभाविक है । परन्तु यह स्पष्ट है कि आचार्य सुधर्मा से लेकर देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण पर्यन्त की पट्ट-परम्परा आगम युग की परम्परा का प्रतिनिधित्व करती है ।

पूर्व उल्लिखित पट्टावलियो के सम्वन्ध मे यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जैसे आगमो को व्यवस्थित करने के लिये भिन्न-भिन्न समयो मे वाचनाये हुई, उसी प्रकार इनको भी भिन्न-भिन्न समयो मे व्यवस्थित किया गया है ।

आचार्य सुधर्मा से लेकर आचार्य देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण तक की परम्परा को आगम युग मानने का कारण यह है कि उस समय में आगमो को सुरक्षित रखने का विशेप प्रयास हुआ। समय-समय पर पडने वाले भीषण अकालो के कारण आगम साहित्य की जो धारा छिन्न-भिन्न हुई, उसको श्रमण सघ ने एकत्रित होकर सुरक्षित रखने के लिए वार-वार वाचनायें की । वीर निर्वाण के वाद सहस्राव्दी में मुख्यतया ऐसी वाचनायें चार वार हुई थी । जिनका सक्षेप मे सकेत इस प्रकार है —

१—आचार्य भद्रवाहु के समय में वहुत ही कष्टदायक द्वादशवर्षीय दुर्भिक्ष पडा । इस दुर्भिक्ष के कारण अनेक श्रुतधर श्रमण स्वर्गवासी हो गये और श्रुत की धारा भी कुछ छिन्न-भिन्न हो गई । दुष्काल की परिसमाप्ति के वाद इस विच्छन्न श्रुत के सूत्र सजोने और क्रमवद्धता को वनाये रखने के लिये आर्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में वीर निर्वाण के १६० वर्ष के लगभग पाटलिपुत्र में श्रमण सघ एकत्रित हुआ । उपस्थित श्रमणो ने अपनी स्मृति और परस्पर एक दूसरे से पूछकर ग्यारह अगो का तो प्रामाणिक रूप से सकलन किया । वारहवा अग आर्य भद्रवाहु के अतिरिक्त अन्य किसी को याद नही था । इसको पढने के लिये विशाल श्रमण समुदाय के साथ आर्य स्थूलभद्र को आर्य भद्रवाहु के पास नेपाल भेजा गया । आर्य स्थूलभद्र ने वारहवे अग की वाचना ग्रहण की । दस पूर्व का सूत्र और अर्थ से अध्ययन किया लेकिन अन्तिम चार पूर्वो की अर्थ वाचना से प्राप्त नही कर सके ।

२—उक्त पाटिलपुत्र वाचना के अ तर वीर निर्वाण ८२७ से ८४० के वीच आर्य स्कदिल के नेतृत्व मे पुन आगम वाचना हुई । यह वाचना मथुरा में हुई थी, इसलिये मथुरा की वाचना कहलाई । इस वाचना का कारण भी द्वादशवर्षीय अकाल था । इसके कारण ग्रहण-गुणन एव अनुप्रेक्षा के अभाव मे सूत्र नष्ट हो गया था । मथुरा मे एकत्रित इस श्रमण सघ ने अपनी स्मृति से कालिक श्रुत को व्यवस्थित किया ।

कुछ विद्वानो का ऐसा अभिमत है कि सूत्र तो नष्ट नही हुए थे किन्तु अनुयोग धरो का अभाव हो गया था । एक स्कन्दिलाचार्य वचे थे जो अनुयोगधर थे । उन्होने मथुरा में एकत्रित श्रमण सघ को अनुयोग दिया था ।

३—माथुरी वाचना के समय में ही वल्लभी मे भी आर्य नागार्जुन सूरी ने श्रमण सघ

को एकत्रित करके आगमो को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया था। यहा उपस्थित श्रमण वर्ग को जो–जो आगम और उनके अनुयोग एव प्रकरण ग्रन्थ याद थे, वे लिख लिये गये और विस्मृत स्थलो को पूर्वापर सम्बन्ध के अनुसार व्यवस्थित कर लिया गया। इसमे प्रमुख नागार्जुन थे अत इस वाचना को नागार्जुनीय वाचना भी कहते है।

उपर्युक्त वाचनाओ के पश्चात् करीब १५० वर्ष के वाद वीर निर्वाण स ९८० मे पुन वल्लभी नगर मे देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण सघ एकत्रित हुआ। इस काल मे भी दुर्भिक्ष पडे थे, जिससे श्रमण सघ छिन्न-भिन्न हो चुका था। इसी कारण पुन आगम वाचना की व्यवस्था करना आवश्यक हो गया था।

इस वाचना मे एकत्रित श्रमण सघ ने पूर्वोक्त दोनो वाचनाओ के समय सकलित सिद्धान्तो के अतिरिक्त जो प्रकरण ग्रन्थ विद्यमान थे उन्हे लिखकर सुरक्षित रखने का निश्चय किया। इस श्रमण समवसरण मे दोनो वाचनाओ के सिद्धातो का समन्वय किया गया और जहा तक हो सका भिन्नता मिटाने का प्रयास हुआ। माथुरी वाचना को प्रमुख एव नागार्जुनीय वाचना को पाठान्तर रूप के स्वीकार कर क्षत–विक्षत आगम श्री को सुरक्षित किया।

वर्तमान मे जो आगम ग्रन्थ उपलब्ध हैं उनका अधिकाश भाग इसी समय मे स्थिर हुआ था।

वीर निर्वाण की दसवी शताब्दी मे आचार्य देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण सघ द्वारा होने वाली यह अन्तिम आगम वाचना थी। इस आगम वाचना के साथ एक हजार वर्ष का आगम युग समाप्त हो जाता है।

इस आगम युग मे छह श्रुत केवली हुये है—

१ प्रभव, २ शयभव, ३ यशोभद्र, ४ सभूति विजय, ५ भद्रवाहु, ६ स्थूलभद्र।

इन छह श्रुत केवलियो मे आचार्य भद्रवाहु का स्थान सवसे ऊचा है। श्वेताम्वर व दिगम्वर दोनो सम्प्रदाय यह एक स्वर से स्वीकार करते हैं कि भद्रवाहु के पास सम्पूर्ण द्वाशागी सुरक्षित थीं। भद्रवाहु के वाद स्थूलभद्र भी वारहवे अग के पाठी है। लेकिन उसमे गर्भित चौदह पूर्व में से १० पूर्व तक का ज्ञान तो उन्हे सूत्र और अर्थ दोनो से था। लेकिन अन्तिम चार पूर्व की अर्थ वाचना उन्हे प्राप्त नही हुई थी। अतएव अर्थ दृष्टि से देखा जाय तो पूर्ण श्रुतधर, श्रुतकेवली–चतुर्दश पूर्व के पूर्ण ज्ञाता आर्य भद्रवाहु ही थे। उनके स्वर्गवास के साथ वीर निर्वाण स १७० के लगभग अर्थात् अन्तिम चार पूर्वो का विच्छेद हुआ।

इसके वाद दस पूर्वधरो की परम्परा प्रचलित हुई। दस पूर्वधर दस आचार्य हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—

१ महागिरि, २ सुहस्ती, ३ गुणसुन्दर, ४ कालकाचार्य, ५ स्कन्दिलाचार्य ६ रेवतीमित्र, ७. मगू, ८ धर्म, ९ चन्द्रगुप्त, १० आर्य वज्र।

आगमोत्तरकालीन पाट परम्परा :

वारम्वार पडने वाले दुर्भिक्षो के कारण जैसे आगमिक परम्परा विच्छिन्न हुई थी, उसी प्रकार विधि–विधान, समाचारी आदि मे भी एक रूपता नही रही । श्रमण साधुओ के लिये विशुद्ध रूप से चारित्र का पालन करना अति कठिन हो गया था । इस विषमता के कारण श्रमणो में जैसे–जैसे आध्यात्म प्रेम कम होता गया, वैसे–वैसे शिथिल प्रवृत्तियो को छिपाये रखने के लिये अपने अपने पक्ष को प्रवल और दूसरे के पक्ष को हेय वताने के लिये स्वय जैन निर्ग्रन्थ श्रमणो द्वारा जैन सिद्धान्तो पर प्रहार होने लगे । कई तो परिग्रहधारी हो गये । श्रावको को अपने पक्ष मे करने लिये मत्र-तत्र, टोना–टोटका आदि का प्रचार बढने लगा । परिमाणत यति पद जो अतिपवित्र गिना जाता है, महत्वहीन हो गया । अपने लिये उपाश्रय वनाना, वर घोडे चढना, उत्सव करना आदि प्रवृत्तियो के नायक और प्रेरक होना यति अपना कर्त्तव्य समझने लगे । साराश यह है कि साधु वर्ग से चारित्र धर्म का लोप हो रहा था और श्रावक समुदाय भी अपने कर्त्तव्य से च्युत होकर शिथिलाचार का पोषण करने मे प्रवृत्त था ।

इस प्रकार आगम युग के उत्तरवर्त्ती काल में श्रमण सघ मे एकता, सगठन शनै शनै कम होते हुए नाम मात्र को रह गया था । फिर भी वीर शासन साधु विहीन नही हुआ था । इस दृष्टि से देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण के वाद आगमोत्तर काल में जो विभिन्न पाट–परम्पराए उपलव्ध होती है, उनमें हमारी दृष्टि से विशेष रूप से प्रामाणिक प्रतीत होने वाली पाट-परम्पराओ को यहा उपस्थित करते है ।

देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण के अन्तर वार्ता पट्टधर आचार्य

२८ आर्य वीरभद्र स्वामी	२९ आर्य शकरभद्र स्वामी	३० आर्य यशोभद्र स्वामी
३१ आर्य वीरसेन स्वामी	३२ आर्य वीरसग्राम स्वामी	३३ आर्य जिनसेन स्वामी
३४ आर्य हरिसेन स्वामी	३५ आर्य जयसेन स्वामी	३६ आर्य जगमाल स्वामी
३७ आर्य देवऋषि स्वामी	३८ आर्य भीमऋषि स्वामी	
३९ आर्य कर्म ऋषि स्वामी	४० आर्य राजऋषि स्वामी	
४१ आर्य देवसेन स्वामी	४२ आर्य शकरसेन स्वामी	४३ आर्य लक्ष्मीलाभ स्वामी
४४ आर्य रामऋषि स्वामी	४५ आर्य पद्मऋषि स्वामी	४६ आर्य हरि स्वामी
४७ आर्य कुशलदत्त स्वामी	४८ आर्य उवनी ऋषि	४९ आर्य जयसेन स्वामी
५० आर्य विजय ऋषि	५१ आर्य देवसेन स्वामी	५२ आर्य सूरसेन स्वामी
५३ आर्य महासूरसेन स्वामी	५४ आचार्य महासेन स्वामी	५५ आचार्य गजसेन स्वामी
५६ आचार्य जयराज स्वामी	५७ आचार्य मित्रसेन स्वामी	५८ आचार्य विजयसिंह स्वामी
५९ आचार्य शिवराज स्वामी	६०. आचार्य लालजी ऋषि	६१ आचार्य ज्ञानजी ऋषि

उपरोक्त आचार्य परम्परा ने अपने युग मे आगमानुसार आचार का सुमेल वैठाने के लिये प्रयास किया । लेकिन ज्ञानजी ऋषि के समय में शिथिलाचार का नाम ही जव श्रमण समाचारी हो गया तो यह अनुभव किया जाने लगा कि अव इसमें आमूल चूल परिवर्तन

होने पर ही साध्वाचार की सुरक्षा की जा सकती है। श्रमण सघ की तरह श्रावक सघ भी साध्वाचार की सुरक्षा के लिये विशेष चिन्तित था। ऐसे समय मे गुजरात के मुख्य नगर ग्रहमदावाद में लोकाशाह नाम के एक महान् धर्म सुधारक उत्पन्न हुए। वे सर्राफी का धधा करते थे। राज्य दरवार मे मान था। उनके हस्ताक्षर वहुत सुन्दर थे। वे एक दिन ज्ञान ऋषि के दर्शन करने ग्राये। उस समय ज्ञानजी ऋषि शास्त्रो को सभालने ग्रौर व्यवस्था पूर्वक रखने में लगे हुए थे। उनके एक शिष्य ने सूत्रो की एक प्राचीन–जीर्ण प्रतिया देखकर शाहजी से कहा क्या ग्रापके सुन्दर हस्ताक्षर इन पुस्तको का पुनरुद्धार करने मे उपयोगी नही हो सकते, शाहजी ने ग्रपना प्रमोद भाव व्यक्त करते हुए सूत्रो की जीर्ण प्रतियो की प्रतिलिपि करने का कार्य स्वीकार कर लिया।

लोकाशाह को इस कार्य से विशेष लाभ हुग्रा। ग्रभी तक ग्रागमो में वर्णित जिस साध्वाचार का ज्ञान साधु वर्ग तक ही सीमित था। उसकी श्रावक वर्ग को भी जानकारी प्राप्त हुई। लोकाशाह की कुशाग्र वुद्धि वीर शासन के पवित्र ग्राशय को समझ सकी। उन्हे वीर भाषित ग्रणगार धर्म ग्रौर वर्तमान में विचरने वाले साधु वर्ग की प्रवृत्ति में जमीन ग्रासमान का ग्रन्तर दिखा ग्रौर श्रावक सघ के प्रमुख–प्रभावक व्यक्तियो से एतद् विषयक वार्तालाप किया।

लोकाशाह की इस सत्प्रवृत्ति की जव साध्वाचार से विपरीत प्रवृत्ति करने वालो को जानकारी मिली तो प्रवल प्रतिरोध के प्रयास किये जाने लगे। लोकाशाह ने विरोध का विवेक से उन्मूलन किया ग्रौर वहुत ही शालीनता के साथ ग्रागमिक ग्राशय को चतुर्विध सघ के समक्ष रखा। ग्रतएव ग्रभी तक जो श्रावक साधुग्रो के शिथिल ग्राचार विचार के पोषक ग्रथवा समर्थक थे, वे लोकाशाह के विचारो का समर्थन करने के लिये तत्पर हो उठे। श्रावको की तरह कितने ही यति भी शास्त्रानुसार ग्रनगार धर्म का ग्राराधन करने को ग्रोर ग्रग्रसर हुए।

लोकाशाह के प्रयत्नो से साध्वाचार की सुरक्षा का वातावरण तो वन गया था ग्रौर श्रमणो व श्रावको मे से ग्रनेको ने ग्रपनी श्रद्धा प्ररूपणा ग्रौर स्पर्शना में शुद्धिकरण करके साधु वर्ग को एक नये ग्रोज ग्रौर तेज से ग्रनुप्राणित कर दिया था। फिर भी इस प्रवृत्ति को व्यापक एव वेगशील वनाने के लिये एक ऐसे श्रमण वर्ग की ग्रावश्यकता थी जो कि ग्रागमिक परम्परा के ग्रनुसार दीक्षित होकर सर्वत्र प्रचार करने के लिये तत्पर हो। लोकाशाह ने ग्रपनी भावना श्रावको के सामने रखी, किन्तु वृद्धावस्था के कारण सर्वत्र पहुचने मे ग्रसमर्थता वतलाई तव भाणजी भाई ग्रादि ४५ श्रावको ने दीक्षित होने की ग्रपनी ग्रपनी भावना व्यक्त की ग्रौर उन्होने भागवती प्रव्रज्या स्वीकार की।

लोकाशाह के उपदेश से जो ४५ श्रावक दीक्षित हुए थे, उन्होने ग्रपने गच्छ का नाम लोकाशाह गच्छ रखा। ज्ञानजी ऋषि के पश्चात् ग्राज तक की ग्राचार्य पाट परम्परा निम्नलिखित हैं—

६२ श्री भाणजी ऋषि	६३ श्री रूपजी ऋषि	६४ श्री जीवराजजी ऋषि
६५ श्री तेजराजजी ऋषि	६६ श्री कुंवरजी ऋषि	६७ श्री हर्ष ऋषि
६८ श्री गुलावचन्दजी ऋषि	६९ श्री परशुरामजी म	७० श्री लोकपालजी महाराज
७१ श्री महाराजजी स्वामी	७२. श्री दौलतरामजी महाराज	७३. श्री लालचन्दजी महाराज

आचार्य श्री दौलतरामजी म सा और अजरामरजी स्वामी सम कालीन थे। पूज्य श्री दौलतरामजी म सा ने स १८१४ फाल्गुन शुक्ला ५ को करीब १३ वर्ष की उम्र मे दीक्षा ली थी। आप कालापीपल (मालवा) ग्राम के वासी थे व जाति बघेरवाल थी।

आप अत्यन्त समर्थ विद्वान और क्रियापात्र सत थे। विचरण क्षेत्र मुख्य रूप से कोटा, बून्दी (हाडौती प्रदेश) के साथ साथ मेवाड मालवा था। आप एक वार विचरते हुए दिल्ली पधारे। उस समय दिल्ली मे दलपतराजजी नामक एक शास्त्रज्ञ श्रावक थे। वे मुख्य रूप से द्रव्यानुयोग के मर्मज्ञ थे। उनके द्वारा रचित नवतत्व प्रश्नोत्तर, दलपतराज के प्रश्नोत्तर, समकित छप्पनी, नय निक्षेप-प्रमाण आदि ग्रथ, सूत्रो की तुलना करते है।

पूज्य श्री दौलतरामजी म सा ने श्रावक श्री दलपतराजजी के सामने शास्त्रो के अध्ययन करने की भावना रखी, तव श्रावकजी ने अध्ययन कराने की स्वीकृति देते हुए कहा कि पहले दशवैकालिक सूत्र का अध्ययन करायेगे। इस पर पूज्य श्री ने कहा कि दशवैकालिक सूत्र की वाचना तो अनेक वार ले चुका हू और शिष्य-प्रशिष्य भी ले चुके हैं। अत भगवती सूत्र की वाचना लेने की भावना है। तव श्रावकजी ने कहा कि जैसी आपकी इच्छा, लेकिन मेरी दृष्टि से तो पहले दशवैकालिक सूत्र की वाचना लेना अच्छा रहेगा। दशवैकालिक सूत्र की वाचना प्रारभ हुई और श्रावकजी ने भिन्न-भिन्न दृष्टियो से सूत्र गत आशय को स्पष्ट करते हुए आगमो का सार समझाया।

पूज्य श्री और श्रावकजी के वीच हुए प्रश्नोत्तर आज भी उपलब्ध है। जिनके पढने से ज्ञात होता है कि दोनो महापुरुष समर्थ ज्ञानी थे।

पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के आगम ज्ञान की प्रशसा श्री अजरामरजी स्वामी ने सुनी, वे स्वय भी प्रकाण्ड विद्वान् व आगम मर्मज्ञ थे। फिर भी आपने पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के पास ज्ञान अभ्यास करने की इच्छा दर्शाई। तव लीवडी श्री सघ ने एक व्यक्ति के साथ पूज्य श्री दौलतरामजी म सा की सेवा मे प्रार्थना पत्र भेजा। उस समय पूज्य श्री कोटा-बून्दी मे विचरण कर रहे थे। उन्होने इस प्रार्थना को स्वीकार कर लीवडी की ओर विहार कर दिया। प्रार्थना पत्र लाने वाला व्यक्ति अहमदावाद तक तो साथ रहा और वाद मे वहा से श्री सघ को पूज्य श्री के पधारने का सन्देश देने लीवडी रवाना हो गया।

पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के लीवडी पधारने पर भावभना स्वागत किया गया। उन्ही दिनो श्री पूज्य अमरसिहजी म सा के नेश्रायवर्ती और समकित सार के कर्ता पण्डित मुनि श्री जेठमलजी म सा पालनपुर विराज रहे थे। वे शास्त्र अध्ययनार्थ लीवडी पधारे थे।

पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के चार शिष्य थे।

१ श्री गणेशारामजी म सा
२ श्री गोविन्दरामजी म सा
३ श्री लालचन्दजी म सा
४ श्री राजारामजी म. सा

आचार्य श्री लालचन्दजी म सा.

पूज्यश्री दौलतरामजी म सा के पट्टधर श्री लालचन्दजी म सा अन्तडी ग्राम के निवासी और सिलवट जाति के थे । वे एक कुशल चित्रकार थे । एक बार आप चित्र बनाते-बनाते कार्यवश बाहर चले गये, जाने की जल्दी मे चित्र बनाने की सामग्री-रग, तूलिका आदि ज्यो की त्यो खुली पडी रही। सयोग से एक मक्खी रग मे फस गई । लौटनें पर उसे मरा देखकर मन मे अनेक विचार आये और कुछ ग्लानि पैदा हुई ।

सौभाग्य से उन्ही दिनो पूज्यश्री दौलतरामजी म सा अन्तडी ग्राम मे पधारे हुए थे । आप उनके पास पहुचे और अपनी मन स्थिति बतलाते हुए दीक्षित होने का भाव प्रगट किया । पूज्यश्री ने योग्य पात्र जान दीक्षा दी कालान्तर मे आप पूज्यश्री दौलतरामजी म सा के पट्टाधिकारी हुए । आपके समय मे कोटा सम्प्रदाय मे २७ विद्वान् सत प्रसिद्ध हुए थे ।

पूज्यश्री लालचन्दजी म सा के नौ शिष्यो मे पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा सुप्रसिद्ध, आचार निष्ठ, विद्वान् सत थे ।

भगवान् महावीर स्वामी के बाद आर्य सुधर्मा स्वामी से लेकर आचार्य लालचन्दजी म सा तक ७३ आचार्यों का उल्लेख किया जा चुका ।

जिस प्रकार लोकाशाह ने शिथिलाचार के विरुद्ध क्राति का शखनाद किया था उसी प्रकार आचार्य श्री लालचन्दजी म सा के सुशिष्य महान् क्रियोद्धारक आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा ने तत्कालीन शिथिलाचार को हटाने के लिये तथा सयमीय अक्षुणता बनाए रखने के लिए सम्यक्ज्ञान युक्त क्रियाओ का आचरण कर आत्मशुद्धि के साथ जनता के समक्ष एक विशिष्ट आदर्श प्रस्तुत किया । जिनके सान्निध्य मे साधुमार्ग की सयमी क्रान्ति, जिनाकाश मे उद्घोषित होती हुई जन-जन के मन को आन्दोलित कर उठी ।

आपश्री की उत्कृष्ट साधना से प्रभावित होकर साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओ का विशाल समूह स्वत ही आपश्री को अपना आराध्य मानने लगा । यह समूह, जैन सघ के अन्दर होते हुए भी अलग-थलग ही परिलक्षित होने लगा ।

जिस प्रकार गगा का यमुना नदी के अन्दर मिल जाने पर भी उसका पाट दूर तक अलग-थलग दिखाई देता है ।

आपश्री ने कभी अलग सप्रदाय बनाने का प्रयास नही किया । यह तो स्वत ही चतुर्विध सघ तैयार हो गया और उन्होने सघ नायक के रूप मे आपश्री को मान लिया । इस प्रकार ७४वें पाट पर आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा विराजमान हुए ।

जिन आगे के आचार्यो के नाम निम्न है—

७४ महान्क्रियोद्धारक आचार्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा

७५ उद्भट विद्वान् आचार्य श्री शिवलालजी म सा
७६ निरासक्तयोगी आचार्य श्री उदयसागरजी म सा
७७ महानक्रियावान् आचार्य श्री चौथमलजी म सा
७८ दुर्जय कामविजेता आचार्य श्री श्रीलालजी म सा
७९ ज्योतिर्धर क्रातदृष्टा आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा
८० शातक्राति के जन्मदाता आचार्य श्री गणेशीलालजी म,सा
८१ समता समीक्षण योगी आचार्य श्री नानालालजी म सा (वर्तमान आचार्य श्री)

इन महापुरुपो ने साधुमार्ग की परम्परा को अक्षुण्ण रूप से प्रवाहित किया और वर्तमान आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य मे साधुमार्गी सघ निरतर विकासमान है ।

इन आठो क्रातिकारी आचार्यो का जीवन–वर्णन 'अष्टाचार्य गौरवगगा' मे किया गया है।

प्रस्तुत की प्रस्तुति

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा से लेकर आचार्य श्री चौथमलजी म. सा तक के चार आचार्यों का विशेष जीवन वृत्त उपलब्ध नही होता है तथापि यथा उपलब्ध घटनाओ के आधार पर चारो आचार्यों के जीवन वृत्त को आलोकित करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि पूर्व मे सक्षिप्त रूप मे, मैं "अष्टाचार्य जीवन झलक" नामक लघु जीवन परिचय लिख चुका हू किंतु उसमे आठो आचार्यों का जीवन नही बल्कि जीवन की झलक ही प्रस्तुत कर पाया था। उस परिचय को लिखते समय ही मैंने अपने सकल्प मे यह सकेत किया था कि विस्तृत जीवन परिचय लिखने का आयोजन भी गतिशील है। यद्यपि आद्य पाच आचार्यो का जीवन परिचय तो बहुत पूर्व ही लिख चुका था किंतु अन्त के तीन आचार्यों का विवेचन अवशिष्ट था। अन्यान्य कार्यों की व्यस्तता के कारण उसके लेखन मे थोडा विलम्ब हो गया। अब अष्टाचार्य के जीवनवृत्त के साथ ही आठो ही आचार्य भगवन्तो के विचार भी प्रस्तुत किए गए हैं। जिससे कि जीवन वृत्त के अध्ययन के साथ ही अध्येता उनके अनुभूतिपरक, सतत साधना से अनुरजित विचारो का अध्ययन कर अपने जीवन को सम्यक् दिशा मे नियोजित कर सकें। प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन मे विश्रुत विद्वान् श्री शातिचन्द्रजी मेहता का महत्त्वपूर्ण सहयोग विस्मृत नही किया जा सकता।

प्रस्तुत विषय मे साधुमार्गी परम्परा के आसन्न उपकारी, महान्, क्रातिकारी, ज्योतिर्धर आठ आचार्यों के जीवन परिचय के साथ ही "अष्टाचार्य जीवन झलक" मे से अष्टाचार्य के सस्कृत काव्य को भी सयोजित कर दिया गया है जिससे सस्कृत अध्येता गायन के रूप मे भी महापुरुषो की स्तुति का लाभ ले सकें।

अष्टाचार्यों के जीवन वृत्त के आलेखन मे विशेष कर निम्न ग्रन्थो से सहयोग एव उद्धरण लिये गये है—

1 टोडा रायसिंह स्मारिका
2 श्री मन्नालालजी म सा स्मृति ग्रन्थ
3. दिवाकर श्रीचौथमलजी म सा स्मृति ग्रन्थ
4 उदयचन्द चन्द्रिका
5 श्री जैन सुबोध हीरावली
6 श्री पानकुवरजी म सा का जीवन चरित्र
7. बावीस समुदाय
8 अष्टाचार्य जीवन झलक
9 पूज्यश्री श्रीलालजीम सा का जीवनचरित्र
10 आ श्री जवाहरलालजी म सा का जीवन चरित्र
11 श्री गणेशाचार्य का जीवन चरित्र
12 अन्तर्पथ के यात्री आचार्यश्री नानेश
13 उपाचार्य जीवन सस्मरण
14 श्रमणसघीयविषयो पर विश्लेषणात्मक निवेदन
15. श्रमणोपासक श्रद्धाजलि अ क
16 श्री पुष्करमुनि अभिनन्दन ग्रन्थ
17 श्री घासीलालजीम सा का जीवन चरित्र
18 आ.श्री आनन्दऋषिजी म सा का जीवन चरित्र
19. सफल सौराष्ट्र प्रवास
20 गुजरात प्रवास एक झलक आदि।

महापुरुषो का जीवन अनन्त गुणो का आगार होता है। उनका प्रत्येक कार्य एक विलक्षण महत्व को लिये हुए होता है। उन अपरिमेय गुणो पर प्रकाश डालना मेरे अल्प सत्व से वाह्य है। उनके जीवन विंदुओ पर लेखनी चलाना अपनी अज्ञता ही प्रकट करना है।

जिस प्रकार सहस्रो कोश गति करने पर भी समुद्र का किनारा प्राप्त नही किया जा सकता। नभ स्थल मे अनेक उडाने भरने पर भी आकाश का अ त प्राप्त नही किया जा सकता। भूलोक के अन्तर्गर्भ मे भी मानव कितना ही पैठता ही जाय फिर भी उसकी सीमा को प्राप्त नही कर सकता। ठीक इसी प्रकार महान् आत्माओ के अपरिमेय गुणो का यथावत् वर्णन करना दु साध्य ही नही असम्भव भी है। उन गुणो के महत्व को यथावत् व्याख्यापित करने की शक्ति न वाचा में है और न लेखनी मे ही। तथापि अन्तस्तोष के लिये यह यत्किंचित् प्रयास किया गया है।

एगे आयो-आत्मा एक है

प्रभु के इस उद्घोष के अनुसार विश्व की समस्त आत्माओ का मौलिक स्वरूप एक समान है। सभी आत्माओ मे एक समान शक्ति विद्यमान है, किन्तु विभिन्न रूप से कर्मावृत होने से उनकी ज्ञानादि शक्तियो मे भी विभिन्नता परिलक्षित होती है। आवश्यकता है कर्मावृत आत्मा को अनावृक्ष करने की।

इस अनावरण के लिये अनावरण की ओर निरन्तर गतिशील आत्माओ के जीवन का आदर्श चाहिये। जिस जीवनादर्श रूप दर्पण मे भव्य स्वय के प्रतिविम्ब को देखकर अपनी आत्मा पर लगे कर्मों के वव्वो को प्रक्षालित करने मे सक्षम हो सके।

भव्यो के समक्ष ऐसे आदर्श दर्पण को प्रस्तुत करने के लिये निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के सरक्षक आसन्न उपकारी आठ आचार्यो का जीवन वृत्त प्रस्तुत है।

जीवन दर्पण मे अपनी आत्मा को प्रतिविम्वित कर भव्य, कर्ममल को प्रक्षालित करने का प्रयास करें। यही अभीप्सा है।

मुनि ज्ञान

बुधवार दि. 8-8-1984
राजेन्द्र नगर (नेशनल पार्क के पास)
वोरीवली (पूर्व) वम्वई 66

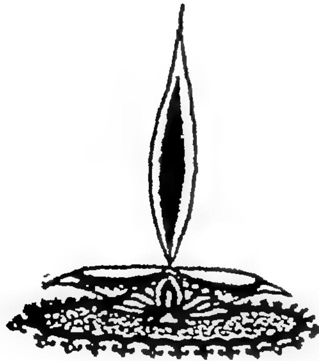
अष्टाचार्य-गुण-सौरभ

'मुनिज्ञान'

अहो रूप अहो ज्ञानं, अहो ध्यान अहो गुण. ।
अहो भक्ति अहो शक्ति सर्वं सर्वं अहो अहो ॥

ावार्थ :

- अहो आपका सौम्य रूप धन्य है
- अहो आपकी ज्ञानराशि धन्य है
- अहो आपकी प्रशस्त ध्यानसाधना धन्य है
- अहो आपका गुणसमूह धन्य धन्य है
- अहो आपकी प्रभुभक्ति धन्य है
- अहो आपका सयम–पराक्रम धन्य है
- अहो आपका सम्पूर्ण जीवन ही कैसा है
  यह सब वर्णनातीत अद्भुत है



आचार्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज साहब

: अष्टकम् :

(अनुष्टुप् छन्द)

(१)

दु ख–पूर्णे हि ससारे ऐश्वर्यनिचयैर्यु त' ।
सुख प्राप्तु न शक्नोति, क्षणभगुरजीवने ॥

भावार्थ दु खो से परिपूर्ण इस ससार मे ऐश्वर्यो से युक्त भी मनुष्य इस क्षणभगुर जीवन मे सुख पाने मे समर्थ नही है ।

(२)

प्रविचार्य च हृत्पिडे क्षयार्थं सर्वकर्मणाम् ।
ससारात् विरतो भूत्वा, श्रामण्ये सयमे रत. ॥

भावार्थ इस प्रकार हृदय मे विचार कर समस्त कर्मों का क्षय करने के लिए ससार से विरक्त होकर आप श्रमणो के सर्वविरतिरूप सयम से अनुरक्त हो गए ।

(३)

साधव समये यस्मिन् जीवने सुष्ठु सादरम् ।
शास्त्रानुसारमाचार, केऽपि कुर्वन्ति नो भुवि ॥

भावार्थ जिस समय वहुत से साधु इस क्षेत्र मे आगमानुसार सयमक्रियाओ का परिपूर्ण रूप से पालन नही करते थे ।

(४)

परीषहाश्च ससह्य इन्द्रियाणा दम कृत ।
तपसावृत्तिसक्षेपं, जीवन साधु निर्मितम् ॥

भावार्थ तव आपश्री ने पृथक् विचरण कर परीषहो एव उपसर्गों को सहन करते हुए इन्द्रियो को विशेप रूप से सयमित किया, वृत्तिसक्षेप तपश्चरण का आराधन करते हुए द्रव्य-मर्यादा आदि अनेक प्रकार को कठोर प्रतिज्ञाओ का पालन कर जीवन को भव्य वनाया ।

(५)

धृत्वा धृतिं विहारश्च, ग्रामे ग्रामे कृतो महान् ।
यस्य क्रिया–प्रभायाश्च, विस्तरोऽभूच्च सर्वत ।।

भावार्थ सयम-जीवन का कठोरता के साथ धैर्यपूर्वक पालन करते हुए ग्राम-ग्राम मे उग्र विहार किया, जिससे पूज्यश्री की दिव्य प्रभा का अत्यधिक विस्तार हुआ ।

(६)

कर्मणाञ्च विनाशाय, विदधे सुतप क्रियाम् ।
वह्नौ स्वर्णसमा शुद्धिरात्मनो विहिता हिता ।।

भावार्थ कर्मो का पूर्ण रूप से क्षय करने के लिए २१ वर्ष तक वेले वेले की कठोर तपश्चर्या की । यथा–स्वर्ण की शुद्धि अग्नि से होती है तथैव आपश्री ने हितकर आत्मशुद्धि तपश्चरण से की ।

(७)

अहिसासत्यमस्तेय, ब्रह्मचर्यापरिग्रहम् ।
सिद्धान्ताना स्वरूप च, जनस्याग्रे निरूपितम् ।।

भावार्थ अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का तथा जिनोपदिष्ट धर्म के मूलभूत सिद्धान्तो का विविध प्रकार का स्वरूप देश की जनता के समक्ष रखा ।

त्यागवैराग्यभावेन, श्रमणत्व विकासितम् ।
तस्यैव सुप्रभावेण, समाजोऽद्य प्रदीप्यते ।।

भावार्थ त्याग–वैराग्य की प्रवल भावना से श्रमणत्व का अर्थात् चतुर्विध सघ का विस्तार किया । उसी के सुप्रभाव से आज भी सम्पूर्ण समाज देदीप्यमान हो रहा है ।

द्वितीयमष्टकम्

(त्रोटक छन्द)

(१)

गृह–मोह–ममत्व–विनाशकर,
शुभ–सयम-भाव-रत विरतम् ।
सुसमाधियुत – गणिकीर्तिधर,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ गृह-परिवार सम्बन्ध के मोह-ममत्व का नाश करने वाले, ससार से विरत, प्रशस्त समय भाव मे रत, उत्तम समाधि से युक्त, आचार्यों के योग्य कीर्ति को धारण करने वाले महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(२)

प्रशमादि-विकास-गुणैं कलित—
मुपदेश-सुधा-वलित मुदितम् ।
महिते निज-मुक्ति-पथे निरत,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ शम-सवेगादि विकास के गुणो से शोभित, अमृतोपम उपदेश को प्रवाहित करने वाले, प्रसन्नचित्त, प्रशस्त मोक्षपथ मे निरत महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(३)

भव-पातक-मान-रुजा रहित,
सुखदायक-भाव युत सतत ।
भवभीतिहर शिव-सत्यवर,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ जन्म-मरणरूप ससार के गर्त मे गिराने वाले, अभिमान रूप आन्तरिक रोग से रहित, निरन्तर सुखदायक भाव से युक्त, भव-भीति को दूर करने वाले, शिव-सत्य का वरण करने वाले महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(४)

तपसा सहित विदुषा महित,
शशि-पूर्ण-सुशोभितदिव्यमुखम् ।
रवि-तुल्य-विभासित-दीप्तिधर,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ २१ वर्ष पर्यन्त बेले बेले के तप से युक्त, विद्वानो द्वारा पूजनीय, पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्रमा के समान दिव्य मुख वाले, सूर्य के समान विभासित दीप्ति से युक्त महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(५)

मनसा वचसा वपुषा विमल,
करुणा-धिषणा-गरिमादियुतम् ।

सुनयै सुगुणै मुक्तैरनघ,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ मन वचन और वपु (शरीर) से निर्मल, करुणा, धिषणा (वुद्धि) तथा गरिमादि गुणो से युक्त, मुनियो से सगुणो से एव सुकृतो से अनवद्य-चारित्री महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(६)

नगरे नगरे सुख-शान्तिकर,
वहु-साधु-जनै विनयाभिनुतम् ।
निजकर्मविदारकर विशद,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ नगर नगर मे सुख शान्ति का सचार करने वाले, अनेक मुनिवरो द्वारा विनयपूर्वक अभिवन्दित, उज्ज्वल चरित्रयुक्त, आत्मा को मलीमस वनाने वाले कर्मो का विनाश करने वाले, निर्मल महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(७)

शरणागत–रक्षणदक्षवर,
जगति प्रथित सुयशोभरितम् ।
जनसकटनाशक–भक्तिरत,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ शरणागत प्राणियो की रक्षा करने मे दक्ष, जनो मे श्रेष्ठ, जगत्प्रसिद्ध, सुयश से परिपूर्ण, जन-जन के सकट नाशक, परमात्मभक्ति मे रत, महामुनि श्री हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

(८)

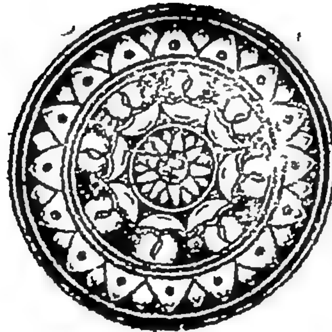
भव-सागर-पक-निमग्ननृणा,
जिन-भाषितवोध-सुख प्रददौ ।
तमह गुण-सागर-वुद्धिनिधि,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ॥

भावार्थ भव-सागर-पक (कीचड) मे निमग्न मनुष्यो को जिन्होने सुखकारी जिनोपदिष्ट वोध प्रदान किया, उन गुणो के सागर और वुद्धि के निधान महामुनि हुक्मीचन्दजी महाराज को मैं नमस्कार करता हू ।

छद अनुष्टूप्-प्रशस्ति

गुरुहुक्म्यष्टक स्तोत्र,
मुनिज्ञानेन निर्मितम् ।
पठन्ति ये नरा भक्त्या,
सिद्धिसौध व्रजन्ति ते ।।

भावार्थ मुनि 'ज्ञान' के द्वारा निर्मित पूज्य हुक्म्यष्टक स्तोत्र को जो मनुष्य भक्तिपूर्वक पठन-श्रवण करते हैं, वे मुक्ति रूपी महल को प्राप्त करते है ।



आचार्य श्री शिवलालजी महाराज साहब

❀ अष्टकम् ❀

(१)

विशिष्टलक्षणैर्युक्तो, धामनियाख्यग्रामके ।
अन्वर्थनामसयुक्त, समुद्भूत शिवो गणी ॥

भावार्थ मध्यप्रदेश के अन्तर्गत धामनिया नामक ग्राम मे अर्थ के अनुसार नाम-वाले अर्थात् शिव-कल्याणकारी एव शुभ लक्षणो से सम्पन्न शिवाचार्य (आचार्य श्री शिवलालजी महाराज) का जन्म हुआ ।

(२)

सपूर्णे शैशवे काले, जैन–धर्म समाश्रित ।
क्षणिकान् कामभोगाश्च, समाज्ञाय जहौ शिव ॥

भावार्थ बाल्यकाल के पूर्ण होने पर शिवाचार्य ने कामभोगो की क्षणिकता को जानकर उनका परित्याग किया तथा आर्हत् धर्म को स्वीकार किया ।

(३)

ससारासारता ज्ञात्वा, सुसमगुणास्तथा,
परमात्मपद प्राप्तु, श्रमणत्व च धारितम्

भावार्थ ससार की असारता एव सयम के निर्मल गुणो या शुद्ध सयम के गुणो को जानकर परमात्मपद को प्राप्त करने के लिए श्रमणत्व अवस्था को अगीकार किया ।

(४)

आत्मान पावन कर्तु, तपस्याकरणे रत ।
स्वर्णतुल्या कृता शुद्धि, स्वात्मनो वृद्धिकारिका ॥

भावार्थ आपने आत्मा को निर्मल करने के लिए लगभग ३५ वर्ष तक निरन्तर एकान्तर तप किया । जैसे अग्निप्रयोग से स्वर्ण की शुद्धि होती है, उसी प्रकार आपने तपश्चर्या द्वारा गुणो की वृद्धिकारक आत्मशुद्धि की ।

(५)

श्रमणाना समाचारी योक्ता भगवता स्वयम् ।
मूलोत्तर–गुणान्सर्वान् बोधयामास देशनैं ।।

भावार्थ प्रभु महावीर ने श्रमणो का पालन करने योग्य जो समाचारी स्वय अपने मुखारविन्द से फरमाई है उसे तथा मूल व उत्तर गुणो को धर्मदेशना के द्वारा समक्ष रखा ।

(६)

नराणामुपदेशेन, प्रदत्त जीवन नवम् ।
देशना च सुधा कृत्वा, मर्त्या धर्मे दृढीकृता ।।

भावार्थ भव्य प्राणियो को जीवन सुखकारी आत्मबोध प्रदान कर जीवन की नई दिशा प्रदर्शित की । देशना–सुधा का पान करा कर धर्म मे सुदृढ बनाया ।

(७)

अधर्मस्य विनाशार्थ सुधर्मस्य प्रचारणे ।
देशे-देशे भ्रमित्वा हि, स्याद्वादादि प्रसारितम् ।।

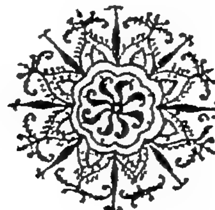
सुधर्मञ्च-प्रचारितुम्

भावार्थ कुधर्म का नाश करने के लिए और सुधर्म का प्रचार करने के लिए देश-देश मे भ्रमण कर अपनी प्रखर विद्वत्ता से जिन-भाषित स्याद्वाद आदि सिद्धान्तो को विविध प्रकार से प्रचारित किया ।

(८)

जीवनान्त समाज्ञाय, अभ्युदयाय ददौ पदम् ।
देहोत्सर्ग कृतो येन भव्यपण्डितमृत्युना ।।

भावार्थ अपने जीवन के अवसान को जानकर अपने सुयोग्य शिष्य श्री उदयसागरजी को युवाचार्य पद प्रदान किया । तत्पश्चात् भव्य जीवो को ही प्राप्त होने योग्य पण्डितमरण से देह का उत्सर्ग किया ।



आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज साहब

❁ अष्टकम् ❁

(१)

जोधपुरमिति ख्यात विख्यात, मरूभूमिविभूषणम् ।
नगर प्रचुरा यत्र, जैनधर्मानुयायिन ।।

भावार्थ · मरूधरा का अलकार रूप जोधपुर नाम से प्रसिद्ध नगर है, जिसमे जैन धर्म के अनुयायी विपुल सख्या मे निवास करते हैं ।

(२)

एकदा नगरे रम्ये, गुणैं सर्वै समायुत ।
रविरिव प्रभोपेत ,उदयोऽभ्युदितो महान् ।।

भावार्थ एकदा इस रमणीक नगर मे सर्व गुणो से सपन्न तथा सूर्य के समान प्रभा से युक्त 'उदय' शिशु का उदय–समद्भव (जन्म) हुआ ।

(३)

प्रसृते सुख–शान्ती च, पित्रो पावनमानसे ।
प्राप्य सल्लक्षण पुत्र, मुदिता मुदितस्तथा ।।

भावार्थ सुन्दर एव प्रशस्त शुभ लक्षणो से युक्त पुत्र को प्राप्त कर माता के मन मे वहुत प्रसन्नता हुई, पिता का चित्त भी आह्लादित हो उठा ।

(४)

शशीव शुक्लपक्षस्य, वर्द्धितश्च दिने दिने ।
यौवन च यदा प्राप्तो गत उद्वाहमण्डपे ।।

भावार्थ शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की कलाओ के समान वालक उदय अहर्निश वृद्धि को प्राप्त होते गए । फिर क्रमश शैशव-अवस्था को पार कर जव यौवन अवस्था मे प्रवेश किया तो सासारिक परपरा के अनुसार आप विवाह करने के लिए मण्डप मे गये ।

(५)

उष्णीष, पतित शीर्षात्, भोगाच्च विरतस्तदा ।
श्रमणत्व गृहीत तत् निजात्मा निर्मल कृत ।।

भावार्थ तव वहा आपके मस्तक से साफा नीचे गिर गया । इस घटना से क्षणिक काम-भोग से

आप विरक्त हो गये । तदनन्तर भवाब्धि को पार कराने वाले पोत समान सयम को अगीकार कर आत्मिक निर्मलता मे लीन हो गये ।

(६)

श्रुते सुकोविदैर्विज्ञै सुरा–सुरेन्द्रदुर्जयम् ।
विषयभोगमब्रह्म, जितमात्मबलेन हि ।।

भावार्थ श्रुतज्ञान मे पारगत तथा विवेकशील उदयाचार्य ने सुरेन्द्रो एव असुरेन्द्रो द्वारा भी अजेय विषय–भोग रूप अब्रह्म (मैथुन) को अपने आत्म–बल से जीत लिया ।

(७)

अनेकान्तकृतान्तज्ञो, मुमुक्षूणा शिरोमणि ।
ज्ञानाचारेण सपन्न, गणीशोदयसागर ।।

भावार्थ स्याद्वाद सिद्धान्त के रहस्य के विज्ञाता, मुक्ति के इच्छुक भव्यजनो मे शिरोमणि श्रीमद् उदयाचार्य ने ज्ञान-पूर्वक आचरण कर स्वात्मशुद्धि की ।

(८)

एकादशाङ्गशास्त्राणा, पठने पाठने रत ।
सयमाराधको धीमान्, समाधिमरण गतः ।।

भावार्थ विशुद्ध बुद्धि से विभूषित वे एकादशाङ्ग शास्त्रो के पठन-पाठन मे लीन रहे, निरन्तर सयम की आराधना मे तत्पर रहे और अन्त मे समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए ।



आचार्य श्री चौथमलजी महाराज साहब

❀ अष्टकम् ❀

(१)

मरुप्रदेशे पालीति, नगरमस्ति सुन्दरम् ।
तत्र-चौथ-रविर्जात , तस्य ज्योतिर्विभासितम् ।।

भावार्थ मरुस्थल प्रात मे पाली नामक भव्य नगर है । इस नगर मे वाल-सूर्य की भाति गुणपु ज चौथाचार्य (आचार्य-श्री चौथमलजी महाराज) विभासित हुए, जिनकी साधनामय ज्योति दिग्-दिगन्त मे विकीर्ण हुई ।

(२)

पापतमोविनाशाय, प्रकाशाय निजात्मन ।
ज्ञात्वाऽसार च ससार, भोगाच्च विरतोऽभवत् ।।

भावार्थ पाप रूपी काली घटा का नाश करने के लिए तथा आत्मा के स्वाभाविक शुद्ध स्वरूप को विकसित करने के लिए ससार की असारता का वोध प्राप्त कर आप सासारिक भोगोपभोग से विरक्त हो गए ।

(३)

वीरभूमौ समुद्भूय, सुवीरो भवितु महान् ।
परीषहोपसर्गाश्च, साम्येन शामिता सदा ।।

भावार्थ वीरभूमि मे उत्पन्न होकर कर्म-विजेता वनने के लिए आपने परिषहो एव उपसर्गो को साम्य भाव से सदा समाहित किया । ससारासारता ज्ञात्वा,

(४)

विचाराऽचारपक्षेषु, जनस्याग्रे सुदेशनाम् ।
दत्वा जिनेन्द्रधर्मस्य, ज्ञानरश्मिर्विभासिता ।।

भावार्थ जनमेदिनी के समक्ष जिनोपदिष्ट विचार एव आचार के वहुमुखी स्वरूप को समझाकर जिन धर्म की अलौकिक ज्ञानरश्मि को स्वमनीषा मे विभासित किया ।

(५)

शास्त्र–ज्ञान समदाय, दीप्ते गणिवरे पदे ।
क्रियया निर्मलो भूत्वा, शुद्धिस्स्वस्यात्मन कृता ।।

भावार्थ शास्त्रज्ञान को प्राप्त करके गणिवर-आचार्य-पद को सुशोभित किया । वोधपूर्ण कठोरतम आचरण से निर्मल होकर आत्मिक स्वरूप मे रमण करने लगे-आत्मशुद्धि की ।

(६)

ज्ञान-ध्यान-समायुक्त; साधनाया रतो दृढ ।
कृत्वाऽत्युग्रतपश्चर्या, मुक्तिमार्ग प्रसाधित ।।

भावार्थ आप ज्ञान-ध्यान से युक्त होते हुए साधना मे अतिशय दृढ हुए तथा आपने अतीव कठोर तपश्चर्या करके मुक्ति-मार्ग की उत्कृष्ट साधना की ।

(७)

यस्य क्रिया प्रभावेण, श्रामण्य सुप्रतिष्ठितम् ।
तत्सौरभभरेणैव, वासित जन-जीवनम् ।।

भावार्थ जिनकी अनुपम क्रिया के प्रभाव से श्रमणत्व-साधुपद की प्रतिष्ठा मे वृद्धि हुई । उसकी सयमरूपी भीनी-भीनी सुगन्ध से जन-जन का जीवन सुवासित हुआ ।

(८)

स्वायु पूर्ण समाज्ञाय, श्री श्रीलालमहात्मने ।
युवाचार्यपद दत्वा, गत स्वर्ग-सुखालयम् ।।

भावार्थ मरणधर्मा शरीर की क्षीणता से अपने आयुष्य की समाप्ति सन्निकट जानकर चतुर्विध सघ की सुव्यवस्था के लिए श्री लालजी नामक सुयोग्य शिष्य को युवाचार्य पद प्रदान कर आपने अनुपम सुखालय (स्वर्ग) की ओर प्रयाण किया ।



आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज साहब

❀ अष्टकम् ❀

(१)

कामशत्रुविजेतुश्च, सर्वाङ्गेण सुशोभितु ।।
श्री श्रीलाल-गणीशस्य टोक-ग्रामे समुद्भव ।।

भावार्थ सुरासुरेन्द्रो द्वारा दुर्जय काम-शत्रु को जीतने वाले, सर्वाङ्गो से सुशोभित आचार्य श्री श्रीलालजी म सा का 'टोंक' ग्राम मे जन्म हुआ ।

(२)

विरक्त-भावसपृक्त, धार्मिकाचरणे रत ।
जले कमलनिर्लिप्तो, बभूव गृहिजीवने ।।

भावार्थ पूज्य श्री बचपन से ही विरक्ति के भाव मे विचरण करते हुए सामायिक, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, ध्यान आदि धार्मिक आचरण मे लीन रहते थे । जिस प्रकार जल मे कमल निर्लिप्त रहता है उसी प्रकार आप भी गृहस्थ अवस्था मे रहते हुए ससार से पूर्ण विरक्त थे ।

(३)

शैशवसमयोद्वाह जनकाभ्या च कारित ।
तथापि पूर्णरूपेण ब्रह्मचर्य सुपालितम् ।।

भावार्थ पुत्र की विरक्त अवस्था देखकर कही यह साधु न बन जाय, इस विचार मे माता-पिता ने बचपन मे ही आपका विवाह कर दिया । फिर भी आपने मुन्दर ढग ने दृढता के साथ 'तवेसु वा उत्तम-बभचेर' समस्त तपश्चरणो मे उत्तम ब्रह्मचर्य का पालन किया ।

(४)

चुन्नीलाल पिता यस्य, जननी 'चाद' नामिका ।
श्री श्रीलालस्तयो पुत्रो, द्योतितो विश्वमण्डले ।।

भावार्थ आपश्री के पिता का नाम चुन्नीलालजी और माता का नाम चादकवर बाई था । उनके पुत्र पूज्य श्री श्रीलालजी विश्व मे देदीप्यमान हुए ।

(५)

स्वेनैव दीक्षितो भूत्वा, शास्त्रस्याध्ययन कृतम् ।
नगरे-नगरे भ्रान्त्वा, जैन धर्म प्रसारित ।।

भावार्थ आप माता-पिता के द्वारा आज्ञा प्राप्त न होने पर प्रथम स्वयमेव दीक्षित हुए तथा आगमो का गहन अध्ययन किया और देश देश मे नगर-नगर मे भ्रमण कर जैनधर्म का प्रचार-प्रसार किया ।

(६)

आचार्यपदवी प्राप्य, शिष्याणा सुष्ठु शिक्षणे ।
नक्तदिवा च शास्त्राणा, स्वाध्याय-करणे रत ।।

भावार्थ अपने तप सयम एव प्रतिभा के बल से आचार्य पद प्राप्त कर आचार्य श्री शिष्यो को सुशिक्षित करने मे और निरन्तर स्वाध्याय मे अनुरक्त रहे ।

(७)

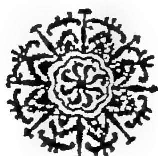
एषा सदुपदेशेन, बहुभि भव्यप्राणिभि ।
सप्त कुव्यसन त्यक्त्वा, जैनधर्मश्च पालित ।।

भावार्थ आपश्री के उपदेशामृत से बहुत से भव्य आत्माओ ने सप्तकुव्यसनो का त्याग कर जैनधर्म स्वीकार किया ।

(८)

स्वायु पूर्णं समाज्ञाय योग्य ज्ञात्वा जवाहरम् ।
आचार्यपदवी दत्वा प्राप्त चिरशिवालयम् ।।

भावार्थ अन्त मे अपनी आयु की पूर्णता को जानकर प्रकृष्ट प्रतिभा-सपन्न, सुयोग्य मुनि-पुगव जवाहरलालजी महाराज को अपना उत्तराधिकारी आचार्य बनाकर आपने आनन्दधाम प्राप्त किया ।



आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब

❀ अष्टकम् ❀

(१)

कषाय-ग्रस्त ससार, दृष्ट्वा चेतश्च नो रतम् ।
आत्मावबोध-लब्ध्यर्थं 'मगन' शरण गत. ॥

भावार्थ . ससार को कषायो से ग्रस्त देखकर उनका मन ससार मे रत नहीं हुआ । तब आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के लिये आप श्री मगनमुनिजी की शरण को प्राप्त हुए ।

(२)

सार्धमासे गुरावेव, दुर्भाग्येण दिवगते ।
आगममर्म-बोधार्थ, श्रावकात् पठन कृतम् ॥

भावार्थ दुर्भाग्य से डेढ मास मे ही गुरुजी स्वर्गवास को प्राप्त हो गये । तब आगम-ज्ञान पाने हेतु आपने श्रावको से अध्ययन किया ।

(३)

भित्वा प्रसृतसघर्ष, समत्वै पूरित जगत् ।
महात्मगान्धिना प्रोक्त, भारते द्वौ जवाहरौ ॥

भावार्थ ततश्च ससार मे प्रसृत सघर्ष को दूर करके ममत्व से समार को पूरित किया । जिससे विश्ववद्य बापू महात्मागाधी द्वारा कहा गया-भारत मे एक नही, दो जवाहर हैं । राजनीति मे पडित जवाहरलाल नेहरू और धर्मनीति मे आचार्य श्री जवाहरलालजी हैं ।

(४)

ज्योतिर्विकसित यस्य पूज्यस्याविगत पदम् ।
अभूवनुत्तमा. शिष्या, रत्नत्रयसमन्विता ॥

भावार्थ जिनकी ज्ञान-ज्योति का विकास हुआ और आप आचार्य पद पर आसीन हुए । तब उनके रत्नत्रय युक्त तथा अनेक गुणो से उत्तम शिष्य हुए ।

(५)

घर्मश्रमापनोदाय, मोदायोदारचेतसाम् ।
सद्धर्म-मण्डन कृत्वा चानुकम्पा-कृति कृता ॥

भावार्थ घर्म सम्बन्धी भ्रम को निवारण करने के लिए तथा उदार अर्थात् दया-दानादि मे उत्साहवान् चित्त वाले जनो के प्रमोद के लिए 'सद्धर्ममण्डन' नामक ग्रन्थ की तथा 'अनुकम्पाविचार' आदि सद्ग्रन्थो की रचना की ।

(६)

विद्याविशारद स्वामी, शास्त्रार्थे विजयी सदा ।
कवीना विदुषा वैया-करणाना सुधी प्रधी ॥

भावार्थ आचार्य प्रवर विद्याओ मे विशारद थे तथा शास्त्रार्थ करने मे सदा विजयी हुए। कवियो, विद्वानो और वैयाकरणो मे श्रेष्ठ थे । कुशाग्र बुद्धि से सम्पन्न थे ।

(७)

सुदीर्घकाल-पर्यन्त, सुशीलादि-क्रियाकर ।
भीनासर-यशोभूमौ, सप्राप्तस्त्रिदशालयम् ॥

भावार्थ दीर्घकाल पर्यन्त सयम ब्रह्मचर्यादि क्रियाओ का पूर्णरूपेण पालन करते हुए बीकानेर के उपनगर यशोभूमि भीनासर मे आप स्वर्गलोक को प्राप्त हुए ।

(७)

देहाज्जवाहरो नास्ति यशसा तु सनातन ।
ज्ञानेन्द्रमुनिना तस्य गुणाना कीर्त्तन कृतम् ॥

भावार्थ यद्यपि वर्तमान मे शरीर से पूज्य श्री जवाहरलालजी विद्यमान नही है किन्तु अपने यश-शरीर से वे सदा-सर्वदा विद्यमान रहेगे । उन महापुरुष का गुणकीर्तन मुनि ज्ञान द्वारा किया गया ।



आचार्य श्री गणेशीलालजी महाराज साहब

❀ अष्टकम् ❀

(१)

अज्ञानकर्दमे मग्न, जीव ससार-सागरे ।
वैषम्येण समायुक्त, प्राप्तुमर्हति नो सुखम् ।।

भावार्थ ससार रूपी समुद्र के अन्दर अज्ञान रूपी कीचड मे मग्न तथा विषमता से युक्त जीव कभी भी सुख शान्ति को प्राप्त नही कर सकता ।

(२)

इत्य मनसि सञ्चिन्त्य, प्राप्त वैराग्य-भावनाम् ।
जवाहरगुरो पार्श्वे, दीक्षितोऽध्ययने रत ।।

भावार्थ : इस प्रकार मन मे विचार कर आप वैराग्य-अवस्था को प्राप्त हुए तथा श्री जवाहराचार्य के समीप दीक्षित होकर आगम-पठन मे रत हुए ।

(३)

साङ्गोपाङ्गसुशास्त्राणा मुमर्मोद्घाटन कृतम् ।
शास्त्रे विचक्षणो भूत्वा, जनकल्याणमाचरत् ।।

ावार्थ आपने शास्त्रो के अग और उपागो के रहस्य का समुद्घाटन किया और उनमे पूर्ण विचक्षण होकर मनुष्यो का कल्याण किया ।

(४)

ग्रामे ग्रामे भ्रमित्वा च, पापाज्जीवा हि रक्षिता। ।
रागद्वेषमपाकर्तुम्, वीरवाणी प्रसारिता ।।

वार्थ : ग्राम ग्राम मे परिभ्रमण कर पापो से जीवो की रक्षा की तथा राग-द्वेष को दूर करने के लिये भगवान् महावीर की वाणी का प्रचार किया ।

(५)

सर्व-श्रमणसघस्य, युवाचार्यपद गत ।
तत्राचारस्य शैथिल्यं, दृष्ट्वा निजपद जहौ ।।

भावार्थ स्थानकवासी समाज के उपाचार्य पद को प्राप्त किया, किन्तु वहा आचार की शिथिलता देख अपने पद को छोड दिया ।

(६)

शरीरे चैकदा तस्य, महाव्याधिसमुद्‌भवे ।
क्षमया सहन कृत्वा, व्यग्रता नैव दर्शिता ।।

भावार्थ एकदा आपके शरीर मे महान् व्याधि उत्पन्न होने पर उसे क्षमा पूर्वक सहन किया पर आपने किंचित् मात्र भी व्यग्रता प्रदर्शित नही की ।

(७)

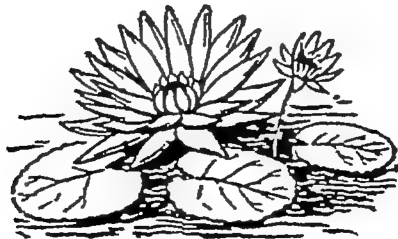
धुर समर्प्य नानेशे, ज्ञात्वा स्वमरणान्तकम् ।
तत्याजौदारिक देह, विद्यमानो गुणै सदा ।।

भावार्थ सघ का भार सुयोग्य शिष्य नानेश को देकर के अपने मरणान्त को जानकर पडित मरण पूर्वक औदारिक शरीर को त्याग किया । तथापि गुणो के द्वारा तो वे आज भी विद्यमान है ।

(८)

यत्र तत्र च सर्वत्र, प्रसृत गुणसौरभम् ।
गणेशाचार्यपूज्यस्य, धराया शाश्वत ध्रुवम् ।।

भावार्थ पूज्य गणेशाचार्यजी का गुण–सौरभ अवनितल पर यत्र तत्र सर्वत्र शाश्वत ध्रुव रूप से फैला हुआ है ।



आचार्य श्री नानालालजी महाराज साहब

: अष्टकम्

(१)

मेवाडे प्रथिते प्रान्ते, दाताग्रामे समुद्भव ।
ममताबन्धन छित्त्वा, सयमजीवने रत ।।

भावार्थ प्रसिद्ध मेवाड प्रान्त के दाता ग्राम मे जन्म लेने वाले वर्तमान शासनेश (आचार्य श्री नानालालजी म सा) जागतिक बन्धन को तोडकर सयममय जीवन मे निरत हो गए ।

(२)

आगमज्ञाननिष्णात, गणिपदे सुशोभित ।
वीरवाणी प्रचारार्थ, ददाति देशनामुधाम् ।।

भावार्थ आप अध्ययन करके आगमों के मर्म मे निष्णात हुए तब गणेश गणिवर ने आपको गणिपद पर सुशोभित किया । ततश्च विश्व भर के अन्दर आप देशनासुधा का जनसमुदाय को पान करा रहे है ।

(३)

वैषम्यस्य विनाशार्थ, समतैवैकमौपधम् ।।
तत्सिद्धान्तस्वरूप हि, सक्षपेण निगद्यते ।।

भावार्थ : व्यक्ति से लेकर अखिल विश्व तक प्रसृत विषमता का विनाश करने के लिये समता ही एक मात्र औषध है, जिसका आप प्रसार कर रहे हैं । उन्ही सिद्धान्तो के स्वरूप को सक्षेप मे कहते हैं ।

(४)

समतासिद्धान्त-दर्शन

गृहणाति हृदि भावेन, त्याग-वैराग्य-सयमम् ।
लभते समसिद्धान्त, जीवनोन्नतिकारकम् ।।

भावार्थ जो साधक आन्तरिक भावना के साथ जीवनोन्नतिकारक त्याग, वैराग्य, सयम को ग्रहण करता है, वह समता-सिद्धान्त को प्राप्त करता है ।

जीवन-दर्शन

(५)

पल सुरापणाखेटा, चौर्यं वेश्यापराङ्गनाः ।
सप्त व्यसनसत्याग, दर्शन जीवनस्य तत् ॥

भावार्थ मास, मदिरा, जुआ, शिकार, चोरी, वेश्यागमन, परस्त्रीगमन इन सात कुव्यसनों का जो त्याग करता है वह जीवन-दर्शन को प्राप्त करता है ।

(६)

आत्मदर्शन

पचमहाव्रताना च, शुद्धरूपेण जीवने ।
कुरुते पालन नित्य, समाप्नोत्यात्मदर्शनम् ॥

भावार्थ जो जीवन मे शुद्ध रूप से पच महाव्रतो का पालन करता है वह आत्मदर्शन को प्राप्त करता है ।

(७)

परमात्मा-दर्शन

कर्मणा विप्रणाशेन, सप्राप्याऽयोगिजीवनम् ।
विशुद्ध लभते प्राणी, परमेशपद परम् ॥

भावार्थ प्राणी अष्ट कर्मों का सम्पूर्ण रूप से विनाश कर देने से अयोगी जीवन को प्राप्त करके विशुद्ध परमात्मा पद प्राप्त करता है ।

(८)

यावत्सत्व दिनेशस्य, शैलेशस्य कथा तथा ।
नानेशस्य यश शस्त, शाश्वत काश्यपीतले ॥

भावार्थ जब तक विश्व मे सूर्य विद्यमान है तथा सुमेरु पर्वतराज की सत्ता है तब तक मुनिराज नानेश का निर्मल और प्रशस्त यश भूतल पर विद्यमान रहेगा ।

समता-विभूति-आचार्य श्री नानेशाष्टकम्

छन्द-द्रुतविलम्बित

सकल सौख्य-सुधारसपायक ।
विमल-सयम-शील-सुसायकम् ।
सतत-सघ-सुबोधन-दायक ।
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ॥

भावार्थ सकल सुखकारी अमृत रस का पान कराने वाले, विमल सयम एव क्षमा रूप प्रशस्त शास्त्र को धारण करने वाले, चतुर्विध सघ को अहर्निश सुबोध देने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू।

अमित-सागर-साम्य-समाहितम्,
क्षिति-विहार-विशिष्ट-दिवाकरम् ।
परमघातक-रोष-विघातकम्,
प्रसमताविभव प्रणमाम्यहम् ।।

भावार्थ समता रूप बिना तट के अपार-अगाध समुद्र को समाहित करने वाले, पृथ्वी पर विचरण करने वाले, आध्यात्मिक सूर्य तथा आत्मगुण-घातक क्रोध का विघात करने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू ।

मननपूर्वक शास्त्र–विकासक,
मसुमता करुणा-वरुणालयम् ।
सुखद सयम–सस्कृतिपालकम्,
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ।।

भावार्थ चिंतन मननपूर्वक शास्त्र का विकास करने वाले, प्राणियो के प्रति करुणासागर, सुखद सयम सस्कृति पालन करने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू ।

जड–सुचेतन-भेदनकारकम्,
निविड-मोह-समूह-विनाशकम् ।
विवि विधान-विवेक विधायकम्,
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ।।

भावार्थ जड चेतन का भेद बताने वाले, सम्पूर्ण मोह रूपी मद का विनाश करने वाले, विवेकपूर्ण सयम के विधानो को बतलाने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू ।

शिथिल-सयम जीवन-वारकम्,
कमल-शील-सुगध-सुवासितम् ।
शशि-समान-विभासित-वक्त्रकम्,
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ।।

भावार्थ शिथिल सयम का विनिवारण करने वाले, शील रूपी कमल की सुगन्ध से सुवासित, चन्द्रमा के समान विभासित मुखमण्डल वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूं ।

आगम-मुक्ति सुखाब्धिसमीहया,
भव-विभाव-सुतापित-जीवने ।
मद-ममत्व - विलास- विवर्जकम्,
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ॥

भावार्थ अगम्यमुक्ति के सुख की इच्छा से प्राणियो के भव रूपी विभाव से तृप्त जीवन मे मद ममत्व को दूर करने वाले अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हू ।

सकलकर्म--विलास--विनाशने,
शुभद--शास्त्र--विलोडनतत्परम् ।
परमधर्मरत दमितेन्द्रियम्,
प्रसमता विभव प्रणमाम्यहम् ॥

भावार्थ : समस्त कर्मो नाटक का अन्त करने हेतु सुखकारी शास्त्र के स्वाध्याय मे निरत, परम धर्म में रत, इन्द्रियो का दमन करने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू ।

अचल--मेरु--समो यम-सयमे,
गहन--सागर--तुल्य-धृतिर्यक ।
प्रखर-बुद्धियुतस्तमहर्निशम्,
प्रसमता-विभव प्रणमाम्यहम् ॥

भावार्थ अचल मेरु पर्वत के समान महाव्रतो मे और सयम मे दृढ, गहन सागर के समान धैर्य को धारण करने वाले, प्रखर प्रतिभा से सम्पन्न, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हू ।

प्रशस्ति छद अनुष्टुप्—

श्री नानेशाष्टक स्तोत्र,
शिष्यज्ञानेन निर्मितम् ।
धारयन्ति गुणान् हृद्यान्,
प्राप्नुवन्ति सुखालयम् ॥

भावार्थ मुनि 'ज्ञान' द्वारा रचित आचार्य श्री नानेशाष्टक स्तोत्र का गान कर जो भव्य प्राणी उनके गुणो को यथाशक्य धारण करते हैं, वे अपूर्व सुख को प्राप्त करते हैं ।



अष्टाचार्य-गुणाष्टकम्

छन्द : शार्दूलविक्रीडितम्

(१) आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज साहब

शास्त्राणां विधिपूर्वकं मुनिजना कुर्वन्ति नो स्वक्रियाम्,
ज्ञात्वा, जीवन-सर्जने परिषह ससह्य, शास्त्रे रत ।
तत्वानां मथनेन सर्व-सुखद वोध नरेभ्यो ददौ,
ज्ञानेनाचरणेन-योग-निरतो वन्दे हि हुक्मिगुरुम् ॥

हिन्दी काव्य :

शास्त्रो की विधि–भाव से मुनिजनो को पालना थी नही,
आत्मा के सुविकास मे परिषहो को साम्यता से सहा ।
शास्त्राभ्यास विमर्श के मधुसुधा सुज्ञान पूरा दिया,
हुक्मी भानु सुवोध आचरण से दीपे धरा मे सदा ॥

भावार्थ मुनिजन शास्त्रो की विधि के अनुसार अपनी क्रियायें नहीं करते थे । ऐसा जानकर जीवन निर्माण मे परिषहो को सहन कर, शास्त्र-पठन मे रत हुए और तत्वो के अभ्यास से प्राणियो को सुखद उपदेश फरमाया । इस प्रकार ज्ञान और आचरण मे योग मे निरत हुक्मी गुरुवर को नमस्कार करता हू ।

(२) आचार्य श्री शिवलालजी महाराज साहब

वैषम्येण चराचर सविपद दृष्ट्वा मनो नो रतम्,
पापाद् दूरगत सरागनिलय हित्वा व्यधान् मुण्डनम् ।
आचार्यश्च गुणान्वित सुतपसा ससारमोह जहा-
वभोज मकरालये च विमलो वन्दे शिव कोविदम् ॥

हिन्दी काव्य

ससार स्थिति का विचार करके आसक्ति से दूर हो,
पापो से सुविरक्त हो विषमता को त्याग के चित्त मे ।
हो आचार्य सुधी सुवीर तप से निष्पाप हो भाव मे,
ज्यो इदीवर सिंधु मे शिवगणी दीपे सुधी लोक मे ॥

भावार्थ : चराचर लोक को विषमता से दु खी देखकर ससार मे जिनका मन लीन नही हुआ जिन्होने पाप से दूर हो, तप के द्वारा राग समूह का नाश कर मुण्डन किया, तथ आचार्य के गुणो से युक्त 'सु' सम्यक् ज्ञान सहित(३१ वर्ष पर्यन्त एकान्तर की) तपश्चय के द्वारा ससार-मोह का नाश किया । इस प्रकार समुद्र मे कमल के समान निर्लिप विचक्षण शिवाचार्य को नमस्कार करता हू ।

(३) आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज साहब

दु खाना शमनादमु गणिवर वैराग्यभावैर्यु तम्,
भव्याना हृदयाङ्गणात् शशिसम मिथ्यात्वविध्वसकम् ।
शान्त दान्त-विशुद्ध-भाव-भरित रत्नत्रयाराधक,
आचार्योदय-सागर गुणनिधि वन्दामहे सादरम् ॥

हिन्दी काव्य

दु खो का कर नाश सयमव्रती वैराग्य सपृक्त थे,
भव्यो के मिथ्यात्व के तिमिर को सद्देशना से हरा ।
जो सशुद्ध-विशुद्ध भाव युत थे, रत्नत्रयाराधक,
आचायोदयसागराख्य गुरु को है वन्दना प्रेम से ॥

भावार्थ ये गणिवर दुखो का शमन करने वाले वैराग्य भाव से युक्त हुए, जो रत्नत्रय के आराधक शान्त दान्त और विशुद्ध भाव से युक्त थे, जिन्होने चन्द्रमा के समान होकर भव्यो के हृदयाङ्गन से मिथ्यात्व के अन्धकार का नाश किया । ऐसे गुणो के निधि और मनुष्यो से पूजित आचार्य श्री उदयसागर जी महाराज को वन्दन करते हैं ।

(४) आचार्य श्री चौथमलजी महाराज साहब

तत्त्वाना परिशोलने प्रतिपल यत्नेन नित्य रत,
जीवाना परिरक्षणे भगवतो वाण्या प्रचार दधौ ।
गाभीर्येण महार्णव वहुजनै पूज्य च सयामक,
तीर्थाना सुविकासक जन-जनेष्वाचार्य–चौथ नुम ॥

हिन्दी काव्य

तत्वो के सुविचार से सुयत हो, सोचा सदा वुद्धि से,
तीर्थेश ध्वनि को किया प्रकट यो रक्षा हुई सत्व की ।
गभीराब्धि समान सर्व जन के सयामक श्रेष्ठ थे,
जो थे तीर्थ विकास–कारक महान् श्री चौथ को वन्दना ॥

भावार्थ जो दमनशील, तत्त्वो के परिशीलन मे यत्न से नित्य रत हुए, जिन्होने जीवो के परिपालन के लिए भगवान् की वाणी का प्रचार किया, जो गभीरता मे महार्णव के तुल्य थे, बहुजनो से पूज्य, सयमी एव साधु—साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध सघ के सुविकासक थे, उन आचार्य चौथमलजी महाराज साहब को नमस्कार करते हैं ।

(५) आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज साहब

मोहासक्त—नरा हि भौतिक—सुखैर्दु ख लभन्ते ध्रुवम्,
तद् दृष्ट्वा परिवार-जन्य-वनिता सम्बन्धक त्रोटिनम् ।
सत्कर्मावरण सुतीव्रतपसा जीवात् क्षिपन्त सदा,
सत्याचौर्यमहाव्रतैश्च लसित श्रीलालसूरि नुम ॥

हिन्दी काव्य

रागो मे रत जीव निश्चय सदा पाता महा दु ख को,
ऐसा जान शुभाङ्गना गृहजनो से स्नेह को तोड के ।
कर्मो के पट को सुतीव्र तप से फेंका सभी जीव से,
सत्याचौर्य-यमादि से चमकते श्रीलालजी को नमे ॥

भावार्थ मोह से आसक्त मनुष्य निश्चय ही भौतिक सुखो से दु ख को ही प्राप्त करता है । यह देखकर जानकर परिवार एव पत्नी सम्बन्धी स्नेह के बन्धन को जिन्होने तोड दिया तथा कर्म के आवरण को तीव्र तपश्चर्या द्वारा दूर करते हुए अहिंसा, सत्य, अचौर्य, अपरिग्रह रूप महाव्रतो से सुशोभित हुए, उन आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज साहब को नमस्कार करते है ।

(७) आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब

देशेऽस्मिन् धन-धान्य वैभवयुते श्री थादला ग्रामके,
माणिक्येषु च हीरक द्युतियुत ज्योतिर्धर साधुषु ।
शास्त्रस्याध्ययन मनोवचन काययोगेन सपादितम्
त सर्वाचार्य-जवाहर यतिवर भावेन भक्त्या नुम ॥

हिन्दी काव्य

ग्रामो मे शुभ थादला निगम मे प्राणी सभी थे सुखी,
हीरा मे द्युतियुक्त हीर चमके ज्योतिर्धर श्रेष्ठ हो ।
शास्त्रो का सुविचार देह मन से सम्पन्न था योग से,
भावो से भर के जवाहर गणी, को प्रेम से वन्दना ॥

भावार्थ इस देश भारतवर्ष में प्रसिद्ध, धन-धान्य से परिपूर्ण थादला ग्राम मे जन्मे, साधुओं में ज्योतिर्धर, माणिक्यो में जो चमकते हुए हीरे के समान थे, जिन्होने शास्त्रो के अध्ययन को मन वचन काय रूप योग से सपादित किया था, ऐसे सभी के अर्चनीय यतिवर जवाहरगणी को भक्ति-भाव से नमस्कार करते हैं ।

(८) आचार्य श्री गणेशीलालजी महाराज साहब

गार्हस्थ्ये च महातमो विलसित शीर्षे सदा भ्राम्यति,
ज्ञात्वा वीर-जवाहरेण विरत सपादित जीवनम् ।
स्वाध्याये निरत प्रशस्तमनसा मग्न समाधौ ध्रुवम्,
भाषा यस्य सुकोमला सुललिता वन्दे गणेश गुरुम् ।।

हिन्दी काव्य

जीवो के मन में सदा विकच है अज्ञान का चक्र हो,
रागो से मन को जवाहरगणी से वोध पा छोड के ।
शास्त्रो मे रत हो प्रशस्त मन से पाये समाधि ध्रुव,
भाषा थी जिनकी सुकोमल सुधा वन्दे गणेश प्रभु ।।

भावार्थ गृहस्थ जीवन मे फैला हुआ अज्ञान रूप घनाधकार मस्तिष्क मे सदा घूमता है, ऐसा जानकर जिन्होने कषाय रूपी शत्रुओ का मर्दन करने में वीर जवाहराचार्य से वोध पाकर जीवन को विरक्त वनाया, ऐसे प्रशस्त मन से स्वाध्याय मे निरत, निश्चित समाधि में लीन, सुन्दर ललित भाषा-के प्रयोक्ता श्री गणेश गणिवर को प्रसन्नता से नमस्कार करता हू ।

(९) आचार्य श्री नानालालजी महाराज साहब

ससारे सरता कुधर्ममननेनोन्मत्तमातङ्गवत्,
जीवाना हृदि भावित-मदमपा चक्रे सुरूपेण च ।
धर्मस्यापि समस्तजीवनिवहे येन प्रचार कृत,
पापाना विनिवारक तमुदित नानेशदेव नुम ।।

हिन्दी काव्य

उन्मत्त द्विप के समान नर ही ससार मे हैं वहू,
विक्षेपोन्मुख भूरि पाशविकता से दूर पूरा किया ।
धर्मो का करके प्रचार जग से सतोष भू को दिया,
पापो का कर नाश निस्पृहगणी नानेश को वन्दना ।।

भावार्थ : कुधर्म के मनन के कारण उन्मत्त हाथी के समान विचरते हुए जीवो के हृदय भावित मद को सम्क्तया दूर किया तथा समस्त प्राणी वर्ग मे धर्म का पूर्ण प्रचार किया । इस प्रकार पापो का निवारण करने वाले उदय को प्राप्त नानेश देव को वन्दन करते हैं ।

प्रशस्ति-छन्द-स्रग्धरा—

इत्य भक्त्या गुणाना हृदयकमलके शान्तभाव सुखेन,
सरक्ष्यार्यप्रभाव सकलगुणगणाचर्चन य करोति,
ज्ञान श्रद्धा चरित्र त्रिषु मणिनिलय प्राप्य मुक्ते सुमार्गं,
निर्वाध तेन लब्ध भवति सुखमय साधुज्ञानेन्द्रभाव ॥

हिन्दी काव्य

ऐसी पूजा गुणो से हृदय कमल मे भाव की स्थापना से,
आचार्यों की प्रभा को, सकल सुयण को जो नर्म भावना से,
ज्ञान श्रद्धा क्रिया ही शुभ मणित्रय को जान निर्वाध मुक्ति ।
वे ही पाते खुशी से, निरुपम सुख को 'ज्ञान' के भाव ये ही ॥

भावार्थ इस प्रकार जो आचार्यों के गुणो के शात भाव एव प्रभाव को सुख मे हृदय-कमल मे स्थापित करके सम्पूर्ण गुणगणो की अर्चना (भक्ति) करता है, वही ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप त्रिरत्न को प्राप्त करके निर्वाध मुक्ति-पथ को प्राप्त करता है । यही 'साधु ज्ञानेन्द्र, का भाव है ।



संयम की देदीप्यमान

मशाल

महान् क्रियोद्धारक

दीर्घ-तपस्वी

आचार्य

श्री हुक्मीचंद जी म. सा.

हु

संयम की दैदीप्यमान मशाल महान् क्रियोद्धारक दीर्घ-तपस्वी

आचार्य

श्री हुक्मीचंदजी म. सा.

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म.सा.

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म.सा

जीवन तथ्य

जन्मस्थान	:	टोडा रायसिंह (राजस्थान)
पिता		श्री रतनचन्द जी चपलोत
माता	.	श्रीमती मोतिया देवी
दीक्षास्थल	.	बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि		मार्गशीर्ष अष्टमी वि स. १८७९
गुरूजी	.	पूज्यश्री लालचन्दजी म. सा.
स्वर्गवास स्थान	·	जावद (मध्य प्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	·	वैशाख शुक्ला पचमी वि. स १९१७

आचार्यश्री हुक्मीचन्दजी म.सा.

❀ सयमीय साधना की गहराईयो मे उतरकर आत्म–कल्याण के साथ परात्म कल्याण के लिये जिन्होने ज्ञान सम्मत विशिष्ट क्रिया का शखनाद किया था।

❀ तत्कालीन युग मे निर्ग्रन्थ सस्कृति मे व्याप्त सयम शैथिल्य की उपेक्षा कर आत्म–शक्ति जागृत करने के लिये जिन्होने सयमीय क्रियाओ का विशिष्टता के साथ अनुपालन कर साधु समाज के समक्ष एक आदर्श उपस्थित किया था।

❀ भयकर से भयकर शीत ऋतु मे भी एक ही चादर को ओढकर जो आत्म–साधना मे तल्लीन रहते थे।

❀ २१ वर्ष तक जिन्होने बेले २ की तप साधना की थी। जिन्होने १८ द्रव्यो से अधिक द्रव्य का, मिष्टान्न एव तली चीजो का यावत्-जीवन परित्याग कर दिया था।

❀ प्रतिदिन दो हजार शक्रस्तव एव दो हजार गाथाओ का परावर्तन जिनके जीवन का अंग था।

❀ जिनका जीवन अनेकानेक चमत्कारिक घटनाओ से सम्बद्ध था।

❀ ऐसे थे ज्ञान सम्मत क्रियोद्धारक साधु मार्ग परम्परा के आसन्न उपकारी—
आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म.सा.

संयम की देदीप्यमान मशाल महान् क्रियोद्धारक दीर्घ तपस्वी

आचार्य

श्री हुक्मीचन्द जी म. सा.

भगवान् महावीर ने श्रमण के लिए जो आचार धर्म (आचाराग सूत्रादि मे) निरूपित किया, उसका केन्द्रस्थ भाव अटल सुदृढता है। जैसे किसी नदी को बाध कर बाध बनाया जाता है तो उसकी पाल बहुत मजबूत बनाई जाती है। अगर पाल की कुछ मिट्टी भी कमजोर रह जाती है तो आशका रहती है कि बरसाती पानी के दबाव से वह छोटी सी कमजोरी पूरी पाल मे दरार न डाल दे। महावीर स्वामी ने श्रमण के आचार मे उससे भी अधिक, मिट्टी के एक कण तक का भी ख्याल रखा है अर्थात् उस आचार विधि मे ऐसी कठोरता रखी है कि साधुत्व की शुद्धता पर तनिक भी आच न आ सके। वे सर्वज्ञ थे अत. जानते थे कि यदि थोड़ी सी भी कही छूट दी तो कलिकाल मे, अगुली से पहुचा पकडने मे देर नही लगेगी।

उसी भव्य श्रमण सस्कृति की आराधना मे कालान्तर मे कुछ शिथिलता सी व्याप्त होने लगी। उस कठिन आचार प्रणाली मे गलिया निकाली जाने लगी। शासन मे ऐक्य और अनुशासन भी शिथिल होने लगा। ऐसे समय मे श्रमण सस्कृति की सरक्षा की समस्या उत्पन्न हो गई थी।

यह सत्य है कि किसी भी शुभ प्रवाह मे समय के प्रभाव से विकार पैदा हो सकते हैं, किन्तु वैसे विकारो को समाप्त करके प्रवाह की शुभता पुन स्थापित करने के लिए भी यथा समय कोई न कोई महापुरुष अवश्य जन्म लेता है और उस समय मे ऐसे ही महापुरुष हुए पूज्यपाद श्री हुक्मीचन्दजी महाराज सा०, जिन्होने स्वय के ज्ञानार्जन एव कठिन क्रिया के आचरण के उदाहरण से क्रिया–शिथिलता पर प्रहार किया तथा चतुर्विध सघ मे एकता एव अनुशासन का सूत्रपात। उन्ही प्रथम पट्टधर आचार्य श्री का बोया हुआ बीज है, जो आठवे पट्टकाल मे विशुद्ध श्रमण सस्कृति का वटवृक्ष बना, सबको आत्मानन्द की सुखद छाया प्रदान कर रहा है।

प्राकृतिक सुषमा एव वीरता की भूमि पर जन्म :

अरावली की पर्वतमालाओ से घिरे हुए तक्षकगिरि के मूल में स्थित टोडा रायसिंह

नामक नगर आज भी राजस्थान मे अपनी अनूठी ऐतिहासिक परम्पराओ तथा प्राकृतिक सुषमा के मनोहारी परिवेश को लिए हुए विख्यात है ।

टोडा की प्राकृतिक सुषमा मानवो को मूक उपदेश देती हुई अतीव मनमोहक प्रतीत होती है । पहाडियो को चीर कर कलरव के साथ निरन्तर वहती हुई वनास नदी अनवरत प्रगतिशीलता सिखाती है तो अपने उभय तट को पोषित करता हुआ सरित प्रवाह परोपकारपरायणता का सकेत करता है । विशाल वटवृक्ष जीवन की उन्नति को बतलाते हैं, झुके हुए फलो से लदे वृक्ष विनयशीलता के प्रतीक हैं तो काटो मे खिलने वाले फूल दु खो मे हसने का पाठ पढाते हैं । इस क्षेत्र की वसन्त ऋतु की शोभा तो अतीव दर्शनीय ही होती है ।

टोडा रायसिह स्मारिका (अक्तूबर १९७७) मे इस नगर की प्राकृतिक सुषमा का वडा ही सजीव विवरण दिया हुआ है और वर्णित है कि देश–विदेश के पर्यटक भ्रमण हेतु यहा आते हैं, तथा यहा कि वनश्री का नैसर्गिक आनन्द उठाते हैं । स्वय इस नगर की वसाहट भी साफ सुथरी और आकर्षक है । खारोलाव तालाब मे जव कोई राजा–महाराजाओ के प्राचीन महलो के प्रतिविम्व निहारने लगता है तो वह शोभा निराली ही प्रतीत होती है । इन राजा-महाराजाओ का इतिहास भी वीरता–पूर्ण रहा है । वीरमती, चन्द्रोवा तथा तारा नाम की वीरागनाओ ने अपने पतियो के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर युद्धभूमि पर शत्रुओ के दात खट्टे किये थे । चन्द्रोवा के विषय मे कहा जाता है कि पति से भी परित्यक्त होकर उसने अपने सतीत्व धर्म की रक्षा की । वीरागना तारा ने अपने शौर्य से पृथ्वीराज को प्रभावित करके अपने पिता का खोया हुआ राज्य वापिस दिलवाया ।

यहा के राजवश का भी अपना गौरवपूर्ण इतिहास है । इस पर जव नाग जाति के प्रतापी नरेश तक्षक का शासन था, तव इसका नाम तक्षकपुर था, जव मीरा लोगो का शासन रहा तो नाम मीरावण पडा और गोयलवाल वश के शासनकाल मे यह लाडपुरा के नाम से प्रसिद्ध हुआ । वि स १३१३ मे जव सोलकियो ने इस नगर पर अपनी विजय पताका फहराई तव इसका नाम टोडा रख दिया । राजा रायसिंह ने इसके साथ अपना नाम जोड दिया ।

सर्व प्रकार से विख्यात एव सुशोभित टोडा रायसिहनगर मे हमारे पूज्यपाद ने जन्म लिया । इस नगर मे सभी श्रेणियो एव विभिन्न धार्मिक मान्यताओ वाले नागरिक निवास करते थे, उन्ही के वीच जिन धर्मानुयायी, वाणिज्य–व्यापार मे कुशल, ओसवाल वश के चपलौत गोत्रीय श्री रतनचन्दजी नाम के यही एक सद्‌गृहस्थ भी निवास करते थे, जिनकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती मोतिया देवी था । इन्ही रतन और मोती के घर हमारा हीरा उत्पन्न हुआ । शुभ ग्रह नक्षत्रो मे सूर्य विकासी कमल की भाति भव्य सलोने सर्वांगो से परिपूर्ण वालक को पाकर माता धन्य हुई तो पिता का रोम–रोम पुलकित हो उठा । पुत्र जन्म की खुशिया मनाई गई तथा वधाइयो का ताता लग गया । यथासमय नवजात का नामकरण सस्कार सम्पन्न हुआ और नाम रखा गया–हुक्मीचन्द । शायद नामकरण करते समय आभास हुआ हो या न हुआ हो किन्तु अपने त्यागी जीवन के 'हुक्म' से इन्होने सयमी, शिथिलाचार, अवविश्वास कुरूढियो तथा विकारपूर्ण

अवस्थाओ पर जिन धर्म एव श्रमण सस्कृति के शुद्धाचार का झडा गाढ दिया ।

विद्या से विराग : विराग से प्रव्रज्या :

लाड प्यार से किये जाने वाले लालन-पालन के साथ जब आपकी आयु लगभग पाच वर्ष की हो गई तो आपका अध्ययन प्रारम्भ कराने के लिए स्थानीय पाठशाला मे प्रवेश दिलाया गया । आप नियमित रूप से पाठशाला जाते तथा दत्तचित्त होकर अध्ययन करते । अपनी कुशाग्र बुद्धि से तथा अपनी तीव्र स्मरण शक्ति से पढाई मे तेजी से आगे बढते रहे । इनकी विचक्षणता से इनके शिक्षक प्रभावित रहे तो साथी लोग आकर्षित ।

आयु बढती रही, अध्ययन चलता रहा तथा साथ ही साथ वे सीखे हुए (ज्ञान) को अपने आचरण मे भी उतारते चले गये । आपके विविध गुणो की सुवास चारो ओर फैलने लगी । सामान्य बालक तो पढाई करते समय पाठ कठस्थ कर लेते हैं और परीक्षा मे अच्छे अक ले आते हैं किन्तु यह बालक हुक्मीचन्द इसी कारण आकर्षण का केन्द्र बन गया कि जो कुछ इन्हे पढाया जाता, उसमे जो आचरणीय होता, वे उसे अपने नित-प्रति के आचरण मे समाविष्ट करते थे । अपने प्राप्त ज्ञान को अपनी ही क्रिया से जोडने पर ही उन्हे सन्तोष होता था । यही सन्तोष उनके माता-पिता व सम्बन्धियो, शिक्षको तथा साथियो के लिए आश्चर्य का विषय था ।

आपकी सक्रिय अध्ययन प्रवृत्ति का ही सुफल था कि उस रीति से विद्योपार्जन के कारण आप किशोरकाल से ही वस्तुओ एव घटनाओ को दार्शनिक एव भावनात्मक दृष्टि से देखने लगे । वे अनुभव करने लगे कि ससार के बताये जाने वाले सुख निस्सार है तथा लोग जिन वस्तुओ को प्राप्त करने के लिए विकल रहते है, वे वस्तुए अन्ततोगत्वा दुःखी ही बनाती है । इस तरह पालने में उनकी वैचारिकता प्रौढ होने लगी एव वे राग की गलियो से निकल कर विराग के राजमार्ग पर आगे बढने लगे ।

वे जब साधु-मुनिराजो के प्रवचन सुनते तथा जिनवाणी के विश्लेषण को समझते तो गहन चिन्तन मे रत हो जाते कि वर्तमान साधु सस्था का रस जिन भगवान् द्वारा उपदिष्ट सिद्धान्तो के अनुरूप क्यो नही दिखाई देता है । तब वीर भूमि के पुत्र होने के नाते भीतर ही भीतर उनकी विचार-शूरता जैसे सन्नद्ध होने लगती कि क्यो नही वे ही दीक्षा लेकर आचरण की कठोरता एव विशुद्धता का उदाहरण प्रस्तुत करे एवं अपने स्वय के जीवन से यह दिखावें कि श्रमण सस्कृति का वास्तविक स्वरूप क्या है । इन विचारो की उत्कृष्टता एव दृढता ज्यो-ज्यो बढती गई, उनका मन सासारिकता से विमुख होने लगा और सयम मार्ग पर अग्रसर होने के लिये मचलने लगा ।

विद्या से विराग तथा विराग से उनकी भावनात्मक गति प्रव्रज्या की दिशा मे आगे बढ चली । उन्हे विदित हुआ कि समीप के बूदी नगर मे पूज्य श्री लालचन्दजी म सा. विराजमान हैं तो वे दीक्षित होने की उत्कट भावना से वहा पहुंच गये । विक्रम सवत् १८७९ की मार्गशीर्ष अष्टमी के दिन विरागी हुक्मीचन्द ने भागवती दीक्षा ग्रहण कर ली ।

शिथिलाचार के समक्ष एक विशुद्ध आदर्श :

श्रमण सस्कृति के आदर्श को समझकर आपने सिह की भाति उत्कृष्ट भावना एव कठिन सकल्प के साथ दीक्षा ग्रहण की थी, अत वैसे ही उग्रता से वे पच महाव्रतो एव पच समिति त्रय गुप्ति से युक्त सयम की कठोर साधना करने लगे । किन्तु उन्होने देखा कि उनके स्वय के गुरु पूज्य श्री लालचन्दजी म सा के आचार मे ही शिथिलता चल रही है तो उन्हे वह शिथिलता अखरी । उन्होने आगमानुसार आचार की यथाविध पालना करने के लिए अपने गुरुजी से बार-बार सविनय प्रार्थना की, किन्तु आपके अनुनय विनय का उन पर कोई सार्थक प्रभाव नही पडा ।

नव मुनि ने बडी गम्भीरता तथा शान्ति के साथ सारे वातावरण पर चिन्तन किया और अपनी समस्या का हल खोजने की भी चेष्टा की कि वे गुरु के पास रहकर गुरु के शिथिलाचारी आचार को विवश होकर देखते रहे अथवा अलग हट कर अपने आगमसम्मत आचार को प्रखर बनाते हुए श्रमण सस्कृति के आदर्श को जीवित रखे ? उन्हे इन दोनो विकल्पो मे श्रमण सस्कृति की सरक्षा का विकल्प अधिक महत्त्वपूर्ण लगा और उन्हे मन मे विश्वास हुआ कि इस विकल्प की सफलता से सभवत गुरुजी का हृदय भी परिवर्तित हो जाय । यह सोचकर वे अपने गुरुजी से अलग विचरण करने लगे और इस प्रकार उन्होने अपने आपको शिथिलाचारी वातावरण से विलग कर लिया

इसके बावजूद भी उनके मन में अपने गुरुजी के प्रति पूर्ण विनय भाव एव सम्मान बना रहा । उनकी भावना शुद्ध थी कि उस समय मे फैले हुए शिथिलाचार को समाप्त किया जाय । आज्ञा लेकर अलग विचरण करना प्रारम्भ करने पर यह बताया जाता है कि पूज्य श्री लालचन्दजी म सा यत्र-तत्र इनकी निन्दा करने लगे तथा श्रावको को भडकाते कि वे मुनि श्री हुक्मीचन्दजी का उपदेश न सुने तथा उन्हे ठहरने के लिये स्थान न देवें आदि ।

कहते हैं कि गुरुजी की ऐसी बातें जब उनको बताई गई तो उन्होने यही कहा कि गुरुजी, गुरुजी ही रहेगे और वे गुरुजी के गुणानुवाद ही करते । वे श्रावको के प्रत्युत्तर मे कहते

सन्दर्भ — (१) आचार्य श्री श्रीलालजी म सा का जीवन चरित्र ।

(२) श्री मन्नालालजी म सा स्मृति ग्रन्थ-इसमे यह बतलाया गया है कि पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म. सा स्वय अपने आप विचरण करने के लिए अलग नहीं गये बल्कि उन्होने अपने गुरुजी से इस हेतु आज्ञा मागी और आज्ञा मिलने पर हाडोती, मेवाड़, मालवा को ओर विहार किया ।

(३) जैन धर्म का इतिहास-लेखक मुनि श्री सुशीलकुमार जी (४८९ पर इस भाव से लिखा है) शास्त्रानुकूल प्रवृत्ति मे मुझे विशेष प्रगति करनी चाहिये-इस उद्देश्य से वे अपने गुरु से आज्ञा मागकर अलग विचरण करने लगे ।

कि मेरे गुरुजी परमोपकारी महापुरुष हैं जिन्होने मुझे ससार-कीच से बाहर निकाल कर सयम पथ का पथिक बनाया है । उनका मुझ पर परम उपकार है, जिससे मे जन्म-जन्मान्तर तक भी उऋण नही हो सकता हू । इस प्रकार आप अपनी गुणग्राहकता का ही परिचय देते रहते ।

शिथिलाचार के विरुद्ध आचार धर्म की शुद्धता के प्रयास :

जब पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा ने अपने गुरुजी से पृथक विचरण करना प्रारम्भ कर दिया तो उसी समय पूज्य श्री शीतलदास जी म सा की सम्प्रदाय के पूज्य श्री मोतीराम जी म सा भी शिथिलाचार के ही कारण अपने सम्प्रदाय से अलग हो गये । तभी दोनो ही महामुनियो का उद्देश्य-समानता की दृष्टि से मिलन हुआ । दोनो ने श्रमण सस्कृति की सरक्षा की दिशा मे गहरा विचार-विमर्श किया और निश्चय किया कि निर्ग्रन्थ श्रमण सघ की उत्क्रान्ति तथा शुद्ध श्रमणत्व परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने की लक्ष्य पूर्ति हेतु आगमिक धरातल पर शुद्ध समाचारी का निर्माण किया जाय । यह कहा जाता है कि पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा ने १०८ नियमो के पालन की प्रतिज्ञा ग्रहण की थी जबकि श्री मोतीराम जी म सा ने १११ नियमो की प्रतिज्ञा ली थी । तीन नियमो मे कुछ भिन्नता अवश्य थी, किन्तु मौलिक मतभेद नही था । जैसा कि श्री मोतीराम जी म सा का कहना था कि साधु दिन मे नही सोवे । इस पर पूज्य श्री हुक्मीचन्द म सा का यह कथन था कि सामान्य रूप से तो साधु दिन मे नहीं सोवे, लेकिन किसी विशेष परिस्थिति के कारण से उसे सोना पड़े तो एक पचौले का प्रायश्चित ग्रहण करे । यह नियम कुछ विचारणीय था क्योकि वृद्धावस्था की क्षीणता अथवा शरीर की रुग्णता से साधु को थकान मिटाने के निमित्त से दिन मे सोना पड सकता है । इसलिए दिन मे सोने का सर्वथा निषेध समुचित नही माना गया ।

दूसरी बात यह थी । पूज्य श्री शीतलदास जी म सा का कहना था कि जिस व्यक्ति ने गृहस्थावस्था मे रहते हुए हरी वनस्पति का त्याग कर दिया हो, वह यदि दीक्षा अगीकार कर ले तो उसे तब भी उसका अनिवार्य रूप मे पालन करना होगा । इस पर पूज्य श्री हुक्मीचद जी म सा का कहना था कि दीक्षा अगीकार कर लेने पर जीवन की परिस्थितिया परिवर्तित हो जाती है, अत. पहले के त्याग को इस नये जीवन मे अनिवार्य नही बनाया जाना चाहिये क्योकि साधु का भोजन उसकी इच्छा पर निर्भर नही होता है और ऐसा ही कुछ अन्तर तीसरे नियम के बारे मे भी था ।

पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा. विचक्षण बुद्धि एव दूरदृष्टि से सम्पन्न थे अत. उनके स्पष्टीकरण को मान्यता देकर समान समाचारी का दोनो मुनियो ने निर्माण कर लिया और उस दृष्टि से दोनो के बीच भावनात्मक एकता भी स्थापित हो गई । इसके अनुसार दोनो मे चातुर्मास वदन व्यवहार आदि बारह सयोग सम्बन्ध भी स्थापित हो गये ।

दोनो महामुनियो ने तब शिथिलाचार के विरुद्ध आवाज उठाई तथा नवचेतना की ज्योति जगाई कि भगवान् महावीर ने जो आचार धर्म एक श्रमण के लिए निर्देशित किया है,

उसी के अनुसार आज भी श्रमणो को अपना सयमी जीवन चलाना चाहिये ।

पूज्य श्री हुक्मीचद जी म सा तव ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए जावद ग्राम मे पधारे । वहा श्रावको मे तत्कालीन साधु समाज की दुरवस्था देखकर यह विचार चल रहा था कि जव कोई भी साधक वीतराग प्रभु द्वारा निर्दिष्ट सयम का पूर्णतया पालन नही कर रहा है और अधिकाश साधु समाज वहुवस्त्रधारी, मठधारी, शिथिलाचारी एव परिग्रही बनते चले जा रहे हैं तव उन्हे उस अवस्था में शुभ परिवर्तन लाने के लिए क्या कुछ कर नाचाहिये । ऐसो विचारणा की स्थिति मे जव महाराज साहव का पदार्पण वहा हुआ तो कुछ अनुभवी श्रावक आपकी सेवा मे पहुचे । वार्तालाप के प्रसग पर श्रावको ने अपने मनोगत भाव महाराज श्री के सम्मुख रखे । तव महाराज श्री ने किसी की भी निन्दा न करते हुए उन श्रावको को यथार्थ वस्तुस्थिति से परिचित कराया तथा अपने द्वारा बनाये गये आचार-विचार के नियमो की जानकारी भी दी ।

जव श्रावको ने उन दुष्कर नियमो एव मर्यादाओ की जानकारी ली तो वे स्तम्भित रह गये कि आज के शिथिलाचारी वातावरण मे भी ऐसे कठिन नियमो के पालन करने वाले कोई सन्त हैं क्या ? तव महाराज श्री ने उन्हे भगवान् महावीर का वचन याद दिलाया कि "मेरे द्वारा निर्दिष्ट चतुर्विध सघ निराबाध गति से इक्कीस हजार वर्ष तक बरावर चलेगा उसमे ह्रास या उत्थान हो सकता है किन्तु सर्वथा विलोप कदापि नही होगा ।"

इस प्रकार की उत्साहपूर्ण जागरूकता से भरे विचार सुनकर श्रावक, भाव विह्वल हो उठे और कहने लगे—यह सत्य है । आज भी प्रभु के शुद्ध मार्ग पर कठोरता से चलने वाले सत महामुनि विराज रहे हैं—इसका उन्हे प्रत्यक्ष अनुभव हुआ । तव उन श्रावको का मन मुनिश्री के प्रति गहरी श्रद्धा से अभिभूत हो गया और उन्हे उनसे कुछ दिन जावद में विराज कर अपने उत्क्रान्तिपूर्ण धर्मोपदेशो का रस पान कराने की विनती की । तव आप द्रव्य, क्षेत्र, काल व भाव की मर्यादानुसार कुछ दिन वहा विराजे और अपने प्रवचनो के माध्यम से जनमानस को सयमी जीवन की यथार्थता एव आगम के रहस्यो का सम्यक् ज्ञान कराया । आपकी अमृतमय वाणी का जावद की जनता पर जादू सा असर हुआ तथा जावद मे नवीन उत्साह एव अपूर्व आनन्द का वातावरण छा गया ।

तव से उनकी आगमगत आचार की नवीन उत्क्रान्ति का प्रसार चारो ओर से होने लगा । शिथिलाचार की पोल खुलने लगी तथा श्रावक-श्राविका समुदाय शुद्ध श्रमण आचार को समझ कर कठोर सयम व्रतियो का सम्मान एव अनुसरण करने लगे ।

इसी जावद मे विराजते आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा के जीवन का एक ऐसा प्रसग मिलता है जो उनके जीवन की महान्ता एव विशालता का दिग्दर्शन कराता है ।

एक वार पूज्य श्री शौच निवृत्ति के लिए वाहर पधारे हुए थे, पीछे से एक अन्यसाधु वडी उत्कठा लिए पूज्य श्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुआ, लेकिन पूज्य श्री को वहा न पाकर उदास मन वापस लौट गया । कुछ ही समय पश्चात् पूज्य श्री शौच निवृत्त हो धर्मस्थान पधारे तो

उनके एक सहवर्ती साधु ने उन्हे बतलाया कि भगवन् ! अभी एक गेल्या (अर्ध विक्षिप्त) साधु आप श्री के दर्शनार्थ आया था । यह सुनकर सजग चेता, सयम के प्रति पूर्ण जागरुक पूज्य श्री ने फरमाया भाई ऐसा मत कहो । कौन जानता है कि पहले उसकी मुक्ति होगी या मेरी । किसी व्यक्ति की वर्तमान की ही अवस्था देखकर उसका कभी अपमान नही करना चाहिये । किसी को हल्का बताना या कहना अनुचित है । माना कि वह इस वक्त गेल्या है, समझ कुछ कम है, किन्तु कौन कह सकता है कि भविष्य मे पुरुषार्थ करके वह हमारे से भी पहले मुक्त हो जाय । किसी के भविष्य का किसी को क्या पता । ज्ञानी–जन किसी व्यक्ति का अपमान करना अनुचित मानते हैं ।

पूज्य श्री ने अपने साधु से कहा कि तुमने उसको "गेल्या" कहा इसका प्रायश्चित लो और अपनी आत्मा को शुद्ध करो ।

दिखने मे यह घटना बहुत लघु एव सामान्य सी लगती है, लेकिन यह अणु तो अणीयान, महनो महीयान के आदर्श को चरितार्थ करती है ।

पूज्य श्री उत्कृष्ट साधक होते हुए भी उनका सामान्य साधको के प्रति भी कितना आत्मीयता पूर्ण व्यवहार था । यह इस प्रसग से स्पष्ट होता है ।

वास्तव मे साधना की गहराई मे ऐसे ही महान् साधक अवगाहन कर सकते हैं, जो विशुद्ध चारित्र का पालन करते हुए भी स्वय को श्रेष्ठ और निम्न आचरण करने वालो को हीन या निम्न न समझे । ऐसा ही एक प्रसग और मिलता है—

पूज्य श्री पहले चातुर्मास स्वीकार नही करते थे । जहा उनकी इच्छा होती, वहा जाकर चातुर्मास के लिए निवास कर लेते थे । एक बार पूज्य श्री चातुर्मास करने की इच्छा से मारवाड का केन्द्रस्थल जोधपुर पधारे । सघ की विनती के बिना ही स्वेच्छा से पूज्य श्री वहा पधारे थे । जोधपुर मे विराजमान इतर सम्प्रदाय के साधु कहने लगे कि जहा ऐसे घोर तपस्वी और शुद्ध चारित्र सम्पन्न साधु महात्मा का चातुर्मास हो वहा हमारी क्या पूछ होगी ? अत हमे कही अन्यत्र जाकर चातुर्मास करना चाहिये । पूज्य श्री को इस बात का पता लगा कि मेरे कारण अन्य मतो को कष्ट होता है तो वे तुरन्त वहा से विहार कर गये और फलोदी जाकर चातुर्मास सम्पन्न किया ।

कठोरतम संयम साधना के प्रतीक :

जितना अधिक अन्धकार, उतने ही अधिक प्रकाश की आवश्यकता होती है । अत. शिथिलाचार के उस विकृत वातावरण मे पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा ने संयमव्रत की कठोरतम साधना का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया, ताकि चतुर्विध सघ शुद्धाचार के महत्त्व को प्रत्यक्ष देखकर हृदयगम कर सके ।

उस समय शिथिलाचार के फैलने का यही कारण था कि साधु धर्म स्वीकार करने

के उपरान्त भी शरीर के प्रति ममता नही छूटती थी, शरीर को कष्ट न देने की लालसा से साधु आगमाचार का पालन करने से कतराते थे। ऐसी परिस्थितियो मे हमारे पूज्यपाद ने परिषहो को सहने की अपूर्व क्षमता का परिचय दिया। आपश्री बारहो मास मात्र एक ही चादर रखते थे—चाहे कितनी कडकडाती हुई सर्दी क्यो न होती। शीत से होने वाले उपसर्ग को वे समभाव-पूर्वक सहन करते। ग्रीष्म ऋतु मे सूर्य के सम्मुख आतापना लेते, लेकिन कभी भी प्रचण्ड ऊष्मा से नही घबराते। जिस किसी भी स्थान पर विराजे हुए होते और यदि वहां धूप आ जाती अथवा वहा हवा का वेग नही होता, तब भी उठकर इधर–उधर अन्य स्थान पर नही जाते थे। इस प्रकार शरीर के ममत्व को दूर करके समत्व की भावना से अभिभूत हो, परिषह सहिष्णु बन गये थे। रात या दिन मे मच्छरो के डको से होने वाले कष्ट से पीडित होकर भी इधर–उधर नही जाते, वही पर स्थित हो, समभाव से सहन कर लेते थे।

यदि किसी कारण, अधिक ही पीडादायक परिषह का प्रसग भी होता तो वही अडोल स्थित होकर ध्यानस्थ हो जाते तथा जीव एव अजीव की पृथकता पर चिन्तन करते हुए आत्म-स्वरूप मे रमण करने लग जाते। वे सोचते कि अपनी आत्मा तो शाश्वत, अव्याबाध, अक्षय तथा अविनाशी है, उसे ये बाहर की पीडाए कैसे विचलित कर सकती है? आत्म–भाव तो विचलित तब होते है, जब कोई शरीर के ममत्व से ग्रसित होकर सासारिक सुख–दु ख के चक्कर मे पड जाता है। वे तो निश्चल भाव से चिन्तन करते रहते कि शरीर की पीडा से आत्मा की दु खानुभूति वास्तविक नही है, क्योकि शरीर के जलने से आत्मा नही जलती, शरीर के मरने से आत्मा नही मरती। शरीर मेरा नही है, आत्मा मेरी है और मैं आत्मा हू। शरीर मे चाहे जैसी व्याधि उत्पन्न हो जाय किन्तु उससे आत्मा रुग्ण नही होती है और न ही ऐसा मानना चाहिये। आत्मा स्वय ही अपने कर्मों की कर्त्ता है और उन कर्मों की भोक्ता है। शुभ कर्मों मे प्रवृत्त रहे तो अपनी ही आत्मा अपना मित्र है किन्तु यही आत्मा अपनी शत्रु भी हो जाती है, जब यह अशुभ कार्यों में प्रवृत्त होने दी जाती है।

आपश्री ने रसना इन्द्रिय पर भी विजय प्राप्त कर ली थी। तथा स्वाद को जीत लिया था। आपने जीवन पर्यन्त के लिए सर्व प्रकार के मिष्टान्न का त्याग कर लिया था तो सभी तरह की तली हुई खाद्य वस्तुए भी छोड दी थी। यहा तक खाने लायक हजारो द्रव्यो मे से उन्होने अपने निर्वाह हेतु अति आवश्यक मात्र तेरह द्रव्य ही रखे थे, बाकी सबका त्याग कर लिया था।

द्रव्यो की ऐसी कठोर मर्यादा का अर्थ था इन्द्रिय–दमन। जैसे कछुआ अपनी सभी इन्द्रियो को समेट कर अपने वश मे रखता है, उसी प्रकार बाहर के पदार्थों से पूज्य श्री ने अपनी इन्द्रियो तथा मन को समेट कर अपनी आत्मा को कठिन नियत्रण मे ले लिया था। कछुआ बाहर की परिस्थितियो से होने वाले कष्टो तथा बन्धनो को समझकर अपने अग–प्रत्यगो को सवृत्त कर लेता है, उसी प्रकार पूज्य श्री ने भी बाह्य भौतिक वातावरण के सुनहले जाल से दूर रहने के लिए अपनी इन्द्रियो का दमन कर लिया था। इन्द्रियो के लिए मनोज्ञ विषयो की उपस्थिति मे न वे राग भाव लाते थे तो न वे अमनोज्ञ विषयो के सामने होने पर द्वेष भाव से

अपने मन को कलुषित बनाते थे, बल्कि दोनो ही अवस्थाओ मे समभाव मे स्थित होकर आत्मानन्द की अनुभूति ग्रहण करते थे ।

तपः पूत शरीर एव ध्यानावस्थित आत्मा के धनी :

इन्द्रिय दमन एव मनोनिग्रह के साथ आपश्री की तपश्चर्या का क्रम भी अद्भुत था वर्णित बारह प्रकार की तपश्चर्या मे पहली छ बाह्य तथा अन्तिम छ आभ्यन्तर कहलाती है, जो क्रमश अनशन, उणोदरी, भिक्षाचरी, रस परित्याग, कायक्लेश, प्रति सलीनता तथा प्रायश्चित, काय क्लेश विविक्त शय्यासन । विनय, वैय्यावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान एव व्युत्सर्ग होती है । बाह्य तपश्चर्या की दृष्टि से वे बेले बेले पारणे करते थे यानि कि दो दिन उपवास, एक दिन भोजन और फिर दो दिन उपवास । यह क्रम आपश्री ने २१ वर्षों तक चलाया । यह अनशन तप ऐसा दिव्य होता है जो शरीर व्यामोह से आत्मा को विलग करता हुआ पवित्र बना देता है । पारणे के दिन भी रुचि से कम भोजन करके वे उणोदरी तप की आराधना करते थे । भिक्षाचरी तो साधु को करनी ही होती है लेकिन कडाई से सैतालीस दोषों को टालकर शुद्ध ऐषणीय भिक्षा ही ग्रहण करते थे । रस परित्याग तप का तो वे पूर्णरूपेण आचरण करते थे, उन्होने घी, शक्कर, तेल आदि सभी रस त्याग कर जीवन पर्यन्त मात्र शरीर को शोषण देने के विचार से रूखा सूखा भोजन ही ग्रहण किया । काय क्लेश मे शिरलुचन, पद्मासन स्थिति तथा आहार विहार मे ज्ञानपूर्वक काया को क्लेश देने का समावेश है, जिसका तो उन्होंने इतना कठोर आचरण किया कि शरीर के ममत्व को ही उन्होने प्राय समाप्त कर दिया था । इन्द्रियो का दमन करके, विषय-कषाय के भावो को वश मे करके, योगो के सशोधन से तथा एकान्त सेवन से वे प्रति-सलीनता तप का आचरण करते थे ।

आभ्यन्तर तपाचरण की दृष्टि से तो वे और भी कठोर तपस्वी थे । पूज्यश्री उग्र विहारी थे तथा समाचारी के निश्चित नियमो की अति कठोरता से पालना करते थे । नियम पालन मे कभी तनिक भी चूक हो जाती तो उसका कठोर प्रायश्चित कर लेने मे कभी भी चूक नही करते थे । विनय तप के तो वे परम पुजारी थे । यो विनय कर लेना तो फिर भी कठिन नहीं होता लेकिन अपने वडील जब अपना अपमान करें तब भी उनके प्रति विनय मे कोई कमी न हो तब विनय की महत्ता अधिक गम्भीर हो जाती है । ऐसे ही उत्कृष्ट विनयशील थे पूज्य श्री, जो वैय्यावृत्य-सेवा मे भी उतने ही उत्कृष्ट थे ।

स्वाध्याय एव ध्यान की उनकी विशिष्ट साधना थी । आपकी स्वाध्याय करने की प्रणाली अनूठी थी । 'समयं गोयम मा पमायए' के अनुसार आप एक-एक पल को अमूल्य निधि मानते हुए शास्त्रो के अध्ययन, मनन एव चिन्तन मे तल्लीन रहते थे । व्यर्थ की बातो मे तनिक भी वक्त नही गवाते थे । कभी भी स्त्रीकथा आदि मे नही लगते थे । आप नित्यप्रति आगमों की दो हजार गाथाओ का स्वाध्याय कर लिया करते थे । स्वाध्याय के क्रम को वे अस्वस्थता की स्थिति मे भी नही छोडते थे । स्वाध्याय के साथ ही चर्चा व चिन्तन से शास्त्रो के गूढ रहस्यो में भी सहजतापूर्वक अवगाहन कर लेते थे । यही कारण था कि वे आगमो की

गहन मार्मिकता को अपने ज्ञान क्षेत्र मे समेटे हुए थे । शास्त्रो के समर्थ एव प्रकाण्ड विद्वान् हुए भी उनके हृदय मे लेशमात्र भी अभिमान नही था । आप स्वभाव में कठोर तपस्वी होते भी अतीव सरल थे तथा भाषा ऐसी मानो आपके मुख से अमृत निर्झर ही प्रवाहित हो था । इतना सब कुछ होते हुए भी जब कभी कोई आपश्री से चर्चा करने आता तो आप अपने आज्ञानुवर्ती विद्वान् मुनि श्री शिवलालजी म सा के पास भेज देते और अधिकाशत तप, सयम व स्वाध्याय मे लीन रहते थे ।

ध्यान साधना मे तो आप श्री विशेष रूप से तल्लीन रहते थे । तप पूत शरीर साथ वे ध्यानावस्थित आत्मा के धनी थे । मन का निग्रह करना सहज नही होता । बडे-ऋषि महर्षि भी इस मन के सामने हार चुके हैं । ऐसे चचल और उद्दड मन को एकाग्र ध्या ही नियन्त्रित किया जा सकता है और आपश्री ध्यानाराधना करते हुए अपने मन के स्वामी हुए थे । आपश्री ध्यान को एकनिष्ठ बनाने की दृष्टि से २००० नमोत्थुणं (शक्रास्तव) प्रतिदिन ध्यान किया करते थे । वे इस पाठ के मन ही मन उच्चारण तक ही सीमित नही थे,बल्कि उसके अर्थ का चिन्तन करते हुए पाठ मे वर्णित अलौकिक स्थितियो मे रम जाते थे अरिहन्त–सिद्ध भगवान् के दिव्य गुणो का गहराई से चिन्तन करते थे एव आत्मा मे परम बनने की अपनी अगाध शक्ति को जीतने की चेष्टा मे रत रहते थे । आपश्री का ध्यान इ एकाग्र होता था कि उस समय आपके पास से होकर भी कोई चला जाता था, उसका आ आभास तक भी नही होता था । आपकी उस अलौकिक ध्यान मुद्रा को देखकर जनम आश्चर्यचकित हो आत्म–विभोर हो उठता था ।

गुण दृष्टि की उच्चता तथा गुरुजी का हृदय परिवर्तन :

स्वय की उच्चतर साधना ने आपकी गुण दृष्टि का उच्च विकास कर दिया स्वय सद्गुणो के वृहद् पुज होते हुए भी आप अपने दोष देखते थे तो दूसरो के गुण । कारण था कि वे सभी प्रकार के व्यामोहो से मुक्त थे । आप शिष्य मोह से भी दूर रहा करते थे । आपश्री के विचरण काल मे प्राय कई वैरागी आपके शिष्य बनने का प्र करते थे, किन्तु शिष्य मोह के कारण उस समय होने वाले विवादो तथा सघर्षो को जब वे दे ये तो बहुत ही खेदग्रस्त होते थे कि निर्ग्रन्थो के जीवन मे यह ग्रन्थि इतनी सघर्षकारक क्यो रही है ? इस कारण आप जिन्हे भी दीक्षित करते थे, उन्हे अपने गुरु–भ्राता के नेश्रित कर थे । आप श्री ने इतनी उदार महानता का परिचय दिया । शिष्य बनाने के मोह और सघर्ष देखकर कि स्वय ने तो जीवन–पर्यन्त किसी को अपना शिष्य बनाने का ही परित्याग कर दि

आपकी गुणदृष्टि की उच्चता का शनै शनै इतना सम्यक् विकास हुआ कि बाद आपश्री के गुरुजी पूज्य श्री लालचन्द जी म सा भी उससे प्रभावित हुए बिना नही रह स प्रारम्भ मे गुरुजी द्वारा उनके प्रति अपमान युक्त वचन कईयो को कहने के बावजूद भी आप ने प्रतिपक्ष के रूप मे कभी किसी से उनके प्रति कोई अवज्ञापूर्ण निन्दात्मक वचन नही कहा गुरुजी के प्रति परम निष्ठाभावी रहे और बाद मे तो आपकी कठोर सयम साधना की स्व

ऐसी फैली कि गुरुजी के विचारो मे परिवर्तन आए बिना नही रहा ।

आपको पृथक् विचरण करते हुए लगभग चार वर्ष व्यतीत हो चुके थे । इन चार वर्षों मे गुरुजी ने आपकी अपूर्व क्षमा देखी, तो देखी आपकी अभिनन्दनीय गुण दृष्टि, जिससे उनका हृदय पिघल गया । उनके मानसिक विचारो मे बदलाव आया कि "जिस मुनि हुक्मीचन्द जी की निन्दा व बदनामी करने मे मैंने कोई कसर नही छोडी और श्रावको मे मैंने छद्मावस्था वश उसके लिये वातावरण को दूषित करने की भी कोशिश की किन्तु उसने कभी उसका रत्ती मात्र भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रतिकार नही किया—यह कितना प्रशसनीय है ? मैं ज्यो-२ उसके लिए निन्दात्मक कथन करता रहता था, वह उसे सहन कर मेरे प्रति उपकार की भावना ही व्यक्त करता था ।" नीतिकारो का यह कथन उन्हे याद आया कि चन्दन के वृक्ष को जितना भी काटिये-जितनी बार भी काटिये, वह आपको ज्यादा से ज्यादा सुगन्ध ही देगा । इन विचारो के साथ गुरुजी का हृदय आप श्री के प्रति परिवर्तित हुआ तथा उन्होंने महसूस किया कि जिस उद्देश्य को लेकर वह अपने गुरु से पृथक् विचरण करने लगा था, उस उद्देश्य की उसने सयम व्रत की कठोर पालना के साथ पूर्ण रूप से पूर्ति कर ली है । उन तक अपने शिष्य की ख्याति पहुची कि सयम पालन मे उनकी सदैव सतर्क एव सजग दृष्टि रहती है, तपश्चर्या की कठिन आराधना मे कर्म-बन्धनो को काटने मे सलग्न हैं तथा शिथिलाचार के मुकाबले शुद्धाचार का वह व्यापक प्रसार कर रहा है । इस प्रकार मुनि हुक्मीचन्दजी का प्रत्येक विचार एव व्यवहार गुरुजी के मानस पटल पर चलचित्र की भाति उभरने लगा और हृदय के परिवर्तित होते ही उनके वे हार्दिक विचार वचनो से भी प्रस्फुटित होने लगे ।

पूज्य श्री लालचन्द जी म सा श्रावको के सामने फरमाने लगे कि मैंने हुक्मीचन्द जी की बहुत निन्दा की लेकिन देखो उन्होने अपने जीवन मे कितनी ऊँची गुणदृष्टि अपनाई है ? इनका आचार और व्यवहार प्रशसनीय है । जिस प्रकार ये सयमी जीवन की क्रियाओ का कठोरता के साथ पालन कर रहे हैं और कैसी इनकी अपूर्व क्षमा है ? कैसा अनूठा है इनका तप जो बेले-२ पारणा करके रूखा-सूखा आहार लेते हैं ? इनका सयम तप रूपी अग्नि मे तप कर निखरता ही गया है—वास्तव मे ये तो चौथे आरे के आदर्श है । इनमे इन्द्रभूति जी जैसा विनय है, पुण्डरीक जी जैसा सयम है तो गजसुकमाल जी जैसी क्षमा है । इस प्रकार गुरुजी अपने प्रवचनो मे तथा वार्तालाप मे आप श्री की मुक्त कठ से सराहना करने लगे ।

समभाव की अनूठी साधना से दिग्दिगन्त मे फहराती यशोपताका :

अपने गुरुजी के मुख से सर्वत्र प्रशसात्मक वचनो को सुनकर भी आपके मन मे कभी लेश मात्र भी अभिमान नही जागा और पहले उन्ही के मुख से निन्दात्मक वचन सुनते थे तब भी द्वेष की भावना अपने हृदय मे नही लाते थे । ऐसी ही तो साधक के सयमी जीवन की सच्ची कसौटी होती है जिस पर आपश्री सौटच सोने की तरह पूरे-पूरे खरे उतरे ।

व्यावहारिक जीवन मे देखा जाता है कि साधु अवस्था मे चलने वाले अनेक साधको के हृदय मे छद्मस्थ अवस्था के नाते अथवा अनादिकालीन वासना के कारण कठोर सयम की पालना करते हुए भी अपने लिये कहे गये निन्दात्मक शब्दो पर तत्काल ही द्वेष भावों की ज्वाला जल उठती है और दूसरी ओर अपने लिए प्रशसात्मक वाणी सुनकर उनका मन मयूर राग भाव

से नाच उठता है । इसी वृत्ति को हटाने के लिए प्रभु का कथन है—हे साधक, तुम प्रशसा और निन्दा दोनो ही दशाओ मे मध्यस्थ भाव को धारण करो—तभी समभाव की साधना सफल हो सकेगी ।

समभाव की ऐसी अनूठी साधना ने आपश्री से अपने गुरु हृदय को ही नही, जनहृदय को भी जीत लिया । आपश्री की यशोपताका सर्वदिश फहरा उठी । जन–जन के मुख से सराहना के स्वर फूटने लगे कि यथार्थ मे पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा ने असह्य कष्टो व परिषहो को सहकर अपने जीवन मे नया मोड लाकर एक नवीन आदर्श प्रस्तुत किया है तथा समाज को प्रगति की नवीन दिशा दी है ।

सम्भव है पूज्य श्री लालचन्द जी म सा ने विलक्षणता का गुण परख कर आप श्री की विकट परीक्षा ली हो कि जिसमे तपकर वे निखर उठें, क्योकि पथ–प्रदर्शक गुरु दीर्घदृष्टि वाले होते हैं । वे कभी–कभी शिष्यो की कठिन परीक्षा भी लिया करते हैं । एतद्विषयक एक प्राचीन कथा आती है कि एक अनुभवी साधक के पास दो व्यक्ति अपने रोग से मुक्त होने के लिए शिष्यत्व स्वीकारने गये । गुरु ने उन्हे शिष्य बना लिया । एक बार गुरु ने एक सर्प को देखकर अपने दोनो शिष्यो को एक साथ आदेश दिया कि जाकर सर्प का स्पर्श करके आओ । इस पर एक शिष्य ने सोचा कि गुरुजी के, उसके प्रति अच्छे विचार मालूम नही होते हैं और मुझे मारना चाहते हैं क्योकि इस विषधर को स्पर्श करते ही यह मुझे डस लेगा । यह सोचकर वह रुका रहा किन्तु दूसरे शिष्य ने गुरुजी के आदेश पर पूर्ण विश्वास करके जाकर सर्प का स्पर्श किया और वापिस लौट आया । दूसरी बार गुरुजी ने फिर कहा—तुम वापिस जाओ और सर्प के दात गिनकर बताओ । तब भी दूसरा शिष्य उसी अटूट विश्वास और श्रद्धा के साथ वापिस गया । जब वह सर्प को पकड कर दात गिनने की कोशिश करने लगा तो सर्प ने भी अपना प्रभाव बताया । वह फन फैलाकर फुफकार करने लगा तथा क्रोध मे आकर उसने शिष्य के हाथ पर अपने विष भरे दात गडा दिये । उस सर्पदंश का शिष्य के शरीर पर आश्चर्यजनक असर हुआ कि उसके शरीर का भीषण रोग उससे जाता रहा । वह एकदम निरोग हो गया । यह गुरु का हितुत्व ही था ।

हमारे चरित्रनायक भी इसी तरह अपने गुरुजी पर अटूट भक्ति, दृढ श्रद्धा एव पक्का विश्वास रखते हुए सयम पथ पर चलते रहे एव समभाव की अनूठी साधना करते रहे । तब उन्हे गुरुजी की असीम कृपा भी प्राप्त हो गई तथा जन–जन की सराहना भी मिली । आपकी यशोपताका सभी दिशाओ मे फहरा उठने का यही रहस्य था ।

श्रमण संस्कृति की सरक्षा में नवीन क्रांति तथा संघ विस्तार :

जिसके जीवन मे भीतर–बाहर सुन्दरता ओतप्रोत होती है, उसका प्रत्येक कार्य सुन्दर ही होता है । समभावी सयम की साधना से पूज्य श्री ने अपने भीतर–बाहर को सुन्दर बना लिया था । यहा तक कि उनके हस्तलिखित अक्षरो की बनावट भी इतनी सुन्दर थी जैसे मोती

चुन-चुन कर जमा कर दिये हो । आप श्री की लिपि के विन्यास को देखकर हर कोई आश्चर्य किया करता था । आपने अपने सुन्दर हस्तलेख से उन्नीस शास्त्र लिखे, जिनमे से कुछ तो निम्बाहेडा के ग्रन्थालय मे विद्यमान हैं और शेप अन्य किन्ही ग्रन्थालयो मे अथवा श्रावको के पास समुपलब्ध हो सकते हैं । अभिप्राय यह है कि आपके सुन्दर जीवन ने सघ और समाज मे उस समय ऐसी नवीन क्रान्ति उत्पन्न की कि जिसके वल पर श्रमण सस्कृति की सरक्षा सम्भव हो सकी ।

यह सत्य है कि भगवान् का शासन समाप्त नही होगा, किन्तु जव-जव श्रमण सस्कृति पर शिथिलाचार के प्रहार होते हैं और उस समय मे जो महापुरुष आगे वढकर अपने जीवनादर्श से उत्क्रान्ति करके श्रमण सस्कृति को सरक्षित करते हैं वे शासन के परमोपकारी होते हैं । ऐसा ही परमोपकार पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा ने उस समय सघ और समाज पर किया था, जिसके कारण श्रमण सस्कृति की अक्षुण्णता अविरत रूप से चलती रही । आप श्री की गुण रश्मिया स्वयमेव सर्वत्र फैलकर जन-जन के मन मे रही हुई वैकारिक भावनाओ का नाश करती रही । एक प्रकार से प्रभु द्वारा निर्दिष्ट सयम पथ के अलौकिक प्रकाश स्तम्भ के मानिन्द आपने उस समय फैले जन-मानस के अन्धकार को मिटाया तथा आत्मोन्नति हेतु प्रकाश का पथ प्रदर्शित किया ।

आप द्वारा श्रमण सस्कृति की सरक्षा मे सम्पन्न नवीन क्रान्ति के फलस्वरूप सघ का सुदृढीकरण हुआ तो सहज विस्तार भी होने लगा । सामान्य एव विशिष्ट जन आपके व्यक्तित्व के प्रति प्रभावित होते तो आपके निष्ठापूर्ण प्रवचनो के आकर्पण से भी खिचते हुए चले आते । शुद्धाचार के आगमिक उपदेशो को सुनकर भव्य प्राणियो की हृदयस्थ भावनाओ का स्रोत फूट पडा । कई भाई-वहिनो ने श्रावक धर्म अगीकार किया और जिन भाई-वहिनो के वैराग्य ने प्रवलता धारण कर ली और ससार को त्यागने का जिन्होने सकल्प ले लिया ऐसी भव्य आत्माए आप श्री के सान्निध्य मे दीक्षित-सयमित हो जाने के लिए लालायित हो उठी । ऐसी परिस्थिति मे आप श्री ने साधुत्व के कर्तव्यो का चिन्तन किया तो सघ के अनुशासनवद्ध स्वरूप पर भी खूव सोचा । तव जो भी वैरागी आपके पास दीक्षा लेने की प्रवल भावना के साथ उपस्थित होता, उसे आप साधुत्व का पहला कर्तव्य समझाते कि 'तिन्नाण तारयाण' अर्थात् साधु स्वय तैरें और दूसरो को तैरावे और सयमी जीवन की कठिनाइयो का वोध कराते । श्रमण जीवन की मर्यादाओ, पच महाव्रतो के गहन स्वरूप तथा सयम-नियमो का विस्तृत ज्ञान कराते हुए आप वैरागी आत्माओ से कहते कि अगीकार कर लेना जितना सहज है, उसका विधि एव निष्ठापूर्वक परिपालन करना उतना ही कठिन होता है । इतनी समझाइश और परख कर लेने के वाद ही वे किसी भी विरागी आत्मा को दीक्षित करने का निर्णय लेते थे क्योंकि उनका मानना था कि शुद्धाचार की पक्की नीव रखे विना, श्रमण सस्कृति की सुचारु सरक्षा सम्भव नहीं हो सकेगी ।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि आप श्री ने स्वय के लिए किसी को शिष्य वनाने का यावत् जीवन पर्यन्त परित्याग कर लिया था, अत जिन किसी भव्य आत्मा को उन्होने

दीक्षित किया, उसे अपने गुरु भ्राता के नेश्रित कर दिया। किन्तु आप श्री के सुप्रभाव से चतुर्विध सघ का द्वितीया के चन्द्र की भाति निरन्तर विकास होने लगा।

आपश्री ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए मारवाड (मरुस्थल) प्रान्त मे पधारे। वहा की तपती हुई रेत की तरह श्रावक श्राविकाओ की तपती हुयी हृदय आत्माओ को आपने अमृतोपम जिनवाणी से सिंचित करके शीतलता प्रदान की। विक्रम सवत् १६०७ मे जब आपने चातुर्मास हेतु बीकानेर नगर मे प्रवेश किया तो आपश्री की गुणगरिमा से वहा अनोखा धर्मोत्साह फैल गया। आपके गभीर सदुपदेश से बीकानेर के चार धनिक श्रेष्ठि ससार से विरक्त होकर मुडित हो जाने के लिये तत्पर हो गये। उस समय एक बडी ही जागृति कारक घटना घटित हुई।

जब चारो ही दीक्षार्थी दीक्षास्थल पर पहुचे तो उन्हे पहले शिर-मुडन के लिये ले जाया गया। उस समय शिर मुडन के लिये चार की बजाय पाच नाई पहुंच गये, जिससे एक नाई को मुडन क्रिया का अवसर नही मिला सो वह बडा उदास हो गया था। उसे उदास देखकर एक दूसरे सेठजी ने यो ही पूछ लिया-इस खुशी के वक्त मे तुम उदास क्यो हो भाई ? नाई ने उत्तर दिया—सेठ साहब, मेरे चारो भाईयो को तो चारो दीक्षार्थियो का मुडन करने से बहुत भेट-उपहार मिलने वाले है लेकिन मुझे तो कुछ नही मिलेगा। नाई की उस निराशा का सेठजी के दिल पर गहरा असर पड गया और उनके मन मे करुणा को सरिता उमड पडी। कुछ ही पलो मे उनकी भावना मे उत्कृष्टता व्याप्त हो गई। और ससार की असारता से विरक्त हो जाने की इच्छा बन गई। उन्होने उसी समय उस नाई को अपना मुडन करने को कहा तथा मुडित होकर पूज्य श्री के चरणो मे उपस्थित होकर उन्होने सयमी जीवन की याचना की। पूज्य श्री ने सोचा कि कही ये भावातिरेक मात्र से ही तो दीक्षित होना नही चाह रहे है ? अत उन्होने उन्हे सयमी जीवन की कठिनाइया बताई तथा सोच समझकर निर्णय लेने की सलाह दी। किन्तु वे तो अपने निश्चय से तिल मात्र भी विचलित नही हुए। तब पूज्य श्री ने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव को मध्यदृष्टि रखते हुए चारो दीक्षार्थियो के साथ उन पाचवे दीक्षार्थी को भी भागवती दीक्षा प्रदान की। इन सेठजी का नाम था शार्दूलमलजी, जिन्होने यो करुणावश विगलित होकर ससार की समस्त धन-सम्पत्ति तथा स्वजन सम्बन्धियो को छोडकर वैराग्य का पथ अपना लिया। एक व्यक्ति की प्रसन्नता के लिये सर्वस्व-त्याग का यो सहज भाव मे निर्णय कर लेना उनका महान् कार्य था जिसके मूल मे प्रेरणा उनको पूज्य श्री के सदुपदेशो से ही प्राप्त हुई थी।

इस प्रकार पूज्य श्री के पहले चार सन्त थे, जो बीकानेर मे नव की सख्या मे हो गये। इसके बाद दीक्षाओ का क्रम चलता रहा और साथ ही जनता पर उनका प्रभाव उसी रूप मे बढता रहा। इस वजह से एक ओर सघ की शक्ति और एकता मे वृद्धि तो दूसरी ओर श्रमण सस्कृति की मूल रूप मे सरक्षा करने की जागरुकता सब ओर फैल गई। परिणामस्वरूप सघ का निरन्तर विस्तार होने लगा।

आगम मर्मज्ञ :

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा का आगम ज्ञान इतना विस्तृत गभीर एव तलस्पर्शी

था कि अन्य सम्प्रदाय के सत महापुरुष भी उनसे आगम ज्ञान को ग्रहण करने के लिए आतुर रहते थे । जब कभी जिन्हे भी सयोग मिलता, वे उनसे आगम ज्ञान ग्रहण करते । कई सत मुनिराज तो उनके साथ ही विचरण करते थे । एक घटना क्रम मिलता है कि गोडल सम्प्रदाय के मुनिराज श्री माणकचन्दजी म सा को ज्ञात हुआ कि आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा का आगमज्ञान, गहनगभीर है । आगम जिज्ञासा मे तृप्त करने के लिये । आप श्री आचार्य प्रवर के पास सुदूर क्षेत्र से भी चलकर आगम रहस्य पाने के लिए पधारे और बहुत समय तक साथ मे रहकर आगम ज्ञान ग्रहण किया ।

आश्चर्यकारी चमत्कार जिनके हुक्म मे चलते थे :

आश्चर्यकारी चमत्कार पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा के हुक्म मे चलते थे—यह उचित रूप मे कहा गया है, वरन् महापुरुष कभी चमत्कार किया नही करते हैं । यह तो उनके अद्भुत व्यक्तित्व का प्रभाव स्वयमेव होता है कि ऐसी घटनाए घटित हो जाती हैं, जिन्हे लौकिक दृष्टि से आश्चर्यजनक मान लिया जाता है । आपश्री के जीवन मे भी ऐसी ही चमत्कारपूर्ण घटनाए घटित हुई है, जो अवश्य ही आश्चर्यचकित कर देनेवाली है । यहा ऐसी घटनाओ का विवरण दिया जा रहा है ।

१. हैजे का प्रकोप शान्त :

एक बार रामपुरा (म प्र) गाम मे हैजे का जोरदार प्रकोप फैला हुआ था । यहा के नागरिक इस कारण बहुत ही सन्तप्त थे तथा रोग शान्ति के जितने उपाय किये जा रहे थे, सभी निष्फल जा रहे थे । ऐसी विकट परिस्थिति मे गाव की जनता ने पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा. से अपने गाव पधारने की विनती की । ससार के तापो से तप्त एव दुखी लोगो को सयमीय मर्यादाओ को सुरक्षित रखते हुए सुखी बनाना सतो का सहज स्वभाव होता है अत आपश्री ने उनकी विनती स्वीकार करके रामपुरा की तरफ विहार कर दिया । ज्यो ही रामपुरा की भूमि ने आपके चरणो का स्पर्श पाया कि देखते-देखते हैजे का प्रकोप शान्त होता चला गया । प्रत्येक रामपुरावासी ने इस प्रभाव का अनुभव करते हुए चैन की सास ली । इसे उनके सयम तथा चारित्र बल की महिमा के रूप मे घटित चमत्कार ही कहेगे ।

२ दृष्टि गिरते ही लौह शृखलाए टूट गई :

रामपुरा गाम की जनता ऐसे महापुरुष को अपने ग्राम मे पाकर बहुत ही हर्षित हुई और आप श्री के चरणो मे नतमस्तक होकर प्रार्थना करने लगी-हे तरण-तारण, ससार समुद्र के जहाज, हे पर दुख कातर नर पुगव, आप कुछ दिन यही विराज कर रागद्वेष तथा मोह रूपी घनाधकार से भटकती हुई यहा की सन्तप्त जनता को ज्ञान की ज्योति दिखाइये, जिससे हमारी आत्माए इहलोक व परलोक मे, परम शान्ति प्राप्त कर सकें । यहा के लोगो की ऐसी उत्कट भावना को जानकर द्रव्यादि चतुष्टय को ध्यान मे रखते हुए पूज्य श्री कुछ दिनो तक यही विराजे ।

पूज्य श्री ने आगम के आधार को लेकर गाव के भव्य प्राणियो को धर्मोपदेश दिया तथा ससार की असारता एव मनुष्य जीवन की क्षणिकता का बोध कराया । ऐसी उपदेश-धारा से कइयो–अनेको आत्माए भीजकर जागृत बन गई और नाना प्रकार के व्रत–नियमो का अगीकरण होने लगा । उन्ही मे से एक बहिन तो ससार से विरक्त होकर आप श्री के चरणो मे प्रव्रजित होने के लिये उत्कठित हो उठी । किन्तु श्रेय कार्यों में बहुत विघ्न आते है । उस बहिन के परिवार वाले उसके शुभ निश्चय मे बाधक बन रहे थे । ससार मे देखा जाता है कि जब किसी परिवार का सदस्य बिगाड के रास्ते पर जा रहा हो तब निकट सम्बन्धी भी दूर हो जाते हैं कि हम क्या जाने ? दूसरी ओर दीक्षा जैसे शुभ कार्यों में किसी परिवार का सदस्य प्रवृत्त होना चाहता है तो दूर के सम्बन्धी भी निकट के बनकर उसमें बाधा डालने की चेष्टाएं करते है । ऐसी ही गलत भावनाओ में पडकर उस बहिन के सम्बन्धियो ने भी उस बहिन को लोहे की साकलो से बाधकर घर के एक कौने में डाल दी । वह बहिन कष्ट भोगती रही लेकिन अपने निश्चय से विचलित नही हुई ।

एक बार पूज्य श्री भिक्षाचारी मे पधारे तो उस साकलो से बधी हुई बहिन पर सहज ही उनकी दृष्टि गिर गई । देखते ही दृष्टि का अलौकिक प्रभाव हुआ कि कच्चे सूत की तरह वे साखले टूटती चली गईं । उस बहिन का नाम था-राजीबाई । निर्विकार, निर्मल दृष्टि का ऐसा ही अलौकिक प्रभाव होता है, जो कि क्षण-मात्र मे भव्य आत्माओ के दु खो का अन्त, कर देती है । महापुरुष कुछ नही करते—यह तो उनकी समभावी दृष्टि के बल से स्वत घटित हो जाता है।

३ चरण स्पर्श से कुष्ट रोग समाप्त :

इसी रामपुरा गाव मे एक भाई कुष्ट रोग से पीडित था । जिसके पूरे शरीर से खून रस्सी आदि दुर्गन्धयुक्त पदार्थ झरते रहते थे । उसकी शारीरिक दशा इस कारण अत्यन्त वीभत्स दिखाई देती थी । छूत की बीमारी होने से कोई भी व्यक्ति उसके पास तक नही फटकता था । उस रोगी भाई को जब यह पता चला कि महायोगीराज, जगत् के सर्व प्राणियो के वत्सल आचार्य प्रवर श्री हुक्मीचदजी म सा उसके गाव मे पधारे हुए है, जिनके प्रभाव से हैजे की महामारी तक शान्त हो गई है और राजीबाई की लौह शृंखलाए भी नजरमात्र से टूट गई है तो उसने भी सोचा कि ऐसे महात्मा के आशीर्वाद से वह भी रोग-मुक्त हो सकता है । तब वह चरण स्पर्श एव शुभ दर्शन के माध्यम मे अपने कुष्टरोग को दूर करने का श्रद्धा भाव लेकर पूज्य श्री की सेवा मे पहुचा ।

उस समय वहा उपस्थित जन समुदाय यह देखकर चमत्कृत हो उठा कि ज्यो ही उस कुष्ट रोग से पीडित भाई ने पूज्य श्री के चरणो का स्पर्श किया, त्यो ही देखते उसका साघातिक कुष्ट रोग समाप्त हो गया और थोडे से समय मे ही उसने पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर लिया ' ऐसा होता है, महापुरुषो के चरण स्पर्श करने का दिव्य प्रभाव ।

४. उपदेश के साथ सोने के सिक्को की बरसात :

ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए पूज्य श्री एक बार नाथद्वारा पधारे । वहा आप प्रतिदिन

धर्मोपदेश फरमाते थे । नित्य प्रति की भाति एक दिन जब आप उपदेशार्थ व्याख्यान स्थल पर पहुचे और उपदेश की अमृतधारा प्रवाहित करने लगे । तभी उन दिव्य वचनो का आश्चर्यकारी प्रभाव दृष्टिगत हुआ । एक ओर तो पूज्य श्री का उपदेश चल रहा था तो दूसरी ओर आकाश से सोने के सिक्को की बरसात होने लगी, जिसे देखकर उपस्थित जनता महदाश्चर्य मे डूब गई । क्या अनहोनी घटना थी कि सयमनिष्ठ साधु के उपदेशो से प्रमुदित बनकर देवताओ ने स्वर्ण-मुद्राओ की वृष्टि की ? प्रभु ने सत्य ही कहा है कि जिनका मन धर्म मे रमा हुआ रहता है, उन्हे देवता भी नमस्कार करते है ।

इस घटना से ऐसा समझ मे आता है कि सूत्रो मे आये दृष्टान्तो के अनुसार पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा के पाच महाव्रतधारी सयमनिष्ठ जीवन मे प्रभावित बनकर देवता उनकी सर्वदा सेवा मे रहते थे । सोने के सिक्को की बरसात किन्ही भक्त देवताओ का भक्ति-प्रदर्शन हो सकता है । खोज करने पर आज भी उस स्वर्णवृष्टि की कुछेक स्वर्ण मुद्राए किन्ही श्रावको के पास देखी जा सकती है ।

आपश्री के जावद ग्राम पधारने पर वहा भी हैजे का प्रकोप शान्त हो गया था । यह घटना भी आप श्री के विशुद्ध जीवन का ही सुफल हो सकता है । सभव है कि आपको तप सयम की उत्कृष्ट आराधना से कोई उपद्रव शान्तिकारी लब्धि प्राप्त हो गई हो और उस लब्धि के ससर्ग में जो भी व्यक्ति अथवा क्षेत्र आ गया तो शान्ति का लाभ मिल गया । रोगो मे उपशान्ति के और भी कई उदाहरण है ।

सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव एवं उत्तराधिकारी का चयन :

कुछ शताब्दियो पूर्व लोकाशाह ने शिथिलाचार के विरुद्ध आवाज उठाकर सयमीयक्रान्ति का शखनाद किया और श्रमण सस्कृति की धारा को अविरल प्रवाहित करने मे अविस्मरणीय योगदान दिया । उसी परम्परा मे पूज्य श्री भी एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है । मानो पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा को भी जैसे प्रकृति ने यही महत्कार्य सौपा था, जिसे उन्होने अपने तप-त्याग की तेजस्विता से सफलतापूर्वक पूर्ण किया । उनके भव्य व्यक्तित्व के प्रभाव मे उनके श्रद्धालु भक्त जब नई उत्क्रान्ति के सन्देश को हृदयगम करके उनके साथ हो लिये तो स्वाभाविक था कि वे या वह समूह अपने पूज्य गुरु के नाम से जाना जाता, और इस प्रकार एक नये कर्मठ सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ ।

सम्प्रदाय शब्द अपने आप मे कोई गलत अर्थवाला शब्द नही है । यह शब्द तो ऐसे समूह का सकेतक है जो धर्म की सुरक्षा के मोर्चे पर डट जाता है । सम्प्रदाय का अर्थ होता है—धर्म का आदान प्रदान, यह सम्प्रदाय शब्द तो बदनाम हुआ है, अन्य हठाग्रह के कारण—जो इसका विकृत प्रभाव है ।

उस समय मे मुनिराज हरजीऋषि की परम्परा मे कोटा सम्प्रदाय बहुत प्रसिद्ध था, उस सम्प्रदाय मे छब्बीस विद्वान् साधु तथा एक विदुषी साध्वी थी । पूज्य श्री हुक्मीचदजी म. सा

भी इन्ही छब्बीस विद्वान् साधुओ मे से एक जाने माने अग्रणी विद्वान् थे । विद्वत्ता के साथ ही आपश्री ने शुद्धाचार प्रचार मे महान् पराक्रम किया था तथा शिथिलाचार को दूर करने के लिये ज्ञान की ज्योति प्रदीप्त की थी । तदनुसार आप स्वय ने सयम के नियमोपनियमो का कठोरतापूर्वक पालन किया तथा अपनी आज्ञा मे रहने वाले सन्त-सती वर्ग से भी उनका उसी रीति से पालन करवाया । आपश्री के ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य के श्रेष्ठ प्रभाव से स्थान के श्रावक–श्राविका वर्ग भी आपके अनन्य भक्त हो गये ।

यही समग्र चतुर्विध सघ साधुमार्ग (कोटा सम्प्रदाय) के नाम से विख्यात हुआ जो आज तक पूर्ण गौरव के साथ चल रहा है तथा जिसके अष्टमपट्टधर आचार्य श्री नानालालजी म सा जिन–शासन का प्रद्योत प्रसारित कर रहे हैं ।

पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा ने अपने आज्ञानुवर्ती सन्त समुदाय से परिवृत हो जन मन मे वास्तविक धर्म का प्रचार करने हेतु गज–गति से भारत भू पर विचरण किया । इससे अनेक भव्य प्राणियो ने प्रतिवोध पाकर सयम अगीकार किया तथा अपनी आत्मोन्नति का मार्ग प्रशस्त वनाया । विहार करते हुए जव आप श्री का वीकानेर पधारना हुआ तो आपने चतुर्विध सघ के कार्य-भार से निवृत्त होने तथा गहन आत्मसाधना मे और भी अधिक तन्मय वनने के लिये अपने आज्ञानुवर्ती सुयोग्य विद्वान् सन्त पूज्य श्री शिवलालजी म सा को विधिवत् अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया एव चतुर्विध सघ के समक्ष फरमाया कि अव से सभी इनकी आज्ञा में चलें । इस प्रकार हुकम-गच्छ के पट्ट पर पूज्य श्री शिवलालजी म सा आचार्य पद पर सुशोभित हुए ।

ऐसा भी सुना जाता है कि पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा सघ के उत्तरधिकारी की घोषणा या वैसा कोई सकेत दिये विना ही स्वर्गस्थ हो गये थे । तव वाद में सघ के गणमान्य साधु–साध्वी एव श्रावक–श्राविका वर्ग मे इस प्रश्न पर गहरा मथन हुआ कि सघ के अनुशासन का भार किन्हे सौंपा जाय ? उस समय आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा के आज्ञानुवर्ती सन्तो मे मुनि श्री हरखचन्द जी म सा भी ख्याति प्राप्त विद्वान् थे । जिन्हे आगमो का गहरा ज्ञान था। सभी गणमान्य व्यक्तियो के मन मे विचार उत्पन्न हुआ कि मुनि श्री हरखचन्द जी म सा को सघ का उत्तराधिकारी वनाया जाय, किन्तु उनकी दो प्रवृत्तिया आगमानुकूल नही थी (१) शास्त्र स्वाध्याय करने मे पहले अनिवार्य रूप से पैरो को पानी मे प्रक्षालन करना, तथा (२) केवल गर्म पानी ही काम मे लेना । गणमान्य व्यक्तियो ने उनसे इन दोनो प्रवृत्तियो को त्याग देने का आग्रह किया कि शौच के समय पैरो मे अशुचि लग गई हो तो पैरो का प्रक्षालन करे । लेकिन स्वाध्याय के पहले इसकी कोई आवश्यकता नहो है । दूसरे, शास्त्रो मे वीस प्रकार के धोवन पानी का विधान किया गया है, अत केवल गर्म पानी ही काम मे लेना उचित नहीं है । किन्तु मुनि श्री हरखचदजी इन दोनो प्रवृत्तियो को छोडने के लिये तैयार नही हुए ।

तव सघ ने विचार किया कि यदि आचार्य ही ऐसी प्रवृत्तिया चलाता रहेगा तो अन्य सन्त–सती भी उनका अनुकरण करेंगे और फिर ऐसी ही परम्परा पड जायगी, अत किसी अन्य

मुनिवर को ही सघ का कार्य भार सौपा जाना चाहिये जो आगमो के ज्ञाता होने के साथ-साथ विशुद्ध आचार के प्रतिपालक भी हो। मुनि श्री शिवलालजी म सा आगमो के मर्मज्ञ, सुयोग्य विद्वान् तथा शुद्धाचार के प्रतिपालक थे, अत सभी की दृष्टि उत्तराधिकार के प्रश्न का समाधान करने के लिये उनकी तरफ मुडी। सभी तरह से विचार विमर्श के बाद चतुर्विध सघ ने मिलकर मुनिश्री शिवलालजी म सा को ही उत्तराधिकारी मनोनीत कर आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। सभी ने द्वितीय पाट पर विराजमान आचार्य श्री शिवलालजी म सा. का तुमुल जयजयकार किया।

कालान्तर मे जब पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा के हस्तलिखित शास्त्रो तथा पृष्ठो का अवलोकन किया गया तो उनमे रखा हुआ एक कागज मिला जो स्वय पूज्य श्री के हाथ से लिखा हुआ था। उस पत्र के लेख का आशय था कि उनके बाद सघ का सचालन मुनि श्री शिवलालजी म सा को सौपा जाय। इसे पढकर सभी भावविभोर हो गये कि अनजाने ही पूज्य श्री की इच्छा का किस प्रकार सघ द्वारा पालन हो गया था ?

पूज्य श्री कितने दीर्घदर्शी थे कि इन्होने बहुत पहले ही जिन मुनिवर को उत्तराधिकारी बनाने का सकेत कर दिया था, वह सकेत कार्य होने तक अप्रकट रहने पर भी क्रियान्वित हुआ।

इस प्रकार पूज्य श्री ने सघ तथा समाज मे जिस शुद्धाचार की उत्क्रान्ति का शख फूका एव श्रमण सस्कृति की सरक्षा का सन्देश दिया, उसे आगे बढाने के लिए योग्य उत्तराधिकारी का चयन हो गया।

तत्कालीन सघ ने पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा की सम्पूर्ण जागरण सक्रियता को एक शब्द मे बाधकर आपको 'क्रियोद्धारक' की सार्थक उपाधि से विभूषित किया।

कालजयी नर पुंगव की कीर्ति लालिमा :

कालचक्र का नियम अलग ही होता है। वह किसी का भी लिहाज नही करता। चाहे साधु हो या गृहस्थ, राजा हो या रक, युवा हो या वृद्ध—काल के समक्ष किसी का वश नही चलता। काल तो अपने नियम से—अपनी गति मे निराबाध चलता रहता है तथा अपना कार्य करता रहता है। बडे-बडे शक्तिशाली शूरमा भी इसकी चपेट से नही बचते तो तीर्थंकर जैसे दिव्य पुरुषो को भी यह काल यथासमय ससार से उठा देता है। हमारे चरित्रनायक महापुरुष को भी इस काल ने अपने चक्र मे ले लिया और वि. स १६१७ की वैशाख सुदी पचमी को पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा तत्कालीन ग्वालियर रियासत के जावद ग्राम मे भौतिक शरीर को त्यागकर चिरशान्ति के पथ पर महाप्रयाण कर गये और इस तरह कालजयी बन गये।

कालजयी कोई कब बनता है ? कालजयी का अर्थ होता है काल को जीत लेने वाला अर्थात् समय की परिधियो को लाघकर समय से ऊपर उठ जाने वाला महान् पुरुष।

पहले कोई महापुरुष बनता है, तभी वह कालजयी होता है । लेकिन पुरुष से महा-पुरुष कौन बनता है—इसे पूज्य श्री के जीवनवृत्त से समझा जाय तो समीचीन रहेगा एवं तभी समझा जा सकेगा कि उस कालजयी नरपुगव की कीर्ति लालिमा आज भी रक्ताभ होकर क्यो फैली हुई है तथा क्यो भविष्य मे भी उसी प्रकाश को लेकर फैली रहेगी ?

किसी नीतिकार ने मनुष्यो को तीन श्रेणियो मे बाटा है—उत्तम, मध्यम तथा अधम । इन श्रेणियो को उसने समय की गति के साथ जोडा है । समय का प्रवाह एक क्रान्तिकारी प्रवाह होता है । जो समय के प्रवाह को अपने विचारो के अनुसार मोड देने मे सक्षम होते हैं, वे समय को अपने पीछे चलाते है । कोई नया विचार—कोई नया सन्देश इतनी तेजस्विता के साथ देते है उनके व्यक्तित्व को, समय अपना अगुआ बना लेता है । तब उस समय उनके विचार—उनके सन्देश की गूज बनी रहती है । समय को अपनी धारा मे मोड लेने को ही क्रान्ति कह सकते है समय को अपने पीछे चला सकने वाले मनुष्य ही महापुरुषो के नाम से जाने जाते हैं और युगो तक जाने जाते रहते है । मध्यम श्रेणी उन्हे दी गई है जो कम से कम इतने जागरुक होते हैं कि समय के साथ-साथ अपनी गति को बनाये रखते है लेकिन अधम श्रेणी के मनुष्य तो समय से भी बहुत पिछडे हुए रहते है । इस विचार से महापुरुषत्व ग्रहण कर सकने का अर्थ होता है समय को रौंदना—उसकी चाल को नया बदलाव देना ।

हमारे चरित्रनायक को महापुरुष के नाम से इसी कारण सम्बोधित किया जाता है कि उन्होंने शिथिलाचार के रूप मे चल रहे समय को अपनी सयमीय क्रान्तिकारिता की शक्ति से रौंदा तथा अपनी सयम निष्ठा के तेज से युगान्तरकारी परिवर्तन दिया । वे आगे बढे और समय उनके पीछे चलने लगा । शिथिलाचारी प्रवृत्तियो पर रोक लगी तो शुद्धाचार की महिमा विचार तथा आचार मे प्रस्फुटित होने लगी ।

महाजनो येन गत स पथ की उक्ति के अनुसार समय उनके चरणचिन्हो पर चल पडा और इसीलिये वे कालजयी हो गये कि अभी तक समय उनके चरणचिन्हो पर चलता हुआ श्रमण सस्कृति की सरक्षा मे सन्नद्ध है तथा आगे भी वह सन्नद्ध बना रहेगा ।

उस कालजयी नरपुगव की कीर्ति लालिमा फिर सदा-सदा के लिए प्रकाशमान क्यो नही रहेगी ? वह यश तो उनके कृतित्व से ही फूटा है । उनके कृतित्व का यश एक लावणी मे इस रूप मे पाया गया है—

"ज्ञान तणै घुडले चढ्या, दृढ किरिया माही
कर केसरिया उडदीवा, मुनिकरम करममाही
पच महाव्रत निरमल पालै, संका और नाही
दोष बयालीस टालै मुनिसर, धन-२ जग माही

विक्रम सवत् १९६९ मे प्रकाशित श्री जैन सुबोध हीरावली की एक ढाल मे पूज्य श्री के सयम गुणो का निम्न रूप मे उल्लेख किया गया है—

"जिणनर नजरे देखिया, गुण सुणिया छे तास
जिम परिमल कोई जात की आवे वास सुवास
चारो ही जात का आहार मे रास्या तेरा ही द्रव
मीठी तली खीरे मेकी ए तीनो ही त्यागी सर्व
एक जिभ्या सू वर्णन कियो निर्मलजल गुणगग
पार न पावे प्राणिया, जीत्या कर्म रा जग

(पूरी लावणी के साथ पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा पर लिखे स्तवन व ढाले इस जीवनवृत्त के बाद परिशिष्ट मे दी गई है)।

पूज्य श्री का देह पिण्ड भले ही ससार से उठ गया और आज हमारे बीच मे नही है किन्तु उनका यश पुज आज भी हमे वह प्रकाश-पथ दिखा रहा है कि श्रमण सस्कृति की स्थायी सरक्षा तभी हो सकेगी जब आप स्वय अपने जीवन को उस पुण्यशाली महिमामयी सस्कृति के ताने बानो मे बुनकर अहिंसा, सयम और तप रूप धर्म के अलकारो से अलकृत बना लेगे। अपना उन्नत आचरण ही दूसरो के आचरण को प्रभावित करता है तथा उसे सच्ची दिशा मे आगे बढाता है। इसीलिये एक सच्चे श्रमण को 'तिन्नाण तारयाण' बनना होता है और तरण-तारण के जहाज बन कर पूज्य श्री ने अपनी आचारगत उत्क्रान्ति के माध्यम से श्रमण सस्कृति के स्वरूप को पुन उज्ज्वलतम बना दिया। आपकी गुणगरिमा, तपोमय जीवन की सुरभि तथा कीर्ति लालिमा आज भी सर्वत्र विद्यमान है। आपश्री द्वारा किया गया क्रियोद्धार का कार्य वर्तमान मे भी पल्लवित, पुष्पित एव फलित हो रहा है।

---

१ प्रसिद्ध दिवाकर श्री चौथमल जी म सा ने पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा का गुणानुवाद करते हुए स्वरचित गीत की अन्तिम पक्ति मे कहा है —

"पूज्य श्री स्वर्गलोक मे 'आठाष्टक विमान मे उत्पन्न हुए वहा से च्यवकर महा-विदेह क्षेत्र मे बलदेव की पदवी पाकर मोक्ष मे पधारेंगे।

(आचार्य श्री पन्नालाल जी स्मृति ग्रन्थ से)

२. "पूज्य आठाष्टक विमान मे जावे
बलदेव विदेह हो शिव पावे
कहे चौथमल जय जयकार करें-"

(टोडा रायसिह स्मारिका से-)



परिशिष्ट–1

स्तवन व ललवाणियां

१ स्तवन (देशी जल्ला की)

शेहर टोडास्यू निकल सयम लीवो हो,
हुकम मुनिराज, शेहर टोडा । दयाल ।
गुरु जीतार्थ लालचन्द जी ने भेट्या हो ।
सयम ले ने तपस्या भारी कीधी हो ।।
वेले–वेले कर तप तन ने तायो हो
वारा मास पास एक चादर राखी हो ।
सर्व मीठा का त्याग मुनीश्वर कीधा हो
तली वस्तु जो त्यागी, तेरा द्रव्य जो राख्या हो ।।
जावद शेहर मझार सथारो ठायो हो
गाम गाम का वाया भाया आया हो ।
सूत मोहनगारी वारी हू थारी हो—हू मा द ।।
हीरालाल गुणगावे सुरपद पावे हो—हू ही द ।।

(श्री जैन सुवोध हीरावली से प्रकाशित सवत् १६६६ मे)

२ हुकम मुनि जी की लावणी

हुकम मुनि दीये जगमाही,
सूखीर हो रहया ऋषीमर तपस्या के माही–टेर ।।
कोटे कानी सू आया मुनिमर किसनगढ माही ।
सवत् अठारे साल तैठावे फागुण माम माही ।।
वेले–वेले करे पारणो हुवै जठा तोही ।
एक पिछेवडी मे रहे मुनिसर वारे मास तोही ।।
लिखी वीनती आप पधारो म्हारे शेहर माही ।
मोटा छो मुनिराज कै महिमा फैली जगमाही ।।
ज्ञान ध्यान तो घणों ही कहीजे ज्योरो पार नाही ।
भगवत री आज्ञा मे चाले धन धन मुनिराई ।।
ज्ञान तणे घुडले पर चढिया दृढ किरिया माही ।
कर केसरिया उडदीवा मुनि करम कटकमाही ।।
पंच महाव्रत निरमल पालै, सका और नाही ।

दोप बयालीस टालै मुनिसर धन–धन जग माही ॥
सरव मीठे रा त्याग मुनीने जाव जीव ताही ॥
तली वस्तु खावै नही मुनिवर धन–धन मुनिराई
क्रोड जिम्यासू गुण करू तो तोही पार नाही
एक जिम्यासू गुण करू तो करू कठा ताई
सवत् अठारे साल गुणतरे मिगसर मासमाही
गुरु भेट्या श्री लालचन्दजी बूंदी सहर माही
पूज्य श्री लालचन्दजी मोटा मुनिराई
ज्यारै गुण रो पार न आवै सवकू सुखदाई–हु.

(वावीस समुदाय से–)

३. पूज्य श्री हुकमचन्द जी म सा को द्विढाल्यां

दुहा–वृषमात्र वृषीकरन वदो वारम्वार
विघ्न हरण शिवसुखकरण अक्षय सुखदातार
वर्तमान शासण विपै मुनीवर केई महीमड
हुवा घणाई होवसी, गुणमणी रत्नकरड

ढाल—१ (भूलिमै नणदल कवडालो)

श्री हुकममुनीश्वर हुआ दीपता इण भर्तक्षेत्र मझार हो लाल०
देशविदेश के मायने, कीधो घणो उपकार हो लाल०
ओशवश अतिनिर्मलो, जनम लियो सुप्रमाण
टोडो शेहर सुहामणो, आर्य क्षेत्र विधान हो०
वाल रामत क्रिडाकरी पाया यौवनवेग
निजगृह कारजकारणै, गया था प्रदेश हो०
भाग जोग गुरु भेटिया लालचन्द जी रिप
वूदी शेहर सुहामणो, हुआ जिनका शिप हो०
सवत् अठारे गुण्यासीये, शुभवेला शुभवार ।
चारित्र चितामणी पाया पुण्य प्रमाण हो० ॥
ज्ञान भण्या विनयकरि हुवा छ गुणनिध्यान ।
भर्तक्षेत्र भव्य तारवा प्रशस्या पृथिवीमान हो० ॥
वस्त्र पात्र आहार कारणे टाले दोप अणगार ।
मर्यादा वाधी घणी पाले अधिक आचार हो० ॥
सूर वीर धीर जे घरा सहा परिषह अनेक ।
वेले–वेले करे पारणो, ओढण वस्त्र एक हो० ॥
क्रोध मान माया लोभ को जीत्या रिपने वेग ।

ग्राम नगर पुर पाटणे यश फैल्यो देस प्रदेश हो० ।
जिण नर नजरे देखीया गुण सुणीया छे तास ।
जिम परिमल कोई जात की आवे वास सुवास हो० ॥
चारो ही जात का आहार मे राख्या तेरा ही द्रव ।
मीठी तली खीरे सेखो ए तीनो ही त्यागी सर्व हो० ॥
एक जिभ्यासू वर्णन कियो निर्मल जल गुण गग ।
पार न पावे प्राणीया जीत्या कर्या रा जग हो० ॥
गुण गाया गुणवत का या थई ढाल रसाल ।
अमरोष कोई आणोमती इम कहे हीरालाल हो० ॥

ढाल—२ (कोई चतुर विचारी ने चेत जो ए लाल–) ए देवी

सयम लेई शुद्ध भावस्यू रे लाल ॥
पाल्यो शुद्ध आचार हो मुनीश्वर ।
दिन–दिन तेज वध्यो घणो रे लाल ॥
उज्ज्वल पक्ष उजियाल हो मुनीश्वर ।
श्री हुकमीचन्दजी ने वदिये रे लाल (टेट) ॥
उग्र विहार किया घणा, देश प्रदेश मझार ।
अनुकूल प्रतिकूल उपना, उपसर्ग सहत्रा दुम्माकार हो० ॥
कोईक शिष्य रा सयोग सू देवदियो परिशर्म ।
निश्चल चित्त सयम सेवता धार्या धैर्य धर्म हो० ॥
कोई सुर ऐसी करी, पातरा मे लिख गयो लेख ।
सोहनवर्ण सुहामणो आचार्य करी गवेख हो० ॥
मानव ने तिर्यञ्च का सहया परिषह सुखीर ।
छाट–७ करे रिख पारणा सायर जेम गम्भीर हो० ॥
मारवाड मेवाड मे मालव देश प्रसिद्ध ।
हाडोती देश डूडाण मे उपकार कियो भलीविद्ध हो० ॥
और उपकार कियो घणो जाणे वहु नर नार ।
साध सम्प्रदाय वधी गणी शाल रुख प्रचार हो० ॥
जावद शेहर मे स्थिर पणे, रहया केतोकमाल ।
असण कीधा दीपतोरे, जिपरो घणो हाल हो० ॥
सवत् उन्नीसे सत्तरा भला चेत सुदी शुक्रवार ।
मध्यरात्रि के मायने पहोचा स्वर्ग मझार हो० ॥

(श्री जैन सुवोध हीरावली से–)

४ पूज्य श्री हुक्मचन्दजी महाराज की पाटावली

इण भरत खड मे तरण तारण की झाजे ।

हुआ हुकमचन्द महाराज, सुधार्या काजे–टेर ॥
इकवीस वर्ष लग वेले–२ तप ठाया ।
एक वस्त्रा ओढत अग ज़ोर लगाया ॥
करी आचार विचार को शुद्ध, मिच जिमगाजे–१ ।
पीछे पूज्य शिवलालजी महायश लीधो ॥
तेतीस वर्ष लग तप एकान्तर कीधो ।
वहु वधी परिषदा साधू–साध्वी आजे–२ ॥
श्री उदयचन्द जी महाराज आचारज भारी ।
केई राजा को समभाय आत्मा तारी ॥
हुआ जगत् विख्यात सिध जिमगाजे–३ ।
चौथे पाटे हुआ चौथमलजी गुणवता ॥
हुवा पडित मे प्रमाण आचार्य दिपता ।
केई जणा को दियो ज्ञान ध्यान और साजे–४ ॥
अब पाचमे पाटे हुवा आप वड योगी ।
श्री लालजी महागुणवत छत्री के त्यागी ॥
कियो धर्म उद्योत मिथ्याली लाजे–५ ॥
ये मुनिमाल रसाल, ध्यान नितधरना ।
हीरालाल इम कहे उन्नति करना ।
जीवागज कियो चौमासो मोक्ष की पाजे–६ ॥

(श्री जैन सुबोध हीरावली से–)



आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा.

जीवन-तथ्य

जन्मस्थान	टोडा रायसिंह (राजस्थान)
पिता	श्री रतनचन्द जी चपलोत
माता	श्रीमती मोतिया देवी
दीक्षास्थल	बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	मार्गशीर्ष अष्टमी वि स १८७९
गुरुजी	पूज्य श्री लालचन्द जी म सा
स्वर्गवास स्थान	जावद (मध्य प्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	वैशाख शुक्ला पचमी वि स १९१७



१ प्राकृतिक सुषमा एव वीरता की भूमि पर जन्म ..

२ विद्या से विराग विराग से प्रव्रज्या

३ शिथिलाचार के समक्ष एक विशुद्ध आदर्श

४ शिथिलाचार के विरुद्ध आचार धर्म की शुद्धता के प्रयास

५ कठोरतम सयम साधना के प्रतीक

६ तप पूत शरीर एव ध्यानावस्थित आत्मा के धनी

७ गुणदृष्टि की उच्चता तथा गुरुजी का हृदय परिवर्तन

८ समभाव की अनूठी साधना से सर्व दिश यशोपताका

९ श्रमण सस्कृति की सरक्षा मे नवीन क्रान्ति तथा सघ विस्तार

१० आगम मर्मज्ञ

११ आश्चर्यकारी चमत्कार जिनके हुक्म मे चलते थे ।

१२. सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव एव उत्तराधिकारी का चयन

१३. कालजयी नरपुंगव की कीर्ति-लालिमा

परिशिष्ट स १ ।

शिवपथानुयायी

प्रकाण्ड विद्वान्

परम्-तपस्वी

आचार्य

श्री शिवलालजी म. सा.

卐 हु शि उ चौ श्री ज ग ना ना 卐

शि

शिवपथानुयायी, प्रकाण्ड विद्वान्, परम-तपस्वी

आचार्य

श्री शिवलालजी म.सा.

आचार्य श्री शिवलालजी म.सा.

आचार्य श्री शिवलालजी म.सा.

जीवन तथ्य

जन्म स्थान		धामनिया (मध्य प्रदेश)
दीक्षा स्थान		बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि		वि. स. १८९१ पौष शुक्ला षष्ठी
युवाचार्य पद स्थान	:	बीकानेर
युवाचार्य पद तिथि	:	वि स १९०७
आचार्य पद स्थान	:	जावद (मध्य प्रदेश)
आचार्य पद तिथि	:	वि. स १९१७
स्वर्गवास स्थान	:	जावद (मध्य प्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	:	वि. स. १९३३ पौष शुक्ला षष्ठी

आचार्य श्री शिवलालजी म.सा.

- संसार की असारता एव मुक्ति के अक्षय सुख के स्वरूप को समझकर जिन्होने उत्कृष्ट भावो के साथ सयमीय साधना मे प्रवेश किया था ।
- अपनी प्रखर प्रतिभा के बल पर जिन्होने विद्वत् समाज मे जोरदार प्रतिष्ठा प्राप्त की थी ।
- जिज्ञासुओ की जिज्ञासा का सटीक समाधान देकर उन्हे सतुष्ट करने मे जो समर्थ थे ।
- जिनका भक्तिरस से परिपूर्ण जीवन–स्पर्शी उपदेश जन–जन की आत्मा को झकृत करने वाला था ।
- ३५ वर्ष तक निरन्तर एकान्तर की तपस्या करके जिन्होने विद्वत्ता के साथ ही तपस्या मे भी एक कीर्तिमान स्थापित किया था ।
- जिनकी स्वाध्याय के प्रति गहरी रुचि, आचार एव विचार के प्रति पूर्ण निष्ठा एव जिनवाणी पर अगाध श्रद्धा थी ।
- ऐसे थे प्रखर प्रतिभा सम्पन्न महान् शिवपथानुयायी आचार्य श्री शिवलालजी म.सा.

शिवपथानुयायी प्रकाण्ड विद्वान् परम तपस्वी

आचार्य

श्री शिवलाल जी म. सा.

शिवसुख क्षेत्र मे सदावास करने के लिये जिस सयम रथ पर चढकर पहुचना होता होता है, उसके दोनो पहियो के नाम है ज्ञान और क्रिया । रथ तभी चलेगा जब दोनो पहिये सही और मजबूत होगे । एक भी पहिया कमजोर या खोखला होगा तो रथ देर तक नही चल सकेगा। इसी प्रकार ज्ञान सम्यक् एव गूढ हो तथा क्रिया पुष्ट और कठोर हो सयम की सफल आराधना सभव बनती है । इसीलिये आचार्य उमास्वाति ने अपने तत्वार्थ सूत्र मे कहा—'ज्ञानक्रियाभ्याम् मोक्ष' ज्ञान और क्रिया-दोनो के सम्पूर्ण बल मे ही मोक्ष की साधना सफल बनती है ।

कई लोग तर्क करते है और भौतिक सुख सुविधा के इस युग मे यो कहे कि कुतर्क करते है कि क्रिया का ढकोसला व्यर्थ है, ज्ञान के आधार पर ही आत्मोन्नति के मार्ग पर आगे बढा जा सकता है । ज्ञान का अर्थ होता है जानना और क्रिया का नाम है करना । कोरा ज्ञान लेने से कोई काम नही होता और बिना जाने करने लगे तब भी काम बनेगा नही । सही जानकर सही तरीके से करेंगे तभी प्रयोजन की सिद्धि होगी । ज्ञान को लगडा कहा है और ज्ञानहीन क्रिया को अधी, लेकिन ज्ञान जब क्रिया के कधो पर चढकर क्रिया को रास्ता दिखाते हुए चलाता रहता है, तब निरन्तर गतिशीलता मे कोई बाधा नही होती । दोनो एकरूप हो जाते है और सफलता-पूर्वक बराबर चल सकते है और मोक्ष की मजिल तक पहुच सकते है ।

ज्ञान और क्रिया के इस गूढ मर्म को पूर्ण आन्तरिकता से समझा था ज्ञान और क्रिया के परम आराधक पूज्यपाद श्रीमद् आचार्य श्री शिवलालजी महाराज साहब ने, जिन्होंने एक ओर शास्त्रो का गहरा ज्ञान प्राप्त किया था तो दूसरी ओर तैतीस वर्ष तक एकान्तर तप की आराधना करके कठोर क्रिया की कसौटी पर अपने को खरा सिद्ध किया था ।

उर्वर धरा के पूत वैराग्य की उर्वरता मे ढले

आपका जन्म मध्य प्रदेश की उर्वर धरा पर धामनिया ग्राम मे हुआ था । जन्म से ही आपके चारो तरफ सामाजिक परिस्थितिया कुछ इस प्रकार से घटित होती रही तथा आपकी आन्तरिकता का इस प्रकार से श्रेष्ठ विकास होता रहा कि विराग आपकी रग-रग मे समाता

गया । आपके प्रतिदिन के क्रिया-कलापो मे वैराग्य भाव इतना स्वाभाविक वन गया कि आप अल्प वय की अवस्था मे ही दीक्षित हो गये । उर्वर धरा का पूत वैराग्य की उर्वरता मे उग्र गति से ढल गया ।

धामनिया ग्राम की माटी में कुछ ऐसा जादू था कि उसके रजकणो में क्रीडा करते हुए शारीरिक अभिवृद्धि के साथ आपश्री के व्यक्तित्व में तथा मानसिक चिन्तन में एक नवीन उभार आया । विचारो की रह रह कर उर्मिया उठने लगी कि इस ससार मे कोई भी ऐसा शक्तिमान् पुरुष नही है जो अपनी मृत्यु को रोक सके फिर ऐसी नाशवान् सासारिकता के प्रति कैसा मोह ? इस आत्मा ने सम्पूर्ण लोक मे परिभ्रमण करते हुए कई प्रकार के सम्वन्ध वनाये है और तोडे है फिर वर्तमान सम्वन्धो के प्रति व्यामोह क्यो ? इस प्रकार से ससार के स्वरूप और उसकी क्षणिकता पर चिन्तन करते करते आपको ससार से विरक्ति हो गई । मन विरक्ति के आलोक मे वरावर विचरण करने लगा और हर समय आप सासारिक कार्यों से उदासीन रहने लगे एव ससारत्याग के अवसर की प्रतीक्षा करने लगे ।

किशोरावस्था का ही प्रारभ हुआ था कि आपने भोगेच्छाओ और कामनाओ का अन्त कर दिया । यौवन की शक्ति सयम की साधना करने लिये उतावली वन गई—राग से विराग के पथ पर अग्रसर वनते हुए आपश्री सम्पूर्ण रूप से विरागी हो गये । आपने वू दी (राजस्थान) मे वि स १८९१ मे श्रीमद् दयालजी म सा के समीप दीक्षा ग्रहण की तथा समिति-गुप्ति से गुप्त होकर आप ग्रामानुग्राम विचरण करने लगे । अल्प अवधि मे ही आपके वैराग्य की उर्वरता जव दीक्षा के रूप मे फलीभूत हो गई तो स्वाभाविक था कि आप ज्ञान और क्रिया की कठोर आराधना मे निमग्न हो जाना आपके लिए स्वाभाविक ही था ।

आप भी पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा की आज्ञाओ का पालन करते हुए उनके पास ज्ञानाभ्यास करते थे । उन्ही का प्रेरक प्रभाव था कि आपश्री साधना के कटकाकीर्ण पथ पर सतत गतिमान रहते हुए परिषहो एव उपसर्गों को समभाव से शमित करते रहे तथा आत्मिक आनन्दानुभूति की दिशा मे अग्रसर वनते रहे । आपकी ज्ञानार्जन की प्रगति से पूज्य श्री हुकमीचदजी म सा इतने सन्तुष्ट हो गये थे कि जव भी कोई तत्त्व जिज्ञासु उनके साथ चर्चा करने के लिये पहुचता तो वे उसे आपश्री के पास समाधान हेतु भिजवा देते थे । आपश्री की ऐसी प्रतिभा के कारण ही पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा अधिकतर अपने ध्यान मौन आदि मे व्यस्त रहते थे । तत्त्व जिज्ञासु आपश्री के पास से पूर्णत सन्तुष्ट होकर लौटता था ।

कोटा सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव तथा आपका निखरता व्यक्तित्व

जिस समय मे पूज्य श्री हुक्मीचदजी म. सा ने श्रमण सस्कृति की सरक्षा का अभियान चलाया था, उस समय मे वैसी विचारणा वाले अन्य सन्त भी यत्र तत्र विखरे हुए थे जो पूर्ववर्ती कोटा सम्प्रदाय मे सम्वन्धित माने जाते थे । अत वैसे सन्तो के निकट में आने पर एक प्रकार से कोटा सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव होने लगा, जिसमे आपश्री के व्यक्तित्व की प्रमुखता वन गई थी ।

कोटा सम्प्रदाय की दृष्टि से पूज्य श्री दौलतरामजी म. सा. समर्थ विद्वान् तथा सूत्र-सिद्धान्तो के पारगामी थे । उनका जन्म कलायीपल ग्राम के बघेरवाल जाति मे हुआ था । जन्म से ही स्वाभाविक विराग अवस्था में होने से लगभग तेरह वर्ष की अवस्था मे ही आपने संसार का परित्याग कर विक्रम संवत् १८१४ फाल्गुन शुक्ला पचमी को दीक्षा अगीकार कर ली थी । देहली निवासी आगमज्ञ श्री दौलतसिंहजी के द्वारा आपने बावीस सूत्रो का गहन अध्ययन भी किया था । फिर तो आपका ज्ञानार्जन इतना समुन्नत बन गया था कि जिनके आगम ज्ञान की कीर्ति दशोदिशाओ मे फहरा रही थी । गुजरात–सौराष्ट्र भी इस कीर्ति की सुगंध से अलिप्त नही रह सका । सौराष्ट्र मे विराजमान आचार्य श्री अजरामरजी म सा ने लिम्बडी सम्प्रदाय के वरिष्ठ अधिकारियो के समक्ष यह भावना व्यक्त की कि मैं आचार्य श्री दौलतरामजी म. सा के सान्निध्य मे शास्त्रो का गहन गभीर ज्ञान प्राप्त करने के लिये जानना चाहता हू । तब संघ के सदस्यो ने निवेदन किया—"आपकी भावना उचित है लेकिन आपके पधारने से मात्र आपको ही लाभ होगा, हमको नही । अत हम ऐसा प्रयत्न करते हैं कि आचार्य श्री दौलतरामजी म सा सौराष्ट्र की धरती को पावन करे । तदनुसार संघ के सदस्यो ने एक वाक्चतुर व्यक्ति को आचार्य श्री के पास भेजा । उसने आचार्य श्री अजरामरजी म सा एव सौराष्ट्र संघ की विनती आचार्य श्री के समक्ष रखी । आचार्य प्रवर ने उनकी विनती का सम्मान किया और सौराष्ट्र की तरफ विहार कर दिया । जब आचार्य प्रवर अहमदाबाद पधारे, तब इसकी सूचना साथ मे चलने वाले उस व्यक्ति ने लिम्बडी जाकर दी तो संघ के लोगो को इतनी खुशी हुई कि उन्होंने इसी खुशी के उपलक्ष में उस व्यक्ति को रु १२५१ इनाम में दिये ।

इस प्रकार अनेक सत–महापुरुषो ने आप श्री से आगम ज्ञान ग्रहण किया ।

पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के मुख्य चार शिष्य थे—(१) श्री गणेशरामजी म. सा. (२) श्री गोविन्दरामजी म सा, (३) श्री लालचदजी म सा तथा (४) श्री राजारामजी म सा आपके पट्ट पर श्री लालचदजी म सा विराजे, जिनके पास पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा दीक्षित हुए थे । श्री लालचदजी म सा अतडी गाव के निवासी एव सिलावट जाति के एक कुशल चित्रकार थे । अपने इस व्यवसाय के कारण ही आपको वैराग्य उत्पन्न हुआ था । गृहस्थावस्था मे आप एक दिन चित्र बना रहे थे कि सब यो ही छोडकर कुछ देर के लिये बाहर चले गये । इस बीच सयोगवश एक मक्खी रग के पात्र मे फस कर मर गई । वापस लौटकर जब उन्होंने यह अवस्था देखी तो वे उससे बडे दुखी हुए और उसी से उनकी वैराग्य भावना बन गई । तभी अन्तडी गाव में पूज्य श्री दौलतरामजी म सा का पधारना हुआ और उन्होंने उनके पास दीक्षा अंगीकार कर ली । इस प्रकार श्री लालचदजी म सा. के सो शिष्य थे, जिनमे से पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा भी एक थे । उस समय कोटा सम्प्रदाय के नाम से कुल सत्ताइस विहररत्न मुनिराज विराजते थे । पूज्य श्री दौलतरामजी म सा के जिन चार शिष्यों का ऊपर उल्लेख आया है, उनमें से श्री गोविन्दरामजी म. सा के शिष्य श्री दयालजी म सा. थे, जिनके पास पूज्य श्री शिवलालजी म सा दीक्षित हुए । इस तरह कोटा सम्प्रदाय के आचार्य श्री शिवलालजी म सा ही प्रमुख स्तंभ रह गये थे । जिनके प्रभावशाली नेतृत्व में विस्तार हुआ कोटा सम्प्रदाय पुनः विशुद्ध धारा में प्रवाहित हुआ ।

ज्ञान एवं क्रिया की प्रखरता से आचार्य पद पर प्रतिष्ठित

आपश्री की ज्ञान गरिमा की चर्चा ऊपर की गई है। आप शास्त्रो के बहुत ही गूढ और स्पष्ट शास्त्र ज्ञाता थे तथा तत्सम्बन्धी शकाए तत्वज्ञान के जिज्ञासुओ द्वारा प्रस्तुत करने पर उनका आप अतीव सन्तोपजनक रीति से समाधान किया करते थे। आपकी विद्वत्ता से पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा बहुत प्रभावित थे तथा इसी कारण से तात्विक चर्चाओ एव समाधान का दायित्व वे आपश्री पर छोड दिया करते थे।

ज्ञानार्जन के साथ साधु-आचार की कठोर पालना के भी आपश्री सुदृढ पक्षधर थे। साधु-आचार की विशुद्धता का आपश्री उपदेश ही नही देते थे बल्कि वीतराग द्वारा निर्देशित क्रियाओ का कठोरतापूर्वक पालन करने मे पहले स्वय ही बहुत सतर्क रहा करते थे। स्वय पाचो महाव्रतो का दृढतापूर्वक पालन करते थे तथा अपने आज्ञानुवर्ती सन्त मुनिराजो से भी उसी रीति से उनका पालन करवाते थे। सयम मे शिथिलता बरतना न उन्हे स्वीकार था और न पसन्द सयम की सम्यक् आराधना द्वारा आश्रव के नवीन स्रोतो को आप अवरुद्ध करते तो कठिन तपश्चर्या के आचरण से पूर्ववद्ध कर्मो की निजरा भी करते। अपनी आत्मिक ज्योति को प्रज्वलित करने के लिये आप तप रूप अग्नि मे अपने कर्म मल को भस्म करने लगे, अर्थात् तैतीस वर्ष तक अखड रूप से एकान्तर तप की आराधना की (एकान्तर का अर्थ होता है एक दिन अनशन तथा दूसर दिन आहार और फिर क्रमश यही क्रम चलता रहता है) ऐसे कठिन तप से आपश्री का व्यक्तित्व तेजोमय बन गया था।

आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा द्वारा श्रमण सस्कृति की सरक्षा सम्बन्धी नवीन क्रान्ति से तथा साधु आचार की विशुद्धता पर बल देने से स्थान–स्थान के श्री सघ तथा श्रावक–श्राविका वर्ग उनकी तरफ आकर्षित होने लगे थे तथा उनके नेतृत्व मे चतुर्विध सघ का विस्तार भी होने लगा था। इस वृहद् कार्य मे पूज्य श्री शिवलालजी म सा की ज्ञान क्रिया की साधना बहुत ही प्रभावक सिद्ध हुई तथा आपश्री सघ की श्रद्धा के केन्द्र बनते गये।

पूज्य श्री शिवलालजी म सा सयमी जीवन की पूर्ण विशुद्धता का निर्वाह करते हुए ज्ञानाभ्यास के पावन कार्य मे जुटे रहते थे। पूर्ण मथन से आपश्री आगमो के गूढ रहस्य रूपी नवनीत को प्राप्त करते रहे। आपश्री भी पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा की तरह ही स्वाध्याय के साथ ध्यान और चिन्तन मे भी निरन्तर तल्लीन रहा करते थे। जैन दर्शन के गहरे तात्विक ज्ञान के साथ आपश्री को अन्य धर्मो तथा दर्शनो की भी पर्याप्त जानकारी थी। चतुर्मुखी बुद्धि का प्रखर विकास होते हुए भी आपके जीवन मे पूर्ण सरलता विद्यमान थी। आपश्री का उपदेश भी आगमिक ज्ञान से भरापूरा होने के बावजूद बहुत सरल और सरस हुआ करता था, जो आबालवृद्ध सभी के लिये सुबोध एव प्रेरणाप्रदायक भी होता था।

आपश्री की कवित्व शक्ति भी अनूठी थी। आपके मधुर कठ से भक्ति रस परिपूर्ण, हृदयस्पर्शी एव समार स्वरूप के उद्बोधक गीतो को सुनकर सभी वर्गो की जनता मंत्र-मुग्ध सी रह जाती थी। सभी प्रकार से आपश्री के प्रवचन अतीव प्रभावशाली हुआ करते थे।

ज्ञान एव क्रिया की आपश्री के जीवन मे ऐसी प्रखरता को देख-परख कर पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा ने चिन्तन किया कि चतुर्विध सघ के संचालन के लिये किसी सुयोग्य सन्त का आचार्य के पद पर मनोनयन आवश्यक है तथा वैसी सुयोग्यता उन्हें पूज्य श्री शिवलालजी म सा मे दिखाई दी । उनके मन में इस मनोनयन के लिये दो उद्देश्य थे—एक तो यह कि आचार्य पद पर अवस्थित होने वाले सन्त की जितनी अधिक सुयोग्यता होगी, उतनी अधिक निष्ठा से वे शुद्धाचार की पालना करवाकर श्रमण संस्कृति की सुरक्षा कर सकेंगे तो दूसरे, ऐसे मनोनयन से उनके स्वय के लिये तप-सयम की निराबाध साधना सभव हो सकेगी । तब आपने सुयोग्य सन्त मुनिराजो को कहा कि अब वे आपके आचार्य श्री शिवलालजी म सा होंगे, इन्हे ही आप आचार्य मान कर इनकी आज्ञा मे चलना । ये जिस प्रकार की आज्ञा दें । उसी प्रकार से आचरण करना । सभी मुनिराजो तथा श्री सघो ने तथास्तु के साथ पूज्यश्री की वाणी को स्वीकार की एव पूज्य श्री शिवलालजी म सा की आज्ञानुसार विचरण करने तथा धर्म-कार्य सम्पादित करने लगे ।

विक्रम सवत् १९०७ मे बीकानेर मे आपको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया । ज्ञान-ध्यान मे अपनी अधिक एकाग्रता की सुरक्षा करने के लिये उन्होंने पूज्य हुक्मीचन्दजी महाराजसाहब ने आचार्य पद का भार पूज्य श्री शिवलालजी म सा को सम्हला दिया क्योंकि उन्हे विश्वास हो गया था कि चतुर्विध सघ को शिथिलाचार से मुक्त करने एव शुद्धाचार का प्रसार करने में पूज्य श्री शिवलालजी म सा एक समर्थ, सक्षम एव प्राभाविक आचार्य सिद्ध होंगे ।

आचार्य श्री के उपदेशामृत से चतुर्विध सघ मे नया जीवन

आचार्य श्री शिवलालजी म सा की प्रवचन शैली अत्यन्त प्रभावपूर्ण थी । आप जिस रीति से श्रोताओं को शास्त्रो का तत्वज्ञान एव आत्म-स्वरूप का विवेचन समझाते थे, वह सीधा उनके दिल मे उतर जाता था और वहा विशुद्ध भावो को उत्पन्न करता था । यो कहे तो अतिशयोक्ति नही होगी कि आचार्य श्री के उपदेशामृत से सारे चतुर्विध सघ मे एक नये जीवन का सचार हुआ । श्रावक तथा श्राविकाए आपके उपदेशो को बडे मनोयोग से श्रवण करते थे तथा उन्हे अपने जीवन के आचरण मे उतार लेने की प्रेरणा पाते थे ।

आपश्री के हृदयस्पर्शी उपदेशो का ऐसा विशिष्ट प्रभाव हुआ कि जहा श्रावक-श्राविका वर्ग मे विवेक जागा एव व्रत-प्रत्याख्यान के प्रति रुचि बढी, वहा अनेको भव्य आत्माए आपके श्रीमुख से ससार के स्वरूप को सुनकर विरक्त होकर आपश्री के चरणो मे सर्वतोभावेन समर्पित होती गई ।



आपश्री का श्रमण परिवार इस प्रकार है—

आचार्य श्री शिवलालजी महाराज साहब

श्री चतुर्भुजजी म सा
श्री लालचदजी म सा
श्री केवलीचदजी म सा (वडे)
श्री केवलचदजी म सा (छोटे)
श्री रतनचदजी म सा
श्री नानालालजी म सा

श्री हर्षचदजी म सा
श्री, राजमलजी म. सा
आचार्य श्री उदयसागरजी म सा
आचार्य श्री चौथमलजी म सा.
श्री वरदीचदजी म सा
आचार्य श्री श्रीलालजी म सा

आचार्य श्री शिवलालजी म सा की विचक्षणता तो इसी से सावित होती है कि उनकी चरण सेवा मे ऐसी भव्य आत्माओ ने प्रव्रज्या ग्रहण की तथा उनकी ज्ञान-क्रिया की साधना से अपने आत्म स्वरूप को चमकाया कि उनमे से तीन मुनिराज एक के वाद एक एक करके आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होते रहे ।

आपश्री के तप—सयम की उच्चता तथा प्रवचनो की प्राभाविकता के कारण चतुर्विध सघ ने अहर्निश प्रगति की तथा सगठन को विशुद्ध आधारो पर एकीभूत वनाया । एक के वाद दूसरे आचार्य के रूप मे आपश्री ने पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा द्वारा पुन प्रज्ज्वलित की गई महान् श्रमण सस्कृति की ज्योति को अधिक प्रकाशमान वनाई, वल्कि यो कहे कि आपके आचार्य काल मे विशुद्धाचार का भव्य प्रसार हुआ तथा श्रावक—श्राविका वर्ग श्रद्धावश आपके प्रति अधिकाधिक आकर्षित होते गये ।

पडित मरण पूर्वक देह त्याग

सयम पथ पर दृढता के साथ सिह गति से चलते हुए आचार्य श्री ने निजात्मा के आदर्श स्वरूप को प्रकाशित किया तो चतुर्विध सघ मे जागृति एव धर्मोन्मुखी प्रवृत्तियो का एक उत्साह भरा वातावरण भी वनाया । वे ज्ञान क्रिया के परम आराधक तपस्वी विद्वान् के रूप मे विख्यात हुए ।

यह ध्रुव सत्य है कि जो तेजोमय जीवन जीता है, वह तेजस्विता के साथ ही अपना देहत्याग भी करता है और यह भी उतना ही ध्रुव सत्य है कि वह मर कर भी अपने तेजोमय जीवन से सदा सदा के लिये अमर हो जाता है । ऐसे ही तेज पुज वन गये आचार्य श्री शिवलालजी म सा, जिन्होने पडित मरणपूर्वक अपनी देह का त्याग किया । आपका स्वर्गवास जावद (मध्यप्रदेश) विक्रम सवत् १९३३ की पौष शुक्ला षष्ठी को हुआ । जो महापुरुष इस नश्वर ससार मे रहते हुए भी स्वानुभूति की प्राप्ति के लिये "शरीरमाद्य खलु धर्मसाधनम्" समझ कर अपनी शारीरिक शक्ति को आध्यात्मिक क्षेत्र मे लगा देते है, उनका शरीर भले ही वाहर से क्षीण दिखाई देने लगता है किन्तु वह क्षीण शरीर ऐसे अद्भुत आत्मिक ओज से परिपूरित हो जाता है जिसके दर्शन-स्पर्श मात्र से आनन्द की धारा प्रवाहित हो जाती है । यही नही, उनका गरिमामय आदर्श जीवन सदा सर्वदा के लिये भव्य आत्माओ की विकासशील गति हेतु प्रकाशस्तभ के समान वन जाता है ।

हमारे प्रकाशस्तभ आचार्य श्री शिवलालजी म. सा. भी यथा नाम तथा गुणो के

ग्रारक बने तथा धर्मक्षेत्र मे ग्रतीव पूजित हुए। कवि श्री हीरालालजी ने ग्राचार्य श्री के काव्यमय गुणगान करते हुए कहा है—

नाम जिणाको शिवलालजी
शिव रमणी चित लायो ए माय
इण ससार ने झूठो जाणी
चारित्र मन भायो ए माय
वाणी जिनकी मीठी लागे
भव्य जीवा रे मन भायो माय
दे उपदेश ने धम सुणावे
जीव घणा तिरायो ए माय

(पूरा स्तवन परिशिष्ट मे देखे—)

नाम शिवलालजी ग्रौर चित्त मे बसाई शिवरमणी—फिर उनके पवित्र चरण मोक्ष की दिशा मे ग्रग्रसर क्यो न होते ? चारित्र की नाव पर चढकर ससार सागर से पार पाने के लिये वे ही ग्रागे नही बढे, बल्कि ग्रनेकानेक भव्य ग्रात्माग्रो की ग्रान्तरिकता मे भी उन्होने मोक्ष प्राप्त करने की स्फुरणा जागृत की। उनका ग्रादर्श जीवन वस्तुत हमारे लिये प्रकाश स्तभ के समान सत्पथ का प्रदर्शक है।

परिशिष्ट १

पूज्य श्री शिवलालजी महाराज का स्तवन

(ग्राज शेहर मे बाइजी जोगीश्वर दीठा—एदेशी)

ग्राज पूज्य जी का दर्शन पायो।
रोम रोम हुलसायो ए माय—॥टेर
निरख निरख मन मगन होवे।
हीयो ज्यो हेम घरायो ए माय—॥ग्राज० १

नाम जिणाको शिवलालजी।
शिवरमणी चित लायो ए माय॥
इण ससार ने झूठो जाणी।
चारित्र मन भायो ए माय—॥ग्राज २

वाणी जिनकी मीठी लागे।
भव्य जीवा रे मन भायो ए माय॥

दे उपदेश ने धर्म सुणावे ।
जीव घणा तीरायो ए माय—।।आज० ३
जावद शहर मे आप विरम्या ।
स्थिर वासे कहवायो ए माय ।।
केई जणा ने सयम दीधो ।
दया धर्म दीपायो ए माय ।।—आज० ४
श्रावक श्राविका गाम गाम का ।
दर्शण करवाने आया ए माय ।।
साधू साधवी चौमासा करने ।
पूज्य चरण चितलाया ए माय ।।—आज० ५
इण पचम आए के माई ।
साधु महामुनि राया ए माय ।।
चार सिघ माहे अधिका दीपे ।
तारा ज्यू चन्द कहवाया ए माय ।।—आज० ६
उन्नीसौ इकतीस साल मे ।
माघ सुदी पचमी राया ए माय ।।
हीरालाल चित्त दे चरण वदे ।
सरण आपके आया ए माय ।।—आज० ७
(श्री जैन सुबोध हीरावली से—)

आचार्य श्री शिवलालजी म. सा.

जीवन-तथ्य

जन्म स्थान	धामनिया (मध्य प्रदेश)
दीक्षा स्थान	बूदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	वि स १८६१
युवाचार्य पद स्थान	बीकानेर
युवाचार्य पद तिथि	वि स १६०७
आचार्य पद स्थान	जावद (मध्य प्रदेश)
आचार्य पद तिथि	वि स १६१७
स्वर्गवास स्थान	जावद (मध्य प्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	वि स १६३३ पौष शुक्ला षष्ठी

१. उर्वर वश के पूत, वैराग्य की उर्वरता मे ढले
२ कोटा सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव तथा आपका निखरता व्यक्तित्व
३ ज्ञान एव क्रिया की प्रखरता से आचार्य पद पर प्रतिष्ठित
४. आचार्य श्री के उपदेशामृत से चतुर्विध सघ मे नया जीवन
५ पडित मरण पूर्वक देहत्याग (परिशिष्ट स १)

विरक्तों के आदर्श

विलक्षण

एवं

विचक्षण प्रतिभा के धनी

वादीमान मर्दक

आचार्य

श्री उदयसागर जी म. सा.

उ

विरक्तों के आदर्श विलक्षण एवं विचक्षण प्रतिभा के धनी

वादीमान मर्दक

आचार्य

श्री उदयसागरजी म.सा.

आचार्य श्री उदयसागरजी म.सा.

आचार्य श्री उदयसागरजी म.सा.

जीवन तथ्य

जन्म स्थल	जोधपुर (राजस्थान)
जन्म तिथि	विक्रम सवत् १८७६ पौष मास
पिता	श्री नथमलजी खिवेसरा
माता	श्रीमती जीवू देवी
दीक्षा स्थान	बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	वि. स. १८९८ चैत्र शुक्ला एकादशी
स्वर्गवास स्थान	रतलाम (मध्यप्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	वि. स १९५४ माघ शुक्ला दशमी

आचार्यश्री उदयसागरजी म.सा.

❀ भोग से योग की ओर मुड़कर अर्थात् शादी से सन्यास की ओर मुडकर जिन्होंने जनता के समक्ष एक विशिष्ट आदर्श उपस्थित किया था।

❀ सयमीय साधना के साथ ही जिन्होंने सम्यक् ज्ञान के क्षेत्र मे भी विशिष्ट योग्यता प्राप्त की थी।

❀ शासन का सचालन जिन्होने विशिष्ट योग्यता के साथ सम्पन्न किया था।

❀ आचार्य पद के विशिष्ट गरिमामय पद पर रहकर भी जिनमे विनम्रता शालीनता आदि के विशिष्ट गुण थे।

❀ जिनकी उत्कृष्ट सयम साधना से उनका शिष्य वर्ग भी तदनुरूप आराधना मे गतिशील रहा।

❀ जिनशासन नभ मे उदित होकर जिन्होने अज्ञान तिमिर का विनिवारण किया था।

❀ ऐसे थे विरक्तो के आदर्श आचार्य श्री उदयसागरजी म.सा.।

विरक्तों के आदर्श विलक्षण

एवं

विचक्षण प्रतिभा के धनी वादीमान मर्दक

आचार्य

श्री उदयसागर जी म. सा.

मनुष्य जीवन को अति दुर्लभ कहा गया है और यह भी बताया गया है कि यह जीवन इतना अमूल्य है कि इसे प्राप्त करने के लिए देवता भी लालायित रहते हैं। इसका कारण है कि इसी जीवन में उस उत्कृष्ट श्रेणी की धर्म भावना सम्भव बन सकती है जिसके परिणाम स्वरूप यह आत्मा संसार के सभी बन्धनों से मुक्त होकर निर्वाण रूपी चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है। देव जीवन भौतिक सुख-सुविधाओं की दृष्टि से मनुष्य जीवन से कई गुना श्रेष्ठतर होता है किन्तु ऐसी बन्धन मुक्ति की क्षमता उस जीवन में नहीं होती, अतः देव रूप में रह रही मोक्षकांक्षिणी भव्य आत्माएं भी मनुष्य जीवन को प्राप्त करने की कामना करती रहती है।

जो मनुष्य जीवन इतना महत्त्वपूर्ण है, वह सरलता से प्राप्त नहीं होता है। परमश्रेष्ठ पुण्यों का जब उदय होता है तभी आत्मा को नर तन का सुयोग मिलता है। किन्तु उस आत्मा का उत्कृष्टतर पुण्योदय होता है जिसे परम प्रभावपूर्ण मनुष्य शरीर, आकर्षक व्यक्तित्व, उत्तम कुल एवं धर्माराधना का मुक्त अवसर मिलता है। उसी आत्मा का पराक्रम सराहना के योग्य माना जायेगा, जो अपने पूर्व पुण्योदय से मनुष्य जीवन एवं उसमें अनुकूल परिस्थितियां प्राप्त कर लेने के बाद भी उसे मोह ममता तथा काम-भोग लालसाओं में व्यर्थ नहीं करती, बल्कि उन सहयोगी स्थितियों के साथ मिले मनुष्य जीवन को पुनः स्व-पर कल्याण के कठिन मार्ग पर गतिमान बना देती है एवं भावी जीवन को भी मोक्ष प्राप्ति की दौड़ में आगे कर लेती है।

हमारे चरित्रनायक उदयसागरजी महाराज सा. भी ऐसे विलक्षण व्यक्तित्व तथा विलक्षण प्रज्ञा के धनी थे जिन्हें निरख परख कर कोई भी अन्दर बाहर से उनके प्रति गम्भीर श्रद्धा से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता था। उन महापुरुष का पुण्यशाली जीवन एक ओर जहां पूर्व पुण्यों का अद्भुत उदय था तो दूसरी ओर भावी जीवन का समुज्ज्वल प्रतीक।

विलक्षण व्यक्तित्व वाले धर्म योद्धा :

गौर वर्ण, भव्य ललाट, विशाल नेत्र, सुरम्य नासिका, प्रलम्ब बाहू तथा मुख वस्ति से ग्रावृत्त सौम्य मुखाकृति का दर्शन करके किसका मन आकर्षित नही होता था तथा ग्रान्तरि ग्रानन्द से नही भर सकता था ? पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज सा का ऐसा विलक्षण ग भव्य व्यक्तित्व प्रस्फुटित हुग्रा था । जोधपुर नगर मे जहा के निवासियो की बहुरगी व बहुग्रायाम प्रवृत्तियो के अनुरूप वहा रग-विरगी अट्टालिकाए सुशोभित होती हैं । इस नगर मे ग्रोसवश का ए खिवेसरा परिवार रहा करता था जिसके मुखिया श्री नथमल जी खिवेसरा थे । उनकी धर्मपत्न का नाम श्रीमती जीवू देवी था । जिनकी पावन कोख से हमारे चरित्रनायक का शुभ-ज हुग्रा । उस समय मे मरुधरा के शासक महाराजा श्री मानसिह जी थे । अपने यहा पुत्र जन्म का समाचार पाकर श्री नथमल जी खिवेसरा का पितृ-हृदय प्रसन्नता से परिपूरित हो उठा ग्रौर जब उन्होने ग्रपने पुत्र को ग्रपने नेत्रो से प्रत्यक्ष देखा तो उसके विलक्षण व्यक्तित्व को देखक वे ठगे से रह गये । पुत्र के मुखकमल को देखकर उसकी माता अपनी प्रसव वेदना मे विस्मृत होक अनिर्वचनीय ग्रानन्दानुभूति मे डूब गई तथा उसके मन मे वि स १८७६ के पौष मास उस बालक का जन्म दिवस अटल स्मृति मे बस गया ।

घनान्धकार का नाश करने के लिये इस धरा पर प्रतिदिन दीप्तिवान सूर्य का उद होता है ग्रौर उसके उदय के साथ ही अन्धकार विलीन हो जाता है तो प्रकाश की प्रखरता च ग्रोर प्रसारित हो जाती है । उसी रूप मे मानो उस समय प्रकृति को तथा माता-पिता के म को उस तेजोमय बालक के जन्म पर सूर्योदय सी अनुभूति हुई जो वहा से सुभाव स्फुरित हुग्र ग्रौर बालक का नामकरण किया गया—उदयसागर ।

फिर वह होनहार बालक अपनी बालसुलभ क्रीडाग्रो से माता-पिता के मन व प्रमुदित करते हुए अपनी बाल्यावस्था बिताने लगा । माता-पिता को समय का पता ही नही च कि बालक उदयसागर ने बाल्यकाल को पार कर यौवन की देहरी पर अपना चरण रख दिया दमकता हुग्रा मुखमण्डल, अग-अग मे स्फूर्ति की रेखाए एव रक्तिम ग्राभा उनके यौवन का प स्फुटन परिलक्षित करा रही थी । अपने पुत्र की उस अवस्था को देखकर माता-पिता हर्षि होकर उसके विवाह के सम्बन्ध मे विचार करने लगे । उन्होने सोचा कि जैसा हमारा पु गुणवान, रूपवान, विनयवान तथा ग्राचारवान है, वैसे ही गुणो से युक्त इसकी धर्मपत्नी भी ह यह खोज करनी चाहिये । ग्राखिर उनकी खोज जल्दी ही सफल भी हो गई ग्रौर उदयसागर का सम्बन्ध निश्चित कर लिया गया ।

विवाह की तैयारिया प्रारम्भ हो गई । शहनाइया बजने लगी तथा मगलगीत गा जाने लगे, जिसके साथ ही मनोहारी छवि वाले दूल्हे को देख देखकर विवाह समारोह मे सम्मि लित होने ग्रायी वनिताग्रो के पैर धरती पर थिरकने लगे । इसी प्रकार की उत्साहपूर्ण तैयारि दुल्हिन के घर भी होने लगी । मण्डप सजाया गया ग्रौर दुल्हिन को नव वस्त्राभूषणो से सुसज्जि कर दी गई । मगल मुहूर्त मे वर की बारात वधू-गृह पहुची तथा वर श्री उदयसागरजी को ग

फेरो के लिए चवरी मे ले जाया गया ।

सोचा क्या जाता है और हो क्या जाता है—यह कई बार बडा अजीब होता है । उस वक्त किसीने नही सोचा होगा कि सात फेरो के लिए चवरी मे प्रवेश करने वाला वह दुल्हा बजाय सात फेरो के कोई दूसरा ही कार्य कर गुजरेगा । जब बींदराजा उदयसागर जी चवरी मे प्रवेश कर रहे थे तो अचानक उनका साफा चवरी के किसी डाडे मे अटक कर लटक गया । और उनका सिर नगा हो गया । इस पर महिलाए उस घटना को लेकर हास्य–विनोद करने लगी । इधर बींदराजा का मन ऊर्ध्वगामी चिन्तन मे तल्लीन हो गया । उन्होने सोचा कि गृहस्थ जीवन के प्रारम्भ का प्रतीक उनका साफा एक बार सिर मे उतर गया है तो उसे उतरा हुआ ही क्यो न रहने दिया जाय ? नगा सिर मुडित होकर साधु जीवन का प्रारम्भक क्यो न बन जाय ? सिर से साफा क्या इसीलिये तो नही उतर गया है कि सासारिक मोह ममता को भी सिर से उतार दी जाय । ससार का माया जाल अगर सिर से उतर गया है तो वे अब उसे वापस नही चढायेंगे । भावनाओ का प्रवाह आत्म कल्याण की दिशा मे वह चला और तत्क्षण उन्होने निर्णय ले लिया कि अब वे विवाह समारोह के स्थान पर दीक्षा समारोह ही रचायेंगे और पचमुष्टि लोचन करके विराग के पथ को अगीकार कर लेंगे । राग की प्रगाढता मे यो विराग की निर्मलता की ओर सहज ही बढ जाना महान् पुरुषो का ही शौर्य होता है ।

मन ही मन यह निर्णय लेकर वर महोदय विवाह मण्डप से बिना फेरे लिए ही बाहर निकल आये । आपने जाहिर कर दिया कि एक बार किसी भी तरह सिर से उतरे हुए साफे को वे फिर से सिर पर धारण नही करेंगे । लोगो ने बहुत समझाया किन्तु ससार से पूर्णत विरक्त हो जाने की आपकी धारणा को वे बदल नही सके । उनकी विरक्ति अटल निश्चय के रूप में बदल चुकी थी । वे बिना विवाह किये ही घर लौट गये ।

योद्धाओ के नगर जोधपुर मे जन्मे उस विलक्षण व्यक्तित्व वाले महापुरुष ने अपने आपको एक धर्म–योद्धा सिद्ध कर दिया ।

साधना के पथ पर

घर पहुचते ही उदयसागर जी ने अपने माता–पिता से दीक्षा की आज्ञा मागी । राग भावों में अनुरजित होने के कारण आप श्री के द्वारा बहुत अनुनय–विनय करने पर भी आपके

टिप्पणी–किसी स्थल पर ऐसा वर्णन मिलता है कि उनका साफा चवरी के पालने मे अटक गया तो किसी स्थल पर वर्णन मिलता है कि मामूजी के साथ खींचने की प्रक्रिया मे झटके के कारण साफा गिर गया । ऐसे भी लिखा है । साफा मण्डप मे उतर गया । और कही ऐसा भी वर्णन पढने को मिलता है कि आपश्री का विवाह हो गया था । उसके बाद आपको वैराग्य उत्पन्न हुआ ।

माता-पिता तथा कुटुम्बीजन ने आपको दीक्षित होने की आज्ञा नही दी ।

किन्तु आप श्री ने तो अटल निश्चय कर लिया था कि वे किसी भी कीमत पर सासारिकता मे प्रवेश नही करेंगे । तब आपने श्रावक के बारह व्रत अगीकार कर लिये एव साधु वेश धारण करके स्वत ही ग्रामानुग्राम विचरण करना प्रारम्भ कर दिया । घर-घर से एषणीय आहार लाते तथा तप-सयम की आराधना मे तल्लीन रहते । जब माता-पिता आदि ने देख लिया कि उदयसागर जी को दीक्षित होने से रोके रखने मे कोई सार नही है तो अन्ततोगत्वा उन्होने आपको साधु-धर्म विधिवत् अगीकार करने की आज्ञा प्रदान कर दी ।

तदनुसार आपश्री ने वि स १९१८ की चैत्र शुक्ला एकादशी को आचार्य श्रीमद् शिवलाल जी म सा के सुशिष्य श्री हरषचन्द जी म सा के पास मे वर्धमान शुभ परिणामो से युक्त हो विधिवत् साधु-जीवन अगीकार कर लिया ।

इस प्रकार अटल निश्चय की नीव पर जब आपश्री ने अपने सयमी जीवन को खडा किया तो स्वाभाविक था कि वह जीवन निरन्तर प्राप्त होने वाली अपनी सफलताओ के साथ व्यापक रूप से प्रभावक बन जाय । और हुआ भी ठीक वैसा ही । दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् गुरु मुख से आपने ज्ञानार्जन करना भी प्रारम्भ कर दिया । थोडे ही काल मे आपश्री ने अपने जीवन मे ज्ञान-क्रिया का मणि-काचनवत् दुलभ सयोग साधकर देशानुदेश मे जैन धर्म की व्यापक प्रभावना करने का बीडा उठाया । आपने न केवल मारवाड, मेवाड और मालवा मे ही विचरण किया अपितु चारो दिशाओ मे दूर-दूर तक वीतराग देव का धर्म सन्देश प्रसारित किया। आपने पजाब मे रावलपिंडी तथा अटक तक भी धर्म प्रचार हेतु विहार किया ।

जिस किसी गाव या नगर मे आपका पदार्पण हो जाता, वहा की जनता आपके दिव्य तथा तेजोमय मुखमण्डल को देखकर ही प्रभावित हो जाती एव जब आप परमाह्लादकारी वाणी का निर्झर प्रवाहित करते तब तो मानस उसमे ऐसा भीज जाता कि उसे एक अभिनव चेतना की अनुभूति होती । जैन ही नही अपितु जैनेतर जनता आपश्री के प्रवचनो मे प्रचुर सख्या मे उपस्थित होती थी । वे सिहगजना के समान वीरासभरी वाणी के भव्य जीवो के हित के लिए दयामय धर्म का निरूपण करते थे । श्रोताओ पर आपके प्रवचनो का बहुत गहरा प्रभाव पडता था । बहुत सी हलुकर्मी आत्माए आपके उपदेशो मे नाशवान ससार की क्षणिकता से प्रतिबोधित होकर परिग्रह, विषय, कषायादिक से निवृत्ति लेती थी तो स्थान-२ पर जैनेतर लोग भी जुआ, शिकार, मास मदिरा सेवन आदि कुव्यसनो का त्याग करके जैनत्व के प्रति आकर्षित होते थे ।

आपश्री के सयमी जीवन की प्राभाविकता निरन्तर फैलती ही गई । जहा-जहा आपका पधारना होता, सामान्य जनता के सिवाय राजा, महाराजा, हाकिम, जमीदार एव श्रीमन्त भी आपकी सेवा मे उपस्थित होते तथा आपकी कल्याणकारी वाणी को परम श्रद्धा के साथ श्रवण करते । बडे-बडे राजा महाराजा जो द्यूत व्यसनी मे धुत तथा सुरासुन्दरी मे आसक्त थे, आपश्री के प्रभावकारी उपदेशो से महाघातक दुर्व्यसनो से विलग होकर सात्विक जीवन जीने को

प्रतिज्ञाओ मे आवद्ध हो गये और कई प्रकार की हिंसाओ से भी निवृत्त हुए। अल्प अवधि मे ही आपके सुदृढ सयमी जीवन का सुयश उन सुदूर क्षेत्रो मे भी फैल रहा था, जहा आप स्वय विचरण करने नही पधार पाये थे। उस समय मे भी आपके दर्शन एवं वन्दन के लिए सैकडो कोसो से श्रद्धालु भक्तजन आया करते थे। उत्तर मे आगरा, पजाब तथा रावलपिंडी मे, मारवाड, मेवाड व हाडौती मे कोटा, पाटन, जयपुर, अजमेर, जोधपुर, उदयपुर, चित्तौड, जावद आदि नगरो ग्रामो मे, पश्चिम मे कच्छ, भुज, भावनगर, जूनागढ, जामसतारा, अहमदाबाद व बम्बई आदि मे, तो दक्षिण मे चीनापट्टण, हैदराबाद, पूना, सतारा अहमदनगर आदि नगरो से आपकी सेवा मे दर्शनार्थियो का आगमन हुआ करता था।

आपके विलक्षण व्यक्तित्व का ऐसा अनूठा असर पडता था कि आपश्री के दर्शन करते हुए श्रद्धालुओ के नेत्रो को तृप्ति ही नही आती थी, कारण शरीर की शोभा, गौरवर्ण युक्त पुष्टता और सुन्दरता इस कदर थी मानो राजा-महाराजाओ के भव्य चिन्हो से चिन्हित हो और उसके साथ ही उनकी आन्तरिक ज्योति की ऐसी किरणें सामने वाले के मन पर पडती कि दर्शनार्थी भाव-विह्वल हो जाता तथा आपश्री की वाणी का श्रवण करके कठिन से कठिन त्याग-प्रत्याख्यान करने को तत्पर बन जाता।

अटल निश्चय की नीव पर खडे आपके सयमी जीवन की ऐसी अचिन्तनीय किन्तु वन्दनीय व्यापक प्रभाविकता का निरन्तर विस्तार एव प्रसार होता जा रहा था।

विलक्षण व्यक्तित्व :

आचार्य श्री शिवलाल जी म सा ने अपने सुशिष्य मुनि श्री उदयसागर जी म. सा. के सतत उन्नतिशील सयमी जीवन को जब अपनी पैनी दृष्टि से परखा तो उसे शुद्ध सोने की तरह खरा पाया। उन्होंने तब वि स १९२५ मे मध्यप्रदेश के जावद नगर मे उदीयमान मुनि को अपना उत्तराधिकारी अर्थात् चतुर्विध सघ का नायक घोषित किया।

ऐसे आचार्यत्व का उत्तराधिकारी साधारण साधु को नही बनाया जाता है और हमारे चरित्रनायक वास्तव मे असाधारण गुणो से अलकृत विशिष्ट साधु थे, जो घोषणा के पश्चात् विशिष्ट आचार्य भी सिद्ध हुए। आपश्री के आचार्यत्व काल मे जैन धर्म का बहुमुखी प्रचार हुआ तथा स्थान-स्थान पर जैन धर्म के सुदृढ स्तम्भ स्थापित हुए। यद्यपि आपश्री सघ सम्प्रदाय विशेष के आचार्य थे, तथापि आपके भव्य व्यक्तित्व, निस्पृही वाणी तथा सहज स्नेहपूर्ण व्यवहार से सुशोभित आदर्श जीवन के सुप्रभाव से समस्त जैन समाज तथा कई जगहो पर जैनेतर भी समाज आपश्री को अपने नायक के रूप मे मानता था।

यह सब आपके सद्गुणो का जादू था। आपके जीवन में अनेकानेक सद्गुणो की सुवास फैली हुई थी, जो किसी को भी सहज ही मे अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी। आपश्री की स्मरण शक्ति भी अद्भुत थी। कोई भाई आपश्री से वर्षो बाद भी मिलता तब भी आप उसको देखते ही उसे पहिचान ही नही जाते, बल्कि उसके गोत्र का नाम, पीढ़ियो का विवरण

भी सहज भाव से सुना देते । सूत्रो की गाथाए, थोकडे आदि तो उन्हे कठस्थ थे ही ।

आचार्य श्री के स्वभाव मे विनम्रता एव विवेक का अनुपम समन्वय भी था । विनय को धर्म का मूल माना गया है और यह सत्य है कि विनम्रता से ही आत्म स्वरूप मे धर्म की स्थिति बनी रह सकती है । आत्मोत्कर्ष का मूलभूत कारण विनय होता है । विनय और विवेक का सही समन्वय जब तक साधक के जीवन मे नही सधता है, तब तक आत्मस्वरूप की गहराइया मे उतरने का एव आन्तरिक आनन्द का रसास्वादन करने का सयोग भी नही बैठता । आपश्री जितने विनयावनत थे, उतने ही विवेकशील भी थे और ज्ञान व ज्ञानी के प्रति तो आपका विनय तथा विवेक अपूर्व था ।

आपश्री की अभिनन्दनीय विनयशीलता का एक आदर्श उदाहरण रामपुरा ग्राम मे घटित हुआ । आप ज्ञान प्राप्ति के सच्चे जिज्ञासु थे । छोटे से छोटे व्यक्ति से भी यदि उन्हें ज्ञानाश मिलने की आशा होती तो वे नि सकोच उसके पास चले जाते । कीचड मे पडे हुए रत्न को ले लेने मे आप किसी लज्जा का अनुभव नही करते थे । एक बार आचार्य श्री अपने मुनि मण्डल सहित विचरण करते हुए रामपुरा (मध्यप्रदेश) पधारे । वहा पर केदारजी गाग नाम के एक सूत्र–ज्ञाता श्रावक रहते थे । जब आचार्य श्री को विदित हुआ कि यहा पर बत्तीस शास्त्रो के जानकार श्रावक है तो वे उनसे मिलकर नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए आतुर हो उठे । उन्हे विश्वास था कि श्रावक जी के साथ शास्त्रीय चर्चा से नई जानकारी मिल सकेगी । अत श्रावक जी को सकेत कराने की बजाय स्वय ही श्रावक जी के यहा पहुच गये । जब केदारजी को पता चला कि उनसे मिलने के लिए स्वय आचार्य श्री उनके घर पर पहुच रहे है तो उनके हृदय मे आचार्य श्री के प्रति निष्ठा भी जागृत हुई, वहा एक विचार भी कौधा कि क्यो न इतने बडे आचार्य की विनयशीलता एव सहनशीलता की परीक्षा भी कर ली जाय ? इससे ज्ञान पाने की पात्रता सिद्ध हो जायेगी ।

श्री केदारजी ने इस विचार प्रवाह मे एक युक्ति खोज ली । जब आचार्य श्री ने उनके घर मे प्रवेश किया तो वे न तो उनके सामने गये और न ही बाद मे उन्होंने विधिपूर्वक वन्दन ही किया, बल्कि बेरुखे से खडे ही रहे । आचार्य श्री ने उनकी इस अशिष्टता की तरफ तनिक भी लक्ष्य नही किया एव अपनी ओर मे पूरी शालीनता के साथ फरमाया—श्रावकजी, मैंने सुना है कि आप आगमो के विज्ञाता हैं—सूत्रो के मर्म तक पहुचने की आपकी क्षमता है और इस दृष्टि से मैं जिज्ञासु बनकर आपके यहा उपस्थित हुआ हू । आपसे शास्त्रीय चर्चा एव विचार मथन करने से सम्भव है कि मुझे ज्ञान रूप नवनीत का रसास्वादन हो जावे ।

आचार्य श्री की बात को सुनकर भी उन श्रावक जी ने उपेक्षापूर्ण शब्दो मे ही उत्तर दिया कि अभी अवसर नही है । ऐसे उपेक्षा भरे उत्तर को सुनकर भी आचार्य श्री के मन मे किसी प्रकार के अन्यथा विचार नही आये । उसी सहजता व शालीनता के साथ वे अपने स्थान की ओर लौट गये । दूसरे दिन प्रात पुन आचार्य श्री उन श्रावक केदार जी के घर पर गये और पूर्व के समान ही जिज्ञासा वृत्ति के साथ श्रावक जी को आगम चर्चा के लिए संप्रेरित करने

लगे । दूसरी बार भी उन्होने वही बेरुखा जवाब दिया—अभी अवसर नही है ।

महदाश्चर्य था कि महान् आचार्य एक श्रावक के यहा दो बार पहुचे और दोनो बार ऐसा व्यवहार मिला, तब भी परम विनयशीलता और सहनशीलता ही उन्होने दिखाई । आपश्री मे ज्ञानार्जन की उत्कठा इतनी प्रबल थी कि उन्होने श्रावकजी जी की अशिष्टता की ओर कोई ध्यान नहीं दिया ।

अतीत से हटकर वर्तमान मे झाके तो ज्ञात होगा कि आज के तथाकथित श्रमण वर्ग की क्या स्थिति हो रही है । आज के अधिकाश साधक भगवान् के सिद्धान्तो की उपेक्षा करके भी अपनी पूजा प्रतिष्ठा तथा अपनी यशलिप्सा से चिपके हुए है । अपनी वास्तविक साधुता से पीछे हटते जा रहे हैं । अन्तत आचार्य श्री की विनम्रता तथा ज्ञानार्जन के प्रति उत्कृष्ट जिज्ञासा से श्रद्धापूर्वक प्रभावित होकर श्रावक केदार जी ने पहले तो सजल नेत्रो से आचार्य श्री के चरणो मे गिरकर उनकी अविनय आशातना के लिए क्षमायाचना की तथा बाद मे निवेदन किया—हे आचार्य प्रवर—आप महान् विनयवत एव धैर्यवत हैं । आप जैसे परम जिज्ञासु ही ज्ञान को ग्रहण भी कर सकते है तो ज्ञान का मन्थन करके सार तत्त्व का निरूपण भी कर सकते हैं । आप ही स्थानकवासी जैन समाज के आदर्श सन्त है । मैं आप जैसे महान् पुरुष को क्या ज्ञान दे सकता हू, फिर भी मेरे पास जो कुछ भी है, उसके लिए मैं आपकी सेवा मे सहर्ष प्रस्तुत हू ।

ऐसे विशिष्ट सद्गुणो के पुज थे आचार्य श्रीमद् उदयसागर जी महाराज साहब ।

विलक्षण व्यक्तित्व के साथ विलक्षण प्रज्ञा का शुभ सयोग ·

आचार्य श्री के विलक्षण व्यक्तित्व की एक और आदर्श घटना है । ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आपका सोजत (राजस्थान) मे पधारना हुआ । वहा पर पहले से एक सन्त विराज रहे थे, जिनके लिए श्रावको ने सकेत दिया कि वे बहुत ही शिथिलाचारी है तथा सयमी क्रियाओ के प्रति उदासीन रहते है । किन्तु आचार्य श्री ने फरमाया कि कुछ भी हो, उन सन्त के मेरे पर बहुत उपकार है, अत मैं उनके पास अवश्य जाऊगा । वे कैसे हैं—यह देखने का मेरा फर्ज नही है, मुझे तो उनके 'उपकार के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करनी ही चाहिये' और आचार्य श्री ने यह कहा ही नही, बल्कि वे उन सन्त के स्थान पर पहुच गये । लेकिन वे सन्त उस समय उपाश्रय मे नही थे । जब उन सन्त को किसी ने बताया कि स्वय आचार्य श्री उनके पास पधारे है तो उनके आश्चर्य तथा आनन्द का पार नही था । उन्होने गहराई से विचार किया कि कहा ये सच्चरित्र तेजपुज शासन प्रभावक आचार्य और कहा मैं अदना सा साधु, लेकिन कितनी विनम्रता तथा कृतज्ञता है, आपश्री की ? यही कारण बन गया उनकी विचारशीलता एव दृढ निश्चय का कि उन्होने शिथिलाचार का चोला उतार फेंका और सयमी शुद्धाचार को उत्कट भावना के साथ अपना लिया । सत्य है कि पारस के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है । उनका विलक्षण व्यक्तित्व इस प्रकार का विलक्षण प्रभाव छोडता था ।

भी सहज भाव से सुना देते । सूत्रो की गाथाए, थोकडे आदि तो उन्हे कठस्थ थे ही ।

आचार्य श्री के स्वभाव मे विनम्रता एव विवेक का अनुपम समन्वय भी था । विनय को धर्म का मूल माना गया है और यह सत्य है कि विनम्रता से ही आत्म स्वरूप मे धर्म की स्थिति वनी रह सकती है । आत्मोत्कर्ष का मूलभूत कारण विनय होता है । विनय और विवेक का सही समन्वय जब तक साधक के जीवन मे नही सधता है, तव तक आत्मस्वरूप की गहराइयो मे उतरने का एव आन्तरिक आनन्द का रसास्वादन करने का सयोग भी नही वैठता । आपश्री जितने विनयावनत थे, उतने ही विवेकशील भी थे और ज्ञान व ज्ञानी के प्रति तो आपका विनय तथा विवेक अपूर्व था ।

आपश्री की अभिनन्दनीय विनयशीलता का एक आदर्श उदाहरण रामपुरा ग्राम में घटित हुआ । आप ज्ञान प्राप्ति के सच्चे जिज्ञासु थे । छोटे से छोटे व्यक्ति से भी यदि उन्हें ज्ञानाश मिलने की आशा होती तो वे नि सकोच उसके पास चले जाते । कीचड मे पडे हुए रत्न को ले लेने मे आप किसी लज्जा का अनुभव नही करते थे । एक वार आचार्य श्री अपने मुनि मण्डल सहित विचरण करते हुए रामपुरा (मध्यप्रदेश) पधारे । वहा पर केदारजी गाग नाम के एक सूत्र-ज्ञाता श्रावक रहते थे । जव आचार्य श्री को विदित हुआ कि यहा पर वत्तीस शास्त्रो के जानकार श्रावक हैं तो वे उनसे मिलकर नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए आतुर हो उठे । उन्हे विश्वास था कि श्रावक जी के साथ शास्त्रीय चर्चा से नई जानकारी मिल सकेगी। अत श्रावक जी को सकेत कराने की वजाय स्वय ही श्रावक जी के यहा पहुच गये । जव केदारजी को पता चला कि उनसे मिलने के लिए स्वय आचार्य श्री उनके घर पर पहुच रहे हैं तो उनके हृदय मे आचार्य श्री के प्रति निष्ठा भी जागृत हुई, वहा एक विचार भी कौधा कि क्यो न इतने वडे आचार्य की विनयशीलता एव सहनशीलता की परीक्षा भी कर ली जाय ? इससे ज्ञान पाने की पात्रता सिद्ध हो जायेगी ।

श्री केदारजी ने इस विचार प्रवाह मे एक युक्ति खोज ली । जव आचार्य श्री ने उनके घर मे प्रवेश किया तो वे न तो उनके सामने गये और न ही वाद मे उन्होने विधिपूर्वक वन्दन ही किया, वल्कि वेरुखे से खडे ही रहे । आचार्य श्री ने उनकी इस अशिष्टता की तरफ तनिक भी लक्ष्य नही किया एव अपनी ओर से पूरी शालीनता के साथ फरमाया—श्रावकजी, मैंने सुना है कि आप आगमो के विज्ञाता है—सूत्रो के मर्म तक पहुचने की आपकी क्षमता है और इस दृष्टि से मैं जिज्ञासु वनकर आपके यहा उपस्थित हुआ हू । आपसे शास्त्रीय चर्चा एव विचार मथन करने से सम्भव है कि मुझे ज्ञान रूप नवनीत का रसास्वादन हो जावे ।

आचार्य श्री की वात को सुनकर भी उन श्रावक जी ने उपेक्षापूर्ण शब्दो में ही उत्तर दिया कि अभी अवसर नही है । ऐसे उपेक्षा भरे उत्तर को सुनकर भी आचार्य श्री के मन मे किसी प्रकार के अन्यथा विचार नही आये । उसी सहजता व शालीनता के साथ वे अपने स्थान की ओर लौट गये । दूसरे दिन प्रात पुन आचार्य श्री उन श्रावक केदार जी के घर पर गये और पूर्व के समान ही जिज्ञासा वृत्ति के साथ श्रावक जी को आगम चर्चा के लिए सप्रेरित करने

लगे । दूसरी बार भी उन्होने वही बेरुखा जवाब दिया—अभी अवसर नही है ।

महदाश्चर्य था कि महान् आचार्य एक श्रावक के यहा दो बार पहुचे और दोनो बार ऐसा व्यवहार मिला, तब भी परम विनयशीलता और सहनशीलता ही उन्होने दिखाई । आपश्री मे ज्ञानार्जन की उत्कठा इतनी प्रबल थी कि उन्होने श्रावक जी की अशिष्टता की ओर कोई ध्यान नही दिया ।

अतीत से हटकर वर्तमान मे झाके तो ज्ञात होगा कि आज के तथाकथित श्रमण वर्ग की क्या स्थिति हो रही है । आज के अधिकाश साधक भगवान् के सिद्धान्तो की उपेक्षा करके भी अपनी पूजा प्रतिष्ठा तथा अपनी यशलिप्सा से चिपके हुए हैं । अपनी वास्तविक साधुता से पीछे हटते जा रहे हैं । अन्तत आचार्य श्री की विनम्रता तथा ज्ञानार्जन के प्रति उत्कृष्ट जिज्ञासा से श्रद्धापूर्वक प्रभावित होकर श्रावक केदार जी ने पहले तो सजल नेत्रो से आचार्य श्री के चरणो मे गिरकर उनकी अविनय आशातना के लिए क्षमायाचना की तथा बाद मे निवेदन किया—हे आचार्य प्रवर—आप महान् विनयवत एव धैर्यवत हैं । आप जैसे परम जिज्ञासु ही ज्ञान को ग्रहण भी कर सकते है तो ज्ञान का मन्थन करके सार तत्त्व का निरूपण भी कर सकते हैं । आप ही स्थानकवासी जैन समाज के आदर्श सन्त हैं । मैं आप जैसे महान् पुरुष को क्या ज्ञान दे सकता हू, फिर भी मेरे पास जो कुछ भी है, उसके लिए मैं आपकी सेवा मे सहर्ष प्रस्तुत हू ।

ऐसे विशिष्ट सद्गुणो के पुज थे आचार्य श्रीमद् उदयसागर जी महाराज साहब ।

विलक्षण व्यक्तित्व के साथ विलक्षण प्रज्ञा का शुभ सयोग ·

आचार्य श्री के विलक्षण व्यक्तित्व की एक और आदर्श घटना है । ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आपका सोजत (राजस्थान) मे पधारना हुआ । वहा पर पहले से एक सन्त विराज रहे थे, जिनके लिए श्रावको ने सकेत दिया कि वे बहुत ही शिथिलाचारी है तथा सयमी क्रियाओ के प्रति उदासीन रहते हैं । किन्तु आचार्य श्री ने फरमाया कि कुछ भी हो, उन सन्त के मेरे पर बहुत उपकार है, अत मैं उनके पास अवश्य जाऊगा । वे कैसे हैं—यह देखने का मेरा फर्ज नही है, मुझे तो उनके 'उपकार के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करनी ही चाहिये' और आचार्य श्री ने यह कहा ही नही, बल्कि वे उन सन्त के स्थान पर पहुच गये । लेकिन वे सन्त उस समय उपाश्रय मे नही थे । जब उन सन्त को किसी ने बताया कि स्वय आचार्य श्री उनके पास पधारे है तो उनके आश्चर्य तथा आनन्द का पार नही था । उन्होने गहराई से विचार किया कि कहा ये सच्चरित्र तेजपुज शासन प्रभावक आचार्य और कहा मैं अदना सा साधु, लेकिन कितनी विनम्रता तथा कृतज्ञता है, आपश्री की ? यही कारण बन गया उनकी विचारशीलता एव दृढ निश्चय का कि उन्होने शिथिलाचार का चोला उतार फैंका और सयमी शुद्धाचार को उत्कट भावना के साथ अपना लिया । सत्य है कि पारस के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है । उनका विलक्षण व्यक्तित्व इस प्रकार का विलक्षण प्रभाव छोडता था ।

आपश्री मे विलक्षण व्यक्तित्व के साथ विचक्षण प्रज्ञा का शुभ सयोग था । आपने जिस प्रकार आगमो का गूढ अध्ययन किया तथा जिस रूप मे अपनी दीप्तिमान प्रतिभा का विकास किया था, उसके मूल मे, जन्म के साथ ही आपको प्राप्त आपकी विचक्षण प्रज्ञा ही थी इसी के आधार पर आप चतुर्विध सघ की जटिल से जटिल समस्याओ का भी सुन्दर एव सर्वसम्मत समाधान खोज लिया करते थे ।

एक बार जब आपश्री चातुर्मास काल मे रतलाम नगर मे विराजमान हो रहे थे, तब सवत्सरी किस दिन मनाई जाय—ऐसा विवाद आपके सामने आया । उस समय मे सघीय एकता के उद्देश्य से आपने फरमाया कि जिस दिन श्री मोखमसिंह जी म सा सवत्सरी मनायेंगे उसी दिन मैं भी मनाऊगा और हुआ भी ऐसा ही कि जिस दिन श्री मोखमसिंह जी म सा ने सवत्सरी मनाई, उसी दिन आचार्य श्री ने भी मनाई । जबकि हकीकत मे पारम्परिक दृष्टि से सवत्सरी उस दिन नही मनाई जाती थी । अन्य स्थानो पर आपके शिष्यो ने तो परम्परा के अनुसार ही सवत्सरी मनाई । चातुर्मास समाप्ति के बाद विहारानुक्रममे जब अन्य मुनियो का आपसे मिलने का प्रसग आया तो यह प्रश्न भी सामने आया कि इस प्रकार सवत्सरी अलग-२ क्यो मनाई गई ? आचार्य श्री ने सहज भाव से समाधान दिया—चौथ को सवत्सरी मनाने वाले कोई प्रशसनीय नही तथा पचमी को सवत्सरी मनाने वाले किसी तरह दण्डनीय नही है । विचक्षण प्रज्ञा से उद्भूत इस सहज समाधान से मुनियो मे विवाद के स्थान पर प्रसन्नता की लहर व्याप्त हो गई । उद्देश्य की पवित्रता अधिक महत्त्वपूर्ण होती है ।

संयम के प्रति सतत जागरूकता एवं कठोर साधु जीवन के अनुशास्ता :

जो जागते हुए तो जागता ही है, परन्तु सोते हुए भी जागता है, वही सच्चा साधु कहलाता है । प्रतिदिन ही नही, प्रति पल सयम के प्रति सतत जागरूकता ही साधुत्व का प्रमुख लक्षण माना गया है । आचार्य श्री सयम की आराधना एव क्रियाओ के पालन मे परिपूर्ण रूप से जागृत रहते थे । यह जागृति स्वयं के लिए तो थी ही, किन्तु अन्य मुनियो की सयम साधना पर भी उनकी बराबर नजर बनी रहती थी । वे सयम के प्रति छोटी सी भी स्खलना सहन नही करते थे ।

एक दिन का प्रसग है कि अट्ठाई की तपस्या करने वाली एक बहिन आपश्री की सेवा मे पहुची तथा प्रार्थना करने लगी—आचार्य देव, आपको आज मेरे यहा गोचरी के लिए पधारना होगा । अनुनय-विनय करते हुए भावातिरेक मे उस बहिन ने यहा तक कह दिया कि अगर आप मेरे यहा गोचरी के लिए नही पधारेंगे तो मैं पारणा ही नही करूगी । आचार्य श्री ने जब ऐसी बात सुनी तो बहुत ही स्पष्टता के साथ फरमाया—आज तुम्हारे घर आने का प्रत्याख्यान, वोसरामि, वोसरामि । इतना सुनते ही तो वह बहिन विस्फारित नेत्रो से आचार्य श्री की मुखाकृति को निहारती ही रह गई । तब आपने समझाया—बहिन, साधु के यहा आकर इस प्रकार से गोचरी का न्योता नही दिया जाता है—साधु तेड़िया आवे नही नेतिया जीमे नहीं । साधु की मर्यादा यह नही होती कि वह किसी के निमन्त्रण पर उसके घर गोचरी के लिए

जावे । साधु मर्यादा का कठोरतापूर्वक पालन करने के लिए ही मैंने आज तुम्हारे घर गोचरी के लिए आने का त्याग किया है । साधु गोचरी जाने की तिथि या समय की भी जानकारी नही देता है । जब वह किसी के यहा गोचरी हेतु जाता भी है तो वह इतना जागरूक रहता है कि गृह स्वामी या स्वामिनी को उसके आने की भनक तक नही पडे और कही वह श्रद्धातिरेक से सचित्त वस्तु को अचित्त न कर दे ।

आचार्य श्री का इतना स्पष्टीकरण सुनकर वह बहिन आस्था से गद्गद् हो उठी और उसने आगे से ऐसी भूल कभी नही करने का निश्चय व्यक्त किया ।

इस छोटे से उदाहरण से यह भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री सयमी जीवन से सम्बन्धित छोटी से छोटी क्रिया के पालन के प्रति भी कितने जागरूक थे । इस दृष्टि से अपने शिष्यो पर भी कितना कठोर शासन था । अपने पूर्वाचार्यों द्वारा श्रमण सस्कृति की सरक्षा एव शुद्धाचार के उद्घोषित लक्ष्य से आचार्य श्री तनिक भी इधर–उधर नही हटे थे, बल्कि जहा कही भी उन्हे शिथिलाचार दिखाई देता, वहा वे शुद्धाचार की प्रकाश–किरणें बिखेरने के लिए तत्पर रहते । वे कठोर साधु जीवन के खरे अनुशास्ता थे ।

ऐसे ही अनुशासन का एक छोटा सा उदाहरण और है । उस समय मे लोगो मे नास्का (तम्बाकू) सू घने का ज्यादा चलन था । कई साधु भी नास्का काम मे लेते थे । किन्तु आचार्य श्री नास्का सू घने को भी व्यसन मे शुमार करते थे । उन्होने अपने सान्निध्य मे विचरण करने वाले साधुओ भो नास्का सू घने का निषेध कर दिया था । कोई भी साधु नास्का नही सू घे—यह जरूरी था, लेकिन एक अच्छे विद्वान् शिष्य को नास्का सू घने की आदत थी । आचार्य श्री द्वारा निषेध कर देने के बाद मे ये लुक छिप कर नास्का सू घते रहते थे । एक बार वे स्थडिल (जगल) गये थे तो शौचादि कार्य से निपटने के बाद वे जगल मे ही नास्का सू घ रहे थे । तभी एक लघुवय वाले मुनि ने, जो स्थडिल हेतु आते थे, अपने वरिष्ठ मुनि को निषिद्ध कार्य करते हुए देख लिया । जगल से आकर उन्होने वरिष्ठ मुनि की आचार्य श्री से शिकायत कर दी—जो भी बात थी उसे आचार्य श्री के सामने सत्य–सत्य स्पष्ट रूप से रख दी ।

आचार्य श्री ने वरिष्ठ मुनि को अपने पास बुलाया और पूछा कि क्या वे जगल मे नास्का सू घ रहे थे ? मुनि जी ने एकदम इन्कार कर दिया कि मैं तो नास्का का प्रयोग ही नही करता हू, किसी ने आपको मेरी शिकायत की है तो वह गलत है । प्रमाण तो कोई था नही जिससे सत्यता का निर्णय किया जा सके । शास्त्रीय विधानानुसार अगर बिना प्रमाण के कोई शिकायत की जाती है और वह साबित नही होती है तो शिकायत करने वाले को प्रायश्चित आता है । तदनुसार आचार्य श्री को शिकायत करने वाले उन लघु मुनि को झूठ बोलने के आरोप मे प्रायश्चित देना पडा ।

किन्तु आचार्य श्री को यह विश्वास नही हो रहा था कि यह लघु मुनि इस प्रकार से असत्य का प्रयोग कर सकता है ।

खैर, फिलहाल तो सत्यता का कोई प्रमाण नही मिल रहा था । किन्तु आचार्य श्री

ने इस बात की गहराई से खोज प्रारम्भ कर दी । आखिर असत्य कब तक सत्यता का मुखौटा पहन सकता है । सत्य तथ्य स्पष्ट हो ही गया । वे विद्वान् मुनि श्री जिस घर से तम्वाकू लाते थे, उसकी जानकारी की गई और उस भाई से पूछा गया तो ज्ञात हुआ कि अमुक मुनि जी यहा से प्रतिदिन तम्वाकू ले जाते हैं । फिर क्या था पक्का प्रमाण मिल गया ।

बुलाया गया उन विद्वान् मुनिराज को । आखिर उन्हे सत्य तथ्य स्वीकार करना ही पडा । आचार्य प्रवर ने उनकी विद्वत्ता का कोई लिहाज नहीं किया । विद्वत्ता वाद मे, सयम पहले है । आपश्री ने उन मुनिराज को दोष सेवन कर, ऊपर असत्य प्रयोग करने के कारण कठोर प्रायश्चित दिया । और लघु मुनि को दिये गये प्रायश्चित का सशोधन किया ।

उपदेशो का अमित प्रभाव :

विक्रम सवत् १६३७ के मार्गशीर्ष माह मे आचार्य श्री का रतलाम मे विराजना रहा, तब वहा उपदेशो की जो झडी लगी उसमे ज्ञान एव क्रिया की उच्चता की प्रेरणा थी तो उन उपदेशो का सभी वर्गों की जनता पर अमित प्रभाव भी पडा । यह रतलाम की ही बात नहीं थी, सर्वत्र उनके प्रभाव का ऐसा ही दर्शन होता था, किन्तु रतलाम के उपदेशो से प्रभावित होकर वहा के एक विद्वान् कवि वैद्य श्री मथुरालाल जी शर्मा ने आचार्य श्री का सक्षिप्त जीवन वृत्त 'उदयचन्द्र चन्द्रिका' के नाम से लिखा था जिसके पढने से ऐसी अनुभूति होती है कि जैन के सिवाय जैनेतर लोगो पर भी उस उपदेशामृत का जागृतिकारक उद्‌वोधक प्रभाव पडता था ?

'उदयचन्द्र चन्द्रिका' का मगलाचरण के वाद निम्न प्रकार से प्रारम्भ किया गया । जिससे कवि की हार्दभक्ति भाव का आह्लादकारी परिचय मिलता है—

दोहा—आदिनाथ आदेश को करू प्रणाम धरिध्यान ।
चरण शरण मोहि दीजिये, हरहु बुद्धि अज्ञान ।।
विघ्न विदारण को नमो, शारद को सिरनाय ।
(श्री) उदयचन्द्र कर चन्द्रिका, वरणत हि हरषाय ।।

कवित्त —
मारवाड मरुवर मे जन्म भूमि जोधाणो,
तर मे प्रकटे है, राज ओसवश म्याने हैं ।
अवस्था कुमार हू ते, रगे रगे सन्तन के,
या ते कुल भोगत्याग, जोगहि ते ध्याने हैं ।।
दिल तें वैराग्य धार, काम क्रोध मान मार,
कर्म को कषाय जार, दिये टार जाने हैं ।
प्रभु धार वाने, उदयचन्द्र प्रकटाने,
सद्‌ग्रन्थ को वखाने, जिन धर्म के निशाने है ।।
नर भव मे जन्म धार, कीन्हो गुरु परोपकार,
ग्राम, ठाम, धामन में, नाम किये भारी है ।

बडे–बडे रईसो को, कीने महाराज शिष्य,
  गुप्त नही वात यह दुनिया मे जारी है ।।
हिंसा को उठाय के, अहिंसा प्ररूप्यो धर्म,
  दे के उपदेश सत्य, कर्म को प्रचारी है ।
सूत्र आगम के धारी, जिन रत्नपुरी तारी,
  ऐसे गुरु भारी, ताहि वन्दना हमारी है ।।
शाल सुखकदे अरुदेव जाय वदे,
  भज गुन के अनदे, सो काटे भव फन्दे रे ।
नैन अरविंद, क्रोधी पापिन को निंदे,
  जे गावें श्री जिनन्दे, तेरे हरे दु ख द्वन्दे रे ।।
ऐरे मति मन्दे, सब छाडि घर धन्धे,
  श्री आनन्द के कन्दे, उदयचन्दे क्यो न वन्दे रे ।

दोहा — ललित वन्दना गुरु तणी, कहो कवित्तहि गाय ।
भव्य पुरुषजनकारणे, भाषा कहो वणाय ।।

इसके वाद कवि ने गद्य मे जीवन वृत्त का विवरण दिया है ।

आचार्य श्री के उपदेश सदा ही आगमिक धरातल पर होते थे । जनता उन गहन विषयो को सुवोध शैली मे सुनकर गद्‌गद्‌ हो जाती थी । एक दिन आप ने जीवन शुद्धि पर विस्तार से उपदेश फरमाया । मानव अपने वाहरी वेश को सुन्दर और स्वच्छ रखना चाहता है किन्तु उसे सुन्दर और स्वच्छ रखना जितना आवश्यक नही है, उससे हजारो हजार गुना आवश्यक है, अपने आन्तरिक जीवन को सुन्दर और स्वच्छ रखना । इसी प्रवचन धारा के मध्य मे आपश्री की दृष्टि अग्रिम पक्ति मे वैठे एक भाई की दुर्गन्धपूर्ण मैली सी मुख वस्त्रिका पर पड गई । तव उसी धारा मे आपने फरमाया - आज के धार्मिक लोग भी धार्मिकता का सच्चा स्वरूप नही समझ पा रहे हैं । सामायिक—प्रतिक्रमण आदि क्रियाए करने की ओर तो उनका ध्यान जाता है, परन्तु ये क्रियाए भी समुचित परिधान के साथ की जानी चाहिये— इस ओर भी उनका ध्यान जाना चाहिये । दिन रात पहिनने के कपडे तो साफ पहिन लेंगे और वे जरा से मैले हो जायेंगे तो उनका प्रक्षालन कर लिया जायेगा, लेकिन धार्मिक वेश कितना ही गन्दा हो जाय तव भी उसकी ओर ध्यान नही दिया जायेगा । भगवान् महावीर ने कभी भी मैले–कुचेले वस्त्र उपयोग लाने के लिए नही कहा था । भगवान् ने तो श्रृगार प्रसाधन का निषेध किया है, न कि स्वच्छ वस्त्र धारण करने का । आप लोगो की ओर देखता हू तो मुझे आश्चर्य होता है कि आप लोगो के ये धार्मिक उपकरण कैसी दशा मे प्रयोग मे लाये जा रहे हैं ?

आचार्य श्री का सयमीय सकेत जव जनता ने समझा तो वे सही वस्तुस्थिति को जान सके । इसी प्रकार एक वार आचार्य श्री ने एक मुस्लिम भाई को '१८ पापो के नाम' सिखलाए । जिन पापो को सेवन करने से मनुष्य पातकी वनता है—अपने जीवन मे अध पतन

की ओर चला जाता है, उन पाप कार्यों की उसे विस्तार से समझाईश की । वह मुस्लिम कुछ दिनो के बाद अट्ठारह पापो के नाम भूल गया और फिर से आचार्य श्री के पास पहुचा उन पापो के नाम सिखाने की प्रार्थना करने लगा । तब आप श्री ने बहुत ही मधुर शब्दो मे फरमाया देखो भाई, मैंने इतना समय देकर तुम्हे अट्ठारह पापो के नाम और स्वरूप का विवेचन समझाया और तुम इतनी जल्दी भूल गये—यह तो ठीक नही है । अमूल्य ज्ञान को इस तरह भुला नही देना चाहिये । आचार्य श्री ने पुन उसे अट्ठारह पाप सिखला दिये । इसी प्रकार जब भी कोई श्रद्धालु श्रावक आपके सामने उपस्थित होता तो आप उसे त्याग-प्रत्याख्यान का स्वरूप तथा महत्त्व समझाते और उसे विभिन्न प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान करवाते । आपश्री की उपदेश की शैली व्यावहारिक थी श्रावक सुने भी सही लेकिन साथ ही अपने जीवन को सुन्दर व स्वच्छ बनाने हेतु कुछ न कुछ त्याग-प्रत्याख्यान भी अवश्य करे ।

सत्य-तत्त्व निर्णय के लिए उस समय शास्त्रार्थ का बहुत प्रचलन था ।

'कि तत्त्वम् ?'—तत्त्व क्या है ?—इसकी जानकारी के लिए भी समय पर वाद प्रतिवाद होते थे । आचार्य श्री जी के जीवन का भी एक ऐसा ही प्रसग मन्दिर मार्गी परम्परा के श्री कृष्णसागर जी म सा के साथ घटित हुआ । दोनो के बीच शास्त्रीय चर्चा करने का निर्णय हुआ तथा यह शर्त रही कि इसमे जो भी हार जायेंगे, वे जीतने वाले मुनिराज का शिष्यत्व स्वीकार कर लेंगे ।

निश्चित समय-स्थान पर दोनो मुनिराजो की चर्चा प्रारम्भ हुई, जिसके लिए सभापति भी बैठे थे । किन्तु आचार्य श्री की प्रखर प्रतिभा, आगम मर्मज्ञता एव अप्रतिहत तर्क मनीषा के सामने श्री कृष्णसागर जी म सा की युक्तिया, तर्क और सिद्धान्त नही टिक सके । मध्यस्थ निर्णायको द्वारा 'आचार्य श्री शास्त्रार्थ मे विजयी' घोषित कर दिये गये । प्रतिज्ञा के अनुसार श्री कृष्णसागर जी म सा को आचार्य श्री का शिष्यत्व स्वीकार करना था किन्तु आचार्य श्री ने उन्हे तत्काल दीक्षित नही किया । पहले छ माह तक उन्हे साधुमार्गी जीवन की पूर्ण भूमिका मे रखकर प्रशिक्षित किया, सयमी मर्यादाओ का ज्ञान कराया । उसके बाद ही उन्हे दीक्षा देकर अपना शिष्य बनाया । बाद मे कृष्णसागर जी म सा के शिष्य श्री लालचन्द जी म सा और उनके शिष्य श्री सरदारमल जी म सा हुए जो पुन साधुमार्गी परम्परा को छोड़ कर मन्दिरमार्गी परम्परा मे चले गये तथा सोमविजयी के नाम से जाने गये ।

आपश्री के उपदेशो का इस रूप मे जो अमित प्रभाव देखा जाता था, उसकी पृष्ठभूमि मे ज्ञान और क्रिया का सन्तुलित एव उच्च स्वरूप ही था, जिसकी आपश्री ने कठिन साधना की थी ।

संयम सुवास से सुवासित पुष्प गुच्छ :

आपश्री की सघ रूपी बगिया मे आपका मुनिमण्डल सयम सुवास से सुवासित पुष्प गुच्छ के मानिन्द था । मुनिगण विभिन्न रगो मे खिलते पुष्पो की तरह विभिन्न गुणो से खि

ए थे । उन पुष्पो मे सामान्य गुणो के सिवाय किसी न किसी विशिष्ट गुण का श्रेष्ठ विकास खाई देता था । कोई मुनि ज्ञान गुण से युक्त थे तो किन्ही मुनि मे सेवा गुण की गहराई खाई देती थी । किन्ही मुनि ने विनय गुण की साधना विशेष रूप से की थी तो कोई मुनि माशील वन गये थे ।

यहा पर ऐसे विशिष्ट मुनिमण्डल मे से कुछेक मुनियो के रूपक प्रेरणा हेतु प्रस्तुत कये जा रहे हैं ।

आचार्य श्री के पास अतीव ही विनम्र मुनि थे जो अपने गुणानुसार विनय मुनि के ाम से ही प्रसिद्ध थे । एक सरकारी अफसर ने जब यह सुना कि आचार्य श्री के पास एक वहुत ो विनयवान सन्त हैं तो वे उन मुनिराज के दर्शन करने के लिए स्थानक मे उपस्थित हो गये । ाचार्य श्री के दर्शन करने के पश्चात् उन्होने उन विनयवत मुनिराज के दर्शन करने की जिज्ञासा कट की । तव आचार्य श्री ने वही से एक मुनि को आवाज लगाई । जिस मुनि को सम्बोधित- किया था, वे ऊपर की मजिल पर विराजमान थे । ज्योही आचार्य श्री का स्वर गू जा, तत्क्षण उन्होने सर्वप्रथम 'तहत्ति' की ध्वनि से उनकी वाणी को ग्रहण की और तत्काल उठकर आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित हुए । आचार्य श्री ने तव कोई बिना सकेत किये उन्हे वापिस चले जाने का निर्देश किया । वे पुन अपने स्थान पर पहुच गये तथा छोडे हुए कार्य को पूर्ण करने मे सलग्न हो गये । इतने मे आचार्य श्री ने फिर उन्हे आवाज लगाई जिसे सुनते ही वे मुनि फिर से उसी श्रद्धाभाव से 'तहत्ति' कहते हुए उठ खडे हुए तथा तुरन्त आचार्य श्री की सेवा मे पहुच गये । फिर भी आचार्य ने उन्हे बुलाने का कोई प्रयोजन नही बताया एव उन्हे वापिस चले जाने का सकेत कर दिया । वे मुनि अपने स्थान पर पहुचे ही थे कि तीसरी वार पुन आचार्य श्री की उन्हे बुलाने की आवाज सुनाई दी । वे उसी श्रद्धायुक्त भाव से पुन आचार्य श्री के चरणो मे उपस्थित हो गये । इसी प्रकार एक, दो या तीन वार नही, वल्कि कई वार उन्हे बुलाया गया और वे विना किसी खेद के श्रद्धायुक्त अनुद्विग्न भावो से वार-वार आचार्य श्री की सेवा मे उपस्थित होते रहे ।

वह सरकारी अफसर परम आश्चर्य के साथ इस कार्यक्रम को देखता ही रह गया । उसने आचार्य प्रवर को विनम्रता के साथ निवेदन किया—गुरुदेव, अव वस करिये । मैंने विनय- व्रत मुनिराज के दर्शन कर लिये हैं—कोरे शरीर के नही, उस विनय गुण के साक्षात् दर्शन किये हैं जो किसी भी प्रकार की खेदजनक मनोवृत्ति अथवा उद्विग्नता से आहत नही हुआ है । मुझे परम आश्चर्य के साथ परम प्रसन्नता भी है कि आज भी भगवान् महावीर के सिद्धान्तो को अपने जीवन मे पूर्ण सफलतापूर्वक क्रियान्वित कर लेने वाले मुनिराज इस युग मे विद्यमान हैं । धन्य है ऐसे मुनिवर को, जो गुरु की आज्ञा को एकनिष्ठ होकर पालन करने के लिए हर समय हर स्थिति मे तत्पर रहते हैं । धर्म के मूल विनय को जीवन मे इस प्रकार से साकार रूप देने वाले आचार्य श्री के एक मुनि पुष्प की ऐसी सुवास थी ।

एक वार आचार्य श्री जगल के लिए वाहर पधारे हुए थे । उस समय स्थान पर

किसी मुनिराज की कार्य स्खलना से एक पात्र टूट गया । वे मुनि तो किसी आवश्यक कार्य से बाहर चले गये । इधर आचार्य श्री जब वापिस स्थान पर पधारे और उन्होने टूटे हुए पात्र को देखा तो यही समझा कि सामने जो मुनि खडे हैं, उन्ही के हाथ से यह पात्र टूटा होगा—इस कारण आपने कुछ कठोर शब्दो मे शिक्षा फरमाई—आप बिलकुल ध्यान नहीं रखते हैं—यह पात्र कैसे फूट गया ? साधु जीवन मे विवेक और अप्रमाद का होना आवश्यक है और विवेक व अप्रमाद की जागरूकता के साथ कार्य किया जाता तो पात्र नही फूटता और यह अयतना नही होती । जब गृहस्थ जीवन को त्याग कर साधुत्व की मर्यादाए ग्रहण की हैं तो उन मर्यादाओ का पूरी सावधानी के साथ पालन करना चाहिये आदि आदि ।

वे मुनिराज शान्त भाव एव प्रसन्न–मुख से आचार्य श्री की शिक्षाप्रद वाणी को 'तहत्ति' कह कर श्रवण करते रहे । इतने मे वे मुनिराज बाहर मे वापिस लौट आये जिन के हाथ से पात्र टूट गया था और उन्होने जब यह स्थिति देखी कि उनका उलाहना दूसरे मुनिराज शान्त भाव से सुन रहे है तो उनसे शान्त न रहा गया । तब उन्होने आचार्य श्री से विनयपूर्वक निवेदन किया—भगवन् पात्र इनके द्वारा नही मेरे हाथो से टूट गया था—यह मेरे अविवेक एव प्रमाद का परिणाम है । इतना सुनते ही पहले वाले मुनिराज को फरमाया—अरे, मैंने तुम्हे इतनी कठोर भाषा मे उलाहना दिया, फिर भी तुम कुछ भी नही बोले । कम से कम इतना तो कह सकते थे कि मेरे हाथो से यह पात्र नही टूटा है । उन मुनिराज ने बडी शालीनता के साथ उत्तर दिया—भगवन्, आप यह क्या फरमा रहे हैं ? अगर मैं ऐसा कह देता तो आपकी इन अमृतवर्षिणी शिक्षाओ से वचित रह जाता । मैं तो आज धन्यता का अनुभव कर रहा हू कि इस रूप मे मुझे जीवन शोधक शिक्षा प्राप्त हुई है ।

मुनिवर की उस क्षमाशीलता को देखकर आचार्य श्री गद्गद् हो उठे और उसी दिन से उन मुनि का नाम 'क्षमासागर' रख दिया ।

आचार्य श्री के सान्निध्य मे विचरण करने वाले मुनिराज इस रूप से अनेकानेक गुणो के भण्डार थे ।

ऐसी थी आचार्य श्री के मुनिमण्डल के सयमीय सद्गुणो की प्राभाविक सुवास, जो हर किसी के मन को सुखमय अनुभूति के साथ परम आह्लादित बना देती थी ।

चतुर्विध सघ का बहुमुखी विकास :

आपश्री के शासन–काल मे चतुर्विध सघ का बहुमुखी विकास हुआ । वर्षों तक आपने इस आचार्य पद का गुरुतर भार उठाकर भगवान् महावीर की आध्यात्मिक धर्म ध्वजा को ग्राम नगरो मे फहराया तो जैन धर्म की व्यापक प्रभावना की । जब आपश्री का शरीर जीर्ण होने लगा तब आपने सघ का कार्य भार महान् ज्ञानवान एव क्रियाशील सन्त श्री चौथमल जी म सा को सम्हला दिया अर्थात् श्रीमद् हुक्मीचन्द जी म. सा के चतुर्थ पट्ट पर श्री चौथमल जी म सा की उद्घोषणा कर दी गई ।

इसका बडा ही सजीव वर्णन वैद्य श्री मथुरालाल जी द्वारा रचित 'उदयचन्द्र चन्द्रिका' मे किया गया है जो उन्ही की भाषा मे यहा प्रस्तुत है—

'धन्य है इन महात्मा को जिनके विराजने से रतलाम क्षेत्र मे भी उपकार व धर्म बना वो लिख नही सकते, कारण असखनीय है । इस कदर श्री पूज्य जी महाराज के विराजते हुए स १९५२ के साल मे श्री जी के शरीर मे वेदना हुई । उस मौके पर यहा के पचो ने चिट्ठी तार द्वारा वहुत से मुल्को मे खबर दे दी थी तो अवसर को दुर्लभ समझ के हजारो श्रावक झुड के झुड म सा के दर्शन करने को प्राप्त हुए । तो यहा के पचो ने उन श्रावको की वहुत सी खातिर व स्वागत यथार्थ रीति मे किया । उस अवसर मे आचार्य श्री जी महाराज के आयुर्वल के योग से वेदना उपशान्त हो गई कारण यहा के श्रावको का पुण्य जबर कि दो वर्ष तक फिर भी इस क्षेत्र को पावन करते रहे । ऐसे दिन व्यतीत होते हुए इस साल मे महाराज साहव ने शरीर को जीर्ण व अस्थिर समझ कर अपने मुखकमल से युवराज पदवी श्री श्री १००८ श्री चौथमल जी म सा को दे दीवी

'पश्चात् चातुर्मास व्यतीत होने के वाद युवराज स्वामीजी महाराज श्री चौथमल जी जो कि ग्राम जावद जिला नीमच मे विराजते थे उन महात्मा के पास पहुचे तो महाराज ने वडो की वक्शीस की हुई पदवी को अगीकार फरमाई और श्री १००८ श्री पूज्य जी म के दर्शन के निमित्त वहु सन्तो के समाज सम्पन्न रतलाम की तरफ विहार किया और मार्ग मे जो खेडे आये उन्हे मिती माघ वदि पाचम गुरुवार को नगर मे प्रवेश किया । इस अवसर मे युवराज पूज्यजी को वन्दने के लिए सन्मुख गये वो ठाठ और श्री महाराज साहव के समेले का महोत्सव अत्यन्त ही आनन्द का दाता हुआ । जिन मनुष्यो ने आनन्दपूर्ण दृश्य को दृष्टिगोचर किया है, वे ही जानते हैं । न कि मेरी यह लेखनी । इस तरह मगलध्वनि के साथ सदर वाजार स्थानक मे युवराज महाराज-पधारे । अगाडी श्री जी महाराज जहा विराजमान थे वहा पर वन्दन हुआ वो आनन्दोत्साह लिखने मे आता नही । इस अवसर मे भी ग्राम, पुर पाटणो के श्रावक व श्राविकाओ के झुड के झुड वहुत से लोगो का समागम एकत्रित हुआ था और सन्त मुनिराजो व श्री महासतिया जी महाराज जुमले ठाणा १४१ के करीवन रतलाम मे स्थितिमान हुए थे । उस अवसर मे चतुर्विध सघ के भीतर श्री १०८ श्री सिरेमल जी (श्रीलाल जी) म सा व्याख्यान देते थे । इन महात्मा की मधुर ललित वाणी का उपदेश श्रवण करके कई स्वमती व अन्यमती आर्य अनार्य आनन्द को प्राप्त होते थे, और वहुत से पुरुषो को वैराग्य उत्पन्न हो गया । जिससे त्याग पच्चक्खाण नियम अगीकृत करा लिये और कइयो ने खन्द के खन्द उठा दिये । धन्य है इन महात्मा को जो जहा पधारते हैं वहा ऐसा ही परोपकार व धर्म निपजता है ।"

जैन धर्म की व्यापक प्रभावना तथा चतुर्विध सघ के वहुमुखी विकास के पीछे आचार्य श्री के विलक्षण व्यक्तित्व एव विचक्षण प्रज्ञा का अपूर्व प्रभाव था । आपश्री का विलक्षण व्यक्तित्व प्रभावकारी शरीर सम्पदा से ही देदीप्यमान नही था अपितु गूढ ज्ञानार्जन एव शुद्धाचार के कठिन पालन से आपश्री की आन्तरिकता जिस रूप मे निर्मल एव भावप्रवण वन गई थी उसका अति विशिष्ट प्रभाव मुख्य था । आन्तरिकता का तेज ही वाहर मुखाकृति पर फैल कर

अति प्राभाविक बन गया था और उस आन्तरिकता को कमलवत् विकसाने मे आपकी विचक्षण प्रज्ञा ने सूर्य का कार्य किया था । आपके परम सद्गुणी जीवन तथा आपकी सद्गुणी शिष्य मण्डली के उपदेश एव धर्मोपकार मे जैन धर्म की सार्वजनीन क्षेत्र मे गौरवमयी महिमा, प्रसारित हुई तो उसके आधार पर चतुर्विध सघ का सभी दृष्टियो से विस्तार तथा विकास हुआ ।

स्वर्गवास एवं जन की श्रद्धा का प्रवाह :

अनन्त काल के अनवरत प्रवाहित चक्र मे जन्म लेने वाला व्यक्ति एक दिन मृत्यु को प्राप्त करता ही है । तदनुसार आचार्य प्रवर का स्वर्गवास भी वि स १९५४ की माघ शुक्ला दशमी को हो गया । आपश्री के स्वर्गवास का समाचार फैलते ही जन की श्रद्धा का जो प्रवाह प्रवाहित हुआ वह अवर्णनीय था । न सिर्फ सम्पूर्ण जैन समाज मे अपितु जैनेतर जनता तथा उसकी कई जातियो मे एव अनेकानेक क्षेत्रो मे शोक की लहर छा गई और श्रद्धाजलियो का ताता लग गया ।

जिस उत्साह के साथ आचार्य श्री के पार्थिव शरीर का अन्तिम सस्कार किया गया, उससे भी यह परिलक्षित होता है कि जन-समुदाय की आचार्य श्री के उज्ज्वल जीवन के प्रति कितनी उत्कट आस्था थी । 'उदयचन्द्र चन्द्रिका' मे आचार्य श्री के स्वर्गवास व अन्तिम सस्कार का बडा ही भावप्रवण वर्णन किया गया है, जो इस प्रकार है—

"इस कदर श्री जैन धर्म का उद्योत करते हुए माघ शुक्ला ८ के दिन पूज्य महाराज श्री उदयचन्द्र जी के शरीर मे व्याधि का असर दिखाई देने लगा । तो युवराज पूज्य जी महाराज श्रीमान् महाराज साहिब की भक्ति व व्यावच्च अत्यन्त प्रेम के साथ करने लगे । पश्चात् श्री जी महाराज ने आयु का अन्त समझके आलोयणापूर्वक अणशण व्रत अगीकार कर लिया । करीबन प्रहर पाच के बाद माघ शुक्ला १० सोमवार १० बजे दिन के उपरान्त श्री जी महाराज इस नाशवान कलेवर को त्याग करके श्रीश्री आदि आदेश्वर चरण शरण शरणावलम्ब सुरलोक मे पधारे ।

"उस वक्त व्याख्यान होता था । उसमे देशी-विदेशी हजारो मनुष्य थे सो श्रीमान् महाराज साहब के देवलोक पधारने की खबर सुनते ही चौंक उठे और जो शोक छाया वो लिख नही सकते पर ज्ञानी श्रावको ने दर्जा लाचारी समझ के उसी वक्त श्रीमान् के विमान की तैयारी की । इसका सामान पहले से ही बहुत कामवाला तैयार था—उसी मे विमान की तैयारी करना प्रारम्भ कर दिया । जो ताद्ध टोल पर लगाई उसका काम देखने ही योग्य बना था । चादी व सुवर्ण के कलश, तुर्के बहुत दाम के लगाये गये थे । कुल काम उस रोज बना वो शायद महाराजाओं को भी अलभ्य हो । उस परमोत्साह के साथ विमान की तैयारी करके श्री जी महाराज के कलेवर को अत्तर, केशर, मृगमद, गुलाल से चर्चित कर के विमान मे पधराये और निछरावल होना प्रारम्भ हुआ । उस अवसर मे मोती, अशर्फिया और सोने चादी के पुष्प उडने लगे । नाद रुपये भी उछाले गये थे उनकी सख्या ही नही है, कारण ग्राम व परग्राम वालो ने इस

महोत्सव मे रुपये देना विचारा पर यहा के पचो ने यही कहा कि यह अवसर फिर कव मिलने का है । जो आपको देना हो वो महाराज साहिब पर निछरावल कीजिये । बस इतनी सुनते ही अपने हाथो से रुपयो की वर्षा करना प्रारम्भ कर दिया । यदि उस अवसर को श्रावण भादवा चन्द अर्से के वास्ते समझ लिया जाय तव भी ताज्जुब नही है ।

"उस अवसर मे ग्राम मात्र मे तेली, लुहार, कसेरे, कलमीगीर, सुनार कुल हिंसक दुकाने वन्द थी याने सम्पूर्ण दयापलाई गई थी । कई कगाल भिक्षुको को वस्त्रदान होना शुरु हुआ । सो ले लेके अघाते हुए भिक्षुक विदा होने लगे । फिर तो केशर, अत्तर, गुलाब जल रग उडने लगा । मानो खास चैत्र कृष्णा प्रतिपदा दिखाई देने लगी । गुलाल की गर्द के आगे मुख से मुख दृष्टिगोचर यथार्थ नही होता था । इस कदर स्त्रियो का मगल गायन वाजो की ध्वनि के कर्ण पडी हुई बात भी सुनाई नही देती थी । इस तरह श्रीमान् की सवारी सदर वाजार मे हो के विदा होने लगी तो नर-नारियो का सघ असखनीय था । सहस्त्रो झडियें फर्राट् खाती थी । ऐसे आती हुई सवारी का चित्र सरकारी चवूतरे के ऊपर से मुसव्वर ने लिया था । ऐसा आनन्द होते हुए सवारी श्मशान भूमि मे पहुची—आगे चिता के लिए मलयागिरि चन्दन तैयार था । उसी वक्त चारु चिता रची गई व श्रीमान् के शरीर को पधरा के कपूर, केशर, अत्तर, मृगमद के सहित दाह क्रिया आरम्भ हुई । और निर्वाण सम्वन्धी सर्व सज्जनो ने बीस-बीस लोगस्स का ध्यान किया । दाह क्रिया समाप्त होने के वाद सर्व महाशय श्री जी महाराज का स्मरण करते हुए अपने गृहो को लौटे । विदित हो कि आप सर्व सज्जन समुदाय दृढ धर्मावलम्वियो से प्रार्थना है कि इस अनिन्दन पत्रिका को पढकर निर्वाण सम्वन्धी काउसग्ग व त्याग पच्चक्खाण करना भव्य पुरुषो को अवश्यमेव है कारण इस आर्यावर्त मे जैन धर्माभिरक्षक परोपकारी अमोलक रत्न का प्रकट होना असम्भव है । यदि स्वामीजी महाराज को इस धर्म मे मालव-मार्तण्ड की भी उपमा दी जाय तो सो भी विशेष नही है । क्या लिखे ? लिखते हुए कर कम्पता है ।"

धर्म कार्य रतस्सदा :

वैद्य जी ने अपने एक श्लोक मे आचार्य श्री उदयसागर जी म सा की जीवन-महिमा का वर्णन किया है—

"धन्यास्ते कृतिनो लोके, उदयचन्द्रपदाश्रया
ओसवश समुद्भूता, धर्मकार्यरतस्सदा"

इसके अलावा निम्न छन्दो मे भी वैद्य श्री मथुरालाल जी शर्मा ने अपनी जीवन वृत्त पुस्तिका "उदयचन्द्र चन्द्रिका" मे आचार्य श्री की महिमा का वखान किया है—

कवित्त — मालव सुदेश मध्य रत्नपुरी सुन्दर यह ।
आय कै विराजे गुरु, कीर्ति शुभ छाये हैं ।।
सज्जन समाज मध्य, वैस उपदेश देत ।
दया को प्ररुपके, जिनेन्द्र गुण गाये हैं ।।

काजी को कुरानहू ते, विप्र को पुरानहू ते ।
प्रश्न पूछे हू ताहि वैसे समझाये हैं ॥
ग्रन्थ पन्थ के विचारी, जिन सूत्र के धारी ।
कर केसर्या सवारी, सुरपुर को सिधाये हैं ॥
कीरति खल खडी दड दडी अदाडनिके ।
मडन नाभि खडन हू के, वीर वीर बांके हैं ॥
सागर समता के, देत मन कामना के ।
सत्य वचन भाखे जिन धर्म की पताके हैं ॥
देखो दीप दीपन मे, खगन महीपन मे ।
मानो मृग अग की, मरीची चमाके हैं ॥
जिन वानी के झमाके, कलि मे कल्पलता से ।
तोरे गुन काज अन्यमती अभिलाषे हैं ॥

सवैया —
आज गये जग मे जगतारन,
मारन मोह प्रपच अगाधा ।
नाम उद्योत कियो जग मे,
वो हरी जन की भववारिधि बाधा ।
भव जीवन को उपदेश दियो,
अरु बालपने हू ते सयम साधा ।
आज गये सुरलोक विषे,
जिनराज अमोलक रत्नहि लाधा ॥

कवित्त.—
सर्व जन सरसी, परसी पद पान ताके
भये हैं गदगद अनन्द मतवारे हैं ।
अत्तर अबीर वो गुलाल घमसान घोर
दोरे जोर हू ते, रग अगन पे डारे हैं ।
विधना के बाग मे, हो गये प्रनापी आज
बाजे दीप दीपन मे, यश के नगारे हैं ॥
आपने जे तारे, ते अम्बर मे तारे नाय
आपके न तारे, कहू और नाय तारे हैं ।
सखी गात मगल जब दगल सो दिखाई देत
कहे धन्य वानी सुरलोक की निशानी हैं ।
हीरे वो पन्ने हेम मोती निछराव होत
बापिकी मुद्रिन की गिनती कहां ठानी हैं ।
मुनि राजन के राजा, महाराजा उदयचन्द आज
अमरापुर वासी भये रत्नगुन खानी हैं ।

लोक हू के साहू, परलोक के निवासू
  आज ठौर–२ तेरी यश कीरति बखानी है ।
लगे हैं तार जब भगे आये नरनार
  आये ग्राम ग्राम हू ते सज्जन नाना है ।
बन्यौ है विमान जलज झालरी प्रभावनो
  कलितकिनारी ताछ पीठहू पे ताना है ।
रजत कर कलश भार तर्रे के फैले मार
  झडी की अजब वहार जन को दिखाना है ।
रग राग गाना जहा होत विधि नाना
  जै जै ध्वनिकाना, आत कहे धन्यबाना है ।
उडी है गुलाल गर्द, छाई नभ मण्डल लौ
  अरुण उद्योत इव रग नभ लाला है ।
बजत मृदग ढोल सरससहनाई और
  चग वो उपग वजे, नानाविधि ताला है ।
देखे नर नारी चढि–२ के अरारी बीच
  उडावत अबीर गौर भूरि के कर थाला है ।
फैली रग रगन की, तरग अनूप रग
  मानो घोर घुमड आय, बरसे मेघ माला है ।

सवैया — मलयागिर चन्दन चारु बनायकै, चित्र विचित्र चिता पधराये,
घूप कपूर अमोलक अम्बर, चारु सुगधन ते सिचवाये ।
छेलो महोत्सव जवथयो, तेहि देखन को सुर अम्वर छाये,
जै जै ध्वनि कर पुष्प उडावत, श्री गुरु को सुरराज बधाये ।।

छन्द मनहर— अभिनन्द आनन्दकद,
  उदयाचन्द फन्द निकन्दनम् ।
मम चित्त चारु विहार कर,
  कामादि कलिमल गञ्जनम् ।
नाथ शिव शुक साथ भक्तन,
  भ्रान्ति भव भय भजनम् ।
दास की अरदास सुनिये,
  पाद पकज चन्दनम् ।।

दोहा — उगणीमे चौपन्न को, विक्रम सवत् जान ।
माघ शुक्ल दशमी दिवस, भयोगुरु निर्वान ।।
मगल दिन दगल भयो, उपन्या हर्ष अपार ।

श्री चौथमल महाराज को पूज्य पदद अधिकार ।।
यह रचना को जो भणे, सो जाने परे भव फद ।
सेवक जे महाराज तिनके रहो अनन्द ।।
रत्नपुर वाणी भणै, विप्रजु मथुरालाल ।
वदौ निज गुरु प्रेम मे, हरहू नाथ मोहजाल ।।

इस प्रकार आचार्यश्री उदयसागरजी म सा की जीवन महिमा अपूर्व रही है । जो महापुरुष एक झटके मे समस्त ससार को त्याग कर धर्म शूर वन जाय, वस्तुत उसकी जीवन महिमा अनूठी ही होती है । वे तो सामने आई दुल्हन को छोडकर आचार्य श्री क्या निकल गये कि सिर की नई शोभा का ही सृजन कर लिया । फिर तो जीवन का पल-पल धर्म कार्य मे ही व्यतीत किया—धर्मकार्यरतस्सदा । आचार्य श्री यश लोक मे सदा-सदा काल जीवित रहेगे ।

परिशिष्ट—१

पूज्य श्री उदयचन्द्र जी महाराज के स्तवन

पहला —(पद्म प्रभु पावन नाम तिहारो) देसी—

पूज्य श्री का दर्शन की वलिहारी
दिन दिन मे वार हजारी—पू० टेर

उदय कुल वश उजागर, चढती वय व्रतधारी ।
धर्म लस्यो जिनराज धनी को, आतमहित विचारी ।।—पू०
सर्व जीवन को शाताकारी, मोटा छो उपकारी ।
अचला जिम अचल सयमे क्षमागुण भण्डारी ।।—पू०
मही मण्डल मे महिमा मोटी कीर्ति जग विस्तारी ।
देश विदेशी नर ने नारी प्रणमत पद हितकारी ।।—पू०
पर उपकार करण को सूरा, पूरा है गुणधारी ।
मिथ्या मत की वेल विदारण ज्ञान खग की मारी ।।—पू०
श्रीमुख वाणी अमिय समाणी शीतल चन्द उजारी ।
षट्काया की दया परूपी विध सहित नारी चारी ।।—पू०
कहा लों वखाण करू पूज्य जी का, रसना एक हमारी ।
सम दम उपसम गुणाकू भरीया, सूरीपद अवनारी ।।—पू०
उन्नीसो वर वर्ष चमालीस फागण सुद मझारी ।
हीरालाल की अर्जी सुणजो, सुदृष्ट हिन विचारी ।।—पू०

दूसरा — (करले मल्लि-जिन का ध्यान) देसी —

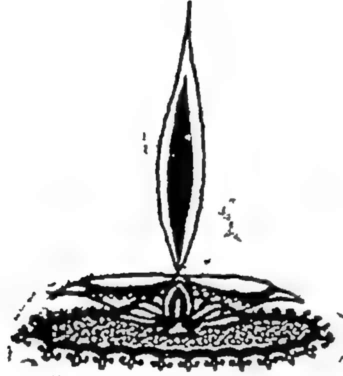
करले पूज्य चरण का ध्यान, जिनसे पावे सुखनिधान ।
मनोहर देश जोधपुर माही जन्म भौम सुस्थान ।।
उत्तम वशे उजागर उपना, उदयचन्द्र कुलभान ।
देख्यो अनित्य असार जगत् ने विष की बेल समान ।।
सयम शैल सवाई सूरा, उठ खडे हुए मैदान ।
ज्ञान तुरि पर चढके बैठे, क्षमा सजी पलान ।।
तप तरवार ढाल धैर्य की करें अष्ट कर्म की हान ।
आदित्य जिम उद्योत कियो है मिथ्या मेटत जहान ।।
हित उपदेश सुखकारी, उपकारी षट प्रान ।
परम परागत पद आचार्य, सोभित गुण की खान ।।
मुनीवरा को वृन्द विराजे, जाणे फूल फूलान ।
देश–२ के नर और नारी, धरत चरण मे ध्यान ।।
पुण्य प्रभावे भाग्य जोग से खुलिया दर्शन जान ।
चार सिंघ के बीच बिराजे, पडितपणो बखान ।।
भरी सभा तो ऐसी दीपे, आप ही इन्द्रविधान ।
देवगुरु प्रभाव करीने, सदा ज्योत जगो जहान ।।
हीरालाल कहे पूज्य प्रसादे, दिन–२ चढते वान ।

तीसरा — (हरी आया गौकरीयाने तारवाने) देसी —

पूज्य जी आया रत्नपुरी तारवाने ।
म्हारा आतम काज सार वाने टेर
म्हारे आगण सुरतरू वावियो जी
जाणे इन्द्र विमाण चल आवियो जी ।।—पू०
म्हारे रत्ना को सूर्य उगीया जी
म्हारे मन रा मनोरथ पूगीया जी ।।—पू०
म्हारा पूज्य जी रे ऊपर वारना जी ।
म्हारा आतम काज सुधारना जी ।।—पू०
म्हारा स्वामीनो मुख जिम चन्द लो जी ।
दिन उगता नित प्रति वन्द लो जी ।।—पू०
पूज्य पाट विराजी वाणीवागरे जी ।
श्रावक हस समान महेती चरे जी ।।—पू०
निरखी–२ नेणास्यू हियो हुलसे जी ।
लगी चतु चकोर प्रीति दिल मे जी ।। पू०

भवी जीवा ने तारणा कारणे जी ।
म्हारे आया गुरुजी बारणे जी ।।—पू०
हीरालाल कहे छै पूज्य आपस्यू जी
मैं तो लुल–२ कर पावें लागस्यू जी ।।—पू०

(श्री जैन सुबोध हीरावली से—)



आचार्य श्री उदयसागरजी म. सा.

परिशिष्ट–२

सम्यक्दर्शन मे ५ अक्टूबर १९८४ के अक मे 'ज्ञानगच्छत्र इतिहास, नामक अध्याय के पृष्ठ ३३९ पर जो यह बतलाया गया है । 'पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा के तृतीय पट्टधर पूज्य श्री उदयसागर जी म सा आपके समकालीन थे । उनके एक सन्त पूज्य श्री के समीप आये । उन्होने आपश्री के पास रहने की इच्छा प्रकट की । आपने उन सन्त की बातें शातिपूर्वक ध्यान से सुनी । पूज्य श्री ने वात्सल्य भावसहित उनसे आलोचना करवाई । फिर पूज्य श्री ने फरमाया 'मुनिवर आप अपने गुरुदेव की सेवा मे ही जाओ' सन्त ने कहा 'वहा मेरी प्रकृति का निर्वाह नही होता है ।' उस समय पूज्य श्री ज्ञानचन्द जी म सा के पास एक वैरागी थे । वे प्रकृति के भद्र, विनीत, सरल और उपशान्त थे । पूज्य श्री ने कहा 'भाई तुम्हे तो कही भी सयम की आराधना करना है । मैं तुम्हे यह राय देता हू कि तुम इन मुनि श्री के शिष्य बन जाओ । मुझे विश्वास है ये मुनिजी छोटे सन्त को तो निवाह लेंगे और मुझे यह भी विश्वास है कि तुम इनकी प्रकृति को निवाह सकोगे । तुम्हे सयम आराधना के साथ ही दुहरा लाभ यह भी प्राप्त होगा कि तुम इन मुनिजी की सयम आराधना मे सहयोगी बन सकोगे । इस प्रकार वैरागी को समझा–बुझाकर उनका शिष्य बना दिया और उन दोनो से पूज्य श्री उदयसागर जी म सा. को सप्रेम सौंप दिये ।'

इस बात का क्या आधार है ? इसके लिए कोई सकेत नहीं किया गया है । बिना आधार का कथन प्रमाणित नही होता । दूसरी बात आचार्य श्री उदयसागरजी म सा का जीवन एव शासन व्यवस्था देखते हुए यह बात सत्य नही लगती है । क्योकि जहा रतलाम मे उनके पास सन्त–महासतिया जी के १४१ ठाणा थे और वैसे भी उनके पास अत्यन्त क्षमावान विनयवान गुणसम्पन्न सन्त–मुनिराज भी थे । यही नही आचार्य प्रवर ने तो मन्दिरमार्गी परम्परा के मुनिश्री कृष्णसागर जी म सा से शास्त्रार्थ कर उन्हे हराकर प्रशिक्षित कर शर्त के अनुसार उन्हे स्थानकवासी परम्परा मे दीक्षित किया था । इन सब बातो से यह स्पष्ट है कि उनके पास गुणवान साधुओ की कोई कमी नही थी । आचार्य प्रवर सयम की मर्यादाओ मे पक्के थे । उन्हे सयमीय मर्यादा मे आशिक कटौती भी अभीष्ट नही थी । यह उनके जीवन को पढकर जाना जा सकता है । इन कारणो से यह स्पष्ट हो जाता है । सम्यक्दर्शन मे वर्णित जो साधु आचार्य श्री उदयसागरजी म सा का बतलाया है, प्रथम तो ऐसा साधु उनके पास हो ऐसा नही लगता और हो , तो भी उन्हे दूसरे के पास जाने की आवश्यकता ही नही थी क्योकि स्वय आचार्य प्रवर के पास मे ऐसे–ऐसे सन्त मुनिराज थे, वे ऐसे साधु को तो क्या अन्य साधुओ को निभाने की क्षमता रखते थे । स्वय आचार्य प्रवर भी अत्यन्त विचक्षण थे । जिनका आदर्श भी, जीवन चरित्र मे मिलता है । अत सम्यक् दर्शन मे कथित उक्त बात प्रमाणित मालूम नही होती ।

आचार्य श्री उदयसागर जी म. सा.

जीवन–तथ्य

जन्म स्थल	जोधपुर (राजस्थान)
जन्म तिथि	विक्रम सवत् १८७६ पौष मास
पिता	श्री नथमल जी खिवेसरा
माता	श्रीमती जीवू देवी
दीक्षा स्थान	बूदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	वि स १८९८ चैत्र शुक्ला एकादशी
स्वर्गवास स्थान	रतलाम (मध्यप्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	वि स १९५४ माघ शुक्ला दशमी



१ विलक्षण व्यक्तित्व वाले धर्म योद्धा
२ साधना के पथ पर
३ विलक्षण व्यक्तित्व
४ विलक्षण व्यक्तित्व के साथ विचक्षण प्रज्ञा का शुभ सयोग
५ सयम के प्रति सतत जागरूकता एव कठोर साधु जीवन के अनुशास्ता
६ उपदेशो का अमिट प्रभाव
७ सयम सुवास से सुवासित पुष्पगुच्छ
८ चतुर्विध सघ का बहुमुखी विकास
९ स्वर्गवास एव जन–जन की श्रद्धा का प्रवाह
१० "धर्मकार्यरतस्सदा"

परिशिष्ट स १।

शान्त-दान्त निरहंकारी

निर्ग्रन्थ शिरोमणि

महान् क्रियावान्

आचार्य

श्री चौथमल जी म. सा.

चौ

शान्त-दान्त निरहंकारी निर्ग्रन्थ शिरोमणि महान् क्रियावान्

आचार्य

श्री चौथमलजी म. सा.

आचार्य श्री चौथमलजी म.सा.

१ पाली मे जन्मे और बूंदी मे दीक्षित हुए
२. उत्कृष्ट साधना के प्रतीक
३. सवत्सरी मनाने की विवादास्पद घटना और सुश्रावक मगनजी का सत्प्रयास
४. उत्तराधिकारी के रूप मे
५. मात्र तीन वर्ष के आचार्य काल मे भी चतुर्विध सघ का आन्तरिक विकास
६. अपने उत्तराधिकारी की घोषणा एव महाप्रयाण
(परिशिष्ट स. १।२)

आचार्य श्री चौथमलजी म.सा

जीवन तथ्य

जन्मस्थान	:	पाली (राजस्थान)
दीक्षास्थल	.	बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	:	वि स. १९०९ चैत्र शुक्ला द्वादशी
युवाचार्य पद तिथि	:	वि स १९५४, मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी
आचार्य पद स्थान	.	रतलाम (मध्य प्रदेश)
आचार्य पद तिथि	:	वि. स. १९५४ माघ शुक्ला दशमी
स्वर्गवास स्थान	:	रतलाम (मध्य प्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	:	वि. स १९५७ कार्तिक शुक्ला नवम

आचार्य श्री चौथमलजी म.सा.

❀ ससार से उद्विग्न होकर शाश्वत् सुख की पिपासा को शान्त करने के लिये जिन्होंने जैनेश्वरी दीक्षा स्वीकार की थी। सम्यक् ज्ञान के साथ सयमीय आचरण मे जो विशेष रूप से सतर्क थे।

❀ सयम शैथिल्य मे जो वज्रादपि कठोराणि—वज्र से भी कठोर थे तो सयम साधना में मृदुनि कुसुमादपि फूल से भी कोमल थे जिनके सम्यक् आचरण का प्रत्येक चरण साधना के लिये प्रेरणा स्त्रोत रहा है।

❀ ऐसे थे महान् क्रियावान् सयम के सशक्त पालक आचार्य श्री चौथमलजी म.सा.

शान्त-दान्त निरहंकारी

निर्ग्रन्थ शिरोमणी

महान् क्रियावान्

आचार्य

श्री चौथमल जी म. सा.

साधु के कई नामो मे से उसका एक नाम है—निर्गथ अर्थात् जिसके कोई ग्रन्थि-गाठ नही हो । इस ससार मे अनेक गाठे होती है, मोह-ममता की, इच्छाओ और लालसाओ की । ऐसी गाठो की कोई सख्या नही होती । कहा है—इच्छाहु आगास समा अणतिया—इच्छाए आकाश के समान अनन्त होती है । यह प्रत्येक आत्मा की भिन्न भिन्न अवस्था होती है कि वह कितनी और कैसी गाठो से जकडी हुई है ? जो गाठे जितनी ज्यादा जकडी हुई होगी, वह आत्मा उतना ही ज्यादा कर्मावरणो से ढका हुआ और मलिन होगा । आत्मस्वरूप को उज्ज्वल वनाने का एक मात्र यही उपाय वताया गया है कि मोह की गाठो को खोला जाय । यही कारण है कि साधु धर्म मे ऐसी सभी गाठो को खोल देने का विधान किया गया है । जव कोई ग्रन्थि नही रहेगी तव साधक निर्ग्रन्थता के चरमोत्कर्ष पर पहुच जाएगा ।

ससार मे विपय कपायादि भावो का जो आधिक्य दिखाई देता है, उसके पीछे मुख्य रूप से मोह को माना गया है जो राग और द्वेष के दो रूपो से प्रकट होता है । जिस पदार्थ या व्यक्ति को चाहते है, उसके प्रति राग होता है, तो जिसको नही चाहते, उससे द्वेप होता है । फिर राग द्वेष के परिणामो मे वहते हुए मोह प्रगाढ वनता जाता है । अत भगवान् का निर्देश है कि श्रावक भी मोह के गाढेपन को कम करे तथा साधु तो मोह की सभी गाठो को खोल लेने का सम्पूर्ण पराक्रम जुटावे । कारण, मोहनीय कर्म के कमजोर पड जाने पर अन्य कर्मो को क्षय करने की दिशा मे आगे वढने मे विशेष कठिनाई नही रहती है । इस रूप मे निर्ग्रंथत्व वस्तुत मोक्ष पथ को प्रशस्त वनाने वाला आत्मा का प्रमुख पुरुषार्थ होता है ।

हमारे चरित्रनायक आचार्य श्री चौथमलजी म सा सच्चे निर्ग्रंथ ही नही, अपने समय के निर्ग्रंथ-शिरोमणि थे । तप और त्याग की पावन अग्नि मे आपश्री ने अपनी आत्मा को निर्मल

वनाया था । इस प्रकार आत्मस्वरूप को उज्ज्वल वनाते हुए आपश्री शान्त, दान्त और निरहकारी वन गये थे । पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा के पट्ट के चतुर्थ पट्टधारी के रूप मे आपश्री मात्र तीन वर्ष तक ही विराजे, किन्तु उस समय अल्प अवधि मे भी आपश्री ने अपने जीवन को उत्कृष्ट साधना के प्रतीक के रूप मे आदर्श वनाया और जिसके सुप्रभाव से सघ का आन्तरिक विकास सराहनीय रीति से सम्पन्न हुआ ।

पाली में जन्मे और बूंदी में दीक्षित हुए—

आचार्यश्री चौथमलजी म सा की जन्मस्थली मारवाड का प्रमुख नगर पाली है, जो अव राजस्थान का प्रमुख नगर है । वाल्य काल से ही आपका पालन-पोपण धार्मिक वातावरण मे हुआ तथा सन्त महापुरुपो के धर्मोपदेश सुनने का अवसर मिलता रहता था । इन्हो परिस्थितियो का सुपरिणाम था कि वे प्रारभ से ही विराग की ओर गतिशील वन गये । ज्यो विराग–दशा गहरी होती गई, आपका सन्त मुनिराजो के साथ ससर्ग वढता गया, उपदेश श्रवण की सुरुचि फैलती गई और आगमो के गूढ रहस्यो का अध्ययन करने की जिज्ञासा भी सुदृढ होती गई ।

'खरण मित्त सुखा, वहुकाल दु खा' की उक्ति के अनुसार आपश्री की आन्तरिक अनुभूति जागृत वनी कि सासारिक सुखो का प्रभाव क्षणिक होता है–क्षरण भर के लिये तो सुख का आभास होता है लेकिन उस क्षण के आभास उद्भूत दु खो का क्रम लम्वे काल तक चलता रहता है । क्षण मात्र का सुख वहुकाल के लिये दु ख रूप हो जाता है । इस अनुभूति के आधार पर आपश्री को ससार के प्रति विरक्ति हो गई । परिणाम स्वरूप आपश्री ने बूदी नगर मे वि स १९०९ चैत्र शुक्ला द्वादशी को भागवती दीक्षा अगीकार कर ली ।

उत्कृष्ट साधना के प्रतीक

जिस उत्कृष्ट विराग-भाग एव प्रगाढ आस्था से आपश्री ने सयम ग्रहण किया था, उसी के अनुरूप आपकी कठिन एव सतत जागरूक साधना प्रारभ हो गई । एक तो पूर्वाचार्यों द्वारा शुद्धाचार के पक्ष मे व्यापक वातावरण तैयार कर दिया गया था तथा दूसरे आपश्री का सयमोत्साह प्रवल था, जिसके कारण चतुर्विध सघ मे जो जागृति का क्रम चल रहा था उसको अधिक सम्वल ही मिला ।

'खतो दतो निरारभो, पव्वइए अरणगारिय'—प्रव्रजित हो जाने के वाद आपश्री के साधु जीवन मे निरन्तर 'शान्त, दान्त एव निरारभी वृत्तियो तथा प्रवृत्तियो का विकास होता चला गया और उस रूप आपका साधु जीवन कठिन एव उत्कृष्ट साधना का प्रतीक वन गया । इसका मूल कारण यही था कि जिस उत्साह के आपने प्रव्रज्या स्वीकार की थी, सयम की माधना मे आप द्विगुणित उत्साह से जुट गये थे । वह उत्साह आपके सयम को सतत सुदृढता प्रदान करता गया । सयमीय आचरण के प्रति आपकी गहरी निष्ठा के फलस्वरूप आप अपने उत्कृष्ट सयमी जीवन के उदाहरण से सारे सयमी वातावरण को स्वस्थ दिशा की ओर प्रभावित करते थे ।

साधु जीवन की छोटी से छोटी क्रियाओ के निष्ठापूर्वक पालन के प्रति भी इसी दृष्टि से आप विशेष ध्यान देते थे ।

उस समय मे आपश्री महान् क्रियावान साधक माने जाते थे । सयम से किसी भी तरह की विपरीत प्रवृत्ति रखने वाले अथवा शिथिल आचरण की तरफ झुकने वाले साधु-साध्वी आपश्री के प्रभावी जीवन से भयभीत व जागृत रहते थे । आपकी साधु जीवन की कठोर साधना का स्वरूप इस एक छोटे से उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा ।

आपश्री का जरा धर्मी शरीर निरन्तर क्षीण-प्रतिक्षीण तथा दुर्बल होता जा रहा था और इन्द्रिय शक्ति भी शिथिल हो रही थी । तब उठने बैठने मे भी आप काफी कष्ट का अनुभव करने लगे थे, फिर भी सयमीय क्रियाओ के प्रति आप बहुत ही सजग तथा सतर्क रहते थे । एक बार सन्त-वर्ग प्रतिक्रमण करने मे तन्मय था और आपश्री भी शरीर मे पीडादायक व्याधि होते हुए भी लकडी के सहारे खडे होकर प्रतिक्रमण की क्रिया सम्पादित कर रहे थे । ऐसे समय मे कुछ अनुभवी श्रावक वहा दर्शनार्थ उपस्थित हुए और आपश्री के चरणो मे यह नम्र निवेदन प्रस्तुत किया—पूज्य प्रवर, आपके शरीर मे भयकर व्याधि उत्पन्न हो चुकी है—ऐसी परिस्थिति मे आप बैठे बैठे ही प्रतिक्रमण करावें तो उत्तम रहेगा । शास्त्रकारो ने भी सयमीय क्रियाओ के पालन मे शरीर को महत्वपूर्ण स्थान दिया है, अत आपश्री बैठे बैठे ही प्रतिक्रमण करें तो किसी दोष की स्थिति नही आती है ।

श्रद्धालु श्रावको की बात सुनकर आपश्री ने दूरदर्शिता की भावना के साथ फरमाया देवानुप्रियो ! आपका कहना यथार्थ है कि मैं बैठे बैठे भी प्रतिक्रमण कर सकता हू परन्तु अगर मैंने बैठे बैठे प्रतिक्रमण किया तो हो सकता है कि मेरे सन्त फिर सोये सोये ही कहीं प्रतिक्रमण न करने लग जाय । अनुकरण की स्थिति कभी कभी परम्परा को भी ढाल देती है और इस प्रकार सयमीय क्रियाओ मे शनै शिथिलता का प्रवेश होने लग जाता है । वर्तमान मे मेरा सकारण नगण्य सा आचरण भी भविष्य मे साधु समाज के लिये सभव है, शिथिलता का बीज बन जावे । अत मैं थोडा शरीर कष्ट झेलकर भी शिथिलाचार के आने का रास्ता नही खोलना चाहता हू । वे श्रावक यह स्पष्टीकरण सुनकर चौंक से गये कि इन महान् पुरुष की कितनी उत्कृष्ट साधना है, कैसी भव्य दूरदृष्टि है तथा शुद्धाचारी सयम के प्रति कितनी गहरी सुरुचि है ? उन श्रावको ने परम श्रद्धाभाव से आचार्य श्री को पुन वन्दन किया तथा आपश्री के कठिन एव उत्कृष्ट साधना के प्रतीक रूप साधु जीवन की भूरि-भूरि सराहना की ।

संवत्सरी मनाने को विवादास्पद घटना और सुश्रावक मगनजी का सत्प्रयास

अपने ऐसे गरिमामय साधु जीवन मे आचार्य श्री सामान्य रूप से चतुर्विध सघ मे, किन्तु विशेष रूप से साधु-साध्वी समाज मे प्रकाश स्तभ के समान आदर्श मार्गदर्शक मान लिये गये थे ।

वि स १९४० या १९४२ के लगभग की एक घटना पूज्य श्री के जीवन से सम्बन्धित वतलाई जाती है जो इस प्रकार घटित हुई थी—

किसी कारणवश आचार्य श्री उदयसागरजी म सा ने भादवा सुदी चतुर्थी के रोज सवत्सरी मनाने की घोषणा की । तव पूज्य श्री चौथमलजी म सा के मन मे अनेक प्रकार का ऊहापोह हुआ कि आचार्य प्रवर ने चौथ को सवत्सरी मनाने की घोषणा क्यो की ? जवकि पूर्व परम्परा से सवत्सरी सदा ही पचमी की मनाते चले आ रहे थे । अनेक सकल्प-विकल्पो के प्रवाह मे पूज्य श्री चौथमलजी म सा ने पचमी को ही सवत्सरी मनाने का निर्णय लिया और तदनुसार ही आपने सवत्सरी मनाई भी, जवकि आचार्य श्री उदयसागरजी म सा ने चौथ की सवत्सरी मनाई ।

चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् जव विभिन्न स्थलो से सन्त मुनिराजो ने आकर आचार्य श्री से सवत्सरी विषयक उस प्रकार की घोषणा का कारण जानने की जिज्ञासा प्रकट की । तव उन्होने मध्यम रीति से स्पष्टीकरण किया कि जिन सन्तो ने पचमी को सवत्सरी मनाई है, उन्हे किसी प्रकार का उपालभ नही है तथा अव इस वात को लेकर किसी के भी मन मे किसी प्रकार सकल्प-विकल्प नही उठना चाहिये । किन्तु पूज्य श्री चौथमलजी म सा ने इस स्पष्टीकरण को स्वीकार नही किया तथा पूर्ववत् सम्वन्ध रखने के लिये भी वे तत्पर नही हुए । उनका आग्रह था कि जव तक आचार्य श्री चौथ को सवत्सरी मनाने का 'मिच्छामि दुक्कड' न दे दे अर्थात उसे भूल के रूप मे न स्वीकार करले तव तक वे पूर्ववत् सम्वन्ध वनाये रखने के लिये तैयार नही हो सकेगे ।

इस प्रकार परिस्थिति काफी गभीर वन गई । ऐसा स्पष्ट नजर आने लगा कि इस मत-भेद से कारण सघ मे फूट की दरारे पड जायगी । इन दोनो महापुरुषो के वीच मतभेद वढ गया तथा मनभेद भी गहरा होता चला जा रहा था । स्थिति यहा तक पहुच गई कि दोनो के वीच मे वन्दना—व्यवहार भी वद हो गया । इस स्थिति से सारे समाज मे हलचल मच गई । वडे अनुभवी श्रावक भी विचार मे पड गये कि अव क्या किया जाय ? सवकी भावना यही थी कि किसी भी प्रकार इन दोनो महापुरुषो के मध्य पूर्ववत् स्नेह स्थापित हो जाय ।

यह गहन समस्या जव वडी सादडी के सुश्रावक श्री मगनमलजी डागी की जानकारी मे पहुची तो वे इन दोनो महापुरुषो के मध्य पुन स्नेह सम्वन्ध स्थापित कराने के उद्देश्य से तुरन्त रतलाम पहुचे । उन्होने आचार्य श्री उदयसागरजी म सा के दर्शन किये तथा एतद् विषयक विचार विमर्श किया । उसके वाद वे जावद मे विराजित पूज्य श्री चौथमलजी म सा की सेवा मे पहुचे और विना कोई चर्चा किये वे दो तीन दिन तक उनके प्रवचन श्रवण करते रहे । एक दिन उन्होने एकान्त मे पूज्य श्री चौथमलजी म सा से कहा—मैं रतलाम मे विराजित आचार्य श्री के दर्शन करके आ रहा हू, जहा मैने उनसे सारी वात चीत कर ली है । आचार्य श्री जी म. सा 'मिच्छामि दुक्कडे' देने के लिये तत्पर है, अत आप रतलाम पधारें ताकि ज्यो ही आचार्य श्री 'मिच्छामि दुक्कडे' का उच्चारण करे त्यो ही आप उन्हे वन्दना कर ले । पूज्य

श्री चौथमलजी म सा. ने श्रावक मगनजी की यह वात स्वीकार कर ली विहार करते हुए रतलाम पहुच गये । तव वे आचार्य श्री के सामने उपस्थित हुए और प्रतीक्षा करने लगे कि अव आचार्य श्री 'मिच्छामि दुक्कड' कहे और कब वे उन्हे वन्दना करे ? किन्तु आपश्री को वहा की परिस्थिति विलक्षण ढग की ही नजर आने लगी, क्योकि आचार्य श्री की ओर से 'मिच्छामि दुक्कड' कहे जाने का कोई सकेत दृष्टिगत नही हो रहा था ।

पूज्य श्री चौथमलजी म सा. द्वारा काफी समय तक प्रतीक्षा किये जाने के वाद भी आचार्य श्री ने 'मिच्छामि दुक्कड' का उच्चारण नही किया । करते भी कैसे ? क्योकि सुश्रावक मगनलालजी ने रतलाम मे 'मिच्छामि दुक्कड' देने के वारे मे कोई चर्चा, आचार्य श्री से नही की थी । श्रावकजी ने पूज्य श्री चौथमलजी म सा से यह वात जो कही थी, वह विलकुल उनके ही मन की कल्पना की थी । ताकि सघ विघटन से वच जावे उन्होने अपने ही मन से पूज्य श्री को रतलाम पहुचने के लिये कहा था । उस समय जव पूज्य श्री चौथमलजी म सा ने वहा उपस्थित श्री मगनमलजी की ओर देखा तो उनकी आखो मे उलाहना का सकेत था । तव वे श्रावकजी अपने स्थान से उठे तथा पूज्य श्री के समीप पहुचे । और यह आश्चर्य भरा दृश्य था कि उन्होने अपार जन-समूह के वीच पूज्य श्री की गर्दन पकडकर उसे आचार्य श्री के चरणो मे वलपूर्वक झुका दी और बोले—इस सम्प्रदाय के कर्णधार साधुओ को इस प्रकार से गुरु के प्रति अश्रद्धा के भाव नही लाने चाहिये ।

अव क्या था ? सिर भी झुक चुका था तो अम्मापिया श्रावकजी के मुह से हितकारी निर्देश भी निकल चुका था—पूज्य श्री चौथमलजी म सा ने गुरुदेव को विधिवत् वन्दन कर ही लिया । फिर तो पश्चाताप से विगलित होकर उन्होने आचार्य श्री से अपने अपराध की भावविह्वलता से क्षमायाचना भी कर ली । श्रावकजी मगनजी के सत्प्रयास से इस प्रकार गुरु शिष्य मे दूध पानी की तरह एकरूप मिलन हो गया । मतभेद की दीवारे विलीन हो गई तथा इस मिलन से सर्वत्र वातावरण मे प्रसन्नता का वातावरण छा गया ।

दूसरे दिन व्याख्यान मे सुश्रावक श्री मगनमलजी डागी ने आचार्य श्री के चरणो मे विनम्र निवेदन किया—भगवन्, मैंने एक महान् ज्ञानवान तथा क्रियावान् सन्त की अविनय-असातना की और उनके साथ विश्वासघात किया । मैंने आपसे कोई परामर्श किये विना ही 'आचार्य श्री मिच्छामि दुक्कड' दे देंगे—ऐसी कपोलकल्पित वात कहकर पूज्य श्री चौथमलजी म सा का विहार रतलाम की तरफ करवा दिया । यद्यपि मुझे आपश्री के नाम से यह गलत वात नही कहनी चाहिये थी, किन्तु मैंने यह काम मात्र सघ हित को दृष्टि मे रखकर ही किया है । फिर भी मेरी यह गलती है इसके लिये आप जो भी दड विधान करे—उसे ग्रहण करने के लिये मैं तैयार हू ।

आचार्य श्री ने पूज्य श्री चौथमलजी म सा की तरफ सकेत किया और पूज्य श्री ने उस सकेत को वयोवृद्ध सन्त के पास भेज दिया । लेकिन उन्होने भी वरिष्ठ मुनि श्री राजमलजी म सा को सकेत कर दिया । कितनी उदारता थी सन्त मुनिवरो मे जो कि उपर्युक्त लघु सकेत

से समझी जा सकती है ? मुनि श्री राजमलजी म सा ने तब फरमाया—मगनजी भाई, आपको क्या दड दिया जाय ? आपने तो वह दु साध्य कार्य सफलतापूर्वक करके दिखा दिया, जो बडे-बडे सन्त मुनिराज भी नही कर पा रहे थे । सघ और सम्प्रदाय के भीतर जो बहुत बडी विघटन की स्थिति बन गई थी, उसे आपने अपनी उत्पाति की बुद्धि से बचाकर एक बहुत ही प्रशसनीय कार्य किया है । इसमे आपका अपना कोई स्वार्थ नही था, इसलिये दड प्रायश्चित की कोई स्थिति नही बनती है ।

इतिहास मे कु डलिक श्रावक का वर्णन आता है, जिन्होने एक महान् आचार्य रत्नाकर सूरी जी को प्रतिबोधित किया था, कारण वे सयम पथ से च्युत हो गये, तब श्रावक जी ने प्रतिबोध देकर उन्हे पुन सयम पथ पर प्रस्थापित किया था । उसी प्रकार सुश्रावक मगनमलजी ने भी सघ मे होने वाले विघटन के बीच युक्तिपूर्वक सूत्रधार का काम कर युक्तिपूर्वक विघटन को टाल दिया और स्नेह सम्बन्ध सयोजित कर दिया । इस विशिष्ट कार्य का महत्व तभी पूरी तरह से समझ मे आ सकता है, जब यह कल्पना की जाय कि मगनजी साहब का सत्प्रयास सफल नही बनता तो सघ को कितनी हानि उठानी पडती ? उनकी तरकीब इस कदर काम आई कि आचार्य श्री उदयसागरजी म सा. तथा पूज्य श्री चौथमलजी म सा के मध्य पुन पूर्ववत् स्नेह सम्बन्ध स्थापित हो गये तथा सघ मे हर्ष एव ऐक्य का वातावरण छा गया ।

उत्तराधिकारी के रूप मे :

उपर्युक्त घटना तो वि स १९४० या १९४२ की है किन्तु इसके बाद आचार्य श्री उदयसागरजी म सा तथा पूज्य श्री चौथमलजी म सा के मध्य गुणशील स्नेह सम्बन्धो की ऐसी प्रगाढता पैदा हुई कि वि स १९५४ की फाल्गुन कृष्णा चतुर्थी को आचार्य श्री ने पूज्य श्री चौथमलजी म सा को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया । वैसे वि स १९५२ मे जब आचार्य श्री उदयसागरजी म सा के शरीर मे व्याधि हो गई थी, तभी उन्होने युवराज पदवी पूज्य श्री चौथमलजी म सा को प्रदान कर दी थी ।

पूज्य श्री चौथमलजी म सा को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के कुछ ही समय पहले आचार्य श्री उदयसागरजी म सा का स्वर्गारोहण हो गया था । रतलाम मे ही वि स. १९५४ की फाल्गुन कृष्णा चतुर्थी को आचार्य पद प्रदान किया गया ।

आचार्य श्री उदयसागरजी म सा के स्वर्गारोहण के बाद नवाचार्य की महिमा का वर्णन करते हुए वैद्य श्री मथुरालालजी शर्मा ने आचार्य श्री उदयसागरजी म सा के जीवन वृत्त पर लिखित अपनी पुस्तिका "उदयचन्द्र चन्द्रिका" मे लिखा है—

"हाल मे यहा पर श्री श्री १००८ श्री दयासागर, धर्म उजागर, परोपकारक, अत्यन्त गुणवान श्री पूज्य जी महाराज श्री चौथमलजी महाराज ठाणा ३२ से विराजमान हैं । इन्हीं महानुभाव की कृपा से आज दिन धर्म का उद्योत भी आनन्दपूर्वक हो रहा है । जानते हैं कि श्रीमान् महाराज साहब इस धर्म की रक्षा धरोहर की भाति करते रहेगे । ऐसी आशा है और

श्री पूज्य जी महाराज साहब ने अपनी सम्प्रदाय के लिये मर्यादा याने कायदा प्रकट किया है, वो सन्त मुनिराजो व श्रावको की सम्मति से बहुत सुन्दर जाहिरात लेख फरमाया है । इसी मर्यादा मे सर्व सन्त व महासतियाजी महाराज को चलना अवश्यमेव चाहिये । ऐसे परमप्रतापी धर्मातिरक्षक महानुभाव की दीर्घायु के लिये कुल श्रावक समुदाय सदा सर्वदा प्रभु से प्रार्थना करते है ।"

चौथे पट्ट पर विराजित आचार्य श्री चौथमलजी म सा जब पट्टासीन हुए तभी आप वयोवृद्ध एव वरिष्ठ साधक थे अत आपके आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने पर सघ और सम्प्रदाय मे हर्ष की लहर फैल गई कि आपके शासनकाल मे पूर्वाचार्यों द्वारा प्रारभ श्रमण सस्कृति की सरक्षा से सम्बन्धित क्रान्ति अवश्य ही प्रगतिशील बनी रहेगी, एव चतुर्विध सघ की उन्नति तथा जैन धर्म की प्रभावना होती रहेगी ।

मात्र तीन वर्ष मे चतुर्विध संघ का आन्तरिक विकास :

किन्तु भवितव्य कुछ और ही था । आचार्य श्री चौथमलजी म सा का शासन काल मात्र तीन वर्ष तक ही रहा, फिर भी इस अल्प अवधि मे आचाय श्री के प्राभाविक जीवन की महिमा से चतुर्विध सघ ने सन्तोषजनक रीति से अपने सगठन का आन्तरिक विकास सम्पादित किया । आपश्री के आचार्य काल मे शुद्धाचार के लिये चल रही उत्क्रान्ति को पर्याप्त सम्वल मिला तथा सयमी जीवन की पृष्ठभूमि पुष्ट बनी ।

ऐसी प्रगति इसी कारण सभव बन सकी कि आचार्य श्री का सयमी जीवन सद्‌गुण गरिमा से अलकृत था । कवि श्री हीरालालजी ने अपनी लावणी मे आचार्य श्री का गुणानुवाद करते हुए लिखा है—

"अहो पडित गुणा की खान
कहा लग करता रहु मैं बयान ।
देत है अमर जीव को ज्ञान
जीतिया, क्रोध लोभ और मान ।।

☐ ☐ ☐

सहयो परिषह आकरो जी
सूर वीट प्रणाम ।
टसको पण कीधो नही जी
सरीया वाछित काम ।।

(पूरी लावणी परिशिष्ट मे देखें)

आपश्री की सघ सचालन—क्षमता अद्‌भुत थी । लचीलापन कम होने से आपके अनुशासन का प्रभाव भी अपूर्व रहा । इसके सिवाय आपके शासन काल मे धर्मोपकार के महद् कार्य सम्पन्न हुए । धर्मोपकार के एक अवसर का वर्णन करते हुए "उदयचन्द्र चन्द्रिका" मे लिखा गया है—

"इस अवसर मे श्रीमान् महाराज १००८ श्री चौथमलजी म सा के उपदेश को श्रवण करके महाराज श्री सिरेलालजी (श्रीलालजी) के गृहस्थपणा के जोडायत बाई मंगा ग्राम टौंक से आये है सो यहा पर सयम लेना आदरा है और एक भाई वरदीचदजी रतलाम के गौत्र पीपाडा उमर करीवन वर्ष २५ के उन्होने भी योगारभ लेना आरभ किया है। फाल्गुन शुक्ला ५ के रोज वैराग्य से सयम लेगे। इनका दीक्षा महोत्सव भी बडा भारी होगा।"

इस प्रकार कई स्थानो पर धर्म के कई उपकारी कार्य पूरे हुए तथा कई भव्य आत्माओ ने कल्याण मार्ग पर अग्रगामिता साधी।

अपने उत्तराधिकारी की घोषणा एवं महाप्रयाण :

आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए आपश्री को तीन वर्ष भी पूरे नही हुए थे कि आपकी शरीरस्थ व्याधि ने तीव्र वेदना देनी शुरू कर दी। तब शरीर की नश्वरता को समझकर आपने अपने योग्यतम शिष्य गुणशील मुनिवर श्री श्रीलालजी म सा को अपना उत्तराधिकारी तथा पचम पट्टधर घोषित कर दिया। यह घोषणा रतलाम मे वि. स. १९५७ कार्तिक शुक्ला द्वितीया को की गई।

और उसी कार्तिक शुक्ला अष्टमी को ही आचार्य श्री चौथमलजी म सा ने महाप्रयाण कर दिया। ऐसी दिव्य विभूति को धन्य है।

परिशिष्ट एक

१. श्री चौथमल महाराज की लावणी

(दया को पाले हैं बुद्धान–ए देशी)

पूज्य श्री चौथमलजी महाराज
सिद्ध कर लिया है अपना काज ।।—टेर

करत हू गुणवन्त का गुणग्राम
जिन्हो से पावे सुख आराम।
देखलो शास्त्र का निर्जाम
भूल मत भटको ग्रामो ग्राम ।।

दूहा—हुक्मीचद महाराज की, दीप रही समुदाय।
अधिक-अधिक गुणवत सन्त हैं, कहयो कघू नही जाय ।।
चलाता है दया धर्म की जाझ ।।—पू०
अहो पडित गुणा की खान
कहा लग करता रहू मैं वखान।
देत हैं अमर जीव को ज्ञान

जीतियो क्रोध लोभ और मान ।।
अवसर जाणी एहवो जी
अणसण कीधो जाण ।।—पू०

आलाई निंदी आत्मा जी
तो हुयो मोहनी फद ।
पडित मरण ने आदर्या जी
आणी बडो आणद ।।
सह्यो परिषह आकरो जी
सूरवीर प्रणाम ।
टसको पणकीधो नही जी
सरीया वाछित काम ।।
उण्णीसा अडतीस मे जी
पौष सुदी शुक्रवार ।
दशम को दिन ऊगता जी,
पहोता स्वर्ग मझार ।।

एकादश दिवस तणो जी,
सुख सू अणसण सिद्ध ।
हीरालाल कहे आपने जी,
जीत नगारा दीघ ।।—पू०

(श्री जैन सुबोध हीरावली से)

नोटः—इस लावणी मे आचार्य श्री चौथमलजी म सा की स्वर्गारोहण तिथि वि स १९३८ पौष सुदी १० शुक्रवार बताई गई है जब कि प्रमाणित तिथि वि स १९१७ की कार्तिक शुक्ल अष्टमी है ।

परिशिष्ट-२

आचार्य श्री जवाहर के शब्दो मे हु. शि, उ.चो. श्री

"हमारी सम्प्रदाय के नायक, आचार विचार का पूरी तरह पालन करने वाले, साधु जीवन का उद्धार करने वाले, धुरधर आचार्य पूज्य श्री हुक्मीचदजी महाराज ने भी इस सवत्सरी पर्व को इसी तरह आराधना की थी । पूज्य श्री ने इक्कीस वर्ष तक बेले बेले का पारणा किया । वे सारे वर्ष भर एक ही पछेवडी से काम चलाते थे, चाहे वर्षा हो या शीत । वे तली हुई वस्तु

न खाते थे । केवल तेरह वस्तुओ के उपरान्त अन्य सब वस्तुओ के खाने का उनको त्याग था । मिष्टान्न खाने का भी उनको त्याग था । ऐसे उत्कृष्ट आचारवान् वे महापुरुष थे । वे पर निन्दा करना नही जानते थे । मुझे उन महापुरुष के साक्षात दर्शन करने का सद्भाग्य प्राप्त नही हुआ। मैने उनके सम्बन्ध मे पूज्य श्री चौथमलजी महाराज से सुना है और उन्होने भी अपने पूर्ववर्ती सतो से सुना था । वे कहते थे कि एक बार पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज जावद मे विराजमान थे । वे शौचनिवृत्ति के लिए वाहर जगल मे गये हुए थे । पीछे से एक साधु उनका दर्शन करने आया । पूज्य श्री के आने पर उनके किसी शिष्य ने कहा कि महाराज ! वह गेल्या (अर्ध विक्षिप्त) साधु आपके दर्शनार्थ आया था ।

यह सुनकर पूज्य श्री ने कहा कि ऐसा नही कहना चाहिये । कौन जानता है कि पहले उसकी मुक्ति होगी या मेरी । किसी व्यक्ति की वर्तमान मे हीन अवस्था देखकर उसका कभी अपमान नही करना चाहिये । किसी को हल्का बताना या कहना अनुचित है । माना कि इस वक्त वह गेल्या है, समझ कुछ कम है । किन्तु कौन कह सकता है कि भविष्य मे पुरुषार्थ करके वह हमारे से पहले ही मुक्त हो जाय । किसी के भविष्य का किसी को क्या पता । ज्ञानी जन किसी व्यक्ति का अपमान करना अनुचित मानते हैं, पूज्य श्री ने अपने शिष्य से कहा कि तुमने उसे गेल्या कहा इसका प्रायश्चित लो और अपनी आत्मा शुद्ध करो । कितनी विशालता थी उनमे ।

पूज्य श्री पहले कही का चातुर्मास नही स्वीकार करते थे । जहा उनकी इच्छा होती वहा जाकर चातुर्मास के लिए निवास कर देते थे । एक बार पूज्य श्री चातुर्मास करने की इच्छा से जोधपुर पधारे थे । सघ की विनती के विना स्वेच्छा से पूज्य श्री पधारे थे । जोधपुर मे विराजमान इतर सप्रदाय के साधु कहने लगे कि जहा ऐसे घोर तपस्वी और शुद्ध चरित्र सम्पन्न साधु महात्मा का चातुर्मास होने वाला हो वहा हमारी क्या पूछ होगी । अत हमे कही अन्यत्र जाकर चातुर्मास करना चाहिये । पूज्य श्री को इस वात का पता लग गया कि मेरे कारण अन्य सतो को कष्ट होता है, तुरन्त वहा से विहार कर दिया और फलोदी जाकर चातुर्मास किया । यह वात रामनाथजी मूथा से मालूम हुई है ।

ऐसे महान् आत्मा का हमारा सम्प्रदाय है । वे तो नि स्पृह थे । उनके मन मे चेले या सम्प्रदाय बढाने की तनिक भी इच्छा न थी । उनके पास जो चेले आये उनको उन्होने अपने गुरु आचार्य श्री की नेश्राय मे ही दीक्षित किये । अपना कोई चेला नही वनाया । फिर भी सच्चे त्यागी महात्मा की कीर्ति को कौन रोक सकता है । उनके नाम से सम्प्रदाय चली और चल रही है । मुझे इस सम्प्रदाय का साधु कहलाने मे वडा गौरव है ।

पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज के वाद पूज्य श्री शिवलालजी महाराज हुए । उन्होने इस सम्प्रदाय की वडी उन्नति की । मारवाडी लोग सारे भारतवर्ष मे फैले हुए हैं अत. उनके द्वारा सारे भारत मे उक्त दोनो आचार्य प्रसिद्ध हो गये ।

पूज्य श्री शिवलालजी महाराज के पश्चात् पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज हुए । वे

जोधपुर के वीसा ओसवाल थे । उन्होने दीक्षा दूसरी सम्प्रदाय मे अगीकार की थी किन्तु पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज की कठोर साधना से आकर्पित होकर इधर चले आये थे । उन्होने भी इस सवत्सरी पर्व को पूर्वाचार्यों की परिपाटी के अनुसार मनाया था । मैं भगवान् महावीर से लेकर आज तक की आचार्य परम्परा की पाटावली नही सुना रहा हू क्योकि इसके लिए विशेष समय अपेक्षित है । दोपहर को समय मिला तो अन्य सन्त पाटावली सुनायेंगे ।

चतुर्थ पाट पर पूज्य श्री चौथमलजी महाराज हुए । मैंने उदयसागरजी महाराज और चौथमलजी महाराज की सेवा की है । पूज्य श्री चौथमलजी महाराज की मुझ पर विशेष कृपा रही वे अनेक शास्त्र के ज्ञाता थे । उन्हे थोकडे भी वहुत याद थे । आठ पहर मे से छ पहर जागृत रहते थे ज्यादा नही सोते थे । केवल दो पहर नीद लेते थे । स्वाध्याय भी खूब करते थे । वे ऊनोदरी (अल्पाहार) करते थे, जिसके चिन्ह उनके पेट पर थे ।

पचम पाट पर पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज हुए । उनके गुणो का वर्णन मैं क्या करू । मेरे द्वारा उनके गुणगान करना छोटे मुख बडी बात होगी । आप लोगो मे अनेक व्यक्ति ऐसे होगे जिन्होने उनकी प्रत्यक्ष सेवा की है उनकी व्याख्यान धारा इस राजकोट शहर मे भी वहुत प्रवाहित हुई है । यहा के सघ के उद्यान को पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज ने वहुत सीचा है । मैं भी उनके साथ यहा चातुर्मास करना चाहता था किन्तु वहुत इच्छा होने पर भी न कर सका । आप लोग वडे भाग्यशाली हैं जिन्होने यहा भी उनकी सेवा की और अन्यत्र जाकर भी आपने उनकी सेवाए की हैं, यह उत्तम है, मगर वे जो वस्तु प्रदान कर गये उसे सुरक्षित रखना आपका कर्तव्य है । मैं भी उनकी देन को सुरक्षित रक्खू यह मेरा परम कर्तव्य है । यह न समझिये कि पूज्य श्री मौजूदा नही हैं । वे आज भी अनेको के हृदय मे विद्यमान हैं । उनके उपदेश ने वहुतो के धर्म की रक्षा की है ।



आचार्य श्रीमद् चौथमलजी म. सा.

जीवन-तथ्य

जन्म स्थान	पाली (राजस्थान)
दीक्षा स्थान	बूंदी (राजस्थान)
दीक्षा तिथि	वि स १९०९ चैत्र शुक्ला द्वादशी
युवाचार्य पद तिथि	वि स १९५४ मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी
आचार्य पद स्थान	रतलाम (मध्य प्रदेश)
आचार्य पद तिथि	वि स. १९५४ माघ शुक्ला दशमी
स्वर्गवास स्थान	रतलाम (मध्यप्रदेश)
स्वर्गवास तिथि	वि स १९५७ कार्तिक शुक्ला नवम

१ पाली मे जन्मे और बूंदी में दीक्षित हुए
२. उत्कृष्ट साधना के प्रतीक
३ सवत्सरी मनाने की विवादास्पद घटना और सुश्रावक मगन जी का सत्प्रयास
४ उत्तराधिकारी के रूप मे
५ मात्र तीन वर्ष के आचार्य काल मे भी चतुर्विध सघ का आन्तरिक विकास
६. अपने उत्तराधिकारी की घोषणा एवं महाप्रयाण
(परिशिष्ट स १।२)



सुरासुरेन्द्रदुर्जय कामविजेता

अद्भुत स्मृति के धारक

आचार्य

श्री श्रीलाल जी म. सा.

卐 हु शि उ चौ श्री ज ग ना ना 卐

श्री

सुरासुरेन्द्रदुर्जय कामविजेता अद्भुत स्मृति के धारक

आचार्य

श्री श्रीलालजी म.सा.

आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा.

आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा.

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	:	टोंक (राजस्थान)
जन्म तिथि	:	वि. स. १९२६ मार्गशीर्ष द्वादशी
पिता	:	श्री चुन्नीलालजी बम्ब
माता	:	श्रीमती चादकुवर बाई
दीक्षा स्थान		बनेडा (राजस्थान)
दीक्षा तिथि		वि. स १९४४ पौष कृष्णा सप्तमी
युवाचार्य पद स्थान	:	रतलाम (म. प्र.)
युवाचार्य पद तिथि	:	वि. स १९५७ कार्तिक शुक्ला द्वितीया
आचार्य पद स्थान	:	रतलाम (मध्य प्रदेश)
आचार्य पद तिथि	:	वि. स १९५७ कार्तिक शुक्ला नवमी
स्वर्गवास स्थान	:	जतारण (राजस्थान)
स्वर्गवास तिथि		वि. स. १९७७ आषाढ शुक्ला तृतीया

आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा.

इस ससार मे सभी जीव सुख चाहते हैं, दुःख कोई नही चाहता। लेकिन यहा पर एक जीव ही नही रहता है—विभिन्न इन्द्रियों के तथा विभिन्न सज्ञाओ वाले अनन्तानन्त जीव हैं कई जीव अपनी रक्षा कर सकते हैं तो कई जीव आक्रामक स्वभाव के हो कर दूसरो को दुःख भी देते हैं, परन्तु कई जीव इतने दुर्बल और नगण्य शरीरधारी होते हैं कि उनकी सुरक्षा के लिए समर्थ जीवो की सचेष्टता उत्पन्न करनी होती है। सभी जीव अपने पूर्वोपार्जित कार्यों के अनुसार सुख दुःख पाते हैं किंतु नवीन क्रियाओ से नवीन कर्मबंध भी होता रहता है, अतः नवीन क्रियाओ मे दया और करुणा का समावेश किया जाय, विवेक और जागरूकता लाई जाय तथा कर्तव्यनिष्ठा का एक सामाजिक क्रम बनाया जाय तो एक दूसरे जीवो के पारस्परिक व्यवहार मे सुख को बढाया जा सकता है एव दुःख को घटाया जा सकता है। इसलिए भगवान् महावीर ने उद्घोष किया जीओ और जीने दो। यह जीवदया का मूलमत्र बन गया।

आप इस तरह जीओ कि अन्य जीवो के हितो पर कम से कम चोट पहुचाओ और दूसरे जीवो को इस तरह जीने दो कि वे अपने-अपने दायरे मे स्वतत्रता का आनद उठाते हुए अपना जीवन यापन कर सकें, यह तो हुई बुनियादी बात। अब जीवदया की बात यह होगी कि आप अपनी आवश्यकताओ को कम कर अपना जितना सामर्थ्य है, उसका प्रयोग अधिकाधिक दुःखी जीवो को सुखी बनाने मे करें। ऐसा सत्प्रयास स्वयं करने के सिवाय दूसरे जीवो को भी अधिकाधिक रूप से ऐसा सत्प्रयास करते रहने की प्रेरणा दें। जब कोई आत्मा अपने चिंतन एव कृति के स्वरूप का विकास कर ले तथा पूर्ण रूप से जीवदयाधारी बन जाय तो वह आत्मा साधु बन जाती है। साधु सभी प्रकार के जीवो का रक्षक होता है—छः काया के जीवो का पूर्ण रक्षक। सभी प्रकार के जीवो का समावेश छः काया के वर्गीकरण मे हो जाता है तथा साधु अपने लिए कही भी छ. काया के जीवो का हनन करता नही, करवाता नही तथा करने वाले का अनुमोदन भी नही करता। इसके अतिरिक्त छः काया के जीवो की रक्षा के लिए अपनी मर्यादाओ मे रहता हुआ उपदेश भी देता है।

हमारे चरित्र नायक **आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा.** अपने युग मे जीवदया के महान प्रेरक रहे हैं। श्रमण परम्परा के अनुसार वे स्वय तो छः काया के जीवो के पूर्ण रक्षक वे ही हैं, किंतु आपश्री ने जिस प्रभावकारी ढग से जीवदया के कार्यो को सारी भारत भूमि पर प्रसारित किया, वह अपने आपमे एक अति विशिष्ट कार्य रहा है। जैनेतर समाज मे भी हिंसक कार्यों को छुडवा कर आपश्री ने अपने प्रभावपूर्ण प्रवचनो से बड़े बडे राजा महाराजाओ, जागीरदारो आदि को भी जीवदया के कारुणिक कार्य मे प्रवृत्त बनाया। "जीओ और जीने दो" के मर्म को आपश्री ने लाखो लोगो तक पहुचाया।

सुरासुरेन्द्रदुर्जय कामविजेता

अद्भुत स्मृति के धारक

आचार्य

श्री श्रीलाल जी म. सा.

होनहार विरवान के, होत चीकने पात :

और श्री के लाड़ले लाल

राजस्थान प्रान्त मे बनास नदी के तट पर टौंक नामक नगर प्राचीन काल से बसा हुआ है। नये-नये भवनो तथा नई-नई बस्तियो का निर्माण हो जाने से नगर के दो विभाग हो गये जो नये व पुराने टौंक के नाम से जाने ,जाने लगे। पर्वतीय उपत्यकाओ के बीच मे बसा होने से टौंक की प्राकृतिक रमणीयता दर्शनीय है।

पुराने टौंक मे अनेक सद्गृहस्थो के बीच श्री चुन्नीलाल जी बम्ब निवास करते थे। पूर्ण प्रामाणिकता के साथ व्यवसाय करने से नगर मे आपकी बहुत प्रतिष्ठा थी। व्यवसाय के अतिरिक्त आपके पास पूर्वजो की अचल सम्पति मे दो-दो, तीन-तीन मजिल की तीन हवेलिया व चौदह दुकानें भी थी। आपका विवाह जयपुर स्टेट मे सवाईमाधोपुर के निवासी सुश्रावक श्री सुरजमल की सुपुत्री बाई चादकवर से हुआ था। इन्हे वश परम्परा के धार्मिक संस्कार प्राप्त थे। परिणाम स्वरूप विवाह के बाद भी सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाओ मे आपकी विशेष रुचि रहती थी। इसके अलावा भी शान्त-स्वभाव, चतुराई एव गुप्त दान की प्रवृत्ति के कारण श्रीमती चादकवर बाई का परिवार मे बहुत आदर-मान था। आहार बहराते समय कदाचित् घर "असूझता" (साधु मर्यादा के विरुद्ध आचरण हो जाने से गोचरी लेने के अयोग्य) हो जाता तो उस दिन वह स्वय भी आहार का त्याग कर लेती थी। इस प्रकार पत्नी और पति मे धर्म भावनाओ की समरसता होने के कारण उनका दाम्पत्य जीवन बडा सुखी व सन्तोषी था। हमारे चरित्रनायक के जन्म के पूर्व इस दम्पत्ति के एक पुत्री मागीबाई तथा एक पुत्र नाथूलाल जी थे।

होनहार विरवान के होत चीकने पात। इस कहावत के अनुसार हमारे चरित्रनायक

के गर्भस्थ होने के समय लाक्षणिकता के दृश्य उपस्थित हुए थे । एक वार श्रीमती चाद कवर वाई चन्द्रमा की धवल चादनी मे सो रही थी । उस समय उन्होने स्वप्न मे देखा कि एक तेजोदीप्त कातिवान प्रकाश का गोला उनकी तरफ चला आ रहा है । कुछ समय मे वह एकदम उनके पास पहुच गया । ज्यो–ज्यो वह पास आता जा रहा था, त्यो–त्यो उसका प्रकाश वटता जाता था । गोले के विल्कुल पास आ जाने पर उन्हे ऐसा आभास हुआ कि उस गोले के वीच मे स्थित एकमूर्ति उनसे कुछ कह रही है, किन्तु गोले के दमकते–चमकते प्रकाश को सहन न कर पाने के कारण वे सभ्रात हो उठी जिससे उनकी नीद खुल गई । इसी सभ्राति के कारण वे यह नही जान सकी कि गोले के वीच मे स्थित मूर्ति उनसे क्या कह रही थी । इस स्वप्न के फल स्वरूप उनकी कुक्षी से पवित्रात्मा, वीरात्मा, महात्मा धर्मात्मा तथा अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करने वाले सर्वागो से सम्पन्न प्रकाश पुज पुत्र रत्न का जन्म हुआ ।

ऐसे पुत्र रत्न की प्राप्ति से माता–पिता को ही नही, समस्त परिवारजनो को अनिर्वचनीय सुख अनुभूति हुई । सभी प्रकार की श्री (लक्ष्मी–शोभा) से सम्पन्न होने के कारण श्री के लाडले लाल का नाम श्रीलाल रखा गया ।उनका जन्मदिन आषाढ कृष्णा द्वादशी वि स, १९२६ था ।

विलक्षरण बाल क्रीड़ा तथा टेकरी पर चिंतन प्रवाह .

वालक श्री श्रीलाल की शारीरिक सम्पदा निरन्तर निखरने लगी । वालक चलने लगा और तुतलाती भाषा मे वोलने लगा तव उनकी माता वालक को स्थानक मे विदुषी महासतिया जी श्री मोता जी व गेंदा जी म सा के पास ले जाने लगी । उधर पिता भी सन्तो के दर्शन करने जाते तो वालक श्रीलाल को अपने साथ ले जाते ।

प्रारम्भ से ही इस सुसगति के कारण वालक का जीवन पवित्र सस्कारो से अनुरंजित होने लगा । इससे वाल क्रीडाए भी विलक्षण स्वरूप मे होने लगी । वालक श्रीलाल खेल–खेल मे कपड़े की झोली वनाता, उसमे पात्रो की तरह मिट्टी की कुल्हडिया जमाता, मुह पर वस्त्र वाध लेता और कागज हाथ मे लेकर टीले पर वैठ प्रवचन देने का दृश्य उपस्थित करता । ऐसी वाल क्रीडाओ को देखकर एक दिन एक सुज्ञ भाई ने वालक से विनोद करते हुए पूछा—"श्री जी, लाडी परणोगा के दीक्षा लोगा ?" उस छोटे से वालक को न लाडी की जानकारी थी और न दीक्षा की । फिर भी अनायास उसके मुह से यही निकला कि मैं तो दीक्षा लूगा । ये वाल्यकाल के सस्कार उसके मन से ऐसे वन्धे कि जो तपते निखरते हुए आदि से अन्त तक आपश्री के जीवन मे शोभायमान होते ही रहे ।

छ वर्ष से भी कम अवस्था मे वालक श्रीलाल ने अपनी माता से सुनकर सामायिक प्रतिक्रमण के पाठ कठस्थ कर लिये थे । उन्हे व्यावहारिक अध्ययन के लिए सरकारी व प्राइवेट दोनो तरह की स्कूलो मे प्रवेश दिलाया गया, जहा हिन्दी व उर्दू के अभ्यास के साथ अन्य विषयो का आपको ज्ञान कराया गया । दोनो ही स्कूलो मे आपश्री पहले नम्वर पर पास होते थे। सरल स्वभावी तथा प्रामाणिक सत्यवक्ता होने के कारण छात्रगण ही नही, अध्यापक वर्ग भी आपसे वहुत खुश रहता था ।

आप श्री को इस अध्ययन काल मे श्री पन्नालाल जी म सा. का सान्निध्य भी मिलता रहा। आपने उनसे पच्चीस बोल, नव तत्त्व, लघु दण्डक, गतागत, गुणस्थान क्रमारोह आदि अनेक तात्विक विषयो के साथ साधु–प्रतिक्रमण भी कठस्थ कर लिया था। आपके इस अध्ययन मे सहाध्यायी मित्र के रूप मे श्री बच्छराज जी पोरवाल थे। वे कहते थे कि श्रीलाल जी की स्मृति इतनी प्रखर थी कि इधर मुनिराज पाठ देते और उधर वह उन्हे कठस्थ हो जाता, जबकि वे उस पाठ को याद करने के लिए बार–बार रटा करते थे।

उस समय बाल विवाहो का बहुत ज्यादा चलन था अत हमारे चरित्रनायक का सम्बन्ध मात्र छ वर्ष की आयु के भाद्रपद शुक्ला पचमी वि स १९३२ को दूनी (जयपुर) निवासी श्री बालाबक्ष जी की सुपुत्री बाई मानकुवर के साथ करा दिया गया तथा वि स १९३६ मे विधिवत् विवाह। जब आप ससुराल मे पहुचे तो पता चला कि पूज्य श्री पन्नालाल जी म सा तथा गम्भीरमल जी म सा दूनी मे पधारे हुए हैं। यह सूचना मिलते ही आप श्री स्थानक मे उनके दर्शन को पधारे। मुनि श्री ने ससार की असारता का प्रतिबोध दिया जिसे सुनकर आपके बाल मन मे विरक्ति के बीज गिर गये। विवाह समारोह मे जबकि परिवार जन बडे उत्साह से जुटे हुए थे, स्वय दूल्हा उस समारोह के प्रति उदासीन सा हो गया। उस समय मे आप ग्यारहवें वर्ष मे प्रवेश कर चुके थे और मानकुंवर बाई की आयु नौ वर्ष की हुई थी। परिपक्व आयु न होने के कारण दुल्हिन को पीहर मे ही रखा गया, लेकिन उधर श्रीलाल जी का विराग–भाव निरन्तर विकास करने मे लगा रहा था।

विराग भाव के ऐसे विकास ने श्रीलाल जी को घर से पर्वतीय टेकरी पर पहुचा दिया जो टौंक की प्राकृतिक छटा से युक्त मशहूर टेकरी थी। व्यापारादि मे उनका मन नही लगता था। सन्तो के पास ज्ञानाध्ययन करते अथवा उस टेकरी के एकान्त वातावरण मे पहुच जाते और गम्भीर चिन्तन मे डूबे घन्टो वही बैठे रहते। उनके चितन का प्रवाह जैसे कभी न खतम होने वाले प्रवाह जैसा दिखाई देता।

वैराग्य का वेग अवरोध मोचकः

बारह वर्ष की अवस्था मे आप एक बार गम्भीरमल जी म सा का व्याख्यान सामायिक व्रत धारण करके एकचित हो सुन रहे थे, तब बीकानेर निवासी श्री चुन्नीलाल जी डागा भी आकर उनके पास बैठ गये। वे सामुद्रिक एव ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाता थे। वे उसी दृष्टि से श्रीलाल जी को देखते रहे। व्याख्यान समाप्त होने पर वे दुकान पर पहुचे और श्रीलाल जी के काका हीरालाल जी से कहने लगे—श्रीलाल व्याख्यान मे मेरे पास ही बैठा था और उसके शारीरिक लक्षणो को देखकर मैं कह सकता हू कि वह गुदडी का लाल है। तुम्हारे भतीजा आगे जाकर कोई महान् पुरुष बनने वाला है। मेरे विचार से वह आपके घर मे अधिक दिनो तक रहने वाला नही है। श्री हीरालाल जी यह बात सुनकर स्तब्ध रह गये।

जब यह बात आप श्री की माता, भ्राता आदि ने सुनी तो वे चिन्तित हो उठे,

क्योकि श्रीलाल जी की तत्त्व चिन्तन मे जो गहन तल्लीनता देख रहे थे, उसके सन्दर्भ मे यह भविष्यवाणी उन्हे सच लग रही थी । फिर भी आशा कर रहे थे कि वहू के पीहर से आ जाने पर पुत्र के वर्तमान विचारो मे परिवर्तन आ जायेगा । रागपाश मे फसे प्राणियो को आशा ही प्राणदायिनी बूटी होती है ।

वि स १९३९ मे श्री जी की धर्मपत्नी मानकु वर वाई को गौना करा कर टौंक ले आये । उस समय उनकी आयु १२-१३ वर्ष की हो गई थी । वहू के आने के वाद आप श्री की प्रवृत्तियो मे कोई अन्तर नही आया । चिन्तन की तल्लीनता तथा सन्तो का ससर्ग उसी प्रकार चलता रहा । एक वार व्याख्यान मे उन्होने ब्रह्मचर्य के विषय के सन्दर्भ मे जम्बू कुमार, विजय सेठ आदि के दृष्टात सुने तो वे उनको इतने भाये कि व्याख्यान के वाद विना भोजन किये ही अपनी प्रिय टेकरी पर पहुच गये और गहन चिंतन करने लगे। वे भी उन्ही की तरह ब्रह्मचर्य की सफल साधना क्यो नही कर सकते हैं ? फिर उन्हे जो कहा जा रहा है कि एक छोटी वालवय की सुकुमार कन्या का भव विगाडना महापाप है—क्या इन दृष्टातो के अनुसार सही नही है ? लम्वे चिंतन के वाद वे इस निर्णय पर पहुच गये कि वे ब्रह्मचर्य व्रत का सर्वांशत पालन करेंगे ।

इधर तो उन्होने यह निश्चय किया और उधर अपनी सासूजी के सहयोग से धर्मपत्नी अपने पति की प्रवृत्तियो को वदलने की चेष्टा मे लगी हुई थी । उन्होने अपनी पत्नी के साथ एकान्त मे वार्तालाप तक वन्द कर दिया । तव एक दिन जव वे अपनी हवेली की तीसरी मजिल पर वैठे जम्बू चरित्र ही पढ रहे थे तो उनकी पत्नी ऊपर चली गई तथा सासारिक कार्यो मे पूरी तरह मे प्रवृत्त होने की याचना करने लगी । आप श्री को तो एकात मे स्त्री के साथ वार्तालाप करना भी अभीष्ट नही था । अत वे नीचे भागने को तत्पर हो गये । इस पर श्रीमती मानकु वर वाई सीढिया रोककर नाल मे खडी हो गयी । तव आपश्री दूसरी तरफ की चादनी मे नीचे की मजिल पर कूद गये । ऊचाई ज्यादा थी अत उनके पैरो मे सख्त चोट लगी । परिवार के सभी लोग इकट्ठे हो गये । मा ने समझाया तुम्हारी वहू आ गई है । अव तुम वच्चे नही हो जो ऐसी हरकत करते हो ? इसका उन्होने यह उत्तर दिया कि मैं ससार की ज्वाला मे जलने की वजाय मर जाना अधिक पसन्द करता हू ।

आप श्री के वैराग्य का वेग इस प्रकार उफनती हुई वरसाती नदी के वेग के समान प्रवल वन रहा था । उन्होने अपनी माता से तव विनयपूर्वक दीक्षा के लिए आज्ञा मागी । माता तो भौंचक्की रह गयी और भाति-भाति से उन्हे ससार मे रह कर धर्म-ध्यान करने की समझाईश करने लगी । वे विलकुल नही माने तो वात सारे परिवार मे फैल गई तथा मामा ने साधुओ के पास जाने पर भी पावन्दी लगा दी । इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि वे चुपके से रतलाम मे विराज रहे आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज के दर्शनार्थ निकल गये । रतलाम से जावरा पहुचे जहा मुनिश्री मगनलाल जी म सा वडी ही आकर्षक शैली मे प्रवचन फरमाते थे । फिर वापस टौंक लौटे, किन्तु हवेली मे अकेले ही रहते और धर्मानुष्ठानो मे ही अपना समय व्यतीत करते, फिर भी उन्हे कारागृह जैसा लगता ।

दीक्षा की आज्ञा मागते–मागते वे थक कर हार गये और जैन मर्यादानुसार जब तक दीक्षार्थी के अभिभावक आज्ञा न दे तब तक कोई सन्त मुनिराज उसकी दीक्षा नही देते हैं । इस परिस्थिति मे उन्होने गुपचुप बहुत दूर निकल जाने का निश्चय किया और गुजरात–काठियावाड की तरफ प्रस्थान कर दिया । कई सन्तो से उधर उनका समागम हुआ और वहा से वे नाथद्वारा आये एव चौथमल जी म सा के पास ज्ञानाभ्यास करने लगे । परिवार वाले चारो तरफ गहरी खोज कर रहे थे, तब उनकी नाथद्वारा मे उपस्थिति की खबर लगते ही, वहा पहुचे तथा उन्हे पुन टौंक ले आये । उन्हे एक हवेली मे बन्द कर दिया गया और पूरी कठोर निगरानी भी रखी जाने लगी ।

ऐसी सकटमयी दशा मे दो वर्ष बीत गये, पर उनकी दीक्षा की आज्ञा देने की कोई तत्परता नही बनी । एक बार वहा से कडकती ठड मे मात्र एक चादर डाल कर भागे और शाहजहापुर के पास कादेडा गाव तक पहुचे । वहा सर्दी के मारे व्याधिग्रस्त हो गये । इस प्रकार विघ्न पर विघ्न आते गये और माता ने हठपूर्वक बहुत समझाया लेकिन आप श्री अपने दृढ निश्चय से टस से मस नही हुए । वे फिर एक बार चुपचाप टौंक से निकल गये और रानीपुर (बूदी स्टेट) पहुच गये, जहा स्वय साधु वेश धारण कर लिया । खबर लगने पर परिवार वाले वहा पहुचे और (टौंक) चलने का आग्रह करने लगे । यह भी आश्वासन दिया गया कि वहा आज्ञा दे दी जायेगी । लेकिन टौक पहुचने पर उनके खिलाफ निकलवाये गये वारन्ट की तामील कराई गई तो वे सूबा साहब ऑफिस के चौक मे एक पैर पर खडे रह कर सत्याग्रह कर बैठे । अन्न जल भी त्याग दिया । आखिर सत्याग्रह रग लाया और उन्हे दीक्षा की आज्ञा मिल गया । वैराग्य का वेग बार–बार की बाधाओ को तोडकर अन्ततोगत्वा सफल बन गई ।

दीक्षा प्रभाव की अतिशयता एव आचार्य पदारोहण ·

वि स १९४५ की पौष कृष्णा ७ के दिन आप श्री ने पूज्य श्री अनूपचन्द जी म सा की सम्प्रदाय के श्री किशनलाल जी म सा के पास विधिपूर्वक भागवती दीक्षा ग्रहण की । आपके साथ आपके साथी गूजरमल जी ने भी दीक्षा ली थी जो आपके शिष्य रहना चाहते थे किन्तु आपने उन्हे बलदेव जी म सा की नेश्राय मे रहने का निर्देश दे दिया । आपकी इच्छा के अनुसार आपके गुरुदेव टौंक पधारे तथा वि स १९४६ का चातुर्मास झालरापाटन मे किया जहा आपके गुरुदेव का स्वर्गवास हो गया ।

शुद्धाचार की दृष्टि से पहले ही आपका विचार पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा की सम्प्रदाय मे दीक्षित होने का था किन्तु परिवारवालो ने श्री किशनलाल जी म सा के पास ही दीक्षित होने की शर्त पर आज्ञा प्रदान की थी । अब आप श्री का विचार उसी सम्प्रदाय मे सम्मिलित होने का बन गया । उस समय आचार्य श्री चौथमल जी म सा कानोड विराजते थे अत आपश्री रामपुरा से विहार करके कानोड पहुचे । वहा विचार–विमर्श हुआ । फिर डूगले मे आप श्री को पूज्य श्री चौथमल जी म सा ने अपने शिष्य श्री वृद्धिचन्द जी म. सा के शिष्य बना कर वि स १९४७ की मार्गशीर्ष शुक्ला १ को अपनी सम्प्रदाय मे ले लिया फिर आप श्री

अपने गुरुदेव पूज्य श्री चौथमल जी म सा की आज्ञा मे विचरण करने लगे ।

अव आप श्री की आत्मशक्ति के विकास का नया अध्याय प्रारम्भ हुआ । ज्ञानी गुरु के समागम से सूत्र–ज्ञान मे आशातीत उन्नति हुई तो निरतिचार चारित्र के पालन से वे गुरु के प्रीतिपात्र होकर सघ क्षेत्रो मे विख्यात होने लगे । वि स १९४९ का चातुर्मास आपको गुरुवर श्री चौथमल जी म सा के साथ ही कानोड मे करने का अवसर मिला ।

इस चातुर्मास मे जिस मकान मे सन्त गण ठहरे हुए थे, वहा एक विकराल सर्प रहता था । कोई भी ऐसा दिन नही निकलता जिस दिन वह दिखाई नही देता हो । कभी पात्र या रजोहरण से टकराता तो कभी रात मे पावो के वीच आ जाता । ऐसा लगता था जैसे कि साप साधु जी से निर्भय हो गया था । श्रावको ने मकान वदलने का आग्रह किया, किन्तु आप श्री ने यही कहा कि यह साप तो सत्सग करने आया है और वास्तव मे कोई उपसर्ग नही हुआ ।

वि स १९५० का आपका चातुर्मास भी गुरुदेव के साथ ही जावद मे हुआ, जहा आप श्री के सद्‌वोध मे जैन और अजैन लोग अतीव हर्षित हुए एव ज्ञानवृद्धि करके कर्तव्यनिष्ठ वने । फिर वि स १९५१ (निम्वाहेडा) व १९५२ (छोटी सादडी) के चातुर्मासो के वाद तो आपके अपरिमित ज्ञान, निर्मल चारित्र तथा वाक्‌पटुता की ख्याति दूर–दूर तक पहुची और-आपके असाधारण गुणो से मुग्ध होकर देश–देशातरो के लोग आपकी मुक्त कठ से प्रशसा करने लगे । आपके प्रभाव की अतिशयता चारो ओर फैलने लगी ।

आप श्री का वि स १९५३ का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ, जहा आपके व्याख्यानो मे हिन्दू, मुसलमान आदि हजारो लोग आने लगे । कई मन्दिरमार्गी भाइयो ने आपमे सम्यक्त्व ग्रहण किया । उस चातुर्मास मे तपश्चरण और त्याग प्रत्याख्यान वहुत हुआ, कई श्रावक श्राविकाओ ने वारह व्रत अगीकार किये तो कई दुर्व्यसनी लोगो ने माँस भक्षण, मदिरा पान तथा शिकार आदि न करने की प्रतिज्ञाए ली । चातुर्मास मे आमेट के रावत जी ने भी आपके प्रवचन सुने तथा प्रभावित होकर कई जगह वलिदान वन्द कराये । चातुर्मास पूर्ण कर जव आप श्री का विहार हुआ तो आयड गाव मे दीवान श्री वलवन्तसिंह जी कोठारी ने आपके दर्शन किये तथा धर्मचर्चा करके प्रसन्नता प्रकट की । दूसरे दिन मेहता जी गोविन्दसिंह जी को साथ लेकर दीवान साहव पुन आये तथा उपदेशामृत से इतने प्रभावित हुए कि वे आप श्री के श्रद्धालु भक्त वन गये ।

ग्रामानुग्राम विचरण करते एव मेवाड तथा मालव भूमि को पावन वनाते हुए पूज्य श्री रतलाम पहुचे जहा वि. स १९५४ की माघ शुक्ला दशमी को आचार्य श्री उदयसागर जी म सा का स्वर्गवास हुआ तथा फाल्गुन शुक्ला पचमी को गृहस्थवस्था की आप श्री की धर्मपत्नी श्रीमती मानकुवर ने भी भागवती दीक्षा ग्रहण कर ली । (इसका वर्णन उदयचन्द्र चन्द्रिका लेखक वैद्य श्री मथुरालाल जी) मे भी आया है ।

आचार्य श्री उदयसागर जी म सा के स्वर्गवास के पश्चात् आचार्य श्री चौथमल जी म. सा पट्टासीन हुए किन्तु शारीरिक क्षीणता के कारण उन्होंने आप पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा.

की ज्ञान गरिमा एव आदर्श सेवा सुश्रूषा आदि अनेकानेक सद्गुणो से प्रभावित होकर वि स १९५७ की कार्तिक शुक्ला द्वितीया को आप श्री को अपना युवराज घोषित कर दिया । किन्तु आचार्य श्री का स्वास्थ्य गिरता ही गया और कार्तिक शुक्ला अष्टमी को उनका स्वर्गवास हो गया । तब कार्तिक शुक्ला नवमी को चारो ओर से आये श्रावक–श्राविकाओ के समूह के बीच रतलाम सघ ने समारोह पूर्वक घोषणा की कि आज से पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा पदारूढ हुए है अत अब सम्पूर्ण चतुर्विध सघ को आप श्री की आज्ञा मे चलना है ।

पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा को आचार्य पद की महत्ता तथा उसके दायित्व का पूरा ज्ञान था तथा सम्प्रदाय को समुन्नत बनाने की उनकी अभिलाषा थी इसलिये वे आचार्य पद प्राप्त होते ही अति सावधानी पूर्वक प्रमाद को त्याग, पहले से भी विशेष पुरुषार्थ करने लगे ।

एक-एक चातुर्मास भी धर्मोपकार का इतिहास :

उदयपुर चातुर्मास पूर्ण कर भीलवाडा आप श्री का पधारना हुआ जहा हाकिम श्री गोविन्दसिंह जी मेहता ने भावपूर्ण भक्ति की तथा जीव दया के अनेक कार्य किये । यही एक सद्गृहस्थ श्री किरोडीमल जी सुराणा ने आप श्री की सेवा मे भागवती दीक्षा अगीकार की । भीलवाडा से नागौर व नागौर से आप श्री डेह पधारे जहा के ठाकुर मालूसिह जी राठौड ने आपके उपदेशामृत का पान करके मास, मदिरा के अलावा रात्रि भोजन तक का भी त्याग किया एव ठाकुर साहब की नवकार मन्त्र पर अतुल श्रद्धा हो गई, जो प्रतिदिन छ सामायिक तथा महीने के छ पौषध करने लगे । यह सब प्रताप पार्श्वमणि समान आचार्य श्री के सत्सग एव प्रतिबोध का था ।

वि स का १९५७ आप श्री का चातुर्मास जोधपुर मे हुआ जहा ४०–५० वैष्णव धर्मानुयायी जैन धर्मानुयायी बन गये जिनमे श्री गुलाबदास जी अग्रवाल तो व्रतधारी श्रावक बने । जोधपुर चातुर्मास के बाद विहार करते हुए आप श्री जावद पधारे, जहा दो वैरागियो ने आपके समीप दीक्षा ग्रहण की । वि स १९५८ का चातुर्मास बीकानेर हुआ, जहा धर्म का अपूर्व उद्योत हुआ । आपकी प्रभावोत्पादिका वाणी ने न केवल जैन समाज मे इस सम्प्रदाय के विरोधियो के हृदय ही बदले, बल्कि कई अन्यमती भी आपके भक्त बन गये । एक बख्तावर नाम की वेश्या ने तो वेश्यावृत्ति का ही त्याग करके श्राविका वृत्ति धारण कर ली । वि स १९५९ का चातुर्मास पुन उदयपुर मे हुआ, जिसमे अभूतपूर्व तपश्चरण हुआ । एक आसन पर खडे रह कर कई भाइयो ने १३१ सामायिकें की व कई पचरगिया हुयी कई खटीको (कसाइयो) को प्रतिबोध दे कर जीव हिंसा छुडाई गई । इन खटीको मे से काफी लोग व्यापार करने लगे हैं तथा निर्व्यसनी जीवन व्यतीत कर रहे है । आचार्य श्री स्वय कई बार गोचरी के लिए निकलते तथा गरीबो के यहा से मक्की व जौ की रूखी रोटिया लाते तो दोनो तरफ आत्मिक आह्लाद का विस्तार होता था । अमीर, उमराव, ऑफिसर तथा राज्य कर्मचारी बहुत बडी सख्या मे नियमित रूप मे व्याख्यान श्रवण करते थे । महारानी जी के ज्यूडिसियल ऑफिसर लाला केशरीमल जी ने जैन धर्म स्वीकार किया तथा जैन सूत्रो का अध्ययन करके पारमार्थिक जीवन व्यतीत करने का सकल्प लिया ।

किशनगढ महाराजा के एक सम्वन्धी श्री सरदारसिंह राठौड़ भी आप श्री से जीवदया का प्रतिवोध पाकर आपके भक्त वन गये जिन्होने १७ वर्ष तक आप श्री की सेवा की। एक वडे वकील हीरालाल जी ताकडिया व जावरा के हीराचन्द जी का दीक्षा समारोह भी यहा सम्पन्न हुआ जिसमे श्री महाराणा साहव ने हाथी, पालखी, सारा लवाजमा भेजा तथा पछेवडिया ओढाई।

उदयपुर से विहार करके ऊटाला, (वल्लभनगर) कपासन आदि कई कस्वो मे सैंकडो वकरो आदि की जीवन रक्षा के लिए आपश्री ने प्रेरणा दी। कानोड मे रावजी ने सभी नदी, नालो, तालावो मे मच्छी मारने पर प्रतिवन्ध लगाने का पट्टा जारी किया। कानोड से आपका चित्तौड होकर माडलगढ पधारना हुआ। यहा से आपको कोटा पधारना था। कोटा पहुचने के दो मार्ग थे—पहला सीधा था सिगोली होकर लेकिन मार्ग मे कठिन जगलो व हिसक जानवरो के उपसर्ग की आशका थी किन्तु दूसरा विना खतरे का कुछ लम्वा मार्ग था। लोगो द्वारा दूसरे रास्ते से पधारने के निवेदन को आपने नही माना तथा निर्भय होकर पहले रास्ते से ही आप पधारे। रास्ता भूल जाने से जगल मे मुनिवृन्द भटक गये जहा हिसक जानवरो की डरावनी आवाजे गूज रही थी। आपश्री ने कहा कि साधुओ को कैसा भय ? आहार भी नही मिला तथा कई उपसर्ग आये मुनिवृन्द आगे वढता ही रहा। ऐसा था आप श्री का भयमुक्त विचरण !

जन्मभूमि मे स्मरणीय चातुर्मास .

कोटा से विहार करते हुए आप श्री अपनी जन्म भूमि टोंक पधारे तथा वि स १९६० का चातुर्मास वही किया जो धर्म की अपूर्व जागृति की दृष्टि से सदा स्मरणीय वन गया। पिछले प्रत्येक चातुर्मास मे धर्मोपकार का जो नया इतिहास वनता आ रहा था, उस शृखला मे उल्लेखनीय अध्याय टौक मे स्थापित किया।

इस चातुर्मास मे अजमेर के दीवान वहादुर सेठ उम्मेदमल जी लोढा आचार्य श्री के दर्शनार्थ आये तथा वे टौक के नवाव साहव से भी मिले। नवाव साहव भी आपके दर्शनार्थ आये तथा आप श्री की अनुपम वाणी सुनकर एव यह जानकर कि यह अमूल्य रत्न उन्ही की राजधानी मे जन्मा हुआ है वहुत ही खुश हुए। एक अधिकारी खान मोहम्मद हनूस तो इतने प्रभावित हुए कि उन्होने आजीवन मास न खाने व शिकार न खेलने की प्रतिज्ञा ली। एक कायस्थ गृहस्थ लाला वद्रीनाथ जी ने भी आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। सरकारी मेम्वर दामोदरदास जी शर्मा नियमित पूरा व्याख्यान दत्तचित्त होकर प्रतिदिन सुनते थे तो एक वैष्णव सज्जन श्री सदान्लाल जी अग्रवाल ने आप श्री से सम्यक्त्व ग्रहण कर त्याग पच्चक्खाण किये। टौक के सभी ५० घरो मे से तेलियो ने चौमासे मे घाणी वन्द रखने का सामूहिक प्रस्ताव पास किया। इस चातुर्मास मे जैन-शासन की वहुत प्रभावना हुई। जैनो के सिवाय हिन्दुओ, मुसलमानो तथा राजाओ-जागीरदारो ने आप श्री के प्रवचनो से प्रेरित होकर विविध त्याग-प्रत्याख्यान किये। लोगो मे आचार्य श्री के लिए सराहना के स्वर फूटते रहते थे और गौरव का अनुभव भी करते थे कि यह टौक की श्री का लाल है।

एक व्यापारी वनिये का पुत्र परमार्थ मे अपनी आत्म-शक्ति का कितना ऊचा विकास

साध सकता है—इसके प्रत्यक्ष उदाहरण आचार्य श्री की ओर इगित करके प्रबुद्ध जन कहा करते टेकरी पर अकेले घूमते हुए श्री श्रीलाल जी मे और इस समय मे पूज्य श्री श्रीलाल जी मे कीडी व भु गर जैसा अन्तर आ गया है । इस समय मे वडे–वडे राजा महाराजा नवाब रसिया टेकरी के प्यारे लाल के पैरो मे मस्तक भुकाते हैं ।

आचार्य श्री उदयसागर जी म सा के समय से जावद वाले सन्त अलग हो गये थे जिन्हे पुन मिलाने के आचार्य श्री ने बहुत उदार प्रयत्न किये जिसके फलस्वरूप देवीलाल जी म सा आपसे मिले तथा भूतकाल की बातो को भूलकर शुद्धाचारी समाचारी का सकल्प भी उन्होने लिया और सहकार के साथ चलने का वादा किया । आचार्य श्री के कुछ सन्त विना प्रायश्चित्त दिये जावरा वाले सन्तो को शामिल करने के पक्ष मे नही थे जिससे अव यह मामला सुलझ कर भी पूरा नही सुलझा ।

मरुभूमि, मेवाड एवं मालव धरा पर धर्मानन्द की लहर :

वि स १९६२ का चातुर्मास पूज्य श्री ने जोधपुर मे किया । इस वार यहा हजारो स्वधर्मियो, अन्यधर्मियो, हिन्दुओ, मुसलमानो आदि ने आप श्री के वचनामृत का पान करके त्याग, प्रत्याख्यान, तपश्चर्या तथा सवरकरणी द्वारा आत्म–साधन किया । कई मासाहारी लोगो ने मास भक्षण तथा मदिरा पान का त्याग किया तथा हजारो पशुओ को अभयदान दिया गया ।

चातुर्मास पूर्ण करके मरुभूमि के अन्य क्षेत्रो को पावन करते हुए आप श्री का पदार्पण घाणेराव (सादडी) गाव मे हुआ, जहा धर्मानन्द का वातावरण रहा । मरुभूमि से मेवाड भूमि को पावन करते हुए पूज्य श्री चार भुजाजी होते हुए नाथद्वारा पधारे । उस समय कोठारिया के रावत जी आपके दर्शनार्थ पधारे तथा निवेदन किया—मैंने पहले आपसे जो प्रतिज्ञाए ग्रहण की उनका मैं यथार्थ रीति से पालन कर रहा हू ।

मेवाड भूमि के क्षेत्रो को स्पर्श करते हुए पूज्य श्री ने मालव धरा पर विचरण किया तथा तीनो भूमियो पर धर्मानन्द की लहरे विखेरते हुए रतलाम नगर मे पधारे । यहा के सघ ने चातुर्मास की आग्रह भरी विनति की, किन्तु वह स्वीकृत नही हुई । रतलाम से आप श्री का विहार पचेड हुआ जहा के ठाकुर कैप्टेन श्री रघुनाथसिह जी ने अर्ज की कि अगर आचार्य श्री रतलाम मे चातुर्मास करने का निश्चय प्रकट करे तो वे हरिण का शिकार न खेलने की स्वय प्रतिज्ञा लेने के लिए तैयार हैं तथा उनकी जागीर मे कोई भी हरिण, खरगोश आदि का शिकार न कर सके—ऐसा वन्दोवस्त करने को भी तैयार है । मलवासा के ठाकुर ने अपने सभी तालावो मे मच्छी न मार सकने की आज्ञा जारी कराने का आश्वासन दिया । तव अति उपकार व जीवदया की गुजाइश जान कर आचार्य श्री ने रतलाम चातुर्मास की स्वीकृति दे दी । इस प्रकार वि स १९६३ मे आप श्री का चातुर्मास रतलाम नगर मे हुआ । रतलाम को रत्नपुरी भी कहते हैं तो रत्नपुरी मे आचार्य श्री की पावन वचन–गगा मे रत्नत्रय की गहरी आराधना सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई ।

रतलाम चातुर्मास मे धर्म की ऐसी अभूतपूर्व प्रभावना हुई तथा आप श्री का पुण्य प्रताप इतनी प्रवलता से प्रकट हुआ कि वडे-वडे वयोवृद्ध श्रावको के मुख से भी अनायास निकल पडता था कि आचार्य श्री उदयसागर जी म सा के आगमन और उपस्थिति के समान ही किंवा अधिक भी लोगो के हृदय पर आप श्री का उग्र प्रभाव तथा उत्कृष्ट उत्साह दृष्टिगोचर होता है। धर्म जागृति, ज्ञानवृद्धि एव तपश्चर्या इस चातुर्मास मे इतनी अधिक हुई कि पिछले वर्षो से उसे चौगुनी कहने मे तनिक भी अतिशयोक्ति नही होगी। वडे-वडे अधिकारी, अमीर, उमराव, वकील आदि भी आपके गुणानुरागी प्रशसक वन गये। रतलाम स्टेट के मुख्य दीवान श्री पी वावूराम व्याख्यान तो नियमित श्रवण करते ही थे किन्तु अन्य काल मे भी आकर जैन सिद्धान्तो पर चर्चा किया करते थे। सुरुचिपूर्वक उन्होने अपना अध्ययन इतना गहरा वना लिया कि वे वाद मे नय, निक्षेप, सप्तभगी जैसे गहन सिद्धान्तो पर भाषण दिया करते थे। यहा म एस पी, श्री तरतसिह जी मेहता भी पूज्य श्री के सान्निध्य मे सम्यक्त्व रत्न प्राप्त करके दृढधर्मी श्रावक वन गये। आस-पास के कई जागीरदारो ने आपके उपदेशो का नियमित श्रवण किया तथा जीवदया के कई उपकारी काम किये। वोहरा (मुसलमान) जाति के एक गृहस्थ ने, जो प्रवचनो म वरावर उपस्थित होते थे, एक दिन खडे हो कर भाव विह्वल शब्दो मे कहा—आपके उपदेशो का मेरे दिल पर जो असर पडा है, वह मेरी पूरी जिन्दगी तक याद रहेगा। आज से मैं मास-भक्षण, पशु-हिसा आदि कभी नही करुगा तथा अपने भाइयो को भी ऐसा करने के लिए प्रेरणा दूगा। उस समय यह चमत्कार की वात समझी गई कि चारो ओर प्लेग की वीमारी वुरी तरह से फैल रही थी किन्तु उसका रतलाम नगर पर कोई असर नही हुआ। रतलाम दरवार ने भी विश्वासपूर्वक घोषणा की कि पूज्य श्री के पुण्य प्रताप से रतलाम शहर पर प्लेग का जोर नही चल सकता।

वि स. १९६३ के इस चातुर्मास मे आचार्य श्री ४६ ठाणो के साथ विराजे। इस चातुर्मास मे हुई तपश्चर्या ने नया कीर्तिमान स्थापित किया। इसमे आकडे इस प्रकार है—सत्रह उपवास का थोक-३५१, वेले-वेले पारणा-२१, तेले-तेले पारणा-११, धर्मचक्र की तपश्चर्या-२१, खेद चार पकी-७४, खेद जमीकद मे-८१, पौषध १०६८६, सवत्सरी के दिन पौषध-१६०१, पचरगी-२७, दया की पचरगी-८ आदि। स्वय आचार्य श्री ने एक अट्ठाई, दो तेला तथा डेढ माह तक एकातर का तप किया। कसाईखाने की ४८ दुकाने वन्द रही तथा अन्य सावद्य व्यापार भी चातुर्मास मे वन्द रहे। करीव १०० वकरो को अभय दान मिला। जीवदया के कार्यो मे सरकारी सहयोग भी वहुत मिला।

इस प्रकार रतलाम मे दोनो चातुर्मास वहुत ही महत्त्वपूर्ण रहे तथा धर्मानन्द की आह्लादकारी लहरे सव ओर फैल गयी।

राजाओ व जागीरदारो की भक्ति और सफल जीवदया अभियान :

रतलाम से विहार करके आप श्री का पदार्पण वडी सादडी (मेवाड) मे हुआ। यहा एक ही कुटुम्व के दो वैरागियो तथा एक वैरागिन ने अपने कुटुम्व की सारी चल-अचल सम्पत्ति का दान करके आप श्री के समीप दीक्षा अगीकार की। यही पर वाद मे उच्चकुल मेहतावश की

सावगणजी नामक श्राविका ने दीक्षा ग्रहण की, तब एक ही दिन मे चार दीक्षाए हुई तथा वडी सादडी आदि ६० गावो के ५००० से अधिक लोगो के एकत्रित हो जाने से तीर्थ स्थान जैसा हो गया। तब यहा की ओसवाल जाति की चारो धडें भी टूट कर ऐक्यता का वातावरण बन गया। यहा राजराणा श्री दूल्हेसिहजी ने आपके उपदेशामृत का पान करके अतीव हर्ष व्यक्त किया तथा जीव दया के अनेको कार्य सपन्न कराये।

बडी सादडी से आचार्य श्री रामपुरा (होल्कर स्टेट) पधारे, जहा दीवान खुमानसिहजी ने वलि वद कराने का परवाना जारी किया तो रायबहादुर कोठारी हीराचदजी ने आप श्री की अपूर्व सेवाभक्ति की। मास मदिरा त्याग तथा जीवो को अभयदान देने सवधी आदि काफी धर्मोपकार हुआ। यहा से विचरण करते हुए आप कोटा पधारे। कोटा के महारावजी ने पूज्य श्री की अमृतमयी वाणी सुनकर वहुत ही सतोष प्रकट किया।

कोटा से आचार्य श्री व्यावर होते हुए अजमेर पधारे, जहा आपका वि स १९६४ का चातुर्मास सपन्न हुआ। इस चातुर्मास मे मोरवी नरेश सर वाघ जी वहादुर तथा उनके ज्यूडिसीयल ऑफिसर श्री खाडेकर आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारे तथा मोरवी (काठियावाड) की तरफ विहार करने की आग्रहभरी विनति की। वि स १९६५ का चातुर्मास बीकानेर मे हुआ, जहा के सुप्रसिद्ध सेठ अगरचदजी भैरोदानजी सेठिया ने साधुमार्गी जैन पाठशाला की स्थापना के सिवाय कई धर्म कार्यों के सपादन मे सहयोग दिया। तीन दीक्षाए यहा एक साथ हुई। जिसके महोत्सव मे बीकानेर नरेश का काफी सहयोग रहा। चातुर्मास पूर्ण करके आचार्य श्री अजमेर के सेठ चादमलजी के आग्रह पर कि वहा कान्फरेस का अधिवेशन होने से सारे देश के अग्रणी स्वधर्मी वधु आवेंगे, आचार्य श्री शुद्धाचार की दो शर्तो पर कुचेरे से अजमेर पधारे। अजमेर मोरवी नरेश के साथ लीवडी नरेश भी दर्शनार्थ उपस्थित हुए।

अजमेर से विहार करके मार्ग मे जिस वहुलता से जीवदया के उपकारी कार्य बनते गये, उनको देखते हुए कहा जा सकता है कि श्री जी के पुण्य प्रभाव से जीव दया का पवित्र कार्य एक सफल अभियान के रूप मे चला। इस अभियान मे निश्चय ही सत्ता के सूत्रधार होने के कारण आचार्य श्री के भक्त राजाओ तथा जागीरदारो का परम सहयोग रहा।

मोरवी नरेश सरवाघजी वहादुर, लीवडी नरेश श्री दौलतसिहजी वहादुर तथा वडी सादडी राजाराणा श्री दूल्हेसिहजी ने आचार्य श्री की अमृत वाणी वृष्टि से तृप्त होकर अपने अपने राज्यो मे निम्न प्रकार से जीवदया के आदेश प्रसारित कराये—

१ नवरात्रि मे आठ भैसो तथा दस वकरो का जो वध होता रहा था, वह वंद किया जाता है।

२ कसाई खाने वद किये जाते है।

३ तालावो मे मछली मारना वद किया जाता है।

४ कस्वो मे अगता पालना मजूर किया जाता है।

इनके अलावा निम्न ठिकानो मे जीव दया सवधी पट्टे करवाने जारी किये गये—

१. ठिकाना वानसी-रावत जी तख्तसिंहजी ने अपने ठिकाने मे श्रावण, कार्तिक व वैशाख के महीनो मे जानवर व शिकार वास्ते खुराक मारने मुमानियत की तथा सनद परवाना न ३८२ जारी फरमाया (परिष्टि मे देखें)

२ ठिकाना भवेसर—रावत जी भोपालसिंहजी ने अपने इलाके मे उपरोक्त प्रकार से हुकुम निकाल कर पट्टा न १२ जारी फरमाया ।

३ ठिकाना वोहेडा—रावतजी नाहरसिंहजी ने चातुर्मास मे कसाई खाना वद कराया तथा वाहर वालो को मवेशी वेचने पर रोक लगाई ।

४ ठिकाना लूणहा—रावतजी जवानसिंहजी ने चातुर्मास मे कसाईखाना वद कराया, वाहर वालो को मवेशी वेचने पर रोक लगाई तथा ग्यारस व अमावस को शिकारवदो की । पट्टा दस्तरवती न ३३ जारी कराया ।

५ ठिकाना साटोला—रावजी दलपतसिंहजी ने उपर्युक्त आज्ञाओ के अतिरिक्त कार्तिक व वैशाख मे जानवरो को मारना वद किया । पट्टा न ३३ भेंट किया ।

६ ठिकाना वम्वोरी—ठाकुर सा ने ग्यारस अमावस को अगते रखने तथा चातुर्मास मे शिकार वद रखने का पट्टा न १६ जारी किया ।

७ ठिकाना जालोदिया—ठाकुर दौलतसिंहजी ने चद किस्म के जानवरो का शिकार करना छोडा ।

इसी प्रकार इलाके वडी सादडी के जागीरदारान गाव तलावदा, पालखेडी, वागेला, गुडली, हडमतिया, हिंगोरिया, करमदिया खेडी, उम्मेदपुरा खेडा, रणावता खेडा, नहारजो खेडा, खाखरिया खेटी, करितपुरा की तरफ से भी जीवदया के पट्टे परवाने जारी किये गये । इलाके मेवाड के अन्य ६५ ग्रामो मे भी ५२५ हिंदू, मुसलमान, तथा जागीरदारो ने अनेक प्रकार से जीव दया के कार्य किये एव सैकडो पशु पक्षियो मच्छियो को अभयदान मिला । कई ग्रामवासियो ने कन्या विक्रय, वाल लग्न एव आतिशवाजी आदि के भी त्याग किये ।

उपरोक्त जीव दया तथा धर्मोपकारक कार्य वि स १९६६ मे वडी सादडी के चातुर्मास मे सपन्न हुए । इस चातुर्मास मे तपस्या का भी ठाठ रहा तथा कानोड निवासी धनराजजी का दीक्षा महोत्सव भी सानद सम्पन्न हुआ । यहा से विहार कर शेप काल उदयपुर विराजे तथा गगापुर कपासन होते हुए रतलाम पधारे । जहा जैन ट्रेनिंग कॉलेज के विद्यार्थी मोहनलालजी मोरवी वालो ने आपके समीप भागवती दीक्षा ग्रहण की ।

व्यावर मे एक साथ पाच दीक्षाएं :

मालवा, मेवाड तथा मारवाड मे ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आचार्य श्री व्यावर

(नवाशहर) पधारे तथा वि. स १९६७ का चातुर्मास वही पर किया । इस शहर मे साधुमार्गी जैनो की वहुत वडी सख्या रहती थी जिसका आचार्य श्री के प्रति अतीव पूज्य भाव था । अव तक इस शहर को चातुर्मास का लाभ नही मिला था अत इस चातुर्मास काल मे यहा के श्रावको का धर्मानुराग विविध प्रकार से अभिवृद्ध हुआ । तपस्या, दया, पौषध, व्रत नियम तथा ज्ञान ध्यान की धूम मच गई तो देशावरो से भी सैंकडो श्रावक आचार्य श्री के दर्शन करने एव वाणी श्रवण करने आये ।

इस चार मास के काल मे आचार्य श्री ने काशी मे अध्ययन किये हुए त्रिणाम निवासी विहारीलालजी शर्मा से सस्कृत साहित्य का अभ्यास किया । आचार्य श्री की स्मरण शक्ति एव प्रतिभा के सवव मे पडित जी कहा करते थे कि पूज्य श्री लालजी महाराज की जितनी तीव्र स्मरण शक्ति एव कुशाग्र वुद्धि थी, वैसी किसी दूसरे व्यक्ति की मैने आज तक नही देखी । दैनिक क्रियाओ तथा श्रावको के साथ वार्तालाप के अलावा प्रवचन, चर्चा आदि कार्यक्रमो के कारण सस्कृत-अध्ययन का आप श्री को वहुत कम समय मिलता था फिर भी आपने चार माह मे सारस्वत व्याकरण की तीन वृत्तिया सपूर्ण सीख ली—इसका मुझे आश्चर्य हुआ । वे पडितजी यह भी कहा करते थे कि आचार्य श्री को अभ्यास कराते समय मुझे उनमे किसी दिव्य शक्ति का आभास होता था ।

व्यावर चातुर्मास की यह उल्लेखनीय घटना थी कि एक ही मिति के दिन एक साथ पाच दीक्षाए सपन्न हुई जो अव तक की सख्या मे सर्वाधिक थी । जिन पाच जनो ने अपने प्रवल वैराग्य भाव के साथ आचार्य श्री के पास दीक्षा अगीकार की उनमे से चार तो एक ही गाव के निकले हुए थे । जोधपुर रियासत मे वालेसर गाव के ओसवाल श्री हसराजजी, श्री मेघराजजी श्री किशनलालजी तथा श्री गुलावचदजी ये चार और एक वैरागी ऊटाला (मेवाड) गाव के श्री पन्नालालजी थे । इस दीक्षा महोत्सव का आयोजन व्यावर सघ ने वहुत ही उदारता के साथ किया, जिससे जैन धर्म की महती प्रभावना हुई ।

पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा के पास वीकानेर मे एक ही मिति को पाच जनो ने एक ही साथ दीक्षा ली थी, उसके वाद मे यही ऐसा अवसर आया था जवकि पाच जनो ने एक साथ आचार्य श्री के पास व्यावर मे दीक्षा ग्रहण की ।

व्यावर मे भी जीव दया का वहुत सारा उपकारी काम हुआ तथा मास, मदिरा के भी काफी त्याग प्रत्याख्यान हुए । सैंकडो पशुओ को भी अभयदान मिला । श्री धीसूलालजी चौरडिया तथा श्री सतीदासजी गोलछा ने पूज्य श्री के उपदेशो मे प्रभावित होकर जीव रक्षा के कार्य मे भारी आत्मयोग दिया ।

सौराष्ट्र के दीर्घ प्रवास मे अपूर्व त्याग तप व परोपकार :

राजकोट श्री सघ की ओर से सौराष्ट्र (काठियावाड) की तरफ विहार करने की विनति ले कर वारह व्रतधारी सुश्रावक सेठ श्री जयचद भाई गोपालजी वडीली व्यावर आये ।

तदनुसार आचार्य श्री पहले पाली पधारे जहा श्री मनोहरलालजी की दीक्षा हुई और तदनतर २० ठाणो के साथ आप श्री ने सौराष्ट्र की तरफ विहार कर दिया ।

आचार्य श्री पालनपुर, सिद्धपुर, महेसाणा, वीरमगाम, लख्तर होते हुए वढवाण पधारे, जहा सौराष्ट्र के सत श्री उत्तमचदजी म सा, श्री मोहनलालजी म सा, श्री अमरचदजी म सा आदि १७ ठाणो ने आचार्य श्री का भावभीना स्वागत किया । यहा पर पहला चातुर्मास राजकोट मे करने का निश्चय हो जाने से आचार्य श्री का यहा से विहार राजकोट की दिशा मे होने लगा ।

कई दृष्टियो से वि स १९६८ का राजकोट चातुर्मास चिरस्मरणीय रहेगा । मुख्यत दया और परोपकार विषयो पर आचार्य श्री की प्रवचन धारा प्रवाहित होती थी । जिसका लाभ स्थानकवासी, देरावासी तथा जैनेतर जनता भी लेती थी । राजकोट के वकील वैरिस्टरो, अमलदारो या अग्रेसर वर्ग मे मुश्किल से कोई प्रवचनो का लाभ लेने से वञ्चित रहा होगा । इस चातुर्मास से पूज्य श्री का डका पूरे काठियावाड मे दूर दूर तक वज उठा । गोडल के भू दीवान खानवहादुर वेजनजी, मेहरवानजी आपकी प्रवचन धारा से इतने प्रभावित हुए कि वे पौन घटे तक वैठे रह गये, जवकि अपनी शारीरिक व्याधि के कारण वे एक साथ एक जगह पद्रह मिनिट से अधिक वैठ नही पाते थे । दुष्काल मे दया के सदुपदेश पर उनका हृदय द्रवित हो उठा था । दुष्काल फड मे ढेरो के निर्वाह आदि के लिए जैन समाज ने काफी सहयोग दिया, जिसकी राजकोट दरवार ने भी सराहना की । वे भी एक दिन व्याख्यान मे उपस्थित हुए जव आचार्य श्री ने मनुष्य के कर्तव्य विषय पर प्रकाश डाला । मिसेज स्टीवेंसन नामक एक अग्रेज युवती भी आचार्य श्री के प्रवचन मे सवके साथ नीचे वैठ कर सुना करती थी वह धर्म चर्चा भी करती । इस युवती ने Heart of Jainism नाम से एक पुस्तक प्रकाशित कराई जिसमे आचार्य श्री का उल्लेख करते हुए लिखा कि पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज विद्वान तथा सच्चे त्यागी साधु हैं, जिनके निकट ससर्ग मे उसने काफी जानकारी प्राप्त की ।

राजकोट का चातुर्मास पूर्ण करके आचार्य श्री गोडल पधारे । आप श्री के उपदेश से यहा जो जीवदया का फड किया गया, उसमे मुसलमान भाइयो ने भी अच्छा सहयोग दिया । गोडल से जेतपुर, वेरावल, पोरवदर, भाणवड होते हुए आप श्री जामनगर पधारे जहा एक माम तक धर्मोद्योत किया । मोरवी महाराजा व श्री सघ की लवे समय से विनति चल रही थी अत वि स १९६९ का चातुर्मास मोरवी मे निश्चित हुआ ।

मोरवी चातुर्मास के प्रारभ होते ही अपनी धारणा के अनुसार आचार्य श्री ने पच्चीस लाख गाथाओ का स्वाध्याय आरभ कर दिया । यह मगल चातुर्मास इतना अधिक सफल माना गया कि वृद्ध मे वृद्ध लोग भी ऐसा सफल चातुर्मास अपनी जिदगी मे कभी नही देखने का कथन करते थे । मोरवी मे जौहरी त्रिभुवन जी दुर्लभजी ने आचार्य श्री की पूर्ण सेवा की, जिनकी एक फर्म जयपुर मे भी थी । इन्होंने ही आचार्य श्री श्रीलालजी म सा का जीवन चरित्र लिखा जो वि स १९८० मे प्रकाशित हुआ । मोरवी मे तपश्चर्या महोत्सव भी वहुत प्रभावोत्पादक रहा ।

यो कुल मिलाकर आचार्य श्री के सौराष्ट्र प्रदेश के दीर्घ प्रवास मे अपूर्व त्याग, तप तथा परोपकार के कार्य हुए ।

काठियावाड मे विहार करते हुए आचार्य श्री भावनगर पधारे । रास्ते मे अनेक गावो मे अत्यत उपकार हुआ । लीबडी सप्रदाय के प मुनि नाग जी स्वामी वही विराजते थे जिनके साथ मधुर स्नेह सवध रहा तथा व्याख्यान भी सयुक्त होते थे । श्री नाग जी स्वामी ने श्री के गुण ग्राहक स्वभाव की भूरि भूरि सराहना की । भाव–नगर से धधुका होकर आचार्य श्री अहमदावाद पधारे और इस प्रकार काठियावाड का आप श्री का दीर्घ प्रवास सपूर्ण हुआ । अहमदावाद मे मखियाव के गरासिया ठाकुर देवीसिहजी रायसिहजी ने आचार्य श्री के दर्शन प्रवचन का भक्ति भाव से खूव लाभ उठाया ।

शतावधानी जी महाराज की दृष्टि मे आचार्य श्री का व्यक्तित्व :

आप श्री जव सौराष्ट्र प्रवास मे पधारे, तव सौराष्ट्र के विद्वान सत शतावधानी जी (सौ प्रश्न एक साथ सुनकर क्रमश उत्तर देने की क्षमता रखने वाले) प रत्नचद्रजी महाराज कच्छ मे विराज रहे थे । किंतु काठियावाड मे आचार्य श्री की ख्याति सुनकर शतावधानी जी महाराज आचार्य श्री के समीप पधारे तथा कुछ अर्से तक साथ मे रहे । यह समागम बीकानेर मे हुआ था ।

शतावधानी महाराज ने आचार्य श्री के प्रभावक व्यक्तित्व के प्रति अपने अनुभवो को लेखवद्ध करके लिखा जिसके अनुसार सार रूप मे उन्हे आचार्य श्री का व्यक्तित्व कैसा दिखाई दिया उसका उल्लेख निम्न प्रकार से है —

"लोगो को पूज्य श्री की वाणी इतना रस दे रही थी कि दो तीन घटे या इससे अधिक समय तक व्याख्यान चलता रहता था, परन्तु किसी की उठने की इच्छा तक नही होती थी वल्कि लोग चाहते थे कि व्याख्यान होता रहे तो ठीक । व्याख्यान मे शास्त्रीय तात्विक उपदेश के साथ ऐतिहासिक दृष्टात वडे प्रमाण से आते । उनका शास्त्रीय विषयो के साथ ऐसा मिलान किया जाता कि श्रोतागण तल्लीन हो जाते "

"हम गये उसी दिन पूज्य श्री ने फरमाया कि मुझे चद पन्नति सूत्र पढना है । मैंने कहा, आपको पढाने योग्य मैं नही । फिर भी उन्होने कहा कि गुरुमुख से जैसा सुना है वैसा ही मुझे पढावे । लगभग १५ दिन मे ही सूत्र पूर्ण कर लिया । पूज्य श्री की ऐसी समझ तथा प्रज्ञा इतनी सरस कि गहन से गहन विषय को भी वे अच्छी तरह समझ लेते । उनकी भावना मे भी विनय और विवेक पूरी तरह भरा हुआ था · "

"पूज्य श्री जैन शास्त्रो के समर्थ विद्वान थे । वहुसूत्री, गीतार्थी, शास्त्रवेत्ता, आगम ज्ञाता जो जो उपनाम उन्हें लगाये जावें, वे उनके सान्निध्य से सुशोभित हो जाते हैं ।"

"मैंने सुना भी और स्वय भी अनुभव किया । पूज्य श्री की मिलनसारवृति अद्भुत

थी । आचार विचार की कितनी ही भिन्नता क्यो न हो, लेकिन उनकी बातचीत तथा उनका वर्ताव एक दम निष्कपट व स्नेहपूर्ण होता था "

"इस तरफ मारवाड के कई साधु आते हैं लेकिन अपने आचार की विशेषता बताने के साथ दूसरो की निंदा करने का दोष उनमे देखा जाता है । पूज्य श्री मे शुद्धाचार की महती विशेषता होते हुए भी उसको अपने मुह से दर्शाकर, दूसरो की शिथिलता बताना या दूसरो की निंदा करना हमने कभी नही सुना । अपितु पूज्य श्री की गुणग्राहकवृत्ति का हमे कई बार सुखद परिचय हुआ ।"

"हमारा पूज्य श्री के ससर्ग मे अधिक रहने का बहुत मन था किंतु वैसा सयोग नहीं था । हम तो उनके गुणो का स्मरण कर उनके लगाये बीजो का सिचन करते रहेगे तथा उन्हें फलता फूलता देखते रहेगे । "

पूज्य श्री के पक्के भक्त मुस्लिम मौलवी सैयद आसद अली :

अहमदाबाद से पालनपुर होते हुए पूज्य श्री पाली पधारे, जहा श्री चतरसिंहजी की दीक्षा हुई । जोधपुर सघ को प्रगाढ विनति होने से वि स १९७० का आप श्री का चातुर्मास जोधपुर मे हुआ । इस चातुर्मास मे जोधपुर मे जो महान् धर्मोपकार हुए वे अभिनदनीय थे ।

जोधपुर चातुर्मास मे आप श्री के प्रवचनो की सभाओ मे जैन और जैनेतर बहुत बडी सख्या मे उपस्थित होते थे । सरकारी तोपखाने के अधिकारी माली नाथूरामजी पूज्य श्री के परम भक्त हुए तो आपके उपदेशो को सुनकर २०० राजपूतो ने आजीवन शिकार करने के त्याग किये ।

जोधपुर के ही एक पदाधिकारी मौलवी सैयद अली एम आर ए एस (लदन) एफ टी सी (जोधपुर) भी माली नानूरामजी के साथ आचार्य श्री के साथ आचार्य श्री के सान्निध्य मे आने लगे थे । एक व्याख्यान का उन पर ऐसा असर हुआ कि जिंदगी भर के लिए मास भक्षण तथा पर स्त्री सेवन का त्याग ले लिया । मौलवी साहब के साथ अन्य पाच मुसलमानो ने भी जीवन पर्यन्त मांस न खाने की सौगध ली ।

एक जैन सत के पास मौलवी साहब द्वारा ऐसे त्याग लेने से उनकी जाति मे बडा हल्ला मचा और उन्हे जाति से बाहर करने की धमकी दी गई । पूज्य श्री ने यह बात सुनी और जब वे पूज्य श्री के पास आये तो पूज्य श्री ने उनका यह कह कर साहस बढाया कि अगर अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहोगे तो खुद-ब-खुद इसाफ हो जायगा । और हुआ भी ऐसा ही । जब मौलवी साहब अपनी प्रतिज्ञा पर डटे रहे तो उनके आलोचक ही उनके प्रशसक बन गये । इतना ही नहीं, बल्कि उन लोगो ने भी मौलवी साहब की सत्प्रेरणा से मास भक्षण के त्याग कर लिए । मौलवी साहब ने अपने पूरे जीवन तक जीव रक्षा के कई उल्लेखनीय कार्य किये । इसका एक उदाहरण—मौलवी साहब एक बार रेवाड़ी गये, जहा उनका एक भानजा डाक्टर था । वहा

सैकडो गायें कटती थी, यह जानकर इन्हे वडा दुख हुआ । उन्होने उसे बद कराने मे भानजे की मदद चाही । तभी प्लेग चल पडा तथा डाक्टर ने अग्रेज अधिकारी को समझाया कि जहा गाये काटी जाती हैं, वहा विषैले कीटाणु पैदा होते हैं और उन्ही की बदौलत प्लेग की बीमारी चली है । तब गायो का काटना वहा बद कर दिया गया । यह मूल मे मौलवी साहव का ही सत्कार्य था ।

मौलवी साहब ने अपने सस्मरण मे पूज्य श्री के उपकार के वारे मे लिखा है—

"मुझको पूज्य महाराज के उपदेशो से ही फैजरूहानी (आत्मज्ञान) हुआ । पूज्य श्री ने नवकार मत्र मुझे सिखाने की कृपा की । उन्होने फैजातर जुवार (स्वय श्री मुख) से मुझे नवकार मत्र जुबानी याद कराया । इसे अब तक जपता हू और वडा काम देता है । जैन धर्म का उपदेश लेने के वाद वेवकूफ लोगो से मुझे कई तकलीफें उठानी पडी जिन्होने मुझे जान से मरवा डालने के भी उपाय किये तो मेरे वदन पर चोटें भी पहुचाई गई · ·।"

"मेरे भाई अमीर हुसैन जिला गुडगाव मे डॉक्टर थे तो वहा उसकी मदद से मैंने करीब ३००० गौओ का काटा जाना वचाया, कारण मेरे भाई डाक्टर मजबूर को हर तरह से अख्तियारात हासिल थे । इस काम की जोधपुर मे वडी तारीफ हुई और मुझे तीन चार जगहो पर मानपत्र अर्पण किये गये ·।"

"दाता जिला गुजरात के राजा साहिव मेरे मेहरवान थे, वे अवे भवानी के मदिर मे तशरीफ ले गये तो मैं भी उनके साथ था । वहा पता चला कि भेंट चढाने के लिए ५०-६० वकरे साथ मे लाये जाते हैं । मैंने राजा साहव व हाजरीन को अहिंसा परमो धर्म का मतलब समझाया तो वकरो की वलि वद कराने का राजा साहव ने हुक्म दे दिया और वकरो के वदले नकद राशि अर्पण की जाने लगी· · ।"

"पजाव की तरफ एक रियासत मे रईस को हजार हजार कागले रोज मारने का शौक हो गया । वे रईस मेरी जान पहिचान के थे । उन्होने एक वार मुझे बुलाया तो वहा पहुचते ही मैंने अर्ज कर दी कि आपके इस शौक के होते मैं एक पल भी यहा नही ठहरूगा और जोधपुर वापिस चला जाऊगा । तव उन्होने विचार किया और मेरे सामने ही वह हिंसा तुरत वद कर देने का सकल्प ले लिया ····।"

अत मे मौलवी साहव ने आचार्य श्री के प्रति अपने हृदयोद्‌गार इस तरह जाहिर किये हैं—

हमारी मलय मे जरा भी ताकत नही कि हम एक शिम्मा वरावर भी ओसाफ हमारे परम दयालु, परम कृपालु सत्य धर्म के नाविक, ज्ञान के समुद्र, दया धर्म के होलो गाईड श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य श्री लालजी महाराज का क्या लिख सकें ? आपने हजारो पापियो को सत्यमार्गी और हजारो हिंसाकारो को "अहिंसा परमो धर्म" पर आमिल वना दिया । सैकडो

चोरो ने चोरी और हिंसा के पेशे छोड दिये । मीणे वावरियो तक ने तीर कमठे फैंक दिये थे और खेती वाडी पर गुजरान करने लगे थे ।"

"हकीकत मे पूज्य श्री के मुकावले का परोपकारो गुरु सारी दुनिया मे दूसरा नहीं मिलेगा । उनके धर्मस्नेह ने मुझे ऐसा वाधा है कि दिन मे कम से कम भी एक वार उनकी सेवा मे गये विना मैं नही रह पाता हू । उनके आशीर्वाद के विना मेरा जीवन व्यर्थ है ।"

ऐसे थे पूज्य श्री की कृपा से वधे हुए उनके मुस्लिम भक्त मौलवी साहव ।

सम्प्रदाय की सुव्यवस्था एवं आत्मशक्ति का प्रयोग .

जोधपुर से विहार करके आचार्य श्री नवा शहर पधारे, जहा मुनि श्री देवीलालजी म सा से मिलाप हुआ । साथ ही वहा पूज्य श्री धर्मदासजी म सा के सप्रदाय के श्री नदलाल जी म सा श्री पन्नालालजी म सा आदि भी विराज रहे थे । उस समय सभी मिला कर कुल ५४ मुनिराज तथा ३३ आर्याजी थी जिससे नगर मे आनदोत्सव जैसा हो गया था । पूज्य श्री की विद्वत्ता विचक्षणता तथा भिन्न भिन्न सप्रदायो के छोटे वडे सभी सतो के साथ यथोचित वात्सल्य एव सम्मान पूर्वक सवको सतोष देने वाली अपूर्व शक्ति के कारण अवर्णनीय धर्मोन्नति हुई । तपश्चर्या का क्रम भी इतना प्रवल चला कि सभी आश्चर्यान्वित थे । एक मुनि ने २१, दो मुनियो ने १५-१५ तथा एक मुनि ने १४ उपवास किये । एक मुनि तो २० माह से रात्रि मे शयन न कर बैठे रहते थे तथा वारह मास एक ही पछेवडी से निकालते थे । श्री घीसूलालजी सचेती ने पूज्य श्री के समीप दीक्षा अगीकार की ।

नवा शहर से पूज्य श्री अजमेर पधारे । वहा जीव दया पर हुए प्रवचनो से प्रेरणा लेकर रायवहादुर सेठ सोभागमलजी व दीवान वहादुर उम्मेदजी लोढा ने अनाथ पशुओ के लिए एक पशुशाला स्थापित की । अजमेर से जयपुर तथा जयपुर से पूज्य श्री टौंक पधारे । टौंक में आप श्री के सदुपदेश से आपकी ससार पक्ष की भाणजी व जवाई श्री मागीलालजी पूगलिया ने भर युवावस्था मे ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया । इसके उपलक्ष मे एक उत्सव हुआ जिसमे कई मुसलमानो ने जीव हिंसा तथा मास भक्षण के त्याग किये । यहा से आचार्य श्री कजार्डी पधारे, जहा श्री गव्वूलालजी ने आपके पास दीक्षा ली । यहा से कोटा, शाहपुरा होकर मेवाड फरसते हुए चातुर्मासार्थ पूज्य श्री रतलाम पधारे । वीच मे मदसौर निवासी श्री सूरजमलजी पोरवाल व उनकी पत्नी श्रीमती चतुरवाई ने युवावस्था मे ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया, जिनकी वैराग्य भावना भी प्रवल थी । इनकी दीक्षाए वाद मे क्रमश वि १९७४ तथा १९७६ मे हुई ।

वि स १९७१ के रतलाम चातुर्मास मे प्रवचनो की भावप्रवणता तथा सभी जाति के लोगो की उपस्थिति पहले से भी वढकर थी, लेकिन इस चातुर्मास मे विशिष्ट कार्य, संप्रदाय की सुव्यवस्था का सपन्न हुआ ।

चातुर्मास वहुत शातिपूर्वक व्यतीत हुआ, किंतु कार्तिक शुक्ला दशमी के दिन अचानक

वेदनीय कर्म की प्रवलता से पूज्य श्री के पाव मे भयकर दर्द पैदा हो गया जिससे आपश्री का चातुर्मास पूर्ण होने पर भी विहार नही हो सका । इस व्याधि से आपश्री को ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि सप्रदाय के व्यवस्थित सचालन के लिए कुछ सुव्यवस्था की जानी चाहिए । आपश्री ने सोचा कि पैर की व्याधि के कारण अधिक विहार नही हो सके तो सप्रदाय के सख्यावद्ध सतो की सार सभाल यथावत् नही हो सकेगी । इस कारण शुद्धाचार का पालना एव एकता वनाये रखने की दृष्टि से सप्रदाय को चार विभागो मे विभक्त कर प्रत्येक विभाग की देखरेख का काम योग्य सत के जिम्मे कर देना चाहिए । यह विचार चल ही रहा था कि फिर एक दिन पाव मे प्रवल वेदना हो गई । आप उसे वहुत सहनशीलता से सहते थे, फिर भी एक दिन धीरे धीरे पाव रखते हुए आपश्री व्याख्यान स्थल पर पधारे । वहा आपने सप्रदाय को सुव्यवस्था हेतु अपना विचार चतुर्विध सघ के सामने रखा । उस विचार के अनुसार उस समय एक प्रस्ताव तैयार किया गया जिसका आशय इस प्रकार था—आचार्य श्री के आज्ञानुयायी साधु वर्तमान मे १०० के करीव है जिनकी परपरानुसार सार सभाल, आचार, गोचरी वगैरे की निगरानी यथाविधि अभी पूज्य श्री ही कर रहे हैं, किंतु इतने सतो की सार सभाल मे अधिक परिश्रम व जागरूकता की जरूरत होती है जो पूज्य श्री की शरीर-व्याधि के कारण उनके योग्य नही है । अत पूज्य श्री सार सभाल के लिए योग्य सतो को नियुक्त कर सवधित सतो की सार सभाल का दायित्व उन्हे सम्हला दिया है । अग्रेसरी सत अपने गण को उचित निगरानी रखें तथा गण के सत भी उनकी आज्ञानुसार कार्य करें । अग्रेसरी सत यथोचित रीति से चातुर्मास आदि की आज्ञाए एक साथ आचार्य श्री से प्राप्त कराये । गणो के अग्रेसरो का स्पष्टीकरण किया गया कि अपने हस्त दीक्षित तथा अपनी सेवा मे रहने वाले सतो की सार सभाल के लिए स्वय पूज्य श्री चतुर्भुजजी म सा तथा श्री जवाहरलालजी म सा मनोनीत किये गये ।

सप्रदाय की सुव्यवस्था सवधी उपरोक्त आशय का प्रस्ताव सघ द्वारा स्वीकृत हो कर कार्यान्वित कर दिया गया ।

पाव मे कुछ आराम पडने पर पूज्य श्री का से वि स १६७१ की मार्गशीर्ष शुक्ला ५ के दिन रतलाम विहार हुआ ।

जावरा वालो की चातुर्मास की विनती लवे असे से चल रही किंतु वैसा सभव नही हो सका था अत पूज्य श्री की एक मास शेप काल मे जावरा विराजे । एक दिन पूज्य श्री व्याख्यान फरमा रहे थे कि एक श्रावक ने नवाव साहिव द्वारा सभी कुत्तो को गोली से मार देने के आदेश की सूचना दी । इस पर आचार्य श्री ने प्रेरणा दी कि हिंसा रोकने का प्रयत्न किया जाना चाहिए । श्रावको ने हताशा से कहा कि उन्होने इसके लिए प्रयत्न किये हैं किंतु वे निष्फल रहे हैं । इस पर पूज्य श्री ने फरमाया कि अपनी आत्मशक्ति का प्रयोग करो—यदि तुम्हारा आत्मवल और तुम्हारी श्रद्धा सवल होगी और तुम दया के हित आत्मयोग देने के लिए तत्पर होवोगे तो कोई कारण नही कि इस जीव दया के कार्य मे आपको सफलता न मिले । अभी ही तुम सव दृढ प्रतिज्ञा करो कि जव तक यह हिंसा नही रुकेगी हम अन्न-पानी ग्रहण नहीं करेंगे । जव सिपाही तुम्हारे सामने कुत्तो पर गोली चलावे तव तुम निडर हो कर कह दो कि पहले

हमारे शरीर को गोलियो से बीध दो तब कुत्तो पर गोली चलाना । आचार्य श्री के अगाध मनोवल से निकले इस निर्देश का श्रोताओ पर अद्भुत प्रभाव पडा । इसी समय कई श्रावको ने खडे हो कर यह प्रतिज्ञा ग्रहण की और नवाव साहव से मिलने के लिए गये ताकि व्याख्यान की हकीकत उनको वता कर जीव हिंसा रोकने वावत आदेश निकलवाने का प्रयत्न किया जाय ।

आत्म-शक्ति के इस प्रयोग का वाछित प्रभाव पडा और नवाव साहव ने प्रजावत्सलता दिखा कर जीव हिंसा को रोकने का आदेश दे दिया । जावरा को यह समस्या यद्यपि छोटी थी, किंतु आचार्य श्री ने आत्म शक्ति के प्रयोग का जो मूलमत्र उस समय दिया उसको हमेशा याद रखा जाना चाहिए । समस्या छोटी हो या वडी—उसको सही ढग से सुलझाने के काम मे अगर निर्भयता पूर्वक आत्मशक्ति का प्रयोग किया जाता है तो कोई कारण नही कि उसमे सफलता न मिले ।

थलियो की जलती रेत पर अमृत की वर्षा :

आचार्य श्री जावरा से मदसौर और वहा से मेवाड—भूमि को स्पर्श करते हुए उदयपुर पधारे, जहा वि स १९७२ का चातुर्मास हुआ । इस चातुर्मास मे उल्लेखनीय तपश्चरण के अलावा जीव दया का महत्व पूर्ण कार्य सपन्न हुआ । महाराणा साहव ने श्रावण वदि १ के दिन अगते पलवाने का हुक्म फरमाया जिससे कसाई खाने, कलालो की दुकानें तथा तेलो, भडभूजो, हलवाई, रगरेजो इत्यादि की दुकाने भी वंद रही । वकरो के अभय दान देने के लिए फड कायम किया गया जिससे करीव चार हजार वकरे वचाये गये । कोठारी श्री वलवतसिहजी ने अपनी तरफ से ८० वकरो को अभयदान दिलवाया । वेदला के राक्जी श्री नाहरसिहजी ने भी पूज्य श्री के सदुपदेश से अपने ठिकाने मे अगते पलवाए । एक अग्रेज पादरी जेम्स शेपर्ड आपश्री के दर्शनार्थ आये जो स्वय एक समर्थ विद्वान् थे । पारस्परिक चर्चा मे पादरी महोदय ने आश्चर्य व्यक्त किया कि जैन साधुओ का आचार इतना कठिन होता है ।

चातुर्मास पूर्ण करके ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आचार्य श्री व्यावर पधारे, जहा आपने साहूकारो को सदुपदेश देकर कम व्याज लेने की प्रतिज्ञाए करवाई । यहा से आपश्री का विहार थलियो की तरफ आरभ हुआ । थलियो की जलती रेत पर पूज्य श्री के प्रेरणादायक प्रवचन क्या होते थे जैसे कि अमृत की वर्षा हो रही हो और रेगिस्थान के सूखे हृदयो मे भी भावनाओ की हरियाली छा गई हो । अजमेर से उग्र विहार करके पूज्य श्री वीकानेर होते हुए सुजानगढ पधारे । वहा सिर्फ २० वर्ष के नवयुवक श्री पोखरमलजी ने उत्कृष्ट वैराग्य-भाव के साथ भागवती—दीक्षा अगीकार की । इस दीक्षा-महोत्सव मे मदिर मार्गी भाइयो ने भी तन-मन-धन से सहयोग दिया । सुजानगढ से थलियो मे विहार के समय आचार्य श्री को कई उपसर्ग झेलने पड । कारण इस क्षेत्र मे साधुमार्गी भाइयो के घर नही है तथा जिस दूसरे पथ की वहुतायत से वस्तियां हैं, उन लोगो ने पूज्य श्री के मार्ग मे कई वाधाए खडी की ता कई झूठी वातें भी फैलाई, किंतु आचार्य श्री दृढ आत्मवली थे । उन्होंने विघ्न वाधाओ की कोई परवाह नही की

और अपना विहार जारी रखा । आपश्री ने लाडनू, खादीसर, राजलदेसर, रतनगढ, सरदारशहर आदि अनेक ग्रामो के विचरण कर, भाव-प्रवण प्रवचन देकर तथा शकाओ का सुसमाधान कर पवित्र दया धर्म की विजय पताका फहराई । थली के विहार मे अग्रवाल, माहेश्वरी, ब्राह्मण आदि वैष्णव भाइयो ने भी आपश्री के प्रति वहुत ही पूज्य-भाव दर्शाया । थली प्रदेश के अपने प्रवचनो मे आचार्य श्री ने अनेक तर्कों के साथ तेरह पथ की दया दान के विरुद्ध की जाने वाली प्ररूपणा को गलत ठहराया तथा जनता को समझाया कि जीवदया व दान से पाप नही वल्कि पुण्य होता है । पूज्य श्री की गूढ वाणी से सपूर्ण क्षेत्र मे तेरह पथ द्वारा फैलाई गई भ्रमणाए दूर हुई । यहा तक कि स्वय कई तेरहपथी भाई दयादान के पूज्य श्री के उपदेश सुनकर उनके प्रशसक एव दयाधर्म के अनुयायी वन गये । एक तेरह-पथी सद्‌गृहस्थ मुवासर निवासी श्री प्रतापमलजी नाहटा ने तो एक अपील छपवाकर अपने स्वधर्मी भाइयो मे वटवाई और आग्रह किया कि पूज्य श्री श्रीलालजी का शुद्धाचार एव उनके दयादान सवधी विचार अनुकरणीय हैं । विज्ञप्ति मे उन्होने अपने पथ के साधुओ को चेतावनी भी दी कि दूसरे साधुओ पर मिथ्यादोपारोपण न करें एव स्वय के ही आचार विचार मे शुद्धता लाए ।

सरदारशहर तथा रतनगढ मे अग्रवाल समाज के हजारो घर हैं, जिन्होने पूज्य श्री के उपदेशामृत का अत्यानद पूर्वक पान किया । अग्रवाल भाई कहने लगे कि ऐसे महान् सत केवल ओसवालो के ही नहीं हमारे भी है । रतनगढ मे तो हजारो की राशि का जीव दया फड भी कायम हुआ ।

वि स १९७३ का चातुर्मास वीकानेर मे हुआ जहा स्थानीय जनता तथा देशावरो से वडी सख्या मे आये दर्शनार्थियो ने पूज्य श्री की दयामय अमृत वाणी का पूरा-पूरा लाभ लिया तथा ज्ञान, ध्यान, तप, दया, परोपकार एव अभयदान के मागलिक कार्यों मे प्रवृत्ति की ।

जयपुर चातुर्मास से अभिनव अहिंसा प्रचार
राजवशियो ने सत्सग करने मे होड लगा दी

वि स १९७४ का आचार्य श्री का चातुर्मास जयपुर मे हुआ जहा धर्म की अमित प्रभावना हुई । अहिंसा का ऐसी अभिनव शैली ने प्रचार हुआ कि जैन एव जैनेतर लोगो तथा राजवशियो ने गुरुदेव का सत्सग करने एव जीवदया के परोपकारी कार्य पूरे करने की होड लगा दी ।

जयपुर स्टेट की तरफ से वकरियो का वध करना मना था, किंतु इस हुक्म की पालना वरावर नहीं होती थी । इस स्थिति को देखते हुए आचार्य श्री ने जीव हिंसा न होने देने की प्रेरणा दी तो श्री नदलालजी मेहता जैसे उत्साही कार्यकर्ताओ ने इस दिशा मे प्रशसनीय कार्य किया । इस चातुर्मास से वकरी का वध होना कतई वद हो गया । रायवहादुर खवास वाला वक्षजी ने कसाईखानो की सख्ती से तलाश करने एव कानून तोडने वालो को सख्त सजा दिलाने के हुक्म दिये ।

राज्य के कई जागीरदार और अमलदार प्रवचन श्रवण करने एव चर्चा हेतु आचार्य श्री के समीप मे आया करते थे । इनमे रायवहादुर डा दुर्जनसिंहजी तो ज्ञान चर्चा मे अत्यधिक रस लेते थे । जयपुर चातुर्मास से जीव दया एव अहिंसा धर्म के प्रचार को ऐसी उत्साह भरी नई दिशा मिली कि देश के भिन्न-भिन्न भागो मे इस पुण्य कार्य के लिए विविध प्रकार के प्रयत्न प्रारभ हो गये ।

जयपुर चातुर्मास पूर्ण करके आप श्री टोंक होते हुए रामपुरा पधारे । यहा सजीत निवासी श्री नदरामजी ने दीक्षा ग्रहण की । मनासा मे महेश्वरी भाइयो तथा सरकारी अधिकारियो ने पूर्ण भावभक्ति दिखाई । पीपलिया मे आप श्री के सदुपदेश से मदिर मार्गी भाइयो की साधुमार्गी साधुओ के साथ द्वेषाग्नि शात हुई तो वहा के ठाकुर साहव ने शिकार खेलने का त्याग किया । घामणा गाव मे जमीनदार मीणा लोगो ने नवरात्रि मे वकरो की बलि का त्याग किया । जावद ग्राम मे आपश्री के सदुपदेश से धर्मोपकार के निम्नाकित कार्य हुए—

१ वहेडी के ठाकुर प्रतापसिंहजी ने शिकार खेलने का त्याग किया, उनकी वडी ठकुराइन ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया ।

२ मोरवण गाव मे ओसवाल जाति की फूट के कारण तीन धडे थी जो आपश्री के उपदेशो से मिटकर एकता मे परिणत होगई ।

३ मोडी गाव के राजपूत लोगो ने जीव हिंसा न करने तथा मादक द्रव्यो का उपयोग न करने की प्रतिज्ञाए ली ।

जावद के लोगो ने वाल विवाह न करने तथा ४५ वर्ष से अधिक आयुवालो को लडकी न देने के सकल्प ग्रहण किये । जावद मे ही वालेसर निवासी श्री कस्तूरचदजी की दीक्षा सपन्न हुई ।

जावद से पूज्य श्री भीलवाडा पधारे, वहा के हाकिम प श्री भवानीशकरजी ने आपश्री के व्याख्यान नियमित रूप से श्रवण किये । वहा से आपका पदार्पण चित्तौड हुआ । यहा ओसवालो मे भी फूट थी तो ओसवालो और माहेश्वरियो के वीच मे भी कलह था, जो पूज्य श्री के उपदेश से दूर हो गया । यहा पर उदयपुर के महाराजकुवारजी की तरफ से उदयपुर मे चातुर्मास करने की पुरजोर विनती की गई । इस कारण वि स १९७५ का चातुर्मास उदयपुर मे होना निश्चित हुआ ।

इस चातुर्मास मे वैष्णव तथा मुसलमान भाई वडी सख्या मे प्रवचनो का लाभ लेते थे । महाराणा साहव के वडे भाई वावजी सूरतसिंहजी कई वार पूज्य श्री के पास आये और धर्मचर्चा से सतुष्ट होकर पूरे भक्त वन गये । वावजी सूरतसिंहजी धर्मात्मा और तेजस्वी पुरुष थे, जिन्होने वर्षो तक अन्न का त्याग किया था और फल दूध पर ही निर्वाह चलाया था । उनको मास मदिरा का भी त्याग था और ब्रह्मचर्य व्रत का भी पालन करते थे । सवत्सरी के दिन

वावजी ने व्याख्यान मे निवेदन किया कि आज की इस हजारो की उपस्थिति मे अगर प्रत्येक व्यक्ति एक एक वकरे को अभयदान दे तो जीवदया का वहुत वडा काम हो सकेगा । आचार्य श्री की प्रेरणा से तदनुसार कई वकरो को अभयदान मिला ।

कु वरजी भूपालसिंहजी ने भी पूज्य श्री की अपूर्व वाणी श्रवण करने की इच्छा व्यक्त की तव सज्जन निवास वाग के नवलखा महल में समागम हुआ, जहा कु वरजी अपने विकलाग पैरो के वूट खोलकर आचार्य श्री के समक्ष नीचे वैठे । तव आचार्य श्री ने उन्हे इस प्रकार उपदेश दिया—

"आप सूर्यवशी हैं जिस वश मे राजा दिलीप जैसे गोपालक, हरिश्चद्र जैसे सत्यवादी तथा राम जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम हुए हैं । इस वश मे उत्पन्न होने का आपको गौरव होना चाहिए । धर्म की रक्षा आपका राज्य वचन है और धर्म की रक्षा का अर्थ होता है जीवो की रक्षा जैन धर्म एव जैन साधुओ के प्रति आपकी मान-दृष्टि है और इसी दृष्टि के कारण आपके पिता श्री भी दया धर्म की ओर जागरूक रहते हैं, मेरी भावना है कि आप भी उनका अनुकरण करते हुए धर्म की रक्षा करें तथा जीवदया के कार्यों मे तन-मन-धन से सहयोग दें ।"

इस उपदेश से कु वरजी के मन मे दया भावना प्रवल वनी तथा वाद मे उन्होने जीव दया के कार्यों मे मुक्त भाव से सहयोग दिया ।

चातुर्मास पूर्ण होने पर आचार्य श्री ने गुरूडी गाव की सीमा मे विहार करते हुए प्रवेश ही किया था कि सामने से मोती नामक एक खटीक चौरासी वकरे लेकर मारने के लिए उदयपुर जा रहा था । आचार्य श्री ने उसको इस तरह उपदेश दिया तथा हृदय भेदक लावणी सुनायी कि खटीक पैसे लेकर वकरे सुपुर्द करने के लिए तैयार हो गया । पूज्य श्री के साथ श्रावक श्री नदलालजी मेहता श्री प्यारचदजी वगैरह थे जिन्होने तत्काल सभी वकरे छुडा लिये ।

विहार करते हुए आचार्य श्री कानोड पधारे जहा करीव सौ स्कध हुए । वडी सादडी मे तो धर्मोपकार के कई काम हुए वहा के ओसवालो तथा वोहरो मे वैमनस्य चल रहा था जिससे जीव हिंसा मे भी वढोतरी हो रही थी । पूज्य श्री के प्रभावशाली उपदेशों से दोनो जातियो मे भाईचारा और सघ वन गया । इसके फलस्वरूप वोहरो ने जीवदया के सवव मे ये शर्तें स्वीकार की—

१ वडी सादडी के तालाव मे कोई भी वोहरा मछली न पकडेगा और न मारेगा । २ प्रत्येक एकादशी और अमावस्या के रोज जीव हिंसा वद रखी जायेगी, ३ श्रावण भादवा वैशाख तथा अधिक मास मे किसी भी दिन जीव हिंसा नही होगी, ४. आम रास्ते मे या चौडे मे कोई भी मास लेकर वाहर नहीं निकलेगा । जीवदया के ऐसे कार्य की सपन्नता से लोग पूज्य श्री के विशुद्ध व्यक्तित्व की मुक्त कठ से प्रशसा करने लगे । उस समय पूज्य श्री वडी सादडी मे करीव एक माह तक विराजे इस समय मे जीवदया के अनेक उपकारी कार्य हुए थे । जयपुर

चातुर्मास से जो अभिनव गति से अहिंसा का प्रचार और उसमे राजवशियो के सहयोग का जो क्रम शुरु हुआ था वह वरावर आगे वढता जा रहा था ।

युवाचार्य पदारोहरण महोत्सव एव अपूर्व सम्मेलन :

उस वर्ष मे देश के कई भागो मे इन्फ्लूए जा नामका भयकर रोग फैल गया था। इसका असर मेवाड क्षेत्र मे भी था । इस दुष्ट रोग ने पूज्य श्री को भी अपने पजे मे ले लिया। तीव्र ज्वर मे भी पूज्य श्री अपने नित्य नियम शुद्धोपयोग पूर्वक करते और समभाव से वेदना सहते थे । थोडे दिनो मे आपश्री को आराम हो गया, लेकिन शरीर की क्षण भगुरता को समझ कर आपश्री ने पूर्वाचार्यों की कीर्ति को वनाये रखने तथा सप्रदाय की सुव्यवस्था एव निरतर उन्नति के लिए सुयोग्य मुनि श्री जवाहरलालजी म सा को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत करने का निश्चय किया । आपश्री ने निश्चय कर उदयपुर, रतलाम आदि कई शहरो व ग्रामो के अग्रणी श्रावको को वनाया और उनकी सम्मति चाही । सभी आचार्य श्री के विचार से अतीव प्रसन्न हुए क्योकि श्री जवाहरलालजी म सा की सुयोग्यता अतुलनीय थी ।

पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा ने ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य मे सराहनीय विकास किया था, उनकी वक्तृत्व शक्ति प्रभावशाली थी एव शास्त्रीय ज्ञान का ऐसा गहरा अध्ययन था कि उनके समान असाधारण गुणो का धारक कोई विरला ही साधु होगा । सभी को इसका पूर्ण विश्वास था कि वे आचार्य पद पर आरूढ होकर जैन धर्म की श्रेष्ठ प्रभावना कर सकेंगे । इस विश्वास का सुदृढ आधार भी था, क्योकि पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा तव तक महाराष्ट्र एव दक्षिण भारत मे जैन धर्म की विजय पताका फहरा चुके थे । उन क्षेत्रो मे उनका इतना यश फैल गया था कि जैन और जैनेतर लोग उन्हे जैनियो का दयानंद सरस्वती कहने लगे थे । दक्षिण मे ही श्री जवाहरलालजी म सा की भेट लोकमान्य तिलक के साथ हुई थी, जिन्होंने उनकी असाधारण ज्ञान सपत्ति एव अद्वितीय वाक्चातुर्य की भूरि–भूरि सराहना की थी । आपके ही सुझाव पर लोकमान्य तिलक ने ही अपनी स्वरचित पुस्तक गीता रहस्य मे जैन धर्म विषयक उल्लेख मे वाछित सशोधन करना स्वीकार कर लिया था । अत ऐसे गुणालकृत मुनिराज आचार्य श्री के युवराज वनाये जा रहे थे तो उसमे उनकी सुयोग्यता पर किसको शका हो सकती थी ? शका की वात तो दूर समग्र चतुर्विध सघ उनकी सुयोग्यता से आश्वस्त था कि उनके नेतृत्व में पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा की सप्रदाय की कीर्ति अधिकाधिक समुज्ज्वलता प्राप्त करती रहेगी ।

सपूर्ण चतुर्विध सघ की सहमति के अनुसार पूज्य श्री ने वि स १९७५ के कातिक शुक्ला द्वितीया के दिन व्याख्यान मे जाहिर कर दिया कि पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा युवाचार्य पद पर मनोनीत कर दिये गये हैं इस घोषणा से सकल सघ मे आनद की लहर फैल गई । यह समाचार उदयपुर श्री सघ के एक शिष्ट मडल ने पडित प्रवर श्री जवाहरलालजी म सा को पहुचाया तथा पछेवडी को क्रिया तपस्वी स्थविर मुनि श्री मोतीलालजी म सा के हाथ से करने वावत आचार्य श्री का सदेश भी दिया । श्री जवाहरलालजी म सा. उस समय

दक्षिण मे विराजते थे । यह समाचार मिलते ही उन्होने पहले आचार्य श्री के दर्शनो का लाभ लेकर फिर पछेवडी धारण करने की अभिलाषा प्रकट की । इस दृष्टि से चातुर्मास पूर्ण होते ही उन्होने मालवे की तरफ उग्र विहार शुरू कर दिया । रतलाम मे दोनो महापुरुषो का समागम हुआ ।

रतलाम मे ही वि स १९७६ के चैत्र बदी ९ के दिन आचार्य श्री ने श्री जवाहरलालजी म सा को युवाचार्य पद पर चतुर्विध सघ के समक्ष नियुक्त किया एव पछेवडी धारण कराई । इस अलभ्य अवसर पर देश के विभिन्न भागो से आए श्रावक श्राविकाए उपस्थित थे ।

इस पावन महोत्सव के अवसर पर ऐसा अपूर्व सम्मेलन हुआ कि जो चिर स्मरणीय वन गया । पचेड के ठाकुर श्री चैनसिंहजी इस मे सम्मिलित हुए थे और उन्होने प्रकट किया कि ऐसा महोत्सव उन्होंने जिंदगी भर मे कभी नही देखा था । इस महोत्सव मे सम्मिलित होने के लिए देश के प्रत्येक प्रात मे से करीव २०० ग्राम नगरो के सात–आठ हजार श्रावक–श्राविका पहुचे थे । रतलाम श्री सघ ने देश के विभिन्न भागो मे चादर महोत्सव के समचार यथा समय को पहुचा दिये थे ।

सुयोग्य हाथो द्वारा एक सुयोग्य को युवाचार्य पद की चादर ओढाने का दृश्य वडा ही भव्य एव चित्ताकर्षक था । हजारो श्रावक–श्राविकाओ की मेदिनी नानाविध पचरगी पोशाको मे सजी हुई शोभायमान हो रही थी । जिस समय आचार्य श्री का पधारना हुआ, वह छटा अपूर्व थी । आचार्य श्री ने मगलाचरण फरमा कर श्री नदी सूत्र का स्वाध्याय किया । फिर युवाचार्य श्री जी को कई अत्युपयोगी सूचनाए की और अपने शरीर पर धारण की हुई निज चादर को प्रसन्नता पूर्वक युवाचार्य श्री जी को सभी मुनिराजो के हाथ लगाकर ओटा दी । उस अलौकिक दृश्य को देखकर लोगो ने जैन शासन एव आचार्य–युवराज की जय के नारे लगाये ।

इस अवसर पर वहा उपस्थित देश भर के प्रमुख श्रावको ने अनुमोदन एव सतोष प्रकट किया और जो श्रावक उपस्थित नही हो सके थे तथा जिनके तार व पत्र आये थे, वे पढकर सुनाये गये ।

वाद मे शेष काल आचार्य श्री एव युवाचार्य श्री रतलाम मे विराजे, जहा जीवदया के अनेक कार्य सपन्न हुए । कई पचेन्द्रिय जीवो की घात वचाई गई, जीवदया के लिए फड भी इकट्ठा हुआ ।

जैन गुरु कुल की स्थापना :

आचार्य श्री एव युवाचार्य श्री विहार करते हुए जव छोटी सादडी पधारे तो आप द्वय श्री के सद्उपदेश से प्रभावित हो कर वहां के निवासी श्री नाथूलालजी गोदावत ने एक साथ सवा लाख का दान देने की इच्छा प्रकट की । उनका विचार था कि इस राशि के व्याज से कोई ऐसी शुभ प्रवृत्ति शुरू की जाय ताकि वह प्रवृत्ति नियमित रूप से सचालित होती रहे और राशि भी यथावत् वनी रहे ।

सघ के अग्रणी लोगो ने सेठ गोदावतजी की भावना के अनुसार यह निश्चय किया कि एक जैन गुरुकुल की स्थापना की जाय जिसमे अधिक से अधिक विद्यार्थियो को नि शुल्क अथवा अर्द्ध–शुल्क मे प्रवेश दिया जाय ताकि वे धार्मिक शिक्षण के साथ व्यवहारिक शिक्षण भी प्राप्त कर सकें। किंतु उनका चारित्र निर्माण ऐसा सुघड और सु दर हो कि वे अध्ययन पूर्ण होने के बाद सामाजिक क्षेत्र मे अपनी छाप छोड सकें। विद्यार्थियो के लिए भोजन की व्यवस्था भी वही करने का निर्णय लिया गया, जिससे चौवीसो घटे अपने शिक्षको की सतत देख रेख मे रहकर विद्यार्थी अपने जीवन को पूर्ण सस्कारित बना सकें।

सबसे पहले जिस सस्था का प्रारभ हुआ उसका नाम श्री गोदावत जैन आश्रम रखा गया। पहले यह सस्था गाव मे ही थी। बाद मे गाव से कुछ दूरी पर प्राकृतिक रम्य वातावरण मे इस सस्था का अपना निजी भवन बन गया और तब इसका नाम भी बदल कर आश्रम के स्थान पर गुरुकुल कर दिया गया। उन महापुरुषो के सदुपदेश का ही सुफल है कि सेठ गोदावत जी ऐसी दानशीलता की शुभ प्रेरणा उत्पन्न हुई तथा ऐसी शिक्षा-सस्था का जन्म एव विकास हुआ।

छोटी सादडी से आचार्य श्री आदि उग्र विहार का कष्ट देखकर भी अजमेर इसलिए पधारे कि कई श्रावको ने जावरा वाले सतो का मामला निपट जाने की आशा प्रकट की थी। किंतु किन्ही विघ्न सतोपियो के कारण वह आशा फलवती नही हो सका। एक पत्र सपादक ने अजमेर के दृश्य का इस तरह वर्णन किया है कि बहुत से बादल इकट्ठे हुए, गभीर गर्जनाए भी ध्वनित हुई, बिजली भी चमकी और वर्षा के सभी चिह्न प्रकट हुए, परतु अत मे सारा दृश्य बिखर गया और जैसी गर्मी थी वह बनी रही।

अजमेर से आचार्य श्री ने ब्यावर की तरफ और युवाचार्य श्री ने बीकानेर की तरफ विहार कर दिया। आचार्य श्री के चातुर्मास की सभावना नवाशहर (ब्यावर) मे होने के कारण आपश्री का विचरना मारवाड के ग्रामो मे होने लगा। बाबरा गाव मे पूज्य श्री की प्रेरणा से श्रावको ने १५० बकरो को अभयदान दिया। उन्ही दिनो मे उदयपुर महाराणा साहब के भतीजे शिवरती महाराजा हिम्मतसिंहजी के कु वर साहब की बारात पास के रास ग्राम मे आई हुई थी और जब उनको पता चला कि पूज्य श्री बाबरा मे विराजते हैं तो वे तुरत सेवा मे पहुचे और उन्होंने जीवदया के कई कार्यो के आश्वासन के साथ रास ग्राम मे पधारने की पूज्य श्री से प्रार्थना की। विवाह मे किसी भी पशु–पक्षी का वध न होने देने की प्रतिज्ञा तो उन्होंने उसी समय कर ली। आचार्य श्री के रास पधारने से सैकडो बकरो को अभयदान मिला तथा कई मासाहारी लोगो ने मास भक्षण के त्याग किये।

रास से विहार करते हुए आचार्य श्री केकिन, कालू होते हुए जैतारण पधारे। बीच मे बलूदा ग्राम मे जीवदया का काफी कार्य हुआ।

शरीर पिंड से विदाई :

जिस दिन आचार्य श्री का जैतारण पदार्पण हुआ, उस दिन आचार्य श्री ने स्वाध्याय

आदि सभी नित्य समाधिपूर्वक पूरे किये और दूसरे दिन भी आप श्री प्रात कालीन नित्य नियमो से निवृत्त हुए किन्तु पाटे पर विराज कर जब व्याख्यान फरमाने लगे तो सिर्फ आधे घण्टे बाद ही अचानक आप श्री को जोरदार चक्कर आया और आखो मे असह्य पीडा पैदा हो गई । आचार्य श्री ने तत्काल सूत्र नीचे रख कर आखें ढकी और फिर चश्मा लगाकर सूत्र पढने की चेष्टा की लेकिन कुछ दिखाई नही दिया । तत्काल दूसरी वार और चक्कर आया, तब तो आप श्री के सिर मे भयकर पीडा होने लगी । ऐसा होने पर भी आचार्य श्री जबानी व्याख्यान फरमाने लगे । लेकिन बाद मे तो चक्कर पर चक्कर आने लगे और दर्द का जोर बहुत बढ गया । तब आप श्री अन्य मुनि श्री गब्बूलाल जी को व्याख्यान देने की आज्ञा देकर अन्दर पधार गये । वहा आप श्री ने श्री मनोहरलाल जी आदि के समक्ष कहा—मैंने वृद्ध पुरुषो के मुह से सुना है कि जब यकायक आख की रोशनी चली जाती है तो यह समझना चाहिए कि उस व्यक्ति की मृत्यु समीप आ गई है । इसलिए अब मुझे सथारा करा दो । और मुनि श्री हरकचन्द जी आ जावे तो मैं आलोचना (आलोयणा) कर लू । सूचना मिलने पर नवा शहर से मुनि श्री हरकचन्द जी म सा उग्रतम विहार करके नीमाज होकर जैतारण पहुचे । उनके पहुचते ही आचार्य श्री ने कहा—अब मुझे शीघ्र सथारा और आलोयणा कराओ । इस जीव और काया के भिन्न होने मे अब मुझे विशेष विलम्ब दिखाई नही देता है । उन्होने तथा अन्य सन्तो ने आग्रह किया कि अभी तक व्याधि का उपचार भी शुरू नही हुआ है, फिर सथारा कैसे करा दें ? जैतारण के श्रावको ने आचार्य श्री की व्याधि के समाचार जगह-जगह दे दिये थे, अत वहा श्रावक लोग आने लगे । श्रावको ने जब आचार्य श्री के दर्शन करके सुखसाता पूछी, तब आचार्य श्री के मस्तक मे तीव्र वेदना हो रही थी फिर भी आप श्री ने "घोरा मुहुत्ता अबल सरीर" (उत्तराध्ययन सूत्र) का तात्पर्य समझाया और कहा कि अब मेरा अन्तिम समय सथारे का आ गया है । उस समय युवाचार्य श्री आपके पास मे नही थे वरना उन्हे वे विशेष सूचनाए देते ।

मृत्यु मुख के सामने खडी हुई थी किन्तु उन महापुरुष की मुखाकृति पर भय का कोई भी चिन्ह दिखाई नही दे रहा था । शिष्य समुदाय को अपने पास मे बुलाकर अन्तिम उपदेश के रूप मे यह फरमाते हुए अन्तिम विदा ली ।

"मुनिराजो, सयम को दीपाना, एकता के साथ रहना, पडित श्री जवाहरलाल जी की आज्ञा मे विचरना । वे दृढ धर्मी चुस्त सयमी और मुझसे भी तुम्हारी अधिक साल-सभाल रख सकते हैं । मैं और वे एक ही स्वरूप के है—ऐसा समझना, उनकी सेवा करना, श्री हुक्म महाराज की सम्प्रदाय को जाज्वल्यमान रखना और शासन की शोभा वटाना । क्षमाता हू, क्ष-मा-क-र-ना" कहते-कहते पूज्य श्री रुक गये ।

पास बैठे हुए मुनि-मण्डल के चक्षु अश्रुपूर्ण हो गये, एक मुनिराज ने उत्तर दिया—पूज्य साहब आपकी आज्ञा हमे शिरोधार्य है आप निश्चित रहे । हम बालको को आप क्या क्षमाते हैं, सच्चा क्षमाना तो हमे चाहिए कि आपके उपकार के प्रमाण मे हम आपकी किंचित् भी सेवा का लाभ नही ले सके । इससे अधिक बोलना नहीं हो सका क्योकि समय सूचक पूज्य

श्री ने जल्दी ही सूत्र की गाथाए उच्चरित करनी प्रारम्भ कर दी । सभी शिष्य भी मन्द-स्वर मे उनका साथ देने लगे जिसमे वातावरण पूर्ण शातिमय हो गया ।

दूसरे दिन आपाढ शुक्ला द्वितीया को सवेरे अजमेर से श्री गाढमल जी लोढा तथा व्यावर के कई गृहस्थ आ पहुचे ।उस दिन पूज्य श्री के शरीर मे व्याधि वहुत वढ गई थी और नित्य-नियम भी नही हो सका था । आचार्य श्री भी वार-वार फरमा रहे थे—जिस दिन मुझसे नित्य-नियम न हो उस दिन समझना कि मेरा अन्त काल समीप है । इस कथन से मुनिमण्डल चिन्तित हो उठा और उस दिन आचार्य श्री को सागारी सथारा करा दिया । रात को तो आजीवन सथारा भी करा दिया गया था । उसी रात के पिछले प्रहर मे करीव ५ वजे मिट्टी के कच्चे घडे की तरह औदारिक शरीर को त्याग कर पूज्य श्री की अमर आत्मा स्वर्ग सिधार गई । इस प्रकार से जैन शासनाकाश का जाज्वल्यमान सूर्य अस्त हो गया ।

पूज्य श्री के शरीर मे रहा हुआ प्राण उनका अपना ही नही अपितु सकल सघ का था । कई स्थानो पर तपश्चर्या प्रारम्भ हुई । दान दिया गया, प्रार्थनाए की गई और उनके स्वर्गारोहण मे सर्वत्र चतुर्विध संघ मे गहरा शोक छा गया । काठियावाड मे कोहिनूर के समान प्रकाश करने वाला राजपूताने का यह रत्न और मालवा मेवाड की मणिरूप यह आत्मा अभी तक इन महात्मा के शरीर मे थी, मानो ऐसा प्रतीत हुआ कि वह समस्त श्री सघ मे व्याप्त हो गई । सच पूछे तो उनका शरीर गया, मूर्ति अदृश्य हो गई, उनका दर्शन पिण्ड विलुप्त हो गया, स्थूल ससार मे से उनका स्थूल स्वरूप नही रहा, परन्तु उनका यश शरीर आज भी विद्यमान है और सदा-सदा विद्यमान रहेगा ।

तीसरे दिन वीकानेर, उदयपुर आदि कई ग्राम, नगरो के श्रावक एकत्रित हो गये । चन्दनादि लकडियो से चिता तैयार की गई । वहुतो की चिता मे आग रखने की हिम्मत नहीं हुई । अन्त मे पूज्य श्री की मानुषी देह भस्मीभूत हो गई ।

पूज्य श्री का अवसान मात्र ५१ वर्ष की आयु मे ही हो गया था । अन्तिम कसौटी तक तप कर शुद्ध कुदन होने मे पूज्य श्री को असह्य परिषह सहन करने पडे थे । पूज्य श्री के प्रकाशित कीर्तिदीप को वुझाने के लिए कईयो द्वारा निन्द्य प्रयास किये गये थे किन्तु सभी जानते हैं कि सूर्य के सामने धूल उछालने वाले की क्या दशा होती है ? पूज्य श्री के शुद्ध सयम के तेज से ईर्ष्याग्नि वुझ जाती थी । ईर्ष्या के वेग मे अपने चारित्र्य धर्म को कलकित कर वैठने वालो को वे दया की दृष्टि से देखते और उन्हे समझाते कि ऐसा करने मे जैन धर्म की अप्रतिष्ठा होगी ।

आप श्री ने लगभग ३२ वर्ष तक विशुद्ध सयम के साथ दीक्षा पाली और उसी अवधि के दरम्यान करीव २० वर्ष तक आचार्य पद को सुशोभित किया । आपने अनेकानेक जीवो को प्रतिवोध देकर उनके जीवन को सार्थक वनाया । साथ ही हजारो जीवो को अभय दान दिलाने का महान् जीवदया अभियान सफल वनाया । चतुर्विध सघ पर आप श्री का उपकार अवर्णनीय है क्योकि आपकी ज्ञान-दर्शन चारित्र्य की आराधना अकथनीय थी । आपकी

गुण–गरिमा सम्पूर्ण भारत–भूमि पर फैली तथा जैन ही नही जैनेत्तर समाज ने भी आपके सदुपदेशो को ग्रहण करके अपने जीवन को धन्य बनाया ।

श्री जी के प्रति व्यक्त भाव–भीने उद्गार :

आचार्य श्री के स्वर्गवास के समाचार प्राप्त होते ही मारवाड, मालवा, मेवाड, गुजरात, काठियावाड, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र, पजाब इत्यादि अनेक प्रान्तो के अनेक नगरो तथा ग्रामो मे शोक प्रदर्शक सभाए की गई। व्यापार, व्यवसाय बन्द रखा गया, अक्ते पाले गये, धर्म ध्यान किया गया और लाखो रुपये जीवदया के कार्य मे व्यय किये गये ।

किन्ही उल्लेखनीय स्थानो पर आप श्री की स्मृति मे जो आयोजन रखे गये उनका विवरण निम्नाकित है —

१ **बम्बई** —यहा मु बई सघ की वृहत्त सभा, चीचपोकली के जैन उपासरे मे रखी गई जिसमे बडी सख्या मे श्रावक–श्राविकाओ की उपस्थिति रही । सघ द्वारा पूज्य श्री की क्षति अपूरणीय मानी गई । गहरा शोक प्रदर्शित किया गया । जीवो के अभय दान फड मे दान दिया गया और बाद्रा आदि स्थानो के कसाईखाने बन्द रखवाये गये । बम्बई के सभी प्रमुख बाजार बन्द रहे ।

२ **रतलाम.**—बडे स्थानक मे समस्त सघ की एक सभा बुलाई गई जिसमे शोक दर्शक तार पत्र पढे गये और सद्गत पूज्य श्री का जीवन चरित्र सुना कर पूज्य श्री के अकस्मात् वियोग से समस्त सघ को हुए अतीव खेद का प्रदर्शन किया गया । प्रस्ताव पारित किया गया कि नवाचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा को एव मुनि मण्डल को आश्वासन देने हेतु तथा उनकी तेज क्रान्ति के प्रवर्द्धमान होने की शुभकामना करते हुए बीकानेर तार दिये जावे ।

३ **राजकोट** —यहा के तालुका स्कूल के हॉल मे राजकोट स्टेट के मुख्य दीवान राव बहादुर हरजीवन भवान भाई कोटक बी ए एल एल बी के सभापतित्व मे राजकोट वासियो की एक जाहिर सभा हुई जिसमे सभापति एव अन्य वक्ताओ ने पूज्य श्री के राजकोट चातुर्मास मे किये गये अवर्णनीय उपकारो का अत्यन्त ही प्रभावशाली भाषा मे विवेचन किया तथा पूज्य श्री के स्वर्गवास पर गहरा शोक प्रकट किया । फिर सर्वानुमति से शोक–प्रस्ताव पारित किया गया । एक प्रस्ताव पारित कर गुणवान पूज्य श्री द्वारा समाज पर किये गये उपकारो के बदले उनका जितना भी मान और भक्ति प्रकट की जाय वह थोडी है—ऐसा मन्तव्य प्रकट किया गया ।

४ **जोधपुर:**—पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा के आकस्मिक स्वर्गवास के स्थानीय श्री सघ ने बहुत ही गहरा शोक प्रकट किया । प श्री पन्नालाल जी महाराज ने उस दिन व्याख्यान बन्द रखा । दान पुण्य के कार्य किये गये ।

५ कलकत्ता.—तार द्वारा समाचार मिलते ही समस्त श्रावक भाइयो ने मारवाडी चेम्बर्स की सम्मति के अनुसार वाजार का सव काम वन्द रखा । हठखोला पाट का वाजार भी वन्द रहा । सवर, पौषध तथा दान-पुण्य वहुत हुआ ।

६ भीलवाडा —समाचार मिलते ही जैन एव जैनेतर समाज मे शोक की लहर छा गई । धर्म-ध्यान, दान-पुण्य आदि यथाशक्ति वहुत हुआ । जावरा वाले सन्त श्री देवीलाल जी महाराज यहा विराजते थे उन्हे वहुत रज हुआ—व्याख्यान भी वन्द रखा तथा गोचरी हेतु भी नही गये ।

७ रामपुरा —पूज्य श्री के स्वर्गवास की खबर सुनते ही यहा विराजित मुनि श्री इन्द्रमल जी म सा को एव सकल सघ को अत्यन्त खेद हुआ ।

८ वड़ी सादडी —सकल सघ मे अतीव शोक छा गया । व्याख्यान वन्द रहा एव धर्म-ध्यान दान-पुण्य, व्रत-प्रत्याख्यान वहुत हुआ ।

९. रावलपिंडी —समस्त जैन सघ मे शोक छा गया तथा सुमति मित्र-मण्डल के अधीन जितनी सस्थाए थी वे सव वन्द रखी गई ।

१० रायचूर:—यहा पूज्य श्री की स्मृति मे एक "श्री लाल जैन पुस्तकालय" खोला गया ।

११ धोराजी —शतावधानी प रत्न चन्द्र जी महाराज ने व्याख्यान मे शोक प्रदर्शित करते हुए पूज्य श्री के साथ अपने परिचय का सन्दर्भ देते हुए पूज्य श्री की गुण-गरिमा की । वहुत व्रत-प्रत्याख्यान हुए । सैकडो रुपयो के कपासिए अपग ढोरो को खिलाए गये ।

१२ भूसावल —समाचार मिलते ही तमाम व्यापार वन्द रखा गया और श्रावको ने दया पौषध के साथ पूरा दिन धर्म-ध्यान मे व्यतीत किया ।

१३ अमृतसर —युवराज श्री काशीराम जी महाराज ने व्याख्यान वन्द रख कर भारी शोक प्रदर्शित किया । समस्त सघ मे भारी शोक रहा ।

१४ हिंगन घाट.—साधुमार्गी तथा मन्दिर मार्गी भाइयो ने मिलकर व्यापार व्यवसाय वन्द रखा तथा धर्म-ध्यान किया ।

१५ कपासन:—तपस्वी श्री हजारीमल जी म सा ने तथा श्रावको ने अतीव शोक व्यक्त किया । व्याख्यान व वाजार वन्द रखा गया । पीजरा पोल खोलने का प्रवन्ध हुआ ।

१६ जावद —समस्त श्रावको ने दुकाने वन्द रखी और उपासरे मे धर्म-ध्यान किया । कसाई खाने वन्द रखवाये गये, गरीवो को वस्त्र तथा भोजन वाटा गया, पशुओ को खल व घास, कवूतरो को ज्वार तथा कुत्तों को रोटिया डाली गई ।

उपरोक्त स्थानो के अलावा उदयपुर, वीकानेर, दिल्ली, अकोला, शिवपुरी, सिंदूरणी,

जावरा, मोरवी, जयपुर आदि अनेक नगरो व ग्रामो मे शोक सभाए आयोजित की गई एवं पूज्य श्री के प्रतापी जीवन के प्रति भावभीने उद्गार व्यक्त किये गये ।

पूज्य श्री के स्वर्गारोहण पर कई गण्यमान्य व्यक्तियो ने अपनी भावना पूर्ण श्रद्धाजलिया व्यक्त की एव कई पत्रो ने पूज्य श्री के गुणशील जीवन पर लेख प्रकाशित किये उनमे से किन्ही के कुछ महत्त्वपूर्ण अशो का उल्लेख नीचे किया जा रहा है —

सन्त शिष्य भिक्षु नानचन्द्र —लीवडी मे पूज्य महाराज का आगमन सवत् १९६७ की वैशाख शुक्ला ६ को २९ ठाणो से हुआ । वे वहा के स्कूल मे प्रतिदिन व्याख्यान फरमाते थे । वहा के ठाकुर साहब भी प्रतिदिन उपस्थित होते थे । पूज्य श्री के व्याख्यान की शैली अत्यन्त आकर्षक, शास्त्रानुसार और देश काल की वर्तमान भावनाओ की पोषक थी । उनकी प्रकृति अत्यन्त सरल और निर्मल थी । प्रत्येक जाति के मनुष्य श्रवण सत्सग का लाभ लेते थे और उन्हे उनके अतिशय के कारण अपने ही धर्म गुरु के समान मानते थे । मारवाड, मेवाड की वीर भूमि के इतिहास के दृष्टातो पर सिद्धान्तो को इस तरह घटाते थे कि श्रोता लोग तल्लीन वने बैठे रहते ।

ऐसे एक परम दुर्लभ गुणधारी महान् सन्त के देहान्तर गमन से हम सवको सचमुच मे वडा भारी खेद है । समाज का कर्त्तव्य है कि पूज्य श्री के गुणो को अपने जीवन मे उतारने का प्रयत्न करें और उन गुणो द्वारा उनकी स्मृति की सरक्षा कर ।

श्री चुन्नीलाल नागजी वोरा, राजकोट —पूज्य श्री की वाणी का इतना अधिक प्रवल और हृदयस्पर्शी प्रभाव था कि स्वधर्मी एव अन्य धर्मी आदि हजारो लोग सव जगह उनके उपदेशो का लाभ लेने के लिए एकत्रित होते थे तथा उपदिष्ट शुभ प्रवृत्तियो मे अपना सहयोग जुटाते थे । पूज्य श्री के दो मुख्य गुण कि जिन गुणो के द्वारा जैन साधु या किसी भी धर्म का त्यागी साधु अग्रेसर गिना जाता है, ये थे चैतन्य की स्वतन्त्रता का सम्पूर्ण ज्ञान और इस स्वतन्त्रता के प्राप्त होने एवं विकसित करने के तदात्मक उपाय । ये दोनो अलभ्य महान् गुण आचार्य श्री मे भरपूर थे ।

जैन समाज के ऐसे एक महान् पूज्य आचार्य श्री के निर्वाण (स्वर्गवास) मे एक अनमोल रत्न खो गया है । (मुबई समाचार मे प्रकाशित लेख मे से) ।

श्री पोपटलाल केवलचन्द शाह —आचार्य श्री साधु समाज के प्रभावशाली नेता, शास्त्र सिद्धान्त के पारगामी, वीतराग की आज्ञा का सव साधुओ से पालन कराने वाले, पूर्ण प्रेमी, शासन की रक्षा करने मे अडिग, साधु मण्डल मे कही भी शिथिलाचार दाखिल न हो जाए, ऐसा प्रत्येक पल-पल पर ध्यान रखने वाले, पवित्रता के पालक और समस्त दिन स्वाध्याय मे लीन रहने वाले एक महात्मा थे । इनकी खामी तो समाज को पग-पग पर प्रकट होगी ।

मैंने कई साधु-साध्वियो के दर्शन एव सत्सग का लाभ लिया है परन्तु ऐसे एक

भी सन्त मैंने अपनी तमाम उम्र मे नही देखे जिनका प्रताप, जिनकी वाणी, जिनकी शासन रक्षा, जिनका उपदेश, जिनका तप-तेज, जिनका उद्योत प्रभाव, जिनका उत्साह ये सब एक साथ मिले हो जैसे कि पूज्य श्री श्रीलाल जी और काठियावाड मे जन्मे हुए पूज्य श्री गुलाबचन्द्र जी को मैं मानता हू। यो तो दूसरे भी बहुत से मुनि चारित्रशील एव न्याय-व्याकरण के ज्ञाता हैं परन्तु गुलाब-श्री लाल ये दो पुष्प अनोखे ही थे। एक मे सत्य के लिए बैचेनी तो दूसरे मे आत्म गौरव की स्वाभाविकता दृष्टिगत होती है। परन्तु ये दोनो उनका मूल्य बढाने वाले तत्व थे।

मैं बहुत दिलगीर हू कि पूज्य श्री के रूप मे जैन समाज का एक कोहिनूर अदृश्य हो गया है।

महान् सद्गुणो से अलकृत एक अति विशिष्ट व्यक्तित्व :

पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा के व्यक्तित्व मे इतने अधिक महान् सद्गुण समाहित थे कि वह व्यक्तित्व, अति विशिष्ट व्यक्तित्व हो गया था। उनकी असाधारण गुण सम्पत्ति दिव्य और भव्य थी। महान् सद्गुणो से अलकृत ऐसे महापुरुष भव्य आत्माओ के लिए महान् प्रेरणा के स्रोत सदा-सदा काल के लिए बने रहेंगे।

आप श्री का जीवन अनेकानेक सद्गुणो का भण्डार था, किन्तु उसमे से कुछ रत्नो का उल्लेख यहा इस आशय से किया जा रहा है कि जिनके स्वरूप को हृदयगम करके उन सद्गुणो को अपने जीवन मे उतार सकें, वह एक सराहनीय उपलब्धि हो सकेगी। यो गुणगरिमा की दृष्टि से भी इन सद्गुणो का स्वरूप हृदयोल्लास का कारण बन सकेगा।

महापुरुषो का आदर्श जीवन प्रकाश-स्तम्भ के समान होता है जो अन्धेरे मे भटकते हुए जीवन रूपी जहाजो को समुद्र पार कर लेने का मार्ग दिखाता है। वैसे ही इस महापुरुष के जीवनाधार सद्गुण-यदि उनसे सच्ची प्रेरणा ली जाय तो किसी के भी भूले भटके मन को धर्म पथ की ओर सहज ही मे प्रवृत्त करा सकते हैं। जो निम्नाकित हैं—

(१) चिंतन, मनन एव ज्ञानार्जन :

ज्ञानार्जन की कई सीढिया होती है तो उसकी पुष्ट पृष्ठभूमि होनी चाहिये। कुछ नया सीखे इसके लिए स्वस्थ चित्त तथा स्पष्ट मस्तिष्क अवश्य होना चाहिये। पूज्य श्री के पास यह पृष्ठभूमि बहुत ही पुष्ट थी। वे ब्रह्मचर्य के तेज से पडित थे तो उनकी जिज्ञासा उनकी प्रतिभा से भी आगे दौडती थी। वैसी पृष्ठभूमि मे सद्गुरु का सयोग तथा आप श्री का विनय उन्हे ज्ञानार्जन के क्षेत्र मे तेजी से आगे बढा ले गया। आप श्री जो कुछ नया सीखते थे, उस पर मनन करते थे तथा अपनी चिंतन की धारा मे मौलिकता उपजाते थे। फिर निरन्तर वह ज्ञानार्जन, जीवन की अमूल्य निधि बन गया।

अल्प समय मे ही आप श्री ने तत्त्वावबोध, आचाराग सूत्र, सूत्रकृताग, सुख विपाक,

उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नन्दी सूत्र, चारो छेद सूत्र तथा सूत्रो के सार स्वरूप एक सौ पचास श्लोक का थोकडा प्रकरण का अध्ययन कठस्थ कर लिया था। शेष सूत्र पुन-पुन पढने तथा मनन-चिंतन करने से उन्हे स्पष्ट हो गये थे। इनके सिवाय अनेक तात्विक, दार्शनिक तथा ऐतिहासिक ग्रन्थो का आपने अवलोकन किया था। यही नही, आधुनिक वैज्ञानिको के नये-नये आविष्कारो तथा पाश्चात्य दार्शनिको के ग्रन्थो की जानकारी भी आप श्री ने ली थी। यो देखें तो आप श्री का सम्पूर्ण जीवन ज्ञानाजन मे लगा रहा। आप ज्ञानवल के महावली थे।

(२) निर्मल एव विशुद्ध चारित्र :

पूज्य श्री इतने अधिक आत्मार्थी पाप भीरु और निरतिचार चारित्र की पालना मे सावधान रहते थे कि उनका सयमशील चारित्र अतीव निर्मल और विशुद्ध था। कहा गया है कि 'ज्ञानस्य फल विरति" अर्थात् ज्ञानार्जन करने के वाद भी अगर विशुद्ध चारित्र का विकास नही हुआ तो वैसा ज्ञान निष्फल ही माना जायेगा। अत ज्ञानार्जन का सुफल चारित्र शुद्धि के रूप मे प्रकट होना चाहिये। एक गृहस्थ के लिए भी चारित्र का सर्वाधिक महत्त्व माना गया है तो एक साधु की सच्ची शोभा तो उसकी निर्मल आचार वृत्ति ही हो सकती है। आचार्य श्री का चारित्र सम्पन्न जीवन तो स्वय की शोभा ही नही, दूसरो के लिए प्रेरणा का स्रोत व अनुकरणीय भी था। वीतराग प्रभु का आदेश ही उनका मुद्रा लेख और पवित्र धर्म स्वरूप था। इस आदेश का सर्वाग्रक्षत पालन आप श्री अप्रमत्त होकर सम्पूर्ण विवेक के साथ स्वय करते थे तथा अपने शिष्यो को भी उसी प्रकार से पालन करने की प्रेरणा भी देते थे। आहार-विहार मे कही भी आप श्री की समाचारी दोषपूर्ण नही वनती थी।

आचार्य श्री के निर्मल एव विशुद्ध चारित्र के मूल मे थी आपकी इन्द्रिय दमन की शक्ति। शरीर को पोषण देने वाले पदार्थों पर से क्या स्वय शरीर पर से भी आपने मूर्छा उतार रखी थी अत रसेन्द्रिय पर भी काबू था तो अन्य इच्छाए भी कठोर तपाराधन से समाप्त हो चुकी थी। इन्द्रिय दमन की नीव पर खडा किया चारित्र निर्मल भी होता है तो अटल भी।

(३) वाणी का जादू सा असर :

प्रिय और पथ्य वाणी उसी महापुरुष की हो सकती है जिसने अपने जीवन को ज्ञान एव चारित्र से साध रखा हो। आचार्य श्री की वाणी इसी कारण एक ओर तत्त्व ज्ञान से भरी पूरी होती थी तो दूसरी ओर श्रोता के हृदय के तारो को झनझना देती थी। आपके श्रोता तो मात्र श्रद्धालु श्रावक ही नही, अन्यमती विद्वान राजा-महाराजा, जागीरदार, वैष्णव, मुसलमान, मीणे, भील आदि भी होते थे जिन पर आपकी सरल एव सौम्य वाणी का जादू का सा असर होता था। उनकी ओजस्वी वाणी हृदयस्पर्शी होती थी कि सुनने वाला सुनकर ही नही रह जाता था, वल्कि सुनकर उसके शुभ प्रभाव को व्यवहार मे उतारने के लिए उतावला भी वन जाता था। यही कारण है कि आप श्री के उपदेशो ने हजारो धर्मोपकार के कार्य

सम्पन्न हुए ।

पूज्य श्री के प्रवचन अनुपम शैली मे होते थे । त्रिविध तापो से तप्त शोकाकुल निराश आत्माओ को ये प्रतापी महात्मा अपनी मधुर वाणी से नवीन उत्साह देते तो श्रोता का सुपुप्त हृदय नवजागृति पाकर कर्त्तव्यनिष्ठ बन जाता । आपकी सुधावर्षिणी वाणी ने अवर्णनीय उपकार किये ।

(४) आत्मबल पर आधारित निर्भयता :

भय ही मानव जीवन के पतन का सबसे बडा कारण होता है तो भयमुक्त जीवन आत्मोन्नति के सर्वोच्च शिखर तक सरलतापूर्वक पहुचा देता है । पूज्य श्री का आत्मबल तो एकदम बचपन से ही इतना बढा हुआ था कि बार-बार की बाधाओ को तोड कर भी आप श्री ने अपने वैराग्य को परास्त न होने दिया । इसी कारण आत्मबल के धनी आप श्री प्रारम्भ से ही पूर्ण निर्भय वृत्ति के महापुरुष थे ।

कानोड मे साप के साथ चार माह तक निवास, माडलगढ से कोटा जाते समय बीहड जगल का विहार, सुनेल के सुवासो के सामने सत्याग्रह आदि अनेक अवसर आपकी निर्भयता के परिचायक हैं । लोकापवाद के भय से भी आप श्री कभी भी कर्त्तव्य विमुख नही हुए । सम्प्रदाय परिवर्तन तथा बडे-बडे साधुओ का बहिष्कार, निर्भयवृत्ति के प्रमाण है ।

इस अनूठी निर्भयता के कारण ही आप श्री की कर्त्तव्यपरायणता अतुलनीय थी । शिष्यो के साथ व्यवहार मे कुसुम से भी अधिक कोमल मालूम होने वाला वह निर्मल हृदय, अनाचारी व्यवहार के समय वज्र से भी अधिक कठोर हो जाता था । निर्भयता सत्य के कारण रहती है और आप श्री का व्यवहार सत्य के ताप से तप्त हुआ तेजस्वी रुप बना रहता था ।

(५) अद्भुत स्मरणशक्ति की भावना :

पूज्य श्री की स्मरणशक्ति इतनी अद्भुत और असाधारण थी कि वैसी अवधानियो मे भी नही दिखाई देती है । वर्षो पहले मिले हुए श्रावक को वे अन्धेरे मे भी मात्र उसकी बोली से सहज ही पहिचान जाते थे । मोरवी के अग्रगण्य सेठ भवानीदास दोसाणी तो एक बार आश्चर्य चकित रह गये । वे पहली बार आचार्य श्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए तो आप श्री ने उनका नाम लेकर दया पालो कहा । वे हक्के-बक्के रह गये, बोले—पूज्य श्री मैं तो पहली बार हाजिर हुआ हू । फिर आपने मुझे पहिचान कैसे लिया ? आचार्य श्री ने मुस्कुराते हुए बताया—भाई, वर्षो पहले अजमेर कॉन्फ्रेंस के समय आपका फोटो देखा था । ऐसी थी आप श्री की विचक्षण स्मरणशक्ति । उदयपुर के रतनलाल जी मेहता तो कहा करते थे कि आचार्य श्री बोली से ही नहीं, पैरो की ध्वनि तक से व्यक्ति को पहिचान लेते थे ।

आप श्री की ऐसी भव्य स्मरणशक्ति ही आधारशिला थी, जिस पर त्वरित एव गूढ

रीति से आप ज्ञानार्जन कर सके तथा उसे सदा बनाये रख सके । आचार्यत्व पद का कुशल सचालन करने मे भी इस स्मरण शक्ति के कारण आपको एक एक साधु तथा साध्वी के आचार विचार का पूरा ध्यान रहता था ।

(६) कर्त्तव्य पालन मे सावधानी :

कर्त्तव्य पालन मे सावधानी वरतने का दूसरो को उपदेश देना आसान है किन्तु अपनी सावधानी परिपक्व बना कर दूसरो को उससे प्रेरित करना वडा कठिन होता है । यह कठिन क्षमता आचार्य श्री के जीवन मे भरपूर थी । कर्त्तव्यपालन मे सावधानी तभी बनती है जब जीवन मे पग-पग पर त्याग भावना बनी रहती है । त्याग प्रवल होता है तो कोई कामना कष्ट नही देती और निष्काम जीवन सदा कर्त्तव्यनिष्ठ होता है ।

आचार्य श्री ऐसे ही निष्काम कर्मयोगी थे । वे वाह्य त्याग की अपेक्षा आन्तरिक त्याग को प्रधानता देते हुए कहते थे—विषय कषाय के त्याग रूप आन्तरिक त्याग के विना वाह्य त्याग विना प्राणो की देह अथवा विना तीर के कुए जैसा होता है ।

(७) त्याग से ओत-प्रोत जीवन :

पूज्य श्री के रक्त के एक-एक अणु मे त्याग की भावना भरी हुई थी । पत्नी एव सम्पत्ति के त्याग से ही आपके जागृत जीवन का प्रारम्भ हुआ था तो वही त्याग समुन्नत होता हुआ धर्म के लिए सर्वस्व त्याग का स्वरूप बन गया । वाह्य और आन्तरिक त्याग ने आप श्री के आत्म स्वरूप को दर्पण के समान ऐसा उज्ज्वल बना दिया था कि भव्य आत्माए उसमे अपनी आत्माकृतिनिहारते ही वैराग्य भाव से अभिभूत बन जाती थी । अपूर्व त्याग को देखकर सामने वाले के दिल की कई तहो के नीचे दवा हुआ त्याग भाव भी उभर कर ऊपर आ जाता था और वह अपनी क्षमता के अनुरूप उसे क्रियान्वित कर देने के लिए उत्सुक भी बन जाता था ।

ससार मे आप श्री ने भोग देखा ही कहा था ? शुरू से लेकर अन्त तक आपका सम्पूर्ण जीवन त्याग से ही ओत-प्रोत था ।

(८) सरल, निश्छल एवं निरहकार वृत्ति :

ससार का त्याग करने के वाद भी कइयो को देखा जाता है कि वे कीर्ति के लोभ मे भटकते रहते हैं और अपनी छिपी हुई अहकार वृत्ति का पोषण करते रहते हैं, किन्तु आचार्य श्री पूर्णत सरल, निश्छल एव निरहकार वृत्ति वाले महात्मा थे । कीर्ति लालसा को वे उन्नति के पथ मे अन्तराय सम समझ कर उससे कोसो दूर भागते थे ।

आप श्री के स्वभाव मे सरलता इतनी थी कि छोटे से छोटे कार्य के लिए भी

दूसरो की वडी से वडी प्रशसा करते किन्तु अपनी प्रशसा कोई करता तो वे उसे टाल देते । अपनी सरलता, निश्छलता तथा निरहकार वृत्ति के कारण आप श्री कभी भी शिष्य मोह के फेर मे नही पडे तो आचार्यत्व का दम्भ भी आपके मन मे कभी नही उपजा ।

(९) सत्यनिष्ठा एव परमत–सहिष्णुता :

व्याख्यान मे अथवा एकात मे भी कभी भी आप श्री पर–धर्म की निन्दा का एक शब्द भी नही उच्चारते थे । धर्म स्वरूप के विवेचन मे भी वे सभी धर्मों के सिद्धान्तो का उल्लेख करते थे और यही कारण था कि कई धर्मों के मानने वाले आप श्री के श्रद्धालु भक्त हो गये थे ।

परमत सहिष्णुता से सत्यनिष्ठा सुदृढ वनती है और अनेकान्तवाद का सिद्धान्त फलित होता है । आचार्य श्री इस दृष्टि से सहिष्णु भी थे तो सत्यनिष्ठ भी ।

(१०) कर्म मल को धो डालने वाला कठिन तप :

वहुत से ज्ञानी साधु तपश्चरण मे कमजोर दिखाई देते हैं किन्तु सोने मे सुहागे की तरह आप कठोर तपस्या करने मे भी आगे रहते थे । आपके ३३ चातुर्मासो मे से एक चातुर्मास भी मुश्किल से ऐसा निकला होगा जिसमे आप श्री ने चातुर्मासारम्भ से सवत्सरी तक एकान्तर तप न किया हो । वेला, तेला, चोला, पचोला का अनशन तो आप श्री करते ही रहते थे । अठाई तप करके भी वरावर व्याख्यान फरमाते थे । तेरह उपवास का भी एक स्तोक पूज्य श्री ने किया था ।

आभ्यन्तर तपश्चरण पर आपका विशेष वल रहता था । वैयावृत्य का आपको विशेष ध्यान था । आचार्य पद पर रहते हुए भी शिष्यो के लिए आप कई वार आहार–पानी भी लाते तो उनका प्रक्षालन कार्य भी कर देते । एक प्रहर से अधिक निद्रा आप क्वचित् ही लेते थे और अधिकाश समय मे स्वाध्याय मे निमग्न रहा करते थे ।

(११) वालको को शिक्षा देने मे रुचि :

आप श्री की इस कार्य मे बहुत ही रुचि थी कि वालको को छोटी उम्र से ही सत्पुरुषो के सत्सग का लाभ मिले ताकि उनमे चारित्र का सुघड निर्माण हो सके । इसी उद्देश्य से वालको को शिक्षा देने मे तथा उन्हे सुसस्कारो के प्रति प्रभावित करने मे आप श्री की महती रुचि रहती थी । आप स्वय छोटे–छोटे वच्चो को भजन और स्तवन सिखाते तो छोटे–छोटे नीति वाक्य कठस्थ कराते ।

(१२) निश्चय पर अटलता .

आप श्री ने अपने जीवन का मूलमन्त्र वना रखा था कि "देह पातयामि कार्य वासाधयामि"

उनके लिए दुर्वलता सूचक कोई मध्यम मार्ग नही था । वास्तव मे कार्य सिद्ध वे पौरुषवान् ही कर सकते है जो अपने निश्चय पर अन्त तक अटल रहे । आचार्य श्री के सफल एव लोकप्रिय जीवन का रहस्य इस सद्गुण मे छिपा हुआ है ।

आचार्य श्री के इन तथा अन्य सद्गुणो के पुण्य स्मरण की सार्थकता इसी मे मानी जानी चाहिये कि ऐसे सद्गुणो को अपने जीवन मे भी उतारें ।



परिशिष्ट—१

जीवदया के पट्टे परवाने

(कुछ नमूने)

वानसी (मेवाड ठिकाने का पट्टा (१)

।। श्री राम जी ।।

महोर छाप छे :

हुकम कचेरी राजस्थान वामो वनाम समसी पचा जैन मार्गी साकीन सादडी वाला अठे आये मालूम कराई के मारे श्री पूज्यजी महाराज मारवाड सु पधारे है और अठे सादडी मे चातुर्मास करेगा सो महाराज को फरमान उपकार के वारे मे वदोवस्त के वास्ते फरमाया है जोसु और ठिकाना मे चाहे जैसो वदोवस्त करावे ।

और अवे अठे भी अरज है जो उपकार को वदोवस्त का वक्मे जीमु थाने जरिये हुकम नामा हाजा लीखो जावे है कि अठे खटीक, कसाई वगैरे की दुकान श्रावण, कार्तिक, वैशाख मास मे विलकुल वद रहेगा इके अलावा हमेशा मुजव इग्यारस व अमावस्या को तो थावर भी दुकान वद रहेगा । खटीक, कसाई लोग विना समजसु दुकान करेगा तो वीने सजा दे दी जावेगी । १९६५ के जेठ सुद ।

कुशलगढ़ रियासत का पट्टा (२)

नकल रोवकार महकमे खास व इजलास मुंशी सुजानमल काठिया कामदार कुशलगढ ता २१ ९ ९ ईसवी ।

सिक्का

चुंके मोसम वारिस खतम होने आया और जगल मे घास भी पका होकर सुखने आ गया है भील लोक अपनी कम कहमी मे इलाके हाजा के जगल मे आग याने (दवाग) वे अहती वाती से लगा देते है जिससे का तमाम घास सव किस्मकी लकडी जल जाती है उन्ही गरीब लोगो के गुजारे की वडी आधार की चीज है और ऐसा होने मे राज्य को भी नुकसान होता है अवल भी इस अमर से माकुल इतजाम रखने के लिए हुकम जारी हुआ है मगर इतमिनान लायक इंतजाम हुआ नही लिहाजा कवल आज गुजर जाने ऐसे वाका के इस साल इतजाम होना मुनासिव लिहाजा हुकम हुआ के ।

एक एक नकल रोवकार हाजा महकमे मालमे भेजकर लिखा जावे के इस वक्त जमावधी का काम शुरू है और हर देहात के भील वास्ते कटवाने के जमावधा महकमे माल मे आते हैं इस वास्ते हर मुखिया गाव से इस वात को काफी समजायसकर मुचलके तावानी रूपे पचरा

का लिया जावे के वो अपने अपने गाव की हद के जगल की पूरी निगरानी रखक दावड़ न लगावे व न लगने देवे अगर दवाड ऊपर से आई तो फौरन तमाम गाव के लोग जमा हो बुझावे और जगल या रास्ते मे तमाकु पीने वाले या दीगर अशखाश आग न डाल दें जिससे के अलो फैलकर जगल मे नुकसान पहोचाने का अहतमाल हो अगर इसमे किसी के जानीब से कसूर होगा तो उससे रूपे सदर तावान के वसूल किये जावेगे इससे और एक नकल रोवकार राजा पुलिस मे भेजी जावे और लिखा जावे के वो इस बात की पूरी निगरानी रखे याने दवाड़ के अमीनान चूडावारे व मोहकमपुरा व छोटा शखा कारकून तावे शराके तरप भेजा जावे और यह असल फाईल महकमे हाजा मे वास्ते दाखला के भेजो जाय फकत ।

वावरा (अजमेर) ठिकाने का पट्टा (३)

श्री परमेश्वर जी

सिक्को छे

सवरूप श्री ठाकरा राज श्री १०५ श्री मोतीसिंहजी लाखावतग जेनरा साधु पूननी महाराज श्री श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज मोटा उत्तम पुरुषारो पधारणें वावरे हुए तो मैं वादणने काया तरे इणा मुजव सोगन किया है सो जावजीव पाला जावसु ।

१. शिकार मे सूर वो नार सिवाय दूजो कोई जानवर मारा हाथसु नही मारसु ।

२ अमावस अगियारस महिना मे तिन आवे है सो मास बरारी छतीस तिथी हुए सो मारा राज मे जावजीव हलारो (हल) अगतो रेसी ।

३ वारस री तिथी रे दिन कुभार, लवार, तेलां न्याव, निभाडो घाणी, एरणरो अगतो पालसी ने कसाई खटीक री भी अगतो रेसी ।

४ मारा राज मे गाय वगैरे कसाई व परदेशी मुसलमान ने नही वेचसी ।

५ सुड कोकड रा खेतारो मारा राज मे वारे नाम देमा वानण देनी नही, वालसी सो राज रो कसूरवार हो सी ।

६ आसोज सुद १० ने मालो साल नव जीव वकरा ग्यारह रे कुकुडक लगाया जावसी ।

इणा मुजव पाला जावसी ए कलमा पीढी दर पीढी पाली जावसी स १९६४ पोश सुद १५ द कामदार महेताव चदरा छे श्री ठाकोर साहव रा हुकम मु लिख दिनो छे ।

गोगुदा (उदयपुर) ठिकाने का पट्टा (४)

श्री राम जी

श्री एकलिग जी — नववर

राजस्थान गोगुंदा मेवाड — ८५९

महोर छाप छे

स्वामी जी महाराज श्री पूज्य जी महाराज श्रीलालजी को हाल मे गोगुंदे पधारणो

हुओ आपका उपदेश की तारीफ सुण मारो भी सभा मे जावो हुओ । जो उपदेश श्रीमान को मैं सुणो मारो मन वहुत प्रसन्न हुओ और आप जैसा महात्मा का उपदेश सु हमेशा के वास्ते परवेह जानवरो की व हरण को शिकार छोड दी है और अठै राजस्थान मे आसोज सुदी ८ हमेशा सू दो पाडा रौ वलिदान हुवै है वी मैं स एक हमेशा के लिए बद कीधो सो मारी पुस्तहर पुस्त वध रहेगी । ई के पहले स १९६५ मे स्वामी जी महाराज चौथमल जी को पधारवो हुआ जय श्री वडा हजूर दो वकरा हर साल ऊमरा करवा को प्रण कीधो वो अव चला जावे है वीरो हमेशा अमल रहेगा । मैं श्री पूजजी महाराज का ई उपकार के लिए जतरो धन्यवाद कू थोडो है । स १९७१ का जेठ सुदी ७ सोमवार । द राजराणा दलपतसिंह

महियर स्टेट (गुजरात) का पट्टा (५)

रूपकार इजलासी मिस्टर हीरालाल गणेशजी अजारिया साहेव वी ए दीवान रियासत महीयर वार्क २-८-१९२० ई

मुहर महक्मा दीवान
रियासत मैहर
ह हीरालाल अजारिया

रियासत महीयर के मदिरोमा ये वकरा व दीगर जानवरो का वलिदान किया जाता है—यह कारवाई पसद नही होने मे यह आदेश दिया जाता है कि श्री देवी शारदाजी के मदिर या रियासत के कोई भी मदिर मे कोई देवी या देवता के नाम पर वकरा व दीगर जानवर काटने की व बलिदान देने की सस्त मुमानियत की जाती है अगर जो सख्श हुक्म महाराजा के खिलाफ करेगा या जिस सख्श को ऐसे नाजायजफेल करने की खवर होगी और वह दरवार मे इत्तला न करेगा तो फेल करने वाले को व जानने वालो को ६-६ माह की सख्त कैद की सजा दी जायगी और ५० ५० रु तक जुरमाना किया जायगा और जो सख्श इस फेल के करने वाले को गिरफ्तार कराके दरवार मे इत्तला देगा उसको १० रु ईनाम जुरवाना मे पेस्तर काट कर दरवार दिया जायगा । और वह सख्श खैरखा दरवार समझा जावेगा और इसका अमल दरामद आज ही के तारीख से होगा । लिहाजा हु ।

जरिये नकल रैवेन्यू आफिसर साहव को इत्तला दी जाय कि कुल पुजारियान व मालियान रियासत को जल्द इत्तला दे और सुपरिटेंडेंट पोलिस को भेज कर लिखा जाय कि रियासत के हर ग्राम व खास जगह पर चस्पा पोस्टर किया जाय डूडी पिटाई जावे और मदिर मे नकल चस्पा किये जाय आम मुनादी भी की जाय और दस दस, पाच पाच नकल रियासत हाजा के गिरदावरसिंह के वास्ते एलान भेज दी जाय और एक नकल मजिस्ट्रेट व एक नकल वाजार मास्टर को इत्तला दी जाय व एक नकल हिदायत नामे पर चस्पा की जाय ।

ह हीरालाल अजारिया दीवान महीयर स्टेट

नकल सेठ मेघजी भाई व शातिदास भाई को भेजी जाय । ह हीरालाल अजारिया

दि. १०-९-२० ।

नोट—इस प्रकार के कई पट्टे महियर स्टेट ने जारी किये थे जो अलग अलग प्रकार की जीव हिंसा पर पावदी लगाने से ताल्लुक रखते है ।

परिशिष्ट–२

पूज्य .प्रभावाष्ठकनि–(1)

☐ शतावधानी पडित रत्न श्री रत्नचद्रजी स्वामी

नमस्काराष्टकम्

(वसततिलकावृत्तम्)

सशुद्ध सयमघर सरल स्वभावम्,
मोक्षार्थ साधनपर प्रथित–प्रभावम् ।
तत्व–प्रचार–परिशामित–दु ख–दावम्
श्रीलाल-जिद् गणिवर नितरा नमामि ॥१॥

दृष्टे सदा स्रवति यस्य सुधा–समूहो,
यस्यार्द्र शुद्ध हृदयात् करुणाप्रपूर ।
यस्यानने वहति सौम्यनदी प्रवाह,
श्रीलाल जिन्मुनिवर तमह नमामि ॥२॥

विद्या विवादरहिता विनयेन युक्ता,
चित्त विरक्तमपि सर्वजनस्य रम्यम् ।
मुद्रा तु यस्य निज शाति समुद्रमग्ना,
श्रीलाल जित्कृतिवर तमह नमामि ॥३॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमत फुल्लसरोज भृङ्गम्,
शास्त्रीयतत्व शुभ मौक्तिक मराजहमम् ।
विस्तीर्ण-कीर्ति-धवलीकृत-दिग्विभागम्,
श्रीलाल जित्सुकृतिन शिरसा नमामि ॥४॥

यस्याच्छ-चुबक दृपत्सदृश प्रतापै,
राकृष्यते मतिविशारद राजवर्ग ।
सश्लाघ्यते सुमनसा गुणपुष्पवल्ली,
श्रीलाल जिद्यतिवर मनसा नमामि ॥५॥

दम्भोज्झित निरभिमानिनमात्मलक्ष्य,
कदर्प सर्प-दशनोत्खनने समर्थम् ।
शात सदैव करुणावरुणालय त,
श्रीलालजिद् गणिवर प्रणमामि भक्त्या ॥६॥

पाषाणतुल्यहृदया अपि केचनार्या,
नीता स्वधर्म पदवी कुशलेन येन ।
दृष्टात युक्तिरसगर्भित बोधशैल्या,
श्रीलालजिद्गणिवर गुरुकल्पमीडे ॥७॥

रोगेण पीडित तनावपि यस्तपस्या,
मुग्रा समाचरितवान्मनसोजसा च ।
माद्य महत्तपसि नापि समाश्रयद्यो,
बोधादि–नित्यनियम तमह नमामि ॥८॥

श्रीलालजी स्वामी छो विद्याविशारद (२)

☐ कवित्तद्वारा–श्री शिवसिंह जी मोरवी महाराज के रिश्तेदार

मालवदेश पवित्र करी श्री मुनीश जी, मोरवी माहि पधार्या
मोरवी सघ तणी जोड लागणी दीनदयाल दिले हर्षाया
श्रीलालजी स्वामी छो विद्याविशारद शास्त्रतणा प्रभु पारने पाम्या
अधम उधारी ने करीने कृपा मुनि आशीर्वाद अनेक पाम्या
महान् आभार मयूरपुरी सघ आपतणो स्वामी दिल मावाने
दर्शन आपतणा शिष्यमडली सहित थया घणे पूरवदाने
ऐवा अहरूप शिष्टा सघाते चन्द्र, तुल्य गुरु पूर्ण प्रकाशी
मोरवी सघ हृदय कुमुदो दर्शन थी प्रभु थाय विकाशी
पावन करी भूमिपाद–पद्म थी सहज दयालु दया दिले लावी
धर्मांकुरो करो जीवित उपदेशामृत वारि वर सावी
एज इच्छ आगमन थी अपना कल्याण राम अयउर भावी ।
संसार सागर तारो "शिव" कहे अरिहत मुख भूजावी

श्रीलालजी महाराज पूज्य अनतारी (३)

☐ पडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी रायपुरावाला

श्रीलालजी पूज्य अवतारी, हुए जैन जाति मे असिव्रतधारी ।
ये चुन्नीलालजी पिता सेठ के घर मे,
ये हुए वहा उत्पन्न सु टोंक नगर मे ।
ज्ञान लगा हुए साधु थोडी उमर मे,
पाठको, हुए एक ही जो भारत भर मे ।
जब जब होती है हानि धर्म की भारी,

तव तव लेते है जन्म धर्मध्वज धारी–श्रीलालजी ।
जहा जहा किया विहार गाम शहरो मे,
इन दिया बहुत ही ज्ञान सुनारी नरो मे ।
था वर्षों का जो काम किया पहरो मे,
शुद्ध दया धर्म का घोष किया व घरो मे ।
बहु आश्रम शाला खुला किया हित भारी,
नित मिलता विद्यादान जहा शुभ्रकारी ।।श्रीलालजी ।।

जो सज्जन देते परहित तन मन धन है,
जीवन है साफल्य उन्ही को धन है ।
वे करें सदा उपकार और ईश भजन है,
सब छोड प्रभु पद पद्म लगावें लगन है,
रहते हैं निश्चय जग मे वही सुखारी,
नभ फैले कीर्ति रहे, नाम जगजारी ।।श्रीलालजी।।

हो ! अधम काल ने उठा उन्ही को लीना,
सब जैन जैनेतर जन को शोकित कीना ।
है प्रशु पक्षी प्राणी भी सभी मलीना,
हा, हा, नृशस हे काल, दारुण दु ख दीना ।
चौबे लक्ष्मीनारायण हुआ दुखारी,
हे करे विनय प्रभु शाति मिले शुभकारी ।।श्रीलालजी।।

सत्यगुरु श्रीलालजी (४)

☐ श्री प्राण जीवन मोरारजी शाह राजकोट

(राग सोरठा)

अमृतभीनी वाणी, साचलता सुधर्या घणा ।
वण भुलु व्याख्यान, सुणशु क्या श्रीलालजी ।।१।।

प्राणी रक्षण काज, अमर पट्टा वजडावता ।
करी शके नवराज, करनारा श्रीलालजी ।।२।।

अडसठ माल कराल, छता जणायो नहिं जरा ।
थयो न वाको वाल, प्रताप ए श्री लालजी ।।३।।

आप गुणो नी खाण, अल्प प्राण सू कही शके ।
अमने मोटी हांण, जग मां विण श्रीलालजी ।।४।।

सयम मा ना परिणाम, आप स्वर्ग मा शोभता ।
पर जीवा तम नाम, विसरो कयम श्रीलालजी ।।५।।

सदैव ल्यो सभाल, अवध ज्ञान उपयोग थी ।
गणी भूलणा वाल, अरज एज श्रीलालजी ।।६।।

कईक कसाई खास, लाखो जीव विदारता ।
कर्या दया ना दास, साभरशो श्रीलालजी ।।७।।

राजकोट पर प्यार पूरो राख्यो प्रथम थी ।
गुणरसना भडार, सत्यगुरु श्रीलालजी ।।८।।

जैनाचार्य श्रीलालजी (५)

शार्दूल विक्रीडित

❑ श्री पुरुषोत्तम कुवरजी शुक्ल शास्त्री, मोरवी हाई स्कूल

कोटी म्होर सुवर्ण खर्च करता, जे कार्य थातु नथी
जैनी वर्ष अयुत कष्ट श्रम थी किंचित सिद्धि नथी
सेनाओ अमाणि युद्ध करशे तोये न आशा फल
तेवु महान् सुकर्म साध्य सुलभ, साधु कृपा किंचित ।
जुवो मह्यिर राज्य मा वलिविधि श्री शारदा मात ने
था तो तो वध के वहु पशु हणी ते रोकव्यो सज्जने
त्रिभुवन मुत दुर्लभ श्रमकरी ते पाप रोकावियु
जैनाचार्य श्रीलालजी स्मरण मा ते सत नामे थयु ।

परिशिष्ट--३

पूज्य श्री श्रीलालजी री लावणी (१)

(दोहा) राग सोरणा

पूज पधार्या आपु आ आनद चित्तचावीया ।
गुण रतना री खान थारा दरशण पावीया ।।१।।

उगणीसे गुणसठ नव साधू थे आवीया ।
चौमासो सुखकार धरमध्मान चित्त लावीया ।।२।।

वाणी अमृत धार सुणता ही हुलसे हिया ।
परसन पूछे आय भिन्न भिन्न कर समझावीया ।।३।।

भायो वायो करे अरज चितमन से सुण ।
लीजीये कलपे सो चोमास फेर वीकाणे कीजिये ।।४।।

चालपणिहारी–

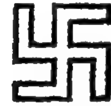
श्री श्री महाराज पूज जी श्रीलालजी थे आया
वीकानेर का श्रावक श्राविका दरशण कर कर हरषाया–टेर
वालपणे मे व्रत आदरिया जवानी मे सजम धारै
भणिया, गुणिया सूत्र वाचिया निरनो कीनो बुध धारै
पच महाव्रत मेरू जैसा ऐसे वोझ मे नही हारे
गुण सत्ताईस दिपे मुनिवर जिन वचनो कू सिर धारै
गाम नगर पुर पाटण विचरै प्रतिवोध बहु नर नारै
भवि जीव सुणकर सरधो पामे समकित सैणि हुवै ज्यारै

उडावणी–

है वो दान दया के मारग मुनिवर चालै
है वो अज्ञानी कु रस्ते मुनिवर घालै
है वो पाले शुद्ध आचार दोष सब टालै
ऊमर छोटी वुध है मोटी ज्ञान ध्यान कर पदपाय ।
मन वच काया वश कर लीनी आठ वचन पूरा पावै
करे तपस्या धरे थोकडा रागद्वेष कू पोलावै
दोष वयालीस टाले मुनिसर सावज मिसर वचावै
वडे धीर गभीर विचक्षण अवसर देख घर मे जावै
पूछागाछा मेरे चौकसी आहार सुझतो वैलावै
जिस घर मुनिवर हाथ जो फरसे सो वडभागी कहलावे ।
है वो उपयोग सहित वस की काया आतमकूं
है वो धन धन मुनिवर मारे अपणे दमकू
है मैं जाऊ वलिहारी सीस नमाऊ उनकू
साधु करणी पार उतरणी क्षमातणा गुण है सवाया ।
राजमलजी लालचदजी मगन चाद मुनि तप धारै
गवू जी टीकम कजोडी गभीरमलजी सुखकारै
आठ मुनि सग आया पूज के इच्छामाफिक रहे सारै
महासतिया महाराज विराजै सात ठाणा से अधिकारे
सोनाजी जिवणा जी कहिये पानकवर विद्याधारै
सिणगारा जी पेपकवर जी सौभाग भूराजी री वलिहारै
है वो सतरे चदे सजम का गुण छाजै
हे वो तपस्या करके देखो सिंव ज्यू गाजै
है वो धरम करे सो सव निर्जरा के काजै
आश्रव रोके सवर मा है तप जप में नही सम्मावै

ग्रनाचार वे बावन टाले नवकल्पी विहार करें ।
बारे भावना भावे मुनीसर नववाड शुद्ध मन मे धारे
दोनू वखत वखाण वाचता अष्ट कर्मा सु खूब लडे ।
हेतु जुगत दृष्टात सवइया भिन्न भिन्न करके खवर परे
स्वमती परमती ग्रावे परिषदा पुण्यवत दया, वरम करे
जिनवर वाली ग्रमिट सयाणी ग्राराध्यो दुख दूर करे
है गुण वहोत गुरु का केणे मे नही ग्राते
है वो छोडा जगत जजाल भवि मू समझाते
है वो निज गुण पाते सो शिवपुर कूं जाते
तेजकरण गुण करे ज्या रा ज्ञान घ्यान हुग्रा चित चाया ।

इतिपदं



आचार्य श्री श्रीलाल जी म. सा:

जीवन-तथ्य

जन्म स्थान	:	टोंक (राजस्थान)
जन्म तिथि		वि स १९२६ मार्गशीर्ष द्वादशी
पिता		श्री चुन्नीलाल जी वम्ब
माता		श्रीमती चादकुंवर वाई
दीक्षा स्थान	.	वनेडा (राजस्थान)
दीक्षा तिथि		वि स. १९४४ पौष कृष्णा सप्तमी
यूवाचार्य पद स्थान		रतलाम (म प्र)
युवाचार्य पद तिथि		वि स. १९५७ कार्तिक शुक्ला द्वितीया
ग्राचार्य पद स्थान		रतलाम (म. प्र)
ग्राचार्य पद तिथि		वि. स १९५७ कार्तिक शुक्ला नवमी
स्वर्गवास स्थान		जैतारण (राज.)
स्वर्गवास तिथि		वि स १९७७ ग्राषाढ शुक्ला तृतीया

आचार्य श्री श्रीलालजी म. सा.

आचार्य श्री श्रीलालजी म. सा. के चातुर्मास

सवत्	स्थान
१९४६	झालरापाटन
१९४७	रामपुरा
१९४८	
१९४९	कानोड
१९५०	जावद
१९५१	निम्बाहेडा
१९५२	छोटीसादडी
१९५३	जावद
१९५४	उदयपुर
१९५५	रतलाम
१९५६	रतलाम

सवत्	स्थान
आचार्य पद	
१९५७	रतलाम
१९५८	जोधपुर
१९५९	वीकानेर
१९६०	उदयपुर
१९६१	टोंक
१९६२	जोधपुर
१९६३	रतलाम
१९६४	अजमेर
१९६५	वीकानेर
१९६६	वडी सादडी
१९६७	ब्यावर
१९६८	राजकोट
१९६९	मोरवी
१९७०	जोधपुर
१९७१	रतलाम
१९७२	उदयपुर
१९७३	वीकानेर
१९७४	जयपुर
१९७५	उदयपुर
१९७६	जावरा

इस ससार मे सभी जीव सुख चाहते हैं, दु ख कोई नही चाहता । लेकिन यहा पर एक जीव ही नही रहता है—विभिन्न इन्द्रियो के तथा विभिन्न सज्ञाओ वाले अनन्तानन्त जीव रहते हैं कई जीव अपनी रक्षा कर सकते हैं तो कई जीव आक्रामक स्वभाव के हो कर दूसरो को दु ख भी देते हैं, परतु कई जीव इतने दुर्वल और नगण्य शरीरधारी होते हैं कि उनकी सुरक्षा के लिए समर्थ जीवो मे सचेष्टता उत्पन्न करनी होती है । सभी जीव अपने पूर्वोपार्जित कार्यों के अनुसार सुख दु ख पाते हैं किंतु नवीन क्रियाओ से नवीन कर्मवध भी होता रहता है, अत नवीन क्रियाओ मे दया और करुणा का समावेश किया जाय, विवेक और जागरूकता लाई जाय तथा कर्तव्यनिष्ठा का एक सामाजिक क्रम वनाया जाय तो एक दूसरे जोवो के पारस्परिक व्यवहार मे सुख को वढाया जा सकता है एव दु ख को घटाया जा मकता है । इसलिए भगवान् महावीर ने उद्घोप किया जीओ और जीने दो । यह जीवदया का मूल मत्र वन गया ।

आप इस तरह जीओ कि अन्य जीवो के हितो पर कम से कम चोट पहुचाओ और दूसरे जीवो को इस तरह जीने दो कि वे अपने अपने दायरे मे स्वतत्रता का आनद उठाते हुए अपना जीवन यापन कर सकें, यह तो हुई वुनियादी वात । अव जोवदया की वात यह होगी कि आप अपनी आवश्यकताओ को कम कर अपना जितना सामर्थ्य है, उसका प्रयोग अधिकाधिक दु खी जीवो को सुखी वनाने मे करें । ऐसा सत्प्रयास स्वय करने के सिवाय दूसरे जीवो को भी अधिकाधिक रूप से ऐसा सत्प्रयास करते रहने की प्रेरणा दे । जव कोई आत्मा अपने चिंतन एव कृति के स्वरूप का विकास कर ले तथा पूर्ण रूप मे जीवदयाधारी वन जाय तो वह आत्मा साधु वन जाती है । साधु सभी प्रकार के जीवो का रक्षक होता है—छ काया के जीवो का पूर्ण रक्षक । सभी प्रकार के जीवो का समावेश छ काया के वर्गीकरण मे हो जाता है तथा साधु अपने लिए कही भी छ काया के जीवो का हनन करता नही करवाता नही तथा करने वाले का अनुमोदन भी नही करता । इसके अतिरिक्त छ काया के जीवो की रक्षा के लिए अपनी मर्यादाओ मे रहता हुआ उपदेश भी देता है ।

हमारे चरित्र नायक आचार्य श्री श्रीलालजी म सा अपने युग मे जीवदया के महान प्रेरक रहे हैं । श्रमण परपरा के अनुसार वे स्वय तो छ काया के जीवो के पूर्ण रक्षक वे ही, किंतु आप श्री ने जिस प्रभावकारो ढग से जीवदया के कार्यों को मारी भारत भूमि पर प्रसारित किया, वह अपने आपमे एक अति विशिष्ट कार्य रहा है । जैनेतर समाज मे भी हिंसक कार्यों को छुडवा कर आप श्री ने अपने प्रभावपूर्ण प्रवचनो से वडे वडे राजा महाराजाओ, जागीरदारो आदि को भी जीवदया के कारुणिक कार्य मे प्रवृत्त वनाया । "जीओ और जीने दो" के मर्म को आपश्री ने लाखो लोगो तक पहुचाया ।





महान् क्रान्तिकारी

वादीमान मर्दक

ज्योतिर्धर, युगपुरुष

आचार्य

श्री जवाहरलाल जी म. सा.



□ हु शि उ च्चौ श्री ज़ गु ना ना □

ज

महान् क्रान्तिकारी वादीमान मर्दक ज्योतिर्धर, युगपुरुष

आचार्य

श्री जवाहरलालजी म. सा.

आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा.

जीवन चथ्य

जन्म स्थान	:	थांदला मध्यप्रदेश
जन्म तिथि	:	वि. स १९३२ कार्तिक शुक्ला चतुर्थी
पिता		श्री जीवराजजी कवाड़
माता	.	श्रीमती नाथी बाई
दीक्षा स्थान		लिमड़ी (म. प्र.)
दीक्षा तिथि	:	वि. स. १९४८ माघ शुक्ला द्वितीया
युवाचाय पद स्थान	.	रतलाम (मध्यप्रदेश)
युवाचार्य पद तिथि	:	वि. स. १९७६ चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्य पद स्थान	:	जैतारण (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	.	वि. स. १९७६ आषाढ मुक्ला तृतीया
स्वर्गवास स्थान	:	भीनासर (राज.)
स्वर्गवास तिथि	:	वि स. २००० आषाढ शुक्ला अष्टमी

आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा.

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा.

- विपत्तियो की तमिस्र गुफाओ को पार कर जिसने सयम-साधना का राजमार्ग स्वीकार किया था
- ज्ञानार्जन की अतृप्त लालसा ने जिनके भीतर ज्ञान का अभिनव आलोक निरन्तर अभिवर्द्धित किया ।
- सयमीय साधना के साथ वैचारिक क्राति का शखनाद वजाकर जिसने भू-मण्डल को चमत्कृत कर दिया
- उत्सूत्र सिद्धातो का उन्मूलन करने, आगम सम्मत सिद्धातो की प्रतिष्ठापना करने के लिये जिसने वाद-विवाद मे विजयश्री प्राप्त की ।
- परतन्त्र भारत को स्वतन्त्र वनाने के लिये जिसने गाव-गाव, नगर-नगर पाद विहार कर अपने तेजस्वी प्रवचनो द्वारा जन-जन के मन को जागृत किया ।
- शुद्ध खादी के परिवेश मे खादी अभियान चला कर जिसने जन-मानस मे खादी धारण करने की भावना उत्पन्न कर दी ।
- अल्पारम्भ-महारम्भ जैसी अनेको पेचीदी समस्याओ का जिसने अपनी प्रखर प्रतिभा द्वारा आगम सम्मत सचोट समाधान प्रस्तुत किया ।
- स्थानकवासी समाज के लिये जिसने अजमेर सम्मेलन मे गहरे चिन्तन मनन के साथ प्रभावशाली योजना प्रस्तुत की ।
- महात्मा गाधी, विनोवा भावे, लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल, प श्री जवाहरलाल नेहरू आदि राष्ट्रीय नेताओ ने जिनके सचोट प्रवचनो का समय-समय पर लाभ उठाया ।
- जैन एव जैनेत्तर समाज जिसे श्रद्धा से अपना पूजनीय स्वीकार करती थी ।
- सत्य सिद्धातो की सुरक्षा के लिये जो निडरता एव निर्भीकता के साथ भू-मण्डल पर विचरण करते थे ।

वे हैं ज्योतिर्धर, क्रांतद्रष्टा, युगपुरुष स्वर्गीय आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. ।

महान् क्रान्तिकारी

वादी-मान-मर्दक

ज्योतिर्धर, युगपुरुष

आचार्य

श्री जवाहरलाल जी म. सा.

देश मालवा गल गम्भीर ।
उपजे वीर जवाहर धीर ।।

भारतवर्ष मे मालवा धरा का विशेष महत्व है । यह भूमि सजला है, सुफला है और शस्यश्यामला है । हमेशा अकाल ग्रस्त रहने वाले मरुधर-वासी तो मालवा को मा का पेट कहते हैं कि जब कभी जरूरत पडती है वे अपने और अपने पशुओ के निर्वाह के लिये निश्चित होकर इस भूमि पर चले आते हैं । भूमि सरस होती है तो वहा के निवासियो मे भी सौहार्द का सद्भाव होता है । वैसे मालव-भूमि का इतिहास भी बहुत ही सम्पन्न रहा है ।

इसी मालवा प्रात मे पहले झाबुआ रियासत थी । उसके थादला नामक कस्बे मे हमारे चरित्रनायक का जन्म हुआ जो विन्ध्याचल की पश्चिमी पर्वत श्रेणियो के विस्तार के कारण नैसर्गिक सुषमा से युक्त है । थादला के चारो ओर छोटी छोटी भीलो की बस्तिया फैली हुई है । इसी कस्बे मे ओसवाल समाज के कवाड गोत्रीय श्री जीवराजजी रहा करते थे । वे धर्म प्रेमी सद्गृहस्थ थे । उनका विवाह वही बोका गोत्रीय सेठ मोतीलालजी की सुपुत्री नाथीबाई के साथ हुआ । दोनो की धर्म मे दृढ श्रद्धा थी इस कारण दोनो का जीवन धार्मिक था । दम्पति मे परस्पर प्रेम भी बहुत था । ज्ञान-पचमी की पूर्व भूमिका मे अर्थात् कार्तिक शुक्ला चतुर्थी वि स १९३२ के दिन श्रीमती नाथीबाई ने एक प॰म तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया और शायद उसकी तेजस्विता से प्रभावित होकर ही उसका जवाहरलाल नाम रखा । जैसे उन्हें पूर्वाभास हो गया हो कि यह बालक आगे जाकर समाज, राष्ट्र एव धर्म का जवाहर ही बनेगा । कौन जानता था कि यह बालक आगे जाकर कुरूढियो और कुसस्कारो की कालिमा मे एव आडम्बरो और

ढकोसलो के कोहरे मे अपनी क्राति ज्योति को प्रसारित करके जागृति का नव पथ प्रशस्त करेगा ?

इतिहास की यह विडम्बना सी रही है कि जो जो महापुरुष हुए हैं उनमे से अधिकाश का वाल्यकाल दु खो, कष्टो एव सकटो से घिरा हुआ रहा है और शायद प्रकृति, पुरुष को महापुरुष वनाने के लिये ऐसा होना आवश्यक भी मानती हो । हकीकत मे सुख मनुष्य को वेभान वनाता है लेकिन दु खो का अनुभव उसकी चेतना को जगाता है । दु खो को भोगते समय मनुष्य का जीवन निखरता है एव आत्म निर्भरता सन्नद्ध वनती है । तदनुसार वालक जवाहरलाल को भी प्रारम्भ से कष्टो एव सकटो का सामना करना पड़ा । उनकी उम्र कठिनाई से दो वर्ष की ही हुई होगी कि उनकी माता का हैजे के प्रकोप से देहान्त हो गया । मातृ-स्नेह का स्रोत अभी फूटा ही था कि अविलम्ब सूख चला । प्रकृति ने इस रूप मे वचपन मे ही उनके मोह जाल को भेद डाला । इस दुर्घटना का यह सुप्रभाव भी हुआ कि वे अपनी समझ पकडने के समय से प्रत्येक स्त्री मे माता का रूप ही देखने लगे ।

माता की गोदी छिन जाने पर आपके लालन पालन का सारा भार आपके पिताजी पर आ पडा । वे अपना व्यापार धधा भी करते, अपने हाथो से भोजन भी वनाते और अपने लाल को प्रेमपूर्वक खिलाते भी । पिता की मीठी प्रेमरस से पकी हुई रोटियो को आप कभी नहीं भूले । उनकी मधुरता का वर्णन आप अपने प्रवचनो मे भी अनेक वार किया करते थे । प्रकृति ने मातृ-ममता मे इन्हे वचित कर दिया था किन्तु शायद प्रकृति अपने अधिक क्रूर व्यवहार द्वारा इन्हे एक महान् सत वनाने की पृष्ठ भूमिका वनाने मे लगी हुई थी । जव आपकी आयु करीव ५ वर्ष की हुई तो आपके पिताश्री का भी देहान्त हो गया । मातृहीन वालक पितृहीन भी वन गया तो अव उसके लिये अपने पैरो पर खड़े होने के अलावा और क्या चारा था ?

आप अपने पिताजी के देहावसान के वाद अपने मामा के यहा रहने लगे । वे प्रतिष्ठित व्यक्ति थे तथा कपडे की दूकान करते थे । मामा ने आपश्री को स्थानीय स्कूल में भर्ती कराया किन्तु जिसे आगे जाकर महानता का वरण करना है, उसके लिये प्रत्येक स्थान उसका विद्यालय होता है और प्रत्येक क्षण उसका अध्ययन काल । महापुरुष तो जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त नित नवीन ज्ञान प्राप्त करते ही रहते हैं । वे पुस्तको मे लिखी हुई वातें आखें मीच कर अपने मस्तिष्क मे नही ठूसते वल्कि सारे ससार को एक खुली हुई पुस्तक की तरह पढते हैं । वालक जवाहरलाल भी अपनी सूक्ष्म दृष्टि से प्रकृति को निहारा करते थे और अपने अनुभवो के आधार पर उन्नतिशील सस्कारो को ग्रहण करते रहते थे ।

आपका जन्म स्थान थादला जो कि गुजरात का पडौसी है, इसलिये वहा की भाषा पर गुजराती का पूरा प्रभाव है । उस समय मे स्कूलो मे पढाई तोता रटन्त जैसी ही होती थी, किन्तु उस तोता रटन्त मे भी निम्नाकित तीन दोहे उनके हृदय मे ऐसे उतर गये कि जिन्हे सदा गुनगुनाते हुए वे मातृ-स्नेह का स्मरण किया करते थे—

टग मग पग टक तू नही, खाई न शक तू खाज ।
उठी न शकतू आपथी, लेश हती नही साज ।।
ए अवसर वाणी दया, वालक पर मां वाप ।
सुख आए दुख वेठवें, ए उपकार अभाप ।।
कोय करे ऐवे समय, वेहक घडी वरदाश ।
आखी उमर थई रहे ते नर नो नर दास ।।

महापुरुषत्व का लक्षण ही यह होता है कि वह विपदाओ पर सवार होकर अपनी सकल्प पूर्ति की दिशा मे अटल होकर चलता है । हमारे चरित्र नायक मे भी यह लक्षण वाल्यकाल मे ही परिलक्षित हो गया था । एक वार आप कुछ साथियो के साथ वैलगाडी से यात्रा कर रहे थे । टेढा-मेढा और ऊवड–खावड पहाडी रास्ता था । ऊपर निकले हुए पत्थरो पर गाडी के पहिये चढते और धडाम से नीचे गिरते । ऐसा लगता कि गाडी चूर-चूर हुए विना नही रहेगी । उस पर भी रास्ते के एक ओर ऊ चा पहाड तो दूसरी ओर गहरी खाई याने कि पग–पग पर प्राणो का सकट । इस हालत मे डर कर सभी साथी गाडी से नीचे उतर गये और गाडीवान भी गाडी छोड भागा । लेकिन वालक जवाहरलाल ने घवरा कर दौडते हुए वैलो की रास अपने हाथो मे ले ली । विफरे हुए वैल इस तरह दौड रहे थे लगता था कि कही गाडी खाई मे गिर कर चूर चूर न हो जाय । जवाहरलालजी ने धैर्य नही छोडा और वैलो को पूरे साहस के साथ नियन्त्रित करते रहे । फलस्वरूप गाडी और वैल सुरक्षित किये हुए सकुशल अपनी मजिल पर पहुच गये ।

ग्यारह वर्ष की आयु मे ही वे अपने मामा के साथ कपडे की दूकान पर वैठने लगे । अपनी तीक्ष्ण वुद्धि के कारण वे जल्दी ही व्यापार कार्य मे कुशल हो गये । उन्ही दिनो मे आपने धरण ठीक करने का मत्र भी सीखा । यह वात सभी जान गये, इसलिये वे जगह–जगह धरण मत्रने के लिये वुलाये जाने लगे । यह वार-वार का आना–जाना मामाजी को अच्छा नही लगा । फिर भी एक दिन जव वे दिवाली का जमा खर्च कर रहे थे तो एक आदमी धरण ठीक करने वे के लिये बुलाने आया । आपने उसे टालना चाहा, मगर वह नही माना । मजवूर होकर वहा जाकर आपने मत्र नही पढा और यो ही हाथ फेरते रहे । ऐसा करते हुए उन्होने सोचा कि धरण ठीक नही होगी तो आगे से उनको वुलाना वद हो जायगा । जिसमे मामाजी सतुष्ट रहेगे । असल मे रोगी का दर्द तो आस्था से मिटता है सो कोरा हाथ फिराने से भी वह ठीक हो गया ।

वाल्यकाल के ऐसे ही अनुभवो के वीच उन्हे धर्म एव धर्मगुरु का ससर्ग मिला । थादला मे तव पूज्य श्री धर्मदासजी म सा की सप्रदाय के मुनि श्री गिरधारीलालजी म सा. पधारे । आप भी मुनिजी का व्याख्यान सुनने गये । धर्म की ओर अव तक आपका सोया हुआ आकर्पण सतवाणी सुनकर जागृत हो गया । उसी समय खडे होकर आपने सम्यक्त्व ग्रहण किया । इसके पश्चात् ही आपका इहलौकिक धार्मिक जीवन प्रारम्भ हो गया । उनकी जो प्रतिभा एव साहसिकता व्यवसाय मे लगी हुई थी वह अव धार्मिकता की ओर मुड़ गई । इसी वीच आपके मामाजी का देहान्त हो गया । उनका वियोग आपके लिये असह्य वना क्यो कि सारे

परिवार एव व्यवसाय का दायित्व उनके कधो पर आ पडा । किन्तु यह भी हुआ कि मामाजी की अकाल 'मृत्यु से जैसे वे नीद से जाग उठे । उनके मन मस्तिष्क मे ये विचार छा गये कि इस नश्वर ससार मे मानव जीवन भी नश्वर है और काल का एक झौंका कभी भी उसे नष्ट कर सकता है । इसलिये सासारिक वैभव विलास के पीछे न दौड कर धर्माराधना के द्वारा आत्म–स्वरूप को उज्ज्वल बनाने मे ही जीवन की सार्थकता है । यहीं से उनके मन मे गर्भ से पडे सुसस्कारो के बीज वैराग्य के अकुर के रूप मे पल्लवित होने लगे ।

प्रभु चरणों की नौका मे

धर्म प्रतिबुद्ध जवाहरलाल अब गम्भीर आत्म-चिन्तन मे निमग्न रहने लगे । वे अपनी आत्मा को ही सम्बोधित करते हुए सोचते—'हे चैतन्य आत्मा, तेरी यह गम्भीर भूल है कि तू अपने आपको भूला हुआ है । अब मेरी बात मान और अपनी भूल सुधार ले । तू स्वय अपना कर्त्ता है किन्तु तूं उन पदार्थों का दास बना हुआ आनन्द मान रहा है, जिनका कि तुझे स्वामी होना चाहिये । उठ जाग और पुरुषार्थ कर ताकि तेरा ससारी स्वरूप एक दिन सिद्ध स्वरूप मे बदल सके । वैराग्य का वेग दिनो-दिन बढता गया इसलिये दूकान उठाने का निश्चय करके काम को समेटने लगे । विधवा मामी ने काफी विरोध किया और स्थिति भी विषम थी किन्तु उन्ही दिनो मुनि श्री घासीलालजी म सा एव श्री मगनलालजी म सा आदि का वहा पधारना हुआ । आपश्री ने उनके दर्शन किये, प्रवचन सुने । मुनियो ने आपश्री के वैराग्य का सिंचन किया और आप भी दीक्षा लेने की भावना से आल्हादित हुए ।

किन्तु साधुधर्म अगीकार करने के मार्ग मे उनके लिये एक बहुत बडी बाधा थी । यह बाधा कोई बाहरी नही थी क्योकि बाहरी बाधा को तो अपने अदम्य साहस से परास्त कर देने मे वे सक्षम थे किन्तु यह बाधा उनके आन्तरिक हृदय की ही बाधा थी । उनके दिल मे यह विचार उठा कि मामाजी के अभाव मे उनके परिवार के प्रति उनका यह कर्तव्य है कि वे परिवार को भरण-पोषण की चिंता से मुक्त करें । उन्हे मामाजी के उपकार याद थे और वे उन उपकारो का क्या इस तरह बदला चुकावें कि परिवार को निराश्रित छोड कर साधु बन जाय ? उनके ममेरे भाई की आयु ५ वर्ष का थी अत वे बहुत दिनो तक दिल की इस दुविधा मे फसे रहे ।

वे इस समस्या पर भीतर ही भीतर गहराई से सोचते और प्रयास करते कि अन्तरात्मा से कोई आवाज निकले और वे उसका अनुसरण करके समस्या का सुखद समाधान निकाल लें । हुआ भी ऐसा ही कि उनकी अन्तरात्मा ने जैसे उन्ही से प्रश्न किया कि जब तुम्हारे पिताजी चल बसे तब तुम भी पाच वर्ष के ही थे और तुम्हारा क्या हुआ ? ससार मे कोई किसी पर निर्भर नही होता । सब अपने-अपने कर्म होते हैं । यह तुम्हारा दम्भ है कि तुम किसी को अपने पर आश्रित मानते हो । इस आवाज के साथ उनके विचारो ने पलटा खाया और मन ही मन दीक्षा का निश्चय कर लिया । फिर भी परिवार की तत्कालीन परिस्थितियों मे

उन्होने अपने निश्चय को अप्रकट रखना ही उचित समझा । हा वे अब व्याख्यान सुनने साधुओ की सगति करने एव ज्ञान-ध्यान मे तल्लीन रहने मे अधिक समय विताने लगे ।

इस प्रकार मन की वाधा को जीत कर उन्होने दृढ निश्चय कर लिया कि उन्हे मुनिव्रत धारण करना ही है । मन ही मन उन्होने अपने इस सकल्प मे किसी भी परिस्थिति मे न डिगने का निर्णय भी ले लिया । उचित समय देख कर वे अपने ताऊजी श्री घनराजजी के पास गये और अपने निर्णय को प्रकट करके दीक्षा की आज्ञा चाहने लगे । ताऊजी का उन पर कुछ अधिक स्नेह था इसलिये वैसी वात सुनकर उन्हें आश्चर्य भी हुआ तो दु ख भी हुआ । वे जवाहरलालजी के विचारो की गहराई को पहिचान नही सके । और उसे वालक की नादानी अथवा किसी साधु का वहकावा समझ वैठे । इसलिये उन्होने अपने भतीजे को डाट-फटकार कर चुप कर दिया । उसके वाद भी जव उन्होंने जवाहलालजी को साधुओ के पास वरावर आते-जाते देखा तो वे चौंके । उन्होने उनका सतो के पास आना जाना वन्द कर दिया और निगरानी के लिये दो लडको को पीछे लगा दिया । इस प्रतिवन्ध के कारण कुछ दिनो तक तो उनका साधुओ के पास आना जाना रुका रहा, किन्तु प्रतिवन्ध मे कुछ ढील आते ही फिर से शुरू हो गया । असल मे उनका निश्चय इतना दृढ था कि इस वाधा का उन पर कोई असर नही पडा । आपने जव सचित जल पीने का भी त्याग कर लिया, तव श्री घनराजजी ने देखा कि उनकी पहली कोशिश वेकार हो गई है तो उन्होने दूसरी कोशिश लगाई । अपने सभी मिलने जुलने वालो को उन्होने जवाहरलालजी के सामने साधुओ की निन्दा करने एव उनका मन दीक्षा मे मोडने की वात जोर देकर कही । यह निंदा और मोडने का काम भी काफी दिनो तक चला, लेकिन उसका भी जवाहरलालजी के मन पर कोई असर नही पडा । और भी कई प्रयत्न घनराजजी नें किये किन्तु वे निष्फल होते रहे । इसके विपरीत जवाहरलालजी का सकल्प अधिकाधिक सुदृढ होता गया । उन्होने सचित वनस्पति खाने का और रात्रि भोजन का भी त्याग कर लिया । इस प्रकार वे त्याग मार्ग पर आगे से आगे वढते जा रहे थे । वस्तुत आत्मिक उन्नति के लिये त्यागशील वनना अत्यावश्यक है । सभी मत और सभी पथ त्याग-भाव का समर्थन करते हैं एव जैन धर्म तो त्याग की नीव पर ही खडा हुआ है क्योकि जवाहरलालजी पूर्ण त्याग के मार्ग पर चलना चाहते थे अतएव उसके लिये उन्होने पहले से ही तैयारी शुरू कर दी । ताऊजी ने रागवश उन्हे त्याग से डिगाने के वहुत सारे प्रयत्न किये परन्तु आप अडिग वने रहे । इस अडिगता का उन्होंने प्रमाण दिया कि आपने घर मे भोजन करना ही छोड दिया । दूसरे श्रावको के घर भोजन करने लगे । इस तरह घनराजजी के प्रयत्नो का फल विपरीत होता गया ।

श्री जवाहरलालजी जन्म-जात प्रतिभाशाली थे । उनकी तीव्र प्रतिभा एव प्रत्युत्पन्नमति का वाल्यकाल का ही एक उदाहरण उल्लेखनीय है । एक वार आप किसी ब्राह्मण पडित के घर जाकर अपनी जन्म पत्री दिखा रहे थे तभी उनके मामाजी के एक मित्र प. आत्मारामजी आ पहुचे । आपने ज्योतिषीजी से पूछा—मेरी कुंडली मे ऐसा ग्रह वताइये जो मेरी दीक्षा मे सहायक हो । प आत्मारामजी ने उन्हे चिढ़ाने की गरज से पूछा—क्या तुम ढूंढिया साधु वनना चाहते हो ? तुम्हे मालूम भी है कि ढूंढियो की उत्पत्ति कैसे हुई ? जवाहरलालजी ने सहज भाव

कहा—जी हा, मैं ढूढिया साधु ही वनना चाहता हू, उत्पत्ति के वारे मे आप ही वता दीजिये। तव आत्मारामजी ने मन कल्पित कहानी सुनाई—महात्मा गोरखनाथ के दो चेले थे, एक मछन्दरनाथ और दूसरा पारसनाथ। एक दिन गुरुजी ने दोनो चेलो को भिक्षा लाने के लिये भेजा वेचारे वहुत घूमे पर भिक्षा नही मिली। एक जगह वनियो की पगत हो रही थी। पारसनाथ वहा पहुच गये और उन्होने वहा भिक्षा की याचना। पगत के पास एक मरी वछिया पडी थी। वनियो ने कहा—इसे ले जाकर दूर फैंक आओ तो तुम्हे वढीया पकवान देगे। पारसनाथ ने विना सकोच मरी वछिया खीच कर दूर फैंक दी। वनियो ने खूव मिठाई दी। उसे लेकर पारसनाथ अपने गुरुजी के पास पहुचा। उधर मछन्दरनाथ खाली हाथ लौटा। गुरु गोरखनाथ ने मछन्दर को धिक्कारा और पारसनाथ की प्रशसा की। मछन्दरनाथ ने उसी वक्त पारसनाथ की पोल खोल दी। मरी वछिया वाली वात सुनकर गुरुजी ने पारसनाथ को अपने आश्रम से निकाल दिया श्राप दिया—तुमने जिन वनियो की वछिया खीची है, आज से तुम उन्ही के गुरु हो गये। वस तभी से ढूढिया मत चल पडा। ढूढिये साधुओ के हाथ मे वछिया की पूछ के समान ओघा तथा अम्वाडे के समान पात्र होते है ये इसी घटना के चिह्न हैं। जवाहरलालजी ने तत्काल पडितजी को उत्तर दिया—आप अधूरी वात कह रहे है। इस कहानी मे वहुत सी वातें छूट गई हैं। आप आज्ञा दे तो मैं उन्हे पूरी करदू। फिर उन्होने कहना आरम्भ किया—वास्तव मे वात यह है कि वछिया वहुत भारी थी। पारसनाथ अकेले उसे खीच नही सके। सहायता के लिये उन्होने मछन्दरनाथ को वुलाया। मिठाई के लोभ से वह तुरन्त आगया। मछन्दर ने मरी वछिया को मुह की तरफ से पकडी और पारसनाथ ने पूछ की तरफ से। दोनो उठाकर उसे दूर फैंक आए, मगर वनियो ने कहा—हमने अकेले पारसनाथ को मिठाई देने का वायदा किया था, मछन्दरनाथ को नही यह कहकर उन्होने पारसनाथ को मिठाई दे दी। इससे मछन्दरनाथ चिढ गया। उसने गुरु के पास जाकर पारसनाथ की शिकायत कर दी। गुरुजी को नाराज होते देख पारसनाथ ने भी मछन्दरनाथ की पोल खोल दी। गुरुजी मछन्दर पर भी गुस्सा हो गये। उन्होने उसे श्राप दिया—जाओ आज से तुम ब्राह्मणो गुरु हुए। इस पाप के लिये तुम्हारे हाथ मे गोमुखी गाय का मुह रहेगा और उसकी आते तुम धारण करोगे, तभी से ब्राह्मण हाथ मे गोमुखी रखते है और आतो की तरह जनेऊ पहनते हैं। वे माला फेरते समय गोमुखी मे हाथ रखते है और स्नान करते समय जनेऊ को आखे मानकर खूव धोते हैं, जिससे उसमे वदवू न आने पावे। प साहव, यह तो आप जानते ही है कि गाय की पूछ मे तेतीस कोटि देवताओ का वास माना जाता है और उसका अम्वाडा अमृत का स्थान है। ये दोनो अग गाय के शरीर मे वहुत पवित्र माने जाते है। इसके विपरीत गाय का मुह अपवित्र माना जाता है क्यो कि उससे वह अशुचि भी खा जाती है और आतें तो अपवित्र हैं ही। ये दोनो चीजे ब्राह्मणो के पल्ले पडी। अव आप ही वता दीजिये कि दोनो मे वुरा कौन ठहरा? श्री जवाहरलालजी को जैसे का तैसा नीतिपरक जवाव सुनकर आत्मारामजी अवाक् रह गये। कहानी की कोई वात नही है लेकिन अपनी कल्पना शक्ति मे उन्होने जो तुरत-फुरत जवाव दिया वह ईट का पत्थर से जवाव था। प आत्मारामजी ने भी यह कहानी उन्हे दीक्षा भाव से डिगाने के लिये ही कही थी मगर मामला ही उल्टा हो गया।

एक दिन आपश्री के सुनने मे आया कि जिन गुरुदेव के पास वे दीक्षा लेने के लिये

उत्सुक है, वे लीवडी गाव मे विराजमान हैं। यह गाव थादला से वारह कोस दूर है। उस समय उनके ताऊजी के लडके उदयराजजी भी किसी काम से दाहोद जा रहे थे जो लीवडी के पास ही है इसलिये दोनो एक बैलगाडी करके रवाना हो गये। बैलगाडी के बैल अनास नदी का ढावा (चढाव) नही चढ सके और तव तक गहरा अधेरा हो गया। वीहड जगल और भीलो के मारे जाने का डर, मगर पन्द्रह वर्षीय जवाहरलालजी निडर बने रहे। अधेरे मे ही वे पास की वस्ती से अपने एक परिचित भील के जरिये पाच सात लोगो को लाये और गाडी को चढाव चढाया। उदयराजजी तो दाहोद चले गये और वे लीवडी। किन्तु दूसरे दिन जव उदयराजजी थादला अकेले लौटे तो श्री धनराजजी चिन्तित हो उठे। वे तरकीव सोचने लगे कि जवाहरलाल को वापिस थादला कैसे वुलाया जाय ? उन्होने थादला के सरपच शाहजी प्यारचदजी से एक पत्र लिखवा कर लीवडी भेजा कि तुम थादला लौट आओ, दीक्षा की आज्ञा दिलाने की जिम्मेदारी मेरी रहेगी। जवाहरलालजी खुश होकर थादला लौट आये। उनके ताऊजी तो आज्ञा देने से एकदम इनकार हो गये और शाहजी भी लाचारी जाहिर करके रह गये। तव उन्होने फिर चुपचाप थादला से निकल भागने का निश्चय किया। महात्मा बुद्ध तो रात्रि के घोर अधकार मे घर से वाहर निकले थे, किन्तु हमारे चरित्र नायक तो दुपहरी के चमकते हुए सूर्य के प्रकाश मे घर से प्रस्थान कर गये।

श्री जवाहरलालजी ने थादला के मेरे एक धोवी का घोडा तय किया और उसे नदी के किनारे अकेले पहुच जाने को कहा और गाव से वे अकेले पैदल चल दिये ताकि किसी को शका न हो। रास्ते मे भटक जाने से आपको काफी कष्ट रहा लेकिन घोडे को गाव के वाहर से ही रवाना करके जब वे लीवडी मे अपने गुरुदेव के स्थान पर पहुचे तो आश्चर्य चकित रह गये कि सामने उनके ताऊजी खडे थे जो पहले ही वहा पहुच गये। ताऊजी ने फिर उन्हे घर लौट चलने के लिये बहुत समझाया मगर वे टस से मस नही हुए। ताऊजी भी जल्दी हार मानने वाले नही थे पहले तो वुरी तरह धमकाया और जब उसका असर नही हुआ तो अपने वुढापे और मामाजी के दु खी परिवार का रोना रोने लगे। यह अनुकूल उपसर्ग उनके कोमल हृदय के लिये वहुत ही कठिन था क्योंकि अनुनय विनय और लाचारी वेवसी को ठुकराना वडा मुश्किल होता है। फिर भी उन्होंने अत्यन्त धैर्य के साथ ताऊजी के अनुकूल उपसर्गो को सहन किया और नम्रता पूर्वक उत्तर दिया—वावाजी, यह ससार और गृहस्थी एक जजाल है और आप लाख कहे तव भी मैं इस जजाल मे फसना नही चाहता हू। दीक्षा लेने का पक्का निश्चय कर चुका हू। आप तो जानते हैं कि मा, पिताजी और मामाजी सभी एक-एक करके मुझे छोडकर चले गये। फिर भी मैं नही जगू तो मेरी ही भूल होगी। इसलिये अव आप कृपा करके मुझे दीक्षा की आज्ञा दे दें, नहीं तो मैं साधुओ की तरह रहकर ही सारा जीवन विता दूगा। समझ लीजिये कि मेरा निश्चय अटल है। तव ताऊजी निराश होकर थादला लौटे और जवाहरलालजी ने साधु वृत्ति का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। तव उन्होने किसी के घर भोजन करना भी छोड दिया—झोली मे कटोरिया रखकर साधुओ की तरह गोचरी लाते और खाते। कुछ दिनो वाद साधुओ ने तो वहा से विहार कर दिया किन्तु आप वही रहकर साधु सरीखा जीवन विताने लगे। आठ महीने तक आप इसी अवस्था मे रहे फिर भी ताऊजी का हृदय नहीं पसीजा। तव उन्होंने अपने सगे सम्वन्धियो को

पत्र लिखे कि वे ताऊजी पर दवाव डालकर दीक्षा की आज्ञा दिलवावे वरना मैं किसी अज्ञात स्थान को चला जाऊंगा और फिर थादला कभी नही लौटूंगा । ताऊजी सारे प्रयत्न करके थक चुके थे, तव अज्ञात स्थान पर जाने की धमकी काम कर गई । ताऊजी ने सोचा कि यदि दीक्षा ले लेगा तो कभी-कभी मैं उसके दर्शन तो कर लूंगा मगर कही दूर चला गया तो मिलने के भी सासे पड जायेंगे । आखिर ताऊजी ने पचायत मे ही आज्ञा-पत्र लिखा कि तुम्हे वि स १९४८ की मगसर सुदी ११ के वाद दीक्षा लेने की आज्ञा दी जाती और वह पत्र जवाहरलालजी को भेज दिया ।

जो एक वार कोई भी निश्चय करके उससे डिग जाता है तो उसका मनोरथ पूरा नही होता । परन्तु जो अपने निश्चय पर कठिन एव वार वार की वाधाओ के वावजूद भी अडिग रहता है, कभी यह नही होता कि उसका मनोरथ अपूर्ण रह जाय । हमारे चरित्र–नायक का मनोरथ भी इस तरह पूर्ण हुआ और शुभ काम मे विलम्व न हो—इस विचार से मगसर सुदी २ का दीक्षा का मुहूर्त निकलवा दिया गया । दीक्षा के आमत्रण पत्र सभी तरफ भेजे गये और सैंकर्डो श्रावक वाहर से एकत्रित हुए । समारोह मे स्वय ताऊजी तो न आ सके, उन्होने अपने पुत्र उदयराजजी को भेजा । निश्चित समय पर सैंकडो नर नारियो के समक्ष मुनि श्री वडे घासीलालाजी महाराज ने आपश्री का केशलोच किया और महाव्रतो का उच्चारण करके दीक्षा दी । उस समय आप श्री मगनलालजी म सा के शिष्य वने थे ।

हमारे चरित्र-नायक की इस प्रकार चिरकालीन अभिलाषा सम्पूर्ण हुई । जव उन्होंने अपने मन मे उपजी वाधा को ही जीत ली तो फिर वाहर की वाधाओ से वे डिगने वाले कहा थे ? सभी वाधाओ को परास्त करके अन्ततोगत्वा वे प्रभु चरणो की नौका मे जा ही विराजे ।

तृतीयाचार्य का आशीर्वाद एव शास्त्राभ्यास प्रारम्भ :

आपदाए ही महापुरुष को आग मे तपा कर कुन्दन वनाती हैं । मुनि श्री जवाहरलालजी को दीक्षा लेते ही परिषहों का सामना करना पडा । दीक्षा लेने के दिन उनकी तवियत ठीक नही थी किन्तु उसी दिन अन्य साधुओ के साथ आपको विहार करना पडा । गांव के वाहर महादेवजी के मदिर मे ठहरना हुआ, जहा रात को सर्दी लग जाने से कपकपी छूट कर जोरो से वुखार चढ आया । लेकिन आप घवराए नहीं । पूर्णतया सहिष्णु वन कर पहली परीक्षा आपने उत्तीर्ण करली । विहार करते करते आप जव पेटलावद पहुचे तव आपके गुरु मुनि श्री मगनलाल जी म सा वीमार हो गये—वीमारी वढती रही और आखिर मे माघ वदि २ को वे काल कर गये । आपश्री के कोमल हृदय पर इसमे वहुत वडा आघात लगा । जो महापुरुष अपनी विपदाओं को अति कठोरता पूर्वक सहन करता चला आ रहा था, वही गुरुजी के स्वर्गवास में मोम की तरह पिघल गया । वे अपने माता पिता और मामाजी की मृत्यु के समय अनुपम धैर्य रख सके परन्तु गुरु के प्रति डेढ माह मे ही आपका ऐसा अनुराग हो गया था कि गुरु वियोग के कारण चित विक्षेप हो गया । वे सोचते कि संथारा कर लेना चाहिये, गुरु के विना अव

मुझे आत्मोन्नति का मार्ग कौन दिखायेगा ? इस मानसिक दशा मे अन्य मुनियो ने उन्हे इस पद का निरन्तर नाम स्मरण कराना शुरू कर दिया कि 'अरिहन्त देव नेडे, जीने तीन भुवन मे कुण छेडे ।' इस नाम स्मरण के साथ आप श्री भक्तिरस मे तन्मय हो गये और धीरे-धीरे कुछ चिकित्सा के साथ स्वस्थ भी हो गये । आप श्री की सेवा करने तथा समझाने मे मुनि श्री मोतीलाल जी म सा ने बहुत प्रयास किया, जो परम पुण्यशाली एव उच्च कोटि के तपस्वी साधु थे ।

आप श्री, मोतीलाल जी म सा के इस असीम उपकार को जीवनभर कृतज्ञता पूर्वक स्मरण करते रहे । इधर आप श्री का स्वास्थ्य सुधार पर था तो उधर चातुर्मास का काल समीप आ गया । कही दूर जाने की शारीरिक अवस्था नही थी अत आपका पहला चातुर्मास धार (म प्र) मे हुआ, जहा आप श्री ने धर्मशास्त्रो का अध्ययन शुरू किया तो काव्य रचनाओ मे भी निमग्न हो गये । चातुर्मास समाप्त करके मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा ने उग्र विहार आरम्भ कर दिया । धार से आप इन्दौर पहुचे, वहा एक मास ठहरकर उज्जैन पधारे जहा आप श्री ने मालवी भाषा मे व्याख्यान देना प्रारम्भ किया । राजा भोज की राजधानी धार नगरी से आपकी काव्य धारा का उद्गम हुआ तो परम प्रतापी विक्रमादित्य की राजधानी उज्जयिनी मे आपकी सदा विजयिनी एव कल्याणकारिणी प्रवचन धारा प्रवाहित हुई । उज्जैन मे १५-२० दिन ठहर कर आप श्री बड नगर होते हुए रतलाम पधारे ।

रतलाम मे उस समय पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा की सम्प्रदाय के तृतीयाचार्य पूज्य श्री उदयसागर जी महाराज विराज रहे थे । मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा ने उनके दर्शन किये तो उन्हे अनुभव हुआ कि वे बडे ही भाग्यशाली हैं । पूज्य आचार्य श्री ने भी उनकी प्रतिभा, व्याख्यानशैली एव काव्य-कला को देख कर बहुत ही सन्तोष एव हर्ष व्यक्त किया । उन्होने यह आशा भी प्रकट की कि मुनि श्री भविष्य मे साधु धर्म की उत्कृष्टता तक पहुचेंगे एव उनके सुप्रभाव से जैन धर्म की महती प्रभावना होगी । सच पूछे तो तृतीयाचार्य श्री की यह आशीर्वाद ही मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा के लिए परम सजीवनी औषध बन गई

इस घटना से यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि इस क्रान्तिकारी परम्परा के तृतीयाचार्य उदयसागरजी म सा द्वारा भावी मे हुए षष्ठाचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा को मुनित्व अवस्था मे दिये गये आशीर्वाद के प्रसग पर आचार्य श्री चौथमल जी म. सा एवं आचार्य श्री श्रीलाल जी म सा. भी मुनिरूप मे उपस्थित हो । इस प्रकार चार आचार्यो का (एक आचार्य और तीन का मुनिरूप मे) एक साथ मिलन सम्भव हो सका । यदि उस समय मिलन नही हो पाया हो तो भी अन्य समय मे मिलन हुआ होगा, इसकी भी पूरी सम्भावना व्यक्त की जा सकती है ।

पूज्य श्री उदयसागर जी म सा की उस समय ही यह इच्छा हुई कि मुनि श्री को अपने पास मे ही रख ले लेकिन किन्ही कारणो से ऐसा सुयोग उस समय नहीं बैठा । आप श्री की वक्तृत्व शक्ति उन आरम्भिक दिनो मे भी इतनी विकसित हो चुकी थी कि पूज्य श्री उससे

प्रभावित हो गये और शास्त्रज्ञ एव स्थविर मुनियो की उपस्थिति मे भी आप श्री को ही व्याख्यान देने के लिए आमन्त्रित करते ।

आशीर्वाद का भी विलक्षण माहात्म्य बताया गया है कि यदि आशीर्वाद देने और आशीर्वाद लेने वाला आस्थावान हृदय से उसे ग्रहण करे तो ऐसा आशीर्वाद, ग्रहण करने वाले व्यक्ति के जीवन मे श्रेष्ठ रीति से फलीभूत होता है । आचार्य श्री उदयसागर जी म सा ने मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा को उनकी विशिष्ट प्रतिभा से प्रभावित होकर सच्चे हृदय से आशीर्वाद दिया और मुनि श्री ने भी परम आस्था के साथ उस आशीर्वाद को ग्रहण किया, जिसके फलस्वरूप मुनि श्री हुक्म गच्छ के भविष्य मे जाकर षष्ठ पट्टधर बने । मुनि श्री के जीवन मे जो ज्ञान शक्ति एव वक्तृत्व–कला प्रस्फुटित हुई उसने युग प्रवर्तनकारी विचार क्रान्ति को जन्म दिया और उससे उनकी यश–लालिमा सम्पूर्ण भारत भू पर प्रसारित हुई—यह आचार्य श्री के शुभाशीर्वाद का सुफल माना जाना चाहिये ।

मुनि श्री जवाहरलाल जी म. सा कुछ दिन रतलाम ठहर कर जावरा पधारे । वहा उस समय मुनि श्री रत्नचन्द्र जी म सा विराजते थे । उनके दर्शन करके आप श्री जावद मुनि श्री बडे चौथमल जी म सा की सेवा मे पहुचे । वहा आप श्री उनसे विभिन्न विषयो पर प्रश्नोत्तर किया करते और उन्हे अपनी कविताए सुनाया करते । आप श्री की तर्क शक्ति एव सुयोग्यता को देखकर भावी आचार्य मुनि श्री चौथमल जी म. सा ने मुनि श्री घासीलाल जी म सा से कहा था—यह बालक मुनि बडा प्रतिभाशाली और होनहार है । अपने पास इन्हें पढाने की सुविधा नही है इसलिए अगर आपको सुविधा हो तो इन्हे रामपुरा (होल्कर स्टेट) ले जाइये । वहा शास्त्रो के अच्छे ज्ञाता श्रावक केसरीमल जी रहते हैं, उनसे इन्हे शास्त्रो का अभ्यास कराइये ।

मुनि श्री घासीलाल जी म सा को यह राय अच्छी लगी इसलिए उन्होने पाच ठाणो के साथ रामपुरा की तरफ विहार किया । ये पाच ठाणे थे—सर्व मुनि श्री घासीलाल जी म सा, वरदीचन्द जी म सा, मोतीलाल जी म सा, देवीलाल जी म सा एव जवाहरलाल जी म. सा । रामपुरा पहुच कर मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा ने शास्त्रज्ञ श्रावक श्री केसरीमल जी के पास आगम शास्त्रो का अध्ययन आरम्भ कर दिया तथा वि स. १९५० का चातुर्मास वही किया । अल्पकाल मे ही आप श्री ने दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचाराग, सूत्र–कृताग और प्रश्न व्याकरण सूत्र अर्थ सहित पढ लिए । इसी चातुर्मास मे आप श्री की प्रतिभा की ख्याति समग्र चतुर्विध सघ मे फैल गई । समय–समय पर होने वाले आप श्री के व्याख्यानो से भी श्रावक–श्राविका समाज बहुत प्रभावित होने लगा ।

रामपुरा के चातुर्मास तक मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा को साधारण रूप से व्याख्यान देने का अच्छा अभ्यास हो गया था । आपकी वाणी मे स्वाभाविक माधुर्य एव ओज था । इसी चातुर्मास से आप श्री स्वतन्त्र रूप से भी व्याख्यान देने लगे थे । आप श्री का तीसरा चातुर्मास जावरा मे हुआ ।

नई–शैली

रामपुरा चातुर्मास की पृष्ठभूमि के साथ जावरा चातुर्मास मे आप श्री की ओजभरी वाणी एव व्याख्यान की नई शैली प्रस्फुटित हुई क्योकि आपको वहा मुख्य रूप मे, दैनिक व्याख्यान फरमाना पडता था । वहा के व्याख्यानो मे आपने जिस नूतन शैली का समावेश किया वह रूढ परम्परा से हट कर था । नवीन विचारो से ओत-प्रोत नवयुवक ही नही, बल्कि प्राचीन शैली को पसन्द करने वाले वृद्धजन भी आपकी नवीन व्याख्यान शैली की तरफ आकर्षित होने लगे । आपका उपदेश सुनने के लिए उपस्थिति निरन्तर बढती जाती थी । जिस उपदेशक ने अभी तक प्रसिद्धि प्राप्त नही की थी, जिसने आगमो का तल–स्पर्शी ज्ञान भी प्राप्त नही किया था और जो अभी तक उदीयमान सन्त ही था, उसने अपनी जन्म जात प्रतिभा के प्रभाव से अपनी आत्मा की गहराई से स्वयमेव फूटने वाली वाणी से एव अल्पकालीन प्रकृति–पर्यवेक्षण से जनता के सभी वर्गो को अपनी उपदेश धारा से मन्त्र मुग्ध कर दिया था । ज्यो–ज्यो लोग आपके उपदेशो को श्रवण करते,उनकी श्रवण करने की उत्सुकता बढती ही जाती । पूर्व के सस्कार कहिये अथवा ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम एव उपादेय नाम कर्म का तीव्र उदय कहिये, हमारे चरित्रनायक का विकास दिन दूना और रात चौगुना होता गया ।

चातुर्मास सम्पूर्ण करके आप श्री ने मुनि श्री मोतीलाल जी म सा के साथ अपनी जन्म भूमि थादला की ओर विहार किया । मुनि श्री घासीलाल जी म सा वृद्धावस्था के कारण जावरा मे ही विराजमान रहे । थादला आपकी जन्म भूमि थी, जहा की धूल मे आप शिशु के रूप मे, मातृ–पितृ हीन बालक के रूप मे एवं बाद मे वस्त्र विक्रेता के रूप मे बडे हुए थे । उसी थादला मे अब आप एक नवीन रूप मे—कठोर सयमशील साधु तथा प्रतिभाशाली उपदेशक के रूप मे पहुचे । वहा की जनता ने चातुर्मास काल समीप आते हुए जानकर आप श्री से चातुर्मास वही करने का भावभरा आग्रह किया । अतएव आपके वि स १९५२ के थादला चातुर्मास मे आपके उपदेशो की अमृत धारा से प्रभावपूर्ण धर्म जागृति हुई ।

आप श्री की विचारधारा मे कभी भी सकुचित दृष्टिकोण नही रहा । मातृभूमि के विषय मे भी आपकी भावना बहुत उदार थी । आप भारतवर्ष को भारतीयो की जन्म भूमि कहा करते थे । भारत–वर्ष को लक्ष्य करके आपने कहा—आपने इसी भारत भूमि पर जन्म लिया है, शैशव क्रीडा की है तो इसी भूमि के प्रताप से आपकी यह देह पाली पोषी गई है । हम ने मानसरोवर मे बहुत कुछ प्राप्त किया है उससे कही बहुत अधिक आपने अपनी जन्मभूमि से पाया है । अतएव हस के उपलक्षण से यह स्पष्ट है कि आपके ऊपर अपनी जन्म भूमि का बहुत ऋण है । इस ऋण को आप किस प्रकार चुकायेंगे ? जिस भूमि से आपका अपरिमित कल्याण हो रहा है उसे तुच्छ मानकर स्वर्ग का गुणगान करते रहना एक प्रकार का व्यामोह ही है । आप श्री मातृभूमि की महिमा का वर्णन बडे ही भाव प्रवण शब्दो मे किया करते थे । ये भाव आपके साहित्य मे सकलित है और यदि उन्हे जो भी सूक्ष्मदृष्टि से पढा जावे तो महसूस होता है कि आप श्री की राष्ट्रीय भावना कई स्वतन्त्रता सेनानियो से बढ–चढ कर और प्रेरणा वर्द्धक थी ।

यद्यपि आप साधुधर्म ग्रहण कर चुके थे और सासारिक वन्धनो से मुक्त हो चुके थे, तथापि मातृभूमि थादला का ऋण अपने ऊपर चढा हुआ है, ऐसा अपने प्रवचनो मे वार-वार फरमाया करते थे। आप श्री का मानना था कि साधुओ पर मातृभूमि, राष्ट्र एव समाज का ऋण होता है। किन्तु साधुओ के द्वारा ऋण चुकाने का तरीका और होता है तो गृहस्थों का और। साधु वहा की जनता को धर्मोपदेश देकर, फैले हुए अनीतिमय वातावरण और अधर्म को हटाकर अथवा वहा के अज्ञान तिमिर को दूर भगा कर उस ऋण से मुक्त हो सकता है। आप श्री ने भी थादला के ऋण को कई गुने व्याज के साथ इस प्रकार भरपूर चुकाया। चार चार माह तक आप श्री के धर्मोपदेश का क्रम इतना प्रभाविक रहा कि वहा की जनता ने प्रतिवोध पाकर अनेकानेक शुभ प्रवृत्तियो मे अपने तन, मन, धन को लगाया।

आप श्री का पाचवा चातुर्मास वि स १९५३ मे शिवगढ मे हुआ। शिवगढ ठाकुर सा के छोटे भाई जो बाद मे स्वय ठाकुर हो गये थे आपके उपदेशो से खूब प्रभावित हुए। आपके जीवन एव उपदेशो से इतने प्रभावित हुए कि उन्होने पूर्ण आस्था से आजीवन मद्य-मास का त्याग कर लिया तथा कई प्राणियो को अभय दान दिया। शिवगढ चातुर्मास पूर्ण करके आप श्री रतलाम होते हुए पुन जावरा पधारे। उस समय जावरा मे मुनि श्री वडे जवाहरलाल जी म सा विराजे थे। आप श्री को शास्त्रो का अधिकाधिक गहरा ज्ञान करने की जिज्ञासा वनी रहती थी अत उन महाराज साहव का सुयोग पाकर आपने आगमो का अध्ययन आरम्भ कर दिया। वहा आपने कई शास्त्रो की वाचना ली।

जावरा से विहार करके आप श्री सैलाना पधारे और वही वि स १९५४ का चातुर्मास व्यतीत किया। उस समय तक अनुभव और अध्ययन के विस्तार के साथ आप श्री की वक्तृत्व कला भी पर्याप्त रूप से विकसित हो चली थी। सैलाना मे वडे-वडे पदाधिकारी आपके प्रवचनो के प्रति गहरी रुचि के साथ आकृष्ट हुए। आपका तप, त्याग और सयम उत्कृष्ट श्रेणी का था ही, उसमे पर वाणी का प्रभाव सोने मे सुगन्ध के समान था। इस सयोग से जैनो के सिवाय जैनेतर जनता भी आपके प्रति समान भाव से श्रद्धा रखने लगी। आपके उपदेशो से कई लोगो ने दुर्व्यसन छोडे तो कई लोगो ने कठिन तपस्याए कीं। इस चातुर्मास मे धर्म की वहुत अच्छी प्रभावना हुई।

चातुर्मास पूर्ण होने के पश्चात् आप श्री जावरा पधारे जहा तत्कालीन युवाचार्य मुनि श्री चौथमल जी म सा, विराजमान थे। युवाचार्य जी की सेवा मे कुछ दिन व्यतीत करके आप श्री रतलाम महाप्रतापी आचार्य श्री उदयसागर जी म सा की सेवा मे पहुचे। वहा आप श्री आचार्य सहित महिमा मण्डित सन्तो के एक साथ दर्शन करके आनन्द-विभोर हो गये। क्योंकि उस समय रतलाम मे करीव १५० सन्त-सतियाजी विराजित थे। उन्ही दिनो माघ शुक्ला दशमी को आचार्य श्री उदयसागर जी म सा का स्वर्गवास हो गया।

आपका वि. सं. १९५५ का सातवा चातुर्मास खाचरोद मे हुआ जहा मुनि श्री घासीलाल जी म सा की आपने वहुत सेवा की। खाचरोद चातुर्मास मे आप श्री को सग्रहणी

का रोग हो गया जिसका आपको बडा कठिन परिषह रहा । काफी उपचार करवाकर भी कोई लाभ नही हुआ । उधर आप श्री के दैनिक नियमो मे हुए किन्ही व्यवधानो के कारण प्रायश्चित स्वरूप कुछ उपवास चढ गये थे । इधर रोग ठीक होने का नाम नही ले रहा था । तव आप श्री के मन मे विचार उठा कि वढते हुए रोग के असर से जीवन का भरोसा नही है, तव क्यों नही प्रायश्चित्त स्वरूप चढे इन सभी उपवासो को एक साथ उतार दू ताकि कही मेरी मृत्यु हो जाय तो यह ऋण तो वाकी न रहे । इस विचार से मुनि श्री ने लगातार छ उपवास किये जिनका सुपरिणाम यह हुआ कि उनकी आत्मा का रोग भी हट गया और शरीर का रोग भी मिट गया । इस आश्चर्यजनक परिणाम से उपवास का महत्त्व एव प्रत्यक्ष फल समग्र जनता के सामने भी प्रकट हुआ तो आप श्री को भी उपवास के श्रेष्ठ प्रभाव का अनुभव हुआ । अपने उपदेशो मे आप श्री अपने अनुभव का विवेचन इस प्रकार किया करते थे कि तप ऐसी अग्नि है जिसमे समस्त अपवित्रता, कलुपता एव मलिनता भस्म हो जाती है । तपस्या की अग्नि मे तपकर आत्मा सुवर्ण की भाति तेजस्वी वन जाती है ।

मुनि श्री घासीलाल जी म सा की सेवा मे रहने के कारण आपने अपना वि सं. १९५६ का आठवा चातुर्मास भी खाचरोद मे ही किया । इस चातुर्मास मे राधालाल जी भटेवरा ने आप श्री के समीप भागवती दीक्षा अगीकार की । दूसरा चातुर्मास भी समाप्त करके आप श्री जावरा पधारे जहा आचार्य महाराज विराजमान थे । पूज्य श्री चौथमल जी म सा ने माघ शुक्ला दशमी के दिन ही आचार्य पद ग्रहण किया था किन्तु अति वृद्धत्व के कारण आपकी शरीर शक्ति एव खास तौर से नेत्र शक्ति क्षीण हो गई थी, जिसके कारण वे सतत विहार नही कर सकते थे । उधर सम्प्रदाय की विशालता वढती जा रही थी और ऐसी विशाल सम्प्रदाय का सचालन एव निरीक्षण करना उनके द्वारा श्रमसाध्य हो रहा था । उस श्रम को कम करने के लिए आचार्य श्री ने उस समय भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे विचरण करने वाले साधुओ की देखरेख के लिए जिन चार अग्रेसर मुनियो की नियुक्ति की थी उनमे से एक पूज्य श्री जवाहरलाल जी म सा भी थे । यह आप श्री की विचक्षण योग्यता का ही प्रभाव था कि आप को अग्रेसर मुनि के रूप मे नियुक्त किया गया जवकि आपको दीक्षा ग्रहण किये हुए तव तक मात्र आठ वर्ष ही हुए थे एव उस समय आपकी आयु भी मात्र २४ वर्ष की ही थी । उस समय मे सम्प्रदाय मे लम्वी दीक्षा और वडी आयु के वहुत से मुनिराज थे, परन्तु आपकी सयम परायणता एव व्यवस्था क्षमता के कारण ही आप श्री का चयन किया गया ।

आचार्य श्री चौथमल जी म. सा. अस्वस्थ थे अत उन्होने आचार निष्ठ तेजस्वी एव प्राभाविक होने के कारण मुनि श्री श्रीलाल जी म सा को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया । इस कारण चू कि आचार्य श्री रतलाम मे विराज रहे थे, मुनि श्री श्रीलाल जी म सा. आसपास के क्षेत्रो मे ही विचरण करते रहे । किन्तु कुछ दिन पूज्य श्री की सेवा मे रहकर मुनि श्री जवाहरलाल जी म. सा ने तीन ठाणो से महन्तपुर की ओर विहार किया । महन्तपुर उज्जैन के पास एक छोटा कस्वा है । वि. स १९५७ का नवा चातुर्मास आप श्री ने वहीं किया । जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, आचार्य श्री चौथमल जी म सा अस्वस्थ थे अत उनका चातुर्मास

रतलाम मे ही हुआ और वही व्याधि के अधिक बढ जाने से कातिक शुक्ला अष्टमी की रात्रि में उनका स्वर्गवास हो गया । उस समय पूज्य श्री श्री लाल जी म सा रतलाम में ही मौजूद थे, एक सप्ताह मात्र की युवाचार्य पदवी भोग कर कातिक शुक्ला नवमी के दिन आचार्य पद पर अलकृत हुए ।

पचमाचार्य श्री श्रीलाल जी म सा रतलाम मे चातुर्मास पूर्ण करके ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए इन्दौर पधारे । उस समय मुनि श्री जवाहरलाल जी म सा भी अपना चातुर्मास समाप्त करके इन्दौर पधार गये । आचार्य श्री के दर्शन करके आपको बहुत प्रमोद हुआ एव आप श्री ने इन्दौर से आचार्य श्री के साथ रतलाम की ओर विहार किया । बड नगर से आप श्री देहातो मे धर्म प्रचार की दृष्टि से कुछ दिनो के लिए अलग विचरे, लेकिन रतलाम में पहुच कर पुन आचार्य श्री के साथ हो गये ।

मैं उदयपुर के लिए जवाहरात की पेटी भेज दूंगा :

रतलाम से आचार्य श्री ने मेवाड की ओर विहार किया तो मुनि श्री मोतीलाल जी म सा के साथ आप श्री ने भी कुछ दिन ठहर कर उसी ओर विचरना आरम्भ किया । मेवाड प्रात मे धर्म की अभूतपूर्व जागृति करते हुए आचार्य श्री श्रीलाल जी म सा उदयपुर पधारे । वहा उनके प्रभावशाली प्रवचनो से जीवदया के महान् कार्य सम्पादित हुए । आचार्य के आत्म प्रेरक उपदेश श्रवण करके मेवाड के तत्कालीन दीवान कोठारी जी श्री बलवन्तसिह जी सा ने जैन धर्म अगीकार किया तथा आचार्य श्री के वे परम श्रद्धालु भक्त बन गये ।

एक दिन कोठारी जी तथा उदयपुर के श्री सघ ने आचार्य श्री से आगामी चातुर्मास उदयपुर मे करने की आग्रह भरी विनती की तब आचार्य श्री ने जो उत्तर फरमाया वह आप श्री की उनके मन मे रही हुई विशिष्ट भावना का परिचायक है—

"इस वर्ष यहा चातुर्मास करना मेरे लिए अनुकूल प्रतीत नही होता है किन्तु आपको मैं निश्चित बनाना चाहता हू । कारण मैं आपके यहा जवाहरात की पेटी भेज दूगा । मुनि श्री जवाहरलाल जी एक उदीयमान साधक हैं एव उनके यहा विराजने से सर्व प्रकारेण मगल ही मंगल होगा ।'

उदयपुर के श्री संघ ने एव कोठारी जी ने नत मस्तक होकर आचार्य श्री का कथन स्वीकार किया । यह आप श्री के लिए कितने गौरव की बात थी कि आचार्य श्री के मुख से अपने एक सुयोग्य मुनि के लिए ऐसी सराहना के शब्द निकले ।

आचार्य श्री के आदेश से आप श्री का वि स १९५८ का दसवा चातुर्मास तीन ठाणो के साथ उदयपुर मे हुआ । वहा आप श्री प्रतिदिन अपने परम प्रभावशाली प्रवचनो द्वारा अधिकाधिक श्रोताओ को प्रभावित करने लगे । प्रतिदिन हजारों श्रोता—जिनमे जैन और जैनेतर, हिन्दू और मुसलमान, पुरुष और स्त्रियो का समावेश था, आपके धारा प्रवाह उपदेशो से लाभ

उठाते थे । उस समय आप श्री मृगापुत्र का अध्ययन फरमाते थे । कर्मों का फल किस प्रकार भोगना पडता है, इस विषय के शब्दचित्र से श्रोताओ के समक्ष जैसे उसका दृश्यचित्र ही खिच जाता था । किशनगढ निवासी एक मुसलमान भाई लगातार व्याख्यान सुनते थे और आप श्री के भक्त वन गये थे ।

इस चातुर्मास मे मुनि श्री मोतीलाल जी म सा ने ४५ दिन की उग्र तपस्या की । तपस्या के पूर के दिन मेवाड सरकार के आदेश से उदयपुर के सभी कसाईखाने वन्द रखे गये और बहुत से प्राणियो को अभय दान दिया गया । चातुर्मास मे समग्र वातावरण उत्साह, स्फूर्ति एव सात्विकता से भरा पूरा रहा । विशिष्ट व्यक्तियो ने ही नही वल्कि सामान्य नागरिको ने भी आप श्री की वाणी से विमुग्ध होकर यही कहा कि वास्तव मे श्रीमद् जवाहरलाल जी महाराज 'जवाहरात' की ही पेटी हैं ।

इसी चातुर्मास मे आप श्री ने श्री गणेशीलाल जी को सम्यक्त्व रत्न प्रदान किया जो आगे जाकर आप श्री के ही पट्टधर आचार्य वने । उस समय कौन जानता था कि सम्यक्त्व देकर जिसे आज धर्म के प्रवेश द्वार पर खडा किया गया है, वही आगे जाकर धर्माचार्य वनेगा और शासन की अमित प्रभावना करेगा ?

उदययुर का चातुर्मास सम्पूर्ण करके आप श्री तरावलीगढ पधारे, जहा श्री घासीलाल जी को मुनि दीक्षा प्रदान की । वहा से आप श्री ने मारवाड की तरफ विहार किया । मार्ग मे आपको कुछ लुटेरे मिल गये । उस वक्त नव दीक्षित मुनि श्री घासीलाल जी म सा नये कपडे पहने हुए थे । जो साधु भिक्षा माग कर जीवन निर्वाह करते हैं, अन्न जल का एक कण भी आने वाले कल के लिए नही वचाते और ससार की सम्पत्ति को नासिका के श्लेष्म के समान जानकर त्याग देते हैं, उन अकिंचन साधुओ से भला लुटेरो को क्या मिलने वाला था ? तव भी लुटेरो ने मुनि श्री घासीलाल जी म सा का चोल–पट्टा (वस्त्र) उतरवा लिया । तव आप श्री ने लुटेरो को जैन साधु का परिचय दिया एव साधु की मर्यादाए वताई । इस पर उन्होने पश्चात्ताप जाहिर किया और लिया हुआ चोल–पट्टा लौटा दिया ।

अनेक क्षेत्रो को अपनी पावन वाणी से पावन वनाते हुए एव धर्म–प्रचार की दुदुभि वजाते हुए आप श्री का जोधपुर पधारना हुआ ।

जोधपुर का उत्साही चातुर्मास दयादान के प्रचार का शख-नाद ·

एक तो आप श्री की जगमगाहट जानी हुई थी और दूसरे थोडे दिनो के उसके प्रत्यक्ष दर्शन से जोधपुर वासी आपकी प्रतिमा के प्रति विमुग्ध से हो गये, अत उन्होंने आप श्री से आगामी चातुर्मास जोधपुर मे करने की भावपूर्ण विनती की आपने तदनुसार वि म १९५९ का अपना ११वा चातुर्मास जोधपुर मे ही व्यतीत किया । योग ऐसा मिला कि जोधपुर मे ही तेरहपथ सम्प्रदाय के आचार्य श्री डालचन्द जी का भी चातुर्मास था । इस योग ने नया सयोग विठाया कि आप श्री ने इस चातुर्मास मे दयादान के प्रचार का जो शखनाद किया वह वर्षों तक

गूंज कर तेरह–पथ की भ्रामक धारणाओ से सामान्यजन को सावचेत करता रहा। इतना ही नही, वाद के वर्षो मे आप श्री ने स्थान–स्थान पर शास्त्रार्थ एव चर्चाए करके दयादान विरोधी सिद्धान्तो का पर्दाफास किया और 'सद्धर्ममडनम्' ग्रन्थ की रचना करके सतसिद्धान्तो का दिव्य प्रकाश चारो ओर फैलाया।

यहा अति सक्षेप मे तेरह–पथ का परिचय देना समुचित रहेगा। तेरह-पथ सम्प्रदाय जैन समाज की श्वेताम्बर शाखा से ही निकला हुआ है, जिसके मूल प्रवर्तक श्री भिक्खू स्वामी माने जाते हैं। पहले वे भी स्थानकवासी सम्प्रदाय के आचार्य पूज्य श्री रघुनाथ जी म सा. के ही शिष्य थे किन्तु उनके मन मस्तिष्क मे कुछ शास्त्र विपरीत धारणाए जम गई और वे अपने गुरु से अलग होकर नये सम्प्रदाय के मुखिया बन बैठे। उन्होने अपने नेतृत्व मे जो धारणाए फैलाई वे सारस्प मे निम्नाकित हैं—

१ मरते हुए जीव को बचाने मे पाप है। अगर गायो के एक बाडे मे आग लग जाय तो उन्हे बचाने के उद्देश्य से बाडा खोल देने वाला पाप का भागी होगा। बचा हुआ जीव अपने जीवन मे जो पाप करेगा उन सब पापो का भागी भी बचाने वाला होगा।

२ प्यास से तडफते हुए किसी भी मनुष्य या दूसरे प्राणी को पानी पिला देना पाप है क्योकि पानी मे असख्यात जीव है और पानी पिलाने से एक जीव की रक्षा करने मे असख्यात जीव मरते हैं। अगर कोई दयालु छाछ जैसी निरवद्य चीज (जिसमे जीव नही हो) पिलाकर किसी के प्राण बचा लेता है तो वह भी पाप का भागी होता है, क्योकि जीव रक्षा करना ही पाप है।

३ माता का अपने बालक को दूध पिला कर पालन पोषण करना तथा गर्भस्थ बालक की रक्षा करना भी एकान्त पाप है।

४ अगर कोई सुपुत्र अपने माता–पिता की सेवा करता है तो उसका वह कृत्य भी पाप है।

श्री भिक्खू जी स्वामी ने यह भी कहा कि भगवान् महावीर ने तेजोलेश्या मे जलते हुए गोशालक के प्राणो की जो रक्षा की थी उसके कारण 'भगवान' भी चूक गये।

यह बताना शायद आवश्यक नही माना जायेगा कि ससार मे जितने भी विशिष्ट विचारक एव मत प्रवर्तक हुए हैं और जिन्होने सामान्यजन को धर्माचरण के उपदेश दिये हैं, उनमें मे एक भी प्रवर्तक सम्भवत ऐसा नहीं मिलेगा जिसने जीव रक्षा को सर्व प्रकार के धर्माचरणो मे श्रेष्ठ धर्म न बताया हो। जैन धर्म मे तो जीव रक्षा को सर्वोपरि महत्त्व दिया गया है। जैन शास्त्रो मे कहा गया है—

'सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयण भगवया सुकहिय' अर्थात् जगत के सभी जीवो की रक्षा रूप दया के लिए भगवान ने प्रवचन कहा है। इस पर भी यदि अपने को जैन मानने वाला सम्प्रदाय अपने ही भगवान को चूका हुआ (भूल भ्रमित) कहने की धृष्टता करता है और

दया को ही पाप बताता है, उसके लिये क्या कहा जाय ? इसी कारण किन्तु पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा. ने इस पथ की भ्रात धारणाओ के विरुद्ध बहुत कुछ कहा है और सत्य तत्त्व की ज्योति जगाई ।

जोधपुर चातुर्मास मे आपश्री के समानान्तर तेरह पथ के आचार्य के भी चातुर्मास का जो योग मिला था उसके कारण दया दान के सिद्धान्तो पर विशेषकर चर्चा होने लगी । आपश्री ने अनुभव किया कि इस अवसर पर दयादान के सबध मे सत्य वस्तुस्थिति सरलतापूर्वक समझाई जा सकेगी । जीव रक्षा के विरोधियो का विरोध उन्हे अपना पवित्र कर्त्तव्य दिखाई दिया । तेरह पथ सम्प्रदाय का अपनी धारणाओ को बताने वाला मुख्य ग्रन्थ 'भ्रमविध्वसन' है । अतएव आपश्री ने इस ग्रन्थ का सूक्ष्मरीति से अवलोकन किया । इस अवलोकन से तो आपश्री की इच्छा अधिक प्रबल हो उठी कि जैन धर्म के नाम पर इस कलक को तो मिटाना ही चाहिये । श्रावको ने भी मुनिश्री की इच्छा का समर्थन किया । आपश्री ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये शास्त्रार्थ करने का उपाय ही योग्य समझा । शास्त्रार्थ का क्रम प्रारभ करने के अभिप्राय से आप श्री ने सात प्रश्नो की सूची तैयार की और श्रावको ने प्रश्नो को लेकर एक विज्ञप्ति निम्न प्रकार से प्रकाशित कर दी

तेरह पथियो को विदित हो कि नीचे लिखे प्रश्न सविस्तार सूत्रार्थ के पाठ सहित तुम्हारे पूज्यजी से पूछ कर लिखो । सात प्रश्न निम्नलिखित हैं —

१ श्री महावीर भगवान् को दीक्षा लेने के बाद 'चूका' बताते हो सो वह पाठ दिखाओ ।

२ साधु के सिवाय किसी को दान देने मे एकान्त पाप बताते हो सो पाठ दिखाओ ।

३ बयालीस दोष टाल कर आहार लेने वाले पडिमाधारी श्रावक को दोष रहित आहार देने में पाप बताते हो सो पाठ दिखाओ ।

४ साधुजी महाराज को किसी दुष्ट ने फासी लगाई और किसी दयावान ने धर्मबुद्धि मे उसे खोल दी । तुम उन दोनो को पापी कहते हो और श्रद्धते हो सो पाठ दिखाओ ।

५ गायो का बाडा भरा हुआ है, उसमे किसी दुष्ट ने आग लगा दी और किसी दयावान ने किवाड खोल कर गायो को बाहर निकाल दिया तथा उनके प्राण बच गये । तुम उन दोनो को पापी कहते हो सो पाठ दिखाओ ।

६ पद्रहवा कर्मादान 'असजती पोषणिया' कहते हो और सिखलाते हो सो पाठ दिखाओ ।

७. असयति का जीना नही वाछना, ऐसा कहते हो सो पाठ दिखाओ ।

इन प्रश्नो का उत्तर जल्दी लिखो और भी वहुत से प्रश्न हैं ।

तुम्हारा मत अर्थात् भीखणजी का चलाया मत जैन सिद्धान्त तथा जैन आगमो के विरुद्ध स्पष्ट दिखाई देता है । तुम्हारे पूज्य श्री न्याय पूर्वक चर्चा अर्थात् शास्त्रार्थ करना चाहे तो हमारे साधुजी चर्चा करने को तैयार हैं । स्थान तीसरा और निष्पक्ष विवेकी समझदार तीसरे मत के मध्यस्थ मोअज्जिज मुकर्रर होवे ताकि सघर्ष न हो सके । चर्चा जरूर होनी चाहिये । एक हफ्ते की मियाद दी जाती है क्योकि चौमासे के दिन थोडे रहे हैं । जो इस मौके पर तुम्हारे पूज्य श्री चर्चा नही करेंगे तो हम लोग तो समझते ही हैं, और भी सव लोग तुम्हारे को झूठा समझेंगे । स १९५९ कार्तिक सुदी २ वाईस सम्प्रदाय की तरफ से ।

—मुणोत अमरदास भडारी, किशनमल,

इस नोटिस के उत्तर मे पत्र मिला कि पूज्य डालचन्दजी शास्त्रार्थ करने के लिये तैयार हैं, शीघ्र चर्चा कर लो । लेकिन जो स्थान वताया था वह सुविधा जनक नही था । अतः एक समीपवर्ती स्थान सुझाया गया । मध्यस्थ के प्रश्न पर भी विवाद चला । तव वाईस सम्प्रदाय की तरफ से कविराज श्री मुरारीदानजी का नाम सुझाया गया तथा कहा गया कि स्थान और समय का निर्णय उन्ही से करा लिया जाय । किन्तु तेरह पथियो ने यह भी मजूर नही किया । फिर उनसे कहा गया कि शास्त्रार्थ नहीं तो सात प्रश्नो का तो उत्तर दे दें । लेकिन उन्होने कोई उत्तर नही दिया ।

उन्ही दिनो पचभद्रा (मारवाड़) के एक प्रमुख तेरह पथी श्री प्रतापमलजी चौपडा को अपने पथ की कुछ प्ररूपणाओ मे शका पैदा हुई तो समाधान के लिये अपने पूज्य श्री डालचन्दजी म. सा के पास जोधपुर आये, किन्तु वजाय उनको समाधान से सतुष्ट करने के उन्हे मिथ्यात्वी कह कर अपमानित किया गया । तव प्रतापमलजी आपश्री के पास आये और सत्य प्ररूपणाओ को जानकर आपश्री के भक्त वन गये ।

चातुर्मास पूर्ण हो गया । तेरहपथियो ने तव तक न तो शास्त्रार्थ किया और न सात प्रश्नो का उत्तर दिया । छ महीने वाद 'प्रश्नोत्तर समीक्षा' नाम की पुस्तिका तेरह पथियो ने प्रकाशित कराई जिसमे सात प्रश्नो के उत्तर मे प्रति प्रश्न वनाकर प्रस्तुत कर दिये । फिर आपश्री ने तेरह दिन की तपस्या करके दयादान विरोधी भ्रमपूर्ण मान्यताओ का भडाफोड करते हुए 'प्रत्युत्तर दीपिका' नामक पुस्तक की रचना की जो सेठ वहादुरमलजी वाठिया लायब्रेरी, भीनासर (वीकानेर) की ओर से प्रकाशित हुई ।

जनकल्याण की गगा वहाते चले :

मुनिश्री जवाहरलालजी म. सा. जोधपुर से विहार करके ग्रामानुग्राम विचरण करते क्या चले कि सद्ज्ञान प्रसार, जन कल्याण तथा अभयदान की गगा वहाते चले । मार्ग मे अधिकाश स्थानो पर आपश्री ने तेरह पथ की भ्रामक धारणाओं का भडाफोड करते हुए सद्ज्ञान का प्रसार किया । वालोतरा कस्वे मे इसी सवंध मे सार्थक चर्चा हुई । फिर पचभद्रा, समदड़ी,

सिवाना, पाली, सोजत और व्यावर मे जन कल्याणकारी एव अभयदान के उपकारी कार्यों की प्रेरणा देते हुए आपश्री अजमेर पहुचे । जहा से पुन व्यावर पधारे । जहा श्रवको के विशेष आग्रह से आपश्री का विक्रम स १९६० का बारहवा चातुर्मास हुआ । चातुर्मास मे धर्मोपकार का खूब आनन्द रहा । बाद मे यहां भी तेरह पथियो के पूज्य श्री डालचन्दजी आ गये थे तथा उनसे शास्त्रार्थ के लिये भी कहा गया पर वे तैयार नहीं हुए । परन्तु व्यावर से जब आपश्री जैतारण पधारे तब वहा तेरह पथियो के प्रसिद्ध साधुश्री फ़ौजमलजी के साथ आपश्री का शास्त्रार्थ हुआ । उनमे चार मध्यस्थ कायम किये गये जिन्होने दोनो पक्षो द्वारा मान्य शास्त्रार्थ सवधी नियम बनाये और उनके अनुसार शास्त्राथ का कायक्रम हुआ जिसमे मुनि श्री जवाहरलालजी म सा. को विजेता घोषित किया गया । शास्त्रार्थ का विवरण सार सक्षप रूप मे परिशिष्ठ स २ मे देखिये) ।

शास्त्रार्थ मे विजय प्राप्त करके आपश्री बलूदा, नागोर आदि क्षेत्रो मे सम्यक् ज्ञान की ज्योति फैलाते हुए भीनासर पधारे । उस समय आपकी २९ वर्ष की आयु थी । इस समय आपश्री का शरीर स्वभावत. सुन्दर था और ब्रह्मचर्य के प्रभाव से उसमे अद्भुत तेज तथा लावण्य की आभा चमकती थी । आपमे उस समय तक आश्चर्यकारी आकर्षण शक्ति उत्पन्न हो चुकी थी । जिस समय मुनिश्री ने भीनासर मे प्रवेश किया तो लोग आश्चर्य से सोचने लगे कि यह तो कोई राजकुमार दीक्षित होकर आया है । आकर्षण, शरीर, सौभाग्य के साथ आपकी वाणी मे अमृत जैसी मिठास, तो विचारो मे क्राति की मौलिकता टपकती थी । विषय प्रतिपादन की शैली रोचक सरल और अत्यन्त भावपूर्ण थी । कहानी कहने का आपका ढग तो निराला ही था । कहानी मे आपश्री गूढ से गूढ तत्त्व का सरलता के साथ समन्वय कर देते थे ।

भीनासर मे मूर्ति पूजा के विषय में यतियो के साथ आपकी चर्चा हुई तो प्रमुख तेरह पथी श्रावक भी तत्त्व चर्चा के लिये आपके पास आया करते थे । दोनो ही मान्यताओ के लोग कुछ दिनो के ही आपके ससर्ग से आपश्री के भक्त बन गये । भीनासर से आप बीकानेर पधारे जहा अति आग्रह के साथ आपका वि. स १९६१ का तेरहवा चातुर्मास कराया गया । चातुर्मास में सामायिक पौषध, व्रत-प्रत्याख्यान, अभयदान आदि धर्म कार्य खूब हुए । चातुर्मास के पश्चात् बीकानेर से आपश्री अजमेर होते हुए आचार्यश्री के साथ नसीराबाद पहुचे तथा आपश्री ने उदयपुर में चातुर्मास करने का आदेश प्राप्त होने पर उदयपुर की तरफ विहार कर दिया जो वि स. १९६२ का चौदहवा चातुर्मास था ।

उदयपुर का यह चातुर्मास बहुत महत्त्वपूर्ण रहा । आपश्री के साथ कई तपस्वी सत थे जिन्होने लम्बी तपस्याए की, जिसका विवरण निम्नानुसार है :—

१ मुनिश्री मोतीलालजी म सा, ४१ दिन उपवास
२. मुनिश्री राधालालजी म सा ३० दिन उपवास
३ मुनिश्री पन्नालालजी म. सा. ६१ दिन छाछ के पानी के आधार पर
४. मुनिश्री धूलचंदजी म सा ३५ दिन उपवास

५ मुनिश्री उदयचन्दजी म सा ३१ दिन उपवास
६ मुनि श्री मयाचन्दजी म सा ४१ दिन उपवास

तपस्या के अलावा अभयदान का भी उल्लेखनीय कार्य हुआ । तपस्याओ के पूर पर सैकडो वकरो का अभयदान दिया गया । बहुत मे कसाई भी तपस्वियो के दर्शन करने एव मुनिश्री के उपदेश सुनने आये जिन्हे आपश्री ने अहिंसा धर्म की प्रभावशाली प्रेरणा दी । मारे जाने वाले पशुओ का हृदय हिला देने वाला करुणापूर्ण वर्णन सुनकर कसाइयो का दिल भी पिघल गया, जिन्होने अपने मुखिया किसनाजी पटेल के साथ खडे होकर प्रतिज्ञा ली—मैं जव तक जीऊगा, कसाईपना नही करूगा । कभी किसी जीव का नही मारूगा और न मास खाऊगा । मारने के उद्देश्य से वकरा आदि पशुओ का व्यापार भी नही करूगा । सयोग की वात है कि प्रतिज्ञा लेने के वाद वे अपने एक अदालती मुकदमे मे जीत गये जिससे उन्हे तीन हजार रुपये मिले । उन्होने इस जीत का अपनी प्रतिज्ञा का प्रताप समझा जिसके कारण अहिंसा धर्म पर उनकी श्रद्धा और अधिक वढ गई ।

चातुर्मास मे उस समय आपसे सम्यक्त्व ग्रहण किये हुए श्री गणेशीलालजी ने आपकी सेवा मे रहकर अपने सस्कारो मे धार्मिकता का गहरा रग वसा लिया । कोठारीजी वलवतसिहजी के अलावा लाला केसरीलालजी आदि उच्च राज्याधिकारियो तथा महद्राज सभा के सदस्य श्री मदनमोहनलालजी ने आपके उपदेशो का पूरा लाभ लिया तथा श्रद्धानिष्ठ वन गये । लाला केसरीलालजी (कायस्थ) और उनकी धर्मपत्नी ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया ।

चातुर्मास समाप्त होते-होते जिन श्री गणेशीलालजी जी मारू ने अपने सस्कारो मे धार्मिकता का गहरा रग वसा लिया था वे वैराग्य भाव के प्रवल वेग से आन्दोलित हो उठे । जैसे भस्मी से अग्नि आच्छादित रहने पर तेजमयी नही दिखती है, किन्तु आच्छादन हट जाय तो उसकी चमक प्रकट हो जाती है, उसी प्रकार श्री गणेशीलालजी के मन पर सासारिकता का आच्छादान पूरी तरह से हट गया और उन्होने मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को आपश्री के समीप दीक्षा अगीकार कर ली । इस प्रकार आपश्री को अपना उत्तराधिकारी प्राप्त हो गया । श्री गणशीलालजी के साथ एक पन्नालालजी ने भी दीक्षा ग्रहण की । उदयपुर से विहार करके आपश्री नाथद्वारा पधारे जहां आचार्य श्री के साथ आपका समागम हुआ । वहा से झालावाड होकर आप गगापुर पधारे जहा तेरह पथी भाइयो से आपकी चर्चा हुई । पहुना मे तेरह पंथी भाईयों ने आपश्री से सतोष जनक समाधान प्राप्त किया । फिर आपश्री भीलवाडा वेंगू होते हुए सिगोली पधारे । सिगोली मुनिश्री मोतीलालजी म सा की जन्मभूमि है । वहा से वापिस वेंगू होकर पारसोली पधारे जहा के रावजी ने पशु हिंसा का त्याग किया । चित्तौड के हाकिम सा ने भी आपका उपदेश सुनकर कई प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये । चित्तौड से आपश्री कई गावो को स्पर्शते हुए आमेट पधारे वहा के कई तेरह पथी भाई आपके साथ तत्व चर्चा करके सतुष्ट हुए ।

आपश्री का वि स १९६३ का पद्रहवा चातुर्मास गगापुर मे व्यतीत हुआ । इस चातुर्मास मे एक ओर तपस्वी मुनियों ने लवी तपस्याए कीं तथा मुनि श्री गणेशीलालजी म सा

आदि संतों ने काफी परिमाण मे सूत्राध्ययन किया तो दूसरी ओर बहुत से लोगों ने मांस, मदिरा पर-स्त्रीगमन आदि का त्याग किया । सहाडा तथा राशमी के हाकिमो एव जैनेतर भाइयो ने भी आपश्री के उपदेशो का अच्छा लाभ लिया । गगापुर का चातुर्मास पूर्ण करके कपासन होते हुए आपश्री वडीसादडी पहुचे जहां आचार्य श्री श्रीलालजी म सा विराजमान थे । आचार्य श्री ने मुनि श्री का उनके विशिष्ट धर्मप्रचार के लिये साधुवाद किया एव सतोष प्रकट किया । वहा से रतलाम तक के लम्बे प्रवास मे आपश्री ने सर्वत्र हजारो व्यक्तियो को आत्म कल्याण का प्रशस्त पथ दिखाया, अनेक मूक पशुओ को अभयदान मिला तो अनेको द्वारा–मास मदिरा, पर स्त्री-गमन एव शिकार के त्याग लेने से अपार जन कल्याण हुआ ।

कामधेनु की तरह वरदायिनी बने-कान्फ्रेंस :

आपश्री का वि स १९६४ का सोलहवा चातुर्मास ठाणा ८ से रतलाम मे हुआ । प्रतिदिन हजारो व्यक्ति आपकी प्रवचन धारा से प्रभावित होकर धर्म कार्य मे प्रवृत्त होते थे । चातुर्मास समाप्त करके आपश्री ने आसपास के क्षेत्र मे विचरण किया । इसी क्षेत्र मे वाजणा तहसील मे अनेक गाव, अनेक गावो मे भील वसते हैं । जो नवरात्रि मे देवी-देवताओ के सामने वकरे, भैसो की वलि चढाया करते थे । उस समय मेहता तख्तसिहजी वहा के तहसीलदार थे । उनके प्रयास से ७० गावो के भील पटेल आपश्री के व्याख्यान श्रवण को आये । उपदेश ऐसा मर्मस्पर्शी हुआ कि पटेलो ने आपश्री के समक्ष खडे होकर प्रतिज्ञा ली–हम लोग अपने-अपने गाव मे नवरात्रि के अवसर पर देवी–देवताओं के सामने भैसो और वकरो की वलि नही चढाएगे और दूसरों को भी रोकने का प्रयत्न करेंगे । पटेलो ने यह प्रतिज्ञा-पत्र लिखित एव हस्ताक्षरित करके भेंट किया ।

आपश्री पुन· रतलाम पधारे क्योकि उन्हीं दिनों वहा श्री श्वे स्था जैन कान्फ्रेन्स का दूसरा अधिवेशन था । देश के विभिन्न प्रातो से हजारो लोगो के अलावा मोरवी नरेश तथा राजपूताना व मध्यभारत के अनेक जागीरदार भी कान्फ्रेन्स के अधिवेशन मे सम्मिलित होने के लिये आये । करीव दस हजार की उपस्थिति थी, जव आपश्री का प्रवचन हुआ । उस प्रवचन मे आपश्री ने कामधेनु के दृष्टान्त के साथ कान्फ्रेन्स को जो सीख दी, वह अतीव प्रेरक थी —

"भारत मे कामधेनु की कल्पना प्राचीन काल से प्रचलित है । कामधेनु का असली स्वरूप क्या है, यह आज कहना कठिन है क्योकि वह साहित्यिक कामधेनु आज कही प्रत्यक्ष नहीं है । उसका स्वरूप कुछ भी हो, उस परोक्ष कामधेनु की अपेक्षा हमे प्रत्यक्ष कामधेनु की ओर ध्यान देना चाहिये । इस कान्फ्रेन्स को मैं कामधेनु कहना चाहता हू ।

कामधेनु अपने चार पैरो पर खडी रहती है, उसी प्रकार कान्फ्रेन्स रूपी कामधेनु साधु, साध्वी, श्रावक एव श्राविका रूपी चतुर्विध सघ के सहारे खडी है । एक भी पैर अगर स्वस्थ और पुष्ट न हो तो कामधेनु लगडी हो जायेगी और प्रगति करने मे उतनी समर्थ नही हो सकेगी । इसलिये कान्फ्रेन्स के चारो पैर स्वस्थ और पुष्ट होने चाहिये । यह ध्यान रखना चाहिये कि कामधेनु जिस तरफ जाने की इच्छा करती है उसके चारो पैर उसी तरफ बढते हैं ।

इसलिये चारो पैरो मे एकरूपता भी होनी चाहिये । कान्फ्रन्स की प्रगति के लिये भी चतुर्विध सघ की एक रूपता आवश्यक है । हा, इन चारो पैरो मे दो अगले पैर साधु–साध्वी हैं और पिछले दोनो श्रावक-श्राविका । अत. पिछले दोनो पैरो को अगले दोनो पैरो का अनुसरण करना चाहिये । फिर भी अगले और पिछले पैरो की अपनी-अपनी जिम्मेदारी होती है ।

कामधेनु मे वह ताकत होती है कि घास जैसा तुच्छ पदार्थ खाकर भी उसे दूध में बदल देती है । अगर कामधेनु मे यह शक्ति न होती तो कौन उसकी उपासना करता ? इसी प्रकार कान्फ्रेन्स मे भी ऐसी शक्ति होनी चाहिये । ध्यान रखें कि अगर कान्फ्रेन्स मे ऐसी शक्ति न हुई तो कौन इसकी शरण ग्रहण करेगा ?

कामधेनु के चार स्तन होते हैं और चारो स्तनो के द्वारा दूध देकर वह अपने सेवक को कृतार्थ करती है । कान्फ्रेन्स रूपी कामधेनु के भी चार स्तन है—दान, शील, तप और भावना । इनका दूध चतुर्विध सघ के सदस्यो को मिलना चाहिये ।

कामधेनु के दो सुन्दर सीग होते हैं, वैसे ही कान्फ्रेन्स सम्यक्ज्ञान एव सम्यक् चारित्र रूपी दो सीगो की शोभा सदा बनाये रखे । किसी भी एक सींग की शोभा से उन्नति नहीं होगी। कामधेनु मे दो दृष्टिया है । कान्फ्रेन्स रूपी कामधेनु को भी दो दृष्टियो से काम लेना चाहिये। एक दृष्टि से उसे अपने भीतर घुसे हुए कुसस्कार, अज्ञान, अनैक्य, अनुत्साह आदि दोषो को देखना चाहिये तो दूसरी दृष्टि से उन आवश्यक बातो को देखना चाहिये, जिनको स्वीकार किये बिना उसका विस्तार नही । इस तरह बुराइया त्यागने और अच्छाइया ग्रहण करने से ही अभ्युदय हो सकेगा ।

लोक मे कामधेनु की बडी महिमा है । यह महिमा निष्कारण नही है । वह अपने सर्वस्व का जीवन रस त्याग करके अपने आश्रितो का रक्षण और पोषण करती है । इसी त्याग से उसे महिमा मिली है । अगर आप कान्फ्रेन्स—कामधेनु को महिमामयी बनाना चाहते हैं तो आपको सर्वस्व त्याग करके परोपकार करने का पाठ सीखना होगा । एक बात और। कामधेनु उसी को मनोवाछित फल देती है जो उसकी सेवा करता है । इसी प्रकार कान्फ्रेन्स कामधेनु की सभी मिलकर सेवा करेंगे तभी वह पुष्ट हो सकेगी । पारस्परिक आदान–प्रदान का नियम यहा पूर्णरूप से लागू होता है ।"

अधिवेशन मे आपश्री ने उपरोक्त आशय का प्रवचन दिया था, जिसे सुनकर लोग मन्त्रमुग्ध ही नही, कर्त्तव्य चेता भी बने । लेकिन आज का कान्फ्रेन्स किस विकट मोड पर खड़ा है जिससे प्रबुद्ध वर्ग अपरिचित नहीं है । आचार्य श्री के विचारानुसार गति की होती तो आज कान्फ्रेन्स की यह अवस्था नहीं बनती ।

धर्म का आधार-समाज सुधार :

आपश्री ने वि. स. १९६१ का सत्रहवा चातुर्मास अपने जन्म-ग्राम थांदला में किया ।

वहा नदी में जाल डालकर मछलियां पकडने वाले भाई लोग बहुत रहते हैं। चातुर्मास मे मछलिया पकडने का उन्होने त्याग किया । आपश्री ने अपने प्रवचनो मे वहां पर सामाजिक कुरूढियो को दूर करने पर काफी बल दिया। जिसके फलस्वरूप समाज सुधार के लिये एक पचायत नामा लिखा गया । यह पचायतनामा ओसवाल सकल पचपुर थादला के खाता पाना १९१७ पर अकित है और इस पर १५५ व्यक्तियो के हस्ताक्षर सहित मिती स १९६५ श्रावण विद १३ रविवार दज है । उसकी मुख्य कलमे निम्नाकित है.—

१ कन्या–विक्रय बन्द किया जाता है । लडकी को सगपण करवाने मे देज सिर्फ रुपया एक रहेगा ।

२ बीद व बीदणी वरात भाणा मे खरच की रकमे सीमित कर दी गई ।

३ विवाह मे रडी को नाच करावणो नही ।

४ रजा की जीमण मे मोरस खाड नही गारणी ।

५ लीला वाज दूना नही वापरणा । कतई वद जात मे, गाम मे ।

६ न्यात का निराश्रित वाया-माया पर पचायती निगाह सार सभार की देवे ।

७ पर गाम पचायती रसम से जावे तो रति मशाल का उजवारा सू नही जावे ।

८ जात मे विरादरी की लुगाया वेजा गारिया नी गावे, वेजा नाच नी नाचे ।

९ सावण भादवा मे नया सर से नीव नाख ने मकान को या दूसरो काम नही सरू करणो ।

१० सावण-भादवा मे अष्टमी व चतुर्दशी के दिन गाडी भाडे की या घर की नही चलावणी । वैसे गाड़ी मे वैठकर जाणो भी नही ।

११ मात्ती मौत १५ साल तक की हुई जावे तो वाणी पर पचायती हक नही, सवव रजा नही देवे ।

१२ हाथी दांत को चूडो आपणा अठे व द करी चुका हा ।

१३ आतिशवाजी, झाड व हाथी नार वगैरह थादला के अन्दर नहीं छोड़े और परदेशी ने भी गांव मे नही छोडवा देना ।

१४ पचायती हक सिवाय जो वावत आवेगा इजाफ की उसको हिस्सा रसीद सिरस्ता मुजव समझ ली जावेगा ।

ऊपर माफक कलमा को पालन समस्त पच थादला का करेगा और अण के सिवाय खुशी से कोई भी वरोटी करेगा तो वासण भाडा रु ढाई व देव का रु ढाई जुमला पाच रु लेगा । उपर लिख्या सिवाय पचायती हक दस्तूर नही है । लिख्या हुआ के सिवाय करियावर पर पंचायती हक नही है । यो ठराव समस्त पच थादला के रुवरू सा. प्यारेलालजी के हुआ है सो सही है ।

यह पचायतनामा इस तथ्य का प्रमाण है कि आज से करीब ७५ वर्ष पूर्व है आपश्री के दूरदर्शी उद्बोधन से सामाजिक सुधार की वैसी अपूर्व चेतना जागृत हुई थी आपश्री धर्म का आधार पुष्ट बनाने के लिये सामाजिक सुधारों को अनिवार्य मानते थे। सदैव जीवन मे सर्वांगीण उत्कर्ष का ही उपदेश फरमाते थे। सामाजिक सुधारो के सबध में वे सामान्य एव निरवद्य प्रेरणा देते थे। थादला के इस पचायत नामे में भी सभी कलमे आप के समक्ष लिखी गई हो ऐसा नही था। उन्होने तो सामान्य रूप से उपदेश फरमाया था कि उसको खास रूप थादला के पचो ने ही दिया।

इस चातुर्मास में तीन-चार घटनाए ऐसी घटित हुई, जिनसे आपश्री की प्राभाविक क्षमाशीलता एव निर्भयता झलकती थी। चातुर्मास समाप्त करके जब आपश्री ने झाबुआ की तरफ विहार किया तो आपको बामनिया गांव में बुखार के साथ कै और दस्त होने लगे। स्थिति इतनी गभीर हो गई कि कै और दस्त की सख्या प्रतिदिन की १५० तक पहुच गई। ६ दिन तक यही हालत रही, जिसे देखकर श्रावको ने आपके जीवन की आशा ही छोड दी बल्कि अंतिम सस्कार का सामान भी मगवा लिया। उस समय आपके पास मुनिश्री राधालालजी म सा और मुनि श्री गणेशीलालजी म सा थे जिन्होने बहुत ही लगन से सेवा की किन्तु आपश्री की कष्ट सहन की क्षमता भी अद्वितीय थी। तब नाहरसिंहजी बुन्देला नामक थादला निवासी वैद्यजी वहा किसी काम से आये और आपश्री की जाच की। उन्होने कहा कि अगर ये थादला आ जावें तो मैं इलाज कर सकता हू। मृत्यु के मुख मे बैठे हुए रोगी को चार कोस की दूरी कैसे पार करवाने यह समस्या थी। दोनो सतो ने अत्यधिक श्रममय सेवा के साथ आपश्री को थादला पहुचाया जहा वैद्य जी ने आपकी सफल चिकित्सा की। आपश्री का वि स १९६६ का अठारहवा चातुर्मास जावरा मे हुआ जहा नवाब साहब के परिवार सहित सभी श्रेणी की जनता ने आपके प्रवचनो का लाभ उठाया।

महत्त्व पदार्थ का नही, भावना का है :

इन्दौर मध्यभारत का प्रधान केन्द्र है, जहा आपश्री ने वि म १९६७ का उन्नीसवा चातुर्मास किया। यहा आपश्री का व्याख्यान बाजार मे होता था, जिसमे हजारो श्रोता एकत्रित होते थे। यहा आपश्री के व्याख्यानो की धूम मच गई। सभी वर्गो की जनता पर अहिंसा धर्म का प्रेरक प्रभाव पडा। कई मुसलमान कसाइयो ने भी किन्ही दिनो के लिये जीव हिंसा न करने की प्रतीज्ञा ली। जीवदया के अन्य कार्य भी यहा सपन्न हुए।

विचार क्राति की दृष्टि मे आपश्री ने यहा एक बहुत ही सुन्दर विचार प्रस्तुत किया वैसे पूजीवादी गणित का हिसाब यह रहता है कि जो राशि के रूप मे जितना ज्यादा चदा दे वह उतना ही ज्यादा सम्माननीय माना जाता है। एक लखपति किसी शुभकार्य में १० हजार रु दे देता तो उसकी भारी वाह-वाही होती थी। उस दस हजार रु के चदे की तुलना में अगर कोई गरीब श्रावक पूरी सद्भावनी भावना के साथ भी एक रुपया चदा देने लगता तो उसका तिरस्कार ही किया जाता था। कहने का अभिप्राय यह है कि लोगो के मन में भावना

का महत्त्व कम और पदार्थ का महत्त्व अधिक था। ऐसी ही एक घटना तब इन्दौर में घटी थी जिसको निमित्त करके आप श्री ने भावना के मूल्याकन को जनता के मानस मे सुदृढता से सस्थापित किया।

मुनिश्री के व्याख्यान मे एक बार एक भद्र सज्जन आये थे, उन्होने व्याख्यान बडे ध्यान से सुना। यो कहें कि उन्होने व्याख्यान कानो से ही नहीं मन से सुना था। जब किसी शुभ प्रवृत्ति के लिये श्रावक चदा एकत्रित कर रहे थे। तो उन्होने भी अपनी भरी आतरिकता के साथ एक रुपया दान मे देने का प्रस्ताव किया, कारण छुट्टक मू गफली बेचने का काम करते थे और उनकी कुल जमा पू जी १० रु मात्र थी। जहा हजारो की बात हो वहा एक रुपये को कौन पूछता है? श्रावको ने गरीब समझकर उनका १) रु नही लिया। इन्कारी से उन सज्जन को इतना दु ख हुआ कि वे रोने लगे। उन्हे रोते हुए आपश्री ने देखा तो तुरत अपने पास बुलाया और रोने का कारण पूछा। उन सज्जन ने सारा वृत्तान्त बता दिया। तब आपश्री ने उन्हे सात्वना दी और श्रावको के समक्ष निम्नाकित भाव प्रभावपूर्वक प्रकट किये:—

'भाइयो, आप इन सज्जन के हृदय की भावना को देखो। जावदया के निमित्त अपनी सामर्थ्य से भी आगे बढकर त्याग करने के लिये इन भाई की कितनी उत्कठा है? ये अपनी समस्त सम्पत्ति का दसवा भाग दान मे देने के लिये उत्सुक हैं। क्या आप लोग मे से कोई है जो अपनी सम्पत्ति का दसवा भाग दान मे दे रहा है? अब भी क्या कोई इसके लिये आगे आने को तैयार है? (कोई खडा नही हुआ) एक लखपति के लिये हजारो रुपयो का जो मूल्य है उससे इन सज्जन के एक रुपये का मूल्य अधिक है। इसके ऊपर यह दान रुपये का दान नही, भावना और हृदय का दान है। अत इस स्थिति मे इस त्याग को तुच्छ समझकर इन्कार करना अज्ञान और अहकार है। करोडपति के लाखो और लखपति हजारो के दान से यह दान बढकर है। आप सख्या का मूल्य समझते हैं परन्तु हृदय मूल्य को उससे भी ऊपर समझना चाहिये। इन सज्जन की व्याकुलता से ही आपको इनकी भावना का अनुमान लग जाना चाहिये। त्याग की उच्च भावना का सदा सत्कार करो। यह एक रुपये का दान सामान्य नही महादान है।"

श्रावको की अपनी भूल मालूम हुई तब उन्होने बडे आदर और प्रेम के साथ उन सज्जन का वह एक रुपया स्वीकार किया। उन्होने उसकी प्रशसा की तथा उस कलम को सिरे पर लिखी। ऐसा था आपश्री की सत्शिक्षा का प्रभाव कि जिसने हजारो श्रावको के मन में भावना के मूल्याकन को सर्वोच्च प्रतिष्ठित कर दिया।

दक्षिण प्रवास में राष्ट्रीय जागरण क्रांतिकारी-धारा :

इन्दौर से विहार करके आपश्री का पधारना रतलाम हुआ जहा श्वे स्था. जैन ट्रेनिंग कॉलेज चल रहा था। उस समय रतलाम में प्लेग का रोग फैलने के कारण ट्रेनिंग कॉलेज के चार विद्यार्थी आपश्री के पास दीक्षा लेने के लिये तैयार हुए। आपश्री समझ गये थे कि वे

दीक्षा क्यो लेना चाहते हैं ? कॉलेज का नियम था कि विद्यार्थी पूरी पढाई किये बिना ही संस्था छोड दे तो उससे जब तक वह रहा है उसका पूरा खर्च वसूल किया जाय वरना कॉलेज की शिक्षा नि.शुल्क थी । ये विद्यार्थी कॉलेज छोड़कर वहा से जाना तो चाहते थे लेकिन खर्च देना नही चाहते थे । इससे बचने का उपाय उन्हे दीक्षा मे दिखाई दिया । अत' आपश्री ने उन्हें सचेत किया कि नियम ले लेना तो सरल है मगर उसे निभाना बडा कठिन होता है । इस बात पर आपश्री की सघ ने निन्दा की , तो उसकी तनिक भी चिन्ता नही करते हुए आपने स्पष्ट रूप से कहा कि धर्म वीरो का होता है कायरो का नही । आपश्री की स्पष्टोक्ति का तब सघ मे सही असर पडा ।

दक्षिण प्रात के भाइयो की बहुत समय से आपश्री के लिये उधर विहार करने की प्रार्थना थी तथा मुनि श्री गगारामजी म. सा. का भी आग्रह था । अहमदनगर के सद्गृहस्थ श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया (स्पीकर, बम्बई विधान सभा) ने भी भावभरी विनती की थी । अतः दक्षिण की ओर विहार आरम्भ किया गया ।

उन दिनो देश मे सनसनी फैलाने वाली एक घटना घटी थी । सुप्रसिद्ध क्रातिकारी श्री खुदीराम बोस द्वारा गोली चलाए जाने के कारण सारे देश मे तहलका मच गया था और उन्हे पकडने की चारो ओर पुलिस की दौड़ धूप मच गई थी । आपश्री अपनी सत मडली के साथ पैदल चल रहे थे तो पुलिस को आपश्री की अजीब वेशभूषा देखकर शक हुआ और पुलिस आपश्री के पीछे-पीछे चलने लगी । फिर एक जगह आपश्री को रोककर पुलिस ने पता ठिकाना नोट करना चाहा । तब आपने जो उत्तर दिया वह बडा दिलचस्प है—कहा—ठिकाना पूछते हो, मगर बेठिकानो का क्या ठिकाना ?

वि स १९६८ का आपश्री का बीसवां चातुर्मास अहमदनगर मे हुआ । इस चातुर्मास मे मुनिश्री मोतीलालजी म सा. एव मुनिश्री राधालालजी म सा ने ४९–४९ दिनो का तप किया । पूर के दिन करीब १०००० रु के जीवदया के कार्य हुए । नयापन होने पर भी आपश्री के व्याख्यानो की प्रभाविकता यहां पर जोर शोर से बढी और सभी वर्गों की जनता ने हृदय से उपदेशो का लाभ लिया । यहा के एक प्रसिद्ध वकील बाला साहब ने आपश्री के साथ तात्त्विक चर्चाएं करके बहुत ही सतोष प्राप्त किया । आपश्री की सगति का बाला साहब पर स्थायी प्रभाव पडा । सिर्फ ३३ वर्ष की आयु मे जब वे मरणासन्न हो गये तो उन्होने अपनी पत्नी को प्रेरणा दी कि अपने लिये मात्र निर्वाह खर्च रखकर बाकी दो तीन लाख की सम्पत्ति अनाथ रक्षा, ज्ञान प्रचार आदि शुभ कार्यो के लिये दान कर दे । पत्नी ने उनके सामने ही ऐसा कर दिया ।

साधारण जनता एव विद्वद् वर्ग मे धर्म के प्रति अनुराग जगाकर चातुर्मास के पश्चात् आपश्री घोड नदी होते हुए शिवाजी महाराज की जन्मभूमि जुन्नेर पधारे । जहा आपने राष्ट्रीय जागरण की प्रेरणा दी । यह स्थान आपको राष्ट्रीय जागरण की क्रातिकारी धारा प्रवाहित करने की दृष्टि से इतना भाया कि आपश्री ने वि. सं १९६९ का चातुर्मास यहीं किया । स्थानकवासी साधुओं का वहां पर यह पहला चातुर्मास था । चातुर्मास के उपदेशामृत मे सारी

जनता का ही नहीं राज्य कर्मचारी एवं पदाधिकारी भी प्रभावित हुए। चातुर्मास समाप्त करके पूना होते हुए आपश्री निपाणी पधारे जहां श्री [illegible] ने केवल २४ वर्ष की अवस्था में दीक्षा ग्रहण की। आपश्री का वि. सं. १९७० का सातवां चातुर्मास [illegible] में हुआ। यहां आपश्री अस्वस्थ हुए तो भी लोगों से [illegible] कराने की चेष्टा की। फिर तो प्रवचनों में आपश्री ने अंधविश्वासों पर बड़ा जोरदार प्रहार किया। इसका शुभपरिणाम यह हुआ कि कई लोगों का भय, मन्त्र-तंत्र, जादू टोना और ऐसी [illegible] के अंधविश्वासों पर से हट गया।

चातुर्मास समाप्ति पर आपश्री विहार करते हुए सतारा पहुंचे। यहां व्याख्यान में सामान्य जन और राज्याधिकारी तो आते ही किन्तु एक विशिष्ट सज्जन और आते थे जिनका नाम था सेनापति बापट। श्री बापट कट्टर देशभक्त और [illegible] थे। इंग्लैण्ड में रहकर उन्होंने [illegible] पास की और आई. सी. एस. की परीक्षा में सम्मिलित भी हुए। परन्तु सबको छोड़कर क्रांतिकारी बन गये थे। बाद में इंग्लैण्ड में इन्होंने [illegible] उस समय देश में जो [illegible] "सरकार" के विरुद्ध जो जाता था [illegible] श्री बापट के नाम पहले "सेनापति" का विरुद लग गया था। श्री बापट आपश्री के व्याख्यान बड़े ध्यानपूर्वक सुना करते थे। [illegible] व्याख्यान सुनते हुए [illegible] कविता में [illegible] और व्याख्यान के बाद में ही [illegible] कविता में सुना देते थे। आपश्री [illegible] विनोद में कहा करते थे कि अगर यह ब्राह्मण (पंडित) मेरे साथ न होता तो [illegible] साथ [illegible] हो जाता।

वि. सं. १९७१ का आपका चातुर्मास जाम गांव में हुआ। [illegible] चातुर्मास में [illegible] में आचार्यश्री श्रीलालजी म. सा. ने सम्प्रदाय की [illegible] व्यवस्था [illegible] के लिये [illegible] नियुक्त किये थे [illegible] थे। वि. सं. १९७२ का चातुर्मास अहमदनगर में हुआ जहां आपश्री के व्याख्यान [illegible] और सार्वजनिक होते थे। यहां पर [illegible] व्याख्यान सुनने के लिए आये और [illegible] प्रभाव [illegible] इस समय [illegible] के [illegible] प्रकार [illegible] ॐ शांति [illegible] अत्यन्त आवश्यक है।

इस प्रकार की उलझन के समय अ तर्नाद सहायक होता है । शान्त चित्त से विचार करने पर आत्मा ऐसी सुन्दर सलाह देती है कि दूसरा कोई शायद ही दे सके । उस लडके ने चित्त स्वस्थ करके विचार किया—इन परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली दोनो आज्ञाओ का उद्देश्य सुखी जीवन व्यतीत करना है । ऋण लेने से जीवन का सुख नष्ट हो जाता है और भूखों मरने से जीवन ही नष्ट हो जाता है तो जीवन के सुख की बात दूर ही रही । अतएव ऐसी परिस्थिति मे थोडा ऋण लेकर जीवन कायम रखना ही श्रेयस्कर है । उसके बाद कठिन परिश्रम करके ऋण को उतार दूंगा और तब पिताजी के आदेश का भली-भांति पालन हो सकेगा । यह सोचकर उसने थोडा ऋण लेकर आत्मघात का भयकर अनर्थ बचा लिया और थोड़े दिनो मे ऋण भी चुका दिया ।

भाइयो ! इस लडके के मामले का फैसला आपके हाथ मे दे दिया जाय तो आप क्या फैसला करेंगे ? क्या आप लडके का भूखो मर जाना पसद करेंगे ? क्या आप उसके निर्णय को अनुचित कह सकते हैं ? अगर आप थोडा-सा ही विचार करेंगे, तो मालूम होगा कि उस लडके ने उचित ही निर्णय किया ।

यही बात गृहस्थ से साधुओ के अध्ययन के विषय मे समझनी चाहिए । यह ठीक है कि साधु को गृहस्थ से कोई काम नही लेना चाहिए, मगर क्या आपके धर्म-गुरुओ को मूर्ख ही रहना चाहिए ? क्या उन्हे धर्म पर होने वाले मिथ्या आरोपो का निवारण करने मे समर्थ नही बनना चाहिए ? शास्त्रो में ज्ञान की महिमा का बखान निष्कारण नही किया गया है । दशवैकालिक सूत्र मे कहा है—

अन्नाणी किं काही किंवा नाही सेयपावग

अर्थात्—अज्ञानी बेचारा क्या कर सकेगा ? वह भले-बुरे को, कल्याण और अकल्याण को, धर्म और अधर्म को क्या खाक समझेगा ?

अध्ययन और अध्यापन कोई सावद्य कार्य नही है । मर्यादा मे रहते हुए अगर गृहस्थ से अध्ययन किया जाय तो मूर्ख रहने की अपेक्षा बहुत कम दोष है । फिर [illegible] यश्चित द्वारा शुद्धि भी की जा सकती है । भगवान् ने गृहस्थ से काम लेने का निषेध कि [illegible] न [illegible] भी निषेध किया है । मगर जैसे भूखो मर जाने की अपेक्षा थोडा ऋण [illegible] कायम लडके का कर्त्तव्य था उसी प्रकार विद्वान होना और यथोचित प्रायश्चि [illegible] कर साधुओ का कर्त्तव्य है । आप स्मरण रखें-नवीन [illegible] रे-आपके [illegible] है [illegible] विचारणाओं पर ध्यान दिये विना धर्म और समा [illegible] ोना कठि [illegible] की रक्षा के लिए अज्ञान का निवारण करना स [illegible] है ।

इस भाषण से बहुत से लोगो को [illegible] ो त [illegible] करने का निश्चय कर ही चुके थे । तदनुसार प [illegible] भी [illegible] कुछ [illegible] करने लगे ।

अहमदनगर में आपने दोनो मुनियो की परीक्षा दिलाने का निश्चय किया । प्रसिद्ध विद्वान् प० गुणे शास्त्री, पी एच डी तथा अभ्यकर शास्त्री परीक्षक निर्वाचित किये गये । श्रीसघ तथा अनेक दर्शको की उपस्थिति मे परीक्षा ली गई । व्याकरण और साहित्य विषय मे प्रश्न पूछे गये । व्याकरण विषय मे मुनि श्री घासीलालजी महाराज को तथा मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज को ८२ प्रतिशत प्रथम श्रेणी के नम्बर प्राप्त हुए । साहित्य मे मुनि श्री घासीलालजी म. को ६७ और मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज को ६४ प्रतिशत अंक प्राप्त हुए। मौखिक परीक्षा मे दोनों मुनियो ने सौ मे से सौ अक प्राप्त किये ।

स्थानकवासी समाज के साधु-मुनिराजों एव महासतियां जी के विद्वत्ता की अत्यन्त कमी थी । यह आचार्य प्रवर की दूरदर्शिता का परिणाम ही समझिये कि आज स्थानकवासी समाज मे बडे-बडे सस्कृत, प्राकृत, दर्शन आदि अनेक विषयो के दिग्गज विद्वान सामने आए हैं । आचार्य श्री देवर्द्धि गणि क्षमाश्रमण ने जिस प्रकार सूत्रों को लिपिबद्ध करवाकर श्रमण सस्कृति पर अतुलनीय उपकार किया । ठीक इसी प्रकार आचार्य प्रवर ने भी साधु-साध्वियो को अध्ययन क्षेत्र मे आगमानुकूल एक नया आयाम खोलकर श्रमण-संस्कृति पर अवर्णनीय उपकार किया । शास्त्र विद्यमान हो, लेकिन उसका ज्ञाता कोई न हो तो वे भी उपयोगी नहीं होते ।

युवाचार्य पद-महोत्सव में सहज विनम्रता के दर्शन—

जब आचार्यश्री श्रीलालजी म.सा. का चातुर्मास उदयपुर मे था तब वहा इन्फ्लुएजा का प्रकोप हुआ था । आचार्य श्री भी ज्वर-ग्रस्त हो गये तब उन्हे अपना उत्तराधिकारी मनोनीत करने का विचार आया । अपनी सम्प्रदाय के मुनियो पर एक सरसरी निगाह डाली तो उनकी निगाह एक तेजस्वी एव सर्वथा सुयोग्य सत पर ठहर गई । ये सत थे हमारे चरित्र नायक मुनि श्री जवाहरलालजी म सा. । वे उन दिनो दक्षिण प्रात मे विचरण कर रहे थे किन्तु उनकी कीर्ति सभी प्रातो मे भ्रमण कर रही थी । आपश्री को युवाचार्य बनाने का निश्चय करके आचार्यश्री ने उसे सघ के समक्ष प्रकट किया । सभी ने उनके निश्चय का समर्थन किया । उस समय आप श्री हिवडा मे विराज रहे थे । जहा उदयपुर श्रीसघ ने तार दिया—पूज्यश्री ने मुनि श्री जवाहर लालजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त किया है । स्वीकृति लेकर खुश खबरी का तार दीजिये ।

समाचार सुनकर आपश्री विचार मे पड गये । वे अपनी शक्ति के बाट से सम्प्रदाय का भार तोलने लगे । तत्काल आपने कोई उत्तर नही दिया । तब सतारा निवासी सेठ बाल मुकुन्दजी तथा चन्दनमलजी मूथा हिवडा आये और आपश्री से युवाचार्य पद स्वीकार करने की प्रार्थना की । आपश्री ने उत्तर दिया—मुझे आचार्यश्री की आज्ञा शिरोधार्य है, किन्तु मुझे यह देखना है कि मुझमे वह शक्ति है या नही । अपनी शक्ति देखकर ही मुझे यह आज्ञा उठानी चाहिये । क्योकि इसका सम्बन्ध सिर्फ मेरे साथ ही नही वरन् समस्त श्रीसघ के साथ है । दोनो सतो का अध्ययन चल रहा है जिसके पूरे होने पर मेरा विचार स्वय आचार्यश्री की सेवा मे

उपस्थित होने का है । प्रत्यक्ष मिलने पर विशेष विचार कर लेंगे । ऐसी निस्पृहता थी हमारे चरित्र नायक की ।

बाद मे भीरी मे रतलाम के सेठ वर्धमानजी पीतलिया तथा भीनासर के सेठ बहादुरमलजी बाठिया आपश्री के समीप आये तथा उन्होने मालवा की ओर पधारने एव युवाचार्य पद स्वीकारने की विनती की । आपश्री ने इनकी बात को मान देकर मालवा की ओर विहार कर दिया । रतलाम मे आचार्यश्री एव आपश्री का समागम हुआ । अन्ततोगत्वा वि स १९७५ चैत्र कृष्णा ९ (२९–३–१९१९ ई०) का दिन युवाचार्य पद प्रदान के लिये नियुक्त किया गया ।

युवाचार्य पद महोत्सव के अवसर पर बाहर से हजारो लोगो का आगमन हुआ जिनमे बडे–बडे सामन्त तथा रायबहादुर आदि भी शामिल हुए । व्याख्यान स्थल लोगो से खचाखच भर गया था । बल्कि बाहर सडक पर भी कई शमियाने लगाये गये थे । उस अवसर पर आचार्यश्री का उद्बोधन बडा ही तल-स्पर्शी था । उन्होने मनोनीत युवाचार्यश्री को सम्बोधित करते हुए कहा सघ के शासन की बागडोर आपके हाथ मे सौप देने पर किसी प्रकार की आशका नही है । आप सरीखे प्रतिभाशाली, तेजस्वी, कठोर सयमी और दृढ धर्माचार्य को पाकर पूज्य श्री हुकमीचन्दजी म सा का यह सम्प्रदाय अधिकाधिक विकास करेगा । ऐसी मेरी दृढ धारणा है । आप स्वय समझदार है, शास्त्रो के जानकार है, मैं इस समय आपको क्या शिक्षा दू ? मेरा तो इतना ही कहना है कि हमारे पूर्ववर्ती आचार्यों ने श्रमण सस्कृति की जिस निष्ठा से सुरक्षा की है एव सयम की कठोरता के जिस स्तर को कायम रखा है आप उसमे अधिक उन्नति के प्रयत्न करें। मेरा विश्वास है कि आपकी कर्तव्य निष्ठा, ओजस्विनी वाणी, प्रतिभा एव व्यक्तित्व-प्रभाविकता इन सब बातो की पूर्ति करने मे सक्षम हैं । आपके प्रभाव से अहिंसा धर्म का महत्व बढेगा और विकासोन्मुख भव्य जीव सन्मार्ग पर आयेंगे । ये ही सब बातें सोचकर मैंने आपको युवाचार्य चुना है । इसकी स्वीकृति के प्रतीक रूप इस पछेवडी को धारण कीजिये ।

यह कहकर आचार्यश्री ने स्वयं धारण की हुई पछेवडी उतारी और चतुर्विध सघ के जयनाद के साथ मुनि श्री जवाहरलालजी म सा को ओढा दी । सारी सभा आचार्यश्री एव युवाचार्यश्री के जयघोष से गू ज उठी । आचार्यश्री ने इस अवसर पर सघ को लक्ष्य कर निर्देश दिया कि उसे ऐसा सुयोग्य साधु नेता के रूप मे मिला है जिनकी आज्ञा मे रहकर सभी अपने ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि करें । वे युवाचार्यश्री की आज्ञा का उसी प्रकार पालन करें जिस प्रकार उनकी आज्ञा का पालन करते रहे हैं ।

वहा उपस्थित मुनियो द्वारा अभिनन्दित होने के पश्चात् हमारे चरित्र नायक युवाचार्यश्री ने जो प्रवचन दिया उसमे उनकी सहज विनम्रता के दर्शन होते हैं । आपश्री ने फरमाया—

"आचार्यश्री एव समस्त श्री सघ ने मुझ पर जो गुरुतर भार डाला है, उसे सफलता के साथ वहन करना साधारण कार्य नही है । इस विशाल सम्प्रदाय के शासन को सम्भालना,

खास तौर से मुझ जैसे अल्प शक्तिमान के लिये और भी कठिन है । मैं समस्त सघ के सहयोग से अपना गम्भीर उत्तरदायित्व निभाने मे समर्थ हो सकूगा, इसी आशा और विश्वास के बल पर मैं पूज्य श्री तथा समस्त श्री सघ की आज्ञा शिरोधार्य करता हू ।. मैं एक दृष्टात से अपनी स्थिति स्पष्ट कर दू । किसी नगर मे वहा के राजा का देहान्त हो गया । राजा निस्सतान था अत निश्चय हुआ कि अमुक पक्षी छोडा जाय और वह जिसके भी सिर पर बैठ जाय, उसे राजा बना दिया जाय । वह पक्षी एक घसियारे के सिर पर बैठ गया । सबने मिलकर उसे राजा बना दिया और वह राज्य करने लगा राजा दरबार मे जब भी खडा होता तो अपने पास बैठे मन्त्री के कधो का सहारा लेकर खडा होता । एक दिन अधिक जोकर देकर उठने के कारण मत्री को हसी आ गई । राजा ने बिना डर हसी का सही कारण बताने को कहा । मत्री बोला—जब आप घसियारे थे तो घास का बडा गट्ठा लाद कर कोसो चलते थे और नगर मे बेचने आते थे लेकिन अब आपको अपना ही शरीर उठाना भी भारी पड रहा है, इसलिये मुझे हसी आ गई थी । तब राजा ने मर्म की बात समझाई कि जब मैं घसियारा था तो मेरे सिर पर मात्र गट्ठे का ही बोझ था किन्तु अब तो सारे राज्य का बोझ है, जिसे मै अकेला नही उठा सकता हू । इसी कारण खडे होते समय आपका सहारा लेता हू ।. मेरी स्थिति भी उस घसियारे के समान है । अब जो भार मेरे सिर पर आ रहा है उसे सम्भालने मे मैं अकेला असमर्थ हू । आचार्यश्री की छत्रछाया तो मेरे सिर पर है ही लेकिन मुझे भी मत्री के समान स्थविर मुनिराजो की सहायता अपेक्षित है ।.. श्रीसघ की दृष्टि से मैं भले ही आचार्य, पूज्य या ऊचे पद पर आसीन समझा जाऊ मगर मैं अपनी नजरो मे धर्म का एक अकिंचन सेवक ही रहूगा ।"

युवाचार्य श्री के ऐसे विनम्र विचारों का सभी ने स्वागत किया और कई वक्ताओ ने अपने भाषणो मे आपश्री की गुण गरिमा की ।

आपश्री का वि स १९७६ का चातुर्मास उदयपुर मे व्यतीत हुआ । यद्यपि आप यहा की जनता के लिए परिचित थे फिर भी युवाचार्य के रूप मे यह आपका पहला चातुर्मास था जिसमे धर्म का निराला ही ठाठ लगा । चातुर्मास के बाद जब आप आचार्यश्री की सेवामे व्यावर पधारे तो उस समय आगरा व जयपुर के मुख्य श्रावको का एक शिष्ट मण्डल व्यावर आया । उनके निवेदन पर अजमेर मे जावरा वाले सतो के साथ एकता सम्बन्धी वार्तालाप हुआ जो अन्त मे जाकर असफल हो गया ।

अजमेर से युवाचार्यश्री विहार करते हुए भीनासर पधारे और आचार्यश्री जैतारण । भीनासर मे ही युवाचार्यश्री को आचार्यश्री के स्वर्गवास के समाचार प्राप्त हुए । इस आकस्मिक अवसान से आपश्री को बेहद खेद हुआ । अभी शोक का भार हल्का भी नही हुआ था कि आपश्री आचार्य घोषित कर दिये गये ।

जिस दिन पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार भीनासर पहुचा उस दिन आपश्री के तेले की तपस्या थी, जिसे लम्बी करके आपने आठ दिन का उपवास कर लिया और बाद में भी श्रीसघ के अति करुण आग्रह से ही आपने पारणा किया ।

आपश्री का आचार्यकाल
अज्ञान निवारण के अभियान से आरम्भ–

पूर्व निश्चयानुसार आपश्री का स० १९७७ का उन्तीसवां चातुर्मास बीकानेर मे हुआ। प्रात मे आपश्री विभिन्न समाजो के नेताओ तथा कार्यकर्ताओ के सम्पर्क मे आये थे, अतः उस सम्पर्क एव निज अनुभव के आधार पर आपश्री ने जैन समाज की अवनति के कारणो का गम्भीर चिन्तन किया आखिर इतने श्रेष्ठ धर्म का अनुयायी इतना पिछडा हुआ क्यो ? आपके अन्तर्मन ने समाधान दिया कि इसका एकमात्र कारण अज्ञान एव अशिक्षा है। पास मे रही हुई अमूल्य वस्तु की पहिचान भी विना ज्ञान के सम्भव नही बनती है। इसलिये अज्ञान निवारण का कार्य एक अभियान के रूप मे चलाया जाना चाहिये। अज्ञान निवारण का उपाय है सुशिक्षा का प्रचार हो और शिक्षा के सम्बन्ध मे आपश्री के विचार बहुत सुलझे हुए और व्यावहारिक थे। अपने व्याख्यानो मे आप फरमाया करते थे कि किसी त्यागी महापुरुष का स्मारक ईंट-पत्थरों का नही होना चाहिये अपितु उन महापुरुष के ध्येयो की पूर्ति मे किये जाने वाले रचनात्मक कार्यों का ही स्मारक होना चाहिये।

आपश्री के विचारो से प्रेरणा लेकर सेठ दुर्लभजी त्रिभुवनजी जवेरी के सभापतित्व मे ८ अगस्त १९२० के दिन आमन्त्रित सज्जनो तथा बीकानेर व भीनासर श्रीसघो की एक सभा हुई जिसमे प्रस्ताव पारित करके "श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन गुरुकुल" के नाम से एक विशाल शिक्षण सस्था की योजना बनाई गई।

उन्हीं दिनो आचार्यश्री को ज्ञात हुआ कि मिल में बनने वाले वस्त्रो मे चर्बी लगाई जाती है जो घोर हिंसा का कार्य होता है अत' आपश्री ने मिल के वस्त्रो को सर्वथा हेय समझ उनका त्याग कर दिया एव खादी के वस्त्र धारण कर लिये। यही नही मिल के वस्त्रो का आपने तीव्र विरोध आरम्भ कर दिया जो आजीवन चलता रहा। आपश्री के उपदेशो में खादी की उपयोगिता के बारे मे हृदयग्राही वर्णन आता रहता था। इस प्रेरणा से कई श्रावको ने मिल के वस्त्र छोड़े और खादी पहनी। खादी के लिये उपदेशो में राष्ट्रीय भावना का बराबर पुट रहता था।

बीकानेर से विहार करते हुए आपश्री उदयपुर पधारे और वहा से रतलाम। रतलाम श्रीसघ आपश्री का चातुर्मास कराने के लिये बहुत उत्सुक था किन्तु मन मे एक भय समा रहा था। रतलाम नरेश उन दिनो खादी से बुरी तरह चिढते थे। खादी पहनने वाले को गिरफ्तार कराने व सजा दिलाने मे वे सकोच नही करते थे। इसलिये पीतलियाजी ने यह स्थिति बता कर निवेदन किया कि रतलाम नरेश की खादी पर तीव्र कोपदृष्टि का क्या होगा ? आचार्यश्री ने कहा जैसा अवसर होगा, देख लिया जायेगा। और वि स १९७८ का चातुर्मास रतलाम में हुआ। आसोज कृष्णा एकादशी के दिन रतलाम नरेश व्याख्यान सुनने आये। आचार्यश्री का प्रभावशाली उपदेश लगातार दो घंटे तक सुनकर वे चकित रह गये। आपश्री ने उस व्याख्यान

मे वडे ही असरकारक शब्दो के कौशल के साथ रतलाम नरेश को चर्वी के वस्त्रो की हेयता और खादी की उपादेयता समझाई । उस दिन से खादी के प्रति उनकी चिढ मिट गई । फिर तो रतलाम नरेश ने गोचर भूमि निकालने एव पशुओ के प्रति जीवदया करने के कई उपकारी कार्य किये ।

रतलाम का चातुर्मास समाप्त करके आपश्री ने पुन दक्षिण की ओर विहार किया क्योकि उधर कई आवश्यक कार्य शेष रह गये थे । मार्ग मे आपको कई परिषह सहने पडे और वाल-समन्द नामक गाव मे तो एक रात विताने का भी भारी कष्ट सहना पडा । जिन रुग्ण मुनि श्री लालचन्दजी म सा को दर्शन देने की भावना से ही आपश्री का दक्षिण मे पधारना हो रहा था, मार्ग मे ही उनके स्वर्गवास का समाचार पाकर वापिस मालवा लौटने का आपने इरादा किया किन्तु अहमदनगर शिष्ट मण्डल के आग्रह से आपश्री अहमदनगर पधारे । उन दिनो वहा दुर्भिक्ष था तथा लोगो व पशुओं की भारी दुर्दशा हो रही थी । आचार्यश्री ने उस समय वडे ही मार्मिक शब्दो मे दुर्भिक्ष का वर्णन करते हुए भूखो मरने वाले प्राणियो की रक्षा का उपदेश दिया । फलस्वरूप जागरुक श्रावको ने पीडित जनता की सेवा करने की एक बड़ी योजना तैयार की । इससे दुर्भिक्ष पीडितो को बहुत सहायता मिली । अहमदनगर से आचार्यश्री सतारा पहुचे जहा दो वैरागियो ने आपके समीप दीक्षा ग्रहण की उस दीक्षा महोत्सव मे केवल जैनो ने ही नही वरन् समस्त सतारा नगर वासियो ने भाग लिया ।

लोहे को सोना बनाने के वाद
पारसमणि विछुड़ ही जाती है-

आचार्यश्री ने सात सतो के साथ वि स १९७९ का इकतीसवा चातुर्मास सतारा मे किया । तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी म सा. ने ६५ वर्ष की अवस्था के वावजूद लम्बी तपस्या की और पूर के दिन अभयदान के अनेक उपकार सम्पन्न हुए । मच्छीमारो ने दो दिन तक वाजार वन्द रखा । आपश्री का व्याख्यान सुनने के लिये दादा करदीकर तथा राव साहव काले जैसे प्रतिष्ठित जैनेतर सज्जन भी उपस्थित होते थे । यहा पर पर्यूषण पर्व बहुत ही समारोह पूर्वक मनाया गया जिसमे कई प्रातो से श्रावक-श्राविका वर्ग सम्मिलित हुआ ।

चातुर्मास समाप्त होने जा रहा था । पूज्यश्री अन्तिम व्याख्यान फरमा रहे थे । "मानव कर्त्तव्य" को अत्यन्त मार्मिक एव भाव पूर्ण व्याख्या की गई । पूज्यश्री की आसन्न विदाई के विचार से जनता का हृदय द्रवित हो रहा था तो सेठ मोतीलालजी मूथा भाषण देने खडे हुए तो उनकी आखो से आसू वह चले । उन्होने आभार प्रकट किया कि सतारा के हमारे निर्गुण क्षेत्र में आचार्यश्री ने गुणो की वर्षा करके हमे कृतार्थ किया है । फिर सेठ दुर्लभजीभाई जौहरी वोले महाप्रतापी स्व० आचार्यश्री की तरह ही वर्तमान मे सुयोग्य आचार्यश्री भी धर्म की अपार प्रभावना कर रहे हैं, जिसे देखते हुए हम श्रावको को भी चाहिये कि हम पूर्ववत् श्रद्धा,

भक्ति और प्रीति रखें। उन्होने एक बहुत ही महत्त्व की बात भी कही। हमारे सेठ मोतीलाल जी को पूज्यश्री की विदाई से इतना दुःख हो रहा है कि उनके मुख से शब्द निकालने भी कठिन हो गये हैं। कोमल हृदय वालो के लिये ऐसा होना स्वाभाविक भी है। परन्तु वास्तव मे इतना दुःखी होने की कोई बात नही है। आचार्यश्री सतारा से पधार रहे है किन्तु सतारा को धर्ममय बनाकर पधार रहे हैं। लोहे को सोना बनाने के बाद पारसमणि बिछुड ही जाती है।

इस प्रकार सतारा मे चातुर्मास का अंतिम दृश्य बडा ही भावनात्मक रहा। वहा से विहार करके आचार्यश्री पूना पधारे। जहा श्री जीवनलालजी तथा श्री जवाहरमलजी की दीक्षाए सम्पन्न हुईं। आस-पास के क्षेत्रो मे विचरण करते हुए बम्बई सघ की आग्रह भरी विनती होने के कारण आपश्री घाटकोपर पधारे। वहा राष्ट्रीय ध्वजाए लेकर "प्रान्तीय राजद्वारी परिषद" के सदस्य एक जुलूस लेकर आपश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। आचार्यश्री ने राष्ट्र सेवा, मादक द्रव्य निषेध, मिल के वस्त्रो की अपवित्रता आदि पर ओजस्वी भाषण दिया जिससे प्रेरित होकर सैकडो व्यक्तियो ने चाय, तम्बाकू आदि मादक द्रव्यो एव मिल के बने वस्त्रो का परित्याग किया। आपश्री का वि स १९८० का बत्तीसवा चातुर्मास घाटकोपर मे ही हुआ जहा विशिष्ट तपश्चर्या के अलावा जीवदया खाते की स्थापना की गई। जो वर्तमान मे भी बराबर चल रहा है। छोटी सादडी निवासी श्री केसरीमलजी सिंघी की दीक्षा बडी सादगी के साथ सम्पन्न हुई, आगे चलकर पूज्य मुनि सिंघी म सा घोर तपस्वी हुए। आचार्यश्री ने यहा एव चातुर्मास के पश्चात् माटुगा आदि उपनगरो मे अस्पृश्यता निवारण एव अछूतोद्धार के बारे मे प्रभावशाली व्याख्यान देकर मानव एकता को बल दिया। नान्दूर्डी मे आपश्री ने व्याज खोरी के निवारण के लिये प्रभावपूर्ण उपदेश दिया। वहा पर जैनो का मुख्य धधा सूदखोरी था। इस कारण वहा की जनता उनसे सतुष्ट नही थी। आचार्यश्री ने अपने सजीव शब्दो से उनका मानस बदल दिया। आपश्री ने कहा—तुम समझते हो हमने धन को तिजोरी मे कैद कर लिया है, पर धन समझता है कि उसने इतने बडे धनी को अपना पहरेदार मुकर्रर कर लिया है। याद रखो अगर तुम धन का त्याग नही करोगे तो धन तुम्हारा त्याग कर देगा।

स्व० पूज्यश्री धनिको को सावधान करते रहते थे कि अपने धन मे से गरीबो को हिस्सा देकर उन्हे शात न करोगे, उनका आदर न करोगे, उनकी सेवा न करोगे तो साम्यवाद फैले बिना न रहेगा। तब सामाजिक स्थिति इतनी विषम हो जायेगी कि गरीब लोग धनवानों के गले काटेंगे।

पूज्यश्री का ऐसा उद्बोधन सुनकर अन्य जातीय लोग खडे होकर कहने लगे—महाराज हम लोग देवी के सामने भैसा मारते हैं मगर ये साहूकार लोग सूद ले लेकर हम मनुष्यो को मारते है। अगर ये लोग अपनी करतूतो से बाज आए तो हम भी भैसा मारने का त्याग करने के लिए तैयार है। इस पर कई साहूकार लोग खडे हुए और उन्होने अनुचित एव अन्यायपूर्ण व्याज लेने का त्याग किया। इस उपलक्ष मे साहूकारो तथा असामियो की तरफ से उचित व्याज लेने-देने के सबध में तारीख २५-२-१९२४ ई० को एक लिखित प्रतिज्ञा पत्र भी भेट किया

गया । इसी तरह से हिंगोणे गाव मे भी सभी जातियो के पचो ने मास–मदिरा एव जीव हिंसा के त्याग के विषय मे एक व्यवस्था पत्र लेख–बद्ध किया ।

आपश्री का वि स १९८१ का तैंतीसवा चातुर्मास जलगाव मे हुआ । वहां भगीरथ मिल मे पहला प्रवचन हुआ, जिसे मिल–मालिक तथा मजदूरो ने दत्तचित होकर सुना । उस समय आपने मजदूरो की दुर्दशा का कारुणिक चित्र खीचते हुए मिल मालिको को उनके कर्त्तव्य का वोध कराया । आपने फरमाया था कि जो मजदूर सबको कपडा बनाकर देते हैं, वे ही स्वय नगे फिरते हैं । जिनकी कमाई से मिल मालिक गुलछर्रे उडा रहे हैं, उनके वाल–बच्चो को भर पेट खाना भी नसीब नही होता आखिर यह स्थिति कब तक कायम रहेगी ?

रोग का आक्रमण–

आषाढ की अमावस्या के आस-पास पूज्यश्री की हथेली मे अचानक दर्द होने लगा । दो–चार दिन बाद एक छोटी–सी फुन्सी निकल आई और पीडा बहुत बढ गई । पूज्यश्री ने तथा अन्य साधुओ ने उसे साधारण फुन्सी समझकर सोचा—पीव निकलने से वेदना शान्त हो जायगी और फुन्सी भी साफ हो जायगी । यह सोचकर मुनियो ने उसे चाकू से चीर दिया और पीव निकाल दी । मगर दो दिनो के बाद फुन्सी ने भयकर रूप धारण कर लिया । फुन्सी की जगह एक भयकर फोडा निकल आया । धीरे–२ कोहनी तक सारा हाथ सूज गया । वेदना अधिक वढ गई ।

चिकित्सा के लिए स्थानीय डॉक्टर बुलाये गये । उन्होने ऑपरेशन करके सारा मवाद निकाल दिया और घाव भरने के लिये पट्टी बाध दी । घाव जल्दी भरने के उद्देश्य से डॉक्टरो ने पूज्यश्री को तरल पदार्थ सेवन करने का परामर्श दिया । इसका परिणाम विपरीत आया । कई वार ऑपरेशन किया गया और फोडा अधिकाधिक भयकर रूप धारण करके निकलने लगा । मानो वह कोई भयानक दैत्य था जो काटने पर अधिक विकराल रूप मे फिर खडा हो जाता था ।

परिस्थिति इतनी भयकर हो गई कि पूज्यश्री का जीवन ही खतरे मे दिखाई देने लगा । पूज्यश्री को अपने शरीर की तो कोई चिन्ता नही थी और न जीवन का ही कोई मोह था, मगर सघ की चिन्ता उन्हे अवश्य हो गई । किसी योग्य उत्तराधिकारी के हाथ मे श्रीसघ का उत्तरदायित्व सौंपे विना यह चिन्ता दूर नही हो सकती थी । पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय के सन्तो पर दृष्टि दौडाई और उनका ध्यान प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म. पर केन्द्रित हो गया । मुनिश्री विद्वान्, चरित्र-परायण और सुविनीत थे । सघ का शासन-सूत्र आपके हाथो मे देने का पूज्यश्री ने विचार किया ।

समाज के प्रधान श्रावक, जो वहा मौजूद थे, उनसे विचार-विनिमय किया गया । सम्प्रदाय के अनेक सन्तो और श्रावको से भी राय मगाई और उन्होने पूज्यश्री के विचार का

समर्थन किया । इस प्रकार पूज्यश्री के चुनाव का सबने समर्थन किया । मगर मुनिश्री गणेशीलालजी म को इस बात का अभी तक पता नही चला था ।

अचानक सेठ वर्धमानजी सा पीतलिया मुनिश्री के पास पहुचे । उन्होने कहा—महाराज ! मैं आपसे एक निवेदन करने आया हू । वह यह है कि पूज्यश्री का स्वास्थ्य इस समय ठीक नही है, यह तो आप जानते ही हैं । ऐसी स्थिति मे आप पूज्यश्री को किसी प्रकार के पशोपेश मे न डालें और पूज्यश्री आपको जो आज्ञा दें, उसे स्वीकार कर लें ।

सेठजी की बात सुनकर मुनिश्री को बडा आश्चर्य-सा हुआ । उन्होने उत्तर दिया—मैंने कब पूज्यश्री की आज्ञा टाली है, जो आपको ऐसा कहने की आवश्यकता पडी । मैं तो पूज्यश्री का एक तुच्छ सेवक रहा हू और इसी रूप मे रहना चाहता हू ।

सेठजी ने कहा—बस, ठीक है, आपसे हम सभी ऐसी ही आशा रखते है । आप पूज्यश्री की आज्ञा का उल्लघन नही करेंगे, यही समझकर तो पूज्यश्री आपको आज्ञा देंगे ।

आखिर मुनिश्री, पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए । उनसे सम्प्रदाय का भार स्वीकार करने के लिए कहा गया । यह सुनकर मुनिश्री को पता चला कि पहले की समस्त आज्ञाओ से यह आज्ञा विलक्षण है और इसका पालन करना बडा ही कठिन है । मुनिश्री बडे पशोपेश मे पडे । क्या करना चाहिए ? क्या मैं इस गुरुतर भार को उठाने मे समर्थ हो सकूगा ? मगर अस्वीकार करने का अर्थ पूज्यश्री को इस नाजुक अवस्था मे ठेस पहुचाना होगा । मगर स्वीकार करने के लिए जिस सामर्थ्य की आवश्यकता है, वह मैं अपने मे नही पाता । ऐसी स्थिति मे मैं सघ की सेवा कैसे कर सकूंगा ? इस प्रकार पशोपेश के पश्चात् आपने जब अपनी असमर्थता प्रकट की तो सेठ वर्धमानजी पीतलिया ने बनावटी रोष भरी आखो से मुनिश्री की ओर देखा । उनकी दृष्टि मे सकेत था कि आज्ञाकारी और विनीत शिष्य होते हुए भी इस प्रसग पर यह अस्वीकृति क्यों प्रकट कर रहे हैं ।

परिणाम यह हुआ कि मुनिश्री को विवश होकर वह भार स्वीकार करने की स्वीकृति देनी पडी ।

सेठ पीतलियाजी ने मुनिश्री घासीलालजी म को युवाचार्य पदवी का व्यवस्था-पत्र लिखने के लिए कहा । मगर उनके यह कहने पर कि मुझे लिखना नही आता, स्वय सेठजी ने व्यवस्था-पत्र का ड्राफ्ट बना दिया और मुनिश्री घासीलालजी म. ने उसकी नकल की और वह पूज्यश्री ने अपने पास रख लिया ।

श्रीसघ पूज्यश्री की बीमारी मे अत्यन्त चिन्तित हो उठा । आखिर बम्बई के प्रसिद्ध डाक्टर मुलगावकर को बुलाने का विचार किया गया । उनके बुलवाने का समाचार पाकर स्थानीय सर्जन ने पूज्यश्री के मूत्र की परीक्षा की और मधुमेह की बीमारी का निर्णय किया ।

डॉक्टर मुलगावरकर ने रोग का इतिहास सुनकर भली-भांति परीक्षा की तो उन्होने भी कहा कि पूज्यश्री को मधुमेह की ही शिकायत है। फोडे का मूल कारण भी यह मधुमेह ही था। डॉक्टर ने एकदम ही अन्न वन्द करके सिर्फ छाछ पर रहने की सलाह दी। फोडे का ऑपरेशन और साथ ही मधुमेह का इलाज आरम्भ हुआ। तबीयत मे सुधार होने लगा। सवत्सरी के दिन पूज्यश्री मे इतनी शक्ति आ गई कि वे व्याख्यान मण्डप मे पधारे और करीब २० मिनट तक भाषण भी दे सके।

ऑपरेशन का दृश्य बडा ही हृदय-द्रावक था। ऑपरेशन देखने वालो का हृदय काप रहा था। मगर पूज्यश्री के चेहरे पर कोई चिन्ता का चिह्न तक नही था। उन्होने वेहोशी के लिये क्लोरोफॉर्म नही सूघा था। होश मे रहते हुए ऑपरेशन करवाया। हथेली डॉक्टर के सामने पसार दी। पूज्यश्री के मुह से उफ तक नही निकला। जान पडता था शरीर की ममता त्याग कर वे आत्म-लोक मे रमण कर रहे हैं और आत्म-रक्षण की तल्लीनता मे उन्हे अपने शरीर का भान ही नही है।

पूज्यश्री का यह अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता देखकर चकित हो जाना पडा। धन्य है ऐसे सहनशील महासन्त जिन्होने इस रुग्ण अवस्था मे भी अपने आदर्श चरित द्वारा जनता को वोध पाठ दिया।

स्वास्थ्य मे धीरे २ सुधार होने मे वि स १९८२ का आगामी चातुर्मास जलगाव मे ही हुआ। जलगाव से विहार करके आपश्री का पदार्पण रतलाम हुआ। जहा जावरा वाले सतो के आचार्य श्रीमन्नालाजी म सा एव आपश्री के वीच साप्रदायिक एकता का एक शर्तो सहित सकल्प पत्र लिखा गया। वहा से आपश्री मन्दसोर पधारे जहा करजू वाले सेठ पन्नालालजी ने जीवदया और विद्या प्रचार के लिये वहुत दान दिया। नीमच मे महतरो और चमारो ने सबके साथ वैठकर आपके प्रवचन सुने, जिससे अछूतो के प्रति उच्च जाति वालो की घृणा कम हो गई। वडी सादडी मे भी समाज सुधार एव विद्या प्रचार के कार्य हुए। कानोड मे रावतजी ने कृषको को कई करो से मुक्त कर दिया।

राष्ट्रीय विचारों का प्रवल पोषण एवं धर्म सिद्धान्तो का नव विश्लेषण—

आचार्यश्री वैशाख शुक्ला पूर्णिमा को २६ ठाणो सहित उदयपुर पधारे। राष्ट्रीय एवं लोकोपयोगी विषयो पर आपश्री के प्रभावशाली प्रवचन हुए जिनसे प्रेरणा लेकर लोगो ने निम्नाकित प्रकार से त्याग किये।

१— पर स्त्री को माता के समान समझना और उसके गमन का त्याग।

२— छल-कपट आदि के द्वारा पर द्रव्य-हरण का त्याग।

३— गाय, भैंस, सूअर आदि की हिंसा के कारण चर्बी लगे वस्त्रो का त्याग।

४— शिकार, मास, मदिरा तथा जीव हिंसा का त्याग। मुमताज नाम की एक वेश्या ने एक ही दिन के उपदेश से मास और मदिरा का त्याग किया।

५— वेश्या, नृत्य, गदी गालिया गाना और बारीक वस्त्र पहिनने का त्याग।

६— विधवाओ द्वारा जेवर व भडकीले वस्त्र पहिनने तथा आपस मे कदाग्रह करने का त्याग।

७— बीडी, भाग, चाय, गाजा आदि मादक-द्रव्यो के सेवन का त्याग। अधिक भोजन, मकानो की गदगी तथा दूसरी अस्वास्थ्यकर बातो का त्याग।

८— कसाइयो ने प्राणीवध को कम करने तथा अगते रखने का निश्चय किया।

९— कुवर श्री भूपालसिहजी प्रवचन सुनकर जीवदया के प्रति वचनबद्ध हुए।

१०— सार्वजनिक हित के लिये एक फड कायम किया गया।

आपश्री का वि स १९८३ का पैंतीसवा चातुर्मास व्यावर मे सम्पन्न हुआ। चातुर्मास समाप्ति पर आर्य समाज व्यावर के उप-प्रधान ने अपने हार्दिक उद्‌गार व्यक्त करते हुए बताया कि आचार्यश्री की पहली विशेषता विचार-समता, दूसरी विशेषता समाज सुधार तो तीसरी विशेषता विचार-सुधार है। व्यावर से आपश्री जयपुर पधारे जहा अलवर, पजाब तथा दिल्ली के श्रीसघो ने अपने-अपने क्षेत्रो मे पधारने की आपश्री से विनती की। किन्तु वि स १९८४ का छत्तीसवा चातुर्मास भीनासर मे हुआ। यह चातुर्मास बडा महत्वपूर्ण रहा जब सत व सतियां ने ३६ से लेकर ९५ दिन तक की तथा श्रावक श्राविकाओ ने एक माह तक की तपस्याए की। श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस का आठवा तथा भारत जैन महामण्डल का वार्षिक अधिवेशन भी यहीं आयोजित हुआ।

अपने प्रवचनो मे आचार्यश्री ने जिन मुख्य विषयो को गहराई से छुआ वे थे श्रावक के १२ व्रत, अस्पृश्यता निवारण, बाल वृद्ध विवाह निषेध, मृत्युभोज आदि कुरीतियो का परित्याग, चर्बी वाले वस्त्रो एव अन्य महारम्भी वस्तुओ का निषेध सामाजिक एव राष्ट्रीय जागरण, वसुधैव कुटुम्बकम् आदि। इन प्रवचनो के माध्यम से जहा आपश्री ने एक ओर उस समय मे फैल रहे राष्ट्रीय जागृति के विचारो को पोषण दिया तो दूसरी ओर परम्परा से परिभाषित किये जा रहे धार्मिक सिद्धान्तो का भी आपश्री ने युगानुकूल नवविश्लेषण किया। यह एक प्रकार से उस विचार क्राति का प्रबलता के साथ किया जा रहा विस्तार था जो आपश्री के जीवन का मूल लक्ष्य था। इसी विचार-क्रान्ति के फलस्वरूप भीनासर-बीकानेर के राजवर्गी लोगो, छात्रो राज्य कर्मचारियो जैनेतर सज्जनों, तथा सैकडो अछूतो तक ने आपके उपदेशामृत का पान किया। आपश्री ने खादी की उपयोगिता के साथ-साथ विधवाओ की दुर्दशा का भी रोमाचकारी वर्णन किया जिससे प्रभावित होकर शिक्षा प्रचार, खादी प्रचार एवं विधवाओ

के हित के लिये सेठ भैरोदानजी जेठमलजी सेठिया के सभापतित्व मे जैन हितकारिणी सस्था की स्थापना की गई ।

कान्फ्रेंस के अधिवेशन के अवसर पर आपश्री ने अपने ओजस्वी उपदेशो द्वारा समाज की अनेक कुरूढियो की जडे हिला दी । आपने लोगो मे राष्ट्रीयता एव सामाजिकता के स्तर को ऊचा उठाने का साहस भरा । इन्ही सब कारणो से आपश्री का प्रभाव एक सम्प्रदाय तक सीमित न रहकर बहुत व्यापक हो गया था । यहा आपश्री के परिचय में पहले बडोदा तथा बाद मे बीकानेर रियासत के प्रधानमन्त्री सर मनुभाई मेहता भी आए जो आपश्री के उपदेश सुनकर इतने विशिष्ट अनुरागी हो गये कि जब लदन मे होने वाली पहली गोलमेज कान्फ्रेंस मे सम्मिलित होने के लिये वे प्रस्थान करने वाले थे तो पहले आचार्यश्री के दर्शन करने के लिये आये । तब आपश्री ने उन्हे जो उपदेश दिया उससे आपकी प्रबल राष्ट्रहित की भावना झलकती है । आपने फरमाया—"आज मेरा और सर मनुभाई मेहता का यह मिलन एक महत्वपूर्ण अवसर पर हो रहा है । मैं यो कहू तो चलेगा कि वे भारत के भाग्य का निपटारा करने जा रहे हैं । इस अवसर पर मैं अकिंचन अणगार उन्हें जो भेंट दे सकता हू वह उपदेश ही है । मैं स्मरण करा दू कि धर्म को लक्ष्य बनाकर जो निर्णय किया जाता है वही निर्णय जगत के लिये आशीर्वाद रूप हो सकता है और धर्म वही है जो समस्त प्राणियो के लिये मगलकारी एव कल्याणकारी हो । कोई यह न सोचे कि धर्म का सम्बन्ध केवल व्यक्ति से है । राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस मे जिसके लिये मेहताजी जा रहे हैं, धर्म का ही प्रश्न है । गुलाम और अत्याचारो से पीडित प्रजा मे वास्तविक धर्म का विकास नहीं हो सकता है । धार्मिक विकास के लिये स्वतत्रता अनिवार्य है और इसी समस्या का समाधान करने के लिये लदन मे यह कान्फ्रेंस हो रही है । साधु के नाते मैं सर मनुभाई को यही उपदेश देना चाहता हू कि आप दूसरो के असत्य विचारो के प्रभाव से दूर रहकर शुद्ध मस्तिष्क से सत्य विचार करें और साहस के साथ उन्हे सबके सामने रखे । सत्य की विजय मे ही सच्चा कल्याण है ।"

सर मनुभाई की भक्ति भी सराहनीय थी कि वे लदन जाने से पहले ये आदेश जारी करके गये—

१— आचार्यश्री के व्याख्यान मे कोई गडबडी न करने पावे ।

२— प्रश्नोत्तर के समय किसी प्रकार की असभ्यता न होने पावे । तथा

३— आपके धर्म प्रचार मे किसी प्रकार की बाधा न आने पावे ।

इन आदेशो के अनुसार प्रत्येक तहसील मे आचार्यश्री के पधारने से पहले ही स्थानीय राज्याधिकारी इन आदेशो की सार्वजनिक घोषणा करवा देते थे । इसका अभिप्राय यही था कि पूज्यश्री यहाँ प्रदेश मे शांति के साथ दया और दान का प्रचार कर सकें ।

थली प्रदेश की ओर विहार करने से पूर्व प. मदनमोहन मालवीय हिन्दू विश्वविद्यालय के सिलसिले मे बीकानेर आये । पडितजी आचार्यश्री के बारे मे पहले ही सुन चुके थे अत: व्याख्यान सुनने आये । आचार्यश्री ने कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत उठाये जाने के समान पडितजी के कठिन प्रयासो की प्रशसा की । मालवीयजी ने भी आपश्री की राष्ट्र धर्ममय प्रतिभा का उल्लेख करते हुए कहा कि आज राष्ट्रभक्ति सभी तरह की वृत्तियो एव प्रवृत्तियो के मूल में रहनी चाहिये ।

थली प्रदेश की ओर प्रस्थान तथा 'सद्धर्ममण्डनम्' एवं 'अनुकम्पा विचार' की रचना—

उस समय तक थली प्रदेश तेरह पथियो का दुर्भेद्य दुर्ग था । पूज्यश्री इस भ्रामक मान्यता का सशक्त विरोध करने की ख्याति पहले ही अर्जित कर चुके थे । अब यह कार्य आपश्री को दुर्ग के भीतर जाकर करना था । इस कारण आप जानते थे कि वहा तरह–तरह की कठिनाइया झेलनी पडेंगी । फिर भी जनकल्याण की भावना से आपश्री ने दुर्गद्वार मे प्रवेश करने का उसी तरह निश्चय कर लिया जिस तरह एक बार भगवान महावीर ने अनार्य क्षेत्र मे विहार करने का निश्चय किया था । आपश्री के निश्चय के पीछे सरदार शहर के सेठ खूबचन्दजी चडालिया व तनसुखदासजी दूगड तथा चूरू के सेठ मूलचन्दजी कोठारी का विशेष आग्रह था । अत: आचार्यश्री ने मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया स १९८४ को प मुनिश्री घासीलालजी म.सा एव मुनिश्री गणेशीलालजी म सा आदि २९ सतो के साथ थली प्रदेश की ओर प्रस्थान किया । उदासर, गाढवाला, नापासर, सीथल, बेलासर, तेजरासर नाहरसीसर, देरासर, दुलचासर, सुदसर, बेनीसर, भोजासर, हैमासर आदि गावो मे दयादान की महिमा फैलाते हुए आपश्री का डूगरगढ पधारना हुआ । वहा आपश्री रायबहादुर सेठ आशारामजी भवर (माहेश्वरी) की बगीची में ठहरे, जहा सभी जातियो की जनता ने आपश्री के चार प्रवचनो का लाभ लिया । आगे विहार मे रेगिस्तान के ऐसे-ऐसे कष्ट आपको उठाने पडे जिनकी पहले कल्पना तक नही थी । परन्तु दयादान का प्रचार करने और दयादान के विरोधियो को सन्मार्ग पर लाने के सुदृढ संकल्प के साथ आप विचरण करते रहे ।

जब आचार्यश्री सरदारशहर पधारे तो वहा के तेरह पथी समाज मे खलबली-सी मच गई क्योकि एक तो यह नगर ओसवालो के १२०० घरो के साथ तेरह पथियो का सबसे बडा केन्द्र था तो दूसरे उस समय तेरह पथ सम्प्रदाय के पूज्य श्री कालूरामजी स्वामी भी वही मौजूद थे । पहले तो आचार्यश्री का सामना करने की कई योजनाए बनाई गई लेकिन यह नहीं सोचा कि प्रेमपूर्वक साथ बैठकर तत्व निर्णय कर ले । किन्तु ये योजनाए भी कारगर नही हो सकीं । फिर आचार्यश्री एव उनके सतो को परेशान करके मैदान मारने की तरकीबें सोची गई । इसके अनुसार जब आचार्यश्री अथवा सत समभावपूर्वक दूसरे घरो की तरह तेरह पथी घरों मे गोचरी लेने जाते तब कई पाषाण हृदयी गृहस्थो ने उनके पात्रो मे वास्तविक पाषाण पटक दिये । इस प्रकार की कई जघन्य चेष्टाए की गई, जिनका वर्णन करते भी शर्म आ जाती है ।

सरदारशहर मे अग्रवाल, माहेश्वरी, ब्राह्मण, स्वर्णकार, दर्जी आदि जैनेतर भाइयो ने पूज्यश्री के मुखारविंद से जैन धर्म का सही स्वरूप सुना तो वे चकित रह गये । अभी तक तो वे तेरह पथ को ही जैनधर्म समझते थे । वे लोग आपश्री के भक्त बन गये । इस स्थिति का बदला लेने के लिये तेरह पथियो ने स्वर्णकार व दर्जी भाइयो का बहिष्कार करके काम देना बन्द कर दिया । फिर यही तेरह पथियो तथा आपश्री के बीच प्रसिद्ध धर्म चर्चा हुई । (जिसका विवरण परिशिष्ट स २ मे दिया गया है) इसी प्रकार चूरू मे भी चर्चा हुई जिसमे तेरह पथी आचार्य साध्वियो द्वारा अपने तथा अपने साधुओ के कार्य करने की परिपाटी का कोई उत्तर नही दे सके । चूरू से रतनगढ होते हुए आपश्री पडिहारा पधारे जहा तेरह पथियो द्वारा पूज्यश्री के सतो के लिये रणदीसर गाव के कुड से सचित पानी पीने के झूठे आरोप की, गाव की पचायत द्वारा जाच के बाद कलई खुल गई । इस मामले के प्रत्यक्षदर्शी नाथीबाई से झूठ कहलवाने के लिये तेरहपथी सेठ भैरोदानजी सुराणा ने मु हमागी रकम देने का प्रलोभन दिया फिर भी वह गरीब महिला झूठ नही बोली । सरदारशहर के सज्जनो के अत्याग्रह से आपश्री ने वि स १६८५ का चातुर्मास वही किया । साथ ही प रत्न मुनि श्रीगणेशीलालजी म सा का चातुर्मास चूरू मे हुआ । सरदारशहर मे सेठ फूसराजजी दूगड तेरहपथी समाज के माने हुए कट्टर श्रावक थे, किन्तु वे आचार्यश्री के प्रवचनो की प्रशसा सुनकर शका-समाधान के लिये आपश्री के पास आने लगे । कुछ दिनो के समागम से उनका समस्त भ्रम दूर हो गया, तब आचार्यश्री ने उन्हे प्रेरणा दी कि वे उन जैसे श्रीमन्तो को अगर दयादान के मार्ग पर मोड सकें तो दुर्भिक्षग्रस्त इस प्रदेश मे दान द्वारा जीव दया के महान कार्य सफल हो सकते हैं । तब सेठ दूगड व उनकी पत्नी ने इस दिशा मे काफी सफल प्रयास किये । उन दोनो ने आचार्यश्री से सम्यक्त्व भी ग्रहण किया । आचार्यश्री के उपदेशो से सवत्सरी के दिन बाजार, कसाईखाना तथा तेलियो की घाणियां बन्द रहीं, किन्तु दु खदायक अथवा लज्जाजनक बात यह हुई कि आचार्यश्री का प्रभाव न सह सकने के कारण तेरहपथी भाइयो ने दुकानें बन्द रखने वालो को अपनी दुकानें खोल देने की धमकिया दी तथा उन लोगो का बहिष्कार किया । इस लज्जाजनक कार्य मे भी उन्हे सफलता नही मिली । उनके किले की ईंटे धीरे-धीरे खिसकती जा रही थी । तब वे अधिक चौकन्ने हो गये । उन्होने आचार्यश्री के सतो के आहार-पानी लाने मे अडचने डालनी शुरु की और यही नही अपितु स्थानकवासी साधुओ के व्याख्यान सुनने का त्याग दिलाने लगे । इन ऊपरी प्रयत्नो का विपरीत प्रभाव यह हुआ कि तेरहपथी लोगो मे ही भीतर-भीतर दयादान सम्बन्धी सच्चाई जानने की जिज्ञासा बढ गई ।

इस प्रकार सरदारशहर का विजयी चातुर्मास पूर्ण करके आचार्यश्री ने स-दल-बल चूरू की ओर विहार किया । वहा गगाशहर निवासी वैरागी रेखचन्दजी ने समारोहपूर्वक आपश्री के समीप भागवती दीक्षा ग्रहण की । उस समय आश्चर्य की बात यह हुई कि एक तेरहपथी साधु हमीरमलजी ने दीक्षा महोत्सव मे घोषणा की—मैंने तेरहपथी सम्प्रदाय में दीक्षा ली थी मगर उस सम्प्रदाय मे अनेक साधु दोषी है । मैंने अपने पूज्यश्री से उनकी शुद्धि के लिये कहा मगर वहा सुनवाई नही हुई । इसलिये मैंने तेरहपथ छोड दिया है । अब मैं आचार्यश्री जवाहरलालजी

म सा के पास नवदीक्षा ग्रहण करना चाहता हू । तब प्रमुख व्यक्तियो की सम्मति से उन्हे भा दीक्षा दे दी गई । दीक्षा प्रसग पर 'जैन धर्म कायरो का नही, वीरो का धर्म है ।' विषय पर आचार्यश्री का अत्यन्त ओजस्वी व्याख्यान हुआ जिसमे जैनेतर जनता के अलावा महाराज भैरोसिंह जी, जज, वकील तथा कई राज्याधिकारी भी उपस्थित थे ।

इसी विहार मे 'अनुकम्पा' की ढालो की रचना की गई जिनमें तेरह पथियों की युक्तियो का खडन करके शास्त्रीय प्रमाणो द्वारा अनुकम्पा का प्रबल समर्थन किया गया है। चू कि तेरह पथियो ने थली की बोली मे ही दयादान विरोधी ऐसी ढालें प्रचलित कर रखी थीं अत व्यापक प्रचार के लिये इस 'अनुकम्पा विचार' ग्रथ मे वही शैली तथा वही बोली अपनाई गई । इसी समय मे पूज्यश्री ने एक दूसरे विशाल ग्रन्थ की भी रचना की, जिसका नाम 'सद्धर्ममण्डनम्' है । इसमे तेरहपथियो के 'भ्रम विध्वसन' नामक ग्रन्थ मे प्ररूपित मान्यताओ का बडी कुशलता और सावधानी के साथ खण्डन करके उन्हे जिनागम विरुद्ध सिद्ध किया है । इस विषय का यह अद्वितीय प्रामाणिक ग्रन्थ है, जिसमे आचार्यश्री की तीक्ष्ण समीक्षा शक्ति, अगाध सिद्धान्त ज्ञान और प्रखर प्रतिभा का सहज ही मे ज्ञान हो जाता है । वि.स. १९८६ का आपश्री का चातुर्मास चूरू मे तथा वि स १९८७ का चातुर्मास बीकानेर मे अपूर्व धर्मोद्योत के साथ सम्पन्न हुआ । बीकानेर चातुर्मास मे हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक श्री रामनरेश त्रिपाठी आचार्यश्री के ससर्ग से बहुत ही प्रभावित हुए । उनका इस विषय मे एक लेख तब सरस्वती पत्रिका मे प्रकाशित हुआ था जिसके कुछ अ श परिशिष्ट स ३ मे अ कित है । तदनन्तर आचार्यश्री का विहार देश की राजधानी दिल्ली की तरफ हुआ ।

देश की राजधानी दिल्ली में अहिंसात्मक स्वातंत्र्य आंदोलन को सम्बल-

आचार्यश्री ने दिल्ली पधार कर दिनाक १७-७-१९३१ को वहा चातुर्मास करने की स्वीकृति दे दी । उन दिनो सारे देश मे स्वतन्त्रता सग्राम का बडा ही गौरवपूर्ण आदोलन चल रहा था, जिसका केन्द्र स्थल राजधानी दिल्ली था । चारो ओर क्राति की लहरें उठ रही थी और महात्मा गाधी के नेतृत्व मे अहिंसात्मक असहयोग एव सत्याग्रह आदोलन सफलतापूर्वक चल रहे थे । इस सघर्ष मे अहिंसा मुख्य बिन्दु थी जिसे गाधीजी ने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना रखा था । जैन धर्म तो अहिंसा का प्रतिपादक एव समर्थक है ही अत आचार्यश्री का ऐसे स्वातन्त्र्य आदोलन को सम्बल देना स्वाभाविक ही था ।

वि.स १९८८ के चालीसवें इस दिल्ली चातुर्मास मे आपश्री अपने प्रवचनो में राष्ट्र धर्म पर सारगर्भित विवेचन किया करते थे । ये प्रवचन राष्ट्रीय विचार धारा की दृष्टि से इतने महत्वपूर्ण थे कि इनका 'जवाहर किरणावली' के नाम से प्रकाशन प्रारम्भ हुआ । इसमें आचार्यश्री की युगदर्शक सूक्ष्मदृष्टि का भलीभाति पता चल जाता है । उस समय के आपके उपदेश किसी भी राष्ट्रीय नेता के भाषणो से कम प्रभावशाली नहीं, फिर भी तारीफ यह है कि आपने अपनी साधु भाषा या मर्यादा का कहीं भी उल्लघन नही किया है ।

दिल्ली चातुर्मास मे ही स्थानकवासी समाज में भी जागृति की नई लहर फैली और जैन कान्फ्रेंस की जनरल कमेटी के अधिवेशन मे अखिल भारतीय जैन साधु सम्मेलन आयोजित करने की योजना पर विचार एव कार्यारम्भ हुआ । यहीं पर आचार्यश्री ने सुव्यवस्थित धर्म प्रचार के लिये एक नये ब्रह्मचारी वर्ग की योजना भी प्रकट की अर्थात् श्रावक एव साधु के बीच का वर्ग रखा जाय । दिल्ली की जनता ने आपके व्यक्तित्व एव उपदेश शैली से मन्त्रमुग्ध होकर आपश्री को एक अभिनन्दन पत्र के माध्यम से "जैन साहित्य चिन्तामणि" एव 'जैन न्याय दिवाकर' की दो उपाधिया भेंट करनी चाही परन्तु आचार्यश्री ने उसकी स्वीकृति नहीं दी ।

इस प्रकार दिल्ली का चातुर्मास बडी शानदार सफलता के साथ सम्पन्न हुआ ।

बाद मे आग्रह भरी विनती होने के कारण आपश्री जमुना पार पधारे । तब तक राष्ट्रीय आदोलन गोरे शासकों के दमन के दौर मे चलने लगा था । आचार्यश्री के प्रवचन तो सदा ही अहिंसात्मक स्वातन्त्र्य आदोलन को सम्बल देने वाले होते थे । आपश्री के श्रोता भी सभी जातियों तथा वर्गों के हुआ करते थे । शुद्ध खादी के वस्त्र, राष्ट्रीयता से सनी हुई ओजस्विनी वाणी अपार जनता के दिलो पर प्रभाव इन सबने मिलकर आपश्री को सरकार की नजरो में पहुचा दिया । फिर तो सरकारी गुप्तचर आपका पीछा करने लगे । श्रावको को यह स्थिति देखकर आपश्री की गिरफ्तारी की आशका पैदा हो गई । इस भय से उन्होंने आपश्री से निवेदन किया कि आपश्री व्याख्यानों को धर्म के क्षेत्र तक ही सीमित रखें, राष्ट्रीय बातो को उनमें न आने दें क्योंकि अगर गिरफ्तारी हो गई तो समाज को नीचा देखना पडेगा ।

श्रावको के इस भय के प्रति आचार्यश्री ने सिंह गर्जना की तरह उत्तर दिया—मैं अपना कर्तव्य भलीभाति समझता हू एव मुझे अपने उत्तरदायित्व का भी पूरा भान है । मैं जानता हू कि धर्म क्या है । मैं साधु हू, अधर्म के मार्ग पर नही जा सकता और परतन्त्रता सबसे बडा अधर्म होता है । मैं अपने व्याख्यान मे प्रत्येक बात सोच समझकर तथा मर्यादा मे रहकर कहता हू, यदि इस पर भी राजसत्ता मुझे गिरफ्तार करती है तो इसमे डरने की क्या बात है ? कर्तव्य पालन मे डर कैसा ? साधु को सभी उपसर्ग व परिषह सहने चाहिये किन्तु अपने कर्तव्य मे विचलित नही होना चाहिये । सभी परिस्थितियों मे धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है । यदि कर्तव्य का पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज के नीचा देखने जैसी कोई बात नही है । इसमे तो अत्याचारो का अत्याचार ही सबके सामने प्रकट होगा । इस सिंहनाद को सुनकर भयभीत श्रावकों के मुह बन्द हो गये । आपश्री के व्याख्यानो की धारा तो निर्बाध रूप से उसी तरह प्रवाहित होती रही ।

अजमेर के जैन साधु सम्मेलन मे आचार्यश्री के मौलिक सुझाव-

आपश्री का वि सं १९८९ का इकतालीसवा चातुर्मास जोधपुर मे हुआ जहा सैकडो व्यक्तियों ने मांस-मदिरा, बीडी-सिगरेट, चर्बी लगे वस्त्रों का परित्याग किया । महाराज श्री

फतहसिंहजी होम मिनिस्टर, राव राजा नरपतसिंहजी मिनिस्टर, महाराज श्री विजयसिंहजी आदि विशिष्ट सज्जनो ने पूज्यश्री के उपदेशो का पूरा लाभ उठाया । यहा के युवकरत्न श्री इन्द्रनाथजी मोदी एव श्री जसवन्तराजजी मेहता आपश्री के विशिष्ट अनुरागी बन गये ।

चातुर्मास के समाप्त होते-होते साधु सम्मेलन का प्रतिनिधि मडल आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ जिसमे राजा बहादुर एस ज्वालाप्रसादजी हैदराबाद सहित आठ सदस्य थे। शिष्टमडल ने साधु सम्मेलन कब, कहा किया जाय, उसमे किन-किन बातो पर विचार किया जाय सगठन का स्वरूप कैसा हो, समस्त सम्प्रदायो का आचार्य एक हो या अनेक आदि कई विषयों पर आचार्यश्री के साथ विचार-विमर्श किया एव उनके बहुमूल्य सुझाव जाने । जोधपुर मे श्री चुन्नीलालजी गुगलिया एव उनके भतीजे श्री गोकुलचन्दजी ने आपश्री के समीप दीक्षा ग्रहण की। फिर भी जैतारण मे भी मलकापुर (खान देश) के रईस तथा कान्फ्रेंस के नेता श्री मोतीलालजी कोटेचा ने ससार से विरक्त होकर मुनि जीवन अगीकार किया ।

जैसे इगलैण्ड मे होने वाली राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस के लिये काग्रेस की ओर से एक मात्र प्रतिनिधि महात्मा गाधी चुने गये थे, उसी प्रकार अजमेर के साधु सम्मेलन के लिये आचार्यश्री १६३ साधु-साध्वियो के हस्ताक्षरित पत्र द्वारा एकमात्र प्रतिनिधि निर्वाचित किये गये । ब्यावर से अजमेर पधारते हुए मार्ग मे आपश्री का पजाबी सत युवाचार्यश्री काशीरामजी महाराज से भेट हुई । जिनके साथ विचार-विमर्श करके साधु-सम्मेलन मे विचारणीय विषयो की एक सूची तैयार की गई । इस सूची मे ४२ मुद्दे रखे गये जो साधु मुनि आचार से सम्बन्ध रखते थे ।

दि० ५ अप्रेल १६३३ ई० को अजमेर मे साधु सम्मेलन प्रारम्भ हुआ । भगवान महावीर के बाद २५०० वर्षो मे पहले तीन बार साधु एकत्रित हुए थे । पटना, मथुरा तथा तीसरी बार वीर सवत् ६८० मे श्रीदेवर्द्धिगणि के प्रयत्न से वल्लभीपुर मे । अन्तिम सम्मेलन को हुए १५०० वर्ष बीत चुके थे ।

जब यह सम्मेलन हुआ इसमे २६ सम्प्रदायो के २४० सत एकत्रित हुए । दर्शनार्थी तो हजारो की सख्या में थे । कार्यक्रम का प्रारम्भ पूज्यश्री मन्नालालजी म सा. के मगलाचरण, शतावधानीजी म सा कवि श्री नानचन्दजी महाराज तथा पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा. की प्रार्थना एव पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा की शुभकामना के साथ हुआ । आचार्यश्री ने प्रारम्भ में ही अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी कि यद्यपि मैं अपने सत-सतियो द्वारा एकमात्र प्रतिनिधि चुना गया हू किन्तु किन्ही कारणो से मैं इस सम्मेलन में प्रतिनिधि रूप से सम्मिलित न होकर एक दर्शक के रूप मे ही उपस्थित रहूगा । यदि इसमें केवल प्रतिनिधि ही सम्मिलित हो सकते हों तो मुझे यहां से चले जाने मे कोई सकोच नही है । फिर सभी मुनिराजो ने आपको बैठक में विराजने की प्रार्थना की और सलाहकार के रूप मे योग देने का आग्रह किया ।

आचार्यश्री ने सम्मेलन मे कई महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये । किन्तु आपश्री ने विस्तार से "श्री वर्धमान सघ' की जो योजना (परिशिष्ट स ४ मे देखें) प्रस्तुत की वह जैन समाज के

अभ्युदय के लिए वडी महत्त्व की मानी गई है। इस योजना के पीछे आपश्री का यह विचार था कि समस्त मुनियो के एकीकरण के लिये एक ऐसे नये सघ का निर्माण होना चाहिये जिसमे सम्मिलित हो जाने के वाद पुरानी साम्प्रदायिकता भुला दी जाय। चूकि सघ का नाम चौवीसवें तीर्थंकर शासन देव महावीर के ही नाम पर रखा गया था अत. नाम से किसी प्रकार के तर्क-वितर्क को स्थान नहीं था। वर्धमान सघ से २५ नियम भी प्रस्तुत किये गये, जिनके द्वारा साधुओ की भावी एकता का सुदृढीकरण किया जा सकता था। श्रावक-श्राविकाओ के सगठन के लिये भी एक समाचारी की रूपरेखा प्रस्तुत की गई। इस प्रकार आचार्यश्री का साधु-सम्मेलन को वहुत महत्वपूर्ण एव रचनात्मक योगदान मिला।

अजमेर से विहार करते हुए आपश्री उदयपुर पधारे तथा वि स. १९९० का चातुर्मास वही पर सम्पन्न हुआ। तभी यहा पर जैन नवयुवक मडल की स्थापना हुई थी। यही पर कान्फ्रेंस मे पास हुए प्रस्तावो के कार्यान्वयन के सम्वन्ध मे विचार करने के लिये अध्यक्ष श्री हेमचन्दरामजी भाई मेहता जो भावनगर स्टेट रेल्वे के चीफ इंजीनियर थे, एक शिष्ट मण्डल के साथ आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए। उनकी उपस्थिति मे आचार्यश्री ने जो चार व्याख्यान दिये वे वैचारिक दृष्टि से वहुत ही महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इसी चातुर्मास मे आपश्री को उदयपुर श्रीसघ के सामने प रत्नमुनि श्री घासीलालजी महाराज को उनकी वार-वार की अनुशासनहीनता के कारण सम्प्रदाय से पृथक करने की घोषणा करनी पडी।

उत्तराधिकारी का चयन

मिश्री के कुंजे की तरह वनने की सीख

अजमेर सम्मेलन मे ही पडित प्रवर मुनिश्री गणेशीलालजी म.सा को यथासाध्य शीघ्र युवाचार्य पदवी प्रदान करने का निश्चय हुआ था। इस समारोह के लिये जावद श्रीसघ ने आग्रहपूर्ण प्रार्थना की थी जो उस नगर के गौरव को देखते हुए स्वीकार की गई। चादर प्रदान दिवस के लिये स १९९० की फाल्गुन शुक्ला तृतीया का दिन निश्चित हुआ।

इस अवसर के लिये सत और सतियो के आगमन का ताता लगा रहा, जिनकी संख्या क्रमश तीस और पैंतीस हो गई। करीव सात हजार दर्शनार्थी श्रावक भी एकत्रित हुए। तृतीया के दिन प्रात काल दीवान वहादुर सेठ मोतीलालजी मूथा के नेतृत्व मे एक जुलूस निकला जिसमे राज्याधिकारियो सहित करीव-करीव सारा नगर सम्मिलित हुआ। तत्पश्चात् सरकारी स्कूल के विशाल मैदान मे हजारो की भीड जमा हो गई जहा युवाचार्य पदवी प्रदान की जानी थी। आयोजन के प्रारम्भ मे आचार्यश्री एव सभी सतो ने मिलकर नवकार मन्त्र का पाठ एवं भगवान शातिनाथ की प्रार्थना की।

आचार्यश्री ने फिर फरमाया— यह वात चतुर्विध सघ को विदित हो चुकी है कि आज मुनिश्री गणेशीलालजी म सा. को युवाचार्य पद की चादर दी जाने वाली है। स्थानाग सूत्र

के चौथे स्थान मे धर्माचार्य के चार भेद बताये गये हैं—नामाचार्य, स्थापनाचार्य, द्रव्याचार्य और भावाचार्य । चतुर्विध संघ मिलकर जिस मुनि को धर्माचार्य पद पर स्थापित करे वही धर्माचार्य होता है, जिसमे ये तीन गुण होने चाहिये—गीतार्थ,अप्रमादी और सारणा-वारणा-धारणा आदि करने वाला । अर्थात् जो सूत्र को जानने वाला हो, प्रमाद–रहित हो और सघ की व्यवस्था करने वाला हो । स्व० पूज्यश्री फरमाया करते थे कि आचार्य पत्थर जैसा कठोर भी न हो तो पानी जैसा नरम भी न हो, किन्तु बीकानेरी मिश्री के कूजे की तरह हो अर्थात् जिस प्रकार बीकानेर की मिश्री का कूजा सिर पर मारने से सिर फूट सकता है लेकिन उसका टुकडा मुह मे रखने पर मुह मीठा कर देता है उसी प्रकार आचार्यश्री अन्याय का प्रतिकार करने के लिये कठोर से कठोर रहे और सत्य तथा न्याय के लिये मुह मे रखी हुई मिश्री के समान मीठा और नम्र रहे । तदनन्तर आपश्री ने पाटावली का उल्लेख करते हुए मुनिश्री से सजग एव विकासगामी बनने का आग्रह किया । पचमुनियो ने सातवे पाट श्री गणेशीलालजी म सा को युवाचार्य बनाने के प्रस्ताव का समर्थन किया और फिर सकल सघ की सम्मति से उन्हे आचार्यश्री ने युवाचार्य पद की चादर प्रदान की । अनेक स्थानो से प्राप्त प्रमुख मुनिराजो एव श्रावको के शुभकामना संदेश पढे गये तथा बम्बई, दक्षिण, खानदेश, कोटाहाडोती, नीमच, जावद आदि के उपस्थित प्रमुख श्रावको ने स्वय अपनी शुभकामनाए व्यक्त की । तत्पश्चात् युवाचार्य पद विभूषित श्रीमद् गणेशीलालजी म सा. ने अपने हृदयोद्‌गार प्रकट करते हुए शासन-नायक एव गुरु महाराज से यही प्रार्थना की कि इस चादर के गौरव की रक्षा करने की उन्हे शक्ति प्राप्त हो ।

रतलाम से विहार करके आचार्यश्री युवाचार्यश्री के साथ मदसौर पधारे जहा कपासन श्रीसघ के भाव भरे आग्रह को देखकर आगामी चातुर्मास वहा करने की स्वीकृति प्रदान की गई । वि स १९९१ के कपासन चातुर्मास मे उल्लेखनीय धर्माराधना हुई । सवत्सरी के दिन ही ७१९ पौषध हुए । कन्या विक्रय, मृत्यु भोज तिलक तथा भाई के विरुद्ध मुकदमेबाजी के भारी सख्या मे त्याग हुए । यहा श्री फूलचन्दजी बुर्ड (मेवाड) निवासी ने दीक्षा ग्रहण की ।

मेवाड के छोटे-छोटे गावो को पावन करते हुए आचार्यश्री ने विक्रम सवत् १९९२ का अपना चातुर्मास रतलाम मे व्यतीत किया ।

रूढ विचारो पर सचोट प्रहार और आध्यात्मिक नव-जागृति-

रतलाम के इस चातुर्मास मे आचार्यश्री द्वारा चलाई गई विचार क्रांति का सर्वोत्कृष्ट विकास दिखाई दिया । आपश्री कभी भी रूढियो के पक्षपाती नहीं थे बल्कि रूढियो से चिपटे रहने को विवेकहीनता या मानसिक दुर्बलता का चिह्न मानते थे । आपश्री फरमाया करते थे कि जो व्यक्ति निज विवेक से उचित–अनुचित एव कल्याण अकल्याण का निश्चय करता है और आगम का बल पाकर निर्भयता के साथ अपने निर्णय की घोषणा करता है,ऐसा करते हुए वह हिचकिचाता नहीं, जगत् का सही पथ प्रदर्शक ऐसा विवेकी पुरुष ही हो सकता है जिसे सच्चा नेता कह सके ।

इस पृष्ठभूमि के साथ आचार्यश्री ने अल्पारम्भ महारम्भ की विवेकपूर्ण व्याख्याए स्पष्ट की। हिंसा-अहिंसा या अल्पारम्भ और महारम्भ के विषय मे विवेक एव यतना को प्रधानता दी जाती थी—ऐसी रूढि प्रचलित थी। अब भी कई लोग दूसरे से काम कराने की अपेक्षा अपना काम आप करने मे अधिक पाप मानते हैं। वे प्रत्यक्ष की अल्पहिंसा के सामने बडी से बडी अप्रत्यक्ष हिंसा को नगण्य समझते हैं। सच तो यह है कि अप्रत्यक्ष की घोर हिंसा को टालने की चेष्टा करनी चाहिये। चर्खा कातने की अपेक्षा चर्बी लगे वस्त्र पहिनने मे अधिक पाप है। स्वय यतना रखकर रसोई बनाने की अपेक्षा हलवाई की पूरिया खरीदकर खाने मे अधिक पाप है, क्योकि हलवाई आप जैसी यतना नही रख सकता।

आचार्यश्री के ऐसे क्रातिपूर्ण विचार रूढ समाज के लिये एकदम नये और अपाच्य थे। कई लोगो ने इन नई व्याख्याओ का धीमा-धीमा विरोध भी किया। इस विरोध को देखकर आचार्यश्री अपने विचारो की क्रातिकारिता को अधिक स्पष्ट करने लगे। वे कहते—शास्त्र नीति तथा व्यवहार सभी मे विवेक को बडा माना गया है तो फिर धर्म मे विवेक के न रहने से धर्म की दशा स्वस्थ कैसे रह सकती है? लोग प्रश्न करते हैं कि हलवाई के यहा से सीधी चीजे लाकर खाने मे अधिक पाप कैसे होगा? वे यहा तक पूछ बैठते हैं कि फिर क्या सीधा खरीदकर लाने के बजाय हाथ से चमडा चीरकर, जूता बनाकर पहिनना ठीक रहेगा? अल्पारम्भ और महारम्भ का प्रश्न उन्ही के लिये हो सकता है जो सम्यक्-दृष्टि एव व्रती हैं, मिथ्यात्वी के लिये नही। अल्प-पाप और महापाप का निश्चय स्व विवेक पर ही निर्भर करेगा किन्तु जो काम महारम्भ से होता है, विवेक द्वारा उसे अल्पारम्भ से भी किया जा सकता है और अगर विवेक नही है तो अल्पारम्भ वाला काम भी महारम्भ वाला हो जायेगा। आचार्यश्री विवेकशीलता जागृत करने के लिये लोगो को कई दृष्टातो के साथ समझाते और निर्भयता के साथ विचार क्राति के रथ को आगे बढाते। परिणाम स्वरूप सारे समाज मे विचारो का मथन होने लगा एव पुरानी परम्पराए रूढ मानी जाने लगी। बदले हुए दृष्टिकोण से आध्यात्मिक क्षेत्र मे एक नई जागृति का जन्म हुआ।

इस समय सौराष्ट्र प्रात की ओर से आचार्यश्री के पास भावभीनी विनन्तियां आने लगी। धर्मोपकार की दृष्टि से जब आचार्यश्री ने उस ओर विहार करने का निश्चय किया तो सुदूर गमन की दृष्टि से युवाचार्यश्री को एक लिखित अधिकार-पत्र के माध्यम से पूर्णतया अधिकृत किया गया। विहार मार्ग में आपश्री का मिलन आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा से हुआ जो परस्पर पूर्ण प्रेम एव वात्सल्य का एक आदर्श था। माडेगाव तक आचार्यश्री एवं युवाचार्यश्री ने साथ-साथ विहार किया परन्तु वहा से आचार्यश्री प० मुनिश्री सिरेमलजी म.सा के साथ काठियावाड की ओर पधारे तो युवाचार्यश्री मेवाड की ओर।

महात्मा गांधी एवं सरदार पटेल का आगमन—

आचार्यश्री पालनपुर, वीरमगाम, वढवाण होते हुए दिनाक १७-६-१६६० को राजकोट पधारे। राजकोट मे उस समय जो आनन्द और उमग का वातावरण दिखाई दिया वह अवर्णनीय

था । सघ के मत्री रायसाहब मणिलाल शाह तथा युवक सघ के मत्री श्री जटाशकर मेहता ने आपश्री का स्वागत करते हुए अपने प्रवचनो से समाज को जगाने की भावना व्यक्त की। प्रत्युत्तर मे आपश्री ने फरमाया—प्रभु महावीर के आदेशानुसार उपदेश देना हमारा मार्ग है। उसी मे समाज तथा राष्ट्र की उन्नति का समावेश हो जाता है ।

वि स १९९३ के राजकोट चातुर्मास मे जैनेतर हिन्दु भाइयो के अतिरिक्त अनेक मुस्लिम भाई भी नियमित रूप से प्रवचन सुनते थे । राजकोट के दरबार से श्री वीरवालाजी सा और स्टेट व एजेन्सी के अधिकारी भी पूज्यश्री के वचनामृत का पान किया करते थे। आचार्यश्री अपने प्रवचन गुजराती भाषा मे फरमाते थे ।

आचार्यश्री जब राजकोट मे विराजमान थे तब २९ अक्टूबर को महात्मा गाधी भी कार्यवश राजकोट पधारे । आपश्री के उदात्त विचारो एव प्रभावक प्रवचन शैली से गाधीजी पहले से परिचित थे । भीड से बचने के लिये गाधीजी राजकोट से रवाना होने के पहले अचानक पूज्यश्री के पास पहुचे । दोनो महापुरुषो ने बडी शाति से चर्चा की । गाधीजी ने कहा-जब मैं अहमदाबाद से रवाना हुआ तभी से आप से मिलने की इच्छा थी । मैं राजकोट आऊ और आप से बिना मिले चला जाऊ यह सम्भव ही नही था । मेरी इच्छा तो उपदेश मे आने की थी, मगर लोग व्याख्यान सुनने नही देते । क्या किया जाय ?

पूज्यश्री ने फरमाया—देखिये, यह सामने घडी टगी है । इसकी दोनो सुइयां चल रही है । यह बात तो सभी लोग देखते हैं पर इन सुइयो को चलाने वाली मशीनरी इसके भीतर है, उसे कितने लोग जानते हैं ? असल चीज तो मशीनरी ही है । गाधीजी ने सौम्य मुस्कराहट मे उत्तर दिया और कुछ और बातचीत करके रवाना हो गये ।

आगामी चातुर्मास के लिये मोरवी, पोरबन्दर, जामनगर, जलगांव, बीकानेर आदि कई स्थानो की समाज प्रमुखो की प्रार्थनाए थी, किन्तु उस समय कोई निर्णय नही लिया जा सका ।

फिर १३ अक्टूबर को सरदार वल्लभभाई पटेल पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे । उन दिनो गांधी सप्ताह चल रहा था । सरदार के आगमन को सुनकर बडी सख्या मे जनता इकट्ठी हो गई थी । आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में गाधी सप्ताह पर अपना सदेश दिया—महात्मा गाधी के मौखिक यशोगान मात्र से यह सप्ताह नही मनाया जाना चाहिये, परन्तु गाधीजी ने जिस खादी को अपनाकर देश को समृद्ध बनाने का तथा गरीबो के भरण-पोषण का द्वार खोल दिया है, उसे अपनाने से ही सार्थक आयोजन हो सकेगा । ऐसा करने से महारम्भ से बचाव होगा । इसलिये धर्म की भी आराधना होगी । फिर आपश्री ने देश सेवा एव धर्मसेवा के समन्वय का सुन्दर विश्लेषण किया ।

सरदार पटेल ने जनता को सम्बोधित करते हुए कहा—आप लोग धन्य है जिन्हें ऐसे महात्माजी मिले हैं जिनके व्याख्यान आप लोगों को नित्य नये सुनने को मिलते हैं । मगर मैं

सुनना तभी सफल है जब उपदेशो को जीवन मे उतारा जाय । सरदार पटेल ने आचार्यश्री के साधु जीवन की सराहना की ।

काठियावाड़ प्रवास मे आचार्यश्री की प्राभाविकता शिखर पर–

राजकोट चातुर्मास समाप्त होने पर आपश्री की विदाई का दृश्य दर्शनीय था । करीब दस हजार से अधिक जनता ने आपको अश्रुपूर्ण विदाई दी । आप वहा से गोडल, वीरपुर होते हुए जेतपुर पधारे । यहा बडी सख्या मे अस्पृश्य कहलाने वाले भाइयो ने आपके दर्शन किये । जब व्याख्यान मे इनको पीछे बिठाया गया तो आचार्यश्री ने श्रावको को बडे प्रभावशाली शब्दो मे उपदेश दिया । परिणामस्वरूप दूसरे दिन इन भाइयो को सबमे आगे बिठाया गया । इन लोगो मे से कइयो ने मास–मदिरा के त्याग किये । यहा से आपश्री जेतलसर, धोराजी होते हुए जूनागढ पधारे । यहा के व्याख्यानो मे विभिन्न सैद्धातिक विषयो का ऐसी सुगम और सुदर भाषा मे विवेचन हुआ कि श्रोता मत्रमुग्ध से हो गये । मार्ग मे बिलखा दरबार पूज्यश्री के उपदेश से बहुत प्रभावित हुए तथा उन्होने अपनी रियासत मे हिसा बन्दी का ऐलान किया । वेरावल मे पूज्यश्री का एक व्याख्यान हरिजन बस्ती मे हुआ । पोरबन्दर मे राणा साहब श्री नटवरसिहजी दीवान एव राज्याधिकारियो के अलावा सामान्य जनता ने बडी सख्या में आपश्री की अमृतवाणी का रसास्वादन किया ।

यही पर डॉ० पट्टाभिसीतारामैया का आगमन हुआ जो पूज्यश्री से मिले एव वार्तालाप करके बहुत प्रसन्न हुए । खादी के विषय मे उन्होने सक्षिप्त भाषण भी दिया । पोरबन्दर की महारानी साहिबा भी आपश्री का उपदेश सुनने आई । यहा से आपश्री का पधारना भाणवड होते हुए जामनगर हुआ । किन्तु मार्ग मे अचानक आपके दाये पैर मे वात का प्रकोप हो गया तथा पैदल चलना कठिन हो गया, अत खटेरा गाव से आपश्री को डोली मे पधारना पडा । वि स १९९४ का आपश्री का चातुर्मास मोरवी न पहुच सकने के कारण जामनगर मे ही हुआ । इस निर्णय से वहा आनन्द का वातावरण छा गया और चातुर्मास से सराहनीय धर्मजागृति हुई । जाम साहब के पिताजी महाराजा श्री जवानसिहजी दीवान खान बहादुर मेहरबानजी पेस्तनजी भी आपश्री का प्रवचन सुनने के लिये आते थे । विभिन्न विषयो पर प्रभावशाली उपदेश हुआ करते थे जिनसे जामनगर की समस्त जनता प्रभावित हो गई थी । आपश्री के दर्शन करने के लिये श्री ठक्कर बापा, श्रीमती रामेश्वरी नेहरू तथा श्री नारायणदास गाधी भी आये ।

पूज्यश्री के पैर का दर्द अभी तक बिल्कुल ठीक नही हुआ था अत यहा के सूर्य गृह मे किरण चिकित्सा के विशेषज्ञ डॉ० प्राणजीवन मेहता ने अगाध श्रद्धा, भक्ति के साथ आपश्री का उपचार प्रारम्भ किया । दो माह के उपचार से कुछ लाभ हुआ लेकिन लम्बा विहार तब भी सम्भव नही था । यहां कार्तिक शुक्ला तृतीया को आचार्यश्री की जयन्ति बहुत भक्तिभाव से मनाई गई । चातुर्मास समाप्त होने पर धीमे-धीमे विहार करते हुए आपश्री मोरवी पहुचे । वहा

मौरवी नरेश के अलावा सकल श्रीसघ ने चातुर्मास की विनती की। उस समय पूज्यश्री का मन राजस्थान की ओर लौटने का था अत· अहमदावाद सघ की विनती को ध्यान मे रखने की वात कह दी थी, किन्तु जव मौरवी नरेश और सघ के श्रावक पांच वार स्थान-स्थान पर आकर वार-वार आग्रह करते रहे तो आपश्री को अपना विचार वदलना पडा। तदनुसार वि स १९९५ का चातुर्मास मौरवी में हुआ। व्याख्यान मे महाराजा, राजकुमार एव अन्य राज्याधिकारी नियमित रूप से आते थे। वीरपुर नरेश तो वहा का दृश्य देखकर जैन धर्म के क्षत्रिय युग को याद करने लगे। जव देश भर के राजा-महाराजा और सम्राट अणगारो के चरणो में मस्तक झुकाकर धर्म की विजय घोषणा करते थे।

चातुर्मास समाप्त करके आपश्री राजकोट पधारे तथा काठियावाड जैन गुरुकुल में विराजे। यहा के प्रवचन सुनकर एक तो साधुओ से घृणा करने वाली अहमदावाद के करोडपति धनाढ्य परिवार की सदस्या श्रीमती मृदुला वेन का हृदय परिवर्तित हुआ और वह आपश्री की अनन्य भक्त वन गई। दूसरे, गाधीजी को छोडकर अन्य किसी को साधु नही समझने वाले एक वोहरा (मुसलमान) सज्जन भी आपका व्याख्यान सुनकर आप पर लट्टू हो गये।

उस समय राजकोट मे वहा का विख्यात सत्याग्रह चल रहा था। प्रजा मे असतोष की ज्वाला धधक रही थी। कई सत्याग्रही जेलो मे ठूसे जाकर यातनाए पा रहे थे। अतः आचार्यश्री ने सभी लोगो को शांत एव त्यागमय जीवन विताने की प्रेरणा दी। सत्याग्रह के विषय में आपने फरमाया—सत्याग्रह के वल की तुलना दूसरा कोई वल नही कर सकता। इस वल के सामने मनुष्य शक्ति तो क्या, देव शक्ति भी हार मानती है। अन्याय के प्रति असहयोग न करने से वडा भारी अनर्थ हो जाता है। अगर भीष्म द्रोण आदि महारथियो ने कौरवो से असहयोग कर दिया होता तो महाभारत के युद्ध का भीषण रक्तपात न होता एव इस देश के अध पतन का आरम्भ भी न होता। राजकोट मे विहार करके आपश्री अहमदावाद की तरफ पधारे।

काठियावाड प्रात मे आपश्री के चातुर्मास वहुत ही प्रभावक रहे। यो कहा जा सकता है कि इनमें आचार्यश्री की प्रामाविकता एव यश-लालिमा अपने उच्चतम शिखर पर आरूढ हुई।

अस्वस्थता के वर्ष-दिव्यसहनशीलता और भीनासर मे स्वर्गवास-

अहमदावाद मे आपका वि स १९९६ का चातुर्मास धर्मोपकार की दृष्टि से वहुत ही विशिष्ट रहा किन्तु आचार्यश्री लगातार कुछ अस्वस्थ रहने लगे। तपस्या से कुछ लाभ हुआ, लेकिन दुर्वलता वढ गई, तव वैद्यजी की सलाह से आपश्री ने व्याख्यान देना वन्द कर दिया। पर्युषण से कुछ दिन पहले आपश्री पुन व्याख्यान देने लगे किन्तु थोडे दिनो वाद ही आपके दाहिनी जाघ मे गाठ उठ गई और आप पुन अस्वस्थ हो गये। यह अस्वस्थता जुखाम, खासी, वुखार मे लेकर गले में दर्द तक पहुच गई। ऐसा लगने लगा कि अव पूज्यश्री को वही स्थिरवास

न करना पड जाय । चातुर्मास समाप्त होने पर आपश्री का धीरे-धीरे मारवाड की ओर विहार होने लगा । सादडी(मारवाड) मे युवाचार्यश्री आपकी सेवा मे पधारे । वहा से विहार करके आपश्री बगडी पधारे जहा सेठ लक्ष्मीचन्द घाडीवाल उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीबाई एव समस्त श्रीसघ ने अपनी उत्कट अभिलाषा व्यक्त की कि आपश्री का एक चातुर्मास बगडी मे अवश्य होना चाहिये । तदनुसार वि स. १९९७ का चातुर्मास आचार्यश्री ने बगडी मे व्यतीत किया । यहा के ग्राम्य वातावरण मे आपश्री का स्वास्थ्य कुछ सुधर गया तथा कभी-कभी व्याख्यान भी फरमाने लगे ।

इस चातुर्मास मे सेठानी लक्ष्मीबाई ने विशेष भक्तिपूर्ण सेवा की । वे अपने पीहर से तेरहपथी सम्प्रदाय की अनुयायिनी थी । एक बार तेरहपथी आचार्य कालूराम स्वामी बगडी आए तब उन्होने शका निवारण की दृष्टि से उनसे कई प्रश्न किये जिनमे एक प्रश्न यह भी था-अगर कोई दुराचारी पुरुष किसी शीलवती महिला का शील भग करके अपनी पाशविक वृत्ति को तृप्त करना चाहे और उस समय महिला की याचना पर कोई दयालु धर्मप्रेमी उस दुराचारी पुरुष को वहा से भगा दे तो उस शील के रक्षक पुरुष को धर्म होगा या पाप लगेगा ? प्रश्न के उत्तर मे कालूरामजी स्वामी बोले—दुराचारी पुरुष को दूर भगा देने वाले को भोगान्तराय कर्म लगता है । सेठानीजी ने कहा-महिला शीलवती है तथा उसे भोग करने की लेश मात्र भी इच्छा नही है । दुराचारी पुरुष बलात्कार करने की चेष्टा कर रहा है । ऐसी स्थिति मे शील की रक्षा मे सहायता देने वाले का भोगान्तराय कर्म का बध क्यो कर होगा ? कालूरामजी ने फिर उत्तर दिया—महिला की इच्छा नही है तो न सही, पुरुष की तो इच्छा है ? जब ये प्रश्नोत्तर चल रहे थे तो करीब १००-१५० साधु वहा एकत्र थे । उनके बीच मे सेठानीजी ने घोषणा की कि जिस मत मे शील की रक्षा करना भी पाप बताया जाता हो, उस मत को कम से कम महिलाए तो मान ही नही सकती । इसलिये आज से मैं इस मत को त्यागती हू । फिर तो सेठानीजी ने आजीवन पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा एव भावी आचार्यों की अटूट श्रद्धा के साथ सेवाभक्ति की ।

अब आचार्यश्री के लिये स्थिरवास का समय आ गया था । इस हेतु कई स्थानो की प्रार्थनाए आई किन्तु आपश्री ने भीनासर-बीकानेर की ओर विहार करना स्वीकार किया । मार्ग मे बलूदा गाव मे हाथो व जाघ मे फु सिया निकल आने के कारण आप फिर अस्वस्थ हो गये । वहा दानवीर सेठ छगनलालजी मूथा ने सराहनीय सेवा की अजमेर के सुप्रसिद्ध डॉ सूरजनारायणजी ने आपका उपचार किया । कुछ स्वस्थ होने पर आपश्री कुचेरा, नागौर, गोगोलाव होते हुए नोखामडी पधारे । वहा सात बहिनो ने दयादान विरोधी श्रद्धा त्याग कर आपश्री को अपना गुरु स्वीकार किया । वही श्री जैन जवाहर लायब्रेरी की भी स्थापना हुई । उदयरामसर मे कुछ लोग देवी के मन्दिर मे बकरे को बलि चढाने के लिये तैयार खडे थे कि युवाचार्यश्री ने मौके पर पहुच कर उन्हे ऐसी सुन्दरता से समझाया कि उन्होने बकरे को अभयदान दे दिया ।

आपश्री का वि स १९९८ का चातुर्मास भीनासर मे हुआ, मगर अशक्ति के कारण आप व्याख्यान नही फरमाते थे फिर भी आपके प्रभाव से धर्मोपकार के कई कार्य हुए ।

आपश्री के शाश्वत प्रभाव रखने वाले प्रवचनो के जवाहर किरणावली के नाम से दो भाग पहले दिल्ली मे प्रकाशित हो चुके थे किन्तु यहा पर आपश्री के समस्त महत्त्वपूर्ण प्रवचनो के सग्रह का जवाहर किरणावली के अग्रिम भागो के रूप मे प्रकाशन प्रारम्भ हो गया। सम्पादन का कार्य प श्री शोभाचन्द्रजी भारिल्ल को सौपा गया, जिन्होने सम्पादन का कार्य ऐसी कुशल एव सुन्दर रीति से किया कि ये सग्रह आज भी अतीव लोकप्रिय हैं। यह स्मरणीय है कि, स्थानकवासी समाज मे प्रवचनो का सकलन आपश्री के मार्मिक प्रवचनो को श्रवण करने के बाद ही प्रारम्भ किया था। यहा पर आचार्यश्री की जन्म जयन्ति एव दीक्षा स्वर्ण जयन्ति भी मनाई गई। आपश्री की ५० वर्ष से सुदीर्घ सयम साधना की स्वर्ण जयन्ति मनाने के उपलक्ष्य मे जैन गुरुकुल व्यावर सहित कई स्थानो पर महोत्सव आयोजित किये गये।

आचार्यश्री के घुटने मे फिर दर्द शुरु हो गया और दिनाक ३०-५-१९४२ ई० को स्वाध्याय करते हुए आपश्री पर पक्षाघात ने आक्रमण कर दिया। ऐसी शारीरिक स्थिति मे क्षमा का व्यापक पैमाने पर आदान-प्रदान हुआ। पूज्यश्री के जीवन मे जब विविध व्याधियो का हमला होने लगा और शरीर उनका सामना करने मे असमर्थ रहने लगा और लम्बे जीवन की सम्भावना न रही तब आपने प्राणी मात्र से क्षमायाचना कर लेना उचित समझा। कौन जाने, कब, क्या स्थिति हो? क्षमायाचना का सुअवसर मिले या न मिले? अतएव पहले ही अपना हृदय पूर्ण रूप से विशुद्ध रखना उचित है। इस प्रकार विचार करके पूज्यश्री ने ता १८-६ ४२ के दिन नीचे लिखे आशय के उद्गार प्रकट किए—

(१) साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध श्रीसघ से मैं अपने अपराधो के लिए अन्त करणपूर्वक क्षमायाचना करता हू।

(२) मेरा शरीर दिन प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है। जीवन–शक्ति उत्तरोत्तर घट रही है। इस बात का कोई भरोसा नही है कि इस भौतिक शरीर को छोडकर प्राण पखेरू कब उड जाय। ऐसी दशा मे जब तक ज्ञान शक्ति विद्यमान है, भले–बुरे की पहिचान है तब तक ससार के सभी प्राणियो से, विशेषतया चतुर्विध श्रीसघ से क्षमा याचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हू। मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करें।

(३) मेरी अवस्था ६७ वर्ष की है। दीक्षा लिए भी पचास वर्ष से अधिक हो गए हैं। इस समय मे मेरा चतुर्विध सघ से विशेष सम्पर्क रहा है। स १९७५ मे श्रीसघ ने तथा पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज साहेब ने सम्प्रदाय के शासन का भार मेरे निर्बल कन्धो पर रख दिया था। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के समान प्रतापी महापुरुष के आसन पर बैठते हुए मुझे अपनी कमजोरियो का अनुभव हुआ था, फिर भी गुरु महाराज तथा श्रीसघ की आज्ञा का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझकर मैंने उस आसन को ग्रहण कर लिया। इसके बाद शासन की व्यवस्था के लिए मैंने समयोचित बहुत से परिवर्तन और परिवर्द्धन शास्त्रानुसार किए हैं। सभव है इनमे से कुछ बातें किसी को गलत अथवा बुरी लगी हो, मैं इनके लिए सभी से क्षमा मागता हू।

(४) मैं साधु वर्ग का विशेष क्षमा प्रार्थी हू । उनके साथ मेरा गुरु और शिष्य के रूप मे, शासक और शास्य के रूप मे, सेव्य और सेवक के रूप मे तथा दूसरे कई प्रकारो से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है । मैंने शासनोन्नति के लिए, ज्ञान, दर्शन और चारित्र की रक्षा के लिए, सगठन वृद्धि के लिए शास्त्रानुमोदित कई नियमोपनियम बनाए हैं, जिन्हें मुनियो ने सदा वरदान की तरह स्वीकार किया है । फिर भी यदि मेरे किसी वर्ताव के कारण किसी मुनि के हृदय को चोट लगी हो, उन्हे किसी प्रकार का कष्ट पहुचा हो तो मैं उसके लिए बार-बार क्षमा-याचना करता हू । मेरी आत्मा की शाति और निर्मलता के लिये वे मुझे क्षमा प्रदान करें । इसी तरह जो मेरे द्वारा क्षमा के उत्सुक है उन्हे भी मैं अन्त करण पूर्वक क्षमा प्रदान करता हूं । मैंने अपनी आत्मा को स्वच्छ एव निर्वैर बना लिया है ।

(५) अपनी सम्प्रदाय का सचालन करने और सामाजिक व्यवस्था करने के लिये मुझे दूसरी सम्प्रदाय के आचार्य तथा बहुत से स्थविर मुनियो के सम्पर्क मे आना पडा है । किसी-किसी बात पर मुझे उनका विरोध भी करना पडा है । उस समय बहुत सम्भव है, मुझसे कोई अनुचित या अविनय-युक्त व्यवहार हो गया हो, मैं अपने उस व्यवहार के लिए उन सभी से क्षमा मांगता हू । मेरी प्रार्थना पर ध्यान देकर वे सभी आचार्य तथा स्थविर मुनि मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा करें ।

(६) मैं जिस बात को हृदय मे सत्य मानता हू उसी का उपदेश देता हू । बहुत से व्यक्तियो से मेरा सैद्धातिक मतभेद भी रहा है । सत्य का अन्वेषण करने की दृष्टि से उनके साथ चर्चा वार्ता करने का प्रसंग भी बहुत बार आया है । यदि उस समय मेरे द्वारा किसी प्रकार प्रतिपक्षियो का मन दुखा हो, उन्हे मेरी कोई बात बुरी लगी हो तो उसके लिए मैं हार्दिक क्षमा चाहता हू । मेरा उसके साथ केवल विचार भेद ही रहा है । वैयक्तिक रूप से मैंने उन्हें अपना मित्र समझा है और अब भी समझ रहा हू । आशा है वे मुझे क्षमा प्रदान करेंगे ।

(७) मैंने जो व्याख्यान दिए हैं उनमे से मण्डल ने कई-कई चातुर्मासो के व्याख्यानो का सग्रह कराया है । इस विषय मे मेरा कहना है कि जिस समय जो-जो मैंने कहा है वह जैन आगमो और निर्ग्रन्थ प्रवचनो को दृष्टि मे रखकर कहा है । यह बात दूसरी है कि समय के परिवर्तन के साथ-साथ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार विचारो मे भी परिवर्तन होता रहता है । फिर भी मैं छद्मस्थ हू । मुझमे भूल हो सकती है । मैं सत्य का गवेषक हूं । सभी को सत्य ही मानना चाहिए । असत्य के लिए मेरा आग्रह नही है मुझे अपनी बात की अपेक्षा सत्य अधिक प्रिय है ।

(८) मेरी शारीरिक अशक्ति के बाद और पहले जो साधु मेरी सेवा मे रहे हैं । उन्होने मेरी सेवा करने मे कुछ भी बाकी नही रहने दिया । अपने कष्टो को भूलकर वे प्रत्येक समय प्रत्येक प्रकार से मेरी सेवा मे तत्पर रहे हैं । स्वय सर्दी, गर्मी, भूख एवं प्यास के परिषहो को सहकर भी उन्होने मेरी सेवा का ध्यान रखा है इसके लिए मैं उनकी सेवा का हार्दिक अनुमोदन करता हू । उनके द्वारा की गई सेवा का आदर्श नवदीक्षितो के लिए मार्गदर्शक बनेगा ।

(९) लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैंने साम्प्रदायिक शासन का भार युवाचार्यश्री गणेशीलालजी को सौंप रखा है। उन्होने जिस योग्यता परिश्रम और लगन के साथ इस कार्य को निभाया और निभा रहे हैं, वह आपके समक्ष है। मुझे इस बात का परम सन्तोष है कि युवाचार्यश्री गणेशीलालजी ने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का पूर्ण अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और कार्य अच्छी तरह सम्भाल लिया है। साथ मे इस बात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्रीसघ ने भी इनको श्रद्धापूर्वक अपना आचार्य मान लिया है। इनके प्रति आपकी भक्ति तथा आप सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे और इसके द्वारा भव्य प्राणियो का अधिकाधिक कल्याण हो, यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है।

(१०) सज्जनो, जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। ससार में जन्म-मरण का चक्र चलता ही रहता है। यह शरीर तो एक प्रकार का चोगा है। जिसे प्राणी स्वय माता के गर्भ मे तैयार करता है और पुराना होने पर छोड देता है। पुराने चोगे को छोडकर नए-नए चोगे पहिनते जाना जीव के साथ अनादि काल से लगा हुआ है। इसमे हर्ष या विषाद की कोई बात नही है। हर्ष की बात तो हमारे लिए तब होगी जब इस चोगे को इस रूप मे छोडेंगे कि फिर नया न धारण करना पडे। वास्तव मे नवीन चोगे का धारण करना ही बन्धन है और उसे उतारना छुटकारा है। जब यह चोगा हमेशा के लिए छूट जाएगा वही मोक्ष है। अत यह चोगा छूटने पर भी आत्म-समाधि कायम रहे, यही मेरी भावना है।

(११) अन्त मे मैं यही चाहता हू कि मैंने ससार त्याग करके भगवती दीक्षा स्वीकारी है। उसकी आराधना मे जो अब तक किया है उसमे मेरी शारीरिक या मानसिक स्थिति कैसी भी रहे भग न हो। उसमे प्रतिदिन वृद्धि हो और मैं आराधक बना रहू।

पूज्यश्री के यह उद्‌गार व्याख्यान मे सुनाए गए। श्रोताओ के हृदय गदगद हो उठे। अनेको की आखो ने अश्रु बहाकर उनका अभिनन्दन किया। व्याख्यान सभा मे अनोखी शान्ति छा गई। विषाद फैल गया। महान सत की इस सात्विक वाक्यावली मे उनके जीवन की साधना का सार था। उन्होने क्षमायाचना करके जो आदर्श और उपदेश उपस्थित किया, वह उनके समस्त उपदेशो का कलश कहा जा सकता है। इस परोक्ष उपदेश मे जो शक्ति है, वह किसका हृदय नही हिला देती ?

इधर लकवे की बीमारी पूरी तरह दूर भी नही हो पाई थी कि कमर के पीछे बाईं ओर जहरीला फोडा हो गया। फोडे के कारण दुःसह वेदना होती थी फिर भी आपश्री की सहनशीलता आदर्श थी। बीकानेर की चीफ सर्जन डॉ०एले ने ऑपरेशन की सलाह तो दी लेकिन जीवन बचने की गारटी नहीं दी। अन्त मे फोडा बिना ऑपरेशन के ही फूट गया और छ महीने मे बिलकुल साफ भी हो गया, किन्तु कमजोरी बहुत बढ गई। आपश्री का वि स १९९९ का चातुर्मास भी भीनासर मे ही हुआ किन्तु जब आपश्री की गर्दन पर भयानक फोडा निकल आया तथा सारे शरीर पर छोटे-छोटे फोडे उठ आये काफी उपचार किया गया किन्तु डॉक्टरों को निराशा ही मिली। आषाढ शुक्ला अष्टमी को निराशाजनक शरीर स्थिति मे निर्देशानुसार

आपको तिविहार संथारा करा दिया गया । उस समय पूज्यश्री की प्रशस्त भावना उनके सौम्य शात और सात्विक चेहरे पर झलक रही थी । उनके मुख मडल पर एक अलौकिक आभा-अपूर्व ज्योति चमक रही थी । युवाचार्यश्री ने तब आपश्री को चौविहार सथारा करा दिया । उसी दिन आषाढ शुक्ला अष्टमी को ही सायकाल ५ बजे सूर्य के समान तेजस्वी जवाहराचार्य की सशक्त आत्मा ने अपने दुर्बल शरीर के बन्धन को त्याग कर स्वर्ग की ओर महाप्रयाण कर दिया । अन्तिम समय में सबके सामने आलोचना एव प्रायश्चित की क्रिया सम्पन्न करा दी थी ।

स्वर्गारोहण के समाचार फैलते ही अंतिम दर्शन के लिए अपार भीड उमड पडी । सारे देश मे बिजली की तरह खबर फैली और शोक सागर लहराने लगा । सहस्रो श्रावक-श्राविकाए एव अन्यान्य भक्त इस आघात को बिना अश्रुविगलित हुए सह न सके । दूसरे दिन सर्वप्रथम युवाचार्यश्री गणेशीलालजी म सा को चतुर्विध सघ के समक्ष आचार्य पद की चादर ओढाने की क्रिया विधिपूर्वक की गई । फिर निश्चित समय पर पूज्यश्री का शव स्वर्णमडित रजत विमान मे विराजमान किया गया तथा जय-जयकारो के साथ श्मशान यात्रा आरम्भ हुई । आगे-आगे बीकानेर महाराजा की ओर से भेजे हुए नगाडा, निशान और बैंड था । उनके पीछे पूज्यश्री के यशोगीत गाती हुई भजन मडलिया चल रही थीं । फिर विमान था और विमान के पीछे गाते रोते अगणित पुरुष महिलाओ का विशाल सैलाब । सबसे पीछे उछाल करने के लिये ऊटो पर सवार चल रहे थे । धरती रुपयो से बिछ गई । श्मशान मे चन्दन घी, कपूर, खोपरा आदि सुगधित पदार्थों से विमान सहित जब पूज्यश्री के पार्थिव शरीर का अग्नि सस्कार किया गया तो हजारो आखे बरस पडी ।

सारा देश शोक सागर में डूब गया और अर्पित हुए अपार श्रद्धा सुमन—

पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा. के स्वर्गवास से सारे देश के विभिन्न श्रीसघो मे ही नहीं अन्यान्य जातियो के समाजो मे भी शोक का समुद्र उमड आया । आपश्री के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करने के लिये सैंकडो ग्राम नगरो मे सभाए हुई, बाजार बन्द रखे गये तथा शुभ प्रवृत्तिया शुरू की गई ।

बम्बई मे पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिये मेयर-बाजार दाणा बन्दर, धाया बाजार आदि कई प्रमुख बाजार बन्द रहे । वहा नप्पुहाल, माटुगा मे विशाल शोक सभा आयोजित हुई, जिसमे प मुनिश्री विनयऋषिजी म.सा , मुनिश्री मोहनऋषिजी म सा , महासतीश्री उज्ज्वलकुंवरजी म सा आदि द्वारा पूज्यश्री के गुणगान करते हुए उनके प्रति विनम्र श्रद्धाजलि अर्पित की गई । कान्फ्रेंस के मत्री श्री चिमनलाल पोपटलाल शाह ने भावभरा शोक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जो सर्वसम्मति से पारित किया गया । बम्बई के सिवाय पजाब, मारवाड मेवाड, मालवा, महाराष्ट्र सौराष्ट्र आदि प्रान्तो मे शोक सभाए आयोजित कर लोगो ने आपश्री के प्रति अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये ।

पूज्यश्री के प्रति मुनियो, राज्यवर्गीय पुरुषो एव प्रतिष्ठित व्यक्तियो द्वारा श्रद्धांजलियो के रूप मे जो अपार सुमन अर्पित किये गये, उनकी कुछ महकती हुई पखुडिया पाठकों के हृदय को सुवासित करने हेतु यहा अ कित की जा रही हैं:—

१ प्रभावक पूज्यश्री—ऋषि सम्प्रदाय के आचार्य प रत्न पूज्यश्री आनन्द ऋषिजी महाराज-

"शास्त्र विशारद जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साधुमार्गी समाज में जवाहर के नाम से चमक रहे हैं। इन प्रभावक पूज्यश्री के समान धुरन्धर विद्वान्, प्रतिभा सम्पन्न वक्तृत्व शक्ति धारक, सुपरिश्रमी और सुलेखक जवाहर अपने समाज मे अनेक उत्पन्न होकर जैन धर्म की उन्नति करे, ऐसी शुभाकाक्षा रखता हू।"

२ पूज्य परिचय—पूज्यश्री रत्नचन्द्रजी महाराज की सम्प्रदाय के आचार्य प प्रवर पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज—

"पूज्यश्री धीर, वीर और प्रभावक तथा प्राचीनता का न्याय युक्ति से शोधन करने वाले थे। आपकी उपदेश शैली स्था समाज मे आदर्श समझी जाती है। आपके प्रवचन क्रातिकारी एव सुधारणा के विचारको के लिये रहते हैं। इन उपदेशो ने जिस सम्प्रदाय के आप आचार्य हैं, उसमे ही नही किन्तु समाज मे क्राति की लहर उत्पन्न कर दी है।"

३, एक महान ज्योतिर्धर—जैनाचार्य पूज्यश्री पृथ्वीचन्द्रजी महाराज -

"पूज्यश्री की कौनसी विशेषताए वर्णित की जाय और कौनसी नही—यह चुनाव ही अटपटा जान पडता है। पूज्यश्री वर्तमान जैन ससार के एक महान ज्योतिर्धर महापुरुष हैं अत. उनका महान जीवन कलम के नीचे नही अब आ सकता है न कभी आ सकेगा।"

४ स्था० सम्प्रदाय के सितारे—मुनिश्री प्राणलालजी महाराज—

'पूज्यश्री महान पुण्यशाली और प्रभावशाली हैं। हम जब जेतपुर मे शास्त्रज्ञ श्री पुरुषोत्तमजी स्वामी के साथ आपसे मिले थे तब सिर्फ चौदह दिन के अल्प समागम मे ही हमे अनुभव हुआ कि पूज्यश्री स्वशास्त्र और परशास्त्र दोनो मे अतीव कुशल हैं। वे स्थानकवासी सम्प्रदाय के सितारे की तरह चमक रहे हैं। (गुजराती से अनुवाद)

५ आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज का युग प्रधानत्व—जैन धर्म दिवाकर उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचन्दजी महाराज—

"महामहनीय आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज उन महापुरुषो मे से हैं जिन्होंने अपने जीवन की अमर ज्योति जलाकर जैन सस्कृति के महान् प्रकाश से ससार को प्रकाशित कर दिया है। आप जिधर भी गये उधर ही ज्ञान दीपक का प्रकाश फैलाते गये जनता के बुझे हुए हृदय दीपको मे ज्ञान प्रकाश का सचार करते गये और शास्त्रोक्त 'दीव समा आयरियो' के सिद्धान्त को पूर्ण सत्य के रूप मे चमकाते गये। आपका युग प्रधान व्यक्तित्व सदा अमर रहेगा।

६. उज्ज्वलरत्न–पूज्यश्री जयमलजी म की सम्प्रदाय के प प्रवर मुनिश्री मिश्रीलालजी म

'पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज अपनी समाज के उज्ज्वल रत्न हैं। आपके अध्ययन में गम्भीरता, भावो मे विशदता व विचारों मे विशालता थी। यही नही आपका वक्तृत्व भी प्रभावशाली, विशुद्ध, व्यापक और युगानुसारी था। भाषा मे सरलता, सयमता और अलकृति थी। शैली प्रवाहमयी रसोद्भिन्न और प्रौढ थी।"

७ जीवन झाकी–प्रवर्तिनी महासतीश्री उज्ज्वलकवरजी–

"स्वय पूज्यश्री वर्तमान समाज मे जैन समाज का गौरव बढाने वाले एक वैज्ञानिक थे। इनकी वाणी हमे महारम्भ (यत्रवाद) की सत्यानाशी प्रवृत्ति से बचाकर अल्पारम्भ (गृह उद्योग) की प्रवृत्ति की ओर ले जाने वाली है, इसलिये स्तुत्य है।

८ व्याख्यानो की गहरी छाप–महाराजा साहेब श्री लाखाधिराज बहादुर एस बी ई, के ई एस आई, एल एल डी, मोरवी नरेश–

'पूज्यश्री के व्याख्यानो मे जैन धर्म की व्यापकता, सस्कारिता एव उदारता व्यक्त होती थी। जैन तत्वो के विषय मे आपश्री के कई मधुर व्याख्यान हमने सुने, जिनकी हमारे ऊपर बहुत गहरी छाप पडी है। पूज्यश्री की तलस्पर्शी विद्वत्ता, समन्वय शैली और किसी को भी कडवी न लगे फिर भी हितकर सत्य एव सरल पद्धति से हमको बहुत सतोष होता था।"

(गुजराती से अनुवाद)

९ यथानाम तथा गुण–श्रीमान ठाकुर दीपासिहजी साहेब वीरपुर नरेश—

"पहली बार महाराज साहब का प्रवचन पाच मिनिट सुनने के बाद ही मन मे छाप पडी कि आप यथा नाम तथा गुण है। वे भारतवर्ष के एक जवाहर थे।" (गुज से अनुवाद)

१०. उत्तम चरित्र एव ऊचा ज्ञान—हिजहाईनेश महाराणा राजा साहेब बहादुर श्री बीकानेर नरेश—

"हमें पूज्यश्री के प्रवचन सुनने का लाभ मिला था जो बहुत सुन्दर और आकर्षक थे। आपश्री के उत्तम चारित्र, ऊचे ज्ञान एव सरल स्वभाव की हम पर गहरी छाप पड़ी है।"

(गुजराती से अनुवाद)

११ सदुपदेश जीवन मे उतारें–श्रीमाल देव राणा साहब पोरबादर—

"पूज्यश्री के उदार हृदय मे किसी भी प्रकार का धार्मिक भेदभाव न होकर समभाव की विशाल दृष्टि थी। आप प्राणी मात्र का कल्याण करने हो इस भावना से उपदेश देते थे। आपश्री का जीवन धन्य है। आपश्री के सदुपदेशो को हम जीवन में उतारें तभी मानव जीवन को सार्थक कर सकेंगे।

(गुजराती से अनुवाद)

१२ महान दार्शनिक–सर मनुभाई मेहता, नाईट, सी एम आई, फोरेन एण्ड पोलिटिकल मिनिस्टर, ग्वालियर, भूतपूर्व प्रधानमन्त्री बड़ोदा व बीकानेर—

"स्वामी जवाहरलालजी एक महान दार्शनिक थे। उनमे तत्वो को ऐसी सरल भाषा मे प्रकट करने की कला थी जिसे साधारण जनता भी आसानी से समझ लेती। देश के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो मे रहे हुए सत्य के प्रति आपके उदार, सहानुभूतिपूर्ण विचार थे। विवाद पर चर्चा वाले विषय को सहनशीलता व न्याय के साथ प्रकट करने का आपका ढंग बहुत प्रशंसनीय था। - (अग्रेजी से अनुवाद)

१३ जैन शास्त्रो का विशाल ज्ञान–दीवान बहादुर विशनदासजी नाहर, जम्मू—

"पूज्यश्री के साथ वार्तालाप करने के जो थोड़े से अवसर मुझे प्राप्त हुए उनमे उनके जैन शास्त्रो सम्बन्धी विशाल ज्ञान का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा।" (अग्रेजी से अनुवाद)

१४ महान आत्मा–श्री त्रिभुवनदास जे राजा चीफ मिनिस्टर रतलाम—

"महाराज श्रीजवाहरलालजी महान उपदेशक ही नही किन्तु महान आत्मा भी थे। आपकी सहानुभूति जैन साधु सस्था या सिद्धान्तो तक ही सीमित नही थी किन्तु उनके बाहर भी दूर तक फैली हुई थी। (अग्रेजी से अनुवाद)

१५ नेता धर्माचार्य तथा मित्र–राव साहेब अमृतलाल टी. मेहता बी ए एल एल बी भू पू दीवान पोरबन्दर, लीमडी और धर्मपुर स्टेट—

"पूज्यश्री की विद्वत्ता, भाव प्रवणता, वाग्धारा एव अभिव्यजना की सरसता ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। अपने अनुयायियो के हित की तीव्र भावना से प्रेरित होकर वे सामाजिक कार्यों मे बडी रुचि लेते थे। इसीलिये लोग आपको अपना नेता, धर्माचार्य तथा मित्र मानते हैं, जिसके कि आप पूर्ण अधिकारी हैं।" (अग्रेजी से अनुवाद)

१६ अनुशासित जीवन–राव साहेब माणेकलालजी सी. पटेल, रिटायर्ड डिप्टी पालिटिकल एजेन्ट, डब्ल्यू आई.एस एजेन्सी—

"पूज्यश्री की हृदय विशालता से भरी हुई सार्वजनिक नैतिकता के साथ-साथ जीवन के अनुशासन पर जोर देते थे, उनमे उदार हृदयता से परिपूर्ण सार्वजनिक नैतिकता तथा अनुशासित जीवन की छाप रहती थी।" (अग्रेजी अनुवाद)

१७ जगत्गुरु के समान– जनाब अब्दुल गफूर, नूर मोहम्मद बलोच, कामदार, मरिमाणा स्टेट, जूनागढ—

"मेरे जैसे एक मुस्लिम श्रोता के मन मे पूज्यश्री की वाणी श्रवण करने से धर्म भावनाए उत्पन्न हुईं। उनके महाज्ञान के प्रलाप से लाखो मनुष्यो का कल्याण हुआ है, हो रहा है और होगा। जन समाज यह बात भूल नही सकता। वास्तव मे वे जगद्गुरु के समान थे। (गुजराती से अनुवाद)

१८ वाणी की प्राभाविकता—दानवीर खा साहेब होरम शाह कुवरजी चौधरी (पारसी) भवन निर्माता राजकोट—

'पूज्यश्री की विद्वत्ता जो उनके हृदय में प्रज्ञारूप से प्रस्फुटित हुई उनके स्वय के जीवन मे भी उतरी हुई थी। इसीलिये आपकी वाणी का जनता की आत्मा पर शिक्षा रूप मे प्रभाव पडता था।" (गुजराती से अनुवाद)

१९ एक पुण्य स्मरण—राजरत्न सेठ मचर शाह हीरजी भाई वाडिया पोरबन्दर—

"आपके दर्शन किये पाच वर्ष जल्दी से बीत गये किन्तु आपका पुण्य स्मरण मानस देश मे सदा जीवन्त रहेगा। (गुज० से अनुवाद)

२० महान विभूति—मेहता तेजसिंहजी कोठारी, बी ए एल एल बी कलेक्टर उदयपुर—

"जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज २२ सम्प्रदाय या जैन समाज मे ही नही किन्तु ससार की इनी-गिनी उच्च कोटिक की महान आत्माओ मे से एक महान आत्मा, जीती जागती तपश्चर्या की सजीव मूर्ति एव धर्म की एक महान विभूति थे।"

२१ दीप्त साधु जीवन—डॉ प्राणजीवन माणिकचन्द मेहता, एम डी एम एस ,एफ सी.पी. एस चीफ मेडिकल आफिसर, नवानगर स्टेट—

'महाराज श्री जवाहरलालजी पचम आरे मे जैन धर्म आभूषण रूप थे। जैन धर्म की ज्योति प्रकाशित रखने के लिये आपने यावत् जीवन उच्चतम चारित्र का पालन किया एवं लोकोपयोगी पद्धति से जनता को उपदेश दिया। सहस्रो जीवो को सन्मार्गी बनाकर स्वकीय साधु जीवन दीप्त किया है।"

२२ ईश्वरीय सत्य के समान—श्री इन्द्रनाथजी मोदी, बी ए.एल एल बी. एडवोकेट जोधपुर—

'पूज्यश्री का असाधारण व्यक्तित्व और उससे भी बढकर जैन धर्म के सिद्धातो का युक्तियुक्त प्रतिपादन, आधुनिक जीवन की ज्वलत समस्याओ पर निर्भय विचार और सबसे अधिक स्वर्गीय विश्व प्रेम से परिपूर्ण आपके उपदेश मेरे लिये ईश्वरीय सत्य के समान थे।"

२३ आदर्श उपदेशक—श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह, महामंत्री श्री जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस, बम्बई—

आपश्री बताते थे कि जैन धर्म मे वर्ग धर्म जाति भेद और अस्पृश्यता का कोई स्थान नहीं है। यह सुनकर ठक्कर बापा को बहुत सतोष हुआ। वे आदर्श उपदेशक थे।"

(गुजराती से अनुवाद)

२४. स्पष्ट राष्ट्रीय दृष्टिकोण—प्रसिद्ध देशभक्त श्रीमान सेठ पुनमचन्दजी राका (येवोर जेल से)

"पूज्यश्री को मैंने राष्ट्रीय दृष्टिकोण से देखा और समझा । मैंने उनको जो कुछ समझा वह ठीक है या नही इसलिये महात्मा भगवान दीनजी तथा सेठ जमनालालजी बजाज को पूज्यश्री से मिलाया । हम तीनो का एक मत रहा ।"

२५ तेजस्विता और स्निग्ध शान्ति—धर्म भूषण दानवीर सेठ भैरोदानजी सेठिया, बीकानेर-

"पूज्यश्री का मेरा सम्पर्क बहुत पुराना है । युवा तपस्वी की उग्र तेजस्विता मैंने उनके चेहरे पर देखी थी वह धीरे-धीरे सौम्य, स्निग्ध शाति मे कैसे परिवर्तित हो गई ? यह मैं जब आज सोचता हू तो हृदय पुलकित हो उठता है । मुझे लगता है कि उन्होने जीवन के इस परम सत्य को किस अच्छी तरह अवगत कर लिया था कि मानव जीवन कुशा की नोक पर रखी हुई ओस की उस बूद की तरह है जो क्षण भर मे अपने अस्तित्व से रहित हो जायेगी। इसीलिये काया के मोह को उन्होने छोड दिया था ।"

२६ हृदयस्पर्शी उपदेश—श्रीयुत प शोभाचन्द्रजी भारिल्ल ब्यावर—

'धर्म प्रवृत्ति और निवृत्ति रूप है । अहिंसा निवृत्ति भेद है पर उसकी साधना, विश्वमैत्री और समभावना को जागृत करने रूप प्रवृत्ति से होती है । इसी से अहिंसा व्यवहार्य बनती है किन्तु हमे प्राय जीवघात न करना सिखाया जाता है, पर जीव घात न करके उसके बदले करना क्या चाहिये इस उपदेश की ओर उपेक्षा बताई जाती है । आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा के उपदेशो ने इस त्रुटि को पूर्ण किया था । उन्होने धर्मको व्यवहार्य,सर्वांगीण और प्रवर्तक रूप देने की सफल चेष्टा की थी ।"

२७ क्रातिकारी धर्म गुरु-श्रीबालेश्वर दयालजी, सस्थापक एव सचालक डूगरपुर विद्यापीठ-

"अहकार, अनीति वृथाडम्बर और पाखड के वातावरण मे पली भ्रष्टोन्मुख सतति को आपने धर्म की मूल बातो का वास्तविक अर्थ दिया और भारत के विविध स्थानो मे उत्तर से दक्षिण तक घूमकर कुमार्गगामियो को प्रबल तर्क से परास्त कर विचार पूर्ण कई ग्रन्थो की रचना की ।"

२८ व्यापक दृष्टिकोण—बाबू मस्तराम जैनी एम ए, एल एल.बी अमृतसर—

"एक ओर सभी की इस प्रकार की भक्ति और अनुशासन तथा दूसरी ओर गम्भीर सूक्ष्म दृष्टि, ज्ञान, पवित्रता, तपस्या, उच्च आदर्श, सुसगत और समतुल विचार तथा व्यापक दृष्टिकाण एक ऐसा मेल है जो भाग्य से बहुत ही विरल महापुरुषो मे उपलब्ध होता है ।"

२९. जैन समाज का जवाहर—प्रो केशवलाल हिम्मतराय कामदार, एम ए. बडौदा—

"मुझे स्थानकवासी, मूर्ति पूजक और दिगम्बर साधुओ का थोडा बहुत परिचय है। उनके उपदेश भी मैंने कई बार सुने हैं । कइयो के साथ मेरा गहरा सम्पर्क भी है । इस सम्पूर्ण साधु मण्डल मे मुझे श्री जवाहरलालजी महाराज उच्चकोटि के साधु प्रतीत हुए हैं ।

(गुजराती से अनुवाद)

३० राष्ट्रीय सन्त–कुमारी सविता बेन मणिलाल पारेख, बी ए राजकोट—

पूज्यश्री एक राष्ट्रीय विचारो के सत है । वे भारत और भारतीयो के कल्याण की आकाक्षा रखते थे । वे गाधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम को बहुम महत्व देते थे । राजकोट में गाधीजी और वल्लभभाई पटेल के साथ उनकी जो मुलाकात हुई थी, उससे स्पष्ट मालूम पडता है कि वे राष्ट्रीय सत थे ।"

३१ जीवनकला का दिव्य दान–श्री शातिलाल वनमाली सेठ जैन गुरुकुल व्यावर—

"पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा. एक साधक महात्मा थे । ५१ वर्ष जितनी सुदीर्घ सयमी जीवन की सतत साधना ने उनको धर्म जीवन के कुशल कलाकार और स्थाविर कर्णधार धर्मनायक बना दिया था ।

३२ हिन्द के धर्मगुरु और क्राति–सौराष्ट्र राष्ट्रनायक, राजकोट सत्याग्रह सेनानी श्री उच्छगराम नवलराम ढेबर–

"श्रीमद् जवाहरलालजी महाराज का प्रभावशाली व्यक्तित्व, उनका सिद्धासन, उनका अस्खलित वाणी प्रवाह, आध्यात्मिक विषयो की चर्चा करते समय भी श्रोताओ की मर्यादा और धर्म प्रवक्ता के रूप मे अपने दायित्व का ऊचा ख्याल, इन मर्यादाओ सहित व्यवहार शुद्धि का भार, अहिसा के आचार रूप मे खादी को अपनाने दरिद्रनारायण की सेवा करने एव राष्ट्र भावना का विकास करने की और सर्वथा जीवन को स्वाश्रयी बनाने का उनका आग्रह उनकी क्रातिकारिता के परिचायक हैं ।" (गुज से अनुवाद)

३३ धर्माचार्य जवाहर–श्री इन्द्रचन्द शास्त्री एम ए शास्त्राचार्य, वेदान्त वारिधि, न्यायतीर्थ प्रो वैश्य कॉलेज, भिवानी—

"जीवन के आन्तरिक रहस्य को खोज कर ससार के सामने रखना, महान आत्माओ का सबसे बडा कार्य होता है । जो व्यक्ति सर्वप्रथम उस रहस्य को अभिव्यक्त करता है उसे अवतार कहा जाता है । जो उसे सगीतमय बना देता है, वह महाकवि है । जो उसके लिये युद्ध करता है वह नेता है । जो उसके लिये साधना करता है, वह तपस्वी है । जो उसे जनता मे फैलाता है, वह उपदेशक है । पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा सच्चे धर्माचार्य थे जिनमे इन सब गुणो का सम्मिश्रण होता था ।"

३४ प्रखरतत्व वेत्ता–श्री भेवरचन्द्र बाठिया 'वीरपुत्र' जैन न्याय व्याकरण तीर्थ सिद्धान्त शास्त्री बीकानेर—

'परम प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी म.सा जैन समाज की ही विभूति नही अपितु विश्व विभूति थे । उनमे ऐसे अनेक गुण विद्यमान थे जिनके कारण वे विश्व विभूति बन गये थे । वे प्रखर तत्ववेत्ता सच्चे महात्मा, महान योगी, कुशल उपदेशक, प्रकाड विद्वान, अद्भुत त्यागी, कठोर तपस्वी और सयमी थे ।"

३५. भारत मे जवाहर एक नही दो--श्री सम्पादक, दैनिक गुजराती पत्र "फूल छात्र" राणपुर काठियावाड--

भारत मे जवाहर एक ही नही दो हैं--एक राष्ट्रनायक और दूसरा धर्मनायक। युक्त प्रात से लेकर सौराष्ट्र की सीमा तक जिनकी सुवास महक रही है, वे जैन मुनि श्री जवाहरलाल जी दो एक वर्ष से काठियावाड मे विचरे, वे प्रामाणिक, निडर और निर्मल सत थे। अपनी क्रिया के विषय मे पक्के जैन होते हुए भी वे राष्ट्रवाद के उपासक थे। गाधीजी मालवीयजी, तिलक सबसे उनका मिलन हुआ है। गीता पर भाष्य मे जैन धर्म सम्बन्धी स्व लोकमान्य की भूल प्रमाणित करके देने पर लोकमान्य ने उसे सुधारना स्वीकार किया था।

राजपूताना के हजारो जवाहर भक्त केवल मुनिश्री की खादी प्रशसा पर खादीधारी बने हैं। वे सुधारक चिन्तक, दर्शक, पूर्ण क्रियानिष्ठ एव वैराग्य के उपासक थे। वे अनेक युक्तियो से और आधि व्याधि से मुक्त करने वाली नित्य नई नूतनता पूर्वक अपनी समर्थवाणी द्वारा ससारियो को ससार और धर्म के रहस्य को समझाते थे।

(१३ मई १९३८ ई०)

३६. चारित्र रथ के रथी—श्री सम्पादक "साप्ताहिक पत्र" स्थानकवासी जैन अहमदाबाद-

जवाहराचार्य ज्ञान और क्रिया के चक्रो से चारित्र रथ को अग्रसर करते हुए आधी शताब्दी से जनता की अनन्य सेवा बजाकर स्वर्गवासी हुए।



परिशिष्ट-१

आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा. के स्वर्गवास पर समर्पित पद्यमयी श्रद्धांजलियो के कुछ चुने हुए अंश

१. श्रद्धांजलि– प श्री गजानन्द शास्त्री रतनगढ ।

दिव्य धर्म दिवाकर कलियुगे व्याप्तेऽपि, विद्योतमान
पाखड परिखडयन् प्रतिदिन समण्डयन सज्जान् ।
कारुण्य समुपा'दशश्च निरत विद्या परावर्धयन्,
श्री जैनेन्द्रजवाहर यतिवरो जीव्याज्जगत्या चिरम् ।।

२. जय जवाहरलाल की—श्री तारानाथ रावल निज जन्म से जिस साधु वर ने जैन जाति निहाल की । हो, पूज्यश्री आचार्य मुनिवर, जय जवाहरलाल की ।

वर देह मे वह देव था, सिद्धान्त का वह भक्त था ।
व्यवहार मे वह दक्ष था, कर्तव्य पर आसक्त था ।
उसमें समा चातुर्य था, वह वाकपटुता का धनी ।
अति ओजवाणी मे भरा था, शान उसकी थी घनी ।
उसकी तपस्या सफल थी सम्पूर्ण थी, निष्काम थी ।
उपदेश, प्रवचन, वाणिया अनमोल थी, अभिराम थी ।
सयम सफल, सद्गुण सदन सद्भाव सद्म सुजान था ।
आचार्यवर निज जाति का गौरव तथा अभिमान था ।
सर्वस्व त्यागी, निराभिमानी ब्रह्मचारी सत था ।
तार्किक प्रवर उसका तथा विद्या विलास अनन्त था ।
गुण गण रसिक, सद्धर्म दस लक्षण प्रचारक धीर था ।
पडित प्रवर प्रतिभा प्रसिद्ध प्रबुद्ध पूजित वीर था ।
था दयानन्द महर्षि, नूपर था कि जैन समाज में ।
अवधूत पूत सदा निरत था लोक सेवा काज में ।
वह एक अन्तर्बाह्य था, उसमें न छल का लेश था ।
श्रोता समूह विमुग्ध कर, उस साधु का वर वेष था ।

३. ओ समाज के कर्णधार—श्री मुनीन्द्रकुमारजी जैन ।

ओ समाज के कर्णधार, ओ बुझते दीपक की आशा ।
तुमने भी बुझकर दिखलाया जग है एक तमाशा ।
किन्तु तुम्हारे बुझने ने जग अधकार मे डाला ।
हम सबकी छाती मे मानो चुभा दिया है भाला ।
जगमग हीरे जैन जगत के, जैन जनो के सेनानी ।
लाखो की आखो से तुमको क्या ढुलकाया था पानी ।
देख रही है आखे अब तो एक राख की ढेरी ।
छोड गये यह देह, किन्तु युग-युग तक गाथा है तेरी ।

४ अंजलि—कु० केशरी चन्द्र सेठिया, बीकानेर ।

आज विश्व का डर आहत है, पीडित है वसुधा सारी ।
हम सबको तब प्राप्त अहिंसा का है तुमसा व्रतधारी ।
हम सबके पथ मे प्रभुवर तुम ज्ञान प्रदीप सजग करते ।
हम सबको धर्मामृत देकर तुम सत्पथ पर ले बढते ।
कैसे आज तुम्हारे गुण गण कहू प्रभो, मैं तुम्ही कहो ।
जिसकी करुणा से भीगा है रोम रोम यह आज अहो ।
अगर कहे तुमने समाज का, हित ही रक्खा है आगे !
और हमी सबको है प्रस्तुत, किये एकता के धागे ।

५. श्रद्धाजलि—समर्पण प श्री त्रिलोकीनाथ मिश्रा, प्रिंसिपल लोहना, दरभगा ।

जिनके वचनामृत को पीकर, मुर्दे भी जिंदा होते थे ।
दुनिया की झझट को निपटा आनन्द सेज पर सोते थे ।
जिनके उपदेशो का प्रभाव राजाओ पर भी रहता था ।
जिनकी अविरल वाणी धार से अमृत नित बहता था ।
ससार पूज्य मालवीय और गाधी से भी जो पूजित थे ।
जिनके शब्दो से दिगन्त जल थल वन उपवन गु जित थे ।
जो सदाचार के उदयाचल, दुर्व्यसन तिमिर के भास्कर थे ।
सन्तापहरण मृदुवचन शान्ति के जो अकलक सुधाकर थे ।

६ पूज्यश्री नो स्तुति—गौडल सम्प्रदाय के वयोवृद्ध श्री अम्बाजी म.

वर्त्यो छे जय जयकार पोरमा पूज्यजी पधार्या
जगत जीवो तेणे तार्या, पोरमा पूज्यजी पधार्या
पूज्य जवाहरलालजी जेवा ज्ञान झवेरात लाग्या छे देवा
मोक्ष ना सुखज लेवा पूज्यजी
अमूल्य तत्व तणी देशनादीधी, सुणतां थायखेर आत्मसिद्धि
ज्ञान प्रसादी पाय पीधी—पूज्यजी

७. जीवन चरित्र अंगे—श्री टी० जी० शाह

जैनो तणु साचु ए तो जवाहर छे रे (राग)
अहिसा सत्य तणो जेणे प्रचार क्यो रे
दया तणो जे छे अखूट भण्डार—जैनो
जैनी वाणी केसरीसिंह सभी रे
उपदेशे वाली जे छे अजोड—जैने

८ पूज्यश्री नो वाणी प्रभाव—श्री अमीलाल जीवनभाई ठाकी

पलटावे अम पथ जीवन नो पूज्य तनी वाणी
शूरवीरता नो नाद जगवती
भव भवनी भ्रमणाओ हटती
निर्मल मन करती—पूज्य तणी वाणी
पवित्र जीवन तो पाठ पठवती
डर—टर ना अंधारा हरती
पतित ने पावन करती—पूज्य तणी वाणी

९. हृदयोद्गार—श्री हरिलाल के पारेख, राजकोट

पुनित पगले पावनकरी, सुन्दर धरा सौराष्ट्रनो
जयघोष सद्धर्म तणो क्यो दशे दिशा गुंजी रहो
जगावी जोत आतमतणी अज्ञान तिमिर छायो घणो
चिर स्मृति मा जे रहे व्याख्यान ना प्रतिध्वनि ओ
रजन कर्या कर्या मुग्ध जेणे दील जैन अजैनना
जानोए बोध्युं तत्व जे समजाव्युते विशेषता ।



परिशिष्ट—२

जैतारण शास्त्रार्थ (सार संक्षेप)

मध्य (अ) बाईस सम्प्रदाय—पूज्यश्री हुकमीचन्दजी म.सा. की सम्प्रदाय के साधु मुनिश्री मोतीलालजी म सा एव श्री जवाहरलालजी म सा ।

तथा

(ब) तेरह पथी साधु श्री डालचन्दजी की सम्प्रदाय के साधु श्री फौजमलजी, श्री जयचन्दजी म सा ।

दिनाक—वि स १९६० पौष कृष्णा तृतीया

मध्यस्थ

१ गाधी साकलचन्द	—	मन्दिरमार्गी
२. सेठ मुलतानमल	—	"
३ व्यास रूपचन्दजी	—	वैष्णव
४ पचोली उदयराजजी	—	"

शास्त्रार्थ एक माह तक चला । उसमे उठाये गये कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नोत्तरो के अश—

मुनिश्री जवाहरलालजी म सा —आप किस आधार पर दिव्यज्ञानी भगवान महावीर को "चूका" बतलाते हैं ?

मुनिश्री फौजमलजी म सा —भगवान महावीर ने जो दस स्वप्न देखे थे वह उनके मोहनीय कर्म का उदय था ।

ज०—भगवान महावीर ने जो दस स्वप्न देखे थे वे सभी सत्य थे । इसलिये सभी धर्म के अन्तर्गत है । मोहनीय कर्म का उदय उनका कारण नहीं है । यह बात श्री दशाश्रुतास्कध सूत्र के पांचवे अध्ययन की तीसरी गाथा से सिद्ध हो जाती है ।

फौ०—श्री स्थानाग सूत्र के छठे स्थान मे छः प्रकार का प्रतिक्रमण बताया गया है, उसमे छठा स्वप्न का प्रतिक्रमण है । धर्म मे अन्तर्गत वस्तु का प्रतिक्रमण नहीं होता । इससे सिद्ध होता है कि सभी स्वप्न प्रमाद के कारण होते हैं । चाहे वे सच्चे हो या झूठे । भगवान के स्वप्न भी इसी तरह प्रमाद ही थे और प्रमाद बिना मोहनीय कर्म के उदय के नहीं होता ।

ज०—श्री स्थानांग सूत्र के छठे स्थान की दीपिका, टीका और टब्बा मे खुलासा है कि स्त्री के विषय में आकुलचित क्रिया हो (आउल माउलाए) और अनेक जजाल आदि का

स्वप्न देखा हो (सुमरण वत्तियाए) इससे सिद्ध होता है कि मिथ्या स्वप्नो के लिये प्रतिक्रमण कहा गया है, सत्य स्वप्नो के लिये नही।

फो०—'आउल माउलाए' पाठ अलग है और स्वप्नो का पाठ अलग है। यह जागृतावस्था के लिये है स्वप्न के लिये नही।

ज०—यह गलत है। सूत्र की टीका दीपिका व टव्वा मे साफ है कि यह पाठ स्वप्न कोटि का है। दशाश्रुतस्कंध' के ५ वें अध्ययन मे चित्तसमाधि के दस स्थानक कहे गये हैं। उनमे तीसरा स्थान यथातथ्य स्वप्न दर्शन की प्राप्ति है। जिन कार्यों को भगवान ने अच्छा कहा है अर्थात् जिनके लिये भगवान की आज्ञा है—उनमे पाप नहीं, यह तथ्य निर्विवाद है व दोनो को मान्य है। इसलिये भगवान के स्वप्न आज्ञा में है। वे प्रमाद या पाप रूप नही है। समवायाग सूत्र के दसवें समवाय मे भी भगवान के स्वप्नो का यथार्थ होना तथा इनका चित्त समाधि में गिना जाना बताया है।

फो०—'आउल माउलाए' पाठ स्वप्नावस्था का ही है। यदि कोई स्वप्न मे समुद्र को भुजाओ मे तैरता है अथवा शत्रु को जीतता है तो उसे चित्त विक्षेप से होने वाली क्रिया तो अवश्य लगेगी—चाहे जगने पर वे स्वप्न सत्य ही सिद्ध हो जाय। भगवान ने यथाथ स्वप्न देखे थे-यह मैं मानता हू, किन्तु स्वप्नकाल मे तो चित्त का विक्षेप ही था। विक्षेप मोहनीय कर्म के उदय से होता है। इसमे स्वप्न पाप सिद्ध हो जाते हैं।

ज०—'आउल माउलाए' पाठ के लिये अब मध्यस्थ ही निर्णय ले। यह प्रसन्नता है कि भगवान के स्वप्नो को सत्य स्वीकार कर लिया गया है। यहा वे अपने पूर्वाचार्य जीतमल जी के कथन के विरुद्ध चले गये है क्योकि वे कहते हैं—"वाले भगवत छद्मस्थेपने दश स्वप्न दीठा ते पण विपरीत छै" (भ्रम विध्वसन) आवश्यक सूत्र मे स्वप्नो का प्रतिक्रमण जो कहा गया है वह मिथ्या जजाल से ही सम्बन्धित है। यह 'भ्रम विध्वसन' से भी सिद्ध है जिसमे कहा है—"इहा सवृडा स्वपनो देखे यथा तथ्य साचो देखे कह्यो। साधु तो आल जजाल आदि देखे तो झूठा पिण आवे छै।' इससे यह भी स्पष्ट है कि सत्य स्वप्न का प्रतिक्रमण नही होता। यथार्थ स्वप्न निर्मल चारित्र वाले को ही आते हैं। आचारांग सूत्र एव अध्ययन तीसरे उद्देश्य की ८वीं गाथा मे कहा है कि छद्मस्थ अवस्था मे भगवान ने पाप नही किया, न ही कराया, करते को भला नही जाना और इसी उद्देश्य की १५वी गाथा मे कहा है कि भगवान ने छद्मस्थपने में एक वार भी प्रमाद कषाय आदि पाप नही किया।। फिर भगवान को पाप लगने की बात कहना शास्त्र विरुद्ध और आपके अपने सिद्धान्त के भी विरुद्ध है।

फो०—आचारांग सूत्र १ श्रुत स्कध ६ अध्ययन २ उद्देश्य की दूसरी गाथा मे दस स्वप्नो को निद्राप्रमाद कहा है। निद्राप्रमाद मोहनीय कर्म के उदय से होता है इसलिये दस स्वप्न पाप हैं। भगवान ने छद्मस्थपने मे एक वार भी पाप नहीं किया-यह कथन शास्त्रसगत नही है।

ज०—हमारा प्रश्न था कि यथार्थ स्वप्न का मोहनीय कर्म के उदय से होना शास्त्र द्वारा सिद्ध करे। निद्राप्रमाद और स्वप्न दर्शन भिन्न-भिन्न हैं ठाणाग सूत्र के ८वें ठाणे का पाठ है 'सुमिणदसणे' और इसकी टब्बे मे व्याख्या है—'स्वप्नदर्शन तो अचक्षुदर्शन मा ही ज आवे, पिण सूतानी अवस्था मारे जूदी विवक्षा इति।' इस तरह स्वप्नदर्शन अचक्षु दर्शन है और अनुयोग द्वार मे अचक्षु दर्शन को क्षमोपशमिक भाव कहा है। शास्त्रो मे निद्रा के दो भेद बताये हैं—द्रव्य निद्रा और भाव निद्रा। भाव निद्रा मोहनीय कम के उदय से असयती जीव को होती है और वही पाप है। द्रव्य निद्रा दर्शनावरणीय कर्म के उदय से होती है, उसमे पाप नही है। भगवान ने एक वार द्रव्य निद्रा का सेवन किया था भाव निद्रा का नही। यह तथ्य भ्रम विध्वसन से भी सिद्ध है।

इस पर मुनिश्री जवाहरलालजी ने चलेज दिया कि भगवान महावीर को दस स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय से आये तो मुनिश्री फौजमलजी शास्त्र या टीका आदि का प्रमाण दिखलावें। मुनिश्री फौजमलजी ने कुछ उदाहरण दिये किन्तु मुनिश्री जवाहरलालजी ने एक-एक उद्धरण का यथार्थ समझाते हुए उनके गलत अर्थ करने को अज्ञान बताया। दोनो पक्षो के पडितो से भी मध्यस्थो ने लिखित राय ली। वाईस सम्प्रदाय की तरफ पडित विहारीलालजी थे तो तेरहपथियो की तरफ से प बालकृष्णजी थे। दोनो पडितो के लेखो का निर्णय मध्यस्थ पडित देवीशकरजी ने किया।

मध्यस्थो का निर्णय

यह खुलासो जयपुर से साधुजी महाराज सवेगीजी श्री १०८ श्री शिवजीरामजी म से कियो हुवो फागण वदी ८ मिती को गोलेचा घनरूपमलजी जोरावरमलजी की मार्फत खुलासो फागण विद १० आयो। इण ते हाल मे मालुम हुआ के श्री वीर प्रभु ने दस स्वप्न आये वो यथातथ्य हैं, मोहनीय कर्म के उदय मे नही है और प देवीशकरजी व प बालकृष्णजी ने जो अर्थ किया है सो अशुद्ध (गलती) है और प विहारीलालजी ने जो अर्थ किया है वह शास्त्र से मिलता है, वह सत्य है। जिस वास्ते आज दिन खुलासो सुणावण ने तपगच्छ के उपासरा में आमसभा होय ने जो कुछ खुलासो जयपुर मे आयो थे सुणायो गयो कि सवेगीजी महाराज से खुलासो आवणसू वो वाचने सू या वात मालुम हुई कि वाईस सम्प्रदाय साधुजी जवाहरलालजी का प्रश्न का कहना सत्य है जो दस स्वप्न श्री महावीर स्वामी ने आये वह मोहनीय कर्म के उदय नही है और तेरापथियो का साधुजी फौजमलजी का उत्तर का कहना असत्य है। वह स्वप्न महावीर स्वामी ने आये सो मोहनीय कर्म के उदय नही है। सो सभा जनो से विनति है। स १९६० का मिति फागण सुदो ५ आदित्यवार।

द. गाधी साकलचन्द — द व्यास रूपचन्द

द सेठ मुलतानमल — द पचोली उदयराज

(विस्तृत जानकारी के लिये जवाहराचार्य जीवन चरित्र परिशिष्ट 'क' पढें)

सुजानगढ चर्चा (सार संक्षेप)

दि विस १९८६ फाल्गुन कृष्णा ५ सोमवार ता १७-२-१९३०

मध्य-आचार्यश्री जवाहरलालजी म मा एव सुजानगढ (वीकानेर के कतिपय श्रावक) प्रश्न तेरापथी श्रावको द्वारा श्री नेमीनाथजी सिद्ध (जाट सरदारशहर निवासी) के माध्यम से।

श्री नेमीनाथजी - जो कोई धर्मावलम्बी जैन धर्म को असत्य मानता हुआ अपने धर्म का पूर्ण अनुरागी, वैष्णव धर्म को मानने वाला अपने धर्म मे अनुरक्तता रखता हुआ जप, तप ब्रह्मचर्य अहिंसा इत्यादिक धर्म का पालन करता है, उसका यह उपरोक्त कर्तव्य जन्म मरण की वृद्धि का हेतु है या घटाने का ?

आचार्यश्री—जो पुरुष जैन धर्म को या कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है वह पुरुष शास्त्रोक्त अहिंसा सत्यादि का कदापि पालन नही करता है क्योकि वह सत्य जैन धर्म को असत्य मानता है? ऐसा वादी कायम करता है। क्योकि जैन धर्म उस धर्म का नाम है जो क्लिष्ट वृत्तियो को जीतकर मोक्ष प्राप्ति का मार्ग दिखाता हो। अतएव उस पुरुष के जब शास्त्रोक्त अहिंसा सत्यादि व्रत ही नही तो फिर अहिंसा सत्य आदि व्रत पालने का प्रश्न करना वध्या पुत्र की तरह असम्भव है।

श्री नेमीनाथजी—हमारे पूछने का अभिप्राय यह है कि जैनेतर जनता सत्य तप ब्रह्मचर्य अहिंसा का पालन करती है उसमे उनका जन्म-मरण घटता है या बढता है ? इसका उत्तर आपने कुछ भी न दिया और मेरे प्रश्न को असम्भव बताया। यह तो जब उचित था कि जैन धर्म के सिवाय अन्य धर्म वाले कोई भी सत्य न बोलते हो। किन्तु जैन धर्म में इसका पुष्ट प्रमाण है कि अन्य धर्म वाले भी सत्य को ग्रहण करते हैं जिसका प्रमाण प्रश्न व्याकरण मे देखिये। "अनेग पासंडि परिग्गहे"। जिसका यह अर्थ है कि सत्य को अनेक पाखण्डियो ने ग्रहण किया है। इससे सत्य बोलना जैन धर्मानुसार भी अन्य धर्म वालो के लिये प्रमाणित है। तब मेरा प्रश्न सत्यादि के विषय मे असम्भव कैसे हुआ ? और आपने जो 'जैन धर्म के अतिरिक्त कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है' ऐसा उत्तर मे लिखा है तो वह सत्य धर्म कौन—सा है ?

आचार्यश्री - प्रश्नकर्ता अपने लेखी प्रश्न को भी टालाटूली करके शका मे लिखता है कि 'हमारा अभिप्राय और था' इत्यादि लिखकर अपना मूल प्रश्न उलटाना चाहता है, लेकिन वह लेखबद्ध होने से अब उलट नही सकता। जैनेतर के लिये प्रश्न नही लिखवाया किन्तु जैन धर्म को असत्य मानने वाले दुराग्रही के लिये पूछा है। और जो सत्य जैन धर्म को असत्य मानता है, वह अहिंसा सत्य आदि व्रतो का कदापि पालन नहीं करता है। अतएव प्रथम पूछा हुआ प्रश्न

गलत है। वह अपनी गलती स्वीकार किये बिना प्रश्नकर्त्ता को आगे बढकर बोलना व मूल प्रश्न को उलटाना कदापि उचित नही कहा जा सकता। और जो प्रश्न व्याकरण 'सूत्र' का मूल पाठ का अर्थ प्रश्नकर्त्ता ने बताया वह भी प्रश्नकर्त्ता के उस पाठ की टीका का अज्ञानपना सूचित करता है। जब प्रश्न ही गलत है तब उसके विषय मे प्रमाणदिक देने लेने की बातें करना वध्या पुत्र का विवाह करने की तरह व्यर्थ है। और मैंने अपने उत्तर मे कोई भी सत्य धर्म को असत्य नही लिखा है।। उस पर भी 'सत्य धर्म को असत्य आपने अपने उत्तर मे कहा' यह प्रश्नकर्त्ता का कहना अति ही गलत है।

श्री नेमीनाथजी—(क) आपने लिखा है कि प्रश्नकर्त्ता अपने प्रश्न को टालाटूली करके शका मे लिखता है जिसके प्रमाणस्वरूप आपने यह वाक्य लिखे है कि प्रश्नकर्त्ता मूल प्रश्न में जैन धर्म को असत्य मानने वाला लिखता है और अब जैनेत्तर लिखता है।' मुझे आश्चर्य है कि जिसको साधारण मनुष्य भी समझ सकता है कि जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी और जैनेतर ये शब्द एक ही अर्थ के वाचक हैं। आपकी इन शब्दो मे भेद दिखाने की चेष्टा व्यर्थ है।

(ख) आपने लिखा है कि 'प्रश्नकर्त्ता लिखता है कि हमारा अभिप्राय और था परन्तु मैंने मेरा अभिप्राय और था' ऐसा कही भी नही लिखा है। मैंने मेरे द्वितीय प्रश्न मे मेरा अभिप्राय यह है ऐसा लिखा है इसलिये आप मेरा लिखा हुआ 'यह है' के बदले और था यह शब्द कहा से लाये? क्योकि मैंने मेरा अभिप्राय और था ऐसा कही नही लिखा है। मैंने तो मेरे प्रश्न को स्पष्ट करने के लिये 'जैनेतर' शब्द दिया है जो कि जैन धम को असत्य मानने वाले पर पूर्ण रूप से घटता है। आपने जो मेरे प्रश्न के लिखित वाक्यो के विपरीत लेखनी चलाने की चेष्टा की है, उन वाक्यो को आप कृपया फिर दुबारा देखिये।

(ग) मेरे मूल प्रश्न मे कोई भी सत्य धर्म' को असत्य मानता है ऐसा शब्द नही आया है तो फिर आपने उत्तर न १ मे कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है ऐसा क्यो लिखा? और उत्तर न २ मे फिर आप लिखते है कि मैंने अपने उत्तर मे कोई भी सत्य धर्म को असत्य नही लिखा है यह परस्पर विरोधी वचन क्यो?

(घ) उत्तर न २ मे जो जैन धर्म को असत्य मानता है उसको दुराग्रही की पदवी आपने दी है। मैंने मेरे प्रश्न मे जैन धर्म को असत्य मानने वाले के लिये 'दुराग्रही' शब्द नहीं लिखा है। फिर आप मेरे पर असत्य कलक क्यो लगाते है? आप चाहे तो उसे दुराग्रही कहें तो आपकी इच्छा और उसका दायित्व आपके ऊपर है।

(ङ) और आपने जो उत्तर न० २ मे लिखा है कि 'जो जैन धर्म को असत्य मानता है, वह अहिंसा सत्य आदि का कदापि पालन नही करता है' यह आपका लिखना शश शृगवत है। क्योकि शिवराज ऋषि (जैन धर्म अगीकार करने से पहले) जैन धर्म को असत्य मानता हुआ भी अपने नियमादि मे दृढ था। प्रमाण भगवती शतक ११ ए० ६।

(च) आपने उत्तर न २ मे प्रश्न व्याकरण सूत्र के मूल पाठ की टीका से प्रश्नकर्त्ता की अज्ञानता सूचित की है, वह व्यर्थ है क्योंकि वह टीका मेरे ही प्रमाण के अनुकूल है ।

अतएव आप जो मेरे प्रश्न को गलत बताते हैं, वह प्रश्न ठीक है लेकिन आपकी समझ मे ही गलती है । इसलिये मेरे प्रश्न का उत्तर मिलना चाहिये ।

आचार्यश्री(क)— आपने जो जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी' और जैनेतर इन शब्दो को एक ही अर्थ का वाचक लिखा है वह बिल्कुल असगत है । जिन शब्दो का प्रवृत्ति निमित्त एक होता है, वे ही शब्द एकार्थ वाचक होते है, जैसे घट और कलश । क्योकि इन दोनो शब्दो का प्रवृत्ति निमित्त एक ही घटत्व जाति है । परन्तु "जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी' और जैनेतर इनका प्रवृत्ति निमित्त एक नही है । 'जैनेतर' शब्द का प्रवृत्ति निमित्त जैनोपाधि व्यतिरिक्तोपाधि धारित्व नही है । यानि 'जैन' इस उपाधि से भिन्न किसी दूसरी उपाधि का धारण करना है । और जैन धर्म को असत्य मानता हुआ निज धर्म का अनुरागी–इसका प्रवृत्ति निमित्त केवल जैनोपाधि व्यतिरिक्तोपाधि धारित्व नही है । किन्तु जो जैन शास्त्र मे विधान की हुई बातो को एकान्त पाप तथा निषेध की हुई बातो मे धर्म मानता हो और इस प्रकार के अपने धर्म मे अनुराग रखता हो यह प्रवृत्ति निमित्त है चाहे वह जैनोपाधि धारी ही क्यो न हो, जैसे साधु के गले में लगी हुई फासी को काटना, किसी निर्दोष बच्चे के पेट मे छूरी भोकते हुए को रोकना, क्षोभित होकर कुए या गड्ढे मे गिरते हुए को बचाना, गायो से भरे हुए बाडे मे अग्नि लगने पर दरवाजा खोलकर उनकी रक्षा करना, किसी दीन दु खी पर अनुकम्पा लाकर उनका दु ख मिटाना इत्यादि जैन शास्त्र मे धर्म और पुण्य रूप से विधान की हुई बात को एकान्त पाप बताकर जो निषेध करता है तथा साधुओं के स्थान मे रात के समय औरतो का आना और उन्हे व्याख्यान सुनाना, गृहस्थो के घर से थारी बाधकर साधुओ का भोजन लाना और विहार मे गृहस्थियो को साथ रखकर उनके पास से भोजन लेना आदि जैन शास्त्र मे निषेध की हुई बात को जो विधान करता हुआ तदनुसार आचरण करता है वह जैन धर्म को असत्य मानने वाला और निज धर्म का अनुरागी है । पर वह जैनोपाधिधारी होने से लोक मे जैनेतर नही कहलाता । अत उक्त दोनो शब्द एकार्थवादी नही है और मेरा भेद दिखाना उचित ही है ।

(ख) आपने परचो के दूसरे लेख मे हमारे पूछने का अभिप्राय यह है इत्यादि लिखकर जो अपना आशय प्रकट किया है, वह आपके प्रश्न न १ के वाक्यो से नही निकलता । क्योकि यह बताया जा चुका है कि जैन धर्म को असत्य मानने वाला और 'जैनेतर' ये दोनो शब्द पर्यायवाची नही है । अत. जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी इस शब्द का 'जैनेतर जनता' यह अभिप्राय बतलाना और ही हुआ । इसलिये जो मैंने आपका अभिप्राय और बतलाया है यह अनुचित नहीं है । अलबत्ता आपने और शब्द का प्रयोग नहीं किया लेकिन यह 'और' शब्द आपके लिखे हुए का अनुकरण नही, बल्कि हमारी तरफ से है और ठीक है । क्योकि आपका अभिप्राय 'जैनेतर' लिखकर प्रश्न से जो आशय प्रकट नहीं होता है वह बतलाता है ।

(ग) आपने 'जैन धर्म को असत्य मानने वाला' यह विशेषण ब्रह्मचर्य अहिंसा सत्य आदि के पालन करने वाले के लिये लगाया है। अत. उसका उत्तर देते हुए मैंने लिखा है कि 'जो पुरुष जैन धर्म को या कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है, वह पुरुष शास्त्रोक्त अहिंसा सत्य आदि का पालन नही करता है।' इस उत्तर मे मैंने जैन धर्म या कोई भी सत्य धर्म को असत्य बताने वाला लिखा है इसमे आपके बताये हुए जैन धर्म को असत्य मानने वाला भी सग्रहीत हो गया है। फिर यह आप का आक्षेप करना व्यर्थ है कि उत्तर न १ मे कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है, क्यो लिखा ? यह आपके प्रश्न वाक्य का अनुकरण नही, किन्तु हमारा उत्तर वाक्य है। विशेष रूप से पूछे गये प्रश्नो का सामान्य रूप से उत्तर दिया जाना भी शास्त्र प्रसिद्ध है। आप के लिखे हुए शब्द से भिन्न शब्द का लिखना मेरे लिये अनुचित समझते हो तो आपने मेरे उत्तर वाक्य 'जो पुरुष जैन धर्म को या किसी भी सत्य धर्म को असत्य मानता है' को उद्धृत करते हुए 'जैन धम के अतिरिक्त काई भो सत्य धर्म को असत्य मानता है' इसमे 'अतिरिक्त' शब्द और कहा से लगा दिया ?

२ 'सत्य धर्म को असत्य मैंने नहीं लिखा' इसका मतलब यह है कि इस लिखने से सत्य धर्म को असत्य कहने का मेरा अभिप्राय नही है, किन्तु यह अभिप्राय है कि कोई भी सत्य धर्म को असत्य माने उसमे अहिंसादि व्रत की प्राप्ति नही होती। अब आपका प्रश्न यह है कि 'वह सत्य धर्म कौनसा है' तो इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जिस धर्म मे ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप यथार्थ रीति से आते–जाते हो तथा जो धर्म साधु के गले मे लगी हुई फासी को काटने आदि मे पाप न मानकर इनका प्रतिपादन हो और रात के समय साधुओ के समीप स्त्रियों के आने-जाने आदि मे धर्म न मानकर इनका निषेधक हो, वे सब सत्य धर्म है, चाहे उनकी उपाधि कुछ भी हो।

(घ) जैन धर्म को असत्य मानने वाला वह है जो जैन धर्म मे विधान किये हुए मरते प्राणी की रक्षा और दीन दु.खियो पर अनुकम्पा लाकर उनके दु खो को मिटाना इत्यादि पवित्र कार्य को एकान्त पाप कहकर अपवित्र बतलाता हो। वह चाहे आपके मत मे सत्याग्रही क्यो न हो, पर मैं उसे दुराग्रही मानता हू और ससार भी उसे दुराग्रही ही कहेगा।

(ङ) शिवराज ऋषि, जैन धर्म स्वीकार करने के पहिले अहिंसा सत्य आदि व्रतो का पालन करने वाला था, यह भगवती शतक ११ उद्देश मे नही लिखा है। न जैन धर्म को असत्य मानने वाला ही लिखा है। फिर उनके नियमादि का नाम लेकर जैन धर्म को झूठा मानता हुआ अहिंसा सत्य आदि व्रतो का पालन करने का सम्भव बताना ही शशकश्रृगवत् है।

(च) 'प्रश्न व्याकरण सूत्र' की टीका को जो आपने अनुकूल बताया, यह आपका भ्रम है। वास्तव मे वह टीका आपने जो अर्थ बताया उसके सर्वथा प्रतिकूल है क्योकि वहा पाखडो शब्द का अर्थ व्रतधारी किया है। 'पाखड व्रतं तदस्यातीति पाखडी' (नियुक्ति की टीका दशवैकालिक) पाखंड नाम का व्रत है और यह व्रत जिसके अन्दर मौजूद है, वह पाखडी है। अब आपने प्रश्न न १ को ठीक बतलाते हुए उसका उत्तर मेरे से मागा है तो यदि आपका पूछने का भाव यह हो कि अहिंसा सत्य आदि व्रतो का धारण करने वाला जो जैन से भिन्न

उपाधि धारी पुरुष हो तो वह अपने उक्त व्रत से ससार को घटाता है या बढाता है, तथा अपने कर्मों का क्षय करता है या वृद्धि करता है तो इसका उत्तर यह है कि वह चाहे जैनोपाधिधारी हो चाहे किसी दूसरी उपाधि से विभूपित हो पर उसके अहिंसा सत्य आदि व्रतो के धारण करने से जन्ममरण घटता ही है बढता नहीं है। उसके कर्मक्षीण होते हैं पर बढते नही है। (देखिये उत्तराध्ययन सूत्र अ० २८) अंगोपागो मे भी ऐसे पाठ है–स्वलिंग सिद्धा, अन्य लिंग सिद्धा, और गृहलिंगासिद्धा। पर मेरा उत्तर जो लोग जैन से भिन्न उपाधिधारी होकर भी अहिंसावादी व्रतो के पालन करने वाले हैं उनके सम्बन्ध मे है। पर आपने तो जैन धर्म को झूठा मानने वाले के लिये पूछा है इस पर मेरा कहना है कि जैन धर्म को असत्य मानने वाला है। फिर वह अहिंसादि का पालन भी करता हो, यह बात असम्भव है।

फिर आचार्य ने आग्रह किया कि जो सात प्रश्न दोनो मान्यताओ मे भेद के बारे में रखे गये हैं उनका खुलासा किया जाना चाहिये और अच्छा हो कि उनके बारे मे चर्चा तेरहपथ के आचार्य उनके साथ करें। लेकिन हो-हल्ला मचाकर तेरहपथी श्रावक चले गये।

परिशिष्ट-३

हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक श्री रामनरेश त्रिपाठी के पत्रिका 'सरस्वती' जनवरी१९३१ मे छपे एक लेख 'मेरी बीकानेर यात्रा' के महत्वपूर्ण अंश-

अब मैं एक बात की चर्चा और करने वाला हू जो राजपूताने से भिन्न प्रान्त वालो के लिए नई ही नही कौतूहल जनक भी है।

बीकानेर मे जैन धर्मावलम्बी ओसवाल वैश्यो की सख्या अधिक है। ये लोग कलकत्ते बम्बई मे बडे बडे व्यापार करते हैं और बडे ही धनी होते हैं। इनमे दो सम्प्रदाय है—एक के आचार्यश्री कालूरामजी हैं जो तेरहपथी कहलाते हैं। दूसरे के आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज हैं जो बाईस पंथ कहलाता है।

गत वर्ष फतहपुर मे जवाहरलालजी महाराज से मेरा साक्षात्कार हुआ था। उनका चरित्र बहुत ही अच्छा पवित्र और तपस्या से पूर्ण है। वे अच्छे विद्वान, निरभिमानी, उदार सहृदय और निस्पृह हैं। चौमासे में वे किसी एक स्थान पर ठहरकर चौमासा करते हैं और जनता को अपने व्याख्यानामृत से तृप्त करके सन्मार्ग पर ले चलते है। उनके व्याख्यान मे सामयिकता रहती है। और देश की प्रगति का भी उन्हें काफी ज्ञान है। वे इतिहास से सत्पुरुषों के जीवन चरित्रो से उपकारी बातें लेकर अपने भक्तो को देने मे कभी आलस्य और सकोच नही करते। इस वर्ष उनका चौमासा बीकानेर मे था। मैं इस मौसम में खासकर उनका सत्सग करने

के लिये ही बीकानेर गया था । मैं प्राय प्रतिदिन उनके व्याख्यान मे जाया करता था। कई वार उन्होने श्रीमुख से मेरी चर्चा भी की । इससे उनके भक्तो का मैं प्रियपात्र हो गया था और वे लोग मेरे साथ बडा प्रेम प्रदर्शन करने लगे । आचार्यजी के भाषणो का प्रभाव उनके सम्प्रदाय के स्त्री पुरुष दोनो पर बहुत अच्छा पड रहा है । वे बडे निर्भय वक्ता हैं पर अप्रियवादी नही उनका व्याख्यान सुनने के लिये' बीकानेर के राज्याधिकारी तथा अन्य मत–मतान्तरो के खास खास लोग भी आते थे ।

कौतूहलजनक बात दूसरे सम्प्रदाय की है जिसके आचार्यश्री कालूरामजी महाराज है । ये भी चौमासा करते हैं । इनके भी भक्तो की सख्या अधिक है । आचार्य कालूरामजी की शिक्षा का कौतूहलजनक अंश यह है कि किसी के गले मे फासी लगी हुई हो तो उसे काट देना पाप है । गायो के बाडे मे आग लगी हो तो उसे बुझा देना या दरवाजा खोलकर गायो को बाहर निकाल देना पाप है । किसी दीन दुखी पर दया करना या दान देना पाप है । कोई किसी निर्दोष वच्चे के पेट मे छुरी खोसता हो तो उसे बचाना पाप है । कोई क्रोधावेश मे गड्ढे मे या कुए मे गिरने जा रहा हो तो उसे बचाना पाप है । इत्यादिक इसी प्रकार की कौतूहल जनक अनेक बातें हैं जो श्रोताओ को समझाई जाती है और उनका प्रभाव भी पडता है । इस सम्प्रदाय मे धनियो की सख्या भी बहुत है पर शिक्षितो की सख्या अत्यन्त कम । क्योकि शिक्षा के लिये दान देना भी पाप है । हा खाने-पीने, पहिनने मे ये लोग किफायत नही करते । आचार्यजी का उपदेश भी ऐसा ही है । इस सम्प्रदाय वाले भक्त आचार्य कालूरामजी को ही ईश्वर-तुल्य मानते हैं । और उनके साथी साधुओ की सेवा तन-मन-धन से करते हैं । अच्छी से अच्छी चीजें खिलाते हैं-बढिया से बढिया वस्त्र पहिनाते हैं और उत्तम से उत्तम स्थान मे ठहराते हैं । स्त्रियो को रात से पहले और पिछले पहर मे आचार्यजी का व्याख्यान सुनने की स्वतन्त्रता रहती है । इस सम्प्रदाय के लोग खूब मौज की जिन्दगी बिताते हैं । सुनते हैं कि राजपूताने मे इस सम्प्रदाय वालो की संख्या साठ हजार के लगभग हैं । साठ हजार लोग बीसवी सदी मे ऐसी भयानक शिक्षा के शिकार हो रहे हैं-क्या यह कम आश्चर्य की बात है ?

"सरस्वती"
जनवरी १६३१

—रामनरेश त्रिपाठी

परिशिष्ट-४

आचार्यश्री द्वारा सभी सम्प्रदायो को समाप्त करके समस्त साधु समाज के एकीकरण की अजमेर साधु सम्मेलन में प्रस्तुत योजना।

श्री वर्द्धमान संघ योजना

वर्तमानकालीन सम्प्रदायो की प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न प्रणाली से चल पडने से शासन सगठन ग्रस्त-व्यस्त हो गया है। इससे श्रद्धा प्ररूपणा और आचार व्यवस्था की प्ररूपणा एक मुखी होने के बदले शतमुखी हो गई है। इस आपत्ति को मिटाने का सरल और सीधा उपाय यह है कि एक ऐसा सघ का निर्माण किया जावे, जिसमे सम्मिलित होकर आत्मार्थी मुनिगण एक प्रणाली मे चल सके। उसके लिए 'वर्द्धमान सघ' को स्थापना करना उचित होगा। क्योकि जब तक शास्त्र सम्मत नाम वाला सघ न स्थापित किया जाय, तब तक किसी भी सम्प्रदाय के मुनिगण अपनी सम्प्रदाय को छोडकर दूसरे की सम्प्रदाय मे सम्मिलित न हो सकेंगे। इस आपत्ति को मिटाने के लिये 'वर्द्धमान सघ' नाम के सघ की स्थापना करना उचित होगा। यह नाम रखने से किसी भी सम्प्रदाय के मुनियो को यह ख्याल न होगा कि मैं अपनी सम्प्रदाय को छोडकर दूसरे की सम्प्रदाय मे क्यो जाऊ? प्रत्युत यह ख्याल आना स्वाभाविक है कि जब समस्त सम्प्रदायो के कल्याणार्थ और भविष्य मे चिरकाल तक सघ मजबूतरीति से चलता रहे, इसके लिए एक शास्त्र सम्मत सघ का निर्माण होता है और उसमे किसी का पक्ष नही है। तो फिर ऐसे सघ मे सम्मिलित होने से हमारा भी गौरव बढता है और जैन शासन का भी गौरव बढता है।

अपना और पराए का कल्याण करना ही मुनि-समुदाय का परम कर्त्तव्य है। किन्तु जब तक समस्त मुनि-महात्माओ की श्रद्धा प्ररूपणा आदि एक न हो, तब तक विद्वान् मुनि महाराज अपना कल्याण तो किसी प्रकार कर भी सकते हैं परन्तु साधारण स्थिति वाले मुनिगण एव साध्वी समुदाय और श्रावक-श्राविकाओ, जब तक श्रद्धा प्ररूपणा तथा व्यवहार समाचारी एक न हो, कल्याण साधना अत्यन्त कठिन है। ऐसी अवस्था में ऐसे कौन मुनि महात्मा होंगे, जो पक्ष छोड़कर-सबके कल्याण में अपना कल्याण है, इस बात को मान नवनिर्मित वर्द्धमान सघ में सम्मिलित होने इन्कार कर देंगे। अपितु सभी मुनि-महात्मा इस सघ में सम्मिलित होंगे।

'वर्द्धमान संघ' यह नाम ही महान कल्याणकारी है। इस नाम पर श्रीमान् चरम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान जिन, जिनका यह शासन है, के नाम की छाप लगी हुई है, इसके सिवाय इस सघ का नाम किसी व्यक्ति का सम्प्रदाय विशेष के नाम पर नहीं है इसलिए इस नाम के विषय में किसी प्रकार के तर्क-वितर्क को स्थान नहीं है।

वर्द्धमान संघ के नियम

१ इस संघ का जातिकुल सम्पन्न, द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव का ज्ञाता, आचारादि मुनिक्रिया मे निष्णात और नवीन सघ का भार उठाने मे समर्थ ऐसा एक सर्वमान्य मुख्याचार्य स्थापित करना चाहिए ।

२ मुख्याचार्य की अधीनता मे उपरोक्त गुण युक्त अनेक उपाचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक गणावच्छेदक आदि स्थापित किये जाय और इनकी अधीनता मे सुयोग्य मुनियो को कार्यकर्त्ता स्थापित कर कार्य सौंप दिया जावे । अपनी अधीनता के मुनि–महात्माओ की देखरेख और आचार-विचार ज्ञान-ध्यान आदि की सार सम्भाल बडे मुनि-महात्मा करे और अधीनस्थ मुनि-महात्मा, जिनकी अधीनता मे है उनकी आज्ञानुसार विनय–भक्ति व्यवहार आदि समस्त कार्य करें ।

३ साध्वी-समुदाय मे मुख्य प्रवर्तिनी और प्रवर्तिनी के नीचे गणावच्छेदिनी आदि स्थापित की जाय । मुख्याचार्य जिस साधु-साध्वियो का सघाडा बाघ देवें, उन साधु-साध्वियो को को उस सघाड मे रहना होगा।

४ देश–विदेश भेजने या चातुर्मास कराने के लिए जो सघाड बाघे जावे, उनमें साधुओ के एक सघाड मे ३ से कम साधु और साध्वियो के एक सघाडे में ४ से कम साध्विया न होनी चाहिये ।

५ चातुर्मास या पूर्ण शेषकाल मे साधु और साध्वी किसी एक ही ग्राम मे मुख्याचार्य की आज्ञा विना न रह सकेंगे ।

६. आचार्य के समीप उस ग्रामनगर मे साध्विया मर्यादापूर्वक रह सकती हैं ।

७ जहा तक हो सके प्रवर्तिनी उसी ग्राम या नगर मे चातुर्मास करे, जहा मुख्याचार्य का चातुर्मास हो ।

८ वर्द्धमान सघ की जो समाचारी तैयार की जावे, सभी साधु-साध्वियो को तदनुसार वर्तना होगा । यदि कोई साधु–साध्वी मोहवश उस समाचारी का उल्लघन करे तो छोटी वालो का प्रायश्चित उपाचार्य गणावच्छेदक, प्रवर्तक, प्रवर्तिनी आदि से लेना होगा और बडा प्रायश्चित छेद या मूल देना हो तो ऐसा प्रायश्चित देने का अधिकार उपाचार्य आदि को भी रहेगा, परन्तु उस दोप की आलोचना मुख्याचार्य को सुनानी होगी । आलोचना सुनने और प्रायश्चित मे कम ज्यादा करने का अधिकार मुख्याचार्य को पूर्णरीति से होगा ।

९ इस सघ के साधु-साध्वी जिसे भी श्रद्धा दे उसे वर्द्धमान सघ के नाम से श्रद्धा देवे । वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य को धर्माचार्य (गुरु) श्रद्धवे और श्रावक–श्राविकाओ को उन्हीं का श्रद्धा मे करे ।

१०. जिस पुरुष–स्त्री को दीक्षा देनी होगी, उसकी आयु, प्रकृति, शिक्षा, जाति, कुल वैराग्य और सम्बन्धियो की आज्ञा आदि की जाच जब तक मुख्याचार्य स्वय या दूसरे व्यक्ति द्वारा न कराले और दीक्षा देने की आज्ञा न दे दे तबतक कोई साधु-साध्वी किसी को दीक्षा न दे सकेंगे। प्रत्येक दीक्षा मुख्याचार्य की स्वीकृति से ही होगी।

११. शिष्य मुख्याचार्य की और शिष्या प्रवर्तिनी की नेश्राय मे की जावे, जिससे खींचातानी और सघ के टुकडे न हो।

१२ साधु–साध्वियो को शास्त्र-साहित्य पढाने और उपदेश की शिक्षा देकर योग्यता उत्पन्न करने के लिये मुख्याचार्य प्रबन्ध करे जिससे विद्वान् साधु और विदुषी साध्विया बन सके। यदि मुख्याचार्य उचित समझे तो इस विषय मे उपाचार्य, उपाध्याय आदि की भी सम्मति ले ले।

१३ हस्तलिखित शास्त्रपुस्तक पाने आदि मुख्याचार्य की नेश्राय मे रहे और वे योग्यतानुसार साधु-साध्वियो को पढने के लिए दे दे। गच्छ छोडकर या सयम त्यागकर जाने वाले को शास्त्र आदि अपने साथ ले जाने का अधिकार न होगा।

१४. शास्त्र आदि लिखने वाले साधु-साध्वी भी तैयार किए जावे, जिसमे शुद्ध और सुन्दर लिपि के शास्त्र एव साहित्य की वृद्धि हो।

१५. साध्वियो से विना कारण आहार–पानी लेना-देना आदि शास्त्र मे वर्जित है, इसलिए आहार-पानी आदि का सभोग न किया जावे।

१६. इस गच्छ मे प्रवेश होने के लिए आलोचना का एक खरडा तैयार किया जाय और उस मुआफिक प्रत्येक साधु-साध्वी को प्रतिज्ञापूर्वक सच्चे दिल से पूर्वनिश्चित मुख्य-मुख्य महात्माओ के पास आलोचना कराकर उस आलोचना मे यदि व्रतो ० त्रुटि न हो तो जिस दिन सर्वप्रथम दीक्षा ली है, उसी दिन की दीक्षा मिती कायम किया जाय और उसी मुआफिक छोटे बडे का दर्जा समझा जाय। इस खरडे के मुताबिक कार्य हो जाने पर ही साधु–साध्वियो को सघ में सम्मिलित किया जावेगा अन्यथा नही।

१७ मुख्याचार्य जिस, साधु-साध्वी को अयोग्य समझेंगे वह इस सघ में प्रविष्ट न हो सकेगा।

१८ वर्द्धमान सघ के मुख्य आचार्य जिस साधु-साध्वी को अलग कर दे, उसके लिए सर्व सघ को चाहिये कि वह उसे साधु–साध्वी न माने और साधु-साध्वी को की जाने वाली विधि वन्दना भी उसे न करे। यह नियम तभी तक है, जब तक वह मुख्याचार्य से प्रायश्चित लेकर सघ में सम्मिलित न हो जावे।

१९ किसी साधु-साध्वी को दोष के कारण सघ से अलग करने का समय आवे तो उसे मुख्याचार्य की परवानगी लेकर ही अलग किया जावे। हां, मुख्याचार्य की स्वीकृति के बिना

जिनके साथ वह साधु-साध्वी है, वे साधु-साध्वी आहार-पानी वन्दन आदि सभोगवृत्ति न करे, परन्तु जब तक मुख्याचार्य की आज्ञा न हो उस साधु-साध्वी को अपने पास से न तो अलग ही किया जावे न उसे अलग करने के विषय की कोई घोषणा ही सघ मे की जावे । यदि जाहिर व्यवहार बिगड गया हो तो सघ मे यह प्रकट करे कि इस विषय की सब सूचना मुख्याचार्य को दे दी गई है और उनका हुक्म जब तक न आ जावे, तब तक इसके साथ समोग न रखते हुए भी हम इसे अपने पास रखते हैं । मुख्याचार्य का हुक्म आने पर उनकी आज्ञानुसार कार्य किया जावेगा ।

२० कोई साधु-साध्वी छन्द या कविता बनावे तो मुख्याचार्य को या मुख्याचार्य जिसके लिए कहे उसे बताए बिना और मुख्याचार्य की स्वीकृति लिए बिना लोगो मे प्रसिद्ध न करे । केवल स्तुति रूप मे बोलने की बात अलग है, परन्तु उसमे सघ की श्रद्धा के विपरीत बात न आनी चाहिए । और आचार्य के पास रजू करने पर उनके कथनानुसार फेर-फार करना होगा।

२१ वर्द्धमान सघ के साधु-साध्वियो की श्रद्धा प्ररूपणा एक रहनी चाहिए जो मुख्याचार्य श्रद्धे, प्ररूपे, वैसा ही सब साधु-साध्वियो को श्रद्धना प्ररूपणा चाहिए । यदि किसी को कोई तर्क उत्पन्न हो और वह तक सघ परम्परा के विरुद्ध हो तो जब तक मुख्याचार्य से उसका समाधान न हो जावे तब तक प्रसिद्ध रूप मे किसी के पास प्ररूपणा नही करे। मुख्याचार्य के पास निवेदन करने पर भी यदि उन्हे वह तर्क ठीक जचे तो उसके मुआफिक श्रद्धा प्ररूपणा करने का मुख्याचार्य को अधिकार है । और उनसे पास हो जाने पर सबकी श्रद्धा प्ररूपणा उसी मुआफिक रहे ।

२२. वर्द्धमान सघ की जो समाचारी तैयार की जावे वह शास्त्र सम्मत और द्रव्य क्षेत्र, काल भाव को देखकर होनी चाहिए । जिन बातो का शास्त्र मे निषेध है किन्तु अपवाद मार्ग मे विधान शास्त्र सम्मत है, ऐसी बातो को ध्यान मे रखकर तथा लौकिक लोकोत्तर से अविरुद्ध जिताचार से समाचारी बाधने की आवश्यकता है । उस समाचारी मे समय-समय पर देश कालानुसार फेर-फार करने का मुख्याचार्य को पूर्ण अधिकार रहेगा ।

२३ पाट परम्परा के विषय मे वर्द्धमान सघ की यह धारणा रहेगी कि भगवान महावीर स्वामी का सघ भगवती सूत्र २० शतक के उद्देशक ८ के पाठानुसार २१ हजार वर्ष तक अविच्छिन्न रहेगा । उसमे चतुर्विध सघ शुद्ध प्ररूपणा वाला रहा है और रहेगा । इसके अनुसार उन सब महानुभाव आचार्य को यह सघ प्रमाणरूप मानता हुआ यह पाट परम्परा कायम करता है कि अब से पाट परम्परा वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य से ही मानी जावेगी । क्योकि वर्तमानकाल मे अलग-अलग सम्प्रदाय मे अलग-अलग पाट परम्परा की पाटावलिया है । इसलिए आगे एक परम्परा कायम करने के लिए उपरोक्त पाट परम्परा कायम की जाती है ।

२४ वर्द्धमान सघ की पाटावलियो मे, शास्त्रोक्त सर्वमान्य आचार्यों का उल्लेख करने के बाद मे वर्द्धमान सघ के आचार्यों से पाट-परम्परा लिखी जावें ।

परिशिष्ट–५

युग द्रष्टा युगपुरुष आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा के द्वारा तीर्थंकर देवो के सिद्धातों का वास्तविक रूप से भव्य प्रतिपादन हुआ । उस प्रतिपादन मे कुछ भ्रात धारणाए एव रूढिगत जैन धर्म के नाम से चलने वाली परम्पराओ का विखडन एव सत्य का मडन हुआ है । इस प्रतिपादन से सम्बन्धित व्यक्तियो मे स्वाभाविक तौर से ईर्ष्या भाव एव असहिष्णुता की भावना प्रबल हो चली तथा जन मानस मे आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा के प्रभाव को धूमिल करने हेतु तेरापथ समाज की ओर से कई प्रकाशन हुए और हो रहे हैं एतदर्थ साधुमार्गी जैन सघ ने सक्षिप्त प्रस्ताव भी पारित किया उसका कुछ सक्षिप्त स्पष्टीकरण इस परिशिष्ट मे दिया जाना अति आवश्यक समझकर दिया जा रहा है । जिसमे अप्रामाणिकता और असत्यता सप्रमाण प्रस्तुत की गई है । इसमे तेरापथ समाज के साहित्य मे जो आचार्यश्री रुगनाथजी म सा से लेकर आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा एव आचार्यश्री गणेशीलालजी म.सा आदि पर जितने भी असत्य आरोप एव मन कल्पित बातें लिखी हैं वे सभी अप्रामाणिक सिद्ध होती हैं क्योंकि वे असत्य और मन कल्पित है । इन सभी असत्य आरोपो को एव मन कल्पित बातो को यहा उद्धरित नहीं करते हुए नमूने के तौर पर कुछेक मनगढन्त बातो की अप्रामाणिकता बतलाई जा रही है ।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ का उद्देश्य निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति के सरक्षण सवर्धन हेतु उसके अनुपोषक महापुरुषो के ज्ञान-दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि मे सहयोग का रहा है । अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के परिप्रेक्ष्य मे सघ अछूतोद्धार एव धर्मशिक्षण जैसी अनेक जन कल्याणकारी प्रवृत्तियो को प्रश्रय देता रहा है ।

सघ की नीति सदा सर्जनात्मक एव शात क्राति की रही है । निदात्मक एव आक्राता नीति का सघ ने सदा बहिष्कार ही किया है । किन्तु सघ यह भी नही चाहता है कि आगम विरुद्ध धारणाओ भ्रातियो एव असत्य आक्षेपो को भी सहन किया जाता रहे । ऐसे प्रसगो का यथोचित प्रामाणिक स्पष्टीकरण करके भ्रात धारणाओ को निर्मूल करना सघ अपना कर्त्तव्य समझता है ।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ से अनुबन्धित चतुर्विध सघ के चहुमुखी विकास से उत्पन्न ईर्ष्या से एव निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा हेतु उठाये गये अहिंसक असहयोग मे विक्षुब्ध हो इस सघ के चरित्र–निष्ठ आदर्श पुरुषो पर कतिपय कट्टर साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों ने हीन भावना के वशीभूत हो समाचार पत्रो एव साहित्य आदि के माध्यम से अप्रमाणिक मिथ्या आरोप लगाये है । इस दूष नीति का प्रयोग कर वस्तु स्वरूप को तोड–मरोड कर विपरीत ढग से प्रस्तुत किया और जनमानस को भी गुमराह किया । यहा तक कि अपने मन की दूषित यशूपा वृत्ति को सतुष्ट करने के लिए आगम के सिद्धात विरुद्ध एकातवाद के मनोकल्पित अर्थ किये

अपनी साम्प्रदायिक धारणा को आगम सम्मत बताने हेतु आगमो का प्रकाशन किया और इस प्रकार आगम के साथ भी उत्सूत्र प्ररूपण जैसा महापराध किया है।

सघ ने अपनी सौम्य नीति के अनुसार तटस्थता पूर्वक सहन करने का प्रयास किया किंतु इसका भी विक्षुब्ध मनोवृत्तियो ने दुरुपयोग किया और अपने दु साहस को बढावा देते हुए पूर्वाचार्यों पर भी मिथ्या आक्षेप करने लगे।

आचार्यश्री रुगनाथजो म सा के द्वारा निष्कासित श्री भीखणजी स्वामी आदि कतिपय सत एवं श्रावको ने अपनी खिन्नता को रूपान्तरण दे कर एक पथ चलाया और उसकी पुष्टि हेतु शास्त्रों के स्थलो को तोड-मरोड कर मनमाने तरीके से मानवता विरोधी कई सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। बाद मे जयाचार्यजी ने तो उन सिद्धान्तो को ग्रन्थ के रूप मे ग्रन्थित भी कर दिया और उस भ्रमविध्वसन ग्रन्थ के पेज ७९ मे यहा तक कह दिया गया है कि—

"साधु थी अनेरो कुपात्र छे अनेरा ने दीधा अनेरी प्रकृति नो बध कह्यो तो अनेरी प्रकृति पाप नी छं।"

एव पृष्ठ ८२ की टिप्पणी मे कुपात्र दान का फल बताते हुए लिखा है कि—

"कुपात्रदान, मासादि सेवन, व्यसन कुशीलादि के तीनो ही एक ही मार्ग के पथिक हैं। जैसे—चोर, जार, ठग ये तीनों समान व्यवसायी हैं, वैसे ही जयाचार्य सिद्धातानुसार कुपात्रदान भी मास आदि सेवन एव व्यसन कुशीलादिक की ही श्रेणी मे गिनने योग्य है।"

तात्पर्य यह है कि उनके उक्त कथनानुसार साधु के अलावा अन्य माता-पिता समाज एव राष्ट्र के नेता यहा तक कि महात्मागाधी आदि का भी कुपात्र मे समावेश हो जाता है क्योकि वे पच महाव्रतधारी साधु नही कहलाते और उनको अन्न—जल आदि किसी भी प्रकार की सहायता देना मास सेवन वैश्यागमन आदि के समान पाप करना है। जब मानव को किये जाने वाले उक्त सहयोग के लिए भी इस प्रकार पाप होना बतलाया जाता है तो पशु—पक्षी आदि के लिए तो कहना ही क्या ?

ऐसे सिद्धान्त जब जैन धर्म के नाम से प्रसारित होने लगे तब स्वर्गीय आचार्यश्री श्रीलालजी म.सा एव युग द्रष्टा स्वर्गीय आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा आदि जो चतुर्विध सघ के सचालक महापुरुष थे ने भी जब इस प्रकार के सिद्धान्त जैन धर्म के नाम से जनता मे प्रसारित होते हुए देखे तो उनसे कैसे रहा जा सकता था ? क्योकि इस प्रकार के मानवता विरोधी सिद्धान्त जैनधर्म के नाम से प्रसारित हो इससे जैन धर्म का अवमूल्यन एव तीर्थंकर आदि पवित्र पुरुषों के प्रति जनमानस में कलुषित भाव पैदा होना स्वाभाविक ही था।

इन भ्रांत सिद्धान्तो को आगमीय धरातल पर भ्रांत सिद्ध करते हुए सद्धर्ममडन आदि ग्रन्थो का प्रसग बना, जिससे प्रबुद्ध वर्ग सावधान होने लगा तो तेरह पथ समाज का वर्ग येन-केन

प्रकारेण उक्त आचार्य देवो का प्रभाव कम करने का प्रयत्न करने लगा एव प्रपच मूलक बाते भी रखने लगा। लेकिन आचार्य देवो ने एवं उनके अनुयायियो ने यथास्थान यथायोग्य स्पष्टीकरण आदि के द्वारा वस्तु स्वरूप का प्रतिपादन किया। वर्तमान मे आचार्यश्री तुलसी तेरापथ समाज के एकमात्र अनुशास्ता कहलाते है और आचार्यश्री तुलसी जैन समाज की एकता सबधी बाते रखते हुए अपने उन पूर्वाचार्यो के सिद्धान्तो को जनता की दृष्टि से बचाने के लिए भाषा चातुर्य एव लेखन कला के माध्यम से जनता के समक्ष प्रस्तुत करते रहते है। अनेक आयामो के साथ ऐसा वातावरण बनाया जाने लगा जिससे सहसा भासित होने लगा कि सम्भव है आचार्यश्री तुलसी उन सिद्धान्तो के प्रति सक्रिय न रह रहे हो परन्तु आम जनता की रुचि के अनुसार साहित्य के साथ–साथ पूर्व की मानवता विरोधी मान्यता को शब्दो के आवरण मे कलापूर्ण तरीके से पुरानी शराब को नई बोतल मे भरने की तरह जन–मानस के सामने प्रसारित किया जाने लगा।

इतिहास आदि के नाम मे कालूगणी आदि के जीवन चारित्र के प्रसग से एव दृष्टात आदि पुस्तको के माध्यम से आचार्यश्री रघुनाथजी म सा से लेकर अन्य स्थानकवासी समाज के चारित्रनिष्ठ महाव्रतधारी महात्माओ के प्रति घृणास्पद अशुद्ध वायुमडल भी लुभावने प्रचार की आड मे चल रहा है। विशेषकर कालुगणी के जीवन चरित्र मे युगदृष्टा आचार्यश्री जवाहरलाल जी म सा एव शातक्रांति के अग्रदूत आचार्य प्रवर श्री गणेशीलालजी म सा पर जो मिथ्या आक्षेपात्मक वर्णन देकर अप्रमाणिक अनर्गल प्रलाप किया गया है, वह नितात असत्य तो है ही साथ ही तेरापथ सघ एव संघनायक की छद्मपूर्ण नीति एव अशोभनीय मनोवृत्ति को भी स्पष्ट करता है।

इस नीति का जब परिज्ञान होता है तो कोई भी सिद्धान्त प्रिय पुरुष इसे कैसे पसद कर सकता है। इधर तो जैन एकता का नारा और उधर छोटे–बडे पत्र–पत्रिकाओ एव पुस्तको के माध्यम से आज भी स्थानकवासी समाज को भ्रमित करने की असफल चेष्टा की जा रही है और स्थानकवासी महात्माओ को मनमाने तरीके से हीन बताने का असफल प्रयास किया जा रहा है। इस प्रकार के सिद्धात विरोधी साहित्य चाहे वह इतिहास के रूप मे हो अथवा पुस्तकाकार एव पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से हो। जो कुछ किया जा रहा है, वह कतई शोभास्पद नही है। आचार्यश्री तुलसीजी को चाहिए कि इस प्रकार की दुधारी नीति को अपनी छत्र-छाया मे न पनपने दे, यही श्रेयस्कर है।

तेरापथ समाज के साहित्य मे स्थानकवासी, साधुमार्गी महापुरुषो पर जो असत्य एवं मन कल्पित अनर्गल लेखन हुआ है, उससे साधुमार्गी संघ सदस्यो को कितना आघात लगा उसे स्पष्ट करने के लिए उनके द्वारा पारित प्रस्ताव की अविकल प्रतिलिपि १० नवम्बर १९८१ के श्रमणोपासक अक से दी जा रही है—

प्रस्ताव ११–आज की यह आमसभा 'बालोतरा टाइम्स' के तेरापथ विशेषाक मे 'तेरापथ के अष्टम आचार्यश्री कालूगणी' शीर्षक से श्री मोतीलालजी मालू द्वारा लिखित लेख

मे "विरोध व हत्या का षड्यन्त्र" उपशीर्षक में स्थानकवासी साधु गणेशीलालजी व जवाहरलाल जो इनको धर्म चर्चा मे परास्त नहीं करने के कारण विघ्न खडा करने पर तुले हुए थे। एक बार मगनलालजी स्वामी को स्थडिल भूमि से लौटते कोई कोडा मारकर चला गया एव इस घटना के बाद कालूगणी की हत्या के षड्यन्त्र का भडाफोड हुआ। बीकानेर के टीबों मे शौचादि से लौटते समय एक व्यक्ति कालूगणी के सामने पिस्तोल ले कर खडा हो गया आदि। जिस तरह की भ्रातिपूर्ण एव अशिष्ठ भाषा मे मनगढत जो उद्धरण दिया है, इससे समस्त साधुमार्गी जैन सघ के अनुयायियो के हृदय पर बड़ा आघात ही नहीं लगा वरन् उत्तेजनापूर्ण वातावरण भी उत्पन्न हुआ है। अत समस्त सघ इसके प्रति कडा विरोध प्रकट करता है।

अनुशासन व एकता की बात करने वालो से यह अपेक्षा है कि वे अपनी कथनी व करनी मे एक रूपता दर्शावें।

तेरापथ इतिहास मे सद्धर्ममडन के प्रकरण से जो कहा है उसका कुछ स्पष्टीकरण यहा किया जा रहा है—

तेरहपथ समाज के मान्य ग्रन्थ भ्रम—विध्वसनम् मे अप्रामाणिक वेग चूलिया ग्रन्थ का उद्धरण देते हुए अपने मिथ्या ग्रह का पोषण किया जो कि कल्पसूत्र आदि से विपरीत पडता है।

कल्पसूत्र से विपरीत भावो को व्यक्त करने वाले इस प्रसग को भ्रम विध्वसन मे देखा तो 'सद्धर्म मडन' की प्रथम आवृत्ति की भूमिका मे भूमिकाकार ने उसी ग्रन्थ का उद्धरण देकर उनके मिथ्या ग्रह का निरसन किया है।

वेग चूलिका की प्रथम गाथा जिसमे कि वीर निर्वाण के २९१ वर्ष पश्चात् सम्प्रति राजा के होने का उल्लेख है, यह उल्लेख भगवान् के निर्वाण के पश्चात् कब कब, क्या क्या घटना घटी, इसका द्योतन करने के लिए किया गया है। वीर निर्वाण के पश्चात् २९१ वर्ष मे सम्प्रति राजा हुआ और उसने क्या—क्या कार्य किया और उसी वीर निर्वाण के १६६६ वर्ष से आगे ३३३ वर्ष तक दुष्ट व्यक्ति धर्म की अवमानना करते रहेगे। १६६६ वर्ष के बाद सघ अर्थात् भगवान महावीर की जन्म की राशि पर ३३३ वर्ष का धूमकेतु-ग्रह लगेगा। वह जब उस राशि पर से हट जाएगा तब सघ का पुन. उदय—उदय पूजा होगी। इस आधार से भगवान् निर्वाण के २०३२ वर्ष के लगभग धूमकेतु ग्रह हट जाने से सघ की उदय—उदय पूजा का प्रारम्भ होगा। यह बात कल्पसूत्र के मूल पाठ से प्रामाणिक होती है।

जप्पभिइ चण सुद्धाए मास रासी महागहे दो वास सहस्ठिइ समणस्स भगवओ महावीरस्स जन्म नक्खत सकते तप्पभिइ च ण समणाण निग्गथाण य नो उदिए उदिए पूजा सस्कार पवतई। (कल्पसूत्र)

इस कल्पसूत्र के मूल पाठ को पुष्ट करने वाली बात सद्धर्म मडन की भूमिका मे स्पष्ट की गई है वह ठोस एवं प्रामाणिक है।

तेरापथ इतिहास मे जो लिखा गया है उसमें वग चूलिका की प्रथम गाथा के अन्दर जो प्रथम घटना वीर निर्वाण के वाद घटी वह वीर निर्वाण के वाद २६१ वर्ष मे घटी । इस २६१ वर्ष को १६६६ मे और जोड लिया गया है । वह जोडना उपयुक्त नहीं है, क्योकि १६६६ वर्ष के अन्तर्गत ही २६१ वर्ष समाविष्ट है । यदि इनको १६६६ वर्ष से अलग गिनते हैं तो उदय-उदय पूजा नहीं होने का उल्लेख कल्पसूत्र मे है, उससे मेल नही होता । क्योकि २६१+१६६६+३३३ वर्ष जोडने से २३२३ वीर निर्वाण हो जाता है ।

वीर निर्वाण के २००० वर्ष वाद दुष्ट ग्रह हटा और इसके वाद अब तक लगभग ५०८ वर्ष वीते यदि इस ५०८ वर्षो को २३२३ मे जोडेंगे तो २८३१ होता है जबकि आज तक वीर निर्वाण २५० से कुछ अधिक वर्ष ही हुए हैं, अत यह प्रत्यक्ष विसगति एव अप्रामाणिकता सामने आती हैं ।

तेरापथ इतिहास मे दूसरी अप्रामाणिकता यह प्रदर्शित हुई है कि वीर निर्वाण की २३२३ की गिनती लगाकर उसमे मे ४७० वर्ष विक्रम सवत् का काटकर १८५३ वर्ष रखकर यह ध्वनित किया है कि १८५३ मे दुष्ट ग्रह की समाप्ति हुई । लेकिन यह १८५३ तो विक्रम सवत् ने होता है । जवकि दुष्टग्रह की अवस्था वीर निर्वाण मे २००० वर्ष तक चलने का 'कल्पसूत्र' मे स्पष्ट कहा है । अत उससे यह ज्ञात नही होता । विक्रम सवत् की दृष्टि से भी २००० वर्ष पूरे नही होते हैं । इस प्रकार तेरापथ इतिहास मे मनमाने तरीके से तोड-मरोड कर अप्राणाणिकता के साथ कई विसगतिया पैदा कर दी गई है और वह भी अप्रामाणिक ग्रंथ के आधार पर ।

सद्धर्ममडन की भूमिकाकार ने कल्पसूत्र के अविरुद्ध और वीर निर्वाण की विसगतियो से रहित वग चूलिका की प्रथम गाथा की सख्या सहित वीर निर्वाण से १६६६ वर्ष में धूमकेतु ग्रह का ग्रहण किया । प्रथम गाथा में २६१ वर्ष की घटना का उल्लेख कर यहा जोडने का प्रसग नही था इसलिए उसका उल्लेख नहीं किया है । लेकिन प्रथम गाथा की सख्या को १६६६ के अन्तर्गत ग्रहण किया है । वीर निर्वाण से १६६६ वर्ष तक और भी कई घटनाए घटी, उन सभी का उल्लेख करने का यहा प्रसग नही है । इसी तरह से वग चूलिका की प्रथम गाथा की घटना का उल्लेख इस १६६६ मे सयुक्त कर लिया गया है जो कि उपयुक्त एव प्रामाणिक है ।

सद्धर्ममण्डन की भूमिका पृष्ठ में कल्पसूत्र का जो पाठ ऊपर दिया है उसे ध्यान से देखे । इस मूल पाठ मे स्पष्ट कहा है भगवान महावीर के जन्म नक्षत्र पर २००० वर्ष की स्थिति वाला भस्म राशि नामक महाग्रह जव से लगेगा तव से श्रमण निग्रन्थ-निर्ग्रन्थियों का पूजा सत्कार उदय-उदय नही होगा ।

भगवान महावीर का निर्वाण हो जाने के वाद जव २००० वर्ष हुए उस समय विक्रम सवत् १५३० चल रहा था । जव यह भस्म ग्रह सम्पूर्ण हो गया तब सवत् १५३१ में लोकाशाह ने धर्म क्रान्ति के बीज बोये । जिसके लिए तेरह पथ इतिहास के पृष्ट २१ के दूसरे पेराग्राफ में लिखा है ।

"भस्मग्रह जब वृद्ध हो चुका था उस समय लोकाशाह ने धर्म क्रांति के बीज बोये थे । भस्म ग्रह के उतरते ही वे फलीभूत हुए और विक्रमसवत् १५३१ में लोकाशाह प्रतिबोधित ४५ व्यक्ति ने एक साथ दीक्षा ग्रहण की ।

तेरह पथ इतिहास के पृष्ठ ४२७–४२८ में चूरू चर्चा का उद्धरण देकर स्वर्गीय आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा. के विषय मे जो अनर्गल वातें लिखी है वह भी उपरोक्त बातों की तरह अप्रामाणिक है ।

इसी प्रकार तेरापथ इतिहास आदि ग्रन्थो मे अनेक अप्रामाणिक प्रसग दिये गये है इससे वे ग्रथ प्रामाणिकता की कोटि मे नही आ सकते हैं ।

आचार्यश्री तुलसी भी अपने पूर्वाचार्यों की अप्रामाणिक परम्परा को निभा रहे हैं उसका भी एक नमूना 'नमस्कार महामत्र' विषयक यहां उद्धृत किया जा रहा है ।

आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा का प्रश्नोत्तर 'शीर्षक विचार जिन वाणी मई १९७८ के पृष्ठ पर क्या नवकार मे लोए' शब्द हटाना सही है ?' प्रकाशित हुआ । इसके उत्तर में जिनवाणी १९७८ जून के पृष्ठ ३५ पर आचार्य तुलसी का स्पष्टीकरण छापा है-उसमे उनकी निम्न वाक्यावली विचारणीय है—

'आचार्यश्री तुलसी ने नवकार मन्त्र से लोए शब्द को हटा दिया है या हटाने की बात करते है–सर्वथा मिथ्या एव भ्रमपूर्ण है । आचार्यश्री तुलसी ने नमस्कार महामंत्र से न तो लोए शब्द को हटाया है और न हटाने की इच्छा रखते हैं ये स्पष्ट है कि उन्होने न तो लोए शब्द हटाया और न हटाने की इच्छा रखते है आदि जो स्पष्टीकरण दिया वह कहा तक सत्य है ?

इसकी अप्रामाणिकता विश्वभारती लाडनू से प्रकाशित अग सुत्ताणि के विवाह पण्णती नामक अग से देखी जा सकती है । । इस ग्रन्थ के प्रारम्भ मे मगलाचरण के रूप में जो नमस्कार मन्त्र दिया है, उसमे लोए शब्द नही है । (अन्य भगवती सूत्र जो आगमोदय समिति सूरत से, आचार्यश्री अमोलक ऋषिजी म सा के द्वारा हैदराबाद से, एव शास्त्रोद्धार समिति राज समिति राजकोट से तथा सुत्तागमें लुधियाना से प्रकाशित हुए हैं अन्य भी कई स्थलो से प्रकाशित हैं उन सभी के मूल पाठ मे लोए' शब्द लिखा हुआ है') ।

यदि उपरोक्त स्पष्टीकरण मे सत्यता होती तो नमस्कार मत्र के साथ ही लोए शब्द रहता पर किसी प्रति का बहाना लेकर लोए शब्द को मूल से हटाना और फिर कहना कि मैं हटाना नहीं चाहता यह कितना असत्य है ? हां, 'लोए' शब्द को मूल से नही हटाकर टिप्पणी में स्पष्टीकरण होता तब तो सत्यता प्रकट होती । पर ऐसा न करके मंगलाचरण के रूप में आये हुए नमस्कार मत्र के मूल पाठ में से लोए शब्द को हटाकर स्पष्टीकरण में यह कहना कि–

आचार्य तुलसी ने न तो लोए शब्द को हटाया और न हटाने की इच्छा रखते है। यह कथन कैसे प्रामाणिक कहा जा सकता है, ऐसे प्रत्यक्ष राजनैतिक ढग से अप्रामाणिकता वरतने वाले अगुवा एव अनुयायी तेरापंथ इतिहास के माध्यम तरीके से किसी को भी अप्रामाणिक करने मे या लिखने में कैसे सकोच कर सकते हैं।



परिशिष्ट—६

चूरू-चर्चा

सम्वत् १९८४ की साल मे पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी म.सा., कोठारी मूलचन्दजी की आग्रहभरी विनती को स्वीकार कर बीकानेर, सरदारशहर विहार करते हुए चूरू नगर मे पधारे थे और वहा अग्रवाल सज्जन के मकान में विराजे थे। संयोगवश उस समय तेरहपंथियो का महोत्सव भी चूरू नगर मे ही था। इस उत्सव मे सम्मिलित होने के लिये स्थान-स्थान से तेरापंथी साधु और श्रावक चूरू मे एकत्रित हुए थे। पूज्यश्री जवाहरलालजी म.सा. का व्याख्यान जहा होता था, वहा जैन तथा जनेतर जनता की अपार भीड होती थी। पूज्यश्री के युक्तियुक्त हृदयार्पक व्याख्यान का प्रभाव जनता पर जादू की तरह पडता था। एक दिन की बात है कि पूज्यश्री ने अपने व्याख्यान मे प्रसगवश फरमाया कि साधु विना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार नहीं ले सकता। यदि लेता है तो चातुर्मासिक प्रायश्चित का भागी बनता है। वह साधु तीन बार तक प्रायश्चित लेकर गच्छ मे रह सकता है। पर चौथी बार निष्कारण साध्वी से आहार पानी लेने पर यदि प्रायश्चित स्वीकार करे तो भी वह गच्छ से बाहर कर देने योग्य होता है। इस विषय की सिद्धि के लिये पूज्यश्री ने अनेको शास्त्रीय प्रमाण बतलाये जिससे जनता पर गहरा प्रभाव पडा। परन्तु यह बात तेरापन्थी श्रावकों को अच्छी नहीं लगी। क्योंकि उनके साधु तो रोज ही विना कारण साध्वियों से आहार-पानी लेते देते हैं। अत. व्याख्यान श्रवण के पश्चात् चूरू निवासी तेरापन्थी श्रावक गोरीलालजीबैद अपने पूज्यश्री कालूराम

के पास गये और इस विषय की चर्चा करते हुए अपने पूज्यजी से पूछा कि–क्या साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार–पानी नहीं ले सकता ?

पूज्य कालूरामजी ने उत्तर देते हुए कहा–यदि साध्वी का लाया हुआ आहार–पानी नही कल्पता तो फिर हम क्यो लेते ?

वैदजी ने कहा–क्या इस विषय मे कोई शास्त्रीय प्रमाण भी है ?

पूज्यजी–हा बहुत प्रमाण हैं ।

वैदजी–अगर बाईस सम्प्रदाय के साधु इस विषय मे प्रमाण जानने के लिये आपके पास आवें तो क्या आप उन्हे बता सकेंगे ?

पूज्यजी–क्यो नही ? अवश्य बतलाएगे ।

इस प्रकार पूज्य कालूरामजी के कहने पर वैदजी पूज्यश्री जवाहरलालजी म.सा के पास आये और कहा कि–आप तो साध्वी के द्वारा लाये हुए आहार–पानी के लेने का साधु के लिये निषेध करते हैं, परन्तु हमारे पूज्यजी का तो कहना है कि साध्वी का लाया हुआ आहार पानी साधु ग्रहण कर सकता है ।

पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा ने पूछा–क्या इस विषय मे आपके पूज्यजी कोई शास्त्रीय प्रमाण भी बता सकेंगे ?

वैद्यजी–हा, क्यो नही, अगर आप या आपके साधु पधारेंगे तो वे अवश्य बतलायेंगे।

तब पूज्यश्री जवाहरलालजी म.सा ने मुनिश्री [बड़े चादमलजी म वर्तमान आचार्य प मुनि श्री गणेशीलालजी म मुनिश्री हरकचन्दजी म. तपस्वी मुनिश्री सुन्दरलालजी म. और तपस्वी मुनिश्री केशरीमलजी म को सरल भाव से प्रमाण पूछने के लिये भेजा और कहा कि मेरे जानने मे तो कोई शास्त्रीय प्रमाण नही है, पर तेरापथी पूज्यजी यदि कोई शास्त्रीय प्रमाण बतावें तो आप लोग उसे देख आवें, यदि वस्तुत कोई शास्त्रीय प्रमाण भी होगा तो अपने को मानने मे कोई आपत्ति नही है । इस प्रकार पूज्यश्री की आज्ञा पाकर उपरोक्त पाचो मुनिराज तेरापथी साधुओ के स्थान पर गये । उस समय तेरापन्थियो के स्थान मे व्याख्यान हो रहा था वर्तमान आचार्य प मुनिश्री गणेशीलालजी म सा. ने पुछवाया कि क्या हम लोग भीतर आ सकते हैं ? स्वीकृति सूचक उत्तर मिलने पर पाचो मुनिराजो ने भीतर प्रवेश किया । तेरापन्थी श्रोताओं मे जो सभ्य थे वे मुनिराजो के आने पर खड़े हुए और उनसे बैठने का भी आग्रह किया । परन्तु प. मुनिश्री गणेशीलालजी म.सा ने फरमाया कि हम लोग थोडी देर के लिये ही आये हैं, बैठने की कोई आवश्यकता नहीं है । थोडी देर बाद प मुनिश्री गणेशीलालजी म ने गौरीलालजी वैद से कहा कि आपके पूज्यजी ने बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार–पानी साधु को ग्रहण करना कल्पता है, इस विषय मे शास्त्रीय प्रमाण देने को कहा है सो वह किस शास्त्र का प्रमाण है, यह बतावें ।

तेरापन्थी पूज्यश्री ने कल्पना भी नही की होगी कि भरी सभा मे इस प्रकार शास्त्रीय प्रमाण बतलाने की चुनौती दी जायगी। उन्होने तो अपने भक्त को भोला समझकर टाल दिया था। परन्तु अचानक यह प्रश्न उपस्थित होने पर पूज्य कालूरामजी नकपका गये। उनके चेहरे का रग उड गया। आखे नीचे झुक गई। प्रश्न एकदम सीधा था, हिया हवाला करने की कोई गुंजाइश नही थी। बेचारे पूज्यजी मुसीबत मे फस गये। अगर कहते हैं-प्रमाण है, तो दिखावे कहा से ? और अगर कहते हैं नही, तो कलई खुलती है। जैसे सद्गृहिणी अपने पति को भोजन कराती है, बिछौना बिछाती है, वैसे ही उनकी साध्विया आहार लाती है, परोसती हैं, बिछौना करती हैं, सो यह सब शास्त्र विरुद्ध ठहरता है। इस प्रकार एक ओर कुआ और दूसरी ओर खाई देखकर कालूरामजी घबरा गये। कुछ देर मौन रहने के बाद आखिर उनसे यही कहते बना कि—

'शास्त्र मे कठेई निषेध' चाल्यो कोयनी, ई वास्ते साध्वी रो लायो हुवो आहार पाणी साधु ने कल्पे है।

यह है कालूरामजी स्वामी का प्रमाण जिसके बल पर तेरापथी साधु, साध्वियो से आहार पानी मगवाते हैं और फिर भी नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पालने का दम्भ भरते है, कैसी विडम्बना है।

मगर प. मुनिश्री गणेशीलालजी म सहज ही मानने वाले नही थे। उन्होने फरमाया कि साधु को साध्वी से आहार मगवाकर खाने का शास्त्र मे कही विधान नही है। आपका कहना है कि निषेध न होने के कारण ही साधु, साध्वी का लाया हुआ आहार ग्रहण कर सकता है, परन्तु यह कथन भी तो शास्त्र विरुद्ध है। शास्त्र मे स्पष्ट निषेध किया है—

'जे निग्गंथा य निग्गंथिओ य संभोइया सिया, णो ण्हं कप्पइ अन्नमन्नस्स अन्तिए वेयावच्चं करित्तए। अत्थियाइं इणहं केइ वेयावच्चं कप्पइ णं तण्हं वेयावच्चं कारवित्तए। णत्थियाइं इणहं केइ वेयावच्चं करेत्तए, एवं ण्हं कप्पइ अन्नमन्नेणं वेयावच्चं कारवित्तए।'

—व्यवहार सूत्र, उ० ५

टीका—ये निर्ग्रन्था निर्ग्रन्थ्याश्च साम्भोगिकास्तेषां नो णमिति वाक्यालङ्कारे कल्पते अन्योन्यस्य वैयावृत्यं कारयितुम्। अस्ति कश्चित् वैयावृत्यकरस्तेन कल्पते न वैयावृत्यं कारयितुम्। नास्ति चेत् कश्चित् वैयावृत्यकर एवं सति कल्पते अन्योन्यस्य वैयावृत्यं कारयितुमिति सूत्रसंक्षेपार्थः।

भावार्थ. एक मण्डल के (साम्भोगिक) साधु-साध्वियो को परस्पर से वैयावच्च करवाना नही कल्पता है। एकमात्र साधु ही दूसरे साधु की व्यावच्च (वैयावृत्य-सेवा) करे, तथा साध्वी ही साध्वी की व्यावच्च करे। कदाचित् कोई सकट का समय आ गया हो, साधु के पास दूसरा साधु न हो अथवा साध्वी के पास दूसरी साध्वी न हो तो ऐसे सकटकाल मे साधु-साध्वी परस्पर मे एक दूसरे से व्यावच्च करा सकते है।

व्यवहार सूत्र की व्याख्या करते हुए भाष्य मे कहा है—

उउभजमाणसुहेहि देहसहावाणुलोभभुज्जेहि
कढिणहिमयाण वमण वधत चिरेण कइयविया

टीका कृतौ यैर्भयमानैर्भज सेवायामिति वचनात् सुख जयन्ते तानि ऋतुभजमान सुखानि तैस्तथा देह शरीर तस्य स्वभाव स्वरूप देहस्वभावस्यानुलोमान्यनुकूलानि यानि तैर्वैयावृत्य कुर्वत्य सयत्यो, ये सयतीभिरानीत भुन्जते तेषा कठिनहृदयानामपि धृतिवलिष्ठानामपि संयतात्मो चिरेण कालेन वध्नन्ति वावयन्तीत्यर्थ. कथभूता इत्याह कैतविक्य कैतवेन कपटेन अन्यन्मनसि अन्यद्वाचि इत्यादि लक्षणेन्न निर्वृत्ता कैतविक्य ।

अर्थात् जिस ऋतु मे जो पदार्थ सुखदायी होते हैं उन पदार्थों द्वारा तथा शरीर की प्रकृति के अनुकूल पदार्थों द्वारा साधु की सेवा करने वाली—ऐसा आहार लाकर साधु को खिलाने वाली साध्विया मजवूत दिलवाले अर्थात् धैर्य आदि से सम्पन्न हृदय वाले–धीर-वीर और सयम परायण साधु के सयम को भी नष्ट कर डालती हैं। उन साध्वियो के हृदय मे कुछ और होता है तथा वाणी मे कुछ और होता है। वे कपट युक्त होती है।

विना कारण व्यावच्च करने के निषेध का शास्त्रीय पाठ और भाष्य वतलाते हुए प. मुनिश्री गणेशीलालजी म सा ने उसका विवेचन करते हुए कहा कि—हट्टे-कट्टे साधुओ के मौजूद रहते हुए भी शास्त्र विरुद्ध साध्वियो का लाया हुआ आहार-पानी आदि भोगना साधु के लिए उचित नही है। क्योकि वर्तमान काल के साधु-साध्वियो ने वीतरागावस्था को प्राप्त नही कर लिया है। साधु-साध्वी के पारस्परिक अधिक ससर्ग रहने से मानसिक विकृति उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

वास्तविक वात यह है कि ब्रह्मचर्य साधु धर्म का प्राण है। वह सव तपो मे उत्तम तप है। 'तिवेसु वा उत्तम वभचेर' कहकर शास्त्रकारो ने ब्रह्मचर्य की महिमा प्रकट की है। अतएव ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए शास्त्रो मे अनेक मर्यादाए साधुओ के लिए वताई गई हैं। दशवैकालिक सूत्र मे यहा तक कहा है कि'चित्तभित्ति न निज्झाए' अर्थात् जिस दीवाल पर स्त्रियो के चित्र वने हो, उस दीवाल को भी साधु न देखें। ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए ही नौ वाडो का कथन शास्त्र मे किया गया है। ऐसी दशा मे साध्वी, साधु के लिए आहार-पानी लावे, साधु को परोस-परोस कर जिमावे, उनका विछौना विछावे, इत्यादि घनिष्ट सम्पर्क साधुओ के साथ रखे, यह कहा तक उचित कहा जा सकता है? गृहस्थ पति-पत्नी को यह व्यवहार भले ही शोभा देता हो, पर साधु-साध्वी को यह शोभा नही देता। इस सीधे-सादे सत्य को जो नही समझते या समझकर भी जो अपनी सुख-सुविधा के स्वार्थ से प्रेरित होकर मानना नही चाहते, वे किस प्रकार अपने ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हैं, यह भगवान् ही जानें या स्वय वही जानें।

इस प्रकार प मुनिश्री गणेशीलालजी म अपने विषय को समझा रहे थे कि वीच मे पूज्यश्री कालूरामजी ने प्रश्न किया—सभोग कितने प्रकार के होते हैं?

इसके उत्तर मे प मुनिश्री गणशीलालजी म ने निम्न १२ प्रकार के सभोग बतलाये—

दुवालसविहे सभोगे पण्णत्ता, तजहा-
उवहिसु अ भत्तपाणे, अ जली पग्गहेत्तिय
दायणे य निकाए य, अब्भुट्ठाणे त्ति आवरे
किइकम्मस्स य करणे, वेयावच्च करणे इ य
समोसरण सन्निजिज्जा य कहाए य पबधणे

अर्थात् (१) उपधि (२) शास्त्र की वाचना (३) आहार-पानी (४) अ जली-करण (५) वस्त्र तथा शिष्य आदि देना (६) स्वाध्याय, शय्या आदि के लिए निमन्त्रण देना (७) अभ्युत्थान, उठकर खडा होना, (८) कृतिकर्म-विधिपूर्वक वन्दन करना (९) वैयावच्च, आहारादि देकर सहायता करना (१०) समवसरण-व्याख्यान आदि मे साधर्मी साधुओं का मिलना (११) निषद्या-एक आसन पर बैठना (१२) कथा प्रबन्ध-पाच प्रकार की कथा करना ।

इन बारह मे से साधु-साध्वी के साथ छह व्यवहार कर सकते है । वे ये है—१ श्रुत २. अ जलिग्रहण ३ अभ्युत्थान ४ कृतिकर्म ५ समवसरण ६. कथा प्रबन्ध । कथा प्रबन्ध में से साधुवाद, जल्प तथा वितडा ये तीन कथाए साध्वी के साथ नही कर सकते है-सिर्फ दो प्रकीर्ण कथा और निश्चय कथा ही कर सकते हैं । इन छ व्यवहारो से अतिरिक्त शेष छह व्यवहार साध्वी के साथ साधु को करना नहीं कल्पता है । अर्थात् १ उपधि (वस्त्र पात्र का धुलाना, रगाना लेन देन) २ आहार-पानी लेना-देना ३ सेवा के लिए शिष्यादिक देना ४ निमन्त्रण ५ वैयावच्च और ६ निषद्या(एक आसन पर बैठना) । ये छ प्रकार के सम्भोग करना शास्त्र मे निषिद्ध हैं । उपरोक्त छ प्रकार के सम्भोगो का निषेध करते हुए समवायाग सूत्र की टीका मे लिखा है—'विसभोगिकेन पार्श्वस्थादिना वा सयत्या वा सार्द्धमुपधि शुद्धमशुद्ध वा निष्कारण गृह्णन् त्रीन्ति प्रतिपन्नप्रायश्चित्तो पि वेलाश्चतुर्थ्योपरि न सभोग्य । एवमुपधि परिकर्म परिभोग वा कुर्वन् सम्भोग्यो विसम्भोज्यश्चेति अर्थात्-अन्य गच्छ के साधु के साथ शिथिलाचारी साधु और साध्वी के साथ शुद्ध वस्त्र-पात्र आदि रूप उपधि को बिनाकारण ग्रहण करने वाले साधु को तीनबार तक तो प्रायश्चित देकर गच्छ मे लिया जा सकता है । अगर चौथी बार फिर ग्रहण करे और प्रायश्चित लेना चाहे तो भी उसे गच्छ से बाहर कर देना चाहिये । इसी तरह साध्वी से परिग्रह-वस्त्र को धुलाना-सिलाना, पात्र को रगाना, ओघे पू जनी बटाना आदि और परिभाग वाली उपरोक्त चीजो को साध्वी से लेकर पुन अपने काम मे लेने वाले साधु को भी उपधि लेने की तरह तीन बार तो प्रायश्चित देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, पर चौथी बार प्रायश्चित लेने पर भी नही रखा जा सकता ।

भक्तपानि-उपधिद्वारवदवसेय, नवरमिह भोजनदान च परिकर्मपरिभोगयो: स्थाने वाच्यमिति ।

अर्थात्—भात पानी का सभोग भी उपधि की तरह समझना चाहिए। यहा भी साध्वी से लाया हुआ विना कारण आहारादि ग्रहण करे या विना कारण साध्वी को देवे तो लेने और देने वाले साधु को तीन वार प्रायश्चित देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, परन्तु चौथी वार प्रायश्चित लेने पर भी नही रखा जा सकता है।

वैयावृत्यम्—'आहारोपधिदानादिना प्रश्रवणादिमात्रकार्पणादिनाधिकरणोपशमनेन साहाय्य दानेन वोपष्टम्भकरण तस्मिश्च विषये सम्भोगासम्भोगौ भवत इति।'

अर्थात्—आहार और उपधि देना लघुनीत और बडी नीति को परठना, क्लेश होने पर समझा कर शान्त करना, आसन बिछाना, प्रतिलेखन करना, उठाना-बैठाना, सुलाना आदि सहायता करना यह सब व्यावच्च सभोग का अर्थ है। वे व्यावच्च सबधी बाते जो साधु निष्कारण साध्वी से करावे तो उसे तीन वार प्रायश्चित देकर गच्छ मे रखा जा सकता है, परन्तु चौथो वार प्रायश्चित लेने पर भी नही रखा जा सकता।

इसी तरह छहो सभोगो का समवायाग सूत्र की टीका मे निषेध किया गया है। परन्तु विस्तार भय से हम यहा सब सभोगो का विवेचन नही कर रहे है। बचे हुए सम्भोगो का विवरण भी उपधि आदि की तरह ही समझ लेना चाहिए। जबकि साध्वी से व्यावच्च कराने का व्यवहार सूत्र के मूल मे ही निषेध है तो फिर साध्वियो से आहार-पानी मगा कर खाना कहा तक उचित कहा जा सकता है?

इस पर तेरापथी पूज्य कालूरामजी ने कहा कि व्यावच्च करने का अर्थ हाथ-पैर दबाना ही है। आहार मगाना, परोसना आदि अर्थ नही है।

तब प. मुनिश्री गणेशीलालजी म ने कहा कि व्यावच्च शब्द का अर्थ केवल हाथ-पैर दबाना ही है, यह बात शास्त्र सम्मत नही है। व्यावच्च शब्द के इस सकीर्ण अर्थ को कल्पना सिर्फ इसलिए की गई है कि तेरापथी साधुओ को आहार-पानी लाने का कष्ट न करना पडे और सीधा साध्वियो का लाया आहार-पानी करने मे सुविधा हो। अपनी सुविधा और मौज के लिए यह अर्थ करते समय न तो शास्त्रीय अर्थ पर ध्यान दिया गया है और न अपने मान्य ग्रन्थ भ्रम-विध्वसन पर ही नजर फेरी है।

व्यवहार सूत्र मे वैयावच्च का विवेचन करते हुए कहा है—

दसविहे वैयावच्चे पण्णत्ते, तजहा-आयरियवेयावच्चे इत्यादि। इस पाठ के भाष्य मे कहा है—त्रयोदशभि. पदै वैयावृत्यं कर्त्तव्यम् तान्येव त्रयोदशपदान्याह—

भत्ते पाणे सयणासणे (म) पडिलेहपाममच्छिमद्धाणे
राया. तेणे दडगाहणे य गेलण्णमत्ते य [१२५]

टीका—'भक्तेन भक्तानयनेन वैयावृत्यम् कर्त्तव्य, पानेन-पानीयानयनेन'

अर्थात्—भोजन और पानी लाकर देना व्यावच्च है ।

इस पाठ मे आहार लाने को स्पष्ट रूप मे वैयावृत्य कहा है । इसके अतिरिक्त आपके ग्रन्थ भ्रमविध्वसन मे भी लिखा है—

वैयावच्च—भातादि धर्मना जे आधारकारी वस्तु तेणे करी ने आधार दे तो ।

(भ्र० वि० पृष्ठ २५८)

'व्यावच्च करे–आहारादिक-आपवे करीने' (भ्र० वि० पृष्ठ २५६)

इन उद्धरणो से यह बात स्पष्ट हुई कि वैयावच्च का अर्थ सिर्फ हाथ-पैर दबाना नही है बल्कि आहार-पानी ला देना भी है । और वैयावच्च नामक व्यवहार बिना कारण साधु साध्वी का आपस मे करना निषिद्ध है, इसलिए साध्वी का लाया हुआ आहार ग्रहण करना साधु के लिए निषिद्ध है । अत जो आहार लेता है वह प्रायश्चित का भागी होता है ।

थोडी देर तक चुप्पी साधकर तेरापथी पूज्य कालूरामजी ने कहा कि-देखिये, व्यवहार सूत्र मे स्पष्ट रूप से साध्वी द्वारा लाये हुए आहार-पानी को ग्रहण करने का विधान किया गया है ।

'कप्पति निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा निग्गंथी अण्णगणाओ आगत खयायारं सबलायार संकिलिट्ठायार चरित्त तस्स ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्त पडिवज्जित्ता उवट्ठावित्तए वा संभुजित्तए वा संवसित्तए वा तीसेइ इत्तरियं दिसि वा उद्दिसित्तए वा धारित्तए वा ।'

व्यवहार सूत्र उ० ६

अर्थात्—अन्य गच्छ मे आई क्षत, शबल, भिन्न और संक्लिष्ट आचारवाली अकेली साध्वी को आलोचना कर लेने पर प्रतिक्रमण कर लेने पर और प्रायश्चित्त अंगीकार कर लेने पर उसको महाव्रतो मे स्थापना करना, आहार आदि का संभोग करना, एक स्थान मे रखना और यथा योग्य पदवी देना साधु को कल्पता है ।

देखिए, जैसे यहा अकेली साध्वी आई और आलोचना आदि लेकर शुद्ध हो गई । तब इनके साथ आहार-पानी आदि लेना-देना कल्पता है । इसी तरह इस ओर सो के साथ भी देना लेना कल्पता है ।

उपरोक्त व्यवहार सूत्र का प्रमाण बता कर जब पूज्य कालूरामजी म. चुप हो गये तब प. मुनिश्री गणेशीलालजी म. ने कहा कि साध्वी के साथ आहार-पानी आदि लेने-देने का जो व्यवहार सूत्र के ६ उद्देशे का प्रमाण बताया है, वह बिल्कुल असंगत है । क्योकि इस सूत्र मे तो अपवाद रूप से कथन किया गया है । जिसका आशय यह है कि संयम रक्षा के लिए किसी शास्त्र मे भी अकेली साध्वी को रहना नही कल्पता है । कम से कम ३ साध्विया ही एक साथ रह सकती है । संयोगवश दो साध्विया यदि अन्य हो जाए या दो साध्विया कहीं आगे

भूल जाए तो ऐसी हालत मे वह अकेली रही हुई साध्वी अगर भटकती हुई निर्ग्रन्थ मुनियों के पास आ जाय, जहा अन्य साध्विया भी न हो तो उस साध्वी को वे निर्ग्रन्थ मुनि उसकी सयम रक्षा के लिये आलोचना आदि कराकर आहार-पानी आदि दे ले सकते है और जहा तक दूसरी साध्वियो का योग न मिले वहा तव अपने स्थान मे भी रख सकते हैं। इस प्रकार उपरोक्त सूत्र का विधान जहा अपवाद रूप मे किया गया है वहा यदि कोई इस पाठ मे आये हुए 'सभुजित्तए' और 'सवसित्तए' आदि पदो को प्रमाण मे उपस्थित करके साध्वियो के साथ आहार-पानी लेना-देना और खाना-पीना सिद्ध करना चाहे तो उसका यह प्रयास समझदारो के सामने हास्यास्पद ही ठहरेगा। क्योकि 'सभुजित्तए' और 'सवसित्तए' यह दोनो पद एक साथ आये है। अगर सभुजित्तए पद के आधार पर आहार-पानी के लेन-देन का विना कारण ही विधान मान लिया जाय तो सविसित्तए पद के आधार पर उपाश्रय मे विना कारण एक साथ निवास करना भी विधेय ठहर जायगा। अगर सकटकाल के विना साधारण अवस्था मे भी साधु-साध्वी का एक जगह वसना शास्त्रानुकूल है तो फिर खेद के साथ कहना पडेगा कि ऐसे साधु-साध्वी गृहस्थ पुरुषो और स्त्रियो से किस वात मे श्रेष्ठ हैं ?

अगर 'सविसित्तए' पद सिर्फ सकट काल के लिए है, सदा के लिए नही फिर तो 'सभुजित्तए' पद भी सकटकाल के लिए ही मानना उचित है।

तात्पर्य यह है कि जैसे प्रवलतर कारण उपस्थित होने पर साधु-साध्वियो के साथ एक जगह निवास कर सकता है उसी प्रकार प्रवलतर कारण के होने पर ही साधु-साध्वी को आहार-पानी दे दिला सकता है। एक साथ निवास करने के विषय मे ठाणाग सूत्र का निम्न पाठ प्रमाण है —

पचहिं ठाणेहिं निग्गथा निग्गथीओ य एगत्तओ ठाण वा सिज्ज वा निसीहिय वा चेतेमाणे णातिकम्मति, तजहा-अत्थेगइआ निग्गथा निग्गथीओ य एग मह अगामित छिन्नावाय दीहमद्धमडविमणुपविट्ठा। तत्थ गओ ठाण वा सेज्ज वा निसीहिय वा चेएमाणे णातिक्कमति।

(१) अत्थेगइआ निग्गथा २ गामसि वा नयरसि वा जाव रायहाणि वा वार उवगता एगतिया यत्थ उवस्सय लभति एगतिता णो लभति, तत्थेगतितो ठाण वा जाव नातिक्कम्मति (२)अत्थेगतिआ निग्गथा य० नागकुमारावासंसि वा०वास उवागता, तत्थेगयओ जाव नातिक्कमति(३)आमोसगा दोसति ते इच्छति निग्गथीओ चीवरपडिताते पडिगाहित्ताते, तत्थेगयओ ठाण वा जाव णातिक्कमति(४)जुवाणा दीसति ते इच्छति निग्गथीओ मेहुणपडिताते पडिगाहित्तते तत्थेगयओ ठाणा वा जाव णातिक्कमति।

भावार्थ—साधु तथा साध्वी निम्नलिखित पाच कारणो से एक स्थान मे कायोत्सर्ग उपवेशन (वैठना) शयन तथा स्वाध्याय करते हुए साधु की आचार सवधी आज्ञा का उल्लघन नही करते।

(१) पहला कारण—दुर्भिक्ष आदि कारण से एक देश को छोडकर दूसरे देश मे जाते हुए रास्ते में ऐसा जगल आ गया हो, जिसके इर्द-गिर्द कोई गाव न हो, जो वहुत वडा

हो, जिसमें कोई निवास न करता हो, निर्जन हो, जिसमे अपने साथियो के तथा गौ आदि के आने-जाने का पता न चलता हो, मार्ग मालूम न पड़ता हो, जिसे पार करने मे बहुत समय लगता हो, ऐसे भयानक निर्जन-वन मे साधु-साध्वी एक जगह निवास करे तो उन्हे आज्ञा के उल्लघन का दोष नही लगता ।

(२) दूसरा कारण—जहा राजा का राज्याभिषेक होता हो ऐसी राजधानी मे मनुष्यो की बहुतायत से साधु-साध्वी मे से एक को स्थान मिल गया हो और दूसरे को स्थान न मिला हो तो ऐसी अवस्था मे एक साथ रह सकते हैं ।

(३) तीसरा कारण-किसी गृहस्थ का घर रहने को न मिलने की हालत मे साध्वियो को सुनसान मदिर मे रहना पडे या जहा बहुत भीड-भड़क्का हो या जिसकी देख-रेख करने वाला कोई न हो ऐसे स्थान मे साध्वियो को रहना पडे तो उस स्थान पर साध्वियो की रक्षा के निमित्त साधु भी एक किनारे रह सकते है ।

(४) चौथा कारण—अगर कोई दुष्ट पुरुष साध्वियो का शील खण्डन करना चाहता हो तो उनके शील की रक्षा के लिए साधु-साध्वी के साथ रह सकते हैं ।

यह एक अपवाद सूत्र है । सामान्य नियम तो यह है कि साधु और साध्वी एक साथ निवास न करे और न एकान्त मे भाषण करें, किन्तु यहा पूर्वोक्त चार कारणों मे से किसी कारण के उपस्थित होने पर साधु-साध्वियो के साथ रहने का अपवाद रूप मे विधान किया गया है ।

आप लोगो को समझना चाहिए कि व्यवहार सूत्र के छठे उद्देशक के २३वें सूत्र मे आये हुए 'समुन्जित्ताए' पद से अगर आप साधु-साध्वी का आपस में बिना कारण ही आहार का लेन-देन शास्त्रानुकूल मानते हैं तो फिर 'संवसित्ताए' पद से बिना कारण ही साधु-साध्वी का एक ही उपाश्रय मे रहना शास्त्रानुकूल क्यों नही मानते ? सच तो यह है कि शिथिलाचार बढ़ जाने के कारण और साधुओ मे आराम तलबी आ जाने के कारण ही इस प्रकार की शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा होने लगी है । ऐसा न होता तो साध्वियों के अधिक सम्पर्क से बचने के लिए दी गई शास्त्राज्ञा के विरुद्ध आप क्यों साध्वियों से आहार मंगवा-मंगवा कर खाते ? अगर आप अपने ही हाथों भिक्षा लावें और साध्वियो से न मंगवावें तथा न परोसावें तो आपकी क्या हानि है ? ऐसा करने से आपके संयम की शुद्धता की सम्भावना रह सकती है और इस प्रकार लाभ ही हो सकता है । हानि कुछ भी नहीं है मगर पता नही किस स्वार्थमय कारण से आप अपना आग्रह त्यागना नहीं चाहते । कुछ भी हो, अगर दूरदर्शिता से काम न लिया गया तो एक दिन ऐसा भी आ सकता है जब आपके साधु और साध्वी बिना कारण आहार-पानी का लेन-देन करने के समान बिना कारण एक ही मकान मे रहने लगें । ऐसा करने वाले शिथिलाचारी साधु कहेंगे 'समुन्जित्ताए' पद के आधार पर जैसे आहार-पानी बिना कारण लिया जा सकता है, उसी प्रकार 'संवसित्ताए' पद के आधार पर एक मकान में निवास भी किया जा सकता है । जिनका शिथिलाचार आहार के लेन-देन तक सीमित है, वे उस वक्त क्या उत्तर देंगे ?

जो कुछ भी हो, दुराग्रह के कारण अगर कोई इस अच्छे आशय से दिये गये परामर्श को स्वीकार नही करता तो उसकी मर्जी । निष्पक्ष विचारक सच्चाई को समझ ले तो हमारा प्रयास असफल नही होगा ।

हमने ऊपर ठाणाग सूत्र का उद्धरण देकर पाच कारण बताए है, उनके अनुसार साधु और साध्वी दोनो ही एक स्थान मे रह सकते हैं और कारणवश आई हुई अकेली साध्वी को भी अपने मकान मे रख सकते है। जैसे कि किसी अनार्य पुरुष द्वारा किये जाने वाले अत्याचार से बचाने के लिए किसी सती स्त्री को हाथ पकड कर कोई गृहस्थ अपने घर ले आवे और उसके शील की रक्षा करे तो वह पुरुष लोक की दृष्टि मे अपराधी नही माना जाता है। किन्तु उस सती स्त्री का शील रक्षक होने के कारण धार्मिक माना जाता है । इस अपवाद दृष्टात का आश्रय लेकर यदि कोई निष्कारण अवस्था मे पराई स्त्री का हाथ पकड कर अपने घर मे ले आवे तो वह अपराधी, अन्यायी और राजदड का भागी माना जाता है, परन्तु धार्मिक नही । इसी तरह किसी अन्य गच्छ से निकल कर आई हुई अकेली साध्वी को यदि साधु शील रक्षा करने के लिए शुद्धि करके अपने पास रखे और आहार आदि देवे तो वह शास्त्राज्ञा का उल्लघन करने वाला नही, अपितु आज्ञा पालक माना जायगा । परन्तु निष्कारण अवस्था में यदि कोई इस अपवाद सूत्र का आश्रय लेअर साध्वी का लाया हुआ आहार स्वय ग्रहण करे और उसे देवे तो वह अवश्य ही शास्त्र विरुद्ध आचरण करने वाला होगा ।

इस तरह प मुनिश्री गणेशीलालजी म के सबल प्रमाणो को जोश भरी वाणी मे सुनकर पूज्य कालूरामजी गुमसुम हो गए । उनका मुह नीचा हो गया । मगर उस व्याख्यान सभा मे उनके बहुत से अन्ध भक्त श्रोता मौजूद थे । अपने पूज्यजी को यह दशा देखकर उन्होने मदद कर दी । श्रोताओ ने अपने अमोघ अस्त्र का प्रयोग किया । वह अमोघ अस्त्र था— हो हल्ला—कोलाहल—चिल्लाहट—भारी कोलाहल मे प मुनिश्री की वाणी विलीन-सी हो गई । पाचो मुनिराज अपने स्थान पर शातिपूर्वक लौट आये ।

चूरू मे वर्तमान आचार्य प मुनिश्री गणेशीलालजी म की तेरापथी पूज्य कालूराम जी के साथ जो चर्चा हुई थी उसका सक्षिप्त वृत्तान्त यही है जो ऊपर दिया जा चुका है। परन्तु यह आश्चर्य के साथ कहना पडता है कि तेरापथ के वर्तमान आचार्य तुलसीरामजी ने अपने 'कालू जस रसायन' नामक ग्रन्थ मे चूरु की चर्चा का वर्णन करते हुए स्वरचित ढालो मे लिखा है कि चूरु की चर्चा मे पूज्य कालूरामजी ने निष्कारण साध्वियो से आहार लेने का विधान करने वाले शास्त्र प्रमाण बतलाकर बाईस सम्प्रदाय के साधुओ को परास्त किया था इस प्रकार मिथ्या बाते लिखकर अपनी पोपलीला को जाहिर न होने देने के लिये जो प्रयत्न किया गया है वह समझदारो की दृष्टि मे निद्य ही ठहरेगा । यदि वस्तुत शास्त्र मे ऐसा प्रमाण मिलता हो और तेरापथी साधु उसे बतलाने का कष्ट करे तो बाईस सम्प्रदाय के साधु अब भी मानने के लिए तैयार बैठे है । जबकि शास्त्र मे स्थान-स्थान पर इस विषय का निषेध पाया जाता है तब फिर इसका विधान हो ही कैसे सकता है—फिर भी तेरहपथी साधु अपने सयम

मर्यादा के घातक मन्तव्य का समर्थन करने के लिए अक्सर ठाणांग सूत्र का पाठ पेश करते रहते हैं। अब यहां उस पाठ पर भी जरा विचार कर लेना आवश्यक है। वह पाठ इस प्रकार है—

चउहिं ठाणेहिं णिग्गंथे णिग्गंथिं आलवमाणे वा संलवमाणे वा णातिक्कमति, तंजहा–पंथं पुच्छमाणे वा, पंथं देसमाणे वा, असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दलेमाणे वा, दलावेमाणे वा। —ठा० उ० २, सूत्र २६

टीका—चउहीत्यादि स्फुटं, किंतु आलपन् ईषत् प्रथमतया वा जल्पन् मिथो णेन नातिक्रमति-न लंघयति निर्ग्रन्थोचारएगो एगित्थिए सद्धिं नेव चिट्ठे न संलवे विशेषतः साध्व्या इत्येवं रूपं, मार्गप्रश्नादीनां पुष्टालम्बनत्वादिति, तत्र मार्गं पृच्छन् प्रष्टव्यसाधर्मिक गृहस्थपुरुषादीनामभावे–हे आर्ये–को स्माकमितो गच्छतां मार्गः–इत्यादिना क्रमेण मार्गं वा तस्या देशयन्, धर्मशीले–अयं मार्गस्ते इत्यादिना क्रमेण, अशनादि वा ददत्–धर्मशीले–गृहाणेदमशनादीत्येवं, तथा अशनादि दापयन्–आर्ये–दापयाम्येतत्त्वम् आगच्छेह गृहादावित्यादिविधिनेति।

अर्थ—निर्ग्रन्थ का यह आचार है कि वह अकेला अकेली स्त्री के साथ और खासकर साध्वी के साथ न ठहरे और न बातचीत करे। किन्तु सूत्रोक्त चार कारणों में से कोई कारण उपस्थित होने पर साधु यदि अकेली साध्वी के साथ थोड़ा या ज्यादा संभाषण करे तो वह अपने पूर्वोक्त आचार का उल्लंघन नहीं करता क्योंकि वार्तालाप करने के ये चार प्रबल कारण हैं। अकेली साध्वी के साथ वार्तालाप करने के चार प्रबल कारण इस प्रकार हैं—

(१) पहला कारण—जब पूछने योग्य कोई साधर्मी या गृहस्थ पुरुष न हो तो साध्वी से मार्ग पूछना। जैसे–आर्ये–हमारे इधर जाने का मार्ग कौनसा है?

(२) दूसरा कारण—साध्वी अगर मार्ग भूल गई हो तो उसे मार्ग बतलाना। जैसे—हे धर्मशीले–तुम्हारे जाने का मार्ग यह है।

(३) तीसरा कारण—अकेली साध्वी को भिक्षा न मिली हो तो यह उसको भिक्षा देना–साध्वी–मैं अपनी भिक्षा में से अशन आदि देता हूं।

(४) चौथा कारण—किसी गृहस्थ के घर से भिक्षा दिलाने के लिए कहना। जैसे–आर्यो मैं तुम्हें भिक्षा दिलवाता हूं।

अकेली साध्वी के साथ इन चार कारणों के होने पर ही साधु वार्तालाप कर सकता है, अन्यथा नहीं। इस कथन से यह स्पष्ट है कि यह एक अपवाद रूप विधान है जिसका संकट में समय ही प्रयोग किया जा सकता है। अगर विधान विकल्प और आचारों का ध्यान न होता तो फिर शास्त्रकार चार कारणों का उल्लेख ही क्यों करते? चार कारणों का उल्लेख करने से ही यह सिद्ध हो जाता है कि इन कारणों के अभाव में साधु अकेली साध्वी से न बातचीत कर सकता है और न उसके साथ खड़ा हो सकता है।

यह पाठ इतना स्पष्ट है कि इस पर अधिक विवेचन करने की आवश्यकता ही नही है । इस पाठ से साधु–साध्वी का आपस मे निष्कारण आहारादि लेना-देना किसी भी हालत मे सिद्ध नही होता । यही नही वरन् इसी पाठ से विना कारण उनका आहार लेना-देना निषिद्ध ठहरता है ।

सूत्र मे और सूत्र की टीका मे 'णिग्गथ' और 'णिग्गथि' यह एक वचन का प्रयोग है । एक वचन के इस प्रयोग से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मार्ग भूली हुई अकेली साध्वी को मार्ग वता देना अथवा साधु स्वय मार्ग भूल गया हो तो अकेली साध्वी से मार्ग पूछ लेना लाचारी हालत मे दोष नही । इसी प्रकार गुण्डो आदि के उपद्रव के कारण जब साध्वी बाहर न जा सकती हो तब अकेली साध्वी को आहार-पानी दे देना भी साधु का कर्त्तव्य है । यहा ध्यान देने योग्य एक बात यह भी है कि सूत्र मे यह तो लिखा है कि विशेष कारण होने पर साधु अपनी भिक्षा मे से साध्वी को भिक्षा दे दे, मगर यह कही नही लिखा कि साधु, साध्वी की भिक्षा मे से अपने लिए ले लेवे । ऐसी दशा मे साध्वियो के झुण्ड के साथ साधुओ का खाना–पानी और विना ही किसी कारण के उनकी लाई हुई भिक्षा ग्रहण कर लेना, यह शास्त्र से सर्वथा असगत है, स्वेच्छा है और लोलुपता का परिचायक है । उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि साधु–साध्वी निष्कारण आहार–पानी का लेना–देना नहीं कर सकते हैं । यदि तेरहपथी साधु इस सरल सत्य को स्वीकार कर अपनी कुमान्यता का परिहार कर देंगे तो अपने सयम मार्ग को कलुषित होने से वचा सकेंगे।

इतना स्पष्ट होते हुए भी अपने तथाकथित इतिहास मे सत्यता पर असत्यता को परिवेष्टित करने का प्रयास और ऐसे महापुरुषो के प्रति निंदायुक्त असत्य कथन करना, मानवता से भी बहुत दूर है ।



आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.

परिशिष्ट-७

'इतिहास के दर्पण मे जम्मड भवन' नामक पुस्तक जो कि कलकत्ता मे प्रकाशित हुई है, उसमे बतलाया है कि क्रान्तद्रष्टा आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा को तेरापथी चोथीबाई ने अन्यथा कहा है जो कि पुस्तक के पृष्ठ १० पर लिखा है—

"एक बार बाईस सम्प्रदाय के आचार्य जवाहरलालजी महाराज सा का चातुर्मास सरदारशहर मे था। वे उनके घर पधारे। चोथीबाई की बडाई करते हुए बोले—'तुम तो सूत्रो की जानकार हो, बडी श्राविकाओ मे हो, इतनी समझदार हो, तुम बाईस सम्प्रदाय मे श्रद्धा ले लो और बहूओ को भी श्रद्धा दिलवादो। इस पर चोथीबाई ने दृढतापूर्वक कहा कि जब तक मैं जिन्दा हू तब तक मेरे तो श्रद्धा लेने का प्रश्न ही नही उठता, बहूओ को भी श्रद्धा नही लेने दू गी। मेरा वश चले तो किसी बच्चे को भी नही जाने दू गी। मैं तो तेरापथियो के ही जाऊ गी। आप तो सघ के सघपति है। ऐसा काम तो एक छोटा साधु भी नही करता कि पति-पत्नी और परिवार मे फूट डाले। आपको ऐसा काम शोभा नही देता। तब महाराज सा ने चोथीबाई से प्रश्न किया—'आप किसको शुद्ध साधु मानती है?' तब वे बोली कि मैं तो अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र मे पाच महाव्रतधारी साधुओ को शुद्ध साधु मानती हू।

आचार्यश्री ने उनकी काफी प्रशसा की और सोचा कि जो मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी नही पिघलता है वही दृढव्रती होता है।"

ऐसा हास्यास्पद लेखन किया गया है। प्रथम तो आचार्यप्रवर श्री जवाहरलालजी म सा. के इस प्रकार किसी के घर जाने का प्रश्न ही नही आता था। दूसरी बात जाने का प्रसग भी आवे तो इस प्रकार कहने की तो कल्पना ही नही की जा सकती। आचार्य प्रवर सदा जिनवाणी के पक्षी रहे है, उन्हे सम्प्रदाय बढाने का कोई व्यामोह नही था। जम्मड भवन पुस्तक मे जो बात लिखी गई है, उसकी काल्पनिकता उसीसे प्रमाणित हो जाती है। क्योंकि उसी पुस्तक मे लिखा है कि "आचार्यश्री ने उनकी प्रशसा की और सोचा कि जो मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी नही पिघलता है, वही दृढव्रती होता है।

आचार्य प्रवर के ऐसा विचार किया उसको जम्मड भवन पुस्तक का लेखक [illegible] आन गया। क्या आचार्यप्रवर ने उनको कहा? यदि कहा भी 'ऐसा' लिखने की क्या आवश्यकता थी? फिर भी कहा है ऐसा लिखना चाहिये था। अत स्पष्ट है, नहीं कहा। इस

यह पाठ इतना स्पष्ट है कि इस पर अधिक विवेचन करने की आवश्यकता ही नही है। इस पाठ से साधु–साध्वी का आपस मे निष्कारण आहारादि लेना-देना किसी भी हालत मे सिद्ध नही होता। यही नही वरन् इसी पाठ से बिना कारण उनका आहार लेना-देना निषिद्ध ठहरता है।

सूत्र मे और सूत्र की टीका मे 'णिग्गथ' और 'णिग्गथि' यह एक वचन का प्रयोग है। एक वचन के इस प्रयोग से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मार्ग भूली हुई अकेली साध्वी को मार्ग बता देना अथवा साधु स्वय मार्ग भूल गया हो तो अकेली साध्वी से मार्ग पूछ लेना लाचारी हालत मे दोष नही। इसी प्रकार गुण्डो आदि के उपद्रव के कारण जब साध्वी बाहर न जा सकती हो तब अकेली साध्वी को आहार-पानी दे देना भी साधु का कर्त्तव्य है। यहा ध्यान देने योग्य एक बात यह भी है कि सूत्र मे यह तो लिखा है कि विशेष कारण होने पर साधु अपनी भिक्षा मे से साध्वी को भिक्षा दे दे, मगर यह कही नही लिखा कि साधु, साध्वी की भिक्षा मे मे अपने लिए ले लेवे। ऐसी दशा मे साध्वियो के झुण्ड के साथ साधुओ का खाना–पानी और बिना ही किसी कारण के उनकी लाई हुई भिक्षा ग्रहण कर लेना, यह शास्त्र से सर्वथा असगत है, स्वेच्छा है और लोलुपता का परिचायक है। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि साधु–साध्वी निष्कारण आहार–पानी का लेना–देना नही कर सकते हैं। यदि तेरहपथी साधु इस सरल सत्य को स्वीकार कर अपनी कुमान्यता का परिहार कर देंगे तो अपने सयम मार्ग को कलुषित होने से बचा सकेंगे।

इतना स्पष्ट होते हुए भी अपने तथाकथित इतिहास मे सत्यता पर असत्यता को परिवेष्टित करने का प्रयास और ऐसे महापुरुषो के प्रति निंदायुक्त असत्य कथन करना, मानवता से भी बहुत दूर है।



आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.

परिशिष्ट-७

'इतिहास के दर्पण मे जम्मड भवन' नामक पुस्तक जो कि कलकत्ता से प्रकाशित हुई है, उसमे बतलाया है कि क्रांतद्रष्टा आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. को तेरापथी बोधीबाई ने अन्यथा कहा है जो कि पुस्तक के पृष्ठ १० पर लिखा है—

"एक बार बाईस सम्प्रदाय के आचार्य जवाहरलालजी महाराज सा. का चातुर्मास सरदारशहर मे था। वे उनके घर पधारे। बोधीबाई की बडाई करते हुए बोले—'तुम तो सूत्रो की जानकार हो, बडी श्राविकाओ मे हो, इतनी समझदार हो, तुम बाईस सम्प्रदाय मे श्रद्धा ले लो और बहुओ को भी श्रद्धा दिलवादो। इस पर बोधीबाई ने दृढतापूर्वक कहा कि जब तक मैं जिन्दा हू तब तक मेरे तो श्रद्धा लेने का प्रश्न ही नही उठता, बहुओं को भी श्रद्धा नहीं लेने दूगी। मेरा वश चले तो किसी बच्चे को भी नही जाने दूगी। मैं तो तेरापथियों के ही जाऊंगी। आप तो सघ के सघपति है। ऐसा काम तो एक छोटा साधु भी नहीं करता कि पति-पत्नी और परिवार मे फूट डाले। आपको ऐसा काम शोभा नहीं देता। तब महाराज सा. ने बोधीबाई से प्रश्न किया—'आप किसको शुद्ध साधु मानती है?' तब वे बोली कि मैं तो अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र मे पाच महाव्रतधारी साधुओं को शुद्ध साधु मानती हू।

आचार्यश्री ने उनकी काफी प्रशसा की और सोचा कि जो मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी नही पिघलता है वही दृढव्रती होता है।"

ऐसा हास्यास्पद लेखन किया गया है। प्रथम तो आचार्यप्रवर श्री जवाहरलालजी म.सा. के इस प्रकार किसी के घर जाने का प्रसग ही नही आता था। दूसरे बार जाने का प्रसग भी आवे तो इस प्रकार कहने की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। आचार्य प्रवर सदा जिनवाणी के पक्षी रहे है, उन्हे सम्प्रदाय बढाने का कोई व्यामोह नहीं था। जम्मड भवन पुस्तक मे जो बात लिखी गई है, उसकी काल्पनिकता उसीसे प्रमाणित हो जाती है। क्योंकि उसी पुस्तक मे लिखा है कि "आचार्यजी ने उसकी प्रशसा की और सोचा कि जो मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी नहीं पिघलता है, वही दृढव्रती होता है।"

आचार्य प्रवर ने ऐसा विचार किया उसका जम्मड भवन पुस्तक का लेखक कैसे जान गया। क्या आचार्यप्रवर ने उसको कहा? यदि कहा तो 'सोचा' लिखने की क्या आवश्यकता? फिर तो कहा ऐसा लिखना चाहिये था। यह स्पष्ट है, नहीं कहा। तब

उन्होंने सोचा, यह कैसे जाना ? क्या लेखक को मन पर्याय ज्ञान हो गया जो आज के युग मे हो ही नही सकता । अत इस प्रकार की वेहाथ पैर की निरर्थक बातें लिखने के पीछे ईर्ष्या और द्वेष ही काम कर रहा लगता है । क्योकि स्थानकवासी समाज में यह सम्प्रदाय और आचार्यश्री जवाहर ही एक ऐसे आचार्य थे, जिन्होने तेरापथियो के गढ थली मे जाकर उनके दया-दान विरोधी सिद्धान्तो का सर्वाधिक जोरदार खण्डन किया था । तेरापथी साधुओ के साथ विधिवत् शास्त्रार्थ करके विजय प्राप्त की थी । जो कि आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा के जोवन चरित्र से जाना जा सकता है । 'सध्दर्ममडन' जैसा आचार्य प्रवर का मौलिक ग्रन्थ आज भी तेरापथियों का मुहबद किये हुए है, जिसके अन्दर एक-एक वात का सचोट, आगमिक धरातल पर स्पष्टीकरण किया गया है । ऐसे यशस्वी आचार्य प्रवर के नाम को दूषित करने के लिये वाबीवाई के नाम से झूठी अनर्गल वाते लिखकर अपनी तुच्छताही ज्ञापित करना है ।

ऐसी ही एक काल्पनिक उड़ान 'समर्थ समाधान' नामक सैलाना से प्रकाशित पुस्तक के भाग १ पृष्ठ ८ मे भी की गई है । जैसा कि उसमे लिखा है—"आपकी अद्भुत योग्यता से आकर्पित होकर स्व पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा ने आपके गुरुवर्य से कहा था कि "आप मुनि समर्थमलजी को मुझे दे दीजिये और वदले मे दस-पन्द्रह साधु ले लीजिए ।"

कितना हास्यास्पद कथन है । एक सुज्ञ व्यक्ति भी इसे कभी मानने को तैयार नही होता है । क्या संत भी कोई लेन-देन की चीज है ? जो कि पशु की तरह उसे इस खूटे से उस खूटे वाध दिया जाय । आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा के नाम से अपने गुरु की प्रशसा करने के लिये इस प्रकार असत्य लिख देना नैतिकता से भी परे हटना होगा । क्रान्तद्रष्टा आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा. की ख्याति स्थानकवासी समाज मे ही नही, पूरे देश मे फैली हुई थी । उस समय देश परतन्त्र था, अत आचार्यप्रवर के भाषण भी देश की स्वाधीनता के लिये क्रातिकारी शब्दो मे होते थे । ब्रिटिश शासन भी आचार्य प्रवर से सतर्क था । यहा तक कि आचार्य प्रवर के पीछे भी खुफिया विभाग रहता था । उन्हे पकड़ने की कोशिश की जा रही थी । पर क्या मजाल कि आचार्य प्रवर के मुह से एक भी शब्द ऐसा निकल जाय, जिससे कि वे पकड सके । आचार्य प्रवर अपनी वात भी स्पष्ट शब्दो मे कह देते और उनकी पकड़ मे भी नही आते थे । इसके लिये आपको आचार्य प्रवर के जीवन चरित्र पुस्तक के पृष्ठ १७२ पर उट्टकित मेटर दिया जा रहा है ।

जमुना पार: गिरफ्तारी की आशंका—

जिस समय पूज्यश्री दिल्ली मे विराजमान थे, यमुना पार के वहुत से सज्जन सेवा मे उपस्थित हुए । उन्होंने अपने क्षेत्र मे पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की । पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार करली और चातुर्मास समाप्त होने पर उस ओर विहार कर दिया ।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि उन दिनों राष्ट्रीय आन्दोलन जोरो पर था । प्राय. सभी नेता जेल के सीखचो मे वन्द कर दिये गये थे । पूज्यश्री के व्याख्यान धार्मिकता से

भगत किंतु राष्ट्रीयता के रंग में रंगे होते थे। श्रोताओं में जैन अजैन का भेदभाव लगभग उठ चुका था। सभी प्रकार की जनता आपका व्याख्यान सुनने के लिए टूट पड़ती थी। शुद्ध खद्दर के वस्त्र, राष्ट्रीयता में सनी हुई ओजस्विनी वाणी, अपार जनता के हृदय पर जादू का असर प्रभाव आदि देखकर सरकार भयभीत हो गई। धर्माचार्य के रूप में यह नया राष्ट्रीय नेता सरकार की आंखों में खटकने लगा। सरकारी गुप्तचर पूज्यश्री के पीछे-पीछे फिरने लगे।

जब श्रावकों को इस परिस्थिति का पता चला तो उनका चिन्तित होना स्वाभाविक था। श्रावकों को पूज्यश्री की गिरफ्तारी का भय होने लगा। कुछ श्रावकों ने पूज्यश्री से प्रार्थना की—आप अपने व्याख्यानों को धर्म तक ही सीमित रखें। राष्ट्रीय बातों के आने से सरकार को सन्देह हो रहा है। कहीं ऐसा न हो कि आप गिरफ्तार कर लिये जावें, और समाज को नीचा देखना पड़े।

पूज्यश्री का सिंहनाद–

पूज्यश्री ने उत्तर दिया—मैं अपना कर्त्तव्य भलीभांति समझता हूं। मुझे अपने उत्तरदायित्व का भी पूरा भान है। मैं जानता हूं कि धर्म क्या है। मैं साधु हूं। अधर्म के मार्ग पर नहीं जा सकता। किंतु परतन्त्रता पाप है। परतन्त्र व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नहीं कर सकता। मैं अपने व्याख्यान में प्रत्येक बात सोच-समझकर तथा मर्यादा के भीतर रहकर कहता हूं। उस पर यदि राजसत्ता हमें गिरफ्तार करती है तो हमें डरने की क्या आवश्यकता है? कर्त्तव्य पालन में डर कैसा? साधु को सभी उपसर्ग व परीषह सहने चाहिये अपने कर्त्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिये। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो जैन समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नहीं है। उसमें तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने आ जाता है।

पूज्यश्री के दृढ़तापूर्वक और वीरतापूर्ण उत्तर सुनकर प्रार्थना करने वाले श्रावक चुप रह गये। आपके अपने व्याख्यानों की धारा निर्बाध रूप से उसी प्रकार प्रवाहित होती रही।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य प्रवर कितने स्पष्ट और निडर थे। उनका भारत पर कितना प्रेम था। उन्हीं लिये सोमीबाई के नाम से या पण्डित श्री समर्थमलजी म. सा. के नाम पर संस्था का लेने-देने जैसी बचकानी बात लिखना, अपने आपकी हंसी कराना ही है।

आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.

परिशिष्ट–८

"महामनस्वी आचार्यश्री कालूगणी जीवनवृत्त" नामक पुस्तक जिसके लेखक आचार्यश्री तुलसी है, उसके पृष्ठ १०६ पर लिखा है–

"स १९८९ की घटना है । आचार्यवर सरदारशहर मे चातुर्मास कर रहे थे । वहा स्थानकवासी मुनि केशरीचन्दजी भी चातुर्मास कर रहे थे । आचार्यवर शौच के लिए वाहर गए वहा मुनि केशरीचन्दजी मिले । उन्होने कहा–आचार्यजी, आप ठहरिये, मुझे आप से कुछ वातें करनी है ।

'यहा मार्ग मे क्या वात कर । यह कहकर आचार्यवर जाने लगे । मुनि केशरीचन्द जी वोले–आप आगे गए तो आपको भीखणजी की आण है, डालचन्दजी की आण है और सव आचार्यों की आण है । आचार्यवर उस वात की उपेक्षा कर शहर मे आ गए ।

उस समय शिवलालजी पटवा (वीकानेर) उत्तमचन्दजी गोठी (सरदारशहर) और नेमीचन्दजी वोरड पच (सरदारशहर) आचार्यवर की सेवा मे थे, वे पीछे ठहर गए । उन्होंने मुनिजी मे कहा–महाराज, ऐसे 'आण' दिलाने से क्या कोई रुकता है ? यदि किसी के कहने से कोई रुकता हो हम भी कह देंगे–आप यहा से आगे चले तो आपको कोई जवाहरलालजी म की आण है । उनका कहना था कि मुनिजी वही वैठ गए । उन्होंने कहा–हमने प्रसगवश यह वात कही है । हमे आण दिलाने से कोई मतलव नही है । आप शहर मे जाए और अपना कार्य करे । पर मुनिजी ने उनकी एक नही सुनी । शहर के अन्य प्रमुख नागरिको ने भी प्रयत्न किया पर उनकी वात पर ध्यान नही दिया गया ।

वीकानेर महाराज गगासिह को इसका पता चला । उन्होंने अपने अधिकारियो को भेजा, पर समस्या नही सुलझ पाई । आखिर वीकानेर के गृहमत्री शार्दूलसिहजी (रोडेवाले) वहा आए । उन्होने विनम्रता और कठोरता दोनो से काम लिया । तव समस्या का इस रूप मे समाधान मिला–मुनि केशरीचन्दजी आचार्यवर कालुगणी के पास जाकर क्षमायाचना करें । उसके वाद वे तीनो श्रावक आप से क्षमायाचना करेंगे । इस समाधान मे आचार्यवर की शाति पूर्ण नीति का वहुत वडा योगदान रहा है ।

इस वात का स्पष्टीकरण उसी समय के प्रकाशित पेम्पलेट से हो जाता है । अत वह पेम्पलेट अविकल रूप से यहा प्रस्तुत कर रहे हैं ।

श्री

सरदारशहर मे आदर्श तपस्वी

इस चातुर्मास मे तपस्वी जी महाराज श्री केसरीमलजी ने पहले ५५ (पचपन) दिन की तपस्या करी थी, जिसका पारणा मिती भादवासुदी ६ को हुवा था उसके बाद मे मिती आसोज सुदी ६ को चार बजे जब महाराज साहब तपस्वीजी जंगल मे लौटकर श्मशान भूमि की तीवारी से थोडी दूर पर दो गान्धा के पास पहुचे तो वहा पर तीन भाई तेरापंथियो ने आकर महाराज को रोक दिया। थोडी दूर पर और भी कई भाई खडे थे फिर वही तीना भाई महाराज सा. से कहने लगे कि अगर तू सच्चा साधु है तो अठे ही रह और थारा देवगुरु धर्म तथा अरिहन्त सिद्धा की आण है और चारो आहार वा शहर मे जाने की आण है। फिर उन्ही भाइयो मे से एक ने कहा कि इस श्मशान की तीवारी मे जा सकते हो यह हमारी आज्ञा है तब तपस्वी जी महाराज ने सच्चे साधु शब्द और देवगुरु धर्म की आण का ख्याल करके आण को स्वीकार करते हुए दृढ आसन हुए और उनसे कहा कि भाइयो मेरा तरफ से तुम लोगो का क्या दुःख हुआ है जो ऐसी आण दिलाते हो पर उन लोगा ने कुछ भी जवाब नही दिया और अपशब्द कहते हुए वहा से चले गये। फिर तपस्वीजी महाराज तो वही रहे और गाव से लोगो ने आकर यह बात श्रावको से कही तब श्रावको ने यह बात प. श्री गब्बूलालजी महाराज से कही और प. श्री गब्बूलालजी महाराज उसी समय तपस्वी जी महाराज के पास पधार गये, ऐसी प्रतिज्ञा को सुनकर गाव मे हलचल मच गई और गाव के अनेक लोग दर्शन करने को आने लगे। चार-पाच दिन कई सज्जनो के उद्योग से आण वापिस लेने की आशा थी परन्तु वह निष्फल होते देखकर शहर के निवासियो की सूचना व प्रार्थना पर श्री दरबार साहब ने पुलिस इन्सपेक्टर जनरल गुलाबसिंहजी तथा जिला मजिस्ट्रेट नाजिम साहब रघुबरदयाल को भेजा मिती आसोज सुदी १३ को वे लोग आये और दोनो तरफ की बातें मालुम करके उन लोगो को बहुत समझाया परन्तु वह तीनो भाई नट गये और कहने लगे कि म्हे धर्म सू डरा हा कि आण दिलाई नही उनके नटने पर भी अफसरो ने पाच दिन तक बहुत कोशिश की पर उन लोगो ने नही मानी फिर शहर के कई सज्जनो की तरफ से सूचना मिलने पर श्री दरबार साहब ने होम मिनिस्टर ठाकर साहब शार्दूलसिंहजी को भेजा। मिती कार्तिक बदी ३ को ठाकुर साहब पधारे और सब बातो को निगाह करके कई दफे ठाकुर साहब उन तीनो भाइयो को साथ मे लेकर तपस्वीजी महाराज के पास मे आये इस समय सब शहर की काफी जनता मौजूद था और तेरापन्थी सज्जन वृद्धिचन्दजी गधैया, वृद्धिचन्दजी गोठी, सुजानकरणजी सुराणा (चूरू निवासी) और छोगमलजी चोपड़ा, गंगाशहर निवासी आदि और भी भाई मौजूद थे। इसी तीवारी मे तपस्वीजी महाराज के पास आकर उन तीनों भाइयो ने जो आण अपनी तरफ से दिलाई थी उसको वापिस लेते हुए नीचे लिखे शब्दो मे यह कहा—

यह आण आपने आप दिराई ही जका अब नही है
आप लोग गाव मे जावो और अन्न-जल ल्यो इम कहते हैं ।

इसके बाद ठाकुर साहब ने तपस्वीजी महाराज से कहा कि अब आपकी प्रतिज्ञा तेरह दिन से पूरी हो गई अब पारणा कर लीजिये। फिर प श्री गब्बूलालजी महाराज ने सब जनता के समक्ष उन तीनो भाइयो ने जो शब्द आण खुलाने के लिए कहे थे वे बाते जनता को बताकर श्री महावीर प्रभु की जय बोलकर तपस्वी जी को पारणा कराया, बाद मे तपस्वी जी महाराज को शरीर मे साता होने पर मिती कार्तिक वदी ६ के रोज बडे समारोह के साथ शहर मे पधार गये।

शहर मे प्रवेश करते समय यह पद बोला गया—

श्री सत केसरीमलजी का स्वागत हम शतश करते है
वा धर्म तपस्या मूर्ति सत का विजय दर्शन करते है (टेर)
तेरह दिन घोर तपस्या का जैसा प्रभाव दिखाया है
उस तेज पु ज मे तपस्वीजी हम लोगो के दु ख हरते है (१)
प्रतिवादी सतपथ भूले हुए सब हार गये करणी करके
अभिमान सबो का दूर हुआ अब तक वे मुनि से डरते हैं (२)
यह व्रत तपस्वी जी का जग को केवल यह शिक्षा देता है
जय होती नित्य धर्म की है अन्यायी ही नित गिरते है (३)
इस दीर्घ तपस्या से मुनि ने दर्शा दिया जगत को है
तेजस्वी जो कुछ वचन कहे उससे न कभी भी फिरते है (४)
धन्य भाग्य हमारे आज भये धन्यवाद है सारी जनता को
सरदारशहर को शोभित कर धन–धन ये वैन उधरते है (५)
जिन धर्म को आप दिपाय रहे शास्त्रानुमोदित कार्य करे
यह जैन सघ कर जोड कहे थलियो मे आप विचरते है (६)
श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन सघ, सरदारशहर, श्री जैन सुधारक प्रेस अजमेर मे छपा

उपर्युक्त पेम्पलेट मे कही यह नही लिखा है कि तपस्वी श्री केशरीचन्दजी महाराज साहब ने कालूगणीजी को कोई आण दिलवाई थी बल्कि उन्होने तो यो कहा कि 'भाइयो मेरी तरफ से तुम लोगो को क्या दु ख हुआ है–जो ऐसी आण दिलाते हो' तब उनका कालूगणीजी को आण दिलाने का तो कोई प्रश्न ही नही रह जाता। अत इतना स्पष्ट होते हुए भी अपने गुरु की प्रशसा के पीछे किसी तपस्वी के विषय मे यदा–तदा लिख देना कतई उपयुक्त नही है।



परिशिष्ट-९

श्रीमद् जवाहराचार्यजी महाराज साहब की

साहित्य सूची

(श्री जवाहर साहित्य समिति, भीनासर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर किरणावली:

प्रथम	किरण	दिव्य दान
द्वितीय	,,	दिव्य सन्देश
तृतीय	,,	दिव्य सन्देश
चतुर्थ	,,	जीवन धर्म
पांचवीं	,,	सुबाहुकुमार
सातवीं	,,	जवाहर स्मारक, प्रथम पुष्प
आठवीं	,,	सम्यक्त्व पराक्रम, प्रथम भाग
नवीं	,,	,, ,, द्वितीय भाग
दसवीं	,,	,, ,, तृतीय भाग
ग्यारहवीं	,,	,, ,, चतुर्थ भाग
बारहवीं	,,	,, ,, पंचम भाग
सतरहवीं	,,	पाण्डव चरित्र प्रथम भाग
अठारहवीं	,,	,, ,, द्वितीय भाग
उन्नीसवीं	,,	बीकानेर के व्याख्यान
इक्कीसवीं	,,	मोरवी के व्याख्यान
बाईसवीं	,,	सम्वत्सरी
तेईसवीं	,,	जामनगर के व्याख्यान
चौबीसवीं	,,	प्रार्थना प्रबोध
पच्चीसवीं	,,	उदाहरणमाला प्रथम भाग
छब्बीसवीं	,,	,, द्वितीय भाग
सत्ताईसवीं	,,	,, तृतीय भाग
अट्ठाईसवीं	,,	नारी-जीवन
उन्तीसवीं	,,	अनाथ भगवान्, प्रथम भाग
तीसवीं	,,	,, द्वितीय भाग
सद्धर्म-मण्डन		

(श्री सम्यक्ज्ञान मदिर, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित)

इकतीसवी	किरण	गृहस्थ धर्म	प्रथम भाग
वत्तीसवी	,,	,,	द्वितीय भाग
तेतीसवी	,,	,,	तृतीय भाग

(श्री जैन जवाहर मित्र मडल, व्यावर द्वारा प्रकाशित)

तेरहवी	किरण	धर्म और धर्मनायक	
चौदहवी	,,	राम वन गमन	प्रथम भाग
पन्द्रहवी	,,	,,	द्वितीय भाग
चौतीसवी	,,	सती राजमती	
पैंतीसवी	,,	सती मदनरेखा	

(श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ द्वारा प्रकाशित)

छठी	किरण	रुक्मिणी विवाह	
सोलहवी	,,	अंजना	
वीसवी	,,	शालिभद्र	
हरिश्चन्द्र तारा			
जवाहर ज्योति			
चिन्तन-मनन-अनुशीलन			प्रथम भाग
चिन्तन ,,			द्वितीय भाग

(श्री श्वे साधुमार्गी जैन हितकारिणी सस्था, वीकानेर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर विचार सार

(श्री जैन हितेच्छु श्रावक मडल, रतलाम द्वारा प्रकाशित)

सेट—१

श्री भगवती सूत्र पर व्याख्यान	भाग १
,, ,,	भाग २
,, ,,	भाग ३
,, ,,	भाग ४
,, ,,	भाग ५
,, ,,	भाग ६

सेट—२

अनुकम्पा विचार	भाग १
,, ,,	भाग २

सेट—३

राजकोट के व्याख्यान भाग १
" " भाग २
" " भाग ३

सेट—४

सम्यक्त्व स्वरूप
श्रावक के चार शिक्षाव्रत
श्रावक के तीन गुणव्रत
श्रावक का अस्तेय व्रत
श्रावक का सत्यव्रत
परिग्रह परिमाण व्रत

सेट—५

तीर्थंकर चरित्र प्रथम भाग
" द्वितीय भाग
सकडाल पुत्र
सनाथ-अनाथ निर्णय
श्वेताम्बर तेरह पथ
धर्म व्याख्या
सुदर्शन चरित्र।
श्री सेठ धन्ना चरित्र

नोट—जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की जीवनी नामक वृहद् ग्रन्थ का प्रकाशन श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर की ओर से हुआ है।



आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	: थादला मध्यप्रदेश
जन्म तिथि	: वि.स १९३२ कार्तिक शुक्ला चतुर्थी
पिता	: श्री जीवराजजी कवाड
माता	: श्रीमती नाथी बाई
दीक्षा स्थान	: लिमडी (म.प्र)
दीक्षा तिथि	: वि स १९४८ माघ शुक्ला द्वितीया
युवाचार्य पद स्थान	: रतलाम (मध्यप्रदेश)
युवाचार्य पद तिथि	: वि स १९७६ चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्य पद स्थान	: जैतारण (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	: वि० स० १९७६ आषाढ शुक्ला तृतीया
स्वर्गवास स्थान	: भीनासर (राज.)
स्वर्गवास तिथि	: वि० स० २००० आषाढ शुक्ला अष्टमी

आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.

आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	: थादला मध्यप्रदेश
जन्म तिथि	: वि स १९३२ कार्तिक शुक्ला चतुर्थी
पिता	श्री जीवराजजी कनाड
माता	: श्रीमती नाथी बाई
दीक्षा स्थान	: लिमडी (म.प्र)
दीक्षा तिथि	: वि स १९४८ माघ शुक्ला द्वितीया
युवाचार्य पद स्थान	: रतलाम (मध्यप्रदेश)
युवाचार्य पद तिथि	: वि स. १९७६ चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्य पद स्थान	: जैतारण (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	: वि० स० १९७६ आषाढ शुक्ला तृतीया
स्वर्गवास स्थान	: भीनासर (राज.)
स्वर्गवास तिथि	: वि० स० २००० आषाढ शुक्ला अष्टमी

卐 विपत्तियों की तमिस्र गुफाओं को पार कर जिसने संयम-साधना का राजमार्ग स्वीकार किया था ।

卐 ज्ञानार्जन की अतृप्त लालसा ने जिनके भीतर ज्ञान का अभिनव आलोक निरन्तर अभिवर्द्धित किया ।

卐 संयमीय साधना के साथ वैचारिक क्रांति का शंखनाद बजाकर जिसने भू-मण्डल को चमत्कृत कर दिया ।

卐 उत्सूत्र सिद्धांतों का उन्मूलन करने, आगम सम्मत सिद्धांतों की प्रतिष्ठापना करने के लिये जिसने वाद-विवाद में विजयश्री प्राप्त की ।

卐 परतन्त्र भारत को स्वतन्त्र बनाने के लिये जिसने गांव-गांव, नगर-नगर पाद विहार कर अपने तेजस्वी प्रवचनों द्वारा जन-जन के मन को जागृत किया ।

卐 शुद्ध खादी के परिवेश में खादी अभियान चला कर जिसने जन-मानस में खादी धारण करने की भावना उत्पन्न कर दी ।

卐 अल्पारम्भ-महारम्भ जैसी अनेकों पेचीदी समस्याओं का जिसने अपनी प्रखर प्रतिभा द्वारा आगम सम्मत सचोट समाधान प्रस्तुत किया ।

卐 स्थानकवासी समाज के लिये जिसने अजमेर सम्मेलन में गहरे चिन्तन मनन के साथ प्रभावशाली योजना प्रस्तुत की ।

卐 महात्मा गांधी, विनोबा भावे, लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल, पं. श्री जवाहरलाल नेहरू आदि राष्ट्रीय नेताओं ने जिनके सचोट प्रवचनों का समय-समय पर लाभ उठाया ।

卐 जैन एवं जैनेतर समाज जिसे श्रद्धा से अपना पूजनीय स्वीकार करता था ।

卐 सत्य सिद्धान्तों की सुरक्षा के लिये जो निर्भयता एवं निर्भीकता के साथ भू-मण्डल पर विचरण करते थे ।

वे हैं ज्योतिर्धर, क्रान्तद्रष्टा, युगपुरुष स्वर्गीय आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. ।

आचार्यश्री जवाहिरलालजी म.सा. के चातुर्मास

सवत्	स्थान	सवत्	आचार्य पद	स्थान
१९४९	धार	१९७७		बीकानेर
१९५०	रामपुरा	१९७८		रतलाम
१९५१	जावरा	१९७९		सतारा
१९५२	थादला	१९८०		घाटकोपर (बम्बई)
१९५३	शिवगढ	१९८१		जलगाव
१९५४	सैलाना	१९८२		जलगाव
१९५५	खाचरौद	१९८३		ब्यावर
१९५६	खाचरौद	१९८४		भीनासर
१९५७	महिदपुर	१९८५		सरदारशहर
१९५८	उदयपुर	१९८६		चूरू
१९५९	जोधपुर	१९८७		बीकानेर
१९६०	ब्यावर	१९८८		दिल्ली
१९६१	बीकानेर	१९८९		जोधपुर
१९६२	उदयपुर	१९९०		उदयपुर
१९६३	गगापुर	१९९१		कपासन
१९६४	रतलाम	१९९२		रतलाम
१९६५	थादला	१९९३		राजकोट
१९६६	जावरा	१९९४		जामनगर
१९६७	इन्दौर	१९९५		मोरवी
१९६८	अदमदनगर	१९९६		अहमदाबाद
१९६९	जुन्नर	१९९७		वगडी
१९७०	घोड नदी	१९९८		भीनासर
१९७१	जामगाव	१९९९		भीनासर
१९७२	अहमदनगर			
१९७३	घोडनदी			
१९७४	मिरी			
१९७५	हिवड़ा			
१९७६	उदयपुर			

१ विपत्तियों की तमिस्र गुफाओं को पार कर जिसने संयम-साधना का राजमार्ग स्वीकार किया था।

२ ज्ञानार्जन की अतृप्त लालसा ने जिनके भीतर ज्ञान का अभिनव आलोक निरन्तर अभिवर्द्धित किया।

३ संयमीय साधना के साथ वैचारिक क्रांति का शंखनाद बजाकर जिसने भू-मण्डल को चमत्कृत कर दिया।

४ उत्सूत्र सिद्धांतों का उन्मूलन करने, आगम सम्मत सिद्धांतों की प्रतिष्ठापना करने के लिये जिसने वाद-विवाद में विजयश्री प्राप्त की।

५ परतन्त्र भारत को स्वतन्त्र बनाने के लिये जिसने गांव-गांव, नगर-नगर पाद विहार कर अपने तेजस्वी प्रवचनों द्वारा जन-जन के मन को जागृत किया।

६ शुद्ध खादी के परिवेश में खादी अभियान चला कर जिसने जन-मानस में खादी धारण करने की भावना उत्पन्न कर दी।

७ अल्पारम्भ-महारम्भ जैसी अनेकों पेचीदी समस्याओं का जिसने अपनी प्रखर प्रतिभा द्वारा आगम सम्मत सचोट समाधान प्रस्तुत किया।

८ स्थानकवासी समाज के लिये जिसने अजमेर सम्मेलन में गहरे चिन्तन मनन के साथ प्रभावशाली योजना प्रस्तुत की।

९ महात्मा गांधी, विनोबा भावे, लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल, पं. श्री जवाहरलाल नेहरू आदि राष्ट्रीय नेताओं ने जिनके सचोट प्रवचनों का समय-समय पर लाभ उठाया।

१० जैन एवं जैनेतर समाज जिसे श्रद्धा से अपना पूजनीय स्वीकार करती थी।

११ सत्य सिद्धान्तों की सुरक्षा के लिये जो निडरता एवं निर्भीकता के साथ भू-मण्डल पर विचरण करते थे।

ये हैं ज्योतिर्धर, क्रान्तद्रष्टा, युगपुरुष स्वर्गीय आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा.।

अष्टाचार्य गौरव-गंगा (भाग-२)

आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा.

पृ स १ से १२५

आचार्य श्री नानालालजी म.सा.

पृ स १ से १४१

अष्टाचार्य विचारधारा

पृ स १ मे ८८

शांत क्रांति के जन्मदाता

सरलता की सजीव मूर्ति

संयमीय एकता के सूत्रधार

आचार्य

श्री गणेशीलाल जी म. सा.

।। हु शि उ चौ श्री ज ग ना ना ।।

सरलता की सजीव मूर्ति शान्त उत्क्रान्ति के जन्मदाता

पूज्यपाद आचार्य

श्री गणेशीलाल जी महाराज साहब

आचार्य श्री गणेशीलालजी महाराज साहब

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	: उदयपुर (राजस्थान)
जन्म तिथि	: वि० सं० १९४७ श्रावण कृष्णा तृतीया
पिता	: श्री साहबलालजी मारू
माता	: श्रीमती इन्द्रादेवी
दीक्षा स्थान	: उदयपुर (राज)
दीक्षा तिथि	: वि० सं० १९६२ मार्गशीर्ष कृष्णा एकम्
युवाचार्य पद स्थान	: जावद (मध्यप्रदेश)
युवाचार्य पद तिथि	: वि० सं० १९९० फाल्गुन शुक्ला तृतीया
आचार्य पद स्थान	: भीनासर (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	: वि० सं० २००० आषाढ शुक्ला अष्टमी
स्वर्गवास स्थान	: उदयपुर (राज)
स्वर्गवास तिथि	: वि० सं० २०१९ माघ कृष्णा द्वितीया

आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा.

१. एकलिंगनाथ की राजधानी मे जन्मे कई राजधानियो के नाथ ।
२ वैराग्य के मार्ग पर ।
३ सुदूर प्रदेशो मे प्रवास एव कठिन सघर्षो मे समभाव ।
४ सौ टच सोना एकदम पसद आ गया ।
५ दयादान विरोधियो को झुकाते हुए आपश्री का चुरू मे पहला स्वतत्र चातु
६ माउडिया मे अहिंसक लहर ।
७ गणेश नाम सार्थक बना ।
८ पतितोद्धार के साथ युवाचार्य पद का प्रथम चातुर्मास ।
९. अविकार घोषणा ।
१० निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही बनने का सिंहनाद ।
११ निस्पृह वृत्ति से आकर्षित आपके पट्टशिष्य ।
१२ पुन थली प्रवेश मे ।
१३ गुरुदेव की अ तिम समय मे भावभीनी सेवा ।
१४ आचार्य के रूप मे प्रथम चातुर्मास देशनोक तदनतर सरदारशहर ।
१५ नवीनता व प्राचीनता मे समन्वय हो ।
१६. वगडी मे साधना को सम्बल, बडी सादडी मे अहिंसक क्राति ।
१७ मालवधरा पर सत्श्रद्धा का प्रसार एव अमिट धर्म प्रभावना ।
१८ सत विनोबा जी की आपसे वार्ता ।
१९ धर्म विध्वसिनी प्रवृत्तियो के विरुद्ध मोर्चा और जयप्रकाश बाबू से चर्चा ।
२० आपश्री का ऐतिहासिक दिल्ली चातुर्मास और बृहद् साधु सम्मेलन की तैयारिया ।
२१ साधु तो स्वय महाराज होते हैं, वे स्वय राजभवनो मे क्यो जाय ?
२२ अलवर मे गाठ का ऑपरेशन और कष्ट सहिष्णुता की पराकष्ठा ।
२३ "योग्य सगठन के लिए मैं प्रथम मुनि होऊगा जो आचार्य पद को छोड दे ।"
२४ सादडी सम्मेलन मे सोद्देश्य एकता पर बल और आपश्री श्रमण सघ मे नायक निर्वाचित
२५ सोजन सम्मेलन मे मत्रि मडलीय निर्णय एव जोधपुर मे सयुक्त चातुर्मास ।
२६ भीनासर मे विचार मथन, महत्वपूर्ण निर्णय एव उनको क्रियान्वित करने के कदम ।
२७ सगठन का विघटन और शात उत्क्राति का श्री गणेश ।
२८ सोद्देश्य एकता की जागरूकता का भार अपने सुयोग्य उत्तराधिकारी के कधो पर ।
२९ वीतराग धर्म के महान वीर, वीरो की पुण्यस्थली मे हो अमर हो गये परिशिष्ट १, २, ३, ४, ५

Δ

आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. के चातुर्मास

संवत्	स्थान
१९६३	गंगापुर
१९६४	रतलाम
१९६५	थांदला
१९६६	जावरा
१९६७	इन्दौर
१९६८	अहमदनगर
१९६९	जुन्नर
१९७०	घाटनदी
१९७१	जामनगर
१९७२	अहमदनगर
१९७३	पोटनदी
१९७४	मोरी
१९७५	हिवड़ा
१९७६	निनवहड़
१९७७	नताना
१९७८	रतलाम
१९७९	नताना
१९८०	घाटकोपर
१९८१	अहमदनगर
१९८२	अहमदनगर
१९८३	रतलाम
१९८४	भीनासर
१९८५	चूरू
१९८६	चूरू
१९८७	ब्यावर
१९८८	[illegible]
१९८९	[illegible]
१९९०	[illegible]
१९९१	रतलाम

संवत्	स्थान
१९९२	देवास
१९९३	उदयपुर
१९९४	बीकानेर
१९९५	जयपुर
१९९६	उदयपुर
१९९७	फलौदी
१९९८	सरदारशहर
१९९९	भीनासर

आचार्य पद

संवत्	स्थान
२०००	देशनोक
२००१	सरदारशहर
२००२	ब्यावर
२००३	बगड़ी
२००४	बड़ीसादड़ी
२००५	रतलाम
२००६	जयपुर
२००७	दिल्ली
२००८	[illegible]
२००९	उदयपुर
२०१०	[illegible]
२०११	कुचेरा
२०१२	बीकानेर
२०१३	भीनासर
२०१४	कानोड़
२०१५	[illegible]
२०१६	उदयपुर
२०१७	उदयपुर
२०१८	उदयपुर
२०१९	उदयपुर

❀ विनय-विवेक—विनम्रता जिनके रग—रग मे समाहित थी ।

❀ जिनको समूह नही, सयम प्रिय था ।

❀ सयमीय साधना से अनुस्यूत जो, सिहो के समक्ष भी निर्भय निर्द्वन्द विचरण करते थे ।

❀ जिनकी कुशल वाग्मिता जन-जन के मन को प्रभावित किये विना नही रहती ।

❀ जिनके गीतो की सुमधुर झकृति मानवो के अन्तस्तल छू जाती थी ।

❀ प्राय स्थानकवासी समाज के जो एक मात्र सर्वसत्ता सपन्न अनुशास्ता वनाए गये थे ।

❀ जिन्होने अपनी सयमीय आन-बान और शान की रक्षा के लिये वहुत वडे पद की कुर्बान
दे दी ।

❀ केसर जैसी भयकर वीमारी मे भी जिसने, उफ तक नही किया था ।

❀ वडे-वडे साधु सम्मेलनो का भी जिन्होने कुशलता के साथ सचालन किया ।

❀ अपने नाम के अनुसार ही जो एक गण से दो गणो के, दो गणो से बहुत गणो के ईश
स्वामी वने थे ।

❀ पूर्ण सजगता की स्थिति मे सलेखना सथारा कर जिन्होने समाधि पूर्व

ऐसे थे, हुक्म गच्छ के सप्तम पट्टधर शात क्राति के जन्म-दाता—आ
जी म. सा. ।

एकलिंगनाथ की राजधानी में जन्मे
कई राजधानियों के नाथ

▭ मेदपाट (मेवाड़) के नाथ राज्य के संचालक महाराणा नहीं, एकलिंग जी कहलाते हैं। परम्परा से महाराणा अपने को एकलिंगजी का दीवान मानते हैं। इन दीवानों ने अपने शौर्य, पराक्रम एवं बलिदान से जो इतिहास बनाया है वह सम्पूर्ण देश के इतिहास का मर्म-स्थल है। ऐसे गौरवशाली इतिहास के जनक मेदपाट राज्य की राजधानी उदयपुर में हमारे चरित्र नायक का जन्म हुआ। उस समय किसने कल्पना की होगी कि एकलिंग नाथ की राजधानी में जन्मा यह बालक भविष्य में संयम के दुरूह मार्ग पर चलकर ऐसी एक नहीं, कई राजधानियों का नाथ हो जायेगा ? वह नाथ भी मात्र बाहरी सत्ता का नहीं अपितु देश भर में स्थान-स्थान के हजारों हजार श्रद्धालु भक्तों की आत्मसत्ता का होगा।

महाराणा उदयसिंह के समय से ही मेवाड़ की राजकीय गतिविधियों का केन्द्र चित्तौड़ से हट कर उदयपुर पहुंच चुका था। अपनी प्रतिभा, कुशलता और स्वामी भक्ति के कारण कई ओसवाल जैन बन्धु उदयपुर में राज्याधिकारी बने हुए थे। इन्हीं में से एक देवस्थान विभाग के खजाञ्ची श्री साहबलालजी मारू नाम के एक सद्गृहस्थ भी थे। आप स्वभाव से धार्मिक वृत्ति के थे तथा अधिकारी भी ऐसे विभाग के थे, जिसका कार्य लोगों की धर्म प्रवृत्तियों की देखभाल करने से सम्बन्धित था। आप नियमित रूप से सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाएं करते थे तो साधुओं के दर्शन प्रवचन के लिये भी जाते रहते थे। आप अपने पिता का साहूकारी का व्यवसाय भी किया करते थे, किन्तु न्याय और नीति से कमाई करने में ही आपका विश्वास था। आपकी धर्मपत्नी का नाम इन्द्राबाई था, जो सुसंस्कारी एवं उदार हृदया महिला थी। पति-पत्नि एक दूसरे के जीवन के पूरक बनकर शांति एवं सात्विकता से साथ अपना जीवन व्यतीत करते थे। श्रीमती इन्द्राबाई की कुक्षि से ही हमारे चरित्र नायक आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का जन्म तिथि श्रावण कृष्णा तृतीया वि. सं. १९४७ शनिवार को हुआ। जन्म के समय से ही पुत्र की तेजस्विता से माता-पिता के हृदय परम प्रसन्नता से भर उठे। जैसे श्रावण मास पृथ्वी को हरी भरी वर्षा से हरी भरी, सरस और सौन्दर्यवान बना देता है, वैसे ही इस श्रावण पुत्र ने अपने माता पिता और परिजनों के हृदय को आनन्द एवं उल्लास से परिपूर्ण कर दिया।

बालक का नामकरण किया गया—'गणेशीलाल'। यह नामकरण आकस्मिक था अथवा किसी ज्योतिषी का भविष्य दर्शन, यह कह नहीं सकते, किन्तु यह नाम इतना सार्थक हुआ कि 'गणेश' गण का ईश बन ही गया।

अपने माता पिता की ममता भरी बाल-क्रीडाओं से हर्षित करते हुए बालक गणेश का

यथारीति से शारीरिक एव मानसिक विकास होने लगा । उसकी तुतलाती हुई मीठी बोली सुनकर सभी उसकी तरफ सहज भाव से आकर्षित हो जाते थे । चार वर्ष की आयु होते-होते बालक को पाठशाला मे विद्याध्ययन का श्री गणेश करा दिया गया । अपने बचपन मे ही बालक गणेश ने हिन्दी और अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ उर्दू और फारसी भाषाओ की भी जानकारी कर ली थी ।

उन्ही दिनो आचार्य श्री श्रीलालजी म सा का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ । उस समय आप अपने पिताजी के साथ पूज्य श्री की सेवा मे जाया-आया करते थे । थोड़े दिनो के सम्पर्क के बाद उनकी धर्मरुचि इतनी बढ गई कि वे प्रवचन आदि कार्यक्रमो मे अपना अधिक समय व्यतीत करने लगे । समझ विशेष परिपक्व नही बनी थी लेकिन आपश्री की रूचि मे उस बाल्यकाल मे भी एक प्रकार की सहजता का समावेश हो गया था । एक दिन पूज्यश्री का प्रवचन दीक्षा के महत्त्व पर चल रहा था । वह प्रवचन अपने पिताश्री के साथ आप भी सुन रहे थे । उस समय ऐसी कोई महत्त्व की बात दिखाई नही दी किन्तु दर्शन करते समय पूज्यश्री ने अनायास ही श्री साहबलालजी से कहा—यदि आप अपने इस बालक को दीक्षा दिला दे तो इसके प्रभाव से धर्म की बहुत उन्नति होगी, कारण यह बालक बडा होनहार है । पूज्य श्री श्रीलालजी म सा मनुष्यो को परखने मे बडे कुशल थे । यद्यपि उस समय वह बात आई-गई हो गई, लेकिन भविष्य मे वह बात कितनी सच निकली यह सभी जानते हैं ।

पूज्यश्री के यह फरमाने पर भी पुत्र—वात्सल्य के कारण अपने पुत्र को दीक्षा तो नही दिलाई लेकिन श्री साहबलालजी ने दो चार वर्ष बाद केवल चौदह वर्ष की आयु मे अपने पुत्र का विवाह कर दिया । राग-भाव हमेशा किसी को ससार मे अधिक जकड रखने का ही प्रयत्न करता है । विवाह के बाद आपश्री अपने पिताजी के साथ कचहरी का कामकाज सीखने लगे ।

वैराग्य के मार्ग पर .

विवाह किये हुए आपश्री को एक वर्ष भी नही बीता होगा कि सारे देश की तरह उदयपुर मे भी प्लेग की भयानक लहर फैली । प्रतिदिन सैकडो की सख्या मे लोग मृत्यु मुख मे चले जाते । चारो ओर ऐसा हाहाकार मच रहा था कि आखो के आसू भी मनोवेदना को व्यक्त करने मे असमर्थ हो गये थे । ऐसे समय मे हमारे चरित्र नायक पर भी दु खो का पहाड टूट पड़ा । पहले तो आपकी एक मात्र बहिन का देहान्त हो गया और कुछ ही समय बाद इस महामारी ने श्री साहबलालजी और श्रीमती इन्द्राबाई को भी अपना लक्ष्य बनाकर आपश्री को एक ही बार मे मातृ-पितृ हीन कर दिया । लौकिकदृष्टि से आपश्री ने गृहस्थाश्रम मे प्रवेश अवश्य कर लिया था किन्तु उस दायित्व को गभीरतापूर्वक निभा सके ऐसा सामर्थ अभी पैदा नहीं हुआ था । एक ओर शौक का प्रबल आवेग तो दूसरी ओर उत्तरदायित्व का भार-आपश्री चिन्तित भी हुए तो चिन्तन भी करने लगे ।

अब किशोरवय के पति-पत्नी ही एक दूसरे के सुख-दुःख के साथी रह गये थे। परिवार में और कोई सदस्य नहीं था। एक-दूसरे से अपने भाव कह सुनकर ही वे दोनों अपने मन को हल्का करने का यत्न करते थे किन्तु प्रकृति तो उनके राग के समस्त बंधन तोड़ देना चाहती थी, क्योंकि राग के बन्धन टूटे बिना कोई सफल साधक एवं महात्मा नहीं बन सकता है। आपको तो विविध कार्यों से बाहर जाना-आना पड़ता था, इस कारण कई तरह के कार्यों में भी मन उलझ जाता था परन्तु आपकी किशोर पत्नी माता-पिता की एक साथ एवं आकस्मिक मृत्यु के वज्रपात को सह न सकी। शोक सागर में डूबते-उतराते कुछ ही दिनों बाद उसकी भी जीवन लीला समाप्त हो गई। इस प्रकार प्रकृति ने लगभग एक साथ ही आपश्री को सभी प्रकार के सांसारिक बंधनों से मुक्त कर दिया।

भरे-पूरे परिवार में रहने वाले श्री गणेशीलालजी अपनी बड़ी तिमंजिली हवेली में निपट अकेले रह गये। जीवन में इस तरह जो रिक्तता आ गई थी उसकी पूर्ति, आपश्री ने समझा कि अब सम्भव नहीं है। जो कुछ हो गया था उसे बदला नहीं जा सकता था। इस कारण भविष्य के प्रति विविध धारणाएं आपश्री के मन में उठने लगीं। कई सगे सम्बन्धियों पड़ोसियों ने उनको घर फिर से बसाने का सुझाव दिया और एक बार तो ऐसे सुझाव के कारण आपश्री के हृदय में राग और विराग का अन्तर्द्वन्द्व मच गया। मन के गंभीर चिन्तन ने ही इस अन्तर्द्वन्द्व को मिटाया तो समस्या का समाधान भी निकला। उन दिनों में आपश्री के मन का चिन्तन संसार की क्षणभंगुरता को लेकर चला करता था। आप सोचते यदि परिवार से उनको सुख मिलना उनके भाग्य में बदा होता तो उनका परिवार इस प्रकार की दुःखद स्थिति में विशृंखलित क्यों होता? यदि पहली पत्नी ही उन्हें सुख देने को जीवित नहीं रह पाई तो क्या गारंटी है कि दूसरी पत्नी उन्हें सुख दे पायेगी? यदि संसार ऐसा क्षण भंगुर और नश्वर है कि किसी के जीवन का पल भर का भी भरोसा नहीं तो वे अपने ही जीवन के प्रति कैसे विश्वस्त हो सकते हैं?

तब उनकी आत्मा के भीतर से आवाज उठी और उन्हें याद आया आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज का वह कथन जो उनके लिये उनके पिताश्री को कहा गया था। तभी से उनके मन में धारणा जमी कि जिस संसार ने एक-एक करके उन्हें छोड़ दिया है तो वे ही क्यों न उस संसार को छोड़ दें? इस तरह उनके कोमल मानस में वैराग्य के अंकुर फूटने लगे।

संयोगवश उसी वर्ष पूज्य श्री जवाहरलालजी म. सा. एवं तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी म. सा. का चातुर्मास उदयपुर में हुआ। पूज्यश्री प्रतिभा सम्पन्न व्याख्याता थे और वे किसी भी विषय का ऐसी ओजस्विनी वाणी में प्रतिपादन करते थे कि सामान्य श्रोता भी भाव-प्रवण हो उठता था। एक दिन पूज्यश्री ने संसार के असार-स्वरूप पर प्रवचन कर, जनसमुदाय पर भावपूर्ण प्रभाव डाला, जिसके स्वर्णिम आभा से वैराग्य के राजमार्ग पर पग धरने को उद्यत थे श्री गणेशीलालजी। अपने वैराग्यपरक अनुभवों के बाद आपश्री का मन संसार से विरक्त सा तो हो गया था, किन्तु पूज्यश्री के उद्बोधन से उस वैराग्य का रंग प्रगाढ़ हो गया। कालोज

यथारीति से शारीरिक एव मानसिक विकास होने लगा। उसकी तुतलाती हुई मीठी बोली सुनकर सभी उसकी तरफ सहज भाव से आकर्षित हो जाते थे। चार वर्ष की आयु होते-होते बालक को पाठशाला मे विद्याध्ययन का श्री गणेश करा दिया गया। अपने बचपन मे ही बालक गणेश ने हिन्दी और अग्रेजी भाषा के साथ-साथ उर्दू और फारसी भाषाओ की भी जानकारी कर ली थी।

उन्ही दिनो आचार्य श्री श्रीलालजी म सा. का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ। उस समय आप अपने पिताजी के साथ पूज्य श्री की सेवा मे जाया-आया करते थे। थोडे दिनो के ससर्ग के बाद उनकी धर्मरुचि इतनी बढ गई कि वे प्रवचन आदि कार्यक्रमो मे अपना अधिक समय व्यतीत करने लगे। समझ विशेष परिपक्व नही बनी थी लेकिन आपश्री की रुचि मे उस बाल्यकाल मे भी एक प्रकार की सहजता का समावेश हो गया था। एक दिन पूज्यश्री का प्रवचन दीक्षा के महत्त्व पर चल रहा था। वह प्रवचन अपने पिताश्री के साथ आप भी सुन रहे थे। उस समय ऐसी कोई महत्त्व की बात दिखाई नही दी किन्तु दर्शन करते समय पूज्यश्री ने अनायास ही श्री साहबलालजी से कहा—यदि आप अपने इस बालक को दीक्षा दिला दे तो इसके प्रभाव से धर्म की बहुत उन्नति होगी, कारण यह बालक बडा होनहार है। पूज्य श्री श्रीलालजी म सा मनुष्यो को परखने मे बडे कुशल थे। यद्यपि उस समय वह बात आई-गई हो गई, लेकिन भविष्य मे वह बात कितनी सच निकली यह सभी जानते है।

पूज्यश्री के यह फरमाने पर भी पुत्र—वात्सल्य के कारण अपने पुत्र को दीक्षा तो नही दिलाई लेकिन श्री साहबलालजी ने दो चार वर्ष बाद केवल चौदह वर्ष की आयु मे अपने पुत्र का विवाह कर दिया। राग-भाव हमेशा किसी को ससार मे अधिक जकड रखने का ही प्रयत्न करता है। विवाह के बाद आपश्री अपने पिताजी के साथ कचहरी का कामकाज सीखने लगे।

वैराग्य के मार्ग पर .

विवाह किये हुए आपश्री को एक वर्ष भी नही बीता होगा कि सारे देश की तरह उदयपुर मे भी प्लेग की भयानक लहर फैली। प्रतिदिन सैकडो की सख्या मे लोग मृत्यु मुख मे चले जाते। चारो ओर ऐसा हाहाकार मच रहा था कि आखो के आसू भी मनोवेदना को व्यक्त करने मे असमर्थ हो गये थे। ऐसे समय मे हमारे चरित्र नायक पर भी दु.खो का पहाड टूट पडा। पहले तो आपकी एक मात्र बहिन का देहान्त हो गया और कुछ ही समय बाद इस महामारी ने श्री साहबलालजी और श्रीमती इन्द्राबाई को भी अपना लक्ष्य बनाकर आपश्री को एक ही बार मे मातृ-पितृ हीन कर दिया। लौकिकदृष्टि से आपश्री ने गृहस्थाश्रम में प्रवेश अवश्य कर लिया था किन्तु उस दायित्व को गभीरतापूर्वक निभा सके ऐसा सामर्थ्य अभी पैदा नही हुआ था। एक ओर शोक का प्रबल आवेग तो दूसरी ओर उत्तरदायित्व का भार-आपश्री चिन्तित भी हुए तो चिन्तन भी करने लगे।

अब किशोरवय के पति-पत्नी ही एक दूसरे के सुख-दुःख के साथी रह गये थे। परिवार मे और कोई सदस्य नही था। एक-दूसरे से अपने भाव कह सुनकर ही वे दोनो अपने मन को हल्का करने का यत्न करते थे किन्तु प्रकृति तो उनके राग के समस्त बंधन तोड देना चाहती थी, क्योंकि राग के बन्धन टूटे बिना कोई सफल साधक एवं महात्मा नही बन सकता है। आपको तो विविध कार्यो से बाहर जाना-आना पड़ता था, इस कारण कई तरह के कार्यों मे भी मन उलझ जाता था परन्तु आपकी किशोर पत्नी माता-पिता की एक साथ एवं आकस्मिक मृत्यु के वज्रपात को सह न सकी। शोक सागर मे डूबते-उतराते कुछ ही दिनो बाद उसकी भी जीवन लीला समाप्त हो गई। इस प्रकार प्रकृति ने लगभग एक साथ ही आपश्री को सभी प्रकार के सांसारिक बंधनों से मुक्त कर दिया।

भरे-पूरे परिवार मे रहने वाले श्री गणेशीलालजी अपनी बड़ी तिमंजिली हवेली मे निपट अकेले रह गये। जीवन मे इस तरह जो रिक्तता आ गई थी उसकी पूर्ति, आपश्री ने समझा कि अब सम्भव नही है। जो कुछ हो गया था उसे बदला नहीं जा सकता था। इस कारण भविष्य के प्रति विविध धारणाएं आपश्री के मन मे उठने लगी। कई सगे सम्बन्धियों पड़ोसियो ने उनको घर फिर से बसाने का सुझाव दिया और एक बार तो वैसे सुझाव के कारण आपश्री के हृदय मे राग और विराग का अन्तर्द्वन्द्व मच गया। मन के गंभीर चिन्तन ने ही इस अन्तर्द्वन्द्व को मिटाया तो समस्या का समाधान भी निकला। उन दिनो मे आपश्री के मन का चिन्तन संसार की क्षणभंगुरता को लेकर चला करता था। आप सोचते यदि परिवार से उनको सुख मिलना उनके भाग्य मे बदा होता तो उनका परिवार इस प्रकार की दुःखद स्थिति मे विशृंखलित क्यो होता? यदि पहली पत्नी ही उन्हें सुख देने को जीवित नही रह पाई तो क्या गारंटी है कि दूसरी पत्नी उन्हे सुख दे पायेगी? यदि संसार ऐसा क्षण भंगुर और नश्वर है कि किसी के जीवन का पल भर का भी भरोसा नही तो वे अपने ही जीवन के प्रति कैसे निश्चिन्त हो सकते है?

तब उनकी आत्मा के भीतर से आवाज उठी और उन्हें याद आया आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज का वह वचन जो उनके लिये उनके पिताश्री को कहा गया था। तभी तत्काल उनके मन मे धारणा जगी कि जिस संसार ने एक-एक करके उन्हें छोड दिया है तो वे ही क्यो न उस संसार को छोड दे? इस तरह उनके कोमल मानस मे वैराग्य के अंकुर फूटने लगे।

संयोगवश उसी वर्ष पूज्य श्री जवाहरलालजी म. सा. एवं तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी म. सा. का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ। पूज्यश्री प्रतिभा सम्पन्न व्याख्याता थे और वे किसी भी विषय का ऐसी प्रभावशाली वाणी मे प्रतिपादन करते थे कि सामान्य श्रोता भी भाव-प्रवण हो उठता था। एक दिन पूज्यश्री ने संसार के असार-स्वरूप तथा मानव जीवन की दुर्लभता पर मार्मिक प्रकाश डाला, जिससे उपस्थित श्रोताओं के वैराग्य की भावनाएं उमड़ पड़ी थी, प्रमुख थे श्री गणेशीलालजी। कटु पारिवारिक अनुभवों के बाद आपश्री का मन संसार से विरक्त सा हो ही गया था, किन्तु पूज्यश्री के उपदेश से उस वैराग्य का वेग प्रबल हो गया। आखिर

माह की वात है कि एक दिन व्याख्यान समाप्त होने पर श्री गणेशीलालजी पूज्यश्री के पद-वन्दन को गये तो उन्होने सामान्य परिचय की दृष्टि से आपश्री से नाम, परिवार आदि के वारे मे पूछ लिया। आपश्री ने जब पूरा परिचय दिया तो पूज्यश्री को विदित हुआ कि माता, पिता तथा पत्नी के देहावसान के वाद यह सोलह वर्षीय कुमार त्यागमय जीवन व्यतीत करने को इच्छुक है। दूसरे लोगो से पूज्यश्री की जानकारी मे यह भी आया कि इस कुमार के दूर के कुछ सबधी इसे पुन सासारिक झझट मे उलझाना चाहते हैं, जवकि यह सतत ज्ञानाभ्यास और साधना मे सलग्न है। फिर तो पूज्यश्री ने आपश्री को हृदयग्राही शब्दो मे काम-भोगो की विडम्वना का वर्णन किया तथा स्वात्म-रमण की महत्ता पर प्रतिबोध दिया। आपश्री तो वैराग्य के राजमार्ग पर चलने को उत्सुक थे ही और फिर पूज्यश्री का सम्बल मिल गया तो उनका निश्चय भी दृढ वन गया। पूज्यश्री ने भी आपके मनोभावो की परीक्षा करके साधु धर्म के आचार एव उसकी प्रारभिक सयमात्मक क्रियाओ का निर्देशन किया। आपश्री भी सुयोग्य निर्देशन मे ज्ञानाभ्यास करने लगे तो साधु के कठिन जीवन का अभ्यास भी। कई वार पूज्यश्री ने आपश्री को अपनी कसौटियो पर कसा और हरवार आपश्री खरे उतरे। तव वि स १९६२ की मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा के दिन पूज्यश्री ने उदयपुर मे ही मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की नेश्राय मे आपश्री को भागवती दीक्षा प्रदान की। इस प्रकार आपश्री ने सयम ग्रहण करके अपने जीवन के वास्तविक अभ्युदय के पथ पर प्रयाण कर दिया।

सुदूर प्रदेशो मे प्रवास एवं कठिन संघर्षों मे समभाव :

अपने गुरुदेव पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा के साथ विहार करते हुए आपश्री नाथद्वारा पधारे। सौभाग्य का ऐसा सगम हुआ कि वहा आचार्य श्री श्रीलालजी म सा के सभी को दर्शन हो गये। आपश्री के वारे मे आचार्यश्री की ऊची धारणा थी, अत आपको देखते ही पूज्यश्री को सबोधित करते हुए वोले—जवाहर, गणेश को खूब पढाओ, शास्त्रो मे पारगत वनाओ क्योकि इनको पढाना कल्पवृक्ष को सींचने के समान है। पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा. ने आचार्य देव के इस कथन को हृदय मे विठा लिया और उसी का शुभ परिणाम था कि लगातार तेईस चातुर्मासो मे आपश्री को साथ रखकर अध्ययन कराने के साथ-साथ अपना अगाध ज्ञान, तार्किक प्रतिभा और चारित्र-निष्ठा, जैसे उत्तराधिकार मे प्रदान की। नाथद्वारा से विहार करने के पश्चात् आपश्री का अपने नेश्रायित गुरु मुनि श्री मोतीलालजी म सा के साथ गगापुर पधारना हुआ और यही आपश्री का वि स. १९६३ का पहला चातुर्मास सम्पन्न हुआ। चातुर्मास मे आपश्री ने कठोर तपस्या भी की तो ज्ञानार्जन भी किया। कई थोकडे एव दशवैकालिक व उत्तराध्ययन सूत्रो के कई अध्याय आपने कठस्थ किये।

गुरु सेवा का आपश्री ने जो आदर्श प्रस्तुत किया वह अद्वितीय था। अपने गुरु के साथ वर्षो तक आपने विचरण किया और उनके अच्छे वुरे स्वास्थ्य के समय पूरे श्रम, लगन व भक्ति से आप वैयावृत्य करते रहे। इस आभ्यतर तप का आरभ आपश्री के वि सं. १९६५ के थादला चातुर्मास से ही हो गया। यहा का चातुर्मास समाप्त करके आपश्री अपने गुरुदेव

के साथ रम्भापुर होकर कोद पधारे ही थे कि पूज्यश्री को तेज बुखार हो गया अत. सभी वापिस रम्भापुर लौटे । बुखार के साथ दस्त और कै भी होने लगे जिनकी तादाद १५० प्रतिदिन तक पहुच गई और यह हालत नौ दिन तक चलती रही । इस दौरान आपश्री दवा लाते, मल दूषित वस्त्रो को धोते तथा शुश्रूषा मे इतने तन्मय रहते कि दूसरा सब कुछ भूल गये । वहा थादला के वैद्य नाहरसिहजी किसी दूसरे काम मे आये तो उन्होंने पूज्यश्री को भी देखा और उन्हें राय दी कि थादला पधारे तो सम्यक् चिकित्सा करके निरोग बनादू । उस अशक्त अवस्था मे पूज्यश्री को आपश्री और साथी मुनिश्री राधालालजी कितनी कठिनाई से थादला ले गये यह अवर्णनीय है । आपश्री की सेवा-उपासना से पूज्य श्री थादला पहुचे एव उपचार से स्वस्थ हुए ।

वि स १९६६ का आपश्री का चातुर्मास जावरा मे हुआ जहा अच्छी धर्म प्रभावना हुई । स १९६७ का चातुर्मास इन्दौर मे हुआ और वहा पूज्यश्री ने एक रुपये के दान को जो महादान की सज्ञा दी उस घटना मे सबधित सज्जन के अनुताप को आपश्री ने ही पूज्यश्री तक पहुचाया था ।

साधना की डगर के कठिन सघर्षों का क्रम महाराष्ट्र की ओर विहार करने के साथ आरम्भ होता है । पहला सघर्ष था ज्ञानार्जन के लिये, क्योंकि ज्ञान के प्रकाश मे ही चारित्र की साधना मानी गई है । पूज्यश्री ने और आपश्री ने अटल निश्चय कर लिया था कि विहार की अनेकानेक कठिनाइयो के बावजूद सस्कृत एव शास्त्रीय अध्ययन को परिपुष्ट करना ही है । अत वि. स १९६८ का आपश्री का चातुर्मास अहमदनगर मे हुआ ।

उस समय तक स्थानकवासी समाज मे सस्कृत प्राकृत भाषा, व्याकरण, साहित्य आदि का पठन पाठन बहुत कम था । इस कारण इन विषयो के विद्वान मुनि भी नही थे । अत आपश्री का एव मुनिश्री घासीलालजी म सा का अध्ययन बाहर के पडितो से शुरू कराया गया ।

बाहर [illegible] विद्वानो के सान्निध्य मे आपश्री एव आपके साथी मुनि का अध्ययन क्रम प्रारम्भ हुआ जो तीव्र गति से अग्रगामी होता गया । न्याय, व्याकरण दर्शन, साहित्य आदि विषयो एव सस्कृत, प्राकृत भाषाओ मे आपश्री पाण्डित्य प्राप्त करने लगे । वि स १९७० का आपश्री का चातुर्मास [illegible] मे हुआ, जहा शिक्षा क्रम का आयोजन बराबर चलता रहा । वहा फिरोदिया जी और मुथाजी दर्शनार्थ आए तो उन्होंने यो ही पूछ लिया कि शिष्यो की अध्ययन मे कैसी प्रगति चल रही है ? प्रश्न उचित था और पूज्यश्री भी यही चाहते थे कि समाज की आस्था और बल का सवर्धन हो । तब उन्होंने दोनो शिष्यो की परीक्षा के लिये कहा तो, दोनो तत्काल तैयार हो गये । फिर अहमदनगर के प्रसिद्ध विद्वान श्री [illegible] शास्त्री एव [illegible] जी ने दोनो की परीक्षा ली जो परिणाम अतीव गौरवपूर्ण व उत्साहपूर्ण था । आपश्री ने व्याकरण मे ८५ प्रतिशत, साहित्य मे ६४ प्रतिशत एव मौखिक परीक्षा मे शत प्रतिशत अक प्राप्त किये । परीक्षकों ने परीक्षार्थियो की भूरि-भूरि प्रशसा की ।

आचार्य प्रवर की दूरदर्शिता का ही परिणाम समझिये कि आज स्थानकवासी समाज मे बडे-बडे विद्वान एवं संत-महासतीजी समाज के समक्ष आए है।

आपश्री का वि स १९७५ का चातुर्मास हिवडा मे हुआ। इसी वर्ष मे आचार्य श्री श्रीलालजी म मा. ने स्वास्थ्य ठीक नही रहने के कारण पूज्यश्री को युवाचार्य घोषित किया अत वे तो चातुर्मास की समाप्ति के वाद मालवा की ओर पधारे, किन्तु आप श्री मुनि श्री मोतीलालजी म सा के साथ अपना अध्ययन चालू रखने के लिये महाराष्ट्र मे ही रुक गये तथा वि स १९७६ एव १९७७ के चातुर्मास आपश्री ने क्रमश चिंचवड और सतारा मे किये। इन दानो चातुर्मासो मे समाज का आपश्री को वाणी विद्वत्ता एव शास्त्रीय अध्ययन का परिचय मिला। सरल से सरल भाषा मे गभीर शास्त्रीय विषय को समझाने मे आपश्री ने प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। अध्ययन क्रम का एक चरण पूरा कर लेने के पश्चात् आपश्री ने गुरुदेव के सन्निकट पहुचने का विचार किया। महाराष्ट्र से विहार करके आपश्री उदयपुर पधारे, तव पूज्यश्री का भी बीकानेर से वही आगमन हो गया। इसी बीच आपश्री, गुरुदेव के जैतारण मे आचार्य श्री श्रीलालजी म सा के स्वर्गारोहण के करण आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हो गये थे। उदयपुर मे सम्प्रदाय के सत–सतियो का इस दृष्टि से एक सम्मेलन हुआ कि साधु-समाचारी को एक व्यवस्थित रूप दिया जाय। नवाचार्य श्री चाहते थे कि साध्वाचार का स्तर उच्च ही बना रहना चाहिये। तदनन्तर वि स १९७८ का रतलाम चातुर्मास सम्पन्न करके आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा. आपश्री आदि को साथ लेकर अध्ययन की सम्पूर्ति के लिये पुन महाराष्ट्र की ओर चल पडे।

इस विहार चर्या मे आपश्री को कठिन सघर्ष झेलने पडे। खुर्रमपुरा गाव मे एक मार्मिक-प्रसग पैदा हो गया। वहा एक खुले मन्दिर मे ठहरना पडा और पौष माह की कडाके की सर्दी थी। अकस्मात् शाम को मुनिश्री हणूतमलजी म सा के सीने में दर्द उठा और ज्वर हो गया। वहा उपचार की समुचित व्यवस्था नही थी तथा रोग वढता ही गया। वहा आपश्री ने उनकी वहुत सेवा की किन्तु जीवन की आशा न देखकर सथारा करा दिया। वही उनका देहावसान हो गया।

साधना की डगर के सघर्ष साधारण नही होते हैं। आचार्य श्री आपश्री एव अन्य सत खुर्रमपुरा से विहार करके वाल-समद पहुचे तो वहा भी एक टूटी फूटी धर्मशाला ठहरने के लिये दिखाई दी, किन्तु चूहो और मच्छरो की अधिकता के कारण ठहर पाना कठिन था। तब आपश्री को कोई अन्य स्थान देखने के लिये भेजा गया। आपको एक गृहस्थ के मकान के वाहर का चबूतरा योग्य दिखाई दिया। मकान मे मात्र पुत्र वधू ही थी जिससे आपश्री ने चबूतरे पर रात्रि विश्राम की आज्ञा चाही। उसने आना कानी के साथ कहा कि मैं तो मना नही करती, मगर मेरे ससुर आ जायेंगे तो वे आपको हटा देंगे। वे साधुओ को, चोर उचक्के समझते हैं। आपश्री ने कहा कि हम तुम्हारे ससुर को भी समझा लेंगे। तव सभी सत उस चबूतरे पर आ गये और विश्राम करने लगे। रात देर मे मकान मालिक आया तो हकीकत मे उसने सतो को फटकारना शुरू कर दिया और समझाने के वावजूद धमकी देने लगा कि वहा से तुरन्त हट

जावे वरना पातरे फोड दूंगा । आखिर वहां से सब उठे और पुनः धर्मशाला में गये जहां समभाव से रात्रि व्यतीत की । वहां से विहार करके नेंघवा पहुंचे । नेंघवा से ११ कोस का उग्र विहार करके चोपी पधारे । आहार-पानी का वहां कोई संयोग नहीं जुटा । फिर भी परिषहों को सहन करते हुए समभावी बने रहे । साधु का आचार पालना कितना कठिन होता है ? यह सही कहा गया है कि साधु धर्म की पालना करना तलवार की धार पर चलने जैसा है ।

वि. सं. १९७९ का चातुर्मास सतारा में और १९८० का चातुर्मास बम्बई के निकट घाटकोपर में हुआ । इस अवधि में आपश्री का अध्ययन सम्पूर्ण हुआ एवं तदनन्तर विहार करते हुए आपश्री का अपने गुरुदेव आदि के साथ जलगांव पदार्पण हुआ । यहीं वि. सं. १९८१ का चातुर्मास भी सम्पन्न हुआ । इसी चातुर्मास में आचार्यश्री अस्वस्थ हो गये और हथेली के फोड़े ने गंभीर रूप ले लिया ।

सौ टंच सोना एकदम पसन्द आ गया

आचार्यश्री का स्वास्थ्य इतना बिगड़ता चला गया कि उनका जीवन भी खतरे में दिखाई देने लगा । उन्हें अपने जीवन की कोई भी चिन्ता नहीं थी, किन्तु संघ की अवश्य चिन्ता हुई, जिसे दूर करने के लिये सुयोग्य उत्तराधिकारी का चयन अनिवार्य हो गया । सम्प्रदाय के सभी सन्तों पर दृष्टि दौड़ाते हुए उनकी दृष्टि आपश्री पर टिक गई । कारण, आपश्री विद्वान, चारित्रसम्पन्न, सेवाभावी एवं गुरुनिष्ठ थे । संघ का शासन सूत्र आपश्री के हाथों में सौंप देने का आचार्यश्री ने विचार किया । उन्होंने अपना विचार समाज के प्रधान श्रावकों को बताया जिन्होंने उसका हर्ष पूर्वक समर्थन किया । इतना सब हो जाने के बावजूद आपश्री को कुछ भी विदित नहीं हुआ था ।

एक दिन अचानक सेठ वर्धमानजी पीतलिया आपश्री के पास पहुंचे और कहने लगे- महाराज, मैं आज आपसे एक निवेदन करने आया हूं । आप जानते ही हैं कि आचार्य श्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं है इस कारण वे आपको जो भी आज्ञा दें आप उसे स्वीकार करने में संकोच न करें, उनका प्रतिवाद में न जावें ।

आपश्री ने आश्चर्य मिश्रित सहज भाव से उत्तर दिया, क्या कभी मैंने आचार्यश्री की आज्ञा का उल्लंघन किया है, जो आपको ऐसी बात कहने की जरूरत पड़ गई है ? मैं तो गुरुदेव का एक तुच्छ सेवक रहा हूं और इसी रूप में सदा रहना चाहता हूं । सेठजी ने इतना ही कहा—आप ठीक हैं फिर भी मैं आशा करता हूं कि गुरुदेव आपको जो भी आज्ञा दें, आप उसको स्वीकार करें । आखिर आपश्री जब आचार्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए तो सम्प्रदाय का भार स्वीकार करने के लिये कहा गया । तभी आपश्री को विदित हुआ कि पीतलियाजी ने आज ऐसा आग्रह क्यों किया था ? आपश्री यह आज्ञा सुनकर विचार में पड़ गये कि क्या मैं इस गुरुतर भार को उठाने में समर्थ हो सकूंगा ? किन्तु इस विलक्षण आज्ञा का अस्वीकार करने का साहस भी नहीं

था। आचार्यश्री गभीर रूप से अस्वस्थ थे और उस समय मे उन्हे किसी तरह की ठेस पहुंचाना उचित नही था। वे तत्काल हा नही कर सके तो पीतलियाजी ने बनावटी रोष से आपको तरफ देखा। उस दृष्टि मे एक आज्ञाकारी और विनीत शिष्य को उसे स्वीकार कर लेने का स्पष्ट सकेत था। विवश आपश्री न स्वीकृति दे दी।

सेठ पीतलियाजी ने मुनिश्री घासीलालजी म सा को युवाचार्य पद का व्यवस्था पत्र (मजमून) लिखने को कहा। मगर उनके यह कहने पर कि मुझे लिखना नही आता सेठजी न खुद मजमून बना दिया और उसे मुनिश्री घासीलालजी म सा को नकल करने के लिये दे दिया। वह नकल सेठजी ने आचार्यश्री को दे दा। इस प्रकार सघर्षों की आग मे तपा हुआ सौ टक का सोना एकदम पसद कर लिया गया।

वि स १९८२ का चातुर्मास भो जलगाव मे ही हुआ, क्योकि आचार्यश्री का स्वास्थ्य कुछ सुधरा तो सही लेकिन पूरी तरह ठीक नही हुआ था। यह चातुर्मास समाप्त करके आचार्य श्री तो मालवा की ओर विहार कर गये किन्तु आपश्री वयोवृद्ध मुनिश्री मोतीलालजी म. सा की सेवा मे रहने की दृष्टि मे वहो पर विराजे रहे और वि स १९८३ का चातुर्मास भी वहीं पर व्यतीत किया। आपश्री प्रतिदिन अपने नेश्रायिन गुरु महाराज की पूर्ण मनोयोग से सेवा सुश्रूषा करते थे और शास्त्राभ्यास करते हुए प्रवचन भी सुनाते थे। मुनिश्री को दस्तो की बीमारी थी और मानसिक सतुलन भी बिगड गया था। ऐसी अवस्था मे आपश्री उनके मल-दूषित वस्त्रो को निर्ग्लान भाव से स्वच्छ करते और आठो प्रहर प्रमाद न करते हुए परिचर्या मे लगे रहते। किन्तु दिनो दिन जीवन की आशा क्षीण होती गई और फाल्गुन कृष्णा १३ स १९८३ को मुनिश्री मोतीलालजी म सा का देहावसान हो गया।

आपश्री के खरेपन को मुनिश्री की सेवा ने परखा तो विहार करने के बाद मार्ग के परिगहो ने भी परखना शुरू किया। जब आपश्री सतपुडा पर्वत की तलहटी मे होकर विहार कर रहे थे, उस वियावान जगल मे अचानक ४०-५० कदम की दूरी पर ही दो खूखार शेर दिखाई दिये। आगे-आगे आप चल रहे थे और पीछे दोनो सत थे। आप तो निर्भयचित्त थे, इसलिये आपका और शेरो की आखे आपस मे टकराई। एक तरफ की आखो से हिंसा और रौद्रभावना फूट रही थी तो आपश्री की आखो मे स्नेह, करुणा एव निर्भयता की झलक थी। पीछे मे आये दोनो सतो ने भी यह दृश्य देखा। कुछ क्षणो तक आखे एक दूसरो की तरफ लगी रही लेकिन जल्दी ही शेरो ने अपनी आखें झुकाई तथा एक ओर चल दिये।

आपश्री उग्र विहार करते हुए आचार्य श्री की सेवा मे पहुचे तथा उन्ही के समीप वि स १९८४ का चातुर्मास आपश्री ने भीनासर-गगाशहर मे किया।

दयावान विरोधियों को झुकाते हुए आपश्री का चूरू मे पहला स्वतंत्र चातुर्मास :

भीनासर-गंगाशहर का चातुर्मास समाप्त करके आचार्यश्री के साथ आपश्री आदि

तेरह पथियो के प्रभाव क्षेत्र थली प्रदेश मे प्रविष्ट हुए । यह एक ऐसी धर्म-यात्रा थी जिसमे अपने आपको एक रूप मे धार्मिक मानने वालो पर ही धर्म विजय प्राप्त करनी थी । यह अनोखी धार्मिकता तेरहपथ मतावलम्बियों की धार्मिकता थी जो अपने को जैन कहते हुए भी शासन देव भगवान महावीर को "चूका" वताने की धृष्टता करते थे और दयादान मे एकान्त पाप वताते थे । आपश्री को इस धर्म यात्रा मे अपने आचार्यश्री की असाधारण प्रतिभा के दर्शन हुए । सरदारशहर मे वह चातुर्मास एक तरह से विजेताओ का चातुर्मास ही सिद्ध हुआ । थली प्रदेश मे यह तेरहपथियो का सवसे वडा केन्द्र है । यहा पर जव दयादान के सवध मे सत्य-प्ररूपणा का प्रचार हुआ और उनकी भ्रामक धारणाओ की पोल खुलती चली गई तो सारे थलीप्रदेश मे जागृति का एक नया ही वातावरण वनने लगा । सरदारशहर मे तेरह पथियो के साथ आचार्यश्री की विश्लेपणात्मक चर्चा हुई, जिसका सारे क्षेत्र मे अच्छा प्रभाव पडा । आचार्यश्री के साथ आपश्री ने दयादान, सेवा परोपकार आदि के सवध मे भगवान महावीर के सिद्धान्तो की यथार्थ जानकारी जनता को दी जिसकी वडी ही अनुकूल प्रतिक्रिया रही ।

सरदारशहर का चातुर्मास पूरा होने पर कोठारीजी के विशेष आग्रह पर आचार्यश्री का चुरु पधारना हुआ । वहा आचार्यश्री से आगामी चातुर्मास करने की विनती की गई किन्तु आचार्यश्री ने वहा पर ऐसे मुनि का चातुर्मास कराना चाहा जो अत्यन्त प्रतिभाशाली, शास्त्रज्ञ और तार्किक हो, ताकि थली प्रदेश के दो क्षेत्रो मे एक साथ दयादान का सघन प्रचार किया जा सके । इस विचार से आचार्यश्री ने हमारे चरित्र-नायक को चुरु मे चातुर्मास करने की आज्ञा दी । यद्यपि आपश्री का चुरु मे स्वतत्र रूप मे किया जाने वाला यह पहला चातुर्मास था, चातुर्मास काल मे आपश्री ने जिस रूप मे अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया एव वहा जिस रीति से सत्यधर्म का प्रसार हुआ, उससे आपकी कीर्ति समूचे थली प्रदेश मे एक प्रभाविक उपदेष्टा के रूप मे फैल गई ।

चुरु के चातुर्मास काल मे आपश्री की विद्वत्ता और तार्किकता के साथ आपकी अपूर्व सरलता की गहरी छाप पडी । प्रतिदिन सैद्धान्तिक प्रवचन होने तो प्रवचनो के विपय वस्तु पर हजारो श्रोता आपसे तात्विक चर्चा भी करते । परिणाम स्वरूप जैनेतर जनता के अलावा कई तेरहपथी भाई भी अपनी जिज्ञासाओ का सतोपजनक समाधान पाकर आपश्री के भक्त वन गये। नगरवासियो ने प्यार और श्रद्धा के साथ आपश्री को "गणेश-नारायण" के नाम से सबोधित करना शुरु कर दिया । आपश्री की दृष्टि मे यह चातुर्मास अतीव महत्त्वपूर्ण रहा । आपश्री का पहला स्वतत्र चातुर्मास होने के कारण आपश्री को अपने ही ज्ञान और अनुभव का मूल्याकन करने का अवसर मिला तो जनता ने भी आपकी प्रतिभा का स्वतत्र रूप से आकलन किया । इस रूप मे जहा आपश्री का आत्मवल अभिवृद्ध हुआ वहा आपकी लोकप्रियता का भी विस्तार हुआ । यहा आपश्री के द्वारा अध-श्रद्धा एव भ्रात-धारणाओ मे ग्रस्त भाइयो ने धर्म का यथार्थ वोध प्राप्त करने का जो श्री गणेश किया वह वोध-जागृति जीवन पर्यन्त चलती रही, किन्तु उस जागृति का प्रत्यक्ष स्वरूप उसी चातुर्मास मे भी दिखाई दिया जव दयादान के विरोधियो के सिर झुक गये और सवत्सरी के दिन आपश्री के सान्निध्य मे लगभग ३५० उपवास, पौपध,

दया, सामायिक आदि क्रियाए उन सद्गृहस्थो ने की जिन्होने नया-नया यथार्थ-बोध पाया था।

पूर्ण सफलता के साथ चातुर्मास समाप्त हुआ किन्तु चूरू नगर मे आपश्री का बाद मे एक प्रभावशाली कार्य और हुआ। चातुर्मास के बाद आपश्री की जब विदाई हुई तो उमडते हृदयो और अश्रुपूरित लोगो का दृश्य बडा ही कारुणिक था। अपने गणेश नारायण को विदा करते हुए समस्त जनता बहुत ही भावुक हो उठी थी।

वि स १९८६ का चातुर्मास भावभरी विनती के कारण आचार्यश्री के साथ आपश्री ने पुन चूरू मे किया। उन्ही दिनो सयोग वश अपने महामहोत्सव के सिलसिले मे तेरह पथियो के पूज्यश्री कालूरामजी वहा सदल-बल आये। तेरह पथियो मे साध्विया साधुओ का कई प्रकार का कार्य करती है, वह कई तेरह पथी श्रावको को भी अच्छा नही लगता था। कई श्रावक आपश्री के यथार्थ बोध से कई क्रियाओ की असलियत भी जान चुके थे, अत चूरू निवासी तेरह पथी श्रावक गौरीलालजी बैद ने अपने पूज्यश्री से पूछा—क्या साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार-पानी ले सकता है और क्या इस विषय मे कोई शास्त्रीय प्रमाण भी है? इस पर पूज्य कालूरामजी ने कहा—यदि साध्वी का लाया हुआ आहार-पानी नही कल्पता तो हम क्यो लेते? और इस विषय मे बहुत प्रमाण है। तब बैदजी ने यह भी पूछ लिया कि कोई २२ सम्प्रदाय के साधु आवे तो क्या वे प्रमाण बता सकेंगे? उन्होने अपनी स्वीकृति दे दी।

जब बैदजी ने यह सवाद जाकर आचार्यश्री को बताया तो उन्होने आपश्री के साथ अन्य मुनियो को देकर तेरह पथियो के पूज्यजी से उपरोक्त विषयक प्रमाण पूछने लिये के भेजा। जब आपश्री उनके स्थान पर पहुचे तब वहा व्याख्यान चल रहा था जिसमे बडी सख्या मे उनके साधु-साध्वी व श्रावक-श्राविकाए थी। आपश्री ने पहले स्थान से बाहर खडे रहकर पुछवाया कि क्या वे भीतर आ सकते है? स्वीकृति सूचक उत्तर मिलने पर आपश्री व अन्य मुनि भीतर पधारे। तेरहपथी श्रोताओ मे जो सभ्य थे वे आपश्री के पधारने पर खडे हुए तथा सब मुनियो को बैठने का आग्रह करने लगे। आपश्री ने फरमाया कि हम थोडी देर के लिये आये हैं, इस कारण बैठने की आवश्यकता नही है। बाद मे आपश्री ने बैदजी को बुलाकर अपना प्रश्न कि क्या बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार-पानी साधु को ग्रहण करना कल्पता है? और यदि हा तो उस विषय मे शास्त्रीय प्रमाण क्या है—उनके पूज्यजी तक पहुचाने और उसका उत्तर लाने को कहा।

तेरह पथी पूज्यजी ने उक्त प्रश्न के उत्तर के लिये स्वीकृति देते समय यह कल्पना नही की थी कि उसका गोलमाल उत्तर उन्हे भरी सभा मे देना पडेगा क्योकि उत्तर से उनके स्वय के भक्तो के भडक जाने की आशका थी। इस कारण वे सकपका गये और उनके चेहरे का रग उड गया। शास्त्रीय प्रमाण तो कोई थे नहीं, अब उस सीधे प्रश्न का सीधा उत्तर क्या दे? उनकी साध्वियाँ साधुओ के लिये आहार लाती हैं, परोसती हैं, बिछोना करती हैं तो यह सब

बिना सही उत्तर के शास्त्रविरुद्ध ठहरता है, अत उनकी घबराहट स्वाभाविक थी। कुछ देर मौन रहने के बाद उन्होने उत्तर मे कहा—"शास्त्र मे कठेई निषेध चाल्यो कोयनी। ई वास्ते साध्वी रो लायो हुओ आहार पाणी साधु ने कल्पे है।"

ऐसे गोलमाल उत्तर को भला आपश्री कैसे मान लेते ? आपश्री ने फरमाया—साधु को साध्वी से आहार मगवाकर खाने का शास्त्र मे कही विधान नही है। अब आप कहते हैं कि निषेध न होने के कारण ऐसा करना कल्पता है तो आपका यह कहना भी शास्त्र विरुद्ध है। शास्त्र मे यह स्पष्ट निर्देश किया गया है कि "जे निग्गथा य निग्गथिओ य सभोइया सिया, णो ण कप्पइ अन्नमन्नस्स अतिए वेयावडिय करित्तए। अत्थि वा इणह केइ वैयावच्च कप्पइ ण तण्ह वैयावच्च कारावित्तम्ए। णा तिथ वा इणह केई वेयावच्च करेत्तए, एव णा कप्पइ अन्नमन्मेण वेयावच्च करावित्तए" (व्यवहार सूत्र उ० ५) अर्थात् एक गच्छ के साधु साध्वियो को परस्पर मे वैयावृत्य करना नही कल्पता है। एक मात्र साधु ही साधु की और साध्वी ही साध्वी की वैयाकृत्य करे। कदाचित् कोई सकट का समय आ गया हो और साधु के पास दूसरा साधु न हो अथवा साध्वी के पास दूसरी साध्वी न हो तो ऐसे सकट काल मे परस्पर वैयावृत्य करा सकते हैं। इस शास्त्रीय विवेचन के बाद आपश्री ने उस भरी सभा मे प्रभावपूर्ण शब्दो मे कहा—हट्टे-कट्टे साधुओ के मौजूद रहते हुए भी शास्त्र विरुद्ध साध्वियो का लाया हुआ आहार-पानी आदि भोगना साधु के लिये उचित नही है क्योकि वर्तमान काल के साधु-साध्वियों ने वीतराग दशा प्राप्त नहीं की है अत पारस्परिक अधिक ससर्ग रहने से कम से कम मानसिक विकृति का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इस कारण इस परिपाटी को ब्रह्मचर्य तोडने वाली परिपाटी कह सकते हैं।

जब आपश्री यह विवेचन करा रहे थे तो शायद-विषयान्तर करने के लिये पूज्य कालूरामजी ने बीच मे ही प्रश्न कर दिया—सभोग कितने प्रकार के होते है ? आपश्री ने तत्काल उत्तर दिया और सबधित गाथा बोलते हुए बारह प्रकार के सभोग बताए। आपश्री ने यह भी कहा कि साधु-साध्वी इनमे से पहले छ प्रकार का ही व्यवहार कर सकते हैं जबकि वैयावृत्य नवें प्रकार का सभोग है। इस पर पूज्यजी बोले—वैयावृत्य करने का अर्थ क्या हाथ पैर दबाना ही है, आहार मगाना, परोसना आदि नही है ? तब आपश्री ने वैयावृत्य शब्द का शास्त्रीय अर्थ विन्यास करते हुए स्पष्ट किया—आपके ग्रथ भ्रम विध्वशन मे भी लिखा है कि आहार आदि लाना भी वैयावृत्य है और यह शास्त्र विरुद्ध है। जब पूज्य कालूरामजी चुप हो गये तो आपश्री ने शास्त्रीय प्रमाणों सहित वैयावृत्य के कई कारणो का उल्लेख किया और यह सिद्ध किया कि निष्कारण ऐसा परिपाटी के रूप मे किया जाना एकदम शास्त्र विरुद्ध आचरण है। इस तरह आपश्री के प्रबल प्रमाणो को जोश भरी वाणी मे सुनकर पूज्यजी गुमसुम हो गये। उनका मुंह नीचा हो गया। अपने पूज्य का ऐसा खुला अपमान होते देख अधे भक्तो ने हो-हल्ला मचा दिया तब आपश्री एव अन्य सत शाति पूर्वक वहा से लौट आये। इस घटना की सारे थली प्रदेश मे ऐसी उत्साह भरी प्रतिक्रिया रही कि कई तेरहपंथी भाइयो के मन,

भीतर ही भीतर विद्रोह कर उठे। आपश्री की कीर्ति एक प्रभावशाली शास्त्रज्ञ एव विवेचक के रूप मे छा गई।

माउडिया मे अहिंसक लहर :

चुरू से आपश्री का विहार भी राजस्थान की तरफ हुआ। मार्ग मे थली के छापर, पडिहारा, रतनगढ, राजलदेसर आदि कई ग्राम नगरो मे आपश्री के प्रभावपूर्ण प्रवचन हुए तथा वहा के निवासियो ने तेरहपथ मत की भ्रात-धारणाओ का निराकरण करके जैन धर्म के सिद्धातो का वास्तविक स्वरूप समझा। चुरू चातुर्मास की सफलता से सतुष्ट होकर आचार्यश्री ने आपश्री को व्यावर मे चातुर्मास करने की स्वीकृति प्रदान की। व्यावर मे आपश्री की निखरती हुई प्रतिभा के प्रभाव से भारी धर्मोपकार हुआ। आचार्यश्री तो बाद मे बीकानेर होते हुए दिल्ली पधार गये किन्तु आपश्री का विहार राजस्थान मे ही होता रहा। वि स १९८९ का चातुर्मास फलौदी मे करने हेतु जब आप पधार रहे थे, मार्ग मे एक ऐसा गाव आया जहा एक माता के मन्दिर मे अध श्रद्धा वश कई मूक पशुओ की वलि दी जा रही थी। आपश्री ने तत्काल वलि करने वालो को ऐसा हृदय द्रावक उपदेश दिया और गौ माता को सव प्राणियो की माता वताई कि सव अध श्रद्धालु वलि कार्य से विरत हो गये। तिवरी ग्राम मे भी आपश्री के उपदेश मे अग्रवालो, ओसवालो, माहेश्वरियो तथा ब्राह्मणो मे जो सघर्ष चल रहा था वह मिट गया और सव मे मेल हो गया। फलौदी के चातुर्मास मे आपश्री की सरल एव हृदयस्पर्शी वाणी का श्रोताओ पर गहरा प्रभाव पडा। अनेको ने आत्मशुद्धि के लिये व्रतप्रत्याख्यान लेने के साथ-साथ समाज मे स्वस्थ वातावरण वनाने के लिये कुरूढियो का आजीवन त्याग भी किया। चातुर्मास समाप्ति के वाद विहार मार्ग मे आपश्री को किसी ने वताया कि पास के माउडिया गाव देवी के स्थान पर सामूहिक रूप मे ५०० और व्यक्तिगत रूप मे करीव १५०० पशु, धर्म के नाम पर मौत के घाट उतारे जाते हैं। आपश्री तव माउडिया पधारे और आपने वडी ही तलस्पर्शी रीति से देवी के भक्तो के सामने अहिंसा की विस्तृत व्याख्या की। यह आपश्री का अद्भुत प्रभाव ही था कि क्रूरता से पत्थर वने उन भक्तो के दिल भी पिघल गये। फलौदी और माउड़िया के अहिंसा प्रेमियो ने भी अपना योग दिया। परिणाम स्वरूप ग्राम के समस्त निवासियो ने स्वेच्छा पूर्वक इस हिंसा को वन्द कर देने का निर्णय लिया। इससे तत्काल ही दो हजार जीवों को अभयदान मिलने के साथ-साथ हिंसा का एक कलक हमेशा क लिये धुल गया।

गणेश नाम सार्थक वना :

आपश्री ग्रामानुग्राम विहार करते हुए साधु सम्मेलन के निमित्त आचार्यश्री के साथ अजमेर पधारे। वहा जिन पाच सतो को पहले इस सप्रदाय के प्रतिनिधियो के रूप में चुना था, उनमे आपश्री भी एक थे। साधु सम्मेलन मे एकीकरण की दृष्टि से पाच मुनियो की समिति ने जो योजना तैयार की थी उसमे भी आपश्री को एकीकृत साधु समाज के युवाचार्य पद पर नियत करने का उल्लेख था।

चतुर्विध सघ मे पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा की सम्प्रदाय अपनी सयम साधना और विद्वता के कारण सम्माननीय मानी जाती है लेकिन पूज्य आचार्य श्री श्रीलालजी म सा के समय मे कुछ एक कारणो से सम्प्रदाय के दो विभाग हो गये थे और पृथक् होने वाले सन्तो ने मुनिश्री मुन्नालालजी म सा को अपना आचार्य वना लिया था। इन दोनो विभागो का एकीकरण करने के लिये समय–समय पर किये गये प्रयत्न सफल नहीं हुए।

लेकिन दोनो विभागो का एकीकरण करने के लिये प्रयत्न करने वाले हतोत्साह न होकर अपने प्रयत्नो मे लगे रहे। चतुर्विध सघ इस सम्प्रदाय मे अनैक्य देखने के लिये उत्सुक नही था और चाहता था कि श्रमण–सस्कृति की सुरक्षा के लिये तत्पर पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा की सम्प्रदाय पुन एक हो जावे।

वृहत्साधु–सम्मेलन के अवसर पर ही श्री हेमचन्द भाई रामजीभाई मेहता की अध्यक्षता मे श्री अ भा श्वे स्थानकवासी जैन कान्फरेन्स का नौवा अधिवेशन भी अजमेर मे हो रहा था। अत इन आयोजनो के कारण चतुर्विध सघ के प्रमुख-प्रमुख सन्त-मुनिराजो, गण मान्य श्रावको के अतिरिक्त आवाल वृद्ध भाईबहिन एकत्रित हुए थे। इन सभी की भावना थी कि इस अवसर का लाभ उठाकर पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा की सम्प्रदाय का एकीकरण कराने के लिये प्रयत्न किये जावे।

चतुर्विध सघ की भावना को देखकर एकता के लिये प्रयत्न करने वालो के द्वारा साधु-सम्मेलन मे एकता का प्रश्न प्रस्तुत किया गया पहले किये गये प्रयत्नो की समीक्षा करने के प्रसग मे प्रश्न उठा कि यह कैसे सम्भव हो, तो विचार-विमर्श करके निर्णय किया गया कि पहले रतलाम मे आचार्य श्री जवाहरलाजी म सा. एव पूज्य श्री मुन्नालालजी म सा के बीच हुए वार्तालाप व निश्चय का विहगावलोकन करने के लिये यहा पधारे हुए सन्तो मे से पच मुकर्रर कर दिये जावें और उनके निर्णय को दोनो पक्ष स्वीकार करे।

इसी भूमिका पर एकीकरण के लिये प्रयास किये गये और निर्णय के लिये निम्नलिखित मुनिराज पच नियुक्त हुए —

१ कविवर्य श्री नानचन्दजी म सा, २ मुनिश्री मणिलालजी म सा, ३ शतावधानी मुनिश्री रत्नचन्दजी म सा, ४ आचार्य श्री अमोलकऋषिजी म सा, ५ पजाब केशरी युवाचार्य श्री काशीरामजी म सा पंच मुनिवरो ने एकता के सम्बन्ध मे अभी तक किये गये प्रयत्नो आदि के बारे मे मत्रणा और विचारणा करने के पश्चात् स १९९० वैशाख कृष्णा ८, दि १७-४-३३, सोमवार को अपना निर्णय दिया। निर्णय इस प्रकार है—

आज रोज दोनो पक्ष के भविष्य का फैसला पच निम्न प्रकार से देते हैं—

१–मुनि श्री गणेशलालजी म को युवाचार्य पद पर नियत करें।
२–मुनिश्री खूबचन्दजी म. को उपाध्याय पद पर नियत करें।

३. अब से नये शिष्य हो, वे युवाचार्य की नेश्राय में रहे ।
४ भविष्य के धाराधोरण दोनो पूज्य मिलकर वार्धे ।
५. पूज्य श्री हुक्मोचन्दजो म की सम्प्रदाय के चौमासे ठहराने को और दोषशुद्धि करने की सत्ता दोनो पूज्यो को हयातो तक दोनो पूज्यो की रहेगो और एक आचार्य रहने पर एक आचार्य की होगी ।
६ फैसला मिलने के साथ हो परस्पर वारह सभोग खुले करें ।
द अमोलकऋषि, द. मुनि रत्नचन्द, द. मुनि मणिलाल, द. मुनि नानचन्द्र, द. मुनि काशीराम

उक्त निर्णय को स्वोकृत करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. ने फरमाया कि —फैसला मजूर है । अमलदरामद धाराधोरण वनाकर किया जायेगा ।

पूज्य श्री मुन्नालालजी म सा ने फरमाया कि—"फैसला मजूर है ।"

इस निर्णय को वृहत्साधु—सम्मेलन मे उपस्थित सन्त-मुनिराजो, श्रावको आदि सभी ने अनुमोदना की और हृदय उल्लास से भर गये । वहुत दिनो से जो प्रश्न समग्र सघ के लिये चिन्ता का कारण वना हुआ था, उसका समाधान होने से सभी ने साधु-सम्मेलन की आशिक सफलता मानो और सराहना की ।

समस्त स्थानकवासी समाज के इतिहास मे यह एक गोरवशालो कार्य हुआ था और उससे चरितनायक की महानता हो सिद्ध हातो है कि पूज्य श्री हुक्मोचन्दजो म. सा. को सम्प्रदाय की दो धाराओ ने आपको अपना केन्द्र विन्दु मानकर एकोकरण कर लिया ।

एकता विषयक निर्णय हो चुका था आर उसके कार्यान्वयन के वारे में सम्मेलन के अवसर पर दोनो पूज्यो के वोच विचार-विमर्श भी हुआ । किन्तु उसमे कुछ गत्यवरोध पैदा हो जाने से उपस्थित जन को वास्तविक स्थिति को जानकारो देने के लिये दि. २४-४-३३ को प्रातः ८ वजे निम्नलिखित १७ सज्जनो का एक शिष्टमण्डल ममैयो के नोहरे मे विराजित मुनिराजो की सेवा मे उपस्थित हुआ —

शिष्टमण्डल ने विराजित मुनिराजो को सेवा मे एकता सवधी पचफैसले के अमलदरामद करने के लिये प्रार्थना की । पचफैसले के वाद जो कुछ भी विचार-विमर्श हुआ और किन कारणो को लेकर गत्यवरोध पैदा हो गया आदि सभी के वारे विवेचन होने के वाद आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. एव पूज्य श्री मुन्नालालजी म. सा. ने निम्नलिखित निश्चय किये ।

१—आज से परस्पर वारह सम्भोग, जहा—जहा दोनो सम्प्रदाय के मुनि हो, वहा-वहा खुले किये जाते हैं । दोनों पूज्य अभी हो इस संवधी संदेश अपने मुनियो को भेज देंगे ।

२—धाराधोरण वनाने के लिये निम्नानुसार व्यवस्था की जाती है—पूज्य श्री

मुन्नालालजी म, मुनिश्री हजारीमलजी म., मुनिश्री छगनलालजीम., और पूज्यश्री जवाहरलालजी म, मुनिश्री गणेशलालजो म. तथा मुनिश्री हरखचन्दजी म, इस तरह छह मुनिराज एकत्रित होकर भविष्य के लिये धाराधोरण बनावें। यदि इसमें कुछ मतभेद हो तो छहो मुनिवर मिलकर एक सरपंच पसन्द कर लें। यदि सरपच के चुनाव में एक मत न हो तो श्री वर्धमानजी पीतलिया तथा सौभाग्यमलजी मेहता, ये दोनो के साथ मिलकर रहे तो इन दोनो गृहस्थो ने सीलबन्द लिफाफा श्री प्रेसीडेण्ट सा को दिया है। उसमे लिखे हुए नाम वाला पच दोनो गृहस्थो के सरपच के रूप मे जो निर्णय दे, वह अन्तिम निर्णय माना जायेगा।

३–मुनिश्री गणेशलालजो म को युवाचाय पद तथा मुनिश्री खूबचन्दजी म. को उपाध्यायपद स १९९० की फाल्गुन शुक्ला १५ से पहले ही देना निश्चित किया जाता है।

४–फाल्गुन शुक्ला १५ के बाद जो नये शिष्य हो वे युवाचार्य जी की नेश्राय मे रहे।

इस प्रकार पारस्परिक मतभेद के कारणो का समाधान हो जाने से पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा का विभक्त सम्प्रदाय सयुक्त हो गई और भविष्य के लिये धाराधोरण बनाने का कार्य यथावसर किये जाने की आशा थी। अजमेर से आपश्री का विहार उस नगर की ओर हुआ। जिसकी धूल से आप खेलकर बडे हुए थे। उदयपुर श्री सघ ने भावभरी विनती की थी। आचार्य के साथ आपका भी वही पधारना हुआ। उदयपुर वासियो ने अपने गणेश की विकसित विद्वत्ता, वक्तृत्व शक्ति एव प्रतिभा को देखा-परखा तो उन्हे पूर्वाचार्य का कथन याद आ गया कि वास्तव मे सिंचित होकर कल्पवृक्ष फूल फल गया है।

उदयपुर का चातुर्मास काल समाप्त करके निम्बाहेडा होते हुए आचार्यश्री एव आपश्री आदि सभी सत जावद पधारे जहा आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया जाना था। आपश्री को युवाचार्य पद देने का निर्णय तो पहले ही लिया जा चुका था, उसका महोत्सव जावद में आयोजित करने का श्रावको के आग्रह होने पर निर्णय से जावद के धर्म इतिहास मे एक गौरवशाली पृष्ठ और जुड गया।

इधर आचार्य श्री मुन्नालालजो म सा का स्वर्गवास हो चुका था। नियमानुसार दूसरे पक्ष के भी आचार्य, आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. हो जाते हैं। किन्तु सामने वाला पक्ष इसके लिए निर्णय लेने के बाद भी तैयार नही हुआ। परिणाम स्वरूप बनी बनाई एकता पुनः विघटित होगई।

आचार्य प्रवर ने निर्णयानुसार आपश्री को युवाचार्य पद देने की तैयार करली।

फाल्गुन शुक्ला तृतीया स. १९९० के दिन जावद के श्री सघ में उत्साह समा नहीं रहा था। उस समय ३० मुनिराजों एव ३५ महासतियो के सिवाय दूर-दूर के श्रावक-श्राविकाए भी बड़ी सख्या मे जावद मे उपस्थित थी। चादर प्रदान करने का आयोजन एक विशाल मैदान मे रखा गया था जो खचाखच भरा हुआ था। जनता ने जय ध्वनि के साथ अपने वर्तमान तथा भावी आचार्य का स्वागत किया। आचार्यश्री ने सूक्तियो एव दृष्टांतों के माध्यम से आचार्य के सदगुणो पर प्रकाश डाला और आपश्री को बीकानेरी मिश्री के कूजे की तरह

वनने की सीख दी। आचार्यश्री एव पच मुनियो द्वारा आपश्री को युवाचार्य पद की चादर ओढाने के लिये उपस्थित प्रमुख श्रावको सर्वश्री सेठ अमृतलाल भाई जवेरी बम्बई, मोतीलालजी मूथा सतारा, वहादुरमलजी वाठिया भीनासर, ताराचदजा गेलडा मद्रास, अभयराजजी जोधपुर, नन्दलालजी उदयपुर, हीरालालजी नादेचा खाचरोद, लाला कपूरचदजी जौहरी दिल्ली, सेठ लक्ष्मणदासजी जलगाव, वसतीलालजी नाहर रामपुरा, पन्नालालजी चौधरी नीमच एव अन्य श्रावक श्राविकाओ ने भी अपना समर्थन जताया तथा शुभ कामनाए व्यक्त की।

चतुर्विध सघ का अनुमोदन हो जाने पर आपश्री आचार्यश्री के समक्ष खडे हुए। आचार्यश्री ने नन्दी सूत्र का पाठ किया और अपनी चादर उतार कर युवाचार्य श्री को ओढा दी। चादर ओढाते समय दूसरे सतो ने भी चादर के पल्ले पकड कर अपने सहयोग का प्रदर्शन किया।

तव उपाचार्य श्री ने निम्नाकित रूप मे फरमाया—"मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हू कि वह मुझे ऐसी शक्ति प्रदान करे जो समग्र ससार का कल्याण करने वाली हो। मुझे आज जो महान दायित्व सौपा गया है, उसका सम्यक् प्रकार से निर्वहन मै ऐसी ही शक्ति के सहारे कर सकता हू। मैं सदैव यह भावना रखता हू कि आचार्यश्री की सभी आज्ञाओ का पालन करते हुए मैं सतो की सेवा करता रहू। मैं सघ सचालन का भार उठाने मे उतना समर्थ नही हू अत आचार्यश्री से भी मुझे इस काम मे यथोचित शक्ति प्रदान करने की नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हू।"

"पूज्यश्री के साथ ही सतो ने हाथ लगाकर मुझे जो चादर प्रदान की है, वह चादर ततुओ से वनी हुई है। सस्कृत मे ततु का दूसरा नाम गुण है अर्थात् यह चादर गुणमयी है। मैं आशा करता हू कि इस गुणमयी चादर को धारण करने के साथ ही मुझे गुणो की भी प्राप्ति होगी, जिससे मैं इस पवित्र चादर के गौरव की रक्षा करने मे समर्थ वन सकू। यद्यपि यह गुणमयी चादर मेरी रक्षा करने मे समर्थ है किन्तु इसके गौरव की रक्षा भी अत्यन्त आवश्यक है। मुझे यह चादर आचार्य श्री ने सव सन्तो सहित प्रदान की है। और चतुर्विध सघ ने इसका अनुमोदन किया है इस कारण मुझे विश्वास है कि चतुर्विध सघ भी इसकी रक्षा करता रहेगा। वस्तुत. चतुर्विध सघ अपने ऐक्यवल से इसकी रक्षा करता रहेगा, तभी इस चादर का गौरव भी सुरक्षित रहेगा और तभी यह सघ की उन्नति करने मे भी समर्थ होगी। मैं शासन नायक और गुरु महाराज से यही भिक्षा मागता हू कि इस चादर के गौरव की रक्षा करने की मुझे शक्ति प्राप्त हो।

अन्त मे विभिन्न मुनिराजजी एव महासतियाजी ने अपने-अपने हृदयोद्गार व्यक्त किये। जावद श्री सघ ने इस शुभ समारोह के लिये आचार्य जी की स्वीकृति के लिये कृतज्ञता ज्ञापन किया।

पतितोद्धार के साथ युवाचार्य पद का प्रथम चातुर्मास :

यद्यपि आपश्री का रत्नपुरी के नाम मे विख्यात रतलाम नगर मे पहले भी चातुर्मास

हो चुका था, युवाचार्य पद प्राप्ति के साथ पहला चातुर्मास वि. स १९९१ में भी रतलाम मे ही हुआ। वैसे भी इस सम्प्रदाय के बडे-बडे महोत्सवो का गौरव इस नगर को प्राप्त होता रहा है, उस दृष्टि से भी आपश्री ने रतलाम नगर को जो सर्वप्रथम गौरव प्रदान किया वह समीचीन ही था।

रतलाम का यह चातुर्मास धर्म जागरण की दृष्टि मे बडा ही महत्त्वपूर्ण रहा। आपश्री की मधुमयी वाणी का रसास्वादन करने के लिये दूर-दूर के क्षेत्रो मे भी प्रतिदिन सैकडो आबाल वृद्धजनो का आगमन होता रहता था क्योंकि वह वाणी आत्ममंथन से उद्भूत वाणी थी जो आध्यात्मिक लौकिक एव पारलौकिक प्रश्नो का सुन्दर समाधान सुझाकर श्रोताओ मे नई चेतना अनुप्राणित करने लगी। आपके सदुपदेशो से प्रभावित होकर अनेक श्रद्धालुओ ने आत्म शुद्धि हेतु कठिन तपस्याए की एव सयम भावना को प्रबल बनाने के लिये कई प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये। सामाजिक सुधार के भी समाज ने कई कदम आपश्री की प्रेरणा से उठाए। इन सुधारो मे मुख्य थे कि जहा कन्या या वर का विक्रय हुआ हो उस विवाह मे सम्मिलित न होना और न भोजन करना, मृत्यु भोज मे कतई सम्मिलित न होना तथा करने वालो को निरुत्साहित करना आदि।

इस चातुर्मास मे विशिष्ट कार्य यह हुआ कि आपश्री के सतत सदुपदेशो मे दलित जातियो के उत्थान और नैतिक विकास के लिये एक अभियान छेडने जैसा वातावरण बन गया। बहुत से अछूत समझे जाने वाले भाई-बहिन भी आपके प्रवचन सुनने के लिये नियमित रूप से आते थे। आपश्री उनको जीवन का वास्तविक उद्देश्य समझा कर व्यसन रहित शुद्ध मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते तो अपने का उच्च वर्गीय समझने वाले लोगो को भी अछूतो को गले लगाने का उपदेश देते। आप फरमाते कि मानवता का व्यवहार करना ही उच्चता है। तथा वैसा व्यवहार न करना ही नीचता है। अत व्यवहार की तुला पर ऊच नीच को तोला जाना चाहिये न कि आज के कृत्रिम भेदभाव के अनुसार। जो अपने व्यवहार को नहीं देखता और अपने साथी मानवो को ही नीच समझता है वैसे व्यक्ति को अपने भीतर रही हुई नीचता को ही खोजकर दूर करनी चाहिये। आपकी सदाशयी वाणी का ऐसा अनूठा प्रभाव पडा था कि उच्च वर्ग और अछूत वर्ग दोनो एक दूसरे के दोष देखने के बजाय अपनी ही भूलो और कमियो को सुधारने की ओर अभिमुख हो जाते थे। इस सबध मे दोनो वर्गों में से कई लोगो ने समुचित प्रतिज्ञाए भी ग्रहण की।

चातुर्मास की समाप्ति के पश्चात् आपश्री की विदाई का दृश्य बडा ही भावपूर्ण था। रतलाम मे बडी सख्या मे श्रद्धालुजन मीलो तक आपश्री के साथ पाद-विहार करते रहे। आपश्री ने मेवाड की ओर से विहार किया। आचार्यश्री जी भी उधर से मालवा की ओर पधार रहे थे। जावरा मे देवास श्री संघ ने आपश्री का चातुर्मास अपने वहा कराने की हार्दिक भावना व्यक्त की। अत मालवा एव मेवाड के विभिन्न क्षेत्रो मे धर्मोपकार की रचनात्मक प्रेरणा प्रदान करते हुए आपश्री चातुर्मासार्थ देवास पधारे।

देवास मे आपश्री के प्रवचनो का लाभ लेने के लिये जैनेतर समाजो के लोग, सामन्त एव राज्याधिकारी भी बराबर आया करते थे । सामन्तो एव राज्याधिकारियो मे से कइयों ने मद्य-मास सेवन, अभक्ष्य–भक्षण एव कुव्यसनो के त्याग किये । तपस्याओ मे भी नया कीर्तिमान स्थापित हुआ । मालवा के एक क्षेत्र रतलाम मे आचार्य श्री को दिव्यवाणी गूंज रही थी तो दूसरे भाग देवास मे युवाचार्य श्री अपनी प्रभावशाली वाणी से विकासोन्मुख हृदयो मे नई प्रेरणाएं जगा रहे थे । इस प्रकार समस्त मालवा पतित पावनीवाणी अमृत से आप्लावित हो रहा था । इसका अधिकतम लाभ दलित एव अछूत कहलाने वाले लोगो को मिल रहा था क्योकि दोनो महापुरुषो का एक ही ध्येय था कि मानव मानव के बीच मे कृत्रिम भेदभाव की दीवारे न रहे एवं प्रत्येक मानव अपने साथी मानव के साथ समानता एव सहृदयता का सहज व्यवहार करे ।

अधिकार घोषणा :

जावद मे आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर देने के बाद भी सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का अधिकाश भार अब तक आचार्यश्री ही सभाल रहे थे । अपने रतलाम चातुर्मास मे उनके मन मे विचार उपजा कि अगर मैं अपनी मोजूदगी मे ही सम्प्रदाय की व्यवस्था का भार युवाचार्य श्री को सौंप दू तो उसके अनेक लाभ होगे । प्रथम तो मैं इस दायित्व से निश्चित होकर आत्म–साधना मे अधिक एकाग्र हो सकूगा तो दूसरे युवाचार्य जी को पहले ही व्यवस्था सचालन का इतना अच्छा अनुभव हो जायेगा कि आगे चलकर उनको बहुत सुविधा रहेगी । आचार्य श्री ने अपने इस विचार की आश्विन कृष्णा ११ के खुले व्याख्यान मे घोषणा करदी । उस समय आचार्यश्री ने फरमाया—मैं जब सुदूर दक्षिण मे था तब इधर विराजते हुए भी आचार्यश्री श्री लालजी म. सा ने न जाने मेरे हृदय को कैसे जाना कि उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौप देने का निर्णय ले लिया । मैं सुदूर दक्षिण मे था और वे उदयपुर मे थे । यह पूज्यश्री जी के मेरे ऊपर अमित विश्वास की बात थी । उसी अनुभव ने अब मुझे भी प्रेरित किया है कि मैं मेरे सामने उपलब्ध अवसर का उचित प्रयोग कर लू । तदनुसार सम्प्रदाय का कार्य भार जैसे दड-प्रायश्चित देना, चातुर्मास निश्चित करना और ऐसे ही अन्य कार्यो को सम्भालना आदि मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंपता हू ।

युवाचार्यश्री को इस प्रकार जो अधिकार दिये गये उन्हे एक पत्र मे लेखबद्ध किया गया । (अधिकार पत्र का विवरण परिशिष्ट स २ मे देखिये) इस अधिकार पत्र द्वारा सम्प्रदाय की व्यवस्था सबंधी सभी कार्य युवाचार्य श्री द्वारा सम्पन्न कराने की घोषणा की गई और चतुर्विध सघ को भी कहा गया कि वह भी सदा की भाति युवाचार्य श्री की आज्ञाओ का पूरी निष्ठा के साथ पालन करे ।

आचार्यश्री के उपर्युक्त अधिकार पत्र को लेकर रतलाम श्री सघ के प्रमुख श्रावक देवास युवाचार्य श्री की सेवा मे पहुचे । उस अधिकार पत्र को पढकर आपकी मुखाकृति पर विनम्र गभीरता झलक उठी और देखने वालो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि आपश्री इस नये

दायित्व के लिये अपना शक्ति सतुलन साध रहे हो। क्योकि आपश्री की आस्था स्पष्ट थी और 'गुरोराज्ञा वलीयसी' मे अटल विश्वास था। अत आपश्री ने आचार्यश्री की आज्ञा को शिरोधार्य की। इसमे आए हुए रतलाम के श्रावक तथा देवास का श्री सघ परम उल्लसित हुआ।

देवास चातुर्मास के पूर्ण होने पर युवाचार्य श्री आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने के लिये रतलाम पधारे, जहा आचार्यश्री के कान मे पीडा हो जाने से उपचार चल रहा था। उपचार मे पीडा के शात हो जाने के वाद युवाचार्य १४ सतो के साथ निम्बाहेडा, भीलवाडा होते हुए व्यावर पधारे।

उन्ही दिनो पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने मारवाड मे विचरण करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा से मिलने की इच्छा जताई। तदनुसार अजमेर के निकट जेठाना गाव मे दोनो आचार्यो का मिलन एव वार्तालाप हुआ जिसमे आपश्री भी सम्मिलित थे। वहा से आपश्री ने अपनी जन्म स्थली मेवाड की पुण्य धरा की ओर विहार किया।

निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही वनने का सिहनाद :

आपश्री का वि स १९९३ का चातुर्मास तव उदयपुर मे हुआ। जव आपश्री ने चातुर्मास हेतु नगर मे पदार्पण किया तो विशाल जनमेदिनी द्वारा अपने सुयोग्य नगर पूत का स्वागत, एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रहा था। लोग अनुभव कर रहे थे कि आज यह त्यागी सपूत अपनी चरण रज से नगर को पावन क्या वना रहा है सभी नगर निवासी अपने हृदय मे विशुद्ध भावनाओ का सचार अनुभव कर रहे थे। आपश्री के ज्ञान चरित्र की भव्यता एव प्रवचन प्रतिभा की ख्याति पहले ही सव ओर फैल चुकी थी, अत अपनी जन्मस्थली मे आपश्री की धर्म देशना का लाभ उठाने के लिये श्रोतागण विशेष रूप से अधिक सख्या मे उपस्थित होने लगे। आपश्री जनता को सरल भाषा मे सरलचित से गूढ सिद्धान्तो का सरल विवेचन किया करते थे। इस कारण आपके व्याख्यानो मे सभी वर्गो की जनता पूरा रस लेती थी, किन्तु तात्विक चर्चाओ मे आपश्री के विचार जव प्रकट होते, वे प्रवुद्धजनो के लिये भी मननीय एव चिन्तनीय वन जाते। इस प्रकार चातुर्मास काल आशातीत सफलता के साथ सपन्न हुआ। उदयपुर वासियो ने भारी मन से आपश्री को विदाई दी।

तदनन्तर आपश्री मेवाड एव मारवाड के विशाल क्षेत्रो मे व्यापक रूप से धर्म प्रचार का डका वजाते हुए वीकानेर पधारे। समय-समय पर वीकानेर श्री सघ आपश्री के समक्ष चातुर्मास करने की विनती रखता रहा था। परिणामत वि स १९९४ का चातुर्मास वीकानेर मे सपन्न हुआ। आपश्री का आचार्यश्री के साथ वीकानेर मे पहले भी चातुर्मास हो चुका था किन्तु वीकानेर वासियो को इस चातुर्मास मे आपश्री की विद्वत्ता, महत्ता, तेजस्विता एव प्राभाविकता का नया ही परिचय प्राप्त हुआ।

देवास मे आपश्री के प्रवचनो का लाभ लेने के लिये जैनेतर समाजो के लोग, सामन्त एव राज्याधिकारी भी बरावर आया करते थे। सामन्तो एव राज्याधिकारियो मे से कइयो ने मद्य-मास सेवन, अभक्ष्य—भक्षण एव कुव्यसनो के त्याग किये। तपस्याओ मे भी नया कीर्तिमान स्थापित हुआ। मालवा के एक क्षेत्र रतलाम मे आचार्य श्री को दिव्यवाणी गूंज रही थी तो दूसरे भाग देवास मे युवाचार्य श्री अपनी प्रभावशाली वाणी से विकासोन्मुख हृदयो मे नई प्रेरणाएं जगा रहे थे। इस प्रकार समस्त मालवा पतित पावनीवाणी अमृत से आप्लावित हो रहा था। इसका अधिकतम लाभ दलित एव अछूत कहलाने वाले लोगो को मिल रहा था क्योकि दोनो महापुरुषो का एक ही ध्येय था कि मानव मानव के बीच मे कृत्रिम भेदभाव की दीवारें न रहे एव प्रत्येक मानव अपने साथी मानव के साथ समानता एव सहृदयता का सहज व्यवहार करे।

अधिकार घोषणा :

जावद मे आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर देने के बाद भी सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का अधिकाश भार अब तक आचार्यश्री ही सभाल रहे थे। अपने रतलाम चातुर्मास मे उनके मन मे विचार उपजा कि अगर मैं अपनी मौजूदगी मे ही सम्प्रदाय की व्यवस्था का भार युवाचार्य श्री को सौंप दूं तो उसके अनेक लाभ होगे। प्रथम तो मैं इस दायित्व से निश्चित होकर आत्म-साधना मे अधिक एकाग्र हो सकूगा तो दूसरे युवाचार्य जी को पहले ही व्यवस्था सचालन का इतना अच्छा अनुभव हो जायेगा कि आगे चलकर उनको बहुत सुविधा रहेगी। आचार्य श्री ने अपने इस विचार की आश्विन कृष्णा ११ के खुले व्याख्यान मे घोषणा करदी। उस समय आचार्यश्री ने फरमाया—मैं जब सुदूर दक्षिण मे था तब इधर विराजते हुए भी आचार्यश्री श्री लालजी म सा ने न जाने मेरे हृदय को कैसे जाना कि उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौप देने का निर्णय ले लिया। मैं सुदूर दक्षिण मे था और वे उदयपुर मे थे। यह पूज्यश्री जी के मेरे ऊपर अमित विश्वास की बात थी। उसी अनुभव ने अब मुझे भी प्रेरित किया है कि मैं मेरे सामने उपलब्ध अवसर का उचित प्रयोग कर लू। तदनुसार सम्प्रदाय का कार्य भार जैसे दड-प्रायश्चित देना, चातुर्मास निश्चित करना और ऐसे ही अन्य कार्यों को सम्भालना आदि मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंपता हू।

युवाचार्यश्री को इस प्रकार जो अधिकार दिये गये उन्हे एक पत्र मे लेखबद्ध किया गया। (अधिकार पत्र का विवरण परिशिष्ट स. २ मे देखिये) इस अधिकार पत्र द्वारा सम्प्रदाय की व्यवस्था सबधी सभी कार्य युवाचार्य श्री द्वारा सम्पन्न कराने की घोषणा की गई और चतुर्विध सघ को भी कहा गया कि वह भी सदा की भाति युवाचार्य श्री की आज्ञाओ का पूर्ण निष्ठा के साथ पालन करे।

आचार्यश्री के उपयुक्त अधिकार पत्र को लेकर रतलाम श्री सघ के प्रमुख श्रावक देवास युवाचार्य श्री की सेवा मे पहुचे। उस अधिकार पत्र को पढ़कर आपकी मुखाकृति पर विनम्र गंभीरता झलक उठी और देखने वालो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि आपश्री इस नये

दायित्व के लिये अपना शक्ति सतुलन साध रहे हो। क्योकि आपश्री की आस्था स्पष्ट थी और 'गुरोराज्ञा वलीयसी' मे अटल विश्वास था। अत आपश्री ने आचार्यश्री की आज्ञा को शिरोधार्य की। इसमे आए हुए रतलाम के श्रावक तथा देवास का श्री सघ परम उल्लसित हुआ।

देवास चातुर्मास के पूर्ण होने पर युवाचार्य श्री आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने के लिये रतलाम पधारे, जहा आचार्यश्री के कान मे पीडा हो जाने से उपचार चल रहा था। उपचार से पीडा के शात हो जाने के बाद युवाचार्य १४ सतो के साथ निम्बाहेडा, भीलवाडा होते हुए ब्यावर पधारे।

उन्ही दिनो पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने मारवाड मे विचरण करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा से मिलने की इच्छा जताई। तदनुसार अजमेर के निकट जेठाना गाव मे दोनो आचार्यो का मिलन एव वार्तालाप हुआ जिसमे आपश्री भी सम्मिलित थे। वहा से आपश्री ने अपनी जन्म स्थली मेवाड की पुण्य धरा की ओर विहार किया।

निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही बनने का सिहनाद .

आपश्री का वि स १९९३ का चातुर्मास तब उदयपुर मे हुआ। जब आपश्री ने चातुर्मास हेतु नगर मे पदार्पण किया तो विशाल जनमेदिनी द्वारा अपने सुयोग्य नगर पूत का स्वागत, एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रहा था। लोग अनुभव कर रहे थे कि आज यह त्यागी सपूत अपनी चरण रज से नगर को पावन क्या बना रहा है सभी नगर निवासी अपने हृदय मे विशुद्ध भावनाओं का सचार अनुभव कर रहे थे। आपश्री के ज्ञान चरित्र की भव्यता एव प्रवचन प्रतिभा की ख्याति पहले ही सब ओर फैल चुकी थी, अत अपनी जन्मस्थली मे आपश्री की धर्म देशना का लाभ उठाने के लिये श्रोतागण विशेष रूप से अधिक सख्या मे उपस्थित होने लगे। आपश्री जनता को सरल भाषा मे सरलचित से गूढ सिद्धान्तो का सरल विवेचन किया करते थे। इस कारण आपके व्याख्यानो मे सभी वर्गो की जनता पूरा रस लेती थी, किन्तु तात्विक चर्चाओ मे आपश्री के विचार जब प्रकट होते, वे प्रबुद्धजनो के लिये भी मननीय एव चिन्तनीय बन जाते। इस प्रकार चातुर्मास काल आशातीत सफलता के साथ सपन्न हुआ। उदयपुर वासियो ने भारी मन से आपश्री को विदाई दी।

तदनन्तर आपश्री मेवाड एव मारवाड के विशाल क्षेत्रो मे व्यापक रूप से धर्म प्रचार का डका बजाते हुए बीकानेर पधारे। समय-समय पर बीकानेर श्री सघ आपश्री के समक्ष चातुर्मास करने की विनती रखता रहा था। परिणामत. वि स. १९९४ का चातुर्मास बीकानेर मे सपन्न हुआ। आपश्री का आचार्यश्री के साथ बीकानेर मे पहले भी चातुर्मास हो चुका था किन्तु बीकानेर वासियो को इस चातुर्मास मे आपश्री की विद्वत्ता, महत्ता, तेजस्विता एव प्राभाविकता का नया ही परिचय प्राप्त हुआ।

देवास मे आपश्री के प्रवचनो का लाभ लेने के लिये जैनेतर समाजो के लोग, सामन्त एव राज्याधिकारी भी बराबर आया करते थे । सामन्तो एव राज्याधिकारियो मे से कइयो ने मद्य-मास सेवन, अभक्ष्य-भक्षण एव कुव्यसनो के त्याग किये । तपस्याओ मे भी नया कीर्तिमान स्थापित हुआ । मालवा के एक क्षेत्र रतलाम मे आचार्य श्री को दिव्यवाणी गूज रही थी तो दूसरे भाग देवास मे युवाचार्य श्री अपनी प्रभावशाली वाणी से विकासोन्मुख हृदयो मे नई प्रेरणाएं जगा रहे थे । इस प्रकार समस्त मालवा पतित पावनीवाणी अमृत से आप्लावित हो रहा था । इसका अधिकतम लाभ दलित एव अछूत कहलाने वाले लोगो को मिल रहा था क्योकि दोनो महापुरुषो का एक ही ध्येय था कि मानव मानव के बीच मे कृत्रिम भेदभाव की दीवारे न रहे एव प्रत्येक मानव अपने साथी मानव के साथ समानता एव सहृदयता का सहज व्यवहार करे ।

अधिकार घोषणा :

जावद मे आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर देने के बाद भी सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का अधिकाश भार अब तक आचार्यश्री ही सभाल रहे थे । अपने रतलाम चातुर्मास मे उनके मन मे विचार उपजा कि अगर मैं अपनी मौजूदगी मे ही सम्प्रदाय की व्यवस्था का भार युवाचार्य श्री को सौंप दू तो उसके अनेक लाभ होगे । प्रथम तो मैं इस दायित्व से निश्चित होकर आत्म-साधना मे अधिक एकाग्र हो सकूंगा तो दूसरे युवाचार्य जी को पहले ही व्यवस्था सचालन का इतना अच्छा अनुभव हो जायेगा कि आगे चलकर उनको बहुत सुविधा रहेगी । आचार्य श्री ने अपने इस विचार की आश्विन कृष्णा ११ कि खुले व्याख्यान मे घोपणा करदी । उस समय आचार्यश्री ने फरमाया—मैं जब सुदूर दक्षिण मे था तब इधर विराजते हुए भी आचार्यश्री श्री लालजी म सा. ने न जाने मेरे हृदय को कैसे जाना कि उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौप देने का निर्णय ले लिया । मैं सुदूर दक्षिण मे था और वे उदयपुर मे थे । यह पूज्यश्री जी के मेरे ऊपर अमित विश्वास की बात थी । उसी अनुभव ने अब मुझे भी प्रेरित किया है कि मैं मेरे सामने उपलब्ध अवसर का उचित प्रयोग कर लू । तदनुसार सम्प्रदाय का कार्य भार जैसे दड-प्रायश्चित देना, चातुर्मास निश्चित करना और ऐसे ही अन्य कार्यों को सम्भालना आदि मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंपता हू ।

युवाचार्यश्री को इस प्रकार जो अधिकार दिये गये उन्हे एक पत्र मे लेखबद्ध किया गया । (अधिकार पत्र का विवरण परिशिष्ट स. २ मे देखिये) इस अधिकार पत्र द्वारा सम्प्रदाय की व्यवस्था सबधी सभी कार्य युवाचार्य श्री द्वारा सम्पन्न कराने की घोपणा की गई और चतुर्विध सघ को भी कहा गया कि वह भी सदा की भाति युवाचार्य श्री की आज्ञाओ का पूरी निष्ठा के साथ पालन करे ।

आचार्यश्री के उपर्युक्त अधिकार पत्र को लेकर रतलाम श्री सघ के प्रमुख श्रावक देवास युवाचार्य श्री की सेवा मे पहुचे । उस अधिकार पत्र को पढ़कर आपकी मुखाकृति पर विनम्र गभीरता झलक उठी और देखने वालो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि आपश्री इस नये

दायित्व के लिये अपना शक्ति संतुलन साध रहे हो। क्योकि आपश्री की आस्था स्पष्ट थी और 'गुरोराज्ञा वलीयसी' मे अटल विश्वास था। अत आपश्री ने आचार्यश्री की आज्ञा को शिरोधार्य की। इससे आए हुए रतलाम के श्रावक तथा देवास का श्री सघ परम उल्लसित हुआ।

देवास चातुर्मास के पूर्ण होने पर युवाचार्य श्री आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने के लिये रतलाम पधारे, जहा आचार्यश्री के कान मे पीडा हो जाने से उपचार चल रहा था। उपचार से पीडा के शात हो जाने के बाद युवाचार्य १४ सतो के साथ निम्बाहेडा, भीलवाडा होते हुए ब्यावर पधारे।

उन्ही दिनो पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने मारवाड मे विचरण करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा से मिलने की इच्छा जताई। तदनुसार अजमेर के निकट जेठाना गाव मे दोनो आचार्यों का मिलन एव वार्तालाप हुआ जिसमे आपश्री भी सम्मिलित थे। वहा से आपश्री ने अपनी जन्म स्थली मेवाड की पुण्य धरा की ओर विहार किया।

निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही बनने का सिंहनाद .

आपश्री का वि स १९९३ का चातुर्मास तब उदयपुर मे हुआ। जब आपश्री ने चातुर्मास हेतु नगर मे पदार्पण किया तो विशाल जनमेदिनी द्वारा अपने सुयोग्य नगर पूत का स्वागत, एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रहा था। लोग अनुभव कर रहे थे कि आज यह त्यागी सपूत अपनी चरण रज से नगर को पावन क्या बना रहा है सभी नगर निवासी अपने हृदय मे विशुद्ध भावनाओ का सचार अनुभव कर रहे थे। आपश्री के ज्ञान चरित्र की भव्यता एव प्रवचन प्रतिभा की ख्याति पहले ही सब ओर फैल चुकी थी, अत अपनी जन्मस्थली मे आपश्री की धर्म देशना का लाभ उठाने के लिये श्रोतागण विशेष रूप से अधिक सख्या मे उपस्थित होने लगे। आपश्री जनता की सरल भाषा मे सरलचित से गूढ सिद्धान्तो का सरल विवेचन किया करते थे। इस कारण आपके व्याख्यानो मे सभी वर्गो की जनता पूरा रस लेती थी, किन्तु तात्विक चर्चाओ मे आपश्री के विचार जब प्रकट होते, वे प्रबुद्धजनो के लिये भी मननीय एव चिन्तनीय बन जाते। इस प्रकार चातुर्मास काल आशातीत सफलता के साथ सपन्न हुआ। उदयपुर वासियो ने भारी मन से आपश्री को विदाई दी।

तदनन्तर आपश्री मेवाड एव मारवाड के विशाल क्षेत्रो मे व्यापक रूप से धर्म प्रचार का डका बजाते हुए बीकानेर पधारे। समय-समय पर बीकानेर श्री सघ आपश्री के समक्ष चातुर्मास करने की विनती रखता रहा था। परिणामत वि स. १९९४ का चातुर्मास बीकानेर मे संपन्न हुआ। आपश्री का आचार्यश्री के साथ बीकानेर मे पहले भी चातुर्मास हो चुका था किन्तु बीकानेर वासियो को इस चातुर्मास मे आपश्री की विद्वत्ता, महत्ता, तेजस्विता एव प्राभाविकता का नया ही परिचय प्राप्त हुआ।

देवास मे आपश्री के प्रवचनो का लाभ लेने के लिये जैनेतर समाजो के लोग, सामन्त एव राज्याधिकारी भी बराबर आया करते थे । सामन्तो एव राज्याधिकारियो मे से कइयो ने मद्य-मास सेवन, अभक्ष्य–भक्षण एव कुव्यसनो के त्याग किये । तपस्याओ मे भी नया कीर्तिमान स्थापित हुआ । मालवा के एक क्षेत्र रतलाम मे आचार्य श्री को दिव्यवाणी गूंज रही थी तो दूसरे भाग देवास मे युवाचार्य श्री अपनी प्रभावशाली वाणी से विकासोन्मुख हृदयो मे नई प्रेरणाएं जगा रहे थे । इस प्रकार समस्त मालवा पतित पावनीवाणी अमृत से आप्लावित हो रहा था । इसका अधिकतम लाभ दलित एव अछूत कहलाने वाले लोगो को मिल रहा था क्योकि दोनो महापुरुषो का एक ही ध्येय था कि मानव मानव के बीच मे कृत्रिम भेदभाव की दीवारे न रहे एव प्रत्येक मानव अपने साथी मानव के साथ समानता एव सहृदयता का सहज व्यवहार करे ।

अधिकार घोषणा :

जावद मे आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर देने के बाद भी सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का अधिकाश भार अब तक आचार्यश्री ही सभाल रहे थे । अपने रतलाम चातुर्मास मे उनके मन मे विचार उपजा कि अगर मैं अपनी मौजूदगी मे ही सम्प्रदाय की व्यवस्था का भार युवाचार्य श्री को सौप दूं तो उसके अनेक लाभ होगे । प्रथम तो मैं इस दायित्व से निश्चित होकर आत्म–साधना मे अधिक एकाग्र हो सकूंगा तो दूसरे युवाचार्य जी को पहले ही व्यवस्था सचालन का इतना अच्छा अनुभव हो जायेगा कि आगे चलकर उनको बहुत सुविधा रहेगी । आचार्य श्री ने अपने इस विचार की आश्विन कृष्णा ११ कि खुले व्याख्यान मे घोषणा करदी । उस समय आचार्यश्री ने फरमाया—मैं जब सुदूर दक्षिण मे था तब इधर विराजते हुए भी आचार्यश्री श्री लालजी म सा. ने न जाने मेरे हृदय को कैसे जाना कि उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौप देने का निर्णय ले लिया । मैं सुदूर दक्षिण मे था और वे उदयपुर मे थे । यह पूज्यश्री जी के मेरे ऊपर अमित विश्वास की बात थी । उसी अनुभव ने अब मुझे भी प्रेरित किया है कि मैं मेरे सामने उपलब्ध अवसर का उचित प्रयोग कर लू । तदनुसार सम्प्रदाय का कार्य भार जैसे दड-प्रायश्चित देना, चातुर्मास निश्चित करना और ऐसे ही अन्य कार्यों को सम्भालना आदि मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंपता हू ।

युवाचार्यश्री को इस प्रकार जो अधिकार दिये गये उन्हे एक पत्र मे लेखबद्ध किया गया । (अधिकार पत्र का विवरण परिशिष्ट स २ मे देखिये) इस अधिकार पत्र द्वारा सम्प्रदाय की व्यवस्था सबधी सभी कार्य युवाचार्य श्री द्वारा सम्पन्न कराने की घोषणा की गई और चतुर्विध सघ को भी कहा गया कि वह भी सदा की भाति युवाचार्य श्री की आज्ञाओ का पूरी निष्ठा के साथ पालन करे ।

आचार्यश्री के उपर्युक्त अधिकार पत्र को लेकर रतलाम श्री सघ के प्रमुख श्रावक देवास युवाचार्य श्री की सेवा मे पहुचे । उस अधिकार पत्र को पढकर आपकी मुखाकृति पर विनम्र गंभीरता झलक उठी और देखने वालो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि आपश्री इस नये

दायित्व के लिये अपना शक्ति सतुलन साध रहे हो । क्योकि आपश्री की आस्था स्पष्ट थी और 'गुरोराज्ञा बलीयसी' मे अटल विश्वास था । अत आपश्री ने आचार्यश्री की आज्ञा को शिरोधार्य की । इससे आए हुए रतलाम के श्रावक तथा देवास का श्री सघ परम उल्लसित हुआ ।

देवास चातुर्मास के पूर्ण होने पर युवाचार्य श्री आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने के लिये रतलाम पधारे, जहा आचार्यश्री के कान मे पीडा हो जाने से उपचार चल रहा था । उपचार मे पीडा के शात हो जाने के बाद युवाचार्य १४ सतो के साथ निम्बाहेडा, भीलवाडा होते हुए ब्यावर पधारे ।

उन्ही दिनो पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने मारवाड मे विचरण करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा से मिलने की इच्छा जताई । तदनुसार अजमेर के निकट जेठाना गाव मे दोनो आचार्यो का मिलन एव वार्तालाप हुआ जिसमे आपश्री भी सम्मिलित थे । वहां से आपश्री ने अपनी जन्म स्थली मेवाड की पुण्य धरा की ओर विहार किया ।

निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही बनने का सिहनाद :

आपश्री का वि स १९९३ का चातुर्मास तब उदयपुर मे हुआ । जब आपश्री ने चातुर्मास हेतु नगर मे पदार्पण किया तो विशाल जनमेदिनी द्वारा अपने सुयोग्य नगर पूत का स्वागत, एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रहा था । लोग अनुभव कर रहे थे कि आज यह त्यागी सपूत अपनी चरण रज से नगर को पावन क्या बना रहा है सभी नगर निवासी अपने हृदय मे विशुद्ध भावनाओ का सचार अनुभव कर रहे थे । आपश्री के ज्ञान चरित्र की भव्यता एव प्रवचन प्रतिभा की ख्याति पहले ही सब ओर फैल चुकी थी, अत अपनी जन्मस्थली मे आपश्री की धर्म देशना का लाभ उठाने के लिये श्रोतागण विशेष रूप से अधिक सख्या मे उपस्थित होने लगे । आपश्री जनता को सरल भाषा मे सरलचित से गूढ सिद्धान्तो का सरल विवेचन किया करते थे । इस कारण आपके व्याख्यानो में सभी वर्गो की जनता पूरा रस लेती थी, किन्तु तात्विक चर्चाओ मे आपश्री के विचार जब प्रकट होते, वे प्रबुद्धजनो के लिये भी मननीय एव चिन्तनीय बन जाते । इस प्रकार चातुर्मास काल आशातीत सफलता के साथ सपन्न हुआ । उदयपुर वासियो ने भारी मन से आपश्री को विदाई दी ।

तदनन्तर आपश्री मेवाड एव मारवाड के विशाल क्षेत्रो में व्यापक रूप से धर्म प्रचार का डका बजाते हुए बीकानेर पधारे । समय-समय पर बीकानेर श्री सघ आपश्री के समक्ष चातुर्मास करने की विनती करता रहा था । परिणामत वि स १९९४ का चातुर्मास बीकानेर में सपन्न हुआ । आपश्री का आचार्यश्री के साथ बीकानेर मे पहले भी चातुर्मास हो चुका था किन्तु बीकानेर वासियो को इस चातुर्मास मे आपश्री की विद्वत्ता, महत्ता, तेजस्विता एव प्राभाविकता का नया ही परिचय प्राप्त हुआ ।

देवास मे आपश्री के प्रवचनो का लाभ लेने के लिये जैनेतर समाजो के लोग, सामन्त एव राज्याधिकारी भी बराबर आया करते थे। सामन्तो एव राज्याधिकारियो मे से कइयो ने मद्य-मास सेवन, अभक्ष्य–भक्षण एव कुव्यसनो के त्याग किये। तपस्याओ मे भी नया कीर्तिमान स्थापित हुआ। मालवा के एक क्षेत्र रतलाम मे आचार्य श्री को दिव्यवाणी गूज रही थी तो दूसरे भाग देवास मे युवाचार्य श्री अपनी प्रभावशाली वाणी से विकासोन्मुख हृदयो मे नई प्रेरणाए जगा रहे थे। इस प्रकार समस्त मालवा पतित पावनीवाणी अमृत से आप्लावित हो रहा था। इसका अधिकतम लाभ दलित एव अछूत कहलाने वाले लोगो को मिल रहा था क्योकि दोनो महापुरुषो का एक ही ध्येय था कि मानव मानव के बीच मे कृत्रिम भेदभाव की दीवारे न रहे एवं प्रत्येक मानव अपने साथी मानव के साथ समानता एव सहृदयता का सहज व्यवहार करे।

अधिकार घोषणा :

जावद मे आपश्री को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर देने के बाद भी सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का अधिकाश भार अब तक आचार्यश्री ही सभाल रहे थे। अपने रतलाम चातुर्मास मे उनके मन मे विचार उपजा कि अगर मैं अपनी मौजूदगी मे ही सम्प्रदाय की व्यवस्था का भार युवाचार्य श्री को सौंप दू तो उसके अनेक लाभ होगे। प्रथम तो मैं इस दायित्व से निश्चित होकर आत्म–साधना मे अधिक एकाग्र हो सकूगा तो दूसरे युवाचार्य जी को पहले ही व्यवस्था सचालन का इतना अच्छा अनुभव हो जायेगा कि आगे चलकर उनको बहुत सुविधा रहेगी। आचार्य श्री ने अपने इस विचार की आश्विन कृष्णा ११ के खुले व्याख्यान मे घोषणा करदी। उस समय आचार्यश्री ने फरमाया—मैं जब सुदूर दक्षिण मे था तब इधर विराजते हुए भी आचार्यश्री श्री लालजी म सा ने न जाने मेरे हृदय को कैसे जाना कि उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौप देने का निर्णय ले लिया। मैं सुदूर दक्षिण मे था और वे उदयपुर मे थे। यह पूज्यश्री जी के मेरे ऊपर अमित विश्वास की बात थी। उसी अनुभव ने अब मुझे भी प्रेरित किया है कि मैं मेरे सामने उपलब्ध अवसर का उचित प्रयोग कर लू। तदनुसार सम्प्रदाय का कार्य भार जैसे दड-प्रायश्चित देना, चातुर्मास निश्चित करना और ऐसे ही अन्य कार्यों को सम्भालना आदि मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंपता हू।

युवाचार्यश्री को इस प्रकार जो अधिकार दिये गये उन्हे एक पत्र मे लेखबद्ध किया गया। (अधिकार पत्र का विवरण परिशिष्ट स. २ मे देखिये) इस अधिकार पत्र द्वारा सम्प्रदाय की व्यवस्था सबधी सभी कार्य युवाचार्य श्री द्वारा सम्पन्न कराने की घोषणा की गई और चतुर्विध सघ को भी कहा गया कि वह भी सदा की भाति युवाचार्य श्री की आज्ञाओ का पूरी निष्ठा के साथ पालन करे।

आचार्यश्री के उपर्युक्त अधिकार पत्र को लेकर रतलाम श्री सघ के प्रमुख श्रावक देवास युवाचार्य श्री की सेवा मे पहुचे। उस अधिकार पत्र को पढ़कर आपकी मुखाकृति पर विनम्र गभीरता झलक उठी और देखने वालो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि आपश्री इस नये

दायित्व के लिये अपना शक्ति सतुलन साध रहे हो। क्योकि आपश्री की आस्था स्पष्ट थी और 'गुरोराज्ञा बलीयसी' मे अटल विश्वास था। अत आपश्री ने आचार्यश्री की आज्ञा को शिरोधार्य की। इससे आए हुए रतलाम के श्रावक तथा देवास का श्री सघ परम उल्लसित हुआ।

देवास चातुर्मास के पूर्ण होने पर युवाचार्य श्री आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित होने के लिये रतलाम पधारे, जहा आचार्यश्री के कान मे पीडा हो जाने से उपचार चल रहा था। उपचार से पीडा के शात हो जाने के बाद युवाचार्य १४ सतो के साथ निम्बाहेडा, भीलवाडा होते हुए ब्यावर पधारे।

उन्ही दिनो पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने मारवाड मे विचरण करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा से मिलने की इच्छा जताई। तदनुसार अजमेर के निकट जेठाना गाव मे दोनो आचार्यो का मिलन एव वार्तालाप हुआ जिसमे आपश्री भी सम्मिलित थे। वहां से आपश्री ने अपनी जन्म स्थली मेवाड की पुण्य धरा की ओर विहार किया।

निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो को अपरिग्रही बनने का सिहनाद :

आपश्री का वि स १९९३ का चातुर्मास तब उदयपुर मे हुआ। जब आपश्री ने चातुर्मास हेतु नगर मे पदार्पण किया तो विशाल जनमेदिनी द्वारा अपने सुयोग्य नगर पूत का स्वागत, एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रहा था। लोग अनुभव कर रहे थे कि आज यह त्यागी सपूत अपनी चरण रज से नगर को पावन क्या बना रहा है सभी नगर निवासी अपने हृदय मे विशुद्ध भावनाओ का सचार अनुभव कर रहे थे। आपश्री के ज्ञान चरित्र की भव्यता एवं प्रवचन प्रतिभा की ख्याति पहले ही सब ओर फैल चुकी थी, अत अपनी जन्मस्थली मे आपश्री की धर्म देशना का लाभ उठाने के लिये श्रोतागण विशेष रूप से अधिक सख्या मे उपस्थित होने लगे। आपश्री जनता को सरल भाषा मे सरलचित से गूढ सिद्धान्तो का सरल विवेचन किया करते थे। इस कारण आपके व्याख्यानो मे सभी वर्गो की जनता पूरा रस लेती थी, किन्तु तात्विक चर्चाओ मे आपश्री के विचार जब प्रकट होते, वे प्रबुद्धजनो के लिये भी मननीय एव चिन्तनीय बन जाते। इस प्रकार चातुर्मास काल आशातीत सफलता के साथ सपन्न हुआ। उदयपुर वासियो ने भारी मन से आपश्री को विदाई दी।

तदनन्तर आपश्री मेवाड एवं मारवाड के विशाल क्षेत्रो मे व्यापक रूप से धर्म प्रचार का डका बजाते हुए बीकानेर पधारे। समय-समय पर बीकानेर श्री सघ आपश्री के समक्ष चातुर्मास करने की विनती रखता रहा था। परिणामत वि स १९९४ का चातुर्मास बीकानेर मे सपन्न हुआ। आपश्री का आचार्यश्री के साथ बीकानेर मे पहले भी चातुर्मास हो चुका था किन्तु बीकानेर वासियो को इस चातुर्मास मे आपश्री की विद्वत्ता, महत्ता, तेजस्विता एव प्रामाणिकता का नया ही परिचय प्राप्त हुआ।

उदयपुर और वीकानेर के चातुर्मास से आपश्री की प्रवचन धारा ने युगानुकूल नया मोड लिया । आपश्री ने उस समय प्रवाहित होने वाली शोषक-शोषण के विरोध की युगधारा को भलीभाति हृदयगम की थी और सम्भवत आपने अनुभव किया था कि अपने भक्तों को और मुख्य रूप से व्यापारी-व्यवसायी भक्तो की अधिकाधिक सम्पत्ति अर्जन एव सचय करने की लालसा को अर्थात् परिग्रह के प्रति वढ रही ममता को कम करने की वलवती प्रेरणा दी जानी चाहिए । इसकी पृष्ठभूमि मे आपश्री ने विचार किया कि एक ओर तो श्रावको मे परिग्रह मोह घटकर धर्मभाव वढेगा तो दूसरी ओर आर्थिक विषमता की खाई अधिक चौडी न होने से सामाजिक कटुता मे वढोतरी नही होगी । इस दूरदर्शी भावना के साथ आपश्री ने परिग्रह धारियो को अपरिग्रही वनने का सिहनाद शुरू कर दिया । आपश्री की प्रेरणा देने की शैली भी वडी प्रभावपूर्ण थी । आप जानते थे कि अधिकाश जैनियो के पूर्वज क्षत्रिय थे अत आपश्री ने क्षत्रियोचित तेज को जगाने का पहले प्रयास किया । आपश्री फरमाया करते थे—वधुओ, आप क्षत्रियो के वशज हो । वीर क्षत्रिय अपने कर्तव्य-पालन मे रत रहकर केवल अपने ही वश का नही अपितु चारो आश्रमो का सरक्षण करते थे । देवाधिदेव तीर्थकरों ने क्षत्रिय वश मे जन्म लिया था और आप उनके अनुयायी हो । इस दृष्टि से दीन दुखियो की रक्षा के लिये अपना सर्वस्व भी त्याग कर देने मे आप लोगो को कोई हिचक नही होनी चाहिये ।

इसीलिये मैं आप लोगो से कहता हू—ओ, निष्परिग्रही महावीर के अनुयायियो, आप अपरिग्रही वनिये । अपने वनियेपन के ख्यालो को दिल से निकाल फेंकिये । आपकी धमनियो में भी शुद्ध क्षत्रिय रक्त दौड रहा है जो मात्र त्याग को अपना आदर्श मानता था उठो महावीर के गौरव को जगाओ और स्वय भी गौरवशाली वनो ।

वीकानेर क्षेत्र वाह्य वैभव से अधिक समृद्ध है किन्तु आपश्री ने उसके विवेक वैभव को भी जागृत किया । वीकानेर वासियो ने इस रूप मे आपश्री मे श्रमणत्व के तीनो रूपो-श्रमण, समन, और शमन का भव्य दर्शन किया । उन्होने चेष्टा की कि आपश्री के अनुरूप अपने जीवन मे यथोचित परिवर्तन लाया जाय ।

चातुर्मास वडे ही उत्साह एव धार्मिक आचार विचारो की प्रभावना से पूर्ण हुआ और सतजन विहारोत्सुक वने । आपश्री ने तव थली प्रदेश के ग्रामो मे विचरण किया यह देखने के लिये कि सरल हृदय मानवो मे दयादान रूपी धर्म के प्रति श्रद्धारूप जो वीज पहले वोए गये थे वे कितने विस्तार से फूले फले हैं ? इस विहारचर्या मे आपश्री को श्रद्धा के अगणित फूल भी मिले तो पहले की तरह भ्रमित जनो ने शूल भी विछाए । किन्तु आपश्री की निडरता, शातिप्रियता, धीरता एव तत्वनिरूपण की स्पष्ट शैली मे कोई अन्तर नही आया । आपके प्रवचनो से थली प्रदेश की जनता अधिकाधिक प्रभावित होती गई एव सत्य को समझने की ओर अधिकाधिक सचेष्ट वनती गई । इस प्रकार विविध परिषहो को सहते हुए, विरोध का परिहार और भ्रम विध्वसन करते हुए आपश्री ने वि स १९६५ का चातुर्मास करने हेतु जयपुर नगर मे पदार्पण किया ।

जौहरियो के नगर मे यह माना जाना चाहिये कि पारखीवृत्ति का विकसित स्वरूप दिखाई देता है, पारख अच्छी हो तो निर्णय अच्छा होता है और निणय अच्छा हो तो उन्नति अच्छी होती है । हमारे चरित्र नायक भी एक सत रत्न थे, जिन्हे जयपुर के जौहरियो ने अच्छी तरह परखा, सराहा और परम श्रद्धा से सिर नवाया । परन्तु आपश्री एक पारखी भी थे, जिन्होने भी जयपुर के जौहरियो को परखा और उन्हे काच के रत्नो की ममता से दूर हटकर सद्गुण रत्नो को धारण करने की प्रेरणा दी । नगर के प्रबुद्धजन एव सामान्यजन दोनो आपश्री की उपदेशामृत धारा से तृप्त होते थे और शुभ प्रवृत्तियो मे नानाविध निरत बनते थे ।

निष्पृहवृत्ति से आकर्षित आपके पट्टशिष्य :

जयपुर मे रत्नत्रय का प्रकाश फैलाकर आपश्री हाडौती प्रदेश के गावो मे धर्म देशनाओ की ज्योति जलाते हुए कोटा पधारे । वहा पधारने से श्रावक श्राविकाओ मे धर्मोत्साह की एक नई लहर फैल गई ।

जब आपश्री कोटा विराज कर अपनी प्रवचन धारा से भविजनो की आत्माओ को पावन बना रहे थे तभी एक मुमुक्षु युवक आपके समक्ष उपस्थित हुआ । अपने मूल स्वभाव से आपश्री के मन मे शिष्य मोह का अभाव था और इसका सही कारण भी था । आपका विचार था कि जब तक कोई भी दीक्षार्थी समग्र रूप से वैराग्य भाव मे भीज न जाय और साधु-जीवन की कठिन क्रियाओ को आत्मसात् न कर ले तब तक उसको दीक्षित नही किया जाना चाहिये । विराग भाव लेकर जब कोई किन्ही मुनिराज के पास आवे तो पहले उसे सयमी जीवन के कष्टो का उल्लेख करके उसकी परीक्षा ली जानी चाहिये कि उसका विराग भाव सुदृढ है या नही ? फिर उसकी योग्यता का भी आकलन किया जाना चाहिये कि वह साधुधर्म अगीकार करने हेतु सक्षम भी तो है । आये हुए मुमुक्षु युवक के प्रति भी आपश्री की इसी दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि थी ।

समक्ष खडा हुआ वह युवक आपश्री को तेजस्वी भी दिखाई दिया तो अपने व्यवहार मे विनीत भी । उसने नम्रतापूर्वक निवेदन किया—भन्ते, मुझे अपना शिष्य बना लेने की कृपा कीजिये, क्योकि मैं आपश्री के चरणो मे रहकर सयम-साधना करना चाहता हू । वैसे ऐसा निवेदन आपश्री के लिये नया नही था । वैराग्य भाव से आने वाला प्रत्येक दीक्षार्थी यही निवेदन करता था किन्तु शिष्य बनाने के सबध मे आपकी सामान्यतया उदासीनता ही रहती थी, क्योकि शिष्य व्यामोह को आप अपनी निज की साधना मे अवरोधक मानते थे । अतएव जो मुमुक्षु शिष्य बनने की अभिलाषा लिये आपके समीप आता उसे आपश्री अपना नही आचार्य श्री का शिष्य बनाते और स्वय निर्लिप्त बने रहते । तदनुसार आपश्री ने युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने तक किसी को अपना शिष्य नही बनाया था ।

अत उस युवक को पहले तो आपने यही फरमाया—भाई, साधु बनना हसी खेल नही है, यह तलवार की धार पर नगे पैरो से चलने के समान कठिन साधना है । पहले से ही

साधु बनने की बात मत करो वरन् पहले साधुता को समझने का यत्न करो, लगनपूर्वक ज्ञानोपार्जन करो, अंतर्मन मे त्याग और वैराग्य की भावना को सबल बनाओ, काम-क्रोधादि अतरग शत्रुओ के प्रतिरोध करन की शक्ति बढाओ, आत्मिक शुद्धि प्राप्त करने की आकाक्षा को वेग दो, उलझनो और तनावो से उद्विग्न मन को शात रखने का प्रयास करो, चिन्तन के द्वारा विचारो मे मौलिकता प्राप्त करो, सयम-साधना मे आने वाली कठिनाइयो को समझने की कोशिश करो तथा इन सब बातो मे आपको जब यह समझ मे आवे कि आपने सतोषजनक प्रगति करली है, तब साधु बनने का विचार करो । मैं तो यह भी कहता हू कि आप जिसे अपना गुरु बनाना चाहते हो, उसकी भी परीक्षा करो कि वह आपको सत्य विधि मे विकासोन्मुख बना सकेगा या नही । अगर कच्चे मन मे साधु बन जाओगे तो अपने को भी डुबाओगे और साधुता के स्वरूप को भी बिगाडोगे ।

वह युवक आपश्री के मुख से ऐसा निस्पृह उत्तर सुनकर चकित रह गया । वह सोचने लगा कि अब तक दीक्षार्थी बनकर कई सतो के पास पहुचा था, जिन्होने उसे दीक्षा जल्दी लेने को उकसान के लिये कई प्रलोभन भी दिये थे किन्तु एक ये सत मिले हैं जो दीक्षा की जल्दी करने के बजाय मुझे दीक्षा से पीछे धकेल रहे है । इस तथ्य से उस युवक की आपश्री के प्रति आस्था बहुत अधिक बढ गई । यही नही आपश्री की प्रेरणा से उसके भीतरी मन के पर्दे उठे और वह इस चिन्तन मे प्रवृत्त हुआ कि वस्तुत साधु बनने मे पहले साधुता की सकल पृष्ठभूमि को हृदयगम कर लेना अति आवश्यक है । इससे उस युवक के हृदय मे नया प्रकाश फैला, उसे सस्कारो का नया जीवन मिला तो उसकी आतरिक ज्योति एक नये सकल्प से चमकने लगी । आपश्री की शिष्य-निस्पृहता न उस युवक की दीक्षा लेने की ललक को एक ओर अधिक बल दिया तो दूसरी ओर आप ही के प्रति उसका आकर्षण एकनिष्ठ बन गया । उस भावभरी मनोदशा मे उस युवक ने फिर निवेदन किया—गुरुदेव, सभी साधु बनने वालो के सामने अगर आप ऐसी ही कठोर शर्ते रखोगे तो कोई भी आपश्री का शिष्य कैसे बन सकेगा ? इस प्रकार क्या आत्म कल्याण के साधक की शुद्धि का मार्ग अवरुद्ध नही होता ? आप द्वारा फरमाई गई बातो का कोई भी मुमुक्षु अभ्यास ही करता रहेगा तो उसे दीक्षा के लिये कितनी लबी प्रतीक्षा करनी होगी ? क्या ऐसी प्रतीक्षा उसके सयमोत्साह को ही शिथिल नही बना देगी ? ऐसी स्थिति मे श्रद्धा और सकल्प को भी साकार रूप कैसे दिया जा सकेगा ?

युवक के ऐसे तार्किक प्रश्नो को सुनकर आपश्री उसकी तरफ विशेष रूप से आकृष्ट हुए । फिर उन प्रश्नो के उत्तर रूप मे फरमाने लगे—भाई, कोई मेरा शिष्य नही बनेगा तो इससे मेरी क्या हानि हो जायेगी अथवा मेरे आत्म कल्याण मे कौन सी बाधा आ जायेगी ? चेलो की जमात खडी करने मे मेरा विश्वास नही है । जैन धर्म वीरो का धर्म है और इसमे आत्म साधना के पथ पर वही वीर बहादुर चल सकता है जो वास्तविक वैराग्य भावना से अभिभूत हो, तपाराधना की आग मे अपनी आत्मा को तपा देने के लिये परम लालायित हो और जिसका ज्ञान अगाध बनने को, जिसकी श्रद्धा अडिग हो जाने को एव जिसका चारित्र परम सहिष्णुता धारण कर लेने को उत्सुक हो । मुझे ऐसे वीर बहादुरो की जरूरत है । भावावेश

मे दीक्षा ले लेना तो सरल है लेकिन उसे शान से निभाना और अंत तक दिपाना बडा कठिन है। इसी कारण मैं आपसे फिर कहता हू कि पहले शात चित्त होकर सोचो कि ली जाने वाली प्रतिज्ञा को कैसी वीरता से निभा पाओगे ? अपने आत्मबल को जाचे बिना जोश मे आकर ली गई प्रतिज्ञा के लिये बाद मे पछताना पडता है। युवक, मुझे साधु सख्या नही, सच्ची साधुता चाहिये। पारस्परिक सहकार मे सयम साधना मे अग्रसर होने की सच्ची भावना के आधार पर ही गुरु शिष्य के मधुर सबध स्थापित हो सकते हैं। यदि मूल उद्देश्य की ही पूर्ति नही हो तो वहा सबध निरर्थक ही नही, हानिकारक भी सिद्ध होता है। मैं समझता हू कि आपको अपने प्रश्नो के उत्तर मिल गये होगे और मेरी यह भावना आपको अपने लिये हितकारी लगी होगी। आपश्री के ये मार्मिक शब्द युवक साधक के चित्त मे गहरे पैठ गये। यद्यपि उस युवक की दीक्षित होने की भावना तात्कालिक भावावेश का परिणाम नही थी अपितु निज जीवन के अनुभवो से अर्जित सुसस्कारो का प्रतिफल थी फिर भी उसने आपश्री के स्पष्ट विचारो से यह अनुभव किया कि यही वह विभूति उसे मिल गई है जिसके निर्देशन मे वह अपनी साधना को श्रेष्ठ और सफल बना सकेगा। इस प्रकार दुविधा मे उलझा हुआ उस युवक का मन शीघ्रता से अपने सही निष्कर्ष पर पहुच गया। विरक्त युवक ने आपश्री के उपदेश को सर्वात्मना स्वीकार किया और उसी दिन से ज्ञान दर्शन चारित्र की साधना मे अधिक तल्लीन हो गया।

युवक की साधना और आपश्री की परीक्षा का क्रम कुछ समय तक चलता रहा। तब आपकी धारणा बनी कि यह युवक खरा सोना है और उसे सयम साधना के पथ पर आगे बढाने के लिये योगदान करना चाहिये।

यह युवक और कोई नही बल्कि पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा की सम्प्रदाय के जाज्वल्यमान वर्तमान अष्टम पट्टधर आचार्य श्री नानालालजी म सा ही थे। उस समय आपश्री ने उस युवक को पहली बार देखने के साथ ही अवश्य यह आभास कर लिया होगा कि उसका भविष्य सुन्दर और समुन्नत बनेगा। सम्भवत इसी कारण आपश्री के हाथो उन्हे कटो कसौटियो पर चढना पडा ताकि सोना खरा बने और अपने साधु धर्म को प्रकाशमान बनावे।

कोटा मे ही युवक श्री नानालालजी आपश्री के साथ हो गये। आपश्री विहार करते हुए पुन मेवाड मे पधारे और वि स १९९६ का आपश्री का चातुर्मास उदयपुर मे अतिशय धर्म प्रभावना के साथ सपन्न हुआ। वैरागी युवक की प्रतिभा और ओज ने उदयपुर श्री सघ इतना प्रभावित हुआ कि वह उनका दीक्षा महोत्सव उदयपुर मे ही आयोजित करने के लिये लालायित हो उठा, किन्तु तत्काल कुछ निश्चय नही हो सका। वैरागी श्री नानालालजी दीक्षा के लिये अपने परिवारजनो की स्वीकृति प्राप्त करने के लिये उदयपुर से दाता गये और स्वीकृति लेकर वापिस आ गये किन्तु सबकी इच्छा उन्होने यह बताई कि दीक्षा कपासन मे हो। वि स. १९९६ की पौष शुक्ला अष्टमी को कपासन में समारोह पूर्वक मुमुक्षु श्री नानालालजी की दीक्षा आपश्री के समीप हुई। कपासन श्री सघ का उस समय अमित उत्साह रहा और मेवाड के सभी ग्राम नगरो से हजारो की सख्या मे श्रावक श्राविका वर्ग दीक्षा महोत्सव मे सम्मिलित हुआ।

वैराग्य भावनाओ से ओतप्रोत ब्रह्मचारी युवक श्री नानालालजी पोखरना केवल मुनिश्री नानालालजी म. सा. ही नही बने अपितु अपने गुरुदेव युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के प्रथम एव पट्टशिष्य भी बन गये, जिन्हे भविष्य ने आपश्री का पट्टधर भी बनाया जो आज अपनी ज्ञान गभीरता, ओजस्विनी वाणी एव चारित्रिक सम्पन्नता से सारे भारत वर्ष मे प्रखर सूर्य के समान प्रकाशमान हो रहे है।

पुनः थली प्रदेश मे :

उदयपुर मे चातुर्मास पूर्ण कर आपश्री विहार करते हुए वाठेडा गाव मे पधारे। यहा स्थानकवासी जैनो के तो सिर्फ पाच ही घर है, शेष अधिकाश दिगम्बर जैनो के हैं। उस समय वहा दिगम्बर आचार्य श्री शातिसागरजी महाराज विराज रहे थे।

वहा आपश्री का बाजार में सार्वजनिक प्रवचन हो रहा था तब श्री शातिसागरजी महाराज भी वहा पधारे। श्रावको ने उनके लिये पाटा लगा दिया और वे उस पर विराज गये। व्याख्यान समाप्त होने पर आपश्री एव उनके बीच स्नेहपूर्ण वातावरण मे वार्तालाप हुआ जो उस समय अपूर्ण रहने से दूसरी बार एक मन्दिर के निश्चित स्थान पर और चला। उस समय सुनने की इच्छा से काफी जनता भी एकत्रित हो गई थी। वार्ता के प्रसग मे परिग्रह की चर्चा आई तो आपश्री ने दिगम्बराचार्यजी से पूछा—आपकी दृष्टि से परिग्रह की परिभाषा क्या होगी? शाब्दिक व्युत्पत्ति के अनुसार "परिगृहीयते इति परिग्रह' परिभाषा होती है अर्थात् आत्मा के अतिरिक्त जो भी ग्रहण किया जाता है वह सब परिग्रह मे आ जाता है, जैसे आत्मा ने कर्म ग्रहण किये अथवा करती रहती है या शरीर को भी ग्रहण कर रखा है और शरीर आहार आदि ग्रहण करता है इसके अलावा मोर पीछी, कमडल भी ग्रहण कर रखा है। इस सबको परिग्रह ही माना जायेगा। उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार सिद्धो के सिवाय कोई भी अपरिग्रही नहीं हो सकता है। परन्तु भगवान् महावीर ने चार तीर्थों की स्थापना करके श्रमण वर्ग को पूर्ण निष्परिग्रही एव श्रावक वर्ग को देश निष्परिग्रही कहा है तो क्या भगवान् के इस कथन को व्यर्थ माने? यदि ऐसा मान ले तो महावीर का शासन कैसे चलेगा? दिगम्बर समाज की व्यवस्था मे वस्त्र नही रखने पर भी कर्म, शरीर, भोजन, कमडलु, मोरपीछी आदि ग्रहण करने वाले मुनि निष्परिग्रही कैसे कहला सकेंगे।

आचार्यश्री शातिसागरजी महाराज ने बडे ही सरलभाव से इस विषय मे उत्तर देते हुए कहा—परिग्रह की परिभाषा मूर्च्छा के रूप मे ली जाती है। कमडलु, मोरपीछी ये सब साधन हैं। इन पर मूर्च्छा नही रखी जाती है तो निष्परिग्रही बन सकते हैं। शास्त्र मे "मुच्छा परिग्गहो वुत्तो" ही परिग्रह की परिभाषा बताई गई है—जिसके अनुसार कर्म शरीर आदि के अतिरिक्त कमडलु, मोरपीछी साधन के रूप मे रखे जाते हैं। उसी प्रकार मर्यादित पात्र, वस्त्र भी सयम की साधना के लिये रखे जाते हैं। इन साधनो मे मूर्च्छा नही रखने वाले निष्परिग्रही, निर्ग्रंथ साधु हैं। और इसी परिभाषा के अनुसार चतुर्विध सघ की व्यवस्था भी

बैठ सकती है। इसी सबंध मे परस्पर वार्तालाप मे यह भी बताया गया कि छठे गुण स्थान से लेकर सिद्धो के पहले-पहले मूर्च्छा रहित शास्त्रोल्लिखित मर्यादित वस्त्र पात्र रखने वाले सभी साधक निष्परिग्रही निर्ग्रंथ श्रमण कहलाते हैं। दिगम्बर समाज द्वारा मान्य जय धवला, महा-धवला नामक ग्रथो मे भी सयती शब्द से साध्वी को लिया है और वह वस्त्र विना नही रह सकती है। अत मर्यादित वस्त्रो के रखने पर भी उसमे साधुत्व स्वीकार किया गया है। इसी प्रकार साधु भिक्षाचारी पर भी चर्चा हुई। इस पर श्वेताम्बर एव दिगम्बर मान्यताओ मे ४७ एव ४६ दोष मानकर एक दोष का भेद है जो आधाकर्मी आहार से सबधित है। आपश्री ने पूछा कि जो आहार विशिष्ट रूप से साधु के लिये तैयार किया जाता है और उसे साधु ग्रहण करते है तो क्या आधाकर्मी दोष नही लगता? श्री शातिसागरजी महाराज ने सरलतापूर्वक स्वीकार किया कि साधु के निमित्त बनाये हुए आहार आदि को लेने से आधाकर्मी दोष लगता है। यह साधु जीवन नही बल्कि स्वादु जीवन है।

आपश्री ने यह भी पूछा—आप आचार्य हैं और आचार्य को अकेले रहना कल्पता है क्या? उन्होने कहा—आचार्य का अकेला रहना उपयुक्त तो नही है लेकिन सभी मुनि काल कर गये हैं, इसलिये मैं अकेला हू। गृहस्थो से सेवा लेने, घास मगवाने, घास की कुटिया बनवाने, पाटे मगवाने या कमडलु मे पानी मगवाने आदि के दिगम्बर साधुओ द्वारा जो कार्य गृहस्थो से करवाये जाते है, क्या वे साधु के योग्य है? इसका भी उनका सरल उत्तर था कि ये कार्य साधु के योग्य नही हैं।

यहा उल्लेखनीय यह है कि आपश्री एव दिगम्बराचार्यजी के बीच मे मतभेद वाली मान्यताओ पर जो वार्तालाप हुआ वह पूर्णतया स्नेह एव सौहार्दपूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुआ। उसमे कही भी लेश मात्र कटुता नही आई। जो बात मानने लायक था वह दिगम्बराचार्यजी ने मानी और व्यर्थ का वितडावाद कही भी खडा नही किया गया। यह आपश्री का एक सम और सुखद अनुभव था। इसके विपरीत वार्तालाप या चर्चा मे तेरह-पथ के पूज्य जी कैसा रवैया अपनाया करते थे—उसका यत्किंचित्त विवरण पूर्व मे किया जा चुका है।

यही से युवाचार्य श्री कपासन पधारे थे जहा वर्तमान आचार्यश्री का दीक्षा महोत्सव सपन्न हुआ था। वहा से आपश्री का विहार मारवाड की तरफ हुआ। अहमदाबाद से आचार्य श्री का पधारना भी मारवाड की ओर हो रहा था। दोनो महापुरुषो का समागम घाणेराव सादडी मे हुआ। वर्षो बाद गुरु शिष्य के मिलन का यह दृश्य अलौकिक था। आचार्यश्री के चरणो मे निज को विनयावनत बनाकर शिष्य आत्म विभोर हो गया तो गुरु भी शिष्य को ऋजुता एव मृदुता निरख कर आत्म गौरव मे पुलकित थे।

सादडी से आपश्री का विहार आचार्यश्री के साथ ही ब्यावर की तरफ हुआ जहा ३६ संत एव ७५ सतिया एकत्रित थे। वहा संप्रदाय व्यवस्था के सबध मे विचार विमर्श हुआ। यहा से सबका पदार्पण अजमेर हुआ। अजमेर मे अधिकतर युवाचार्यश्री ही व्याख्यान फरमाते थे। एक दिन आपश्री ने वृद्ध विवाह आदि सामाजिक रूढिया की हानियो के विषय पर

प्रभावशाली प्रवचन दिया, जिससे प्रभावित होकर ४० वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियो के विवाह मे सम्मिलित न होने की प्रतिज्ञाए की गई ।

वि म १९९७ का आपश्री का चातुर्मास फलौदी के लिये स्वीकृत हुआ । वहा पर धर्म की अच्छी प्रभावना हुई । उधर वगडी चातुर्मास मे आचार्यश्री का स्वास्थ्य बराबर गिरता रहा । अत आचार्यश्री का विहार स्थिरवास की दृष्टि मे भीनासर की तरफ हुआ । गुरु सेवा के परम अभिलाषी आपश्री ने भी फलौदी से भीनासर की ओर विहार कर दिया । मार्ग मे उदयराममर के पास किसी से आपको बकरो की बलि के सबध मे सूचना मिली तो आप स्वय तत्काल वहा पधारे तथा उपदेश देकर बकरो को अभयदान दिलाया । वि स १९९८ के चातुर्मास मे आपश्री ने अपने गुरुदेव की जो अथक सेवा की उसकी मिसाल ढूढना मुश्किल होगा । उस समय आपश्री के घुटनो मे भी दर्द रहने लगा था । आचार्यश्री चाहते थे कि आपश्री अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखे, लेकिन आप तो एकनिष्ठ सेवा सलग्न रहते थे अत इस दुविधा मे मुक्त होने के लिये आपश्री को आगामी चातुर्मास सरदारशहर मे करने की आज्ञा दी गई । आपश्री ने वह आज्ञा शिरोधार्य की ।

थली प्रदेश रेगिस्तानी क्षेत्र है और गर्मी मे तो विहार-चर्या दु सह हो जाती है । लम्बी दूरी तक एक तो साधुओ के योग्य पानी मिलता नही और जहा प्यासे को पानी मिलाने मे एकात पाप होने का भ्रम फैलाया हुआ हो, यह कठिनाई और अधिक भीषण बन जाती है । आपश्री ऐसी शुष्क धरा के शुष्क मानवो के हृदयो को करुणावश आर्द्र बनाने के लिये छ सतों सहित विहार मे आगे बढ रहे थे । तीन सतो के साथ आप श्री डूगरगढ पधारे तब बाकी तीन सत एक आध रोज के अतर से पीछे-पीछे आ रहे थे । ये तीनो सत श्री डूगरगढ से जब तीन कोस पहले आ रहे थे तो उस गाव मे पर्याप्त पानी भी नही मिला । अत शीघ्र श्री डूगरगढ पहुच जाने के विचार मे वे आगे चल दिये । उस समय सूरज बहुत तेजी मे तप रहा था, रेत आग की तरह जल रही थी और लू के गरम-गरम झोंके आ रहे थे । रेगिस्तान मे तो छायादार पेड भी नही होता । श्री डूगरगढ एक कोस भी नही रहा होगा कि तीन सतो मे मे एक वयोवृद्ध सत मुनिश्री मोतीलालजी म सा को कठ सूख जाने से चक्कर आने लगे । तब एक रोजडे के नीचे उन्हे लिटाकर एक सत तो उनकी सेवा मे रहे और दूसरे सत जल लेने के लिये श्री डूगरगढ की ओर चल दिये । वहा ओसवालो का मोहल्ला पूछ कर वे सत मोहल्ले मे जाकर युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के बारे मे पूछने लगे तो किसी ने कुछ नही बताया बल्कि हसीठट्ठा करने लगे । फिर उन्होने एक सत की तबीयत खराब होने की बात कहकर योग्य जल के बारे पूछा तब भी किसी न ध्यान नहीं दिया अचानक आशारामजी भवर मिल गये जिन्होने बताया कि उनकी बगीची से युवाचार्य श्री ने कुछ देर पहले ही विहार किया है । उन्होने उन सत से अपने घर से जल्दी प्रासुक जल लेकर व्याकुल सत के पास पहुचने को कहा । जल लेकर वे मुनि श्री मोतीलाल जी म सा. से कोई फलाग भर ही दूर रहे होगे कि प्यास से व्याकुल सत के प्राण पखेरू उड़ गये । यदि उन तथाकथित जैनियो ने जरा सा भी ध्यान दिया होता तो यह दुर्घटना नही घटती । मानव विरोधी भ्रामक धारणा का यह कुफल था कि

दुर्जनता की दया विरोधी प्रवृत्ति से यह दारुण घटना घटित हुई । युवाचार्यश्री ने जब यह सुना तो उन्हे यह विशेष अनुभव हुआ किन्तु वे तो समरस के साधक थे समभाव से चलते रहे ।

सरदाशहर के भाइयो ने चातुर्मास हेतु नगर मे प्रवेश करने के लिये ज्योतिषियो से शुभ मुहूर्त निकलवाया था किन्तु निस्पृहचित्ती आपश्री ने उसका कोई विचार नही किया और क्षय तिथि के दिन ही नगर प्रवेश करके आपने फरमाया कि मेरे लिये तो गुरु आज्ञा ही सबसे अच्छा मुहूर्त होता है और मैं यहा चातुर्मास करने गुरुदेव की आज्ञा से आया हू । यह चातुर्मास सपूर्ण थली प्रदेश के लिये वरदान सिद्ध हुआ जब कि अनेक व्यक्तियो ने आपश्री की सत्प्रेरणा से धर्म के सत्य-स्वरूप को समझा एव तदनुसार त्याग, प्रत्याख्यान ग्रहण किये । श्री हुकमचन्दजी और श्री सुमेरमलजी की भागवती दीक्षाए आपश्री के सान्निध्य मे यही पर हुई ।

गुरुदेव की अतिम समय मे भावभीनी सेवा :

सरदारशहर का चातुर्मास समाप्त होते ही आपश्री ने त्वरित गति से भीनासर की ओर विहार किया । मार्ग मे जो भी समय मिलता आपश्री सरल हृदयजनो को धर्म का अतरग रहस्य समझाते हुए आगे बढते रहते । जब आपश्री गुरु चरणो मे पहुचे, आपने पूरे मनोयोग से सेवा सुश्रूषा प्रारभ कर दी । आचार्यश्री का स्वास्थ्य उस समय साधारणतया ठीक था अत उन्होने आपश्री को आस पास के क्षेत्रो मे विहार करने की आज्ञा दी । तदनुसार आपश्री निकटस्थ क्षेत्रों मे धर्म प्रचार करने लगे । अचानक ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा को आचार्यश्री को पक्षाघात हो गया । देशनोक मे यह समाचार सुनते ही आपश्री तुरन्त आचार्यश्री की सेवा मे पधार गये ।

अपने व्याधिग्रस्त शरीर की अशक्तता को देखकर आचार्यश्री ने अपने जीवन की आलोचना करने के उपरान्त दिनाक १८-६-१९४२ को चतुर्विध सघ के समक्ष चौरासी लाख जीव योनि से क्षमायाचना की । इसके साथ ही आचार्यश्री ने अपने युवाचार्य श्री के सबध मे फरमाया—लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैंने सम्प्रदाय के शासन का भार युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंप रखा है । उन्होने जिस योग्यता, परिश्रम और लगन के साथ निभाया और निभा रहे हैं । वह आप सबके सामने है । मुझे इस बात का परम सतोष है कि इन्होंने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का सफल अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और कार्य को अच्छी तरह सभाल लिया है । इस बात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्री सघ ने भी इनको श्रद्धापूर्वक अपना मान लिया है इनके प्रति चतुर्विध सघ की भक्ति और सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर अभिवृद्ध होता रहे तथा भव्यप्राणियो का अधिकाधिक कल्याण सधता रहे—यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है ।

आचार्यश्री को पक्षाघात से पूरा आराम हुआ ही नही था कि कमर के बाईं ओर जहरीला फोडा (कार्बंकल) उठ आया, जिससे दुस्सह वेदना हो रही थी । करीब छ माह मे

प्रभावशाली प्रवचन दिया, जिससे प्रभावित होकर ४० वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियो के विवाह मे सम्मिलित न होने की प्रतिज्ञाए की गई ।

वि स. १९९७ का आपश्री का चातुर्मास फलौदी के लिये स्वीकृत हुआ । वहां पर धर्म की अच्छी प्रभावना हुई । उधर वगडी चातुर्मास मे आचार्यश्री का स्वास्थ्य बराबर गिरता रहा । अत आचार्यश्री का विहार स्थिरवास की दृष्टि से भीनासर की तरफ हुआ । गुरु सेवा के परम अभिलाषी आपश्री ने भी फलौदी से भीनासर की ओर विहार कर दिया । मार्ग मे उदयरामसर के पास किसी से आपको बकरो की बलि के सबध मे सूचना मिली तो आप स्वय तत्काल वहा पधारे तथा उपदेश देकर बकरो को अभयदान दिलाया । वि स १९९८ के चातुर्मास मे आपश्री ने अपने गुरुदेव की जो अथक सेवा की उसकी मिसाल ढूढना मुश्किल होगा । उस समय आपश्री के घुटनो मे भी दर्द रहने लगा था । आचार्यश्री चाहते थे कि आपश्री अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखें, लेकिन आप तो एकनिष्ठ सेवा सलग्न रहते थे अत इस दुविधा मे मुक्त होने के लिये आपश्री को आगामी चातुर्मास सरदारशहर मे करने की आज्ञा दी गई । आपश्री ने वह आज्ञा शिरोधार्य की ।

थली प्रदेश रेगिस्तानी क्षेत्र है और गर्मी मे तो विहार-चर्या दु सह हो जाती है । लम्बी दूरी तक एक तो साधुओ के योग्य पानी मिलता नही और जहा प्यासे को पानी मिलाने मे एकात पाप होने का भ्रम फैलाया हुआ हो, यह कठिनाई और अधिक भीषण बन जाती है । आपश्री ऐसी शुष्क धरा के शुष्क मानवो के हृदयो को करुणावश आर्द्र बनाने के लिये छ सतो सहित विहार मे आगे बढ रहे थे । तीन सतो के साथ आप श्री डूगरगढ पधारे तब बाकी तीन सत एक आध कोस के अतर से पीछे-पीछे आ रहे थे । ये तीनो सत श्री डूगरगढ से जब तीन कोस पहले आ रहे थे तो उस गाव मे पर्याप्त पानी भी नही मिला । अत शीघ्र श्री डूगरगढ पहुच जाने के विचार से वे आगे चल दिये । उस समय सूरज बहुत तेजी से तप रहा था, रेत आग की तरह जल रही थी और लू के गरम-गरम झोंके आ रहे थे । रेगिस्तान मे तो छायादार पेड भी नही होता । श्री डूगरगढ एक कोस भी नही रहा होगा कि तीन सतो मे से एक वयोवृद्ध सत मुनिश्री मोतीलालजी म सा को कठ सूख जाने से चक्कर आने लगे । तब एक खेजड़े के नीचे उन्हे लिटाकर एक सत तो उनकी सेवा मे रहे और दूसरे सत जल लेने के लिये श्री डूगरगढ की ओर चल दिये । वहा ओसवालो का मोहल्ला पूछ कर वे सत मोहल्ले मे जाकर युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के बारे मे पूछने लगे तो किसी ने कुछ नही बताया बल्कि हँसीठट्ठा करने लगे । फिर उन्होने एक सत की तबीयत खराब होने की बात कहकर योग्य जल के बारे पूछा तब भी किसी न ध्यान नहीं दिया अचानक आशारामजी भवर मिल गये जिन्होंने बताया कि उनकी बगीची से युवाचार्य श्री ने कुछ देर पहले ही विहार किया है । उन्होंने उन सत मे अपने घर से जल्दी प्रासुक जल लेकर व्याकुल सत के पास पहुचने को कहा । जल लेकर वे मुनि श्री मोतीलाल जी म सा. से कोई फलाग भर ही दूर रहे होगे कि प्यास मे व्याकुल सत के प्राण पखेरु उड गये । यदि उन तथाकथित जैनियो ने जरा सा भी ध्यान दिया होता तो यह दुर्घटना नहीं घटती । मानव विरोधी भ्रामक धारणा का यह कुफल था कि

दुर्जनता की दया विरोधी प्रवृत्ति से यह दारुण घटना घटित हुई । युवाचार्यश्री ने जब यह सुना तो उन्हे यह विशेष अनुभव हुआ किन्तु वे तो समरस के साधक थे समभाव से चलते रहे ।

सरदारशहर के भाइयो ने चातुर्मास हेतु नगर मे प्रवेश करने के लिये ज्योतिषियो से शुभ मुहूर्त निकलवाया था किन्तु निस्पृहचित्ती आपश्री ने उसका कोई विचार नही किया और क्षय तिथि के दिन ही नगर प्रवेश करके आपने फरमाया कि मेरे लिये तो गुरु आज्ञा ही सबसे अच्छा मुहूर्त होता है और मैं यहा चातुर्मास करने गुरुदेव की आज्ञा से आया हू । यह चातुर्मास सपूर्ण थली प्रदेश के लिये वरदान सिद्ध हुआ जब कि अनेक व्यक्तियो ने आपश्री की सत्प्रेरणा से धर्म के सत्य-स्वरूप को समझा एव तदनुसार त्याग, प्रत्याख्यान ग्रहण किये । श्री हुकमचन्दजी और श्री सुमेरमलजी की भागवती दीक्षाए आपश्री के सान्निध्य मे यही पर हुई ।

गुरुदेव की अंतिम समय में भावभीनी सेवा :

सरदारशहर का चातुर्मास समाप्त होते ही आपश्री ने त्वरित गति से भीनासर की ओर विहार किया । मार्ग मे जो भी समय मिलता आपश्री सरल हृदयजनो को धर्म का अतरग रहस्य समझाते हुए आगे बढते रहते । जब आपश्री गुरु चरणो मे पहुचे, आपने पूरे मनोयोग से सेवा सुश्रूषा प्रारभ कर दी । आचार्यश्री का स्वास्थ्य उस समय साधारणतया ठीक था अत उन्होने आपश्री को आस पास के क्षेत्रो मे विहार करने की आज्ञा दी । तदनुसार आपश्री निकटस्थ क्षेत्रो मे धर्म प्रचार करने लगे । अचानक ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा को आचार्यश्री को पक्षाघात हो गया । देशनोक मे यह समाचार सुनते ही आपश्री तुरन्त आचार्यश्री की सेवा मे पधार गये ।

अपने व्याधिग्रस्त शरीर की अशक्तता को देखकर आचार्यश्री ने अपने जीवन की आलोचना करने के उपरान्त दिनाक १८-६-१९४२ को चतुर्विध सघ के समक्ष चौरासी लाख जीव योनि से क्षमायाचना की । इसके साथ ही आचार्यश्री ने अपने युवाचार्य श्री के सबध मे फरमाया—लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैंने सम्प्रदाय के शासन का भार युवाचार्य श्री गणेशीलालजी को सौंप रखा है । उन्होने जिस योग्यता, परिश्रम और लगन के साथ निभाया और निभा रहे हैं । वह आप सबके सामने है । मुझे इस बात का परम संतोष है कि इन्होने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का सफल अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और काय को अच्छी तरह समाल लिया है । इस बात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्री सघ ने भी इनको श्रद्धापूर्वक अपना मान लिया है इनके प्रति चतुर्विध सघ की भक्ति और सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर अभिवृद्ध होता रहे तथा भव्यप्राणियो का अधिकाधिक कल्याण सधता रहे—यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है ।

आचार्यश्री को पक्षाघात से पूरा आराम हुआ ही नहीं था कि कमर के बाई ओर जहरीला फोडा (कार्बंकल) उठ आया, जिससे दुस्सह वेदना हो रही थी । करीब छः माह में

फोडा तो ठीक हो गया लेकिन एक करवट लेटे रहने से अगोपागो मे भारी कमजोरी आ गई थी। अत. वि स १९९९ का आपश्री का चातुर्मास गुरुदेव की सेवा मे भीनासर मे ही हुआ। आचार्यश्री का स्वास्थ्य ऊचा नीचा ही चलता रहा और आपश्री अपने आचार्यश्री की सेवा मे अहर्निश तन्मय रहे। आचार्यश्री के स्वर्गवास होने के दिन की पूर्व रात्रि मे प्रथम प्रहर तक स्वास्थ्य कुछ ठीक सा लग रहा था अत मुनिश्री नानालालजी आचार्यश्री की सेवा मे विराजे रहे और उन्होन युवाचार्य श्री को पोढा दिया। किन्तु मध्य रात्रि के समय जव आचार्यश्री की श्वास गति मे कुछ वदलाव दिखा तो युवाचार्यश्री को तुरन्त जगाया गया और आपश्री ने नाडी की गति देखी जो दुर्वल प्रतीत हुई लेकिन आचार्यश्री शुद्ध चेतनावस्था मे थे और उन्होंने क्षमायाचना करके औषधोपचार के सामान्य दोषो का आपश्री के समक्ष प्रायश्चित किया। आचार्यश्री की महानता देखिये कि उन्होंने आपश्री को प्रायश्चित देने को कहा। आपश्री तो परम विनीत शिष्य थे, निवेदन किया—आपकी अन्तरात्मा को जो सही जान पडे वैसा कर लीजिये। अन्त में आषाढ शुक्ला अष्टमी को सायकाल साढे पाच वजे आचार्यश्री ने सथारा पूर्वक इस नश्वर देह का त्याग कर दिया।

आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा एक महान् चिन्तक, व्याख्याता एव विचार क्राति लाने वाले युगपुरुष थे। हमारे चारित्र नायक ने जवाहराचार्य रूपी सूर्य की किरणें आत्मसात कर ली थी। अपने गुरु की उस ज्ञान-चारित्र्य निधि मे आपश्री ने अतीव वृद्धि के साथ अपने आचार्यकाल मे महान् लोकोपकार किये। आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हो जाने के पश्चात् आपश्री के सद्धर्म पुरुषार्थ से एक नये युग का श्री गणेश हुआ।

आचार्य के रूप मे प्रथम चातुर्मास देशनोक तदन्तर सरदारशहर :

आचार्य मे तीन गुणो का होना आवश्यक माना गया है। पहला गुण यह कि आचार्य सूत्रार्थ का गभीर ज्ञाता हो, दूसरा वह अप्रमादी हो और तीसरा गुण यह कि वह सघ व्यवस्था के सचालन मे समर्थ हो। हमारे चरित्र नायक मे ये तीनो गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे अपितु उनके गुरुदेव ने अपने अतिम समय मे उनको इस तथ्य का प्रशसात्मक प्रमाण पत्र भी दे दिया था। वैसे पिछले आठ वर्षो से व्यावहारिक रूप मे आपश्री ही आचार्य का पदभार सम्भाले हुए थे। इस कारण जव आपश्री विधि पूर्वक पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा के सातवें पाट पर विराजे तो आपश्री आचार्य सम प्रभाव ही धारण किये हुए थे। एक सुयोग्य आचार्य के पश्चात् वैसे ही सुयोग्य नये आचार्य को पाकर चतुर्विध सघ अपने को धन्य मान रहा था।

आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात् आपश्री का वि. स २००० का पहला चातुर्मास देशनोक मे हुआ। चातुर्मास प्रारभ के दिन आपश्री ने अपने स्वर्गीय गुरुदेव के प्रति भावपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए फरमाया—पूज्य गुरुदेव श्री का मुझ पर असीम उपकार है। मैं उनके ऋण से कभी भी उऋण नही हो सकता हू। मेरे जीवन के निर्माण मे जिन-

जिस प्रकार से निर्देशन और आज्ञाए दी हैं उनके लिये मैं उनका सदैव कृतज्ञ रहूगा । यद्यपि आज पूज्यश्री अपने पार्थिव शरीर मे हमारे बीच नही रहे हैं, उनके आदेश, उनके विचार एव उनकी शिक्षाए सदैव हमारा मार्ग दर्शन करती रहेगी । मैं चतुर्विध सघ को यह विश्वास दिला देना चाहता हू कि सघ श्रेय एव धर्मसेवा ही मेरे जीवन का ध्येय रहा है और रहेगा । मैं इस पट्ट गौरव की रक्षा मे अपनी सपूर्ण विवेक शक्ति के साथ सदा उद्यत रहूगा । चतुर्विध सघ से भी पूर्ण सहयोग की मुझे अपेक्षा रहेगी । व्यवहार मे आचार्य पद अतीव सम्मान का तथा धार्मिक क्षेत्र मे सर्वोच्च पद माना जाता है किन्तु मैं इसे मात्र सेवा का पद ही मानता हू । मैं स्वय को तभी भाग्यशाली मानूगा जब मैं पद के दायित्वो का भली प्रकार निर्वाह कर सकू । मैं अपनी आत्मसाक्षी से धर्म का एक लघु सेवक ही रहूगा । गुरुदेव के प्रति मेरी यही श्रद्धाजलि है कि उनके द्वारा निर्देशित प्रशस्त पथ पर सदा सजग होकर मैं चलता रहू और अपनी सयम साधना का उत्तरोत्तर विकास करते हुए अपनी आत्मा का लक्ष्य प्राप्त कर सकू ।

देशनोक मे आचार्य मुख से दयादान के सबध मे जो दिव्य देशनाए प्रसारित हुई वे एक प्रकार से समस्त थली प्रदेश के वायु मडल मे छाकर गुजरित होने लगी । अब तो थली प्रदेश के भीतरी क्षेत्रो से आग्रह से आग्रह भरे आमत्रण भी आने लगे कि देशनोक से आपश्री पुन थली प्रदेश मे पधारे और दया, करुणा, मैत्री, दान, सहकार, सहयोग आदि के मानवीय सिद्धान्तो का सदेश मुखरित किये ।

आचार्य श्री इन मानवीय सिद्धा तो को क्रूर हृदयो मे भी उतार देने मे परमदक्षता प्राप्त कर चुके थे । दूसरो के दिलो को वही दयार्द्र बना सकता है, जिसका स्वय का दिल दया से गहराई तक भीजा हुआ हो । आपश्री जीव रक्षा के महत्त्व को अपने सरल हृदय मे इस प्रकार समझते थे कि दयादान विरोधी मान्यताओ वाले भाई-बहिन भी आपकी प्रवचन धारा मे डूब कर अपने कलक को धो लेते थे । देशनोक का चातुर्मास सफलता पूर्वक समाप्त करके आपश्री ने पुन थली प्रदेश मे प्रवेश कर लिया । वहा की कठिन विहार चर्या पूर्णतया परिचित थे । पहले भी पग-पग पर पैदा की गई असुविधाओ और आपदाओ को आपश्री ने अविचलित भाव से सहन किया था । तो अब उनका तनिक भी विचार आपश्री के मन मे नही था । "देह पातयामि कार्यंवा साधयामि' के आपश्री उपासक थे अत निश्चिन्तता एवं निश्चलता के साथ आपश्री थली प्रदेश के आतरिक अचलो मे सद्धर्म प्रचार करने लगे । आपश्री ने इस 'मिशन' की सफलता हेतु अपना वि स २००१ का चातुर्मास पुन सरदारशहर मे ही किया ।

आचार्यश्री के चातुर्मास करने के समाचार से सरदारशहर के दयादान विरोधी वर्ग मे हलचल मच गई । आपश्री के पूर्व चातुर्मासो के उस वर्ग के अनुभव बडे टेढे थे । इस कारण इस बार यह वर्ग प्रतिरोध की विविध योजनाए बनाने मे जुट गया । आपश्री तो कारुणिक पुरुष थे और चाहते थे कि दयादान को पाप मानने के भ्रम मे पडकर स्वपर का अहित करने वाले भाई बहिन सन्मार्ग को समझे, बूझे और प्रेम पूर्वक विचार विनिमय करे । अपना ऐसा ही रुख आपश्री ने पहले चौमासो मे भी दिखाया था । अत, इस बार कई जिज्ञासु

एव सत्यान्वेषी भाई आपश्री के समीप आकर तात्विक चर्चाए करने लगे । सायकल प्रतिक्रमण के अनन्तर नियमित रूप से ऐसी चर्चा का कार्यक्रम चलने लगा । आपश्री की उदारता का द्वार सबके लिये खुला था । आप कभी भी अपने विषय प्रतिपादन मे हठ को स्थान नही देते थे और सरलता के साथ युक्ति सगत समाधान देते थे । इस कारण सैकडो व्यक्तियो ने अपना विभ्रम मिटाकर आपश्री मे सम्यक् श्रद्धा ग्रहण की एव आपको अपना गुरु माना ।

चातुर्मास काल मे जैनेतर जनता ने आपश्री की उपदेश धारा से धर्म के कल्याणकारी आदर्शों को समझकर अपूर्व बोध प्राप्त किया । चातुर्मास समाप्ति के वाद आपश्री ने अपने अन्तिम प्रवचन मे फरमाया—मैं आपसे एक वस्तु मागना चाहता हू और वह यह कि आप धर्म को समझकर अपने कर्तव्य का निर्णय कीजिये तथा उसी के अनुसार अपना आचरण भी वनाइये । शुद्ध धर्म पर श्रद्धा रखिये और अहिंसा भावना को ही विश्व के लिये हितकर मानिये । सत्य को व्यक्त करते समय वहुत सी वातें कठोर तो लगती हैं लेकिन उनमे हित भावना रही हुई होती है । फिर भी मेरे से किसी का मन क्षुब्ध हुआ हो तो क्षमा चाहता हू ।

सरदारशहर से जव आपश्री का विहार हुआ तो इस वार विदाई का दृश्य कुछ दूसरा ही था । विदा करने वालो के चेहरो पर एक ओर सत्सिद्धान्त समझ लेने का सतोष झलक रहा था तो दूसरी ओर समझाने वाले महान् ज्ञाता से विछुडने का खेद भी आसुओ मे फूट रहा था । थली प्रदेश के ग्राम नगरो मे जैन धर्म की ज्योति जगाते हुए आपश्री ने अजमेर मेरवाडा क्षेत्र मे पदार्पण किया ।

नवीनता व प्राचीनता मे समन्वय हो :

अजमेर मेरवाडा क्षेत्र मे प्रवेश करने के साथ ही आचार्यश्री ने सामाजिक कुरूढियो, पारस्परिक वैमनस्य एव विवाहादि अवसरो पर किये जाने वाले आडम्बरो के विरुद्ध एक अभियान ही छेड दिया । इसी के साथ नवीनता एव प्राचीनता के प्रश्न को भी विचार विमर्श का केन्द्र विन्दु वना दिया । समाज सुधार के विषय मे आपका स्पष्ट मत था कि ऐसा आचरण समाज और व्यक्ति दोनो के लिये लाभकारी नही होगा, जिसमे मानवीय गौरव, स्वतन्त्रतापूर्ण समानता एव न्याय की रक्षा के लिये मौलिक आधार न हो । परिवर्तित परिस्थितियो के नाम पर एक ओर अपने आधार भूत सिद्धान्तो मे सशोधन करने या छूट देने का विचार समीचीन नही माना जायगा तो दूसरी ओर विकृत वनी कुरूढ़ियो एव परम्पराओ को भी आखे बन्द करके मानते चले जावे—यह भी जीवन के स्वस्थ विकास की दृष्टि से ग्राह्य नही होगा । सक्षेप मे यह आपश्री का नवीनता के अर्थ एव अन्तर पर समन्वयात्मक दृष्टिकोण था । इस पर कई प्रवचनो मे आपश्री ने अपने अगले चातुर्मास मे विविध प्रकार के विश्लेपणो सहित पूर्ण प्रकाश डाला ।

समाज सुधार सवधी आपश्री के विचारो को सुनकर रूढिवादी श्रोताओ तक के मन मस्तिष्क मे हलचल मच गई । मानव हित की भावना से ओत-प्रोत आपश्री की देशना मे धर्म

की व्यावहारिकता और व्यापकता का ऐसा सजीव चित्रण होता था कि रूढिग्रस्त लोगो मे भी नया परिवर्तन लाने का सकल्प बनने लगा । इसी प्रकार का जागरण आपश्री के स २००२ के ब्यावर चातुर्मास मे भी चलता रहा । धार्मिक एव नैतिक कर्तव्यो के प्रति जागरूकता पैदा करने मे समाज सुधार अभियान को विशेष बल मिला । ब्यावर नगर आपश्री की प्रतिभा से पूर्व मे परिचित हो चुका था किन्तु इस बार एक आचार्य के प्रति श्रद्धा, आस्था एव भक्ति का नया उत्साह दिखाई दिया । इसके साथ ही कुछ विघ्न सतोपियो ने समय-समय पर भ्रम फैलाने, रूढिवादी पुरातनपथी आदि शब्दो द्वारा मनगढन्त आरोप लगाने आदि के कुकृत्य एव झूठी अफवाहें भी फैलाई लेकिन ऐसे लोगो के सभी दुष्प्रयत्न आपश्री के असीम शाति सागर मे विलीन हो गये ।

आपश्री मानते थे कि नवीनता और प्राचीनता को परस्पर टकराना नही चाहिये बल्कि उनका यदि समन्वित सगम बिठा लिया जाय तो दोनो प्रकार के विकार एक दूसरे के पूरक बन सकते हैं । इस सबध में आपश्री की स्पष्ट अवधारणा निम्नाकित है —

मनुष्य की सभी शक्तिया नवीन सत्कर्म मे उद्बोधित रहती हैं एव जीवन के सम्यक् विकास मे जुट जाती हैं । मनुष्य अपने सही लक्ष्य की ओर आगे बढे इसके लिये यही उसकी सबसे पहले अनिवार्य आवश्यकता होती है । यही कारण है कि आचार और विचार की दृष्टि से भी मनुष्य पिछडा नही रहना चाहता, उसे नही रहना चाहिये । वह इस बात की कोशिश करे कि ज्ञान के विशाल भडार मे प्रवेश हो, महान् मनीषियो के तत्व चिन्तन को जाने किन्तु उन सबको सम्यक् ज्ञान व आचरण मे रमाकर ग्रहण करे, अपनी शुद्ध बुद्धि की कसौटी पर कस कर उसका मनन करे और ऐसी मनोवृत्ति ही वास्तविक नवीन विचार तथा आचार-विचारो का स्थान सशोधित नई और सुलझी हुई आचार विचार धाराए लेती हैं ।

भगवान् महावीर ने क्या किया था ? जिस युग मे वे पैदा हुए थे, अमानवीय आचार-विचार का वातावरण बना हुआ था—सही आचार विचार का स्थान कुआचार-विचार ने ले रखा था । उन्होंने युग प्रवर्तन पर विचार किया, तत्कालीन आचार और विचार मे वास्तविक क्राति की ओर एक नये प्रगतिशील आचार-विचार को जन्म दिया । वास्तविक नवीनता की ओर बढने वाले महात्माओ के जीवन विकास का ऐसा ही इतिहास हुआ करता है ।

किन्तु कुछ तथ्य प्राचीनता को भी सोचने के है । "प्राचीन" शब्द अपेक्षाकृत है । "तत्त्वार्थाधिगम" सूत्र मे "सत्" की व्याख्या की गई है—"उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त सत्" अर्थात् सत् का अर्थ ध्रौव्य युक्त उत्पत्ति और विनाश कहा गया है । प्रत्येक पदार्थ मे एक पर्याय का नाश और अन्य पर्याय की उत्पत्ति होती है जीवन के अन्दर अभद्र आचार-विचार भी एक प्राचीन पर्याय है । इसको त्याज्य जानना भी एक महत्व का विषय है अन्त करण पूर्वक अभद्र आचार-विचार पर्याय का सशोधन रूप परिवर्तन किया जाता है । परिवर्तन और सुधार जीवन के तौर तरीको के साथ होता है ।

जीवन का अन्तिम उद्देश्य तो सदा एक सा रहता है और एक सा ही रहेगा कि समस्त विकारो की मुक्ति के रूप मे चरम लक्ष्य प्राप्त किया जाय। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये साधको की योग्यता के अनुसार अलग-अलग ढग हो सकते हैं। किन्तु सशोधित मानस मे दया, सहानुभूति, भ्रातृत्व, सदाचरण व त्याग आदि इन सारे सद्गुणो को जीवन के साचे मे ढाल कर उसे आचारिक और वैचारिक विकास के उच्चतम स्तर पर पहुचा दिया जाय, यह शाश्वत लक्ष्य है, इसी को दृष्टिगत रखकर मानव विकट परिस्थिति मे भी आगे वढ सकता है।

प्रचलित परिपाटियो मे इधर-उधर से जो विकास आ जाते हैं, उनको हटाने और चेतना जागृत करने के लिये मूल स्थिति के रक्षण पूर्वक जो भी विवेक सहित परिवर्तन लाये जाते है, उन्हे भी नवीनता की सज्ञा दी जा सकती है। इन अर्थो मे नवीनता का यह अभिप्राय होना चाहिये कि जो परिवर्तन और एक रूपता को सतुलित रखती हुई मनुष्य की सही जिज्ञासा वृत्ति को सतुष्ट करती है और उसे सत्य लक्ष्य की ओर प्रवृत्त होने मे जागृत रखती है, ऐसी सच्ची नवीनता है और उसके अनुगामी जीवन के सही प्रगति मार्ग को निष्कटक बनाते हैं।

आपश्री का यह चातुर्मास धार्मिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से ब्यावर के लिये अतीव उपकारक सिद्ध हुआ। आसपास के कई क्षेत्रों मे भी आपसी मन मुटाव और वैमनस्य का निराकरण हुआ।

वह समय सारे देश मे जागृतिकाल जैसा चल रहा था। देश राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिये अहिसक क्राति के दौर से गुजर रहा था। ऐसे समय मे स्थानकवासी समाज मे भी सघ ऐक्य के लिये पुन प्रयत्न करने की जागृति उत्पन्न हुई।

बगडी मे साधना को सम्बल तो बड़ी सादडी मे अहिसक क्राति :

आपश्री का वि स २००३ का चातुर्मास बगडी (जिला पाली) मे हुआ। यह छोटा कस्बा ही है और वातावरण मे ग्राम्य सस्कृति की ही प्रमुखता है अत शात स्वच्छ एव रम्य वातावरण मे यहा पर साधना को पूरा सम्बल मिला। यहा सयम, साधना के लिये एकात वातावरण था तो ज्ञानाभ्यास के लिये पर्याप्त समय। आपश्री का यह निश्चित मत था कि आत्म साधको को लौकिक आडम्बरो तथा प्रचार प्रसिद्धि से परे रहकर आत्मसाधना मे लीन रहना चाहिये। आप साधु की चारित्रिक उच्चता मे विश्वास रखते थे। बगडी वासियो ने भी आपके सदुपदेशो का पूरा लाभ लिया एव समाज सुधार तथा धर्मोपकार के अनेक कार्य सपन्न हुए।

चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् आपश्री का विहार मेवाड क्षेत्र की ओर हुआ। ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आपश्री वि स २००४ के चातुर्मासार्थ वडी सादड़ी (जिला चित्तौडगढ पधारे। वडी सादडी पहाडी की तलहटी मे वसा एक रमणीय कस्वा है। यहा पर

भी सतो के ज्ञान-ध्यान मे अच्छी अभिवृद्धि हुई तो श्रावको ने भी तपस्याए व त्याग प्रत्याख्यान खूब किये ।

यहा पर घटे एक प्रसग का उल्लेख उचित रहेगा । बड़ी सादडी के राजराणा के काका श्री भीमसिहजी आपश्री का प्रवचन सुनने के लिये प्रतिदिन आते थे । उस समय वे मद्य मांस सेवन व शिकार को राजपूतो के लिये जरूरी मानते थे । उस समय ठिकाने की ओर से नवरात्रि के समय जगदम्बा के स्थान पर ४५ बकरो व एक भैसे की वलि दी जाती थी । चातुर्मास काल मे आचार्यश्री को इन रौरव कृत्यो की जानकारी मिली तो आपका पर-दुःख कातर करुणार्द्र मानस सिहर उठा । आपश्री ने फिर एक दिन अपने प्रवचन मे अहिंसा एव जीवरक्षा के लिये मार्मिक उपदेश दिया उसे सुनकर ठाकुर भीमसिहजी की अन्तर्चेतना जागृत हुई और उन्होने महसूस किया कि धर्म के नाम पर जीव हत्या का कलक मिटाया जाना चाहिये । इस सकल्प से अभिभूत होकर उन्होने आपश्री के समक्ष खडे होकर प्रतिज्ञा ली—मैं बहुत ही अधकार में था, आपश्री मुझे प्रकाश मे लाए । मैं प्रतिज्ञा करता हू कि मैं जीवन पर्यन्त देवी-देवताओ के नाम पर होने वाली बलि नही करूगा और न शिकार ही खेलूगा । नवरात्रि के दिनो मे जो बकरो व भैसे की वलि दी जाती थी उसे भी बद कराने का उन्होने आदेश जारी कर दिया । बाद मे तो आसपास के कई जागीरदारो ने आप श्री का उपदेश सुनकर शिकार, मासाहार, सुरापान वलि के त्याग कर लिये ।

बडी सादडी मे हुई अहिंसा और करुणा की इस क्राति का पूरे क्षेत्र मे अनुकरणीय प्रभाव पडा । सारे क्षेत्र मे अहिंसा और जीवरक्षा की लहर फैल गई । गाव-गाव मे यह प्रतिज्ञा दोहराई गई कि हम लोग अपने-अपने गाव मे नवरात्रि व दशहरे के दिनो मे बकरो व भैसो की बलि नहीं देंगे और अन्यान्य स्थानो पर भी नही होने देने के लिये अथक प्रयत्न करेंगे ।

मालव धरा पर सत्श्रद्धा का प्रसार एवं अमित धर्म-प्रभावना .

मेवाड के क्षेत्रों मे अध श्रद्धा का उन्मूलन और दयामय धर्म का बीज वपन करते हुए आपश्री के चरण मालव धरा पर बढ चले । इसके साथ ही मालवा के कई ग्राम नगरो के श्री सघ अपने-अपने क्षेत्रो मे पधारने की विनती लेकर सेवा मे उपस्थित होने लगे । मदसौर में प्रवचनो के प्रभाव में नगरवासी ऐसे बध गये कि सभी ने आपश्री के आगामी चातुर्मास के लिये सामूहिक रूप से विनती करने का निश्चय किया । उनमे कई सिंधी भी थे शरणार्थी के रूप मे नये-नये ही आकर बसे थे । उस समय चातुर्मास प्रारभ होने मे काफी समय बाकी था अत विनती झोली मे रख ली गई । जावरा मे फिर कई स्थानो के श्री सघ विनतिया लेकर आये तो आपश्री ने स २००५ के चातुर्मास के लिये रतलाम श्री सघ को स्वीकृति दे दी । इससे मदसौर श्री सघ और खासतौर से सिंधी भाइयो में बडी निराशा फैल गई ।

किन्तु इस विषय पर आपश्री के मन मे कुछ विचारो का अन्तर्द्वन्द्व चल गया ।

आपश्री को लगा कि मदसौर मे चातुर्मास की स्वीकृति नही देने से मदसौर श्रीसघ के सदस्यो और विशेषत सिंघी भाइयो के विश्वास और आंतरिक भावना को ठेस पहुचाना उचित नही रहा। दूसरा विचार यह भी आया कि जब आगामी चातुर्मास के लिये स्वीकृति दे दी है तो उससे अब मुकरना भी साधु मर्यादा नही है। आपश्री इस पर जितना सोचते उतनी ही उलझन बढती गई। आपने इस उलझन को रतलाम के श्रीसघ के श्रावको के सामने रखी और उन्हीं से समाधान पूछा। श्रावको ने कहा—चातुर्मास की स्वीकृति सभी आगारो के साथ ही दी जाती है अत इन आगारो के अन्तर्गत यदि किसी अन्य स्थान पर धर्म प्रभावना की अधिक गुजाइश हो तो स्थान परिवर्तन किया जा सकता है। हम देखते हैं कि मदसौर मे ऐसी स्थिति है तब आपश्री ने मदसौर मे चातुर्मास की स्थिति बने तो साध्वाचार के अनुरूप विश्राम स्थान के बारे मे मदसौर वालो से पूछताछ की। तब सिंघी भाइयो ने कहा कि किराया आदि देकर हम मकान की व्यवस्था कर लेंगे। इस पर आचार्यश्री ने फरमाया कि साधु के लिये किराये लिये हुए मकान मे ठहरना साधु को कल्पता नही है। इस पर मदसौर वासी विवश हो गये और उन्हे ही योग्य मकान के अभाव मे अपनी विनती वापिस लेनी पडी। इस प्रकार आपश्री का स २००५ का चातुर्मास रतलाम मे ही सपन्न हुआ।

रतलाम चातुर्मास मे आपश्री के वचनामृत से अमित धर्म-प्रभावना हुई। प्रवचनो में एव रात्रिकालीन चर्चा विचारणा मे बहुत ज्यादा उपस्थिति रहती थी। जिज्ञासुओ के तात्विक प्रश्नो का समाधान अधिकतर मुनिश्री नानालालजी म सा ही किया करते थे।

इस चातुर्मास मे मुनिश्री आइदानजी म सा का शरीर रोगाक्रात हो गया। रोग का दौरा होने पर वे बेहोश हो जाते और हाथ पैर पछाडने लगते। दो चार सतो द्वारा सभालने पर भी वे काबू मे नही आते उनका उपचार और वैयावृत्य चल रहा था, किन्तु कई भाइयो ने मकान मे खडे पीपल के वृक्ष की ओर इशारा करते हुए मुनिजी के रोग को भूत बाधा बताई। इस पर आचार्यश्री ने प्रवचन मे अध विश्वासो पर जोरदार प्रहार किया और फरमाया कि धर्म पर दृढ श्रद्धा रखो। ऐसी निराधार कल्पित घटनाओ का सबध भूत-प्रेतो से जोडना मनुष्य की मनोभावना पर आधारित है, वास्तविकता नही। फिर आपश्री ने स्वानुभूत प्राकृतिक प्रयोगो से मुनिजी को नीरोग बनाया और उन्ही लोगो के सामने अध श्रद्धा की व्यर्थता सिद्ध कर दी।

चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् आपश्री का जब जावरा पधारना हुआ तो वहा सघ ऐक्य योजना की पूर्व भूमिका को लेकर समाज के प्रमुख श्रावको का एक शिष्ट मडल आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ, जिसमे सर्वश्री कुन्दनमलजी फिरोदिया (अध्यक्ष, बम्बई विधान सभा), चिमनलाल चकूभाई शाह, आदि थे। शिष्ट मडल ने सघ ऐक्य योजना की रूपरेखा प्रस्तुत की और सुझाव दिया कि जब तक यह योजना कार्यान्वित न हो तब तक यह व्यवस्था रहे कि एक ग्राम नगर मे एक ही चातुर्मास और एक ही व्याख्यान हो ताकि पृथक्-पृथक् सम्प्रदायो मे विभक्त साधु एक दूसरे के समीप आ सके। आचार्यश्री जी ने शिष्ट मडल के विचारो को ध्यान पूर्वक सुना, फिर फरमाया—आप लोग सघ ऐक्य योजना की भूमिका तैयार करने आये है और मेरे सामने ऐसे प्रसग है जिनमे कुछेक मतो को पृथक् करने की स्थिति है। अत आप

ही बतलाइये कि मैं संघ ऐक्य योजना को आगे बढ़ाने के लिये आपको आश्वासन दू या अनुशासनहीन प्रवृत्ति वाले छद्मवेशी संतो को पृथक् करू ? साधु समाज मे बढते हुए शिथिलाचार के बारे मे सुनकर शिष्ट मडल के सदस्यो ने ऐसे साधुओ को पृथक् करने की राय दी । तब शिष्ट मडल के मनोभावो को समझकर आचार्यश्री ने पुन फरमाया - ऐसे साधु कहते कुछ है और करते कुछ हैं । अपनी भूल को भूल मानकर सुधारने का प्रयत्न नही करते बल्कि भूल को छिपाने की तरकीबें लगाते हैं । इस प्रकार आपश्री ने शिथिलाचारियो के विकृत आचरण पर विस्तार से प्रकाश डाला । शिष्ट मडल ने यह सुनकर आश्वासन दिया कि आगे ऐसी स्थिति नही रह पायेगी । आचार्यश्री ने भी परीक्षण के तौर पर शिष्ट मडल के सुझाव को तीन वर्ष के लिये क्रियान्वित करने की बात मान ली ।

सत विनोबाजी की आपश्री से वार्ता :

जावरा मे विहार करके आपश्री का व्यापार के केन्द्र नगर इन्दौर मे पदार्पण हुआ । यह नगर जैन समाज की दृष्टि से भी मालवा का केन्द्र नगर माना जाता है। यहा पर शैक्षणिक सस्थाओ एव विद्वानो की भी अच्छी सख्या है। आपश्री का विराजना यहा के महाराजा तुकोजीराव क्लाथ मार्केट के सभा-भवन मे हुआ जहा आपश्री के प्रवचनो एव तात्विक चर्चाओ मे सामान्य नागरिको के अलावा विद्वानो की भी अच्छी उपस्थिति रहती थी ।

उन्ही दिनो इन्दौर के पास राऊ ग्राम मे सर्वोदय मडल का अधिवेशन आयोजित था अत भूदान आदोलन के प्रेरक एव सर्वोदयी सत विनोबाजी का इन्दौर पधारना हुआ । वहा जब उन्हे आचार्यश्री के विराजने की जानकारी हुई तो वे कुछ सहयोगी कार्य-कर्त्ताओ के साथ आप श्री से मिलने आए तथा अहिंसा, सत्य, समाजवाद, सर्वोदय आदि के बारे मे करीब पौन घटे तक वार्तालाप मे निमग्न रहे ।

वार्तालाप का उपसहार करते हुए विनोबाजी ने कहा—महाराज, भूल जाइये कि जैनो की सख्या कम है । जैनो के आचार-विचार के सिद्धान्त ससार की समस्त विचारधाराओं मे मिश्री की तरह घुल-मिल गये है । लेकिन एक बात मेरे मन मे सदा खटकती रहती है कि जैनियों ने जिस दृढता के साथ अहिसा को पकडा है, उसी लगन और निष्ठा से वे सत्य को नहीं पकड पाते है । अगर जैन समाज ने सत्य और अहिसा दोनो को अपने जीवन का आधार बना लिया होता तो उसकी जीवनधारा निश्चित है कि मान सरोवर से निकलने वाली गगा की धारा की तरह पृथक् ही दिखाई देती । सत्य और अहिसा के समन्वय पर ही गगा और यमुना के सगम के समान दिव्य-तीर्थ की प्रतिष्ठा हो सकती है । विश्व के मानव—समुदाय मे निरामिष भोजन और व्यसन विहीन जीवन के लिये जैसे जैन समाज आदर्श है, वैसे ही मैं उसे सत्य और सरलता मे, स्वावलम्बन और स्वाधीनता के विषय मे भी आदर्श देखना चाहता हूं ।

तब आचार्यश्री ने जैन दर्शन की मान्यता के अनुसार अहिसा एवं सत्य का समन्वयात्मक विश्लेषण किया और बताया कि हमारे यहा मोक्ष, ज्ञान और क्रिया दोनो की

समान साधना से प्राप्त होना बताया गया है । आचार की दृष्टि से अहिंसा का पालन आवश्यक कहा गया है तो विचार को सत्याधारित बनाने की आज्ञा है । काल-प्रवाह मे यह सही है कि विचारो मे शिथिलता आती है । मेरे स्वर्गीय आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा ने विचार क्राति पर बहुत बल दिया था और हम सभी सतो का प्रयास रहता है कि जैन समाज का आचार सत्यमय विचारो पर ही आधारित रहे ।

आचार्यश्री और सत विनोबाजी का यह सम्मिलन बहुत ही सौजन्यपूर्ण एवं मधुर रहा । यही कारण था कि विनोबाजी समय-समय पर आचार्यश्री जी को स्मरण करते रहते थे ।

आचार्यश्री भी विनोबाजी की सर्वोदयी विचार-धारा का मर्यादित भाषा मे समर्थन करते थे किन्तु साथ ही फरमाया करते कि जैन दृष्टि से सर्वोदय की सीमा मानव जाति तक ही सीमित नही है । उसमे मानव भी अन्य सचेतन प्राणियो की तरह एक इकाई है । जैन दृष्टि प्राणीमात्र के उदय का उदार दृष्टिकोण उपस्थित करती है हमारे यहा समस्त प्राणियो को समान स्तर पर रखकर सभी के उत्कर्ष की भावना व्यक्त की गई है ।

इसी समय जयपुर श्री सघ अपने यहा चातुर्मास करने की विनती लेकर आपश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ । इस विनती के पीछे एक विशेष कारण भी था । उसी वर्ष जयपुर मे तेरहपथ के आचार्यश्री तुलसी का चातुर्मास होना निश्चित हो गया था । अत उनकी दयादान विरोधी प्रवृत्तियो एवं बडी सख्या मे होने वाली बाल दीक्षाओ का ज्ञानमय सशक्त विरोध करना श्री सघ ने आवश्यक एव जनहितकारी माना और उस दृष्टि से आपश्री के चातुर्मास की अनिवार्यता बताई । उस समय चातुर्मास मे समय कम रह गया था और आचार्यश्री के घुटनो मे दर्द भी था । उस समय आपश्री उज्जैन मे विराज रहे थे । अत उज्जैन से जयपुर पहुचने की कठिनाई आपश्री ने बताई । लेकिन जनसाधारण मे जैन धर्म के प्रति अन्यथा भाव बनने की स्थिति को देखते हुए श्रीसघ ने किसी भी तरह जयपुर मे चातुर्मास अवश्यमेव करने का निवेदन किया । तब आपश्री ने शारीरिक स्थिति की अवगणना करके द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव को ध्यान मे रखते हुए वि स २००६ का चातुर्मास जयपुर मे करने की स्वीकृति प्रदान कर दी ।

धर्म विध्वसिनी प्रवृत्तियो के विरुद्ध मोर्चा और जयप्रकाश बाबू से चर्चा :

ग्रीष्म–ऋतु की कठोर विहारचर्या को सहते हुए आपश्री उज्जैन से कोटा होकर जयपुर पधारे । मार्ग मे शारीरिक वेदना ने कुछ उग्ररूप ले लिया था किन्तु आपश्री ने उसकी परवाह नही की । जयपुर के लाल भवन (चौडा रास्ता) मे आपश्री के प्रवचनो का ऐसा प्रभावशाली क्रम आरभ हुआ कि नगरवासी मत्र–मुग्ध से हो गये ।

दूसरी ओर तेरह–पथ के आचार्यश्री तुलसी का आगमन भी हुआ । उनके साथ छोटे-छोटे बालक-बालिकाओ की एक बडी टोली भी थी । इन बालक-बालिकाओ को दीक्षा दिलाने

की भीतर ही भीतर तैयारिया चल रही थी, जिसके कारण स्थानीय जनसाधारण मे रोष व्याप्त हो रहा था । इस रोष को देखकर तेरह-पथी समाज ने दीक्षा के आयोजन को बडा बनाकर उसमे राजनेताओ को लाने का भी कार्यक्रम बनाया ।

आचार्यश्री दयादान विरोधी प्रवृत्तियो का अपने प्रवचनो मे उल्लेख करते हुए जैनधर्म के सत्य सिद्धान्तो का वास्तविक निरूपण किया करते थे । जब ऐसी अबोध बाल दीक्षाओ का प्रसग सामने आने वाला था तो आपश्री ने उनके सबध मे भी अपने विचार सार्वजनिक रूप से इस प्रकार प्रकट किये—"मैं शास्त्रीय दृष्टि से होने वाली दीक्षा का विरोधी नही हू । लेकिन वर्तमान समय मे अबोध बालक-बालिकाओ को दीक्षा देना उपयुक्त प्रतीत नही होता है क्योकि तत्त्व ज्ञान एव विशुद्धाचार का अधिकारी वही हो सकता है जो हेय ज्ञेय एव उपादेय का विवेक करने मे सक्षम हो । दीक्षा देना और लेना एक अति गभीर उत्तरदायित्व है जिसका जीवनान्त तक निर्वाह करना पडता है । अत दीक्षा अगीकार करने वाले की क्षमता को परख लेना जरूरी है । दीक्षा जीवन का मौलिक परिवर्तन है । इसमे क्षणिक आवेश के लिये अवकाश नही है ।

"कुछेक साधु शिष्यलोभ के कारण जो भी आ जाये उसे ही मूड लेने की प्रवृत्ति रखते हैं तो कुछेक की ऐसी भी धारणा है कि वैराग्य का आवेग आने पर तत्काल ही दीक्षित कर देने मे उसका कल्याण है । लेकिन ऐसा समझना ठीक नहीं है ।"

आपश्री के उपर्युक्त मतव्य के अनुरूप ही जयपुर के विचारक और जागरूक बुद्धिजीवी वर्ग के विचार थे । उसका भी यही कहना था कि योग्य दीक्षार्थी को अवश्य दीक्षा दी जाय लेकिन सिर्फ आडम्बर और प्रदर्शन के लिये इन अबोध बालको एव किशोरियो की भावुकता का अनुचित लाभ लेकर चेले मूडने की प्रक्रिया के बारे मे हमारा विरोध है और ऐसे कृत्य से हम अपने और अपने नगर के नाम को कलकित नही होने देंगे ।

नगर के बुद्धिवादियों की ऐसी हलचल से क्रोधित होकर तेरहपथियो ने मनगढन्त आरोपो के साथ आचार्यश्री की निन्दा करते हुए एक "पेम्पलेट" प्रकाशित करवाकर प्रचारित किया । परन्तु आचार्यश्री इस भ्रान्त प्रचार से तनिक भी विचलित नही हुए अपितु वे तो तेरहपथी समाज द्वारा दिये गए कठिन परिषहो को पहले से ही शातभाव से सहन करते आए थे ।

तेरहपथी समाज अपने दीक्षा महोत्सव मे सम्मिलित कराने के लिये प्रसिद्ध राजनेता श्री जयप्रकाश नारायण को लाए । वायुयान से उतरते ही तेरहपथी लोग उन्हे अपने पूज्य के पास ले गये और तुरन्त ही एक अनुकूल वक्तव्य देने का अनुरोध किया । लेकिन जयप्रकाश बाबू ने तत्काल ही अपना मतव्य व्यक्त नही करते हुए उन्हे विश्राम स्थल पहुचाने को कहा । रास्ते मे लाल भवन के बाहर चहल-पहल देखकर उन्होंने जानकारी ली और उसी समय आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा. से मिलने उतर पडे ।

वार्तालाप के प्रसग मे बाल दीक्षा के विषय पर जो चर्चा चली, तब जयप्रकाश बाबू ने उस पर आचार्यश्री के विचार जानने चाहे । आचार्यश्री ने जैन शास्त्रो की दृष्टि से जब

इस विषय पर विस्तार से प्रकाश डाला तो हठात् जयप्रकाश बाबू बोल पडे कि मेरे भी इस बारे मे आप जैसे ही विचार है । उन्होने आगे कहा—आचार्यश्री जी, आपके उदार विचारो को जानकर मैं वहुत प्रभावित हुआ हू । मैं तो जनता का विनम्र सेवक हू और उसके हितार्थ ही मेरो कार्य प्रवृत्ति है । इसमे मुझे आपका आशीर्वाद चाहिये । आचार्यश्री ने उसका मधुर मुस्कान से उत्तर दिया । जयप्रकाश बाबू बाद मे विश्राम स्थल को चले गये । तव तेरहपथी लोगो ने वहा वाल दीक्षा के सवध मे अनुकूल सम्मति प्राप्त करने के लिये उन पर काफी दवाव डाला जिससे वे अधिक विक्षुब्ध हो उठे । फिर तो निर्धारित समय पर जनसमूह के समक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने व्यक्ति, समाज और धर्म की दृष्टि से बाल दीक्षा की हानिया वताते हुए उसके विरुद्ध अपना मत प्रकट किया । इससे तेरहपथियो के पूज्य और लोग दीक्षा कार्यक्रम को स्थगित कर देने के लिये विवश हो गये किन्तु इस वातावरण के लिये उन्होने आचार्यश्री के विरुद्ध भ्रात-धारणा बना ली । इसका आचार्यश्री पर कोई असर नही हुआ और वे यथावत् धर्म विध्वसिनी प्रवृत्तियो के विरुद्ध मोर्चा लगाए रहे । पर्यूषण पर्व, सयम साधना और धर्म प्रभावना के विविध आयोजनो के साथ सपन्न हुआ ।

सवत्सरी के अगले दिन अकस्मात् एक प्रसग उत्पन्न हो गया । आचार्यश्री जी अपने सहयोगी सतो के साथ प्रात कालीन वनचर्या के निमित्त रामनिवास वाग की ओर पधारे थे । वही बाग मे आचार्यश्री तुलसी सामने मिल गये । वह दिन क्षमापन दिवस होने से पारस्परिक क्षमायाचना के दौरान ही अप्रासगिक रूप से आचार्य श्री तुलसी वोल उठे—देखो गरगेशीलालजी मैं थान एक वात कहू हू के थारो रवैयो ठीक नही । आचार्यश्री ने सहज भाव से पूछा—कैसा रवैया ? प्रत्युत्तर मे वे बोले—थारी तरफ से छीटाकसी हुई है, पेम्पलेट बटाओ हो, आ ठीक कोयनी । इने बन्द कर देनो चाहिये । तव आचार्य श्री ने स्पष्ट किया—यह आपका और आपके अनुयायियो का भ्रम है । मैं न तो छीटाकसी करता हू न पेम्पलेट छपवाता या वटवाता हू । हा, श्रावको ने कुछ पर्चे मुझे दिखाए थे, जिनमे तो कोई वात निन्दाजनक या व्यक्तिगत आक्षेप को मुझे नही दिखाई दी । उनमे जो कुछ लिखा गया है वे तो आपकी प्रकाशित पुस्तको के ही उद्धरण है । यह सुनकर आचार्यश्री तुलसी पसीना-पसीना हो गये और अपने शिष्य के कधे का सहारा लेते हुए वोले—थे मने वदनाम करो । ऐसी वात पर तो आचायश्री शेर की तरह दहाड और फरमाने लगे—इसमे वदनाम करने जैसी कौन सी वात है ? सैद्धान्तिक सत्य को स्पष्ट रूप से कहना प्रत्येक का कर्तव्य होता है । मैं भी, जैन धर्म के वास्तविक स्वरूप के विरुद्ध जो प्ररूपणा की जाती है उसी का स्पष्टीकरण करता हू । आपके मान्य ग्रन्थ भ्रम विध्वसन मे लिखा हुआ है कि "साधु थी अनेरो ते कुपात्र छे । अनेरा ने दीर्घा अनरी प्रकृत्ति नो वद छे। अनेरी प्रकृत्ति पाप नी छे ।" फिर यही वात जव मैं स्पष्ट करता हू तो उससे आपको वदनामी का भय क्यो सताता है ? आपश्री ने तव तेरहपथ की भ्रामक मान्यताओ एव उनके सवध मे सद्धर्म मडन का जव विस्तार से उल्लेख किया तो आचार्य श्री तुलसी उसका कोई उत्तर न दे सके । उनके चेहरे का रग उड गया और विना कुछ कहे आगे वढने का उपक्रम करने लगे । तव आचार्यश्री ने मधुरता के साथ यह भी जतलाया कि परस्पर वार्तालाप मे जव कि साधु मर्यादा के अनुसार मैं तो "आप" के शिष्टाचारी शब्द से सम्वोधित कर रहा था लेकिन आप

शिष्टाचार से दूर 'तू थे' से बोल रहे थे, क्या यह शिष्ट जनोचित भाषा थी। इसके बाद आचार्यश्री ने फिर कहा—कहीं भी मतभेद हो सकता है किन्तु मतभेद नहीं होना चाहिये। आत्मिक दृष्टि से आपकी आत्मा मेरी आत्मा एक समान है। इसलिये तात्विक विवेचना हेतु जो कुछ मैंने कहा है, उससे यदि आपकी आत्मा को कष्ट हुआ हो तो क्षमा चाहता हू। इस संकेत पर फिर आचार्यश्री तुलसी ने आप शब्द का सम्बोधन शुरू कर दिया और कहा—आपकी तरफ से "सुपात्र व कुपात्र चर्चा" पुस्तक प्रकाशित हुई है जिसके मुख पृष्ठ पर छपा है कि "तेरहपंथी साधु अपने साधु के सिवाय सबको कुपात्र समझते है।" क्या यह छोटाकसी नही मानी जायेगी ?

आचार्यश्री ने फरमाया—आप ऐसा ही तो मानते हैं ? यदि ऐसी मान्यता नही है तो मैं आपसे पूछता हू कि मेरे अनुशासन मे ये मुनिराज पंचमहाव्रतो का पालन और संयम साधना कर रहे हैं। इनकी श्रद्धा किसी जीव को बचाने मे तथा साधु के सिवाय अन्य को दान देने मे पाप मानने की नही है और न ये भगवान् महावीर स्वामी को छद्मस्थ अवस्था मे "चूका" (भूला) मानते हैं। तो क्या आप इन्हे साधु और सुपात्र मानते हैं ?

अपनी मान्यता की असलियत खुलती देख आचार्यश्री तुलसी बगले झाकने लगे और उत्तर देते न बना तो जोर-जोर से "खमत खामणा" बोलते हुए चल दिये। इस दृश्य को देखने के लिये वहा दर्शको का अच्छा खासा समूह इकट्ठा हो गया था और वे इस चर्चा मे खूब रस ले रहे थे। अचानक रसभग हो जाने पर वे बिदक उठे और जोर-जोर से आवाजें लगाने लगे—बिना उत्तर दिये क्यो जा रहे हो ? क्या समाधान करने मे झिझकते हो ? लेकिन वे चले ही गये।

जयपुर के नागरिको के सत्य के आग्रह के कारण तेरहपंथियो द्वारा अपरिपक्व वय के अबोध बालको की दीक्षाओ के रुकने और आचार्यश्री तुलसी एव आचार्यश्री जी के बीच मे हुए वार्तालाप से तेरहपंथियो के पूज्यजी के लिये अवश्य ही आत्म निरीक्षण का अवसर प्राप्त हुआ था किन्तु अहम् के वश होकर वे वैसा नही कर सके।

आपश्री का ऐतिहासिक दिल्ली चातुर्मास और वृहद् साधु सम्मेलन की तैयारियां :

जयपुर से आपश्री विहार करके पल्लीवालों की आग्रहपूर्ण विनती पर सवाईमाधोपुर के पल्लीवाल क्षेत्रो मे धर्मोपकार करते हुए विचरे। वहा से अलवर होते हुए स २००७ के चातुर्मास हेतु दिल्ली पधारे। मार्ग मे हिण्डौन के आसपास वृहद् साधु सम्मेलन की भूमिका पर विमर्श करने के लिये श्री अ भा श्वे स्था जैन कान्फ्रेन्स का एक शिष्ट मडल पुन आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ। उन्ही दिनो ब्यावर मे पाच छ सम्प्रदायो के साधुओ का सम्मेलन हो रहा था, अत शिष्ट मडल ने आपश्री से उसमें सम्मिलित होने का निवेदन किया। आचार्यश्री ने फरमाया कि ऐसे छोटे आयोजनो से एकता के काम को वेग मिलने की संभावना नहीं है। दूसरे इन क्षेत्रो को छोडकर उधर चलू वह भी इधर हो रहे धर्मोपकार की दृष्टि से भी उचित

नही मानता हू । आपश्री का मार्ग मे पूज्यश्री पृथ्वीचदजी म सा से भी मिलन हुआ जिन्होने साधु सम्मेलन की तैयारिया एव ऐसे ही सम्वधित विषयो पर विचार विमर्श किया। पूज्यश्री पृथ्वीचदजी म सा. के आग्रह से आप दिल्ली पधारने के पहले आगरा पधारे, जहा आपके प्रभावशाली प्रवचन सुनकर वहा के चतुर्विध सघ मे अपार उत्साह फैला ।

दिल्ली के महावीर भवन मे आपश्री के प्रवचन होते थे । महावीर भवन का सभागार विशाल है, फिर भी श्रोताओ की इतनी अधिक उपस्थिति रहती थी कि कई श्रोताओं को वाहर वैठना पडता था । आपश्री सादा जीवन और उच्च विचार के प्रवल समर्थक थे। अत अपने प्रवचनो मे जीवन को सादा, सरल और धर्मानुकूल बनाने के वारे मे वार-वार सकेत देते रहते थे ।

आपश्री के कई प्रवचनो को सुनने के वाद एक ही दिन कई जैन व जैनेतर लोग आपश्री के समक्ष आये और अपनी जिज्ञासा प्रकट करके समाधान मागने लगे—हमारे यहा कुछ दिन पहले आचार्य श्री तुलसी नामक जैन सावुजी आए थे जिनके साथ करीव ५० साधु-साध्वी थे । उनके आगे पीछे कई धनी-मानी लोगो की मोटरे दौड रही थी और कई लारियो मे सामान लदा आ जा रहा था । वडी सख्या मे प्रचारक लोग प्रचार कर रहे थे तथा पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादको से सम्पर्क साव रहे थे । कई राजनेताओ के लिये भी दौड धूप हो रही थी । प्रचार के लिये वे यहा एक कार्यालय भी खोल गये है लेकिन उनके प्रति लोगो मे कोई आकर्षण नही है । दूसरी ओर आप के साथ यह सारा लवाजमा नही है और प्रचार भी नही है फिर भी लोग वडी सख्या मे आपके यहा आते है और आपके प्रवचनो से सतुष्ट होकर जाते है । इसका क्या कारण है ?

उस जन समूह की जिज्ञासा का समाधान आचार्यश्री ने जैन धर्म के आचार-विचार मूलक सिद्धान्तो का सही विश्लेषण करके दिया । प्रसगवश आपश्री ने जैन धर्म के सत्य-सिद्धान्तो एव तेरह पथ की भ्रमपूर्ण मान्यताओ का तुलनात्मक विश्लेषण भी समझाया ।

आचार्यश्री के दिल्ली चातुर्मास के समाचार से ही तेरह-पथियो मे घवराहट फैल गई थी । इस कारण उन्होने शुरू मे ही वहा के एक "अमर भारत" पत्र मे आचार्यश्री तुलसी अनुयायी चुरू के श्री शुभकरणजी सुराणा का एक लेख छपवाया, जिसमे आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा पर काल्पनिक आरोप लगाते हुए दभ के साथ आचार्यश्री तुलसी ने मतभेदो का समाधान प्राप्त करने की चुनौती दी गई । लेख की भाषा के अनुसार राग द्वेष न वढे और कुछ करना है तो उसका दिल्ली के नागरिक खुद ही निश्चय करें—इस भावना से आचार्यश्री ने अपने प्रवचन मे मात्र लेख के सैद्धान्तिक मुद्दो का ही स्पष्टीकरण किया, किन्तु यह स्पष्टीकरण इतना प्रभावशाली था कि विचारको ने दोनो आचार्यो का मिलन करा कर मतभेदो का समाधान कराना चाहा । सर्वश्री जैनेन्द्रकुमारजी, राजेन्द्रकुमारजी, राजकृष्णजी जैन, लाला कुदनलालजी पारख, मोहनलालजी कठोतिया की एक समिति गठित

हुई जिसके संयोजक प्रसिद्ध उपन्यास लेखक श्री जैनेन्द्रकुमारजी मनोनीत किये गये । तेरहपंथियो ने बार-बार अडगे लगाए और आमने सामने होने से मना कर दिया । तब समिति के निश्चयानुसार स्थानक-वासियो की ओर से नौ-नौ तथा तेरह पंथियो की ओर से छ प्रश्न समिति को प्राप्त हुए । जिन्हे उत्तरो के लिये दोनो आचार्यो के पास भेजा गया । दोनो ओर से प्राप्त उत्तरो पर समिति ने आठ प्रति प्रश्न बनाकर पुन. दोनो आचार्यो के पास उत्तर के के लिये भेजे । इन सब प्रश्नोत्तरो का पूर्ण विवरण 'दिल्ली-चर्चा' नामक पुस्तक मे प्रकाशित हुआ है ।

साधु तो स्वय महाराजा होता है, वह स्वय चलकर राजभवनो मे क्यो जाय ?

जो ससार के समस्त सबधो एव सम्पत्ति को त्याग कर साधना के पथ पर चल पडता है वही साधु कहलाता है । साधु को महाराज भी इसीलिये कहते हैं कि आत्मार्थी होकर वह राजाओ का भी राजा बन जाता है । ऐसा राजाओ का राजा भला क्यो राज भवनो और प्रासादो मे, सामने चलकर जाय ?

दिल्ली चातुर्मास मे एक दिन आपश्री की सेवा मे दिल्ली श्री सघ के कुछ अग्रणी श्रावक आए और उन्होने निवेदन किया कि कुछ दिन पहले महामहिम राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसादजी से मिलने का अवसर मिला था तो उस समय साधु सतो के उल्लेख के प्रसग मे आपश्री के दिल्ली मे विराजने की जानकारी उन्हे दी गई थी । तब उन्होने आपश्री से मिलने की भावना दर्शाई थी । उन्हे आपश्री के उपदेश श्रवण की आकाक्षा है, अत. आपश्री राष्ट्रपति भवन पधारने की कृपा करावें ।

आचार्यश्री ने उत्तर मे सहज सरलता से फरमाया—मुझे वहा जाने की आवश्यकता प्रतीत नही होती है । राष्ट्रपति महोदय को शासन सबधी बहुत जरूरी कार्य रहते है अत उनके कार्यक्रम मे व्यवधान डालना उचित नही समझता हू । राष्ट्रपतिजी को जब सुविधा होगी और मिलने की इच्छा होगी तब कही पर भी मिल सकेगे । उनको परेशानी मे डालना मेरी दृष्टि मे उचित नही है । यह उत्तर सुनकर श्रावको से कुछ भी कहते नही बना ।

आपश्री के लिये ऐसे प्रसग कई बार आ चुके है जब विभिन्न स्थानो के राजाओ और जागीरदारो की ओर से अपने राजमहलो मे आमत्रित कर वार्तालाप या प्रवचन फरमाने का निवेदन किया गया था । लेकिन लौकिक एषणाओं की कतई आकांक्षा न होने से आपश्री ने राजमहलो मे जाकर व्याख्यान देने की भावना नही रखी । एक बार आपका देवगढ (मेवाड) पदार्पण हुआ । वहा के राव साहब ने राजभवन मे व्याख्यान देने की प्रार्थना की तब आपश्री ने फरमाया—मेरे लिये प्रत्येक स्थान समान है । किसी स्थान विशेष को प्रमुखता देना मुझे अभिरुचिकर नही है । धर्मशाला हो या राजभवन, सभागार हो या मैदान मेरे मन मे कोई भेद नही । आजकल यहा व्याख्यान हो रहे है वह स्थान भी अनुपयुक्त नही है और जब यह स्थान योग्य है तो फिर राजभवन को ही प्रधानता देने मे क्या लाभ ? राव साहब ने फिर आपके कथन को शिरोधार्य कर व्याख्यान स्थल पर आकर ही प्रवचन श्रवण किया ।

नही मानता हू । आपश्री का मार्ग मे पूज्यश्री पृथ्वीचंदजी म. सा से भी मिलन हुआ जिन्होंने साधु सम्मेलन की तैयारिया एव ऐसे ही सम्बधित विषयो पर विचार विमर्श किया । पूज्यश्री पृथ्वीचदजी म सा. के आग्रह से आप दिल्ली पधारने के पहले आगरा पधारे, जहा आपके प्रभावशाली प्रवचन सुनकर वहा के चतुर्विध सघ मे अपार उत्साह फैला ।

दिल्ली के महावीर भवन मे आपश्री के प्रवचन होते थे । महावीर भवन का सभागार विशाल है, फिर भी श्रोताओ की इतनी अधिक उपस्थिति रहती थी कि कई श्रोताओ को बाहर बैठना पडता था । आपश्री सादा जीवन और उच्च विचार के प्रबल समर्थक थे। अत अपने प्रवचनो मे जीवन को सादा, सरल और धर्मानुकूल बनाने के बारे मे बार-बार सकेत देते रहते थे ।

आपश्री के कई प्रवचनो को सुनने के बाद एक ही दिन कई जैन व जैनेतर लोग आपश्री के समक्ष आये और अपनी जिज्ञासा प्रकट करके समाधान मागने लगे—हमारे यहा कुछ दिन पहले आचार्य श्री तुलसी नामक जैन साधुजी आए थे जिनके साथ करीब ५० साधु-साध्वी थे । उनके आगे पीछे कई धनी-मानी लोगो की मोटरे दौड रही थी और कई लारियो मे सामान लदा आ जा रहा था । बडी सख्या मे प्रचारक लोग प्रचार कर रहे थे तथा पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादको से सम्पर्क साध रहे थे । कई राजनेताओ के लिये भी दौड धूप हो रही थी । प्रचार के लिये वे यहा एक कार्यालय भी खोल गये है लेकिन उनके प्रति लोगो मे कोई आकर्षण नही है । दूसरी ओर आप के साथ यह सारा लवाजमा नही है और प्रचार भी नही है फिर भी लोग बडी सख्या मे आपके यहा आते हैं और आपके प्रवचनो से सतुष्ट होकर जाते है । इसका क्या कारण है ?

उस जन समूह की जिज्ञासा का समाधान आचार्यश्री ने जैन धर्म के आचार-विचार मूलक सिद्धान्तों का सही विश्लेपण करके दिया । प्रसगवश आपश्री ने जैन धर्म के सत्य-सिद्धान्तो एव तेरह पथ की भ्रमपूर्ण मान्यताओ का तुलनात्मक विश्लेषण भी समझाया ।

आचार्यश्री के दिल्ली चातुर्मास के समाचार से ही तेरह-पथियो मे घबराहट फैल गई थी । इस कारण उन्होने शुरू मे ही वहा के एक "अमर भारत" पत्र मे आचार्यश्री तुलसी अनुयायी चुरु के श्री शुभकरणजी सुराणा का एक लेख छपवाया, जिसमे आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा पर काल्पनिक आरोप लगाते हुए दभ के साथ आचार्यश्री तुलसी ने मतभेदो का समाधान प्राप्त करने की चुनौती दी गई । लेख की भाषा के अनुसार राग द्वेप न बढे और कुछ करना है तो उसका दिल्ली के नागरिक खुद ही निश्चय करें—इस भावना से आचार्यश्री ने अपने प्रवचन मे मात्र लेख के सैद्धान्तिक मुद्दो का ही स्पप्टीकरण किया, किन्तु यह स्पष्टीकरण इतना प्रभावशाली था कि विचारको ने दोनो आचार्यो का मिलन करा कर मतभेदो का समाधान कराना चाहा । सर्वश्री जैनेन्द्रकुमारजी, राजेन्द्रकुमारजी, राजकृष्णजी जैन, लाला कुदनलालजी पारख, मोहनलालजी कठोतिया की एक समिति गठित

हुई जिसके सयोजक प्रसिद्ध उपन्यास लेखक श्री जैनेन्द्रकुमारजी मनोनीत किये गये । तेरहपंथियो ने बार-बार अडगे लगाए और आमने सामने होने से मना कर दिया । तब समिति के निश्चयानुसार स्थानक-वासियो की ओर से नौ-नौ तथा तेरह पंथियो की ओर से छ प्रश्न समिति का प्राप्त हुए । जिन्हे उत्तरो के लिये दोनो आचार्यों के पास भेजा गया । दोनो ओर से प्राप्त उत्तरो पर समिति ने आठ प्रति प्रश्न बनाकर पुन. दोनो आचार्यो के पास उत्तर के के लिये भेजे । इन सब प्रश्नोत्तरो का पूर्ण विवरण 'दिल्ली-चर्चा' नामक पुस्तक मे प्रकाशित हुआ है ।

साधु तो स्वयं महाराजा होता है, वह स्वयं चलकर राजभवनो में क्यो जाय ?

जो ससार के समस्त संबधो एव सम्पत्ति को त्याग कर साधना के पथ पर चल पडता है वही साधु कहलाता है । साधु को महाराज भी इसीलिये कहते हैं कि आत्मार्थी होकर वह राजाओ का भी राजा बन जाता है । ऐसा राजाओ का राजा भला क्यो राज भवनो और प्रासादो मे, सामने पैरों जाय ?

दिल्ली चातुर्मास मे एक दिन आपश्री की सेवा मे दिल्ली श्री सघ के कुछ अग्रणी श्रावक आए और उन्होने निवेदन किया कि कुछ दिन पहले महामहिम राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसादजी से मिलने का अवसर मिला था तो उस समय साधु सतो के उल्लेख के प्रसग मे आपश्री के दिल्ली मे विराजने की जानकारी उन्हे दी गई थी । तब उन्होने आपश्री से मिलने की भावना दर्शाई थी । उन्हें आपश्री के उपदेश श्रवण की आकाक्षा है, अत: आपश्री राष्ट्रपति भवन पधारने की कृपा करावे ।

आचार्यश्री ने उत्तर मे सहज सरलता से फरमाया—मुझे वहां जाने की आवश्यकता प्रतीत नही होती है । राष्ट्रपति महोदय को शासन सबधी बहुत जरूरी कार्य रहते है अत उनके कार्यक्रम मे व्यवधान डालना उचित नही समझता हू । राष्ट्रपतिजी को जब सुविधा होगी और मिलने की इच्छा होगी तब कही पर भी मिल सकेंगे । उनको परेशानी मे डालना मेरी दृष्टि मे उचित नही है । यह उत्तर सुनकर श्रावको से कुछ भी कहते नही बना ।

आपश्री के लिये ऐसे प्रसग कई बार आ चुके थे जब विभिन्न स्थानो के राजाओ और जागीरदारो की ओर से अपने राजमहलो मे आमंत्रित कर वार्तालाप या प्रवचन फरमाने का निवेदन किया गया था । लेकिन लौकिक एषणाओं की कतई आकांक्षा न होने से आपश्री ने राजमहलो मे जाकर व्याख्यान देने की भावना नही रखी । एक बार आपका देवगढ (मेवाड) पदार्पण हुआ । वहा के राव साहब ने राजभवन मे व्याख्यान देने की प्रार्थना की तब आपश्री ने फरमाया—मेरे लिये प्रत्येक स्थान समान है । किसी स्थान विशेष को प्रमुखता देना मुझे रुचिकर नही है । धर्मशाला हो या राजभवन, सभागार हो या मैदान मेरे मन में कोई भेद नही । आजकल जहा व्याख्यान हो रहे है वह स्थान भी अनुपयुक्त नही है और जब यह स्थान योग्य है तो फिर राजभवन को ही प्रधानता देने से क्या लाभ ? राव साहब ने फिर आपके वचन को शिरोधार्य कर व्याख्यान स्थल पर आकर ही प्रवचन श्रवण किया ।

आपश्री का वि. स २००८ का चातुर्मास अलवर मे तो वि स. २००६ का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ । दोनों स्थानो पर ऐसे प्रसग उपस्थित हुए थे । अलवर मे अलवर नरेश ने वहा के भी सघ के माध्यम से आपश्री को निवेदन कराया कि महलो मे पधार कर हमे दर्शन दें और दो शब्द सुनावें । प्रत्युत्तर मे आपश्री ने फरमाया अलवर नरेश की धर्मभावना और साधु सतो के प्रति आदर भावना सराहनीय है लेकिन मेरे लिये तो राजा और रक सभी समान है । दूसरो के साथ अलवर नरेश भी यहा पर धर्मलाभ ले सकेंगे । आचार्यश्री की भावना का सकेत जब अलवर नरेश को कराया गया तो विजया दशमी के दिन स्वय महावीर भवन में आकर उन्होने प्रवचन श्रवण का लाभ उठाया ।

उदयपुर मे भी ऐसा ही प्रसग उपस्थित हो गया था । महाराणा साहब ने आपश्री के प्रवचन सुनने की इच्छा प्रकट करते हुए राजमहल मे पधारकर व्याख्यान देने का आग्रह किया । सदा की भाति आपश्री ने अपनी मनोभावना का सकेत करवा दिया कि राजमहलो मे व्याख्यान देने को मुख्य मानू ऐसी मेरी कभी भी आकाक्षा नही रही । आजकल जहा व्याख्यान होते हैं वह सार्वजनिक स्थान है और वहा पर किसी के आने जाने पर प्रतिबन्ध नही है । यहा आकर कोई भी व्यक्ति अपनी सुविधानुसार व्याख्यान श्रवण कर सकता है । यह स्थान महाराणाजी के लिये कोई बाधकारी नही है । महाराणा साहब प्रवचन सुनने के लिये उत्सुक थे अत जब आपश्री विहार कर नगर के बाहर विराज रहे थे, वहा आकर उन्होने व्याख्यान श्रवण का लाभ लिया ।

ऐसे स्पष्ट उत्तर वही दे सकता है जो सच्चा साधु होता है, जो मानापमान की अनुभूति से उदासीन होता है और जिसे किसी से कोई आकाक्षा नही होती है । जल-कमलवत् ससार मे रहकर ऐसे आत्मार्थी एव लोकोपकारी साधु निर्लिप्त भाव से विचरण करते है ।

अलवर मे गांठ का आपरेशन और कष्ट सहिष्णुता की पराकाष्ठा :

पहले वि स २००७ का चातुर्मास अलवर मे करने की आपश्री ने स्वीकृति प्रदान की थी किन्तु बडौदा के आसपास विहार करते हुए अचानक आपको मूत्र-कृच्छ रोग हो गया और वह भी अपनी उग्रता की चरम सीमा पर । उस समय योग्य चिकित्सा की दृष्टि से दिल्ली पधारना हो गया और चातुर्मास भी वही पर किया गया । दिल्ली मे चिकित्सा मे रोग का शमन हो गया, किन्तु मूत्राशय मे गाठ पड गई । चू कि अलवर श्री सघ की माग पूरी नही हुई थी अत स २००८ का चातुर्मास अलवर मे किया गया । मार्ग मे रोग पुन उभर आया, किन्तु आपश्री वेदना को समतापूर्वक सहन करते हुए यथा समय अलवर पधार गये ।

चातुर्मास काल मे रोग मे वृद्धि के लक्षण दिखाई देने लगे और पेशाब का भारी कष्ट पैदा हो गया । डाक्टरो ने राय दी कि आपरेशन जितना जल्दी कराया जा सके वह ठीक है वरना जीवन को भी खतरा हो सकता है ।

आपश्री निर्दोष उपचार के लिये तो तैयार थे लेकिन शल्य

चिकित्सा जैसे सदोष उपचार से बचना चाहते थे । इस संबंध मे आपश्री फरमाते—कर्मों की व्याधि का मूल इस आपरेशन से निर्मूल होने वाला नही है । कर्मव्याधि का मूल बहुत गहरा है जिसका उन्मूलन डाक्टर नही कर सकेंगे । हा, शारीरिक व्याधि को मिटाने मे निमित्त हो सकते है अत आपरेशन के बिना काम चलता हो तो चला लेना चाहिये ।

दिनोदिन व्याधि की गभीरता बढती जा रही थी और उसके साथ ही देश के कोने-कोने के श्रद्धालु श्रावको की चिन्ता भी बढती जा रही थी । डॉ मुलगावकर से सम्पर्क स्थापित किया गया और उनकी सम्मति से ऑपरेशन का समय भी निश्चित कर लिया गया । आपरेशन गभीर था । डॉ मुलगावकर अपने चार सहयोगी डॉक्टरो के साथ बम्बई से अलवर आ गये और वहा के सर्जन डॉ. बाबू से मिलकर आपरेशन की तैयारी कर ली गई ।

महावीर भवन के चारो ओर जनमेदिनी का भारी सैलाब जमा हो गया जहा हर चेहरे पर चिन्ता और व्यग्रता दिखाई दे रही थी तो वातावरण मे निस्तब्धता छाई हुई थी । आचार्यश्री को व्याधि की भयकर वेदना थी फिर भी वे शात थे । आपरेशन के लिये जाने से पहले आपश्री ने अपनी भावना व्यक्त करते हुए फरमाया—आज चतुर्विध सघ यहा उपस्थित है । पूर्वोपार्जित असाता वेदनीय कर्म के उदय मे शरीर मे रोग की उत्पत्ति हुई है, जिसे मैं समता पूर्वक सहन करके और तपस्यादि मे प्रवृत्त होकर निर्जरा मार्ग की ओर अग्रसर होना चाहता हू । किन्तु संघ की आज्ञा इसके अनुकूल न होने की स्थिति मे सघ की आज्ञा मानते हुए मैं शल्य चिकित्सा के लिये प्रस्तुत हो रहा हू । ऐसी परिस्थिति मे मुझे क्रिया एव दोषो का लगना अवश्यम्भावी है । इसलिये मैं आपसे निवेदन करता हू कि जब तक मैं इस प्रवृत्ति मार्ग से निवृत्त होकर प्रायश्चित न कर लू और लगे हुए दोषो व क्रियाओ के लिये समुचित दड ग्रहण न कर लू तब तक मुझे वन्दन न करें । स्थिति गभीर है अत. सभी से मैं अन्तर्मन से क्षमा याचना करता हू ।

उस समय जिसने भी आचार्यश्री के इन वचनो को सुना, उसका हृदय द्रवित हुए बिना न रहा । सभी मुक्त कठ से आपश्री की अनुपम कष्ट सहिष्णुता की भूरि-भूरि सराहना कर रहे थे ।

आपरेशन मे आचार्यश्री के शरीर से रक्त काफी बह चला था इसलिये डाक्टर रक्त चढाने की बात करने लगे । उनकी बात सुनकर आपने अपना सुझाव दिया कि यदि जीवन समाप्त हो तो हो किन्तु इस नश्वर शरीर के लिये किसी अन्य व्यक्ति को कष्ट पहुचाना मुझे अभीष्ट नहीं है । डाक्टरगण पहले ही आपश्री की अद्भुत सहनशीलता देखकर विस्मित हो रहे थे और इस बात ने तो उन्हें अधिक आश्चर्य मे डाल दिया । बेहोशी के लिये क्लोरोफार्म सू घे बिना ही आपश्री इतने गभीर आपरेशन के लिये तैयार हो गये थे, तब भी मुख पर वेदना की रेखा तक नहीं दिखाई दी । ऐसी थी आपश्री की कष्ट सहिष्णुता की पराकाष्ठा ।

आपरेशन सपन्न हुआ और डॉ. मुलगावकर ने तेरह तोले की गाठ बाहर निकालकर

दिखाई। धीरे-धीरे घाव भर गया और कमजोरी भी दूर हो गई। यद्यपि आचार्यश्री स्वय दोषो के प्रायश्चित एव दड विधान के ज्ञाता थे फिर भी आपश्री ने पजावी सम्प्रदाय के आचार्यश्री से प्रायश्चित की विधि मगवाई। उन्होने शुद्धिकरण के लिये १२० उपवास का प्रायश्चित वताया, किन्तु आपश्री को यह कम लगा। अत इससे भी भारी चार मास दीक्षा छेद का प्रायश्चित लिया।

"योग्य संगठन के लिये मैं प्रथम होऊंगा, जो आचार्य पद को छोड़ दे":

सगठन विषयक प्रारूप तैयार हो जाने के वाद श्री अ भा श्वे स्था. जैन कान्फ्रेन्स शिष्ट मडल साधु सम्मेलन के वारे मे निश्चित प्रस्ताव लेकर पुन आचार्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। उसने अपने कार्यों का विवरण भी आपको वताया। शिष्ट मडल के प्रयत्नो के लिये अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए आपश्री ने फरमाया—एक समाचारी, एक शिष्य परम्परा तथा एक के हाथ मे प्रायश्चित आदि व्यवस्था और एक आचार्य के नेश्राय मे समस्त साधु-साध्विया साधना करने की भावना रखते हों तो मैं और मेरे नेश्राय मे रहने वाले साधु-साध्वी सघ की एकता के लिये अपने आपको विलीन करने मे सर्व प्रथम रहेंगे।

अलवर श्री सघ के समक्ष आचार्य श्री ने महत्त्वपूर्ण घोषणा की—मुझे किसी सम्प्रदाय विशेष के प्रति मोह, ममता या लगाव नही है। सत जीवन ममता विहीन होना चाहिये, किन्तु अपने कर्तव्य पालन के लिये सम्प्रदाय के अन्दर रहकर कार्य करना पडता है। यदि एक आचार्य की नेश्राय मे एक समाचारी आदि का निर्णय करते हुए सयम साधना के पथ पर चारित्रिक दृढता के साथ अग्रसर होने की स्थिति के योग्य कोई सगठन वनता है तो मैं प्रथम होऊगा जो अपनी आचार्य पदवी को छोडकर सगठन के अधीन चतुर्विध सघ की सेवा करने के लिये सहर्ष तत्पर रहूगा। सघ ऐक्य के प्रति जो निष्ठा पूज्य गुरुदेव श्रीमज्जवाहराचार्य के हृदय मे विद्यमान थी, वही निष्ठा मेरे मानस मे रम रही है।

आपश्री के उपर्युक्त वक्तव्य के पश्चात् स्थानकवासी सतो मे सम्प्रदाय विलीनीकरण और सघ निर्माण की योजनाओ पर चर्चा विचारणा प्रारभ हो गई। किन्तु उस समय सघ ऐक्य के विषय मे दो विचार धाराए चल रही थी। वहुत से आचार्यों के मन मे सदेह था कि सैकडो वर्षों से चले आ रहे सम्प्रदायों का क्या पहले ही चरण मे विलीनीकरण हो सकेगा? अत वे एक साथ कोई वडा कदम उठाने के विरोधी थे। वे चाहते थे कि पहले सभी सम्प्रदायो का अस्तित्व रखते हुए उन्हे सगठित किया जाय। यह परीक्षण सफल हो जाने के वाद एक सगठन की वात सोची जाय। लेकिन कुछ अन्य आचार्य पूर्ण एकता का समर्थन करते थे। उनका अभिप्राय था कि जव श्रावक श्राविकाओ मे एकता की कल्पना मात्र से ही हर्ष प्रकट हो रहा है तो ऐसी अनुकूल परिस्थितियो मे सभी सम्प्रदायो का विलीनीकरण करके एक सगठन वना लेना चाहिये।

उस समय सपूर्ण सघ ऐक्य के लिये योग्य अवसर जानकर कान्फ्रेंस के नेताओं ने

सभी संत मुनिराजों के साथ वार्तालाप करके एवं सबकी सुविधा और स्थिति को देखते हुए दिनांक २७-४-१९५२ ई. तदनुसार वैशाख शुक्ला ३ सं. २००९ से घाणेराव सादड़ी में वृहद् साधु सम्मेलन किये जाने का निश्चय घोषित कर दिया। उस समय कई मुनिराज सम्मेलन स्थल से काफी दूरी पर थे फिर भी संघ ऐक्य के प्रयत्नों में सहयोगी बनने के लिये भीषण गर्मी में भी उग्रता पूर्वक विहार करने लगे। संगठन की भावना उस समय तीव्र रूप से व्याप्त थी अत. सम्मेलन की घोषणा से सभी ओर नवोत्साह फैल गया।

सादड़ी सम्मेलन में सोद्देश्य एकता पर बल और आपश्री श्रमण संघ के नायक निर्वाचित

पूर्व निश्चयानुसार अरावली पर्वत मालाओं की तलहटी में बसे नैसर्गिक सुषमा से युक्त सादड़ी (मारवाड़) कस्बे में दिनांक २७-४-१९५२ को दिन के तीन बजे वृहद् साधु सम्मेलन का शुभारम्भ हुआ। सम्मेलन में भाग लेने के लिये २२ सम्प्रदायों के ५३ प्रतिनिधियों सहित ३४१ मुनि एवं ७६८ आर्याजी पधारे थे। श्रावक-श्राविका वर्ग की उपस्थिति कोई ३५००० हो गई थी।

पूज्यश्री गणेशीलालजी म. सा. सम्मेलन की कार्यवाही को सुव्यवस्थित एवं सुचारु रूप से संचालित करने के लिये शांति-रक्षक निर्वाचित किये गये और प. रत्न श्री मदनलालजी म. सा. आपके सहायक। ये चुनाव सर्वसम्मति से हुए। तदनन्तर विभिन्न मुनिराजों ने संघ ऐक्य के उद्देश्यों पर अपने-अपने विचार व्यक्त किये। एक आचार्य के नेतृत्व में श्रमण संघ की स्थापना की जाय-यह लक्ष्य सर्वानुमति से स्वीकृत हुआ। उसकी पूर्ति के उपायों पर विचार विनिमय होने लगा। सबके दिलों में अत्यधिक उत्साह था। अत. आपश्री ने नव-निर्मित श्रमण संघ में सशर्त सम्मिलित होने की स्वीकृति दे दी। आपश्री ने एकता को उद्देश्य पूर्ण बनाने के प्रश्न पर अधिक बल दिया।

तब प्रश्न उठा कि श्रमण संघ के नाम से समस्त स्था. जैनों के संघ का आचार्य किसे बनाया जाय? आचार्य की योग्यता के संबंध में सब एक मत थे कि आचार्य ऐसा हो जिसके नेतृत्व में शताब्दियों से बिखरा समाज, पृथक्-पृथक् आचार्यों के निर्देशन में चलने वाला साधु-समाज और भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के सम्पूर्ण सत्ता-सम्पन्न आचार्यों को एक सूत्र में आबद्ध कर सके। एक आचार्य की योजना पर स्वीकृति कठिन थी किन्तु आचार्य के नाम का निर्णय लेना उससे भी अधिक कठिन था। अत. इस प्रश्न को सबसे बाद में रखकर अन्य मुख्य-मुख्य प्रश्नों के बारे में सर्वानुमति से निर्णय ले लिये गये।

जब आचार्य के नाम पर विचार होने लगा तो सभी मुनिराजों का ध्यान आपश्री पर केन्द्रित हो गया, पूज्यश्री हस्तीमलजी म. सा. ने श्रमण संघ के आचार्य पद के लिये तब विधिवत् पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का नाम प्रस्तावित करते हुए फरमाया—आपश्री सब गुणों से सम्पन्न हैं। आपमें शास्त्रों पर अगाढ श्रद्धा है, चरित्र की दृढ़ता है तो ज्ञान की अपूर्व

गरिमा है। ऐसे आचार्य के नेतृत्व मे हम सभी ज्ञान दर्शन चरित्र की अच्छी तरह अभिवृद्धि कर सकते हैं। अत आपको श्रमण सघ के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया जाय।

आपश्री को इस प्रस्ताव की पूर्व जानकारी नही थी अत आपने प्रस्ताव समर्थन के बीच मे ही फरमाया—आप सबकी भावना अच्छी है, किन्तु मुझसे बिना पूछे मेरा नाम कैसे रख दिया गया ? मैं तो पहले के भार को भी कम करने की सोच रहा हू ताकि अन्य साधना मे अधिक तल्लीन बन सकू। लेकिन आप लोग तो मुझ पर अधिक भार डालना चाह रहे हैं यह मेरे लिये उपयुक्त नही है। अत इस पद पर किन्ही अन्य मुनिवर को प्रतिष्ठित करें।

प्रतिनिधि मुनिवरो की तरफ से आपश्री को प्रार्थना की गई कि आचार्य पद का चयन सभी मुनिवरो की भावना पर निर्भर है। इसमे पहले पूछने जैसी कोई बात नहीं है। हम समग्र सत आपश्री को ही नेतृत्व का समर्पण करना चाहते हैं, अत इसे अगीकार करें। बाद मे पूज्य श्री हस्तीमलजी म सा द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ। तब भी आपश्री ने अपनी वृद्धवय एवं रुग्ण शारीरिक स्थिति का उल्लेख करते हुए यह उत्तरदायित्व अन्य योग्य, ज्ञानवृद्ध एव उत्कृष्ट सयमी महात्मा को सौपने का पुन आग्रह किया। इस पर मुनिश्री सौभागमलजी म सा ने सुझाव दिया कि पजाबी सम्प्रदाय के पूज्य श्री आत्मारामजी म सा माने हुए महान् साहित्य मनीषी सत हैं अत उन्हे सिर्फ सम्मानार्थ आचार्य पद दिया जाय और कार्य करने को समग्र सत्ता तथा अधिकार पूज्यश्री गणेशीलालजी म. सा के पास रहे जिसका निश्चय हो ही चुका है। इस सुझाव पर चर्चा हुई कि एक आचार्य की योजना के स्थान पर यह दो आचार्यों का निर्वाचन कैसा ? एक प्रतिनिधि सत ने समाधान बताया कि जैसे आजकल राजनीति मे महाराजा प्रमुख और राज प्रमुख के पद चल रहे हैं उसी प्रकार यहा पर भी आचार्य एव उपाचार्य के पद बनाये जा सकते हैं। पूज्यश्री गणेशीलालजी म. सा तब भी इतने बडे उत्तरदायित्व का भार लेने के लिये सहमत नही हुए और उधर मुनिवरो के सामने दूसरा कोई विकल्प नही था। उस समय रात्रि काफी बीत चुकी थी अत चर्चा पुनर्विचार के लिये दूसरे दिन हेतु स्थगित कर दी गई।

दूसरे दिन बडे सवेरे से प्रमुख सत व्यक्तिगत रूप से आपश्री से मिलकर पदस्वीकृति का आग्रह करते रहे। जब विधिवत् कार्यवाही प्रारभ हुई तो सर्वप्रथम उपाध्याय कविरत्न श्री अमरचन्दजी म सा ने समस्त प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से आपश्री के प्रति भावभीनी श्रद्धा अर्पित करते वक्तव्य दिया—

"मैं दो वर्षों से पूज्यश्री के परिचय मे आया हू। आगरा और देहली मे, मुझे चरण सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। मैंने सुन रखा था कि पूज्यश्री चट्टान की तरह कठोर हैं व अनुशासन मे पूरे कडक कदम उठाते हैं। परन्तु प्रत्यक्ष दर्शन करने और सेवा मे रहने का प्रसग आने पर मुझे अनुभव हुआ कि अनुशासन के नाते जितने कठोर हैं, उससे ज्यादा नरम एव उदार भी हैं। हमने आचार्य श्री आत्मारामजी म को नियत किया है परन्तु

शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा न होने के कारण वे एक स्थान में ही केन्द्रित हैं । उनकी साहित्य-सेवा से सघ ऋणी है । इसी हेतु से उनके प्रति श्रद्धा एव सद्भावना प्रकट की गई । परन्तु हमारे विराट् सघ को अनुशासित करने के लिये योग्य आचार्य की आवश्यकता है जो साधु-साध्वी और श्रावक-सघ में श्रद्धा एवं प्रेम की लहर पैदा कर सके । हम देखते आ रहे हैं कि छोटे-मोटे साधुओ के आचार्य चुने जाते हैं, उसमे भी एकाध व्यक्ति अड़े रहते हैं । परन्तु हम तो अखिल भारत वर्ष के लिये आपको सर्वानुमति से नियत कर रहे हैं । मुनि मडल आपके अनुशासन की आवश्यकता महसूस करता है अत. मैं निवेदन करूंगा कि आप हमारी तुच्छ प्रार्थना को जरूर स्वीकार करेंगे ।

"आपके पीछे फौज तैयार है । आप जो भी आज्ञा प्रदान करेंगे, हम उसे मूर्तरूप देंगे । बहुत दिनो का बिछुड़ा हुआ सघ मिलता है तो कठिनाई जरूर आ सकती है, परन्तु आचार्यश्री ! ऊंची-नीची भावनाओ को परखने वाले भी हैं और आपके कार्य भार को संभालने के लिये मन्त्रीमण्डल रहेगा । वह व्यवस्थित रूप मे सारा कार्य सभालेगा । अत मैं आचार्यश्री से प्रार्थना करता हू कि वे उपाचार्य पद को स्वीकार कर लें ।"

प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से जब उपाध्याय श्री अमरचन्दजी म उक्त वक्तव्य दे चुके तो सबके चेहरों पर मन्द मुस्कान मुखरित हो उठी । पूज्य आचार्यश्री जी भी उस प्रेममय वातावरण से अपने आपको अलिप्त नही रख सके और सब मुनियरों के प्रेमभरे आग्रह और सहयोग के आश्वासन को मान देकर श्रमण सघ के नेतृत्व को सुशोभित करने के लिये आपने अपनी स्वीकृति प्रदान की ।

जब पूज्य आचार्यश्री जी अपनी स्वीकृति फरमा चुके तो सब मुनिवरो की ओर से मरुधर केशरी श्री मिश्रीमलजी म ने पूज्य आचार्यश्रीजी म. सा की सेवा मे अभिनन्दन अर्पित करते हुए निम्नलिखित वक्तव्य दिया—

"अत्यन्त खुशी का समय है कि अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन समाज के लिये सर्व-सम्मति से आचार्य का चुनाव हो गया । सादडी के लिये हम लोग रवाना हुए और यहां तक पहुंचे, तब तक लोग यही कहते थे कि महाराज दिन पूरे क्यों करते हो…'किन्तु शासनदेव की कृपा से कहिये या विकास और सगठन का समय पक चुका, इस कारण कहिये आज हम सर्वसम्मत होकर सहर्ष आचार्य की नियुक्ति कर सके हैं । विशेष प्रसन्नता की बात यह है कि जैन जगत् के चमकते सितारे पूज्यश्री गणेशीलालजी म ने इस को स्वीकार करके हमे कृतार्थ किया है । एतदर्थ मुनिमण्डल की ओर से उन्हें कोटिश. धन्यवाद प्रदान करता हूं ."

इस प्रकार आह्लादमय वातावरण मे चुनाव का कार्य सम्पन्न हो गया ।

निर्वाचन कार्य की सम्पन्नता के पश्चात् निम्नांकित प्रस्ताव पारित किया गया—

"आचार्य पद की चादर की रस्म वैशाख शुक्ला १२ स २००९ बुधवार को दिन

के ११ वजे अदा की जावेगी । इसके पूर्व सर्वमुनि अपने हस्ताक्षरित प्रतिज्ञा पत्र तैयार रखेंगे जो आचार्य पद पर विराजते ही आचार्य श्री के चरणो मे भेंट कर देंगे ।"

तदनन्तर अन्यान्य व्यवस्थाओ के लिये मत्री–मडल के १६ सदस्यो का चुनाव हुआ जिसमे प्रधानमत्री प मुनि श्री आनन्द ऋषिजी म सा चुने गये तथा अन्य १५ प्रमुख सतो को सहमत्री चुना गया और सबके कार्य निश्चित कर दिये गये ।

सम्मेलन के अवसर पर श्री अ. भा श्वे स्था जैन कान्फ्रेन्स का अधिवेशन भी श्री फिरोदिया जी की अध्यक्षता मे हुआ । श्रावक–श्राविकाओ की ओर से श्री फिरोदिया जी सम्मेलन की कार्यवाही मे दर्शक के रूप मे उपस्थिति रहते थे ।

वैशाख शुक्ला १३ को यथा समय श्री लोकाशाह जैन गुरुकुल के विशाल प्रागण मे आचार्य पद की चादर समर्पित करने का समारोह आयोजित किया गया । पूर्व निश्चयानुसार समर्पण के वाद सभी उच्चकोटि के सतो, आचार्यों, उपाध्यायो, प्रवर्तको आदि ने अपनी पदवियां सघ ऐक्य के हित मे "छोडते हुए स्व हस्ताक्षरित प्रतिज्ञापत्र आपश्री की सेवा मे भेंट किये। यह एक ऐतिहासिक अवसर था । सदियो पुराने भेदभाव को मिटाकर अपनत्व की भावना का इस प्रकार विस्तार हुआ था । परस्पर वन्दना और सत्कार करने मे दिखाई देने वाले सकोच को स्वय हमारे चरित्र नायक ने अपने विनय, स्नेह एव सौजन्य से दूर किया । आपश्री ने सघ ऐक्य के सवध मे अपने निजी विचारो पर भी विशद रूप से प्रकाश डाला और विभेद के कारणो को दूर करने के लिये प्रत्येक पूर्व सम्प्रदाय मे एक दूसरे सप्रदाय के मुनिराजो का सयुक्त चातुर्मास करने की अपील की । आपश्री ने स्वय यह आदर्श प्रस्तुत किया । अपने वि. स २००९ के चातुर्मास मे अपने साथ सह मत्री श्री प्यारचदजी म. सा (जो जैन दिवाकर श्री चौथमलजी म. सा के शिष्य थे) का चातुर्मास भी कराया । सघ ऐक्य के वातावरण मे उदयपुर श्री सघ का अभूतपूर्व उत्साह रहा ।

सोजत सम्मेलन मे मंत्री–मंडलीय निर्णय एवं जोधपुर मे संयुक्त चातुर्मास :

सघ अवस्था मे परिमार्जन एव सगठन को प्रगतिशील वनाने के लिये मंत्रीमडल की वैठक करना आवश्यक समझा गया । अत अधिकारी मुनिवरो के परामर्श के अनुसार चातुर्मास समाप्ति के वाद सोजत नगर (जि. पाली) मे दिनाक १७-१-१९५३ मिती माघ शुक्ला २ स २००९ को मत्री मडल की वैठक आयोजित हुई । वैठक सचिताचित निर्णायक समिति के ६, तिथि निर्णायक समिति के ८, मत्रीमडल के ११ एव अन्य प्रतिनिधि सतो के अतिरिक्त विशेष रूप से आमत्रित प. मुनिश्री समरथमलजी म सा प, मुनिश्री मदनलालजी म सा एव कवि मुनिश्री अमरचदजी म सा उपस्थित थे । प्रतिदिन दोनो समय पूज्य आचार्यश्री की अध्यक्षता एव प मुनिश्री मदनलालजी म. सा की शाति रक्षकता मे मत्रीमडल तथा निर्णायक समितियों की कार्यवाही सयुक्त रूप से चली । प्रत्येक विचारणीय विषय पर गुणावगुण की दृष्टि से खुलकर विचार विमर्श हुआ । सचिताचित निर्णय और ध्वनि विस्तार यत्र को लेकर समाज में

खूब ऊहापोह चल रहा था जिसका समाधान जरूरी था। कुछ और भी ऐसे प्रश्न शेष रह गये थे, जिनका शास्त्रीय दृष्टि से निर्णय लेना था। इसलिये सोचा गया कि आपश्री के नेतृत्व मे कवि श्री अमरचदजी म सा, प श्री मदनलालजी म सा, सहमंत्री श्री हस्तीमलजी म सा प्रधानमत्री श्री आनन्दऋषिजी म सा एवं प रत्नमुनिजी श्री समरथमलजी म सा का सयुक्त रूप से आगामी चातुर्मास किसी एक स्थान पर किया जावे और उन सभी प्रश्नो पर निर्णयात्मक चर्चा करके चतुर्विध सघ के समक्ष निर्णय रख दिये जावे।

इस मत्री–मडलीय सम्मेलन मे कुल ३३ विषयो के सबध मे महत्त्वपूर्ण निर्णय किये गये जिसमे से २५ निर्णयो को चतुर्विध सघ की जानकारी के लिये यथा समय घोषित कर दिया गया। सम्मेलन दिनाक ३०-१-५३ को समाप्त हुआ।

सम्मेलन के अवसर पर विभिन्न श्री सघो ने पूज्य उपाचार्यश्री से अपने-अपने क्षेत्र पावन करने की विनतिया की। उनमे ब्यावर श्री सघ भी एक था। उसने अपनी विनती का प्रमुख कारण यह निवेदित किया कि ब्यावर का सामाजिक विरोध सगठन मे चट्टान की तरह बाधक बन रहा है। अत आपश्री का पुण्य पदार्पण हमारे लिये मगलमय होगा। आपश्री ने ब्यावर मे धधक रही ईर्ष्या–द्वेष की आग को शात करने की भावना से श्रीसघ का आग्रह स्वीकार कर लिया। आपश्री के उन क्षेत्रो मे पधारने से स्थान स्थान पर कषायमय वातावरण समाप्त हुआ और सामाजिक प्रेम तथा सामजस्य की स्थापना हुई। जब आपश्री मेडता पधारे तो जोधपुर का श्रावक सघ स. २०१० का सयुक्त चातुर्मास अपने यहा कराने की प्रार्थना लेकर आपश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ।

प्रार्थना स्वीकृत हुई एव तदनुसार पूज्य उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा, प्र म श्री आनन्दऋषिजी म सा, वयोवृद्ध स्वामी श्री पूरणमलजी म सा., व्या वा मुनिश्री मदनलालजी म सा, कविरत्नश्री अमरचदजी म सा, सहमंत्री श्री हस्तीमलजी म सा आदि ठाणा २८ एव महासतियाजी म सा ठाणा ६२ का चातुर्मास जोधपुर मे हुआ। प. रत्न बहुश्रुत मुनिश्री समरथमलजी म सा का चातुर्मास भी वही कराया गया।

चातुर्मास काल में शास्त्रीय चर्चाएं हुई और विवादास्पद विषयो का मंथन हुआ। चतुर्विध श्री सघ ने जिस उत्साह और एकता का परिचय सादडी सम्मेलन में दिया, वह सोजत सम्मेलन मे कम दिखाई दिया तो यहा बहुत ही कम। कभी–कभी ऐसा लगने लगा कि औपचारिकता का निर्वाह करने के लिये यह सब कुछ हो रहा है। सत-मुनिवरो मे भी उत्साह मद दिखाई दिया। इस वातावरण मे उलझनें, सुलझने के बजाय उलझती ही गई और किसी प्रकार की निर्णयात्मक भूमिका नही बन सकी। इसका यह अभिप्राय नही कि सयुक्त चातुर्मास असफल हुआ। इस समय आपश्री के तलस्पर्शी शास्त्रीय दृष्टिकोण तथा कुशल नेतृत्व के दर्शन हुए तो सतो मे पारस्परिक प्रीतिभाव की भी वृद्धि हुई। दृष्टिकोणो के प्रति मतभेद था किन्तु मनभेद नही था।

समग्र परिस्थितियो पर सूक्ष्म दृष्टि डालते हुए अन्ततोगत्वा यह निश्चय किया गया

कि एक ओर वृहद् साधु सम्मेलन का आयोजन किया जाय । जैन कान्फ्रेन्स के नेताओ ने इस सबध मे अपने प्रयत्न शुरू कर दिये ।

सयुक्त चातुर्मास–समाप्ति के पश्चात् मिगसर कृष्णा एकम को आचार्य श्री जी का नागौर आदि क्षेत्रो की ओर विहार हुआ । इस क्षेत्र के गोगोलाव, ब्यावर, कुचेरा, बीकानेर आदि सभी सघ अभी से आगामी वर्ष के चातुर्मास के लिये कुछ-न-कुछ आश्वासनात्मक सकेत प्राप्त करने के लिये विनती करने लगे । लेकिन अभी चातुर्मास पूर्ण ही हुआ था और भविष्य की स्थिति भावी के अधीन थी, अत अभी से किसी को भी सकेत देने की स्थिति नही बन सकी।

लेकिन कुचेरा श्री सघ के अग्रणी श्रावक स्व सेठ श्री इन्द्रचन्दजी गेलडा की धर्मप्रेम की हार्दिक इच्छा थी कि पूज्यश्री जी का आगामी चातुर्मास कुचेरा हो । उक्त आग्रह को लेकर समय-समय पर कुचेरा श्री सघ के अग्रणी सेठ श्री मोहनमलजी चोरडिया, श्री भागचन्द गेलडा आदि प्रमुख सज्जन पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित होते रहे थे ।

स्थिति और समयादि को देखते हुए पूज्य आचार्य श्री जी म. सा ने स २०१ का चातुर्मास कुचेरा करने की स्वीकृति फरमाई और यथावसर पूज्यश्री जी ने चातुर्मास हेतु पदार्पण किया । आपश्री के साथ ही स्थविरपद विभूषित मुनिश्री हजारीमलजी म सा जो पूज्यश्री जयमलजी म सा की सम्प्रदाय के थे, का भी कुचेरा चातुर्मास हुआ ।

अधिकारी मुनिवरो के सोजत-सम्मेलन और जोधपुर-चातुर्मास मे हुई कार्रवाई चतुर्विध सघ को ज्ञात हो चुकी थी । सघ-ऐक्य योजना पर एक आवरण-सा पडता जा रहा था । अब विचारो से आगे कोई बढना नही चाहता था और एक प्रकार से गतिरोध की स्थिति बन चुकी थी ।

चातुर्मास काल मे ही कान्फ्रेन्स की जनरल कमेटी की बैठक कुचेरा मे हुई । पुन वृहत्साधु-सम्मेलन का आयोजन करने के लिये कान्फ्रेन्स की ओर से प्रयत्न हो रहे थे । श्रमणसघ की प्रगति मे उत्पन्न अवरोधो का निराकरण ऐसे सम्मेलन द्वारा ही हो सकता था । पहले चातुर्मास के अवसर पर सम्मेलन होने की भूमिका बन चुकी थी, लेकिन अब सिर्फ उपयुक्त स्थान के चयन का ही प्रश्न था कि सम्मेलन कहा किया जाये ? कान्फ्रेन्स का शिष्टमण्डल एतद्‌विषयक विनती लेकर पूज्य आचार्य श्री जी की सेवा मे उपस्थित हुआ और निवेदन किया भगवन् ! आगामी वृहत्साधु–सम्मेलन के लिये कौन–सा स्थान उपयुक्त रहेगा ?

पूज्य आचार्यश्री जी ने फरमाया—जोधपुर मे सम्मेलन के स्थान के बारे मे विचार-विनिमय हुआ था । उस समय मैंने अपने विचार व्यक्त किये थे कि मेरे सान्निध्य मे सम्मेलन सम्बन्धी तीन कार्य हो चुके हैं, इसलिये आगामी वृहत्साधु-सम्मेलन लुधियाना के क्षेत्रो मे पूज्यश्री आत्मारामजी म के सान्निध्य मे होना उपयुक्त रहेगा । आज भी मेरे वही भाव है ।

पूज्य आचार्य श्री जी के विचारानुसार कान्फ्रेन्स की जनरल कमेटी ने लुधियाना

बृहत्साधु-सम्मेलन होने का निश्चय कर वहा के सघ को सम्बन्धित जानकारी दी। लुधियाना सघ ने सम्मेलन के लिये कान्फ्रेन्स को आमन्त्रण भेज दिया और वहा बृहत्साधु-सम्मेलन होना निश्चित हो गया।

इन्हीं दिनो के आसपास कान्फ्रेन्स के तत्कालीन अध्यक्ष सेठ श्री चम्पालाल जी बाठिया पूज्य आचार्य श्री जी के दर्शनार्थ पुन कुचेरा पहुचे। वार्तालाप के प्रसग मे सम्मेलन-सम्बन्धी चर्चा भी हुई। अध्यक्ष महोदय ने कहा कि और होगा ? इस पर आचार्यश्री जी ने फरमाया कि मैं चाहता हू कि लुधियाना पहुचू, लेकिन यह भावी के अधीन है, उस समय तक कौन जाने क्या बने। पहुचना तो इस शरीर से होगा। यह शरीर कुछ शिथिल हो रहा है। घुटनो और पैरो मे पीडा रहती है। इस अशक्तिवश यथासमय लुधियाना, पहुच सकू या न पहुंच सकू, कुछ निश्चित कह नही सकता। मैं न भी पहुच सकू, किन्तु मेरी ओर से कुछ सन्त लुधियाना पहुच ही जायेंगे। अन्य प्रमुख मुनिवर वहा पहुचेंगे ही, उन्हें समस्त कार्रवाई और विचरणीय विषय ज्ञात हैं। सादडी-सम्मेलन मे उद्देश्य निश्चित हो चुका है और अब तो उसमे रही हुई कमियो को दूर कर असली रूप देना है।

अध्यक्ष महोदय को यह परिस्थिति विचारणीय प्रतीत हुई। उन्होंने मन्त्री मुनिवरो की सेवा मे सूचना भेजी और समस्त स्थिति सामने रखी। साथ ही पथ-प्रदर्शन के लिये प्रार्थना की कि हमे क्या करना चाहिये और सम्मेलन कहा करना चाहिये। कान्फ्रेन्स-कार्यालय को भी सम्बन्धित जानकारी दी कि आचार्य श्री जी लुधियाना-सम्मेलन मे पहुच सकेंगे या नही, यह सन्देहास्पद है।

समाज के प्रमुख-प्रमुख श्रावको, कार्यकर्ताओ का एक शिष्टमण्डल इस परिवर्तित परिस्थिति पर मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु पूज्यश्री आत्मारामजी म सा की सेवा मे उपस्थित हुआ और प्रार्थना की—भगवन् ! आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा शरीर के कारण आपकी सेवा मे उपस्थित होने मे असमर्थ है। यह सम्मेलन मे सम्मिलित न हो सकें तो क्या करना उचित होगा ?

पूज्य श्री आत्मारामजी म सा भद्र, सरल स्वभावी थे। उन्होंने फरमाया—आज तक सम्मेलन का सचालन सफलता के साथ आचार्यश्री गणेशलालजी म सा करते आये हैं। उन्हें सम्पूर्ण कार्रवाई का प्रत्यक्ष अनुभव है और किसी परिस्थिति से अपरिचित नही हैं, अतएव सम्मेलन में उनकी उपस्थिति आवश्यक है। साधु-सम्मेलन होना गुरुतर कार्य है। अतएव सघ नेतृत्व के सर्वाधिकार सम्पन्न अधिकारी जहा भी सुगमता पूर्वक पहुच सकते हो, वहीं सम्मेलन होना चाहिये। मैं स्वय नही पहुच सकू गा तो मेरी सद्भावनायें अवश्य वहां रहेंगी। सघ-सगठन का आदर्श फलित हो, यह मेरी आकांक्षा है।

इस प्रकार दोनो महापुरुषो ने विचार व्यक्त किये थे। यद्यपि दोनो महापुरुषों की उपस्थिति सम्मेलन में नूतन चेतना का सचार करती और सगठन को अपूर्व बल प्राप्त होता,

मगर दोनो की वृद्धावस्था और शारीरिक दुर्बलता से ऐसा होना सम्भव नही दिख रहा था। अत. सम्मेलन के आयोजको के समक्ष एक जटिल समस्या उत्पन्न हो गई। सम्मेलन होना आवश्यक था, किन्तु करें तो करें कहा ?

मन्त्री मुनिवरो से इसके समाधान के लिये राय पूछी गई। उनकी राय हुई कि दोनों पूज्यश्री सम्मेलन के अवसर पर उपस्थित हो तो सर्वोत्तम है। लेकिन, ऐसी परिस्थिति तो सर्वांशत आवश्यक है ही। पूज्यश्री आत्मारामजी म. सा अपने सघ मे सम्माननीय स्थिति के स्वामी हैं और आचार्य श्री गणेशलालजी म सा का सघ-सचालन एव अनुशासन पालन करवाने आदि का दायित्व व श्रमणसघ सम्बन्धी अनुभव मूल्य रखता है। ऐसी स्थिति मे पूज्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त करके आचार्य श्री जी के सान्निध्य मे सम्मेलन करना ही उपयुक्त होगा।

इन विचारो को साथ लेकर कान्फ्रेन्स का शिष्टमण्डल कुचेरा मे पूज्य आचार्यश्री जी की सेवा मे उपस्थित हुआ और प्रार्थना की कि पूज्यश्री आत्मारामजी म सा. ने फरमाया है कि आपश्री जहा पर उपस्थित हो सकें वही पर सम्मेलन करना उपयुक्त होगा। अत आपश्री कितनी दूर और कितने समय मे पधार सकेंगे, इसका कुछ आभास हो जाये तो उसी स्थान पर सम्मेलन करने का सोचा जाये।

आचार्यश्री ने प्रत्युत्तर मे फरमाया कि मैं इस समय क्या कहू, मेरे शरीर की स्थिति प्रत्यक्ष है। घुटनो मे दर्द और कमजोरी विशेष प्रतीत होती है। इसलिये इस स्थिति मे निश्चित स्थान का निर्णयात्मक उत्तर कैसे दे दू।

शिष्टमण्डल ने निवेदन किया कि आपश्री वहा से शनै शनै विहार कर भीनासर तक तो पधार ही जायेंगे। उपचार की दृष्टि से भीनासर, बीकानेर आदि क्षेत्रो की अपेक्षा अन्य कोई स्थान योग्य प्रतीत नही होता है। उधर का सूखा जलवायु स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा है भीनासर, बीकानेर आदि क्षेत्रो का इसके लिये आग्रह भी अधिक है। अत आगामी वृहत्साधु-सम्मेलन भीनासर मे हो, ऐसी हम लोगो की भी राय है। इसलिये आपश्री भीनासर में वृहत्साधु-सम्मेलन होने की घोषणा फरमाकर साधु-मुनिराजो को सूचना करवाने की कृपा करें।

पूज्य आचार्य श्री ने प्रत्युत्तर मे फरमाया कि वृहत्साधु-सम्मेलन आचार्यश्री आत्माराम जी म के समीप हो आदि इस विषयक अपने विचार मैं पहले व्यक्त कर चुका हूं। इस समय भी वैसे ही विचार रखता हू। फिर भी आप आचार्य श्री आत्माराम जी म व अन्य अधिकारी मुनिवरो के अभिप्राय को लेकर पुन यहा उपस्थित हुए हैं और अधिकारी मुनिवर भी मेरी उपस्थिति अनिवार्य समझते हैं, सो ज्ञात हुआ। लेकिन मैं अपने पूर्व के विचारानुसार मेरे सान्निध्य मे वृहत्साधु-सम्मेलन होने की घोषणा करना उपयुक्त नही समझता। पर यह अवश्य कहता हूं कि संत-सगठन सर्वतोभावेन सुदृढ बने। उसके निर्णयो का उसी रूप मे अनुपालन हो। प्रत्येक सन्त सयम, तप-त्याग का ध्यान रखवाये। तभी सघ सगठन सबल, प्राणवान और सफल हो सकेगा। अत यह विषय अधिकारी मुनिवरो के उत्साह पर निर्भर है।

शिष्टमण्डल भी इस स्थिति को समझता था। साथ ही स्थिति की गम्भीरता का

तकाजा था कि वर्तमान परिस्थिति के समाधान के लिये पुन साधु-सम्मेलन का आयोजन हो जाना चाहिये । शिष्टमण्डल ने पुन मन्त्री मुनिवरो आदि से विचार-परामर्श कर प्रधानमन्त्री श्री आनन्दऋषिजी म सा द्वारा भीनासर मे बृहत्साधु-सम्मेलन करने की घोषणा करवाई।

कुचेरा चातुर्मास पूर्ण करके वि स २०१२ के चातुर्मास हेतु आपश्री का बीकानेर पधारना हुआ । वहां प्रारंभ मे कुछ मूढ जनो ने वातावरण को कलुषित बनाने की कोशिश की किन्तु आपश्री गणेश से महादेव बन गये और सारा गरल पूर्ण क्षमा के साथ पी गये । इस पर सारा वातावरण तुरन्त ही शांतिपूर्ण बन गया ।

भीनासर मे विचार मंथन, महत्वपूर्ण निर्णय एवं उनको क्रियान्वित करने के कदम :

अब तक यद्यपि एक आचार्य के नेश्राय मे समस्त साधु-साध्वी वर्ग ने निष्ठा व्यक्त की थी । फिर भी पूर्ववत् अलग-अलग सिंघाडो की परिपाटी बराबर चल रही थी । अधिकाश संत इस परम्परा का उन्मूलन करने का साहस नही पा रहे थे । इसके अलावा सचित्ताचित्त-निर्णय, ध्वनि विस्तारक यंत्र और एक संवत्सरी के प्रश्न ऐसे जटिल बन गये थे कि जिनका सर्वमान्य निर्णय कठिन दिखाई दे रहा था । ध्वनि विस्तारक यंत्र के प्रश्न को लेकर तो कुछ श्रावको ने आंदोलन जैसा ही छेड दिया था । किन्ही मुनियो की स्खलना संबंधी घटनाए भी छिपाई जा रही थी और शिथिलाचारी साधु किसी न किसी प्रकार अपनी मान प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिये अपने-अपने पूर्व सम्प्रदाय के श्रावको को भडकाते रहते थे । इन सब कारणो से सादडी मे निर्मित श्रमण संघ का ढाचा दिनोदिन चरमराता जा रहा था ।

यह सारी विषम स्थिति आपश्री के ध्यान मे थी तथा ऐसी स्थिति में सम्मेलन की सफलता भी संदिग्ध दिखाई देती थी । तदपि शुभ उद्देश्यो को सामने रखकर चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् भीनासर मे होने वाले बृहद साधु सम्मेलन की तैयारिया प्रारंभ हो गई ।

सम्मेलन के पहले मुनिवरो ने अपने-अपने सिंघाडे के हिसाब से प्रतिनिधियो का चुनाव किया जिसके अनुसार २२ सिंघाडो के ५२ प्रतिनिधि चुने गये । सम्मेलन मे प्रतिनिधियो के अतिरिक्त उस समय वहा उपस्थित १३५ संत तथा १४७ सतियो के भी दर्शक के रूप में विराजने की व्यवस्था की गई । इस अवसर पर जैन कान्फ्रेन्स का स्वर्ण जयन्ति अधिवेशन भी श्री विनयचंद भाई दुर्लभजी जोहरी की अध्यक्षता मे आयोजित हुआ ।

मंगलाचरण और प्रारंभिक वक्तव्य के पश्चात् साधु सम्मेलन मे संबंधित प्रश्नो पर विचार विमर्श प्रारम्भ हुआ । किन्तु वातावरण मे आवश्यक उत्साह का अभाव दिखाई दे रहा था । अधिकांश मुनिवर शास्त्रीय दृष्टिकोण की अपेक्षा अपने-अपने दृष्टिकोणो का आग्रह अधिक कर रहे थे । सम्मेलन मे विचार मंथन के बाद संबंधित विषयो पर जो महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये उनमें से एक दो निर्णय दिये जा रहे है ।

ध्वनि-विस्तारक यंत्र विषयक—इस यंत्र के उपयोग के संबंध मे दोनों प्रकार की

विचार धाराए थी । दोनो पक्ष इस सम्मेलन मे सामने आ गये । शास्त्रीय परम्परा वाले विद्युत् को अग्निकाय के अन्दर मानते हैं । इसके शास्त्रीय प्रमाण हैं, किन्तु दूसरा पक्ष भावना को गौण रखकर ग्रह से काम लेने लगा, जिससे वातावरण क्षुब्ध हो उठा । चर्चा विचारणा के वाद निम्न प्रस्ताव रखा गया जो इस प्रकार है —

"ध्वनि वर्द्धक यत्र मे बोलना मुनि धर्म की परम्परा नही है । यदि अपवाद मे बोलना पडे तो उसका प्रायश्चित लेना होगा । किन्तु स्वच्छन्द रूप से ध्वनि वर्द्धक यत्र का उपयोग नही करना चाहिये" ।

इस प्रस्ताव पर उपा श्री हस्तीमलजी म सा., प मुनिश्री पन्नालालजी म. सा, प मुनिश्री नानालालजी म सा (वर्तमान आचार्यश्री) तटस्थ रहे और प मुनिश्री लालचदजी म सा ने विरोध मे मत दिया । अत प्रस्ताव सर्वानुमति से न होकर एक मत के विरोध से स्वीकृत हुआ । प्रस्तावगत शास्त्रीय शब्दो का यह सकलन कि ध्वनिवर्द्धक यत्र का प्रयोग मुनि धर्म मे नही है, उसके प्रयोग का उत्सर्ग मे निषेध, अपवाद मे अनिवार्य प्रायश्चित आदि से सूर्यालोक की तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्युत् को सभी ने सचित्त मानकर ही यह प्रस्ताव पारित किया है । अत अब इसे किसी के द्वारा अचित्त मानने या कहने का प्रश्न तो अवशेष नही रह जाता ।

इनके अलावा एक प्रस्ताव और पारित किया जो इस प्रकार था—

"श्री वर्द्ध स्था जैन श्रमण सघ के उपाचार्य श्री (हमारे चरित्र नायक) पर जो अनर्गल मिथ्या एव अशोभन आक्षेप किये गये हैं उनको उपाचार्यश्री जी महाराज ने जिस गभीरता, शाति एव उदारता से सहन किया, इसके लिये समस्त प्रतिनिधि मुनि-मडल अपनी हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित करता है और इस आदर्श कार्य को अनुकरणीय समझता है ।"

सम्मेलन ४ अप्रेल १९५६ ई को समाप्त हुआ ।

आपश्री ने इस स्थिति का सवके सामने स्पष्ट विश्लेषण कर दिया था कि सादडी सम्मेलन के समय का सगठन के प्रति अव उत्साह नही है और व्यक्तिगत प्रभाव प्रदर्शित करने तथा शास्त्रीय मर्यादाओ का सुविधानुसार उपयोग करने की प्रवृत्ति वढ रही है जो श्रेयस्कर नही है । आपश्री ने स्पष्ट कर दिया कि निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा के सिवाय मेरा कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नही है और मैं सिर्फ उसकी सुरक्षा का प्रयास कर रहा हू । इतना होने पर भी अगर शुद्धता खडित हुई तो सहयोग देना योग्य नही है ।

इस अवसर पर पूज्यश्री आत्मारामजी म सा. एव पूज्यश्री गणेशीलालजी म. सा. की दीक्षा के ५० वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष मे दीक्षा स्वर्ण जयन्ति महोत्सव व्याख्यान और त्याग प्रत्याख्यान के रूप मे मनाया गया । सम्मेलन समाप्त हो जाने के पश्चात् जैसी भी परिस्थितिया थी, आपश्री ने निर्णयो को कार्यान्वित करने के लिये कदम उठाए । क्योकि आपश्री श्रमण सघ को अखड, एक एव सुदृढ संगठन के रूप में देखना चाहते थे । उस समय स्थविर मुनिश्री

पूरणमलजी म. सा. की सेवा के लिए जोधपुर मे सत व्यवस्था की समस्या सामने आई । आपश्री ने मुनिश्री आनन्दऋषिजी म. सा. और मुनिश्री हस्तीमलजी म. सा. के सामने प्रस्ताव रखा कि एक सत वे दे और एक सत मैं दे दू किन्तु कोई सहमत नही हुए । तब आपश्री ने ही अपने दो प्रमुख शिष्यो को वहा पर भेजा । इन्होने उनकी समाधि मरण तक सेवा सुश्रूषा की ।

आपश्री जिन जिन क्षेत्रो मे विचरे वहा–वहा सम्मेलन की कार्यवाही की जानकारी देते रहते थे । आपश्री का वि स २०१३ का चातुर्मास गोगोलाव (नागौर के निकट) मे हुआ, तब भी सम्मेलन के निर्णयो की जानकारी प्रतिदिन आने वाले हजारो दर्शनार्थियो को देते रहते थे । इस बीच आपश्री के दो सत प मुनिश्री सिरेमलजी म. सा एव मुनिश्री आइदानजी म सा. जो उपाध्याय मुनिश्री अमरचदजी म सा के साथ कुचेरा चातुर्मास में थे, उनमे से सम्मेलन की कार्यवाही अंकित करने वाले मुनिश्री आईदानजी का "श्रमण" पत्र मे एक लेख प्रकाशित हुआ, जिसमे कुछ मुनियो पर आक्षेप लगाते हुए शास्त्रीय मर्यादाओ के विपरीत बातो का विवरण था । तभी एक अन्य मुनिश्री सुरेशमुनिजी ने भी "महान् चुनौती" नामक पुस्तक लिखकर श्रमण सघ पर आक्षेप लगाए । इन दोनो प्रकाशनो से साधु समाज का वातावरण विक्षुब्ध बन गया । आपश्री ने तब उपाध्याय मडल की ओर खासतौर से उपा मुनिश्री अमरचदजी म सा को मुनिश्री आईदानजी के लेख के अनुचित अशो को बताने का निर्देश दिया । कविजी महाराज ने पुन. स्मरण दिलाने के बाद भी कोई उत्तर नही दिया । उस समय लुधियाना मे जैन कान्फ्रेन्स की जनरल कमेटी की बैठक हुई उसमे एक प्रस्ताव द्वारा ऐसी लेखन प्रवृत्ति न करने की श्रमण सघ के मुनिवरो से प्रार्थना की गई । विहार करते हुए मार्ग मे जब मुनिश्री आईदानजी का आपसे मिलना हुआ तो आपने उनके द्वारा लिखे लेख के बारे मे प्राप्त शिकायतो का विवरण दिया और दड प्रायश्चित लेने की बात कही । मुनिजी ने कहा कि उन्होने सब बातें सत्य लिखी हैं फिर भी सम्प्रदाय के आचार्य के नाते वे दड दें तो ले लूगा, किन्तु श्रमण सघ के उपाचार्य के नाते दिया हुआ दड मुझे स्वीकार नही है । अन्त मे आपश्री को मुनि श्री आईदानजी म. सा. से सबध विच्छेद करने का निर्णय लेना पड़ा । श्रमण संस्कृति की सुरक्षा के लिये आपने शिष्यों पर भी मोह नही रखा ।

इस प्रकार आपश्री के सत्प्रयासो के बावजूद भी श्रमण सघ की दीवारें गिरती ही रही ।

संगठन का विघटन और शांत-क्रांति का श्री गणेश :

श्रमण सघ के सगठन मे धीरे-धीरे अनुशासनहीनता आने लगी और जब यह निर्जीव सा होने लगा तो सारे समाज की यह धारणा बन गई कि अब इस सगठन मे उद्देश्य पूर्ति सभव नही है । विघटन के कारणो पर विचार करें तो यह समझ में आयेगा कि इसका कारण अधिकाश मुनियो की सयम के प्रति उदासीनता अथवा स्वेच्छाचारी साधु मर्यादा के स्तर मे था । इस दृष्टि से स. २०१३ मे पाली चातुर्मास मे मुनि अमरचदजी म सा की जो घटना घटित हुई यह प्रतीक स्वरूप था । इस पर भी मुनिवरो मे कार्य सशोधन रहा । दूसरा कारण पर्याप्त

विस्तारक यत्र के प्रयोग को लेकर हुए विवाद को माना जा सकता है। तीसरा कारण यह बना कि प मुनि श्री फूलचदजी म. सा. (पुप्फ भिक्खू) ने "सुत्तागमे" मे विना प्रमाणो के कही-कही मूल पाठो मे परिवर्तन कर दिया। यह परिवर्तन योग्य नही माना गया किन्तु इसे भी विवाद का विषय बना दिया गया।

गोगोलाव से विहार करके आपश्री अजमेर पधारे वहा पर कान्फ्रेन्स का एक शिष्ट मडल आपश्री से मिला और पालीकाड जैसी घटनाओ पर यह मत व्यक्त किया कि कुछेक अधिकारी भी इस काड मे अपने शिष्यो के फसे होने से कार्यवाही करने और दड देने से हिचकिचा रहे हैं। इस पर आपश्री ने फरमाया कि मुझे भी इस गदे वातावरण से बहुत खिन्नता है। मैं अपने सतो की मामूली सी भूल पर भी कठिन दड दे रहा हू। लेकिन दूसरो के द्वारा अनुशासन का पालन नही किया जा रहा है, यह दु ख की बात है। आपश्री ने शिष्ट मडल से इस प्रकार के कई मामलो की चर्चा की।

आपश्री का वि स २०१४ का चातुर्मास कानोड मे व्यतीत हुआ। यह चातुर्मास सहयोग, सहकार और एक वाक्यता का अपूर्व प्रतीक था। संतो की तपस्या एव ज्ञान साधना का दृश्य भी अलौकिक जैसा ही रहा। प रत्न मुनिश्री नानालालजी म सा जिज्ञासुओ के प्रश्नो का सप्रमाण समाधान करते थे। इस चातुर्मास काल मे आपश्री के करुणा की भावना से ओतप्रोत प्रवचनो से प्रभावित होकर कई गावो के खटीको ने प्राणीवध के त्याग किये। यहा के बोहरा (मुसलमान) समाज का भी चातुर्मास मे बडा सहयोग रहा। वि स. २०१५ का चातुर्मास जावरा मे सपन्न हुआ।

श्रमणसघ को सबल बनाने एव शुद्ध सास्कृतिक धरातल पर टिकाये रखने के लिये आचार्यश्री जी द्वारा किये गये प्रयत्नो की गभीरता को न समझकर समाज मे एक प्रकार की अनिश्चयात्मक स्थिति का निर्माण किया जा रहा था। श्री अ भा श्वे स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के प्रयत्न सगठन के उद्देश्य को सफल बनाने में सहकारी नही हो सके थे। इसके लिये पहले बबई, लुधियाना व जयपुर आदि मे कान्फ्रेन्स की साधारण सभा की बैठकें भी हुई और विभिन्न अधिकारी मुनिवरो के पास श्रावको के शिष्टमण्डल भी गये, लेकिन स्थिति जैसी की तैसी बनी रही। इस जटिलता को देखते हुए कान्फ्रेन्स के तत्कालीन अध्यक्ष श्री विनयचन्द भाई जवेरी ने अपना निवेदन प्रकाशित करते हुए अध्यक्ष पद से त्याग पत्र दे दिया। किन्तु समाज के सभी वर्गों के अनुरोध एव श्रमणसघीय समस्याओ के निराकरण मे अपना पूरा-पूरा सहयोग देने के आश्वासनो को ध्यान रखते हुए उन्होने अपना त्यागपत्र वापस ले लिया।

इनके अनन्तर समस्याओ को सुलझाने के लिये पुन. प्रयत्न शुरू हुए और विभिन्न मुनिराजो की सेवा मे शिष्टमण्डल भी भेजे गये। लेकिन खेद है कि शिष्टमण्डलो को आश्वासन देने पर भी साधु सन्तो की पूर्ववत् प्रवृत्तिया चलती रही। इस स्थिति को लक्ष्य मे रखते हुए आचार्य श्री जी म सा ने १५-९-५८ को एक वक्तव्य दिया। (देखे परिशिष्ट सख्या ३)

इस निवेदन के प्रकाशित होने से श्रमणसघ की वर्तमान स्थिति, आचार्यश्री जी के दृष्टिकोण एवं संघ को निर्बल बनाने वाले कार्यो के प्रति श्रमणसघीय अधिकारी मुनिवरो के कार्यकलापो का वास्तविक चित्रण समाज के समक्ष आ चुका था । अभी तक समाज अनुमानित आधारो पर ही श्रमणसघ की स्थिति का मूल्याकन करती रही थी, लेकिन निवेदन से उसके अनुमान सुदृढ हुए । मघ-सगठन के लिये ऊपरी तौर पर उपाय करने वाले समाज के नेताओ को भी अपनी स्थिति का आभास हुआ । उनके द्वारा अब वास्तविकता को छिपाना सभव नहीं रहा था और न ऐसा कोई कारण बतला सकते थे, जिससे समाज को अधिक समय तक भुलावे मे रखा जा सके । अत उसमे उबरने के लिये उनके सामने सिर्फ एक ही रास्ता रह गया था कि वे अभी तक की स्थिति और उसके लिये किये गये कार्यों की जानकारी समाज के सामने रख दें ।

इस बात को ध्यान मे रखते हुए आचार्य श्री जी से समस्याओ के समाधान के बारे मे विचार-विमर्श करने के लिये श्री अ भा श्वे स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स की साधारण सभा का अधिवेशन जावरा में दि १९-१०-५८ को किया गया । इस अधिवेशन का विशेष महत्त्व था कि यदि स्थिति की गम्भीरता को न समझकर पूर्ववत् कार्य चलता रहा तो श्रमणसघ का नाम शेष जायेगा । अधिवेशन के समय कान्फ्रेन्स के नेताओं ने सगठन को निर्बल बनाने वाले ज्वलत प्रश्नो के बारे मे यथार्थ स्थिति समझने मे पूरा मनोयोग लगाया और आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा से भी चर्चा-वार्ता की ।

चर्चा मे भाग लेने वाले भूतपूर्व बबई धारासभा के अध्यक्ष श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया, श्री आनन्दराजजी सुराणा, श्री जवाहरलालजी मुणोत आदि कान्फ्रेन्स के प्रमुख अग्रणी थे। उन्होने आचार्यश्री जी म सा से प्रार्थना की कि श्रमणसघ को सुदृढ, स्थायी बनाने के लिए मार्गदर्शन देने की कृपा करें । इस पर आचार्य श्री जी म. सा ने फरमाया कि मैंने श्रमणसघ को ज्ञान-दर्शन-चरित्र की सुरक्षा के साथ सुदृढ स्थायी बनाने के लिए यथाशक्ति प्रयास किया और कर रहा हू । लेकिन अपेक्षित सहयोग के अभाव मे उस प्रयास मे बाधा उपस्थित हो रही है । एतदर्थ समाज के प्रमुख वर्ग को इस बात की सावधानी दिलाने की दृष्टि से भी दि १५-६-५८ को निवेदन समाज के सामने रख दिया । समाज के आप प्रमुख हैं अत: उसका आप भलीभाति अवलोकन करे और सम्बन्धित पत्र-व्यवहार भी आप देखें उनमे तटस्थ दृष्टि से आप चिन्तन करके बतायें कि मैंने जो प्रयास किये हैं, उनमें कोई त्रुटि रही हो तो उसका परिमार्जन मैं पहले करने को तैयार हू और यदि आपको त्रुटि मालूम न हो और सम्बन्धित श्रमणवर्ग की त्रुटि मालूम होती हो तो श्रमणवर्ग को विनय पूर्वक निष्पक्ष दृष्टि से कुछ कहे और त्रुटि का परिमार्जन करायें, जिससे श्रमणसघ की सुरक्षा ज्ञान-दर्शन-चारित्र की भूमिका पर भलीभाति हो सके । यह कार्य सबके हार्दिक सहयोग पर अवलम्बित है । अत आप पहले निवेदन और उससे सम्बन्धित प्रमाण भलीभाति देख लें ।

तदनन्तर श्रावक समाज के उन प्रमुख कर्णधारो ने श्रमणसघ मे व्याप्त शिथिलाचार सम्बन्धी, ध्वनियन्त्रविषयक, सूत्रागमे आदि जटिल समस्या विषयक पत्र व्यवहार, आचार्यश्री

आत्मारामजी म सा से लेकर श्रमणसघ के अधिकारी व प्रमुख मुनिवरों के द्वारा समय-समय पर दिलवाये गये पत्र और पत्रस्थ विषयो को एव शास्त्रीय दृष्टिकोण को, श्रमणसघीय नियमो को ध्यान मे रखकर आचार्यश्री गणेशीलालजी म. सा के द्वारा की गई व्यवस्था आदि विषयक पत्र अवलोकन करने के पश्चात् वे जिस निष्कर्ष पर पहुचे उसको आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा के समक्ष प्रस्तुत किया और अर्ज की कि हमने सभी दृष्टि से पत्रव्यवहार का भलीभाति अवलोकन किया और समझ पाये हैं कि यहा कोई त्रुटि नही है। जहा त्रुटि है वहा हम प्रयास करना चाहते हैं, इसलिए हमको कुछ समय मिलना चाहिए और कुछ पत्रो की प्रतिलिपिया भी हम चाहते है।

इस पर आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा ने फरमाया कि आप मुझसे समय ले सकते हैं और ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सुरक्षा के साथ सगठन के प्रयास के लिए जिन पत्रो की आप प्रतिलिपिया चाहते हो, ले लीजिये। पत्रो की प्रतिलिपि लेने के वाद उन्होने कहा कि आचार्य श्री आत्मारामजी म सा को तो सम्मान की दृष्टि से पद दिया गया है, उन्होने बीच हो मे ऐसी वाते क्यो की ? एतद्विषयक हम यहा कुछ निर्णय भी करें तो ठीक रहेगा।

आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा भी यही चाहते थे कि श्रमणसस्कृति की सुरक्षा के लिये चतुर्विध सघ को अपनी जिम्मेदारी समझना चाहिये। स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए अधिवेशन मे एक प्रस्ताव पारित किया गया। जिसमे उल्लेख था कि मन्त्री मुनिश्री मिश्रीमलजी म के शिष्य के लिये जो फैसला उपचार्य श्री जी म ने फरमाया है, उसके लिये आचार्य श्री जी म ने हर्ष प्रकट किया व मन्त्री मुनिश्री मिश्रीमलजी म व श्री रूपचन्दजी ने सहर्ष स्वीकार किया। इसके लिये उसके विपरीत जाने का प्रश्न नही रहता। तथापि आचार्यश्री आत्मारामजी म सा. कागजात देखना चाहते है तो वे कागजात कान्फ्रेन्स की कमेटी उनके पास जाकर वतला दे आदि।

इस प्रस्ताव के परिपालनार्थ एव समाज की आकाक्षाओ के समाधानार्थ श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया के नेतृत्व मे एक शिष्टमडल का गठन हुआ और जिन पत्रो की प्रतिलिपि ली तथा जिस स्थिति को उन्होने समझा, उसका कमेटी समाप्त होने के वाद लगभग एक महीने तक अध्ययन किया और सम्बन्धित व्यक्तियो से पूछताछ व जाच–पडताल भी की। अनन्तर यह सोचा कि श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया की वृद्धावस्था और स्वास्थ्य को देखते हुए वार-वार लवी यात्रा होना सभव नही है और उसके विना शिष्टमण्डल प्रभावहीन रहेगा। इसलिये भूतकालीन समस्याओ को सुलझाने के साथ-साथ भविष्य के विषय मे भी सुव्यवस्थित स्थिति वनाने के लिए शिष्टमडल सवसे पहले आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा की सेवा मे उपस्थित होकर भविष्य के विषय मे मार्गदर्शन ले, ताकि सभी स्थिति एक ही वार के प्रयत्न से स्पष्ट हो जाये।

इस विचार को ध्यान मे रखकर शिष्टमण्डल दि. २७-११-५८ को जावरा आचार्य श्री जी की सेवा मे उपस्थित हुआ और उसने दो-दिन तक सारे तथ्यो का पूर्णरूपेण गहराई से

अध्ययन किया। इस समय आचार्य प्रवर का स्वास्थ्य कुछ अधिक अस्वस्थ चल रहा था डाक्टरो की ओर से अधिक वार्तालाप करने का निषेध था। ऐसा शिष्टमडल ने निवेदन किया कि आप श्री अपने किसी योग्य शिष्य का नाम निर्देश कर दें, ताकि हम आपश्री से सम्बन्धित सभी वार्ता उनसे कर सके। आचार्य प्रवर ने पंडित रत्न मुनिश्री नानालालजी म सा (वर्तमान में शासन-नायक) का नाम—निर्देश किया। शिष्ट मडल उनके पास में पहुचा। तब आपश्री ने स्पष्ट किया मैं गुरुदेव का प्रतिनिधित्व मे तो कोई बात नही कर सकता क्योकि वे महान् हैं। फिर व्यक्तिगत चर्चा करने का ही निर्णय हुआ।

सभी विषयो पर खुलकर चर्चा हुई। शिष्ट मडल का योग्य समाधान मिला। किन्तु किसी एक बात को लेकर थोडा-सा मतभेद होगया। पडित रत्न मुनिश्री का फरमाना था कि बात छोटी-सी है फिर भी इस ओर ध्यान जाना आवश्यक है, क्योकि भविष्य मे वह बहुत बडी भी हो सकती है। फिर चलें आचार्य प्रवर के पास जैसा गुरुदेव फरमाए। पडितरत्न मुनिश्री जी आगे एव पीछे शिष्ट मण्डल, आचार्य प्रवर की सेवा मे प्रस्थित हुआ। इधर शिष्ट मडल ने सोचा कि आचार्य प्रवर अपने शिष्य की बात को मानेंगे, हमारी बात को नही। ऐसी स्थिति में लुधियाना जाने से भी क्या फायदा, यह सोच एक भाई टिकिट वापस करने स्टेशन भेज दिया। किन्तु जब शिष्ट मडल आचार्य प्रवर की सेवा मे पहुचा और सारी बात रखी तब आचार्य प्रवर ने फरमाया—यद्यपि इसकी बात छोटी होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है किन्तु आपको इसको गौण करना सघ एकता मे अभीष्ट है तो महाव्रतो की रक्षा मे किसी प्रकार की आंच न आ पावे ऐसी स्थिति मे इस बात को गौण करने के लिए मैं तैयार हू।

आचार्यश्री जी म सा के इतना फरमाते ही शिष्टमण्डल के सदस्यो में उत्साह आ गया और जयनाद करने लगा कि हमे यहा पर पूरी सफलता मिली है, अब हम यहा से लुधियाना जाना चाहते हैं। फिर हम सबधित अन्य स्थानो पर जायेंगे और श्रमणसघीय स्थिति को सुदृढ करने का भरसक प्रयत्न करेंगे आदि भाव व्यक्त करके शिष्टमण्डल ने मागलिक पाठ सुनकर दि २६-११-५८ को लुधियाना के लिये प्रस्थान किया। वहा शिष्टमंडल दि १-१२-५८ को पहुचा और उसी दिन अपना वक्तव्य दे दिया कि शिष्टमडल असफल रहा। किन्तु शिष्टमण्डल की असफलता के बारे मे किसी प्रकार की जानकारी नही दी गई कि अमुक कारण से शिष्टमडल असफल रहा। इसके बारे मे समाज ने स्पष्टीकरण की माग भी की लेकिन नेतागण मौन ही रहे और आज तक भी अपनी असफलता के कारणो को बताने मे मौन धारण किये हुए हैं। इस मौन का परिणाम यह हुआ कि श्रमणसघ की स्थिति सुदृढ होने की अपेक्षा दिनोदिन निर्बल बनती गई और अब वह नाममात्र का सघ रह गया।

शिष्टमण्डल की लुधियाना मे वार्ता यद्यपि सीमित थी। जिन बातो के बारे मे बातचीत करनी थी, वे सब श्री आचार्य आत्मारामजी म सा, के पास पहले ही पत्रो द्वारा भेजी जा चुकी थी। शिष्टमण्डल को तो सिर्फ इतना बतलाना था कि आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. द्वारा की गई कार्यवाई संघ सुदृढता की दृष्टि से योग्य और आवश्यक थी। इसके बारे मे कोई

गुप्त मत्रणा करने का भी अवकाश नही था, जिसे समाज के समक्ष प्रकट करने मे विवशता प्रतीत होती थी ।

फिर भी वार्ता को असफल बनाने के मुख्य सूत्रधार लुधियाना मे आचार्य श्री आत्मारामजी म. सा के पास रहने वाले श्री ज्ञानमुनिजी थे । उक्त मुनि ही विशेषकर आचार्य श्री आत्मारामजी म. सा के पत्रो को पढने-पढाने का कार्य करते थे । पाली शिथिलाचार काड मे ज्ञानमुनिजी भी सम्बन्वित थे और ध्वनिवर्धक यन्त्र मे भी बोल चुके थे । शिष्टमडल आचार्यश्री जी से उन पत्रो के बारे मे वार्तालाप करना चाहता था जिन्हे ज्ञानमुनिजी अपने अनाचार-प्रकाशन की दृष्टि से अच्छा नही मानते थे । अत उन्होने वार्ता आगे चलने नही दी और यह कहकर इन्कार करवा दिया कि असल पत्र साथ क्यो नही लाये ? इस पर श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया ने कहा कि असली पत्रो मे और इनमे कोई अन्तर नही है । मैं विश्वास दिलाता हू कि यह उन्ही पत्रो की प्रतिलिपि है । लेकिन ज्ञानमुनिजी तो इस बात को आगे बढने ही नही देते थे और ऐसे शब्दो का प्रयोग किया जिसमे फिरोदियाजी आदि शिष्टमडल के सदस्यो को मानसिक ग्लानि हुई और शिष्टमडल का अन्यत्र जाना रोक करके सब अपने-अपने स्थान लौट गये ।

यदि शिष्टमडल के सज्जन इस अनुचित बात का विरोध कर, व्यक्ति-विशेष को उपेक्षा कर दृढता का परिचय देते और तुष्टिकरण को नोति न अपनाई जाती तो यह निश्चित है कि श्रमणसघ की जटिल समस्याओ का समाधान होकर अनुशासन को बल मिलता । लेकिन शिष्टमण्डल की इस असफलता का परिणाम यह हुआ कि ध्वनिवर्धक-यन्त्र प्रयोग तथा पालीकाड के कारण श्रमणवर्ग के परस्पर टूटे हुए सभोगो की दरार और चौडी होती गई ।

शिष्टमडल की असफलता चतुर्विध सघ को ज्ञात हो चुकी थी और दिनो दिन श्रमणसघ की स्थिति मे बिगाड होता जा रहा था । इसके बारे श्रमण सम्पर्क समिति के सयोजक श्री कानमलजी नाहटा ने रूपचन्दजी के विषय मे एक विस्तृत स्पष्टीकरण श्री अ. भा. श्वे. स्था जैन कान्फ्रेन्स को प्रकाशनार्थ भेजा । जिसमें पालीकाड मे सबधित साधु-साध्वियों के बारे मे अभी तक हुई कार्रवाई एव श्रमणसघ मे आचार्य उपाचार्य को वैधानिक स्थिति आदि का सविगत वर्णन किया गया था । लेकिन खेद है कि स्पष्टीकरण के तथ्यपूर्ण और युक्तियुक्त होने पर भी उसे प्रकाशित नही किया गया । यद्यपि श्री आनन्दऋषिजी म ने भी इस स्थिति के ज्ञात होने पर अपना मंतव्य प्रकट करते हुए बतलाया था कि उपाचार्य श्री जी का मुनि रूपचन्दजी आदि के बारे दिया गया निर्णय युक्तियुक्त एव सयमपालन को भूमिका बनाने को दृष्टि से आवश्यक है ।

शिष्टमडल को पालीकाड की पूरी जानकारी थी तथा श्रमणसपर्क-समिति के सयोजक ने भी अन्य तथ्यो को समाज के सामने रखने का प्रयत्न किया एव श्रमणसघ के मूर्धन्य सन्त पालीकाड के लिये आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. निर्णय से सहमत थे । फिर भी व्यक्तिगत

दुराग्रह के समक्ष चतुर्विध सघ के प्रमुख अपना साहस नही बतला सके और अपने कर्तव्य-पालन च्युत हुए तथा श्रमणसघ का आदर्श सदा सदा के लिये समाप्त हो गया ।

आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा ने स २००६ के सादडी सम्मेलन के अवसर पर उपस्थित मुनिवरो के निवेदन, अनुरोध और आग्रह को लक्ष्य मे लेते हुए श्रमणसघ का नेतृत्व अगीकार किया था । उनकी इच्छा नही थी कि पद प्राप्त कर अपने प्रभाव का प्रदर्शन करें । लेकिन यह भावना अवश्य थी कि श्रमण भगवान् महावीर की श्रमण परम्परा अपने आदर्श, साधना और मार्ग को शुद्ध और शास्त्रीय मर्यादानुकूल बनाये । उन्होने श्रमणसघ के महत्त्व को भलीभाति समझा था, लेकिन जैसे-तैसे श्रमणसघ को टिकाये रखने के पक्ष मे नही थे । वे चाहते थे कि श्रमणसघ की नीव ठोस आधार पर हो और इसी लक्ष्य को ध्यान मे रखते हुए उन्होने सदैव शास्त्रसम्मत आज्ञाओ के पालन करने और समस्याओ के बारे मे सही दृष्टिकोण अपनाने पर भार दिया था ।

शास्त्र-साक्षी के समक्ष उन्होने न तो अपने के प्रति पक्षपात दिखलाया और न दूसरो को प्रभावित करने की चेष्टा ही की थी । उन्हे जो सत्य, तथ्य, हित और पथ्य प्रतीत हुआ, उसके अनुसार कार्रवाई की । यही कारण है कि आज आचार्यश्री जी द्वारा की गई व्यवस्थाओ के विरुद्ध किसी को बोलने की गु जाइश नही है । सभी उनके कार्यो को सही मानते हैं और पूर्ण श्रद्धा भक्ति रखते हैं ।

यद्यपि श्रमणसघ के सबल समर्थक आचार्यश्री जी आज हमारे समक्ष नही हैं । लेकिन उनके आदर्श, उनके विचार, उनके आचार-विचार की परम्परा का प्रकाश विद्यमान है और आशा है कि उनकी भावना को बलवती बनाने के लिये चतुर्विध सघ के प्रयत्न यथार्थ भूमिका पर प्रारम्भ होंगे ।

जब आचार्य श्री द्वारा की गई अवैधानिक घोषणा पर कोई सारपूर्ण कार्यवाही नही की गई तथा सभी जिम्मेदार क्षेत्रो की तरफ से मामले को गोलमाल बनाये रखने की ही कोशिशें की जाती रही तो आपश्री ने विचार किया कि अब ऐसी स्थिति मे श्रमणसघ मे रहना सार्थक नही है । तब दिनाक ३०-११-१९६० को अचानक ही व्याख्यान मे आपश्री ने श्रमणसघ द्वारा प्रदत्त उपाचार्य पद का त्याग करके श्रमण सघ से पृथक् होने की घोषणा कर दी । वह घोषणा निम्नांकित है—

सिद्धान्त व चारित्र के सरक्षण के साथ साधु समाज का सगठन सुदृढ हो तथा सघ की उन्नति हो इस उद्देश्य को लेकर मैं सादडी साधु सम्मेलन मे निर्मित श्री वर्द्धमान स्था जैन श्रमण सघ मे सम्मिलित हुआ था वहा सब प्रतिनिधि मुनिवरो ने मिलकर मुझको आग्रह से उपाचार्य पद दिया, सघ के शासन का कार्यभार सौपा, मैने अपनी आत्मसाक्षी एव निष्पक्ष रूप मे अपना कर्तव्य बजाया, मगर उचित बात को भी अशान्ति और कदाग्रह का रूप देकर भ्रम फैलाया जा रहा है और ऐसा प्रदर्शित किया जा रहा है कि मानो मैं सघ की उन्नति मे गत्यवरोध का कारण हूँ ।

इस पर मैंने स्वय भी सोचा तो मुझे ऐसा नही लगता वल्कि मुझे तो ऐसा अनुभव हो रहा है कि जिस उद्देश्य को लेकर मैं सम्मेलन मे सम्मिलित हुआ था उस उद्देश्य की पूर्ति ही नही हो रही है और प्राय यह देखा जा रहा है कि व्यर्थ का वाद-विवाद वढाकर "जैन प्रकाश" जैसे मुख पत्र के माध्यम से भी भ्रामक प्रचार किया जाने लगा है। मैं ऐसे व्यर्थ के वाद-विवाद मे न पड़ता हुआ वर्तमान परिस्थितियो मे इस उपाचार्य पद का त्याग करके अपने आपको श्रमण सघ से अलग घोषित करता हू।"

इस घोषणा के साथ आपश्री ने साभोगिक सवध के वारे मे भी स्थिति स्पष्ट कर दी तथा अपने उपाचार्य काल मे किसी को भी क्लेश पहुचा हो, उससे क्षमापना कर लिया। इस घोषणा मे सारे समाज मे दुखपूर्ण प्रतिक्रिया हुई कि जिन आचार्य महोदय ने साधु शुद्धाचार की रक्षा के लिये वडे से वडा त्याग किया उनकी सही व्यवस्था को मान नही दिया जा सका। सभी क्षेत्रो से आपश्री को उक्त घोषणा वापिस लेने की प्राथनाए की गई। उनके उत्तर मे आपश्री ने पुन शिथिलाचार से सवधित सारी घटनाओ पर प्रकाश डाला और समझाया कि कोरी एकता के लिये शुद्धाचार के उद्देश्यो को समाप्त नही किया जा सकता है।

इस प्रकार श्रमण सघ का सगठन विघटित हो गया, तब आपश्री ने श्रमण सस्कृति की सरक्षा के हित मे एक नई शांतिपूर्ण उत्क्राति का श्री गणेश किया। प्रारभ से ही आपश्री का उद्देश्य स्पष्ट था कि कोई भी साधु भगवान् महावीर द्वारा निर्देशित आचार धर्म का पूर्णनिष्ठा से पालन करे और साधुओ की एकता के सवध मे कोई सगठन वनाया जाय तो उसका मूल उद्देश्य शुद्धाचार का पालन पहले होना चाहिये। एकता तो मात्र साधनरूप वननी चाहिये। आपश्री ने विचार किया कि यदि श्रमण सघ अपने उद्देश्य से विफल हो गया है तो वह अलग वात है। आपश्री ने स्वय को उक्त उद्देश्य की पूर्ति मे पुन समर्पित करने का निश्चय किया।

उस समय उन सभी सत एव सतियो ने, जिन्हे आपश्री के शुद्धाचार समर्थक नेतृत्व मे आस्था थी, एक प्रतिज्ञा पत्र लिखकर आपश्री के चरणो मे प्रस्तुत किया, जो इस प्रकार था—

"निर्ग्रन्थ श्रमणसस्कृति आत्मकल्याण व आत्मशान्ति का एक मात्र अमोघ उपाय है अत इसकी शुद्धता वनी रहना नितान्त आवश्यक है। वर्तमान मे कुछ श्रमणवर्ग मे विकृतिया प्रवेश कर गई हैं, उनको दूर करने के लिए पूज्यश्री १००८ श्री गणेशोलालजी म सा. ने जो शान्त क्रान्ति का कदम उठाया, वह उचित एव आदर्श है।"

सिद्धान्त व चारित्र की सुरक्षा पूर्वक सगठन को सुदृढ एव चिरस्थायी वनाने की प्रवल इच्छा रखने वाला श्रमणवर्ग यह निर्णय करता है कि सयमी जीवन मे प्रवेश पाई हुई विकृतियो को दूर करने के लिए सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि के हेतु हम शात क्रान्ति के जन्मदाता पूज्यश्री १००८ श्री गणेशीलालजी म के नेश्राय मे तथा नेतृत्व मे आपश्री की निम्न वातें जीवन मे उतारने की प्रतिज्ञा करते हैं—

१ चातुर्मास, प्रायश्चित, विहार व सेवा आदि व्यवस्था की सर्वसत्ता आपश्री के चरणो मे रहेगी ।

२ शिष्य व शिष्यायें आपश्री के नेश्राय मे होगे ।

३ चातुर्मास के लिए व शेषकाल के लिए साधु-साध्वी ने जहा विहार किया या जहा विराजे वहा से वस्त्र-पात्रादि जो भी वस्तु साल भर मे लेंगे उसकी नोंध रखेंगे। साथ ही सघ-व्यवस्था कैसी है, विशेष उपकार व उपसर्ग कहा कहा पर हुए उसकी भी नोंध रखेंगे और यह सब आलोचना की नोंध डायरी आपश्री की सेवा मे अर्पण कर देगे ।

४ चातुर्मास पूर्ण होने के बाद आपश्री (आचार्य श्री) जिस समय जहा जिन साधु-साध्वियो को याद फरमावेंगे, वहा वे साधु, साध्वी उपस्थित होगे ।

५ साधु साध्वी के कल्पानुसार समान समाचारी जो आपश्री ने तय की है और करेंगे, वह सब साधु-साध्वी को सहर्ष मान्य होगी । तथा सकारण व मूल मे जो भी त्रुटि हो जाय उसका आपश्री जो भी उपालम्भ व प्रायश्चित देगे, उसको सहर्ष स्वीकार करेंगे ।

६. श्रमणवर्ग की धारणा, विचारणा मे फर्क हो सकता है, लेकिन गच्छाधिपति आचार्यश्री अर्थात् आपश्री की धारणा, विचारणा विरुद्ध कोई साधु-साध्वी साधुसघ मे या श्रमणसघ मे स्थापना नही करेंगे ।

७ जो भी वैरागी या वैरागिन हो उसको तैयार करके स्नेह, श्रद्धा के केन्द्र आचार्यश्री के पास परीक्षा होकर जब तक आपश्री द्वारा आज्ञा प्राप्त न हो जाय, तब तक कोई साधु, साध्वी उनको दीक्षा न देंगे और सादड़ी आदि मे तथा बाद मे भी जो सिद्धान्त, चारित्र और सुसगठन विषयक आदेश आदि दिये है और देंगे, उसे हम सन्त सती वर्ग साकार रूप देने को हर समय तैयार हैं और रहेंगे ।

इति शुभम् । उदयपुर

उदयपुर आज्ञानुवर्ती

स २०१८, वैशाख शुक्ला ३ हम हैं आपके चरण-चञ्चरीक

साधु-साध्वीवृन्द

इन्ही दिनो बहुश्रुत प रत्न श्री समर्थमलजी म गोचन से विहार करते हुए भोपालपुरा (उदयपुर) मे आचार्यश्री जी म सा की सेवा मे पधारे गये । तब सभी बातो के विषय मे खुलकर विचार-विमर्श हुआ और मौलिक रूप से एक श्रद्धा, प्ररूपणा, स्पर्शना की प्रायः समाधानें बन गई और आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. के नेतृत्व मे चलने के स्वीकृतिपत्र पर बहुश्रुत प. रत्न श्री समर्थमलजी म. ने अपने हस्ताक्षर कर दिये । स्वीकृति पत्र इस प्रकार है—

वन्दे वीरम्-णमोणाणस्य ता ७-१-१९६१

आत्मकल्याण व आत्मशान्ति का एकमात्र अमोघ उपाय निर्ग्रन्थ श्रमणसस्कृति है। अत इसकी शुद्धता बनी रहना नितान्त आवश्यक है। वर्तमान मे कुछ श्रमणवर्ग मे विकृतिया प्रवेश कर गई है उनको दूर करने के लिए पूज्यश्री गणेशीलालजी म. सा ने शान्त क्रान्ति का कदम उठाया, वह उचित एव आदर्श है।

सिद्धान्त व चारित्र की सुरक्षा पूर्वक सगठन को सुदृढ एव चिरस्थायी बनाने की प्रबल इच्छा रखने वाला श्रमणवर्ग यह निर्णय करता है कि सयमी जीवन मे प्रवेश पाई हुई विकृतियो को दूर करने के लिए एव सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि के हेतु हम शान्त क्रान्ति के जन्मदाता पूज्यश्री १००८ श्री गणेशीलालजी म का नेतृत्व स्वीकार करते हैं।

ऊपर मुजब काम का हम हृदय से निश्चय करते हैं।
द. मुनि समर्थमल ।। स २०१७ माघ कृ ५

उस समय श्रमण सस्कृति की सरक्षा मे निष्ठावान सपूर्ण श्रमणवर्ग मे यही भावना व्याप्त हो रही थी कि यदि श्रमण सस्कृति की उज्ज्वलता को प्रकाशमान नही रखा गया तो वीतराग शासन की प्रभाविकता नही रहेगी। ऐसी भावना आपश्री की शात-उत्क्राति के परिणामस्वरूप ही निर्मित हुई थी। श्रमण संघ मे विघटन की दरारे डालकर किसी श्रमण वर्ग ने शिथिलाचार का भले ही पोषण किया हो किन्तु आपश्री श्रमण सस्कृति की रक्षा के मोर्चे पर हमेशा अथक रूप से डटे रहे। आपश्री के नेतृत्व मे ऐसे शुद्धाचारी नये सगठन ने जन्म ले लिया जो श्रमण सस्कृति की रक्षा मे कटिबद्ध हुआ। आपश्री की दूरदर्शी योजना का ही सुफल है कि वह सगठन उन्नति के नये शिखर लाघता हुआ आज भी आचार्य प्रवर के नेतृत्व मे आश्चर्यजनक प्रगति कर रहा है, जिन्होंने शिष्य के नाते अपने गुरु के चरणो मे इस शात-उत्क्राति के स्वरूप को निरखा-परखा था।[१]

सोद्देश्य एकता की जागरूकता का भार अपने सुयोग्य उत्तराधिकारी के कधो पर

आपश्री ने वि. स २०१५ का चातुर्मास जावरा मे किया तबसे एक ओर आपका स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जा रहा था तो दूसरी ओर श्रमण सघ की विवादग्रस्तता भी आपके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही थी। इन्दौर के डा मुकर्जी ने आपका शरीर परीक्षण करके निर्णय किया कि आपश्री के हृदयरोग है। उन्होने यह भी निर्देश दिया कि आचार्यश्री किसी भी प्रकार का श्रम न करे। फिर भी आपश्री धीरे-धीरे विहार करके रतलाम पहुचे। इस बीच बम्बई के हृदयरोग विशेषज्ञ डा भसाली ने जाच करके निर्णय दिया कि आपको

१ श्रमणसघीय आदि विषयो का वर्णन "गणेशाचार्य जीवन चरित्र" एव 'श्रमण सघीय विषयो पर विश्लेषणात्मक निवेदन' से सकलित किया है। इस विषयक विशेष जिज्ञासु सबधित ग्रन्थो का अवलोकन करे।

हृदयरोग कतई नही है। उस समय उदयपुर श्री सघ एव डा. शूरवीरसिंहजी के आग्रह पर वि सं २०१६ का चातुर्मास चिकित्सा की दृष्टि से आपश्री ने उदयपुर मे करने की स्वीकृति फरमाई।

उदयपुर के चातुर्मास काल मे आचार्यश्री के रोग के निदान करने के प्रयत्न प्रारभ कर दिये गये। चिकित्सको ने परीक्षण एव परामर्श के वाद यह परिणाम निकाला कि आचार्यश्री के शरीर मे जो कमजोरी और कई रोगो के चिह्न दिखते है, उनकी जड गहरी है और वह शल्य चिकित्सा द्वारा ही निकाली जा सकती है। अत शीघ्रातिशीघ्र शल्य चिकित्सा कराने की राय दी गई ताकि रोग अधिक न फैले। फिर भी वही आपरेशन की झंझट, यह आपश्री को नही सुहाया। इस पर डाक्टरो ने कहा कि आपका साधु जीवन लेने का उद्देश्य क्या है? आचार्यश्री ने सयमी जीवन की महत्ता का दिग्दर्शन कराते हुए फरमाया कि ज्ञान दर्शन चारित्र की आराधना पूर्वक शत्रु-मित्र पर समभाव और आत्मा के चरम विकास को सम्मुख रखते हुए समाधिकरण द्वारा इस भौतिक शरीर को छोडना है। डाक्टरो ने पुन प्रश्न किया कि क्या आयुष्य के पूर्व ही शरीर को इस प्रकार छोडना उपयुक्त रह सकता है? आपश्री ने फरमाया कि आयुष्य रखते हुए तो समाधियावपूर्वक ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना करते रहना चाहिये। इस भावना से आपश्री ने पहले होम्योपैथिक आदि अन्य चिकित्सा कराई किन्तु उसमे गाठ से निकला खून पेशाव की थैली मे आ जाने से पेशाव की वेदना अत्यधिक वढ गई। फिर चतुर्विध सघ की विनती पर आपरेशन निश्चित किया गया। आपरेशन के पहले आप श्री ने उद्देश्यपूर्ण एकता के प्रति अपने आज्ञानुवर्ती सघ को जागरुक वनाया तथा क्षमायाचना की। आपरेशन के दिन आपश्री के हजारो श्रद्धालु भक्त विकलता एव व्याकुलता से आपरेशन का परिणाम जानने के लिये उदयपुर अस्पताल के प्रागण मे खडे थे। राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल जी सुखाडिया की खास सलामण पर डा. वी. एन शर्मा ने आपरेशन किया, जो दो घटे तक चलकर सफल रहा।

इसके वाद आगामी वि. स. २०१७ का चातुर्मास भी उदयपुर मे ही हुआ। स्वास्थ्य ऊंचा नीचा चलता रहता था किन्तु आपश्री का शरीर काफी अशक्त हो चला था अत. दिनांक १८-४-१९६१ को चतुर्विध संघ की व्यवस्था का सर्वाधिकार एव पूर्ण उत्तरदायित्व प. रत्नमुनि श्री नानालालजी म सा. को सौंपने के लिये घोषणा कर आपश्री ने आदेश फरमाया—

"चतुर्विध सघ की भावभीनी भक्ति को देखकर मेरे मन मे भी अनेक कल्पनाए उठ रही है। उन सभी कल्पनाओं को इस समय सविस्तार व्यक्त करूं, इतना अभी समय नहीं है और मेरा स्वास्थ्य भी उनके अनुकूल नहीं है।

"मेरे प्रति जो श्रद्धा प्रकट की जा रही है, उसको मैं और प्रभु के शासनस्थ शुद्ध चारित्र व सिद्धान्त को समझकर वीत-रागभाव को अर्पण करता हू।"

"मैं एक निश्चित उद्देश्य व कल्पना को लेकर सादड़ी साधु सम्मेलन में सम्मिलित

हुआ और उसकी पूर्ति के लिये सतत प्रयत्नशील रहा, किन्तु मेरी आशा पूरी नही हुई। साथ ही ऐसी कई परिस्थितियो का निर्माण भी हुआ कि जिसके कारण ता. ३०-११-६० को मुझे नवनिर्मित श्रमणसघ से पृथक् होने की घोषणा करनी पडी। उस घोषणा पर पुन विचारणा करने के लिये श्रमणवर्ग श्रावकवर्ग की तरफ से मेरे पास निवेदन आदि आये। मगर उनमे सुसगठन सम्बन्धी मेरी कल्पनाओ एव उत्पन्न कारणो के निराकरण की पूर्ति होती दिखाई नही दी, अत आये हुए निवेदनो आदि का सामूहिक रूप से ता २४–२–६१ को एक उत्तर दिया। उसको भी पर्याप्त समय हो गया, किन्तु कोई सतोष जनक समाधान मेरे सामने नही आया।

"मैं सुसगठन का किसी से कम हिमायती नही हू। मैं अब भी यह चाहता हू कि मेरा सतोषजनक समाधान होकर मेरी कल्पना और उद्देश्य के अनुसार जैसा कि मैं पूर्व में व्यक्त कर चुका हू, एक के नेतृत्व मे श्रमणसगठन साकार रूप होकर सुदृढ बने अथवा मेरा सतोषजनक समाधान पूर्वक समस्त मुनिमडल या यथा सम्भव जितने भी मुनिवृन्द शास्त्रसम्मत एक समाचारी मे आवद्ध होकर अपने मे से किसी एक शास्त्रज्ञ, श्रद्धावान एव चारित्र निष्ठ मुनिवर को आचार्य माने और शिक्षा, दीक्षा चातुर्मास, विहार व शिष्य परम्परा आदि सब उसी आचार्य के अधीन रहे।

"ऐसी स्थिति बनती हो तो मैं सदैव तैयार हू और अन्य सन्त सतियो से भी मैं यही अपेक्षा करता हू कि जब भी ऐसी स्थिति का निर्माण हो उससे अपना विलीनीकरण करने को तैयार रहे मुझे ऐसा विश्वास है कि जब ऐसी परिस्थिति पैदा होगी तब सुसगठन प्रेमी सन्त-सतीवर्ग उसमे मिलने को तत्पर रहेगे और श्रावक समुदाय भी उसमे अपना पूर्ण समर्थन देगा।

मेरा स्वास्थ्य कुछ काल से जितना चाहिये उतना अनुकूल नही चल रहा है और सुसगठन प्रेमी चतुर्विध सघ मेरे से भावी व्यवस्था के लिये प्रार्थना कर रहा है कि आपश्री की कल्पना आदि के अनुसार जब तक सुसगठन होकर सर्वाधिकार पूर्ण उत्तरदायित्व एक आचार्य के अधीन नही हो जाये तब हमारा भावी आधार क्या हो आदि, इस तरफ भी ध्यान देकर व्यवस्था करना मैं अपना कर्तव्य समझता हू।

"यदि मेरी कल्पना व भावना आदि के अनुसार सुसगठन की सुव्यवस्था मेरे जीवन मे न बन सके तो मेरे पश्चात् चतुर्विध सघ की व्यवस्था सर्वाधिकार तथा पूर्ण उत्तरदायित्व भविष्य के लिये प. मुनि श्री नानालालजी को सौंपता हू। उनको यह भी निर्देशन करता हू कि वे यथासभव मेरी कल्पना आदि के अनुसार सुसगठन बनाने मे सदैव प्रयत्नशील रहे और चतुर्विध सघ उनकी आज्ञाओ को शिरोधार्य करता हुआ ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि करता रहे।

आचार्यश्री के उत्तराधिकारी के रूप मे प र मुनिश्री नानालालजी म सा का चयन इतना अधिक उपयुक्त था कि घोषणा से सर्वत्र आनन्द छा गया। आपश्री भी एक प्रकार

से सोद्देश्य एकता की जागरूकता का भार अपने सुयोग्य उत्तराधिकारी के कधो पर डाल कर निश्चित से हुए।

इसके बाद भी आचार्यश्री प्रतीक्षा करते रहे कि श्रमण सघीय स्थिति के सुधार के लिये कुछ विशेष प्रयत्न हो लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ। इससे सुसगठन प्रेमी चतुर्विध सघ निराश हो गया और आचार्यश्री से समाज सगठन को दृढ बनाने हेतु एक निश्चित व्यवस्था देने के लिये आग्रह भरी विनती करने लगा। सोच-विचार के बाद आचार्यश्री ने श्रमण सस्कृति के महान् सरक्षक, त्यागी, महापुरुष पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा की परम्परा रखना हितकर समझा। तव भी आपश्री ने भलामरण दी कि मेरी कल्पना के अनुसार श्रमण सघीय व्यवस्था होती हो तो उसमे शामिल होने के लिये सदा तत्पर रहना और वैसी स्थिति का निर्माण करने के लिये सचेष्ट रहना। इस भलामण और त्याग की परम्परा पुनजीवित रखने तथा उसकी व्यवस्था हेतु प मुनिश्री नानालालजी म सा को उदयपुर मे दिनाक २२-६-१६६२ को युवाचार्य घोषित किया गया।

यह घोषणा उदयपुर मे श्रावक वर्ग द्वारा आपश्री की सेवा मे दिनाक २२-६-१६६२ को एक लिखित पत्र तथा आपश्री के मौखिक उत्तर के सदर्भ मे की गई। इस घोषणा के पश्चात् आचार्यश्री एव युवाचार्य श्री ने अपने हार्दिक उद्‌गार प्रकट किये। दिनाक ३०-६-१६६२ का दिन चादर प्रदान समारोह के लिये निश्चित किया गया।

चादर-प्रदान समारोह दिवस का दृश्य उदयपुर के लिये ऐतिहासिक वन गया। राजप्रसाद के विशाल प्रागण मे भीड खचाखच भरी हुई थी। आचार्यश्री का स्वास्थ्य ऐसा नही था कि वे पैदल चलकर वहा पधारते अत डोली मे विराज कर सतो के सहारे वहा पधारे। सीढ़ियो पर स्थित पाटो पर एक तरफ सत समुदाय तो दूसरी तरफ साध्वी वृद विराजमान थे। मध्य मे आचार्यश्रीजी एक ऊचे पाटे पर विराज रहे थे। उनके पाटे के सामने ही मेवाडाधिपति महाराणा श्री भगवतसिहजी वहादुर अपनी राजकीय पोषाक मे आसीन थे। उनके साथ नगर के अधिकारी एव प्रतिष्ठित नागरिक भी वैठे थे। उपस्थित जनमेदिनी २५–३० हजार के करीव होगी। स्तुतिवाचन और नन्दीसूत्र की स्वाध्याय के उपरान्त तपस्वी मुनिश्री केशूलालजी म सा आदि सभी सतो ने आचार्यश्री के साथ उनकी चादर के हाथ लगाकर वह चादर प रत्न मुनिश्री नानालालजी म सा को ओढाकर उन्हे विधिवत् युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया एव चतुर्विध सघ की व्यवस्था का दायित्व सौपा। उपस्थित जनसमुदाय ने जयघोष के साथ इसका अनुमोदन किया।

चादर प्रदान करने के उपरान्त आचार्यश्री ने अवसरानुकूल प्रेरक प्रवचन फरमाया जिसका साराश निम्नाकित है—

श्रमण जीवन के लिये वीतराग आज्ञा ही मुख्य विधि–विधान है। उसकी सुरक्षा के लक्ष्य को ध्यान मे रखकर मैंने समाज के अन्दर कार्य किया है और उसी के अधीन यह युवाचार्य

चादर प्रदान का प्रसग है । यह शुभ्रवर्ण सफेद चादर जो मैंने युवाचार्य श्री नानालालजी को ओढाई है, वह सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी जैसे महापुरुषो की परम्परा के अनुसार है । यह चादर श्वेत वर्ण होने से पवित्रता की द्योतक है और जीवन मे निष्कलक रहने की सूचना करती है । साथ ही यह चादर अनेक तारो से बनी हुई है । एक तार मे अनेक स्थूल ततु हैं । एक-एक ततु मे असख्य स्कध हैं और एक-एक स्कंध मे अनन्त-अनन्त परमाणु भरे हैं । जिस प्रकार से सारे परमाणु एक चादर रूप मे गठित हुए हैं उसी प्रकार ससार की सभी जीवात्माए आत्म तत्व की दृष्टि से एक है, जो विश्व मैत्री एव विश्व कल्याण की भावना प्रत्येक मानव मन मे जगाती है । इसी भावना से चतुर्विध श्री सघ का कर्तव्य है कि वह मेरे युवाचार्य के वचनो को "सद्यामि, पतियामि, रोयथ्यामि" के रूप में स्वीकार करे तथा युवाचार्यजी का भी कर्तव्य है कि वे धर्म मार्ग मे सदा जागृत रहते हुए आस्था और विवेकपूर्वक चतुर्विध सघ को धर्ममार्ग मे प्रवृत्त करते रहे ।

इस अवसर पर प रत्न मुनिश्री सत्येन्द्रमुनिजी म सा. ने अपना समर्थनात्मक प्रवचन दिया एव तदनन्तर युवाचार्यश्री ने विस्तार से अपने हृदयोद्गार अभिव्यक्त करते हुए फरमाया कि वे अपने पूज्य गुरुदेव की कल्पनाओ के अनुसार चलने का पूर्ण प्रयत्न करेगे । फिर भी यह उत्तरदायित्व उनके लिये बहुत भारी है उन्होने अपने आपको एक विद्यार्थी बताया तथा कर्तव्य निर्वहन मे सबके सहयोग की अपेक्षा की । उन्होने विनम्र भाव से घोषणा की कि मैं इस पद को अपने आपके लिये महत्त्व नही दे रहा हू । मैं तो यह समझता हू कि पूज्य आचार्यश्री ने उद्देश्य पूर्ण एकता की दिशा मे प्रयत्नशील रहने तथा चतुर्विध सघ की सेवा करने के लिये मुझे रखा है अतः मैं चतुर्विध सघ का नाना (छोटा सा) सेवक हू ।

तत्पश्चात् चादर प्रदान के लिये अपना समर्थन देने एव समारोह की सफलता के लिये अनेक सत मुनिराजों एव श्रावक सघो के प्राप्त सदशो को उदयपुर श्री सघ के मत्री ने पढकर सुनाया । समारोह करीब सवा घटे से सम्पन्न हुआ । इस समय सूर्य मेघ मडल मे छिपा रहकर जन समूह को शीतलता प्रदान करता रहा किन्तु चादर ओढाते समय कुछ क्षणो के लिये प्रकट होकर मानो सूर्य ने यह साक्षी दी हो कि आज जिन युवा मुनि को युवाचार्य की चादर ओढाई जा रही है उनका आचार्यत्वकाल सूर्य के समान देदीप्यमान होगा ।

वीतराग धर्म के महान् वीर, वीरों की पुण्य स्थली मे ही अमर हो गये :

वयोवृद्धता एव अस्वस्थ शारीरिक स्थिति के कारण वि. स. २०१६ के बाद भी वि. स २०१७, २०१८ एवं २०१९ के आपश्री के चातुर्मास काल भी उदयपुर मे ही व्यतीत हुए । प्रकृति का यह अनुपम सयोग था कि व्याधि की कठिन वेदना को सहते हुए भी आपश्री का आध्यात्मिक चिन्तन मनन निर्बाध रूप से चलता था । शरीर के ममत्व को भूलकर आपश्री आत्मानन्द मे तल्लीन होते जा रहे थे । प्रारभ मे तो श्रमण सघ की जटिल समस्याओ से उलझते रहे किन्तु जब यह देखा कि अन्य श्रमणवर्ग साफ दिल लेकर नही चल रहा है तो आपश्री ने भविष्य मे एकता की गुंजाइश रखते हुए अपना कार्यभार युवाचार्यश्री को सम्भला

दिया। तब आपश्री की ७३ वर्ष से ऊपर आयु तथा ५६ वर्ष से ऊपर दीक्षा हो चुकी थी दीपशिखा की अतिम लौ की तरह आपश्री की जीवन स्थिति चल रही थी कि जाने कब ज्योति विलीन हो जाय। परन्तु आचार्यश्री अपनी गिरती हुई शारीरिक अवस्था के प्रति सचेत थे। वे आत्ममयी थे इसलिये उस अवस्था मे भी सदा प्रफुल्ल रहते थे।

ज्यो-ज्यो आपश्री का भौतिक पिण्ड जर्जर होता गया त्यो-त्यो आत्मा की तेजस्विता प्रखर बनती गई। युवाचार्य श्री एव अन्य सत सदा उनकी सेवा मे बने रहते थे। आपश्री अपने देह दौर्बल्य को देखते हुए बार-बार सथारा ग्रहण करने की इच्छा व्यक्त करते रहते थे। डा शूरवीरसिहजी से भी आपश्री बराबर पूछते रहते थे कि मुझे शारीरिक स्थिति बतलाने मे सकोच न करें। इसमे मोह को आड़े न आने दें। एक दिन तो आपने अपने सकल्प को कार्यान्वित कर लेने पर सबको विवश कर दिया और आत्मबल पूर्वक सथारा ग्रहण कर लिया याने कि अपना मृत्यु महोत्सव मनाने को घोषणा कर दी। वैसे भी सथारा लेने के छ सात रोज पहले से ही आपश्री अन्नाहार का त्याग कर चुके थे।

सथारा सीजने के तीन दिन पहले की बात है। डा रामावतारजी ने आपश्री से औषधि लेने का आग्रह किया तब आपश्री ने फरमाया—अब मुझे मात्र परमात्मनाम स्मरण की ही औषधि लेनी है। वही मेरे इस ससार रोग के उन्मूलन की रामबाण औषधि है। तब डाक्टर सा. ने युवाचार्य श्री को सकेत दिया कि अब इन महापुरुष के बारे मे अपने लिये सोचने की सीमा समाप्त हैं। इनका ध्यान प्रभु मे लग चुका है। शरीर की तरफ तो इनका लक्ष्य ही नही रहा है।

एक दिन युवाचार्य श्री "अपूर्व अवसर क्यारे आवशे" आदि आपश्री को सुना रहे थे। आचार्यश्री ध्यान मग्न हो सुन रहे थे। सुनाते सुनाते युवाचार्य श्री एक पक्ति दुबारा बोल गये तो तत्काल आपश्री ने भूल सुधारी और फरमाया कि यह कडी तो बोल चुके हो, आगे सुनाओ। ऐसी ध्यान मग्न मुद्रा मे जब भी कोई दर्शनार्थी आपश्री के मुख मडल को निहारता तो उसे चारो ओर एक अलौकिक प्रभामडल के दर्शन होते थे। उस समय कोई यह सोच नही सकता था कि यह रोगाक्रान्त शरीर है। सभी ओज, तेज और सौम्य के दर्शन करके अपूर्व सतोष का अनुभव करते थे।

आपश्री ने पौष शुक्ला पूर्णिमा दिनाक ६-१-१९६३ को सायकालीन प्रतिक्रमण आदि करके सागारी सथारा ग्रहण कर लिया। पूरी रात्रि आपश्री को सतत आत्मध्यान मे लवलीन देखा गया। दूसरे दिन प्रात. कालीन प्रतिक्रमण के बाद आपश्री पद्मासन मे विराज गये। आपश्री ने युवाचार्य श्री को निकट बुलाकर फरमाया कि अब मुझे अपना कार्य करना उपयुक्त जान पडता है। मैं तो सावधान हू ही, स्वय भी सावधानी रखना। डा साहब आ जाय तो उनसे मुझे बात कराना। डा शूरवीरसिहजी के आने पर आपश्री ने सथारा ग्रहण करने की अपनी उत्कट अभिलाषा व्यक्त की ताकि वे भौतिक शरीर की अवस्था की ही सही जानकारी दे दें। डा. साहब ने सकेत दिया कि हमारे उपचार का सिद्धान्त और विज्ञान आप जैसे महापुरुषो

के लिये नही है । तदनुसार आपश्री ने संथारा अगीकार करने के लिये 'इच्छाकारेण' आदि पाठ एक ध्यान से सुनाने का निर्देश दिया, साथ मे यह भी फरमाया कि तीन दिन पहले मैंने स्थविर पं मुनिश्री सूरजमलजी म सा के पास सब आलोचना कर ली है और अभी पुन आलोचना कर छ जीवनी सुन ली है । अब मुझे डाक्टर वैद्य या अन्य कोई गृहस्थ स्पर्श न करे । मैं अपने जीवन को अब आगे बढाना चाहता हू । तब प्रात १०-२० बजे आपश्री तिविहार सथारा ग्रहण कर ध्यानस्थ हो गये । बीच-बीच मे नेत्र खोलते तो उनसे अलौकिक तेज फूटता सा दिखाई देता था । श्वासोच्छ्वास की गति अवश्य कुछ तीव्र हो गई थी लेकिन चेतना मे किसी प्रकार का व्यवधान नही था । दिनाक १०-१-१९६३ का दिन आगम पाठो को सुनते हुए पूर्ण शाति से व्यतीत हुआ ।

दिनाक ११-१-१९६३ के दिन वे ज्योतिपु ज अनन्त ज्योति के ध्यान मे विलीन हो गए । प्रात काल से आपश्री ध्यानस्थ होकर नित्य नियम के पाठ सुन रहे थे । प रत्न मुनिश्री सूरजमलजी म सा ने मगलपाठ जब कुछ धीमे स्वर मे सुनाना शुरू किया तो आपश्री ने उच्च स्वर मे सुनाने का निर्देश दिया । अत युवाचार्य श्री ने पुन. मगल पाठ सुनाया । स्थिति को समझकर आचार्यश्री ने दोपहर को २ बजे चौविहार सथारे का प्रत्याख्यान कर लिया । करीब तीन बजे जब अधिक निर्बलता के लक्षण दिखाई देने लगे और युवाचार्य श्री ने नाडी देखनी चाही तो आपश्री ने मना कर दिया । तीन बजकर बीस मीनिट होते-होते पूर्णचेतनावस्था मे मस्तिष्क और नेत्र आदि की तरफ से आपश्री की भव्य निराकार आत्मा ने अपनी भौतिक देह का परित्याग कर दिया । अतिम तेजस्विता का दृश्य अद्भुत और अनुभूति गम्य था। तब भी रोगाक्रान्त देह यथावत् पद्मासन अवस्था मे ध्यानस्थ ही चक्षुओ को दृष्टिगत हो रही थी ।

यह सौभाग्य का अद्भुत सयोग था कि जिन वीरो की पुण्यस्थली उदयपुर मे इन महापुरुष का जन्म हुआ था, वे उदयपुर के सपूत वीतराग धर्म के महान् वीर बनकर वीरो की उसी पावन स्थली मे अमर हो गये । यह उदयपुर को माटी का सौभाग्य माना जाना चाहिये ।

उदयपुर श्री सघ के दूर-सचार सदेशो एव आकाशवाणी के प्रसारण से आचार्यश्री जी के स्वर्गारोहण का समाचार समूचे देश मे फैल गया था । विभिन्न प्रातो के अनेकानेक स्थानो के श्री सघो ने सामूहिक रूप से एकत्र होकर आपश्री के प्रति श्रद्धाजलिया अर्पित की । अनेक व्यक्ति तो समाचार सुनते ही अतिम यात्रा मे सम्मिलित होने उदयपुर की ओर चल पडे ।

अतिम यात्रा दिनाक १२-१-१९६३ को प्रात ११ बजे प्रारभ हुई । पचायती नोहरे से लेकर नगर के राजमार्गो के दोनो ओर श्रद्धालु जनसमूह पक्तिवद्ध और शात खडा था । आचार्य श्री का पार्थिव शरीर चादी के विमान मे विराजमान था और करीब ५० हजार का विशाल जन समूह श्रद्धावनत पीछे पीछे चल रहा था । अग्नि सस्कार के लिये निश्चित स्थान

गगोद्भव मे अतिम यात्रा करीब दो बजे पहुची, जहा चन्दन–काष्ठ, नारियल कपूर आदि द्रव्यो से निर्मित रथी पर आचार्यश्री जी के पार्थिव शरीर को अग्नि समर्पित कर दिया गया। देखते-देखते पार्थिव शरीर अपने मूल तत्त्वो मे समाहित हो गया। तब भी हजारो अश्रुपूरित नेत्र अपने परम श्रद्धेय को भावाजलि अर्पित कर रहे थे।

दिनाक १३-१-१९६३ को देश के कोने–कोने से आये हुए श्रावक-श्राविका समुदाय ने नव प्रतिष्ठित आचार्यश्री नानालालजी म सा की सेवा मे प्रार्थना की कि आपश्री सत मडल सहित पचायती नौहरे मे पधार कर स्वर्गीय आचार्यश्री के सबध मे अपने हृदयोद्‌गार प्रकट करने की कृपा करे। उस श्रद्धा समर्पण सभा मे निम्नाकित मुनिवरो ने स्व आचार्यश्री की गुणगरिमा करते हुए अपने भाव सुमन अर्पित किये —

प. रत्न श्री सत्येन्द्रमुनिजी म सा मैं पजाबी सम्प्रदाय का था परन्तु मुझे स्वर्गीय आचार्यश्री गणशीलालजी म सा की गुण गरिमा ने आकर्षित कर लिया। मैं, व मेरे साथियो का सौभाग्य समझता हू कि हमे छ माह तक आचार्यश्रीजी का पूर्ण सहयोग मिला पर दुर्भाग्य है कि इन आखिरी कुछ दिनो मे हम अलग हो गये।

आचार्यश्री जी ने शात-उत्क्राति का कदम उठकर भगवान् महावीर की श्रमण सस्कृति को आगे बढाने के लिये जो आदेश उपदेश आदि दिये हैं, उन पर हमे चलना है। सकटो और बाधाओ का सामना करना है। कोई कैसा भी प्रचार करे, भले बुरे शब्द कहे तो भी हमे उसके उत्तर प्रत्युत्तर मे नही पडना है। मैं सत सतियो को भी कहूगा कि स्वर्गीय आचायश्री के आदेशो का पालन करने मे वर्तमान आचार्यश्री नानालालजी को पूर्ण सहयोग देवें और उनके हाथो को मजबूत बनावें।

२ पं रत्न मुनिश्री जनकमुनिजी म. (गोंडल सम्प्रदाय) : निर्मल, निर्ग्रन्थ, श्रमण सस्कृति के सरक्षक आचार्यश्री की विमल सुयश धारा दिग्दिगन्त तक फैली हुई है। हमे अनेक बार आपश्री की गुणगाथाओ के श्रवण का सौभाग्य प्राप्त हुआ। फलस्वरूप दर्शन की आकाक्षा ने हमे यहा तक आने की प्रेरणा दी। अहा, क्या प्रेमपूर्ण वात्सल्य भाव, एक कडक आचार निष्ठा एव सहनशीलता की तो आपश्री भव्यमूर्ति ही जान पडे। दो हजार बिच्छू एक साथ डक मारे ऐसी घोर वेदना मे भी उफ तक का शब्द नही। तेजोमय मूर्ति के दर्शन कर हम धन्य हो गये।

नियमो के पालने का सुन्दरतम उपाय यह है कि आचार्यश्री की प्रत्येक आज्ञा को शिरोधार्य करे। निर्ग्रंथ सस्कृति तभी सुरक्षित रह सकती है। स्व आचार्य ने विरोधो की परवाह न कर निर्ग्रंथ सस्कृति की शुद्धता को कायम रखने में बहुत बडा सहयोग दिया है।

३. स्थविर पद विभूषित प मुनिश्री सूरजमलजी म. सा आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा ने उदयपुर नगर मे जन्म लेकर मेवाड भूमि के शिखर को ऊचा उठाया है जैसे मसार

पक्ष मे राणा प्रताप ने मेवाड का गौरव बढाया वैसे ही स्वर्गीय आचार्यश्री ने आध्यात्मिक क्षेत्र मे मेवाड का ही नही अपितु सारे देश का गौरव बढाया है ।

आचार्यश्री ने धर्ममय जीवन विताने के लिये जो आदेश आदि दिये हैं उनको सच्चे हृदय से अमल मे लाए । उन्होने असह्य घोर वेदना के समय जिस प्रकार जीवन को ऊपर उठाया इस आदर्श को सामने रखकर हम भी साधना को अपनावें ताकि हमारा जीवन भी एक दिन सफल हो सके ।

इसी प्रकार विदुषी महासती श्री नानुकवरजी म सा, विदुषी महासती श्री मनोहरकवर जी म सा एवं विदुषी महासती श्री कौशल्याजी म. सा ने भी सती-वृन्द की ओर से स्व. आचार्यश्री के गुणगान करते हुए फरमाया कि स्वर्गस्थ आचार्यश्री ने श्रमण सस्कृति की रक्षा के लिये जो आदेश आदि दिये हैं उनका हम पूर्णरूपेण पालन करेंगी एव वर्तमान आचार्यश्री इस हेतु जो भी आज्ञा प्रदान करेंगे उसको सहर्ष शिरोधार्य करती हुई पालन करने मे हम तत्पर हैं और रहेगी ।

तदनन्तर आचार्यश्री नानालालजी म सा ने स्व. आचार्यश्री के प्रति भावपूर्ण श्रद्धाजलि समर्पित करते हुए फरमाया—

"मेरे सामने स्वर्गीय आचार्यश्री का सपूर्ण जीवन चरित्र चलचित्र की भांति स्मृति-पटल पर उभर रहा है । वह मैंने देखा है और अनुभव किया है, परन्तु उसको यथावत् मैं आप लोगो के सामने प्रकट कर सकू, वैसी मेरी क्षमता नही है । आचार्यश्री जी म जैसी दिव्य विभूति ने शात उत्क्राति को जन्म देकर जो आदर्श समाज के सामने रखा तथा अनेक सकटो व वाधाओ का सामना कर वे सत्य मार्ग पर अटल रहे, मेरी जिह्वा मे इतना सामर्थ्य नही है कि मैं उसका सागोपाग वर्णन कर सकू । आचार्यश्री को एक ओर तो सारे स्थानकवासी समाज से मान सम्मान मिलने का अवसर था और दूसरी ओर अनन्त तीर्थंकरो से आई हुई श्रमण सस्कृति की पवित्रता को अक्षुण्ण रखने का प्रश्न था । श्रमणवर्ग मे प्रवेश पाई हुई शिथिलता को देखकर स्वर्गीय आचार्यश्री ने अनुभव किया कि यदि प्रभाव मे आकर और प्रवाह मे वहकर जो ठीक नही है उसमे हा मे हा मिलादी गई तो इस शासन को नही अनन्त तीर्थंकरो की आशातना का भागीदार हो जाऊगा यह सोचकर आचार्यश्री ने वही मार्ग अपनाया जो उनके जैसे युग द्रष्टा महापुरुष के लिये श्रेय था । मान सम्मान उनको श्रेयमार्ग से विचलित नही कर सके ।

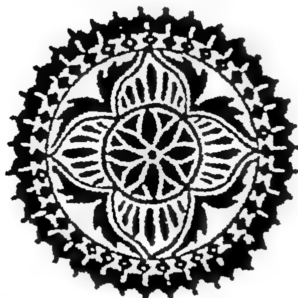
श्रमण सघ का जो रूपक वना उसके लिये आचार्यश्री की यह भावना थी कि श्रमण सस्कृति की पवित्रता के लिये सभी साथियो को साथ लेकर चलू । तदनुसार आपश्री ने लगभग आठ नौ वर्ष तक अथक प्रयत्न किये परन्तु फिर भी आपश्री को लगा कि अनुशासन मे रहकर उचित सलाह मे सवके चलने की तैयारी कम है, कुछ श्रमणो की तो विल्कुल ही नही । इससे उनके विश्वास को वडा धक्का लगा । तव भी आपश्री ने प्रयत्न नही छोडे और जो समस्याए सामने आई उन पर श्रमण सस्कृति के सरक्षणार्थ जो व्यवस्थाए आदि दी वे आज भी समाज के सामने

खुले रूप मे मौजूद हैं । ऐसा करते समय आचार्यश्री ने सहयोग की अपेक्षा रखी किन्तु वे रुके नही । उन्होने कभी यह नही सोचा कि मेरे पीछे कौन आता है और कौन नही । उन्होंने केवल यही देखा कि श्रमण सस्कृति मेरे सामने है और वे उसकी रक्षा मे सतत चलते रहे । आचार्यश्री के इस कठिन मार्ग का विरोध हुआ, कइयो ने उनके प्रति भले-बुरे शब्द कहे पर वे अपने सत्पथ से तनिक भी विचलित नही हुए । धैर्य के साथ सब कुछ सहते रहे ।

तदनन्तर नवाचार्य श्री ने दूर-दूर से पधारे हुए मुनिराजो का साधुवाद किया कि वे आचार्यश्री की सुगध को लेने के लिये भ्रमरवत् गुजरात, सौराष्ट्र जैसे दूरवर्ती प्रदेशो से करीब ७०० मील का लबा विहार कर पधारे हैं । आपश्री ने आचार्यश्री की सेवा मे रत सतो एव चिकित्सको को भी साधुवाद दिया ।

उदयपुर में उपस्थित जन-समूह ने तो अपने परम श्रद्धेय के प्रति सजल भावो के पुष्पहार अर्पित किये । श्रद्धाजलिया समर्पण करने वालो मे साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओ ने व्यक्तिश तथा श्री सघो ने सामूहिक रूप मे जिस प्रकार से अपने हार्दिक भाव प्रकट किये वे "श्रमणोपासक" पत्र के आचार्य श्री श्रद्धाजलि अक मे प्रकाशित हैं । उन्हे पढने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पूज्य आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा ने जीवन मे लोक कल्याण के लिये जिन प्रयत्नो का श्री गणेश किया, उनके प्रति निरन्तर प्रयत्नशील रहते हुए आपश्री महान से महानतम बन गये ।

यदि अति सक्षेप मे स्वर्गीय आचार्य श्री की जीवन-महत्ता का अकन करें तो कहना होगा कि ये करुणा, मैत्री एव सरलता की प्रतिमूर्ति थे । आपश्री ने एकता को साधन मानकर उसे साध्य तक पहुचाने का भगीरथ प्रयत्न किया । इतना ही नही, आपश्री ने श्रमण सस्कृति की पवित्रता की सुरक्षा के लिये शात-उत्क्राति को जन्म दिया जो आज भी उस पावन सस्कृति को शिथिलाचार से सरक्षित कर रही है । उदयपुर के मेवाडी सपूत ने अपनी धरती की आन-बान-शान मे चार चाद लगाकर धर्म-शूर की तरह वही अमरत्व प्राप्त किया ।



परिशिष्ट-१

आचार्यश्री जवाहरलालजी म. सा. द्वारा युवाचार्य श्री के दिनांक २३-६-१६३५ को घोषित किया गया

अधिकार—पत्र

सम्प्रदाय के आज्ञानुवर्ती सन्त श्री बडे प्यारचन्दजी महाराज आदि सब सतो, रगूजी महासती जी सम्प्रदाय की प्रवर्तिनीजी आनन्दकवरजी आदि आज्ञानुवर्ती सतिया, मोताजी महासतीजी की सम्प्रदायजी की प्रवर्तिनीजी केसरकवरजी, महतावकवरजी आदि उनकी सब सतिया, एव खेताजी महासतीजी सम्प्रदाय की प्रवर्तिनीजी राजकवरजी आदि उनकी सब सतिया इसी तरह पूज्यश्री हुक्मीचदजी महाराज के हितेच्छु सब श्रावको और श्राविकाओ से मेरी यह सूचना है कि —

१ अखिल भारतवर्षीय श्री सघ और मैंने श्री गणेशीलालजी को सम्प्रदाय के युवाचार्य पद पर स्थापित कर ही दिया है ।

२ अब मैं अपनी वृद्धावस्था व आन्तरिक इच्छा से प्रेरित होकर आपको सूचित करता हू कि मेरे पर जो सम्प्रदाय की जिम्मेवारी है अर्थात् सारणा वारणा करना, सब सन्त व सतियो को आज्ञा मे चलाना, सम्प्रदाय सबधी कार्यो की योजना करना एव सम्प्रदाय सबधी नियमो का पालन करने के लिए सघ को प्रेरित करना-आदि यह सब कार्यभार अब मैं युवाचार्य श्री गणेशीलालजी के ऊपर रखता हू । अत आप चतुर्विध-सघ आज सम्प्रदाय के कुल कार्य की देखरेख पूछताछ आज्ञा लेना आदि सब कार्य उन्ही से लेवे । मैं आज से सम्प्रदाय का पूर्ण अधिकार उन्ही को देता हू । केवल मेरी सेवा मे जिन्हे उचित समझूगा, उन सन्तो को अपने पास रखूगा और उन सन्तो पर मेरी देखरेख रहेगी ।

३ आप श्री सघ ने मेरी आज्ञा, वारणा मानकर जैसा मेरा गौरव रखा है वैसा ही युवाचार्य श्री गणेशीलालजी का भी रखेंगे, यह मेरे को पूर्ण विश्वास है । युवाचार्य श्री गणेशीलालजी भी श्री सघ के विश्वासपात्र है । अतएव श्रीसघ ने उन्हे युवाचार्य पद प्रदान किया है । इसलिए इस विषय मे मुझको विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नही है ।

४ युवाचार्य श्री गणेशीलालजी के प्रति मेरा हार्दिक सूचना है कि अब आप सम्प्रदाय के पूर्वजो के गौरव को ध्यान मे रखते हुए सम्प्रदाय का और श्री सघ का कार्य विवेक के साथ इस प्रकार करे कि जिससे श्री सघ सन्तुष्ट होकर किसी प्रकार की त्रुटि का अनुभव न करे ।

श्री शासनाधीश श्रमण भगवत महावीर स्वामी एव शासन श्रेयस्कर

श्रीमान् हुक्ममुनि आदि पूज्यपाद महानुभावो के तपोमय तेज प्रताप से श्री युवाचार्य गणेशीलालजी इस विशाल गच्छ को सुचारु रीति से चलाकर पूर्वजो के यश शरीर की रक्षा करते हुए शोभा बढावेंगे, ऐसा मेरा ही नही श्री सघ का भी पूर्ण विश्वास है ।

२३-९-१९५१

ऊ शान्ति शान्ति शान्ति

परिशिष्ट २

तत्कालीन श्रमणसघीय स्थिति पर आचार्यश्री गणेशीलालजी म. सा. का वक्तव्य

(दि. १५-९-१९५८)

श्रमण सघ की स्थापना से लेकर आज तक सत्य, न्याय, सिद्धात एव श्रमण सघीय समाचारी आदि को लक्ष्य मे रखते हुए ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि हेतु शुद्धिकरण सहित श्रमण सघ को दृढ बनाने की भावना से जैसा मुझे उपयुक्त जान पडा, तदनुसार यथाशक्ति कार्य करता रहा ।

मगर कुछ समय से कतिपय विषयो को लेकर समाज मे कुछ भ्रामक वातावरण परिलक्षित हो रहा है । ऐसे भ्रामक वातावरण को दूर करने के प्रयत्न किये गये और किये जा रहे हैं कि वस्तुस्थिति को सही रूप मे न लेकर वातावरण को और भ्रामक बनाया जा रहा है । अत वस्तुस्थिति के दिग्दर्शन पूर्वक अपना निवेदन सघ के सामने रख देना चाहता हू —

१ भीनासर सम्मेलन मे सुत्तागमे विषयक निर्णय आचार्यश्रीजी म (आत्मारामजी म सा.) पर छोड गया । उस प्रस्ताव की पक्तिया निम्न प्रकार है —

"प मुनिश्री फूलचदजी म. सा (पुष्प भिक्खू) द्वारा सम्पादित "सुत्तागमे" विषय मे निर्णय लिया गया कि—सूत्रपाठ मे पुष्टावलम्बन एव खास प्रमाण विना परिवर्तन करना इष्ट नही है । अत वे अपने विचार आचार्यश्री जी की सेवा मे भेज दें । फिर वे (आचार्यश्री जी म) जो निर्णय देंगे, वह श्रमण सघ को स्वीकार होगा ।

पर आचार्यश्री जी म की तरफ से, निर्णय आज दिन तक समाज के सामने नही आया ।

२ प्रधानमत्री व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलालजी म. श्रमण सघ का कार्य सुचारु रूप से कर रहे है, लेकिन आचार्यश्री जी म व प्रधानमत्री जी म के बीच मे पत्र-व्यवहार आदि के प्रसंग से कुछ ऐसा वातावरण बना, जिस पर प्रधानमत्री म ने प्रधानमत्री पद का त्यागपत्र आचार्यजी म की सेवा मे पेश कर दिया ।

इस मामले को निपटाने के लिये कान्फ्रेंस की ओर से भी प्रयत्न हुए और प्रधानमत्री जी म. ने कान्फ्रेन्स को स्पष्ट लिखवा दिया था कि—

मैं अब तक मौन हू, तब तक मौन ही रहूंगा, जब तक आचार्यश्री जी से मुझे सीधा समाधान नही होता।

यह समस्या भी अभी तक अस्पष्ट ही बनी हुई है।

३. भीनासर सम्मेलन मे ध्वनि यत्र विषयक जो कुछ हुआ, वह प्रस्ताव के रूप मे विद्यमान है। लेकिन अपवाद क्या है ? प्रायश्चित क्या लेना ? और स्वच्छन्दता क्या है ? इन तीन बातो का निर्णय भीनासर-सम्मेलन मे नही किया गया। इस विषयक स्पष्ट घोषणा दिनांक १-८-५६ को आचार्यश्री जी की तरफ से हो चुकी थी। इसके पश्चात् तीनो शब्दो के विषय मे आचार्यश्री म और मेरे (उपाचार्यश्री जी म. के) सयुक्त निर्णय की बात सामने आई और विषय दोनो के ऊपर छोड दिया गया लेकिन यह विषय निम्न पक्तियो के अनुसार दोनो मे से एक के ऊपर ही आ गया। इस सिलसिले मे एक पत्र की वे पक्तिया इस प्रकार हैः—

"लाउडस्पीकर" का पूरा निर्णय आचार्यश्री ने उपाचार्यश्री को सौंपा है। उपाचार्यश्री उपाध्याय मडल और मत्रिमडल के परामर्श से जो कुछ निर्णय करेंगे आचार्यश्री को स्वीकार होगा।

इसका भी ध्यान रखते हुए मैंने व्यवस्था करने की दृष्टि से ध्वनियत्र के विषय को हाथ मे लिया है और जो प्रयत्न हुए, उसके परिणामस्वरूप अधिकारी मुनियो के अभिप्राय पूर्वक जो स्थिति थी वह "ध्वनियत्र विषयक सूचना" पत्र के रूप मे ता. १६-१०-५७ को सभी अधिकारी मुनियो के पास भिजवा दी। इसके बाद इस विषय मे किसी को कुछ कहने का अवकाश नही रह जाता। तथापि आचार्यश्री जी म की तरफ से ता. १०-१२-५७ का पत्र देहली कान्फ्रेन्स को पहुचा। जिसमे आचार्यश्री जी म ने यन्त्र विषयक सूचना पत्र पर असहमति प्रकट की और अवैधानिक बतलाया। जिसकी नकल कान्फ्रेन्स आफिस से यहा आई। उसका उत्तर ता २५-१२-५७ को दिलाया गया। इस बीच ता १६-१२-५७ का आचार्यश्री जी म की तरफ से सीधा भी पत्र आया। उसका उत्तर ता २१-१२-५७ को लिखाते हुए आचार्यश्री जी म सा को यह अर्ज करवाई कि—

ध्वनियत्र विषयक सूचनापत्र मे आचार्यश्री जी म. को कौनसी पक्ति अवैधानिक मालूम देती है ? लिखवाने की कृपा करावे, ताकि उस विषय मे लिखवाया जा सके।

इसके पश्चात् भी उस विषय की तरफ कई वक्त आचार्यश्री जी म का ध्यान आकर्षित किया गया, पर आज दिन तक उत्तर नही आया और आचार्यश्री जी म. ने ध्वनियत्र विषयक सूचना पत्र पर जो असहमति प्रकट की तथा अवैधानिक बतलाया जिसके परिणामस्वरूप ध्वनियत्र के प्रयोगकर्त्ताओ मे से कई मुनिवरो ने प्रायश्चित नही किया, जो कि श्रमण सघ की व्यवस्थानुसार प्रायश्चित हर हालत मे लेना अनिवार्य था। पर प्रायश्चित नही लेने से सतवर्ग के साभोगिक सबध में बाधा आई, जो प्रयत्न करने पर भी आज दिन तक ठीक नही हो पाई।

४. पाली प्रकरण आदि की घटनाए भी समाज के सामने आई, तब पता चला कि कई व्यक्तियो के सयम विघातक पत्र-व्यवहार लम्बे अर्से से चालू हैं। वे पत्र सहसा पालीकाड मे पकड गये, जिससे जन मानस मे अत्यधिक दूषित वायुमडल हो गया और आवाज आ रही थी कि ऐसे व्यक्ति साधु वेश के योग्य नही रहते आदि काफी विक्षुब्धता का वातावरण चल रहा था। अन्य मतावलम्बियो मे हसी होने का प्रसग आ रहा था और शिथिलाचार के विषय को हाथ मे लेने के लिये कान्फ्रेन्स के अधिकारियो के भी पत्र आ रहे थे। उनमे से एक पत्र मे ता १४-१-५७ को श्री श्वे स्था जैन कान्फ्रेन्स के भूतपूर्व अध्यक्ष स्वर्गीय श्री विनयचन्द्रभाई ने लिखा था कि —

"आप आज श्रमण सघ के उपाचार्य हैं और आचार्यश्री की भी सर्वसत्ता आपके पास है। इस हालत मे अगर भ्रष्टाचार न रोकोगे तो श्रावक सघ तो अपना कार्य करेगा।"

इधर संगठन में कुछ विघटन का वातावरण भी परिलक्षित हो रहा था, तब यह मामला मेरे पास पहुचा। आचार्यश्रीजी म तथा कपितय अधिकारी मुनियो ने भी शिथिलाचार के विषय को निपटाने के लिये कहलवाया। इस कथन पर भी ध्यान देकर मैंने इस विषय की छानवीन की और समग्रस्थिति का अध्ययन कर शिथिलाचारियो के विषय मे फैसले दिये और जिनके साथ श्रमणोचित व्यवहार विच्छेद किया गया, उसकी सूचना ता ५-२-५७ के पत्र द्वारा कान्फ्रेन्स के मार्फत सभी अधिकारी मुनियो के पास पहुचाने के लिये भिजवा दी। इसके उत्तर मे कान्फ्रेन्स का भी यहा के निर्देशानुसार उक्त सूचना अधिकारी मुनियो के पास भेजने का पत्र आ गया।

इस प्रकार शुद्धिकरण की व्यवस्था चल रही थी कि अजमेर-मेरवाडा तथा उसके आसपास के कुछ क्षेत्रो मे रूपचदजी आदि विषयक भ्रामक वातावरण कर्णगोचर होने लगा। इस पर विचार हुआ कि समाज इससे सावधान रहे और भ्रामक वातावरण और न फैले। इसके लिये रूपचदजी लक्षमाजी, नगीनाजी आदि व्यक्तियो के विषय मे अजमेर मे दिये गये फैसले को (जिस पर आचार्यश्री जी म भी ता १५-३-५७ को हर्ष फरमा चुके थे) मद्दे नजर रखते हुए पुन जो ताजी सूचना थी, वह भी अधिकारी मुनिवरो एव समाज के प्रमुख व्यक्तियो द्वारा समाज के पास पहुचाने के लिये कान्फ्रेन्स के पास भिजवादी। इसके पूर्व आचार्यश्री जी म की सेवा मे भिजवा दी गई थी।

इसके वाद लुधियाना मे आचार्यश्री जी म भी यहा से की गई व्यवस्था की उपेक्षा कर शुद्धिकरण का पालन नही करने मे प्रयत्नशील व्यक्तियो के द्वारा उत्पन्न किये गये वातावरण में रस लेते हुए प्रतीत हो रहे हैं, जिससे ऐसे व्यक्तियो को प्रोत्साहन मिल रहा है। इस प्रकार एक के वाद एक परिस्थिति उत्पन्न होते रहना शोभास्पद नही है।

मैंने समाज सेवक के नाते श्रमण सगठन को शुद्धिकरण पूर्वक टिकाए रखने के लिये मेरी बुद्धि के अनुसार वस्तुस्थिति को समझकर जो कुछ बन पडा, किया। परन्तु उसमें कतिपय

व्यक्तियो की तरफ से सहयोग की अपेक्षा वाधाए अधिक सामने लाई गई । और अब भी अपेक्षित सहयोग का अभाव भी सामने आ रहा है । अस्तु ।

समाज का कार्य सभी प्रमुख व्यक्तियो के हार्दिक सहयोग पर विशेष अवलबित रहता है । इसमे कौन कितना किस कार्य मे सहयोग प्रदान कर रहे हैं, यह समाज के सामने है । शिथिलाचार और वह भी अनैतिक जीवन स्वरूप जो साधु संस्था पर एक कलक है, उसमें व सैद्धांतिक विपय मे गोलमाल की स्थिति सहन नही की जा सकती । अत मैं गोलमाल की स्थिति मे उलझे रहना पसद नही करता ।

आज समाज के कुछ जिम्मेदार व्यक्ति भी हर वात मे गोलमाल करना चाहते हैं और उनकी इच्छानुसार कार्य न होने पर वे सघ तोडने की आवाज उठाने लग जाते हैं ।

इतना ही नही आचार्यश्री जी म. भी निर्णीत मामलो को उलझाने वाले व्यक्तियो की वातो मे आकर यहा से की गई व्यवस्था के प्रतिकूल अध्यादेश तक निकाल देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वडे परिश्रम से वने वनाए सगठन मे विभेद हो जाता है ।

ऐसी परिस्थिति मे फिलहाल यह निवेदन करना आवश्यक हो गया है कि जो श्रमण वर्ग शास्त्रीय एव श्रमण सघीय समाचारी का तथा उसके संरक्षणार्थ यहा से की गई व्यवस्था का पालन करेगा, उसी श्रमण वर्ग के साथ श्रमण सघीय साभोगिक व्यवहार आदि रह सकेगा ।

सर्व प्रथम उक्त निवेदन को मुनिवरो तथा कान्फ्रन्स के पास भिजवाया गया था परन्तु जव किसी ने भी इस वक्तव्य पर ध्यान न दिया तो चतुर्विध सघ को श्रमण सघीय समस्याओ के सवध मे आचार्यश्री जी म सा के प्रयत्नो और सही स्थिति से अवगत कराने के के लिये जावरा श्री संघ ने वक्तव्य को मुद्रित करवाकर यथा स्थान सभी श्री संघो को भेज दिया था ।

परिशिष्ट-३

"पू. श्री घासीलालजी म. सा. का जीवन चरित्र"

[नामक पुस्तक मे पू. श्री घासीलालजी म. सा. का एवं पं. श्री रूपेन्द्रकुमारजी का अन्यथा लेखन —

ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. के जीवन से जैन समाज का अनुभवी वर्ग भलीभाति परिचित है । वड़ी से वडी गम्भीर स्थिति मे भी घवराना क्या होता है यह मानो आचार्यश्रीजी की जीवन डिक्शनरी मे था ही नही । आचार्यश्री जी ने हर परिस्थिति का बड़ी धैर्यता के साथ मुकावला किया था ।

पूज्यश्री द्वारा निष्कासित आज्ञा से बाहर पूज्य मुनि घासीलालजी म. सा. के द्वारा

उनके जीवन चरित्र के लेखक रूपेन्द्रकुमारजी के द्वारा पूज्य श्री जवाहरलालजी म. सा. के विषय मे तथा शान्त क्रान्ति के जन्मदाता आचार्यश्री गणेशीलालजी म. सा. के विषय मे किया गया अन्यथा–लेखन राग-द्वेष से पूर्ण मनोवृत्ति का दिग्दर्शन कराता है ।

यहा उन्ही असत्य कल्पनाओ का निरसन कर सत्य तथ्य बतला रहे हैं ।

पू श्री घासीलालजी म सा के जीवन चरित्र के पृष्ठ १६५ मे लिखा है—जब आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा रुग्ण थे तब की स्थिति वतलाई है ।

"डाक्टरो, ज्योतिषियो के मुख से निराशाजनक उत्तर सुनकर पूज्य आचार्य श्री अधिक घबराए" आगे फिर लिखा है—"जिससे पूज्य श्री जी के मनोबल पर विपरीत असर हुआ ।" ऐसे समय मे मुनिश्री घासीलालजी ने उनको धैर्य बधाया था । ऐसा लेखक ने पृष्ठ १६५ पर लिखा है—"आप तो विचारशील पुरुष है । महापुरुष तो सकट के समय धीरज से ही काम लेते हैं ।" इस प्रकार घासीलालजी म. सा. ने पूज्य श्री को सात्वना दी थी ।

उपर्युक्त कथन को सत्यता की तुला पर तोलने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि इस कथन मे सत्यता का अश मात्र नही है । क्योकि जब आचार्य श्री जी ने हाथ पर हुए फोडे का आपरेशन करवाया था तब क्लोरोफार्म सू घे विना ही सजगता की स्थिति मे करवाया था । आचार्य श्री जी ने स्वय ने डाक्टरो के सामने अपना हाथ फैलाकर अपनी आखो से देखते हुए आपरेशन करवाया । जिससे कि डाक्टर स्वय आपकी धैर्यता, सहनशीलता पर आश्चर्य चकित थे । इसका वर्णन आचार्य श्री जी के प्रकाशित जीवन चरित्र के पृष्ठ १४८ पर इस प्रकार से आया है ।

आपरेशन का दृश्य बडा ही हृदय द्रावक था । आपरेशन देखने वालो का हृदय काप रहा था । मगर पूज्यश्री के चेहरे पर चिन्ता का कोई चिह्न तक नही था । उन्होने बेहोशी के लिये क्लोरोफार्म भी नही सू घा था । होश मे रहते हुए आपरेशन करवाया । हथेली डाक्टर के सामने पसार दी डाक्टर ने पहले तो चाकू से एक क्रोस सा बनाया और फिर कैंची उठाकर हथेली की चमडी काट दी । पूज्य श्री के मुंह से उफ तक नही निकला । जान पडता था, शरीर की ममता त्याग कर वे आत्म लोक मे रमण कर रहे हैं । और आत्म-रमण की तल्लीनता मे इन्हे अपने शरीर का भान ही नही है ।

"पूज्य श्री का अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता देखकर चकित हो जाना पडा । धन्य हैं ऐसे सहनशील महासत जिन्होने इस रुग्ण अवस्था मे भी अपने आदर्श चरित्र द्वारा जनता को बोध पाठ दिया ।"

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री कितने सहनशील और प्रज्ञा-सम्पन्न थे जब उन्होने आपरेशन भी सजगता की अवस्था मे कराया तो डाक्टर या ज्योतिष के कहने से वे घबरा जाए यह तो कल्पना भी नही की जा सकती है ।

आज भी इस बात को समाज के अनुभवी श्रावक अच्छी तरह से जानते हैं कि आचार्य श्री जी ने फोडे का भयानक आपरेशन भी बिना किसी क्लोरोफार्म या इंजेक्शन लेकर सजगता की हालत मे करवाया था ।

अत. पू श्री घासीलालजी म. सा के जीवन चारित्र मे पृष्ठ १६५ पर कही गई बात बिल्कुल गलत है ।

"पू श्री घासीलालजी म. सा के जीवन चरित्र" पृष्ठ १६५ पर लेखक ने लिखा है कि—

"इन्होने (घासीलालजी म सा) ने कहा कि मुनिवरो ! पूज्य श्री के स्वास्थ्य से हम लोग बडे चिन्तित हैं । इस चिन्ता से मुक्त होने के लिये एक राम-बाण उपाय यह है कि प्रभु प्रार्थना, निन्तर तपश्चर्या· मेरा विश्वास है कि इस प्रकार की तपश्चर्या एव सामूहिक प्रार्थना से पूज्य श्री को इतनी शक्ति प्राप्त होगी कि पूज्यश्री सवत्सरी के दिन अवश्य व्याख्यान देने की शक्ति प्राप्त करेंगे तब सभी (संतो) ने बारी–बारी से तेले की तपश्चर्या और आयबिल प्रारम्भ कर दिये ।"

पृष्ठ १६५ "परिणाम यह आया कि पूज्य श्री का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर सुधारने लगा । जिन्हे बोलने की शक्ति नहीं थी वे सवत्सरी के शुभ अवसर पर दो घटे तक सुन्दर प्रवचन देते रहे ।"

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा के जीवन चरित्र पृष्ठ १४९ पर उपरोक्त बात इस प्रकार आई है—

"डाक्टर मुलगावकर नें रोग का इतिहास सुनकर भली-भाति परीक्षा की तो उन्होने भी कहा कि पूज्य श्री को मधुमेह की भी शिकायत है । पौष्टिक और मिष्ठ आहार के कारण वह घटने के बदले बढ गया था । फोड़े का मूल कारण भी वह मधुमेह था । डाक्टर ने एकदम ही अन्न बन्द करके सिर्फ छाछ पर रहने की सलाह दी । फोडे का आपरेशन और साथ ही मधुमेह का इलाज प्रारम्भ हुआ । तबीयत मे सुधार होने लगा । सवत्सरी के दिन पूज्य श्री मे इतनी शक्ति आगई कि वे व्याख्यान मण्डप में पधारे और करीब २० मिनट तक भाषण भी दे सके ।"

इस लेखन को पढने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि रोग निवारण के समय तपश्चर्या आदि पू घासीलालजी म सा की प्रेरणा से की गई हो, ऐसा कोई वर्णन नही है ।

सवत्सरी का व्याख्यान भी आचार्य श्री जी के लिये २० मिनट तक ही देने का बताया है न कि दो घटे तक । क्योंकि आचार्य श्री जी का जीवन चरित्र प्रमाणित एव सत्य तथ्य से युक्त है ।

पू. श्री घासीलालजी म. सा के जीवन चरित्र पृष्ठ १९६ पर लेखक पं. श्री रूपेन्द्रकुमारजी ने लिखा है कि आचार्य श्री जी ने जब अपना उत्तराधिकारी बनाने के लिये चिन्तन किया तो उनका विचार पू. श्री घासीलालजी म सा को अपना उत्तराधिकारी बनाने के लिये हुआ। आचार्य श्री जी ने इसके लिये बहुत आग्रह भी किया किन्तु उन्होंने यह पद ग्रहण नहीं किया। जैसा कि उनके जीवन चरित्र मे लिखा है—

"पण्डित मुनि श्री घासीलालजी म सा को युवाचार्य पद देने के लिये इस सम्प्रदाय के श्रावक सतो के मुखियो एव मुनियो के परामर्श मे एक ड्राफ्ट तैयार किया गया। पूज्य श्री ने ड्राफ्ट को अच्छी तरह पढकर अपनी स्वीकृति फरमा दी। उसके बाद पूज्य श्री ने प रत्न श्री घासीलालजी महाराज को अपने पास बुलाकर उन्हे सम्प्रदाय का भार स्वीकार करने के लिये कहा। पूज्य श्री की एकाएक आज्ञा सुनकर घासीलालजी महाराज वडे विचार मे पड गये। उस समय गुरुदेव की शारीरिक स्थिति भी अस्वस्थ थी। उनकी आज्ञा का उल्लघन का अर्थ है उनके मन को ठेस पहुचाना। लेकिन सम्प्रदाय की इतनी वडी जिम्मेदारी को अपने पर लेना भी सहज नही था। चरित्र नायक ने कुछ विचार कर विनम्र भाव से पूज्य श्री से अर्ज की कि "हे गुरुदेव! आपकी आज्ञा का उल्लघन करने की तो मेरी सहसा हिम्मत नही होती। आपने जो मेरे पर सम्प्रदाय का भार देने का निश्चय किया इसके लिये मैं आपकी कृपा दृष्टि का सदा ऋणी हू लेकिन मैं अपने आपको इस पदवी के लायक नहीं मानता। मुझसे अधिक अनुभव योग्यता शास्त्रीय ज्ञान तथा उम्र वाले अनेक साधु इस सम्प्रदाय मे मौजूद है। आप उन्ही को यह भार सौंप दें। पूज्य श्री के वार-वार समझाने एव श्रावको के अतीव आग्रह होने पर भी मुनि श्री घासीलालजी म. ने युवाचार्य बनने से साफ-साफ इन्कार कर दिया।

उपरोक्त विषयक कथन को जब आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. के जीवन चरित्र पुस्तक के पृष्ठ १४८ को खोलकर देखते हैं तो वहा उत्तराधिकारी के लिये आचार्य श्री जी ने किसके लिये सोचा आदि सुविस्तृत वर्णन मिलता है। वह इस प्रकार है—

"परिस्थिति इतनी भयकर हो गई कि पूज्य श्री का जीवन भी खतरे मे दिखाई देने लगा। पूज्य श्री को अपने शरीर की कोई चिन्ता नही थी और न कोई जीवन का मोह था। मगर सघ की चिन्ता उन्हें अवश्य थी। किसी योग्य उत्तराधिकारी के हाथ मे श्री सघ का उत्तरदायित्व सौंपे विना यह चिन्ता दूर नही हो सकती थी। पूज्य श्री ने अपने सम्प्रदाय के सतो पर दृष्टि दौडाई और उनका ध्यान पण्डित मुनि श्री गणेशीलालजी म. सा. पर केन्द्रित हो गया। मुनि श्री विद्वान् चरित्रपरायण और सुविनीत थे। सघ का शासन-सूत्र आपके हाथो मे सौंप देने का पूज्य श्री ने विचार किया। समाज के प्रधान श्रावक, जो वहा मौजूद थे उनसे विचार विनिमय किया। सम्प्रदाय के अनेक सतो और श्रावको से भी राय मगाई और उन्होंने पूज्य श्री के विचार का समर्थन किया। इस प्रकार पूज्य श्री के चुनाव का सबने समर्थन किया। मगर मुनि श्री गणेशीलालजी म सा. को इस वात का अभी तक पता नही चला था।

अचानक सेठ वर्द्धमानजी साहब पीतलिया मुनि श्री के पास पहुचे। उन्होने

कहा—महाराज ! मैं आपसे निवेदन करने आया हू । वह यह है कि पूज्य श्री का स्वास्थ्य इस समय ठीक नही है यह तो आप जानते ही है । ऐसी स्थिति मे आप पूज्य श्री को किसी भी प्रकार पशोपेश मे न डालें और पूज्य श्री आपको जो आज्ञा दे उसको स्वीकार कर लें ।

सेठजी की वात सुनकर मुनिश्री को आश्चर्य सा हुआ । उन्होने उत्तर दिया मैंने कब पूज्यश्री की आज्ञा टाली है जो आपको ऐसा कहने की आवश्यकता पडी । मैं तो पूज्य श्री का तुच्छ सेवक रहा हू और इसी रूप मे रहना चाहता हू ।

सेठजी ने कहा—वस ठीक है, आपसे हम ऐसी ही आशा रखते हैं । आपश्री पूज्य श्री की आज्ञा का उल्लघन नही करेंगे यही समझकर तो पूज्य श्री आपको आज्ञा देंगे ।

आखिर मुनि श्री, पूज्य श्री की सेवामे उपस्थित हुए । उनसे सम्प्रदाय का भार स्वीकार करने के लिये कहा गया । यह सुनकर मुनि श्री को पता चला कि पहले समस्त आज्ञाओ से यह आज्ञा विलक्षण है और इसका पालन करना वडा कठिन है । मुनिश्री वडे ही पशो–पेश मे पडे । क्या करना चाहिये क्या मैं इस गुरुतर भार को उठाने मे समर्थ हो सकूगा। मगर अस्वीकार करने का अर्थ पूज्य श्री को इस नाजुक अवस्था मे ठेस पहुचाना होगा। स्वीकार करने के लिये जिस सामर्थ्य की आवश्यकता है वह मैं अपने मे नही पाता । ऐसी स्थिति मे सघ की सेवा कैसे कर सकूगा । इस प्रकार पशो–पेश के पश्चात् आपने जब अपनी असमर्थता प्रकट की तो सेठ वर्द्धमानजी पितलिया ने वनावटी रोष भरी आखो से मुनि श्री की ओर देखा उनकी दृष्टि मे स्पष्ट था कि आज्ञाकारी और विनीत शिष्य होते हुए भी इस प्रसग पर यह अस्वीकृति क्यो प्रकट कर रहे हैं ।

परिणाम यह हुआ कि मुनि श्री को विवश होकर वह भार स्वीकार करने की स्वीकृति देनी पडी ।

इस मेटर मे पू. श्री घासीलालजी म सा. को उत्तराधिकारी वनाने की बात तो दूर रही किन्तु आचार्य श्री जी का इस विषय मे चिन्तन था इसका भी कही नामोनिशान नही है । उनका उत्तराधिकारी के लिये चिन्तन गणेशाचार्य पर स्थगित हो गया था । यदि पू. श्री घासीलालजी म. सा के प्रति आचार्यश्री का यत्किंचित् भी विचार होता तो आचार्य श्री जी के जीवन चरित्र मे अवश्य ही उसका वर्णन आता । किन्तु आचार्यश्री जी के जीवन चरित्र नामक पुस्तक मे कही भी ऐसा देखने को नही मिला ।

वलिक आचार्य श्री जी के जीवन चरित्र मे तो इस प्रकार लिखा है कि सुश्रावक वर्द्धमानजी पीतलिया ने पू श्री घासीलालजी म. सा से गणेशाचार्य को युवाचार्य पद देने हेतु ड्राफ्ट वनाने के लिये कहा था तव पू. श्री घासीलालजी म सा. ने कहा कि मुझे ड्राफ्ट बनाना नही आता है । तव श्री वर्द्धमानजी पीतलिया ने स्वय ने ड्राफ्ट बनाया और पू. श्री घासीलाल जी म. सा. ने उसकी नकल उतारी थी ।

आचार्य श्री जी के जीवन चरित्र पृष्ठ १४६ पर इसका वर्णन आया है ।

"सेठ पितलाया जी ने मुनि श्री घासीलालजी म. को युवाचार्य पदवी का व्यवस्था पत्र लिखने के लिये कहा । मगर इनके यह कहने पर कि मुझे लिखना नही आता, स्वय सेठजी ने व्यवस्था पत्र का ड्राफ्ट बना दिया और मुनि श्री घासीलालजी म ने उसकी नकल की और वह पूज्य श्री ने अपने पास रख लिया ।"

इस मेटर से एक बात और यह जानी जाती है कि जब गणेशाचार्य के युवाचार्य पद के मेटर की नकल स्वय पू श्री घासीलालजी म ने उतारी थी । यदि पू श्री घासीलालजी म सा गणेशाचार्यजी के जीवन को किंचित् मात्र भी शकित मानते तो उस समय आचार्य श्री जी से स्पष्ट कह देते कि मैं इनको युवाचार्य पद देने की सहमति नहीं दूगा । इन्हे युवाचार्य पद नही दिया जाय आदि । लेकिन उन्होने इस विषय मे चू शब्द भी नही कहा और युवाचार्य के मेटर की नकल कर दी ।

इस पर कोई कहे कि पू श्री घासीलालजी म सा. आचार्य श्री की बात का विरोध नही करना चाहते थे । तब बाद मे विरोध क्यो किया जैसा कि सम्वत् १९९० के अजमेर सम्मेलन मे स्थानकवासी समाज के गणमान्य सतो ने गणेशाचार्य को युवाचार्य पद देने के लिये पचो की हैसियत से घोषणा की थी ।

इसका वर्णन अगले पृष्ठो पर किया जाएगा । उस समय पू श्री घासीलालजी म सा. ने इस बात का विरोध कैसे किया था । विरोध का वर्णन उन्ही के जीवन चरित्र पृष्ठ २३६ पर आया है ।

"अजमेर साधु सम्मेलन के अवसर पर ही आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा ने पण्डित प्रवर श्री घासीलालजी म से बिना विचारे ही गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बनाने का निर्णय कर लिया । जब पण्डित प्रवर श्री घासीलालजी म को इस बात का पता चला तो उन्होने बडा विरोध किया ।"

हालाकि आचार्य श्री ने गणेशाचार्य को स्वय ने युवाचार्य नही बनाया था ।

"परस्पर विरोध" बद्तो व्याघात

पू. श्री घासीलालजी म सा के जीवन चरित्र मे बतलाया है - कि उनका जीवन पदवी आदि से परे हो गया था और उनके आचार्य पद लेने का त्याग था । आदि "जैसा कि पू श्री घासीलालजी म सा. के जीवन चरित्र के पृष्ठ १९७ पर बतलाया है—

"हमारे चरितनायक जी उपाधि को व्याधि ही मानते थे । जिसके जीवन का स्तर वास्तव मे ऊचा उठ जाता है तो अपनी आत्मा को ही ऊपर उठा लेता है । वह उपाधि लेकर क्या करेगा, चरितनायकजी का व्यक्तित्व स्वत इतना उच्चतर था कि वह उपाधि से परे पहुच चुका था । उपाधियां उनके जीवन की ऊचाई तक पहुच ही नहीं सकती थी । तो उनकी क्या महत्ता बढा सकती है ।"

हमारे चरितनायकजी ने पूज्य श्री के द्वारा दी जाने वाली युवाचार्य की पदवी को लेना स्वीकार नही किया । मुनि श्री के इस अस्वीकृति के मूल मे शायद एक कारण यह भी कि यह उपाधि मेरे आध्यात्मिक जीवन मे व्याधि उत्पन्न कर सकती है । मुनि श्री ने पदवी अस्वीकार करके साधु-समूह के सामने एक सुन्दर आदर्श उपस्थित किया परन्तु उन्होने पूज्य पदवी नही लेने की प्रतिज्ञा होने से स्वीकार नही की ।

उपरोक्त मेटर की सत्यता पृष्ठ १४८ को देखने पर स्पष्ट ज्ञात हो जाती है, किन्तु स्वय घासीलालजी म सा के जीवन चरित्र से भी उनकी असत्यता ज्ञापित होती है । आखिर सत्य सत्य ही रहता दे ।

आइये अब देखिये इन्ही पू श्री घासीलालजी म. सा. के जीवन चरित्र पुस्तक के पृष्ठ १८६ को । इसमे पू. श्री घासीलालजी म. सा. के द्वारा पदवी ग्रहण करने का स्पष्ट रूप से लिखा गया है ।

कोल्हापुर महाराज पू श्री घासीलालजी म. सा. को कह कह रहे हैं—

"मैं आपको अपना गुरु मानता हू अत· आपको राजगुरु शास्त्रधारी की पदवी से विभूषित करना चाहता हूं । मुझे आशा ही नही किन्तु पूर्ण विश्वास है आप मेरी इस भावना का अनादर नही करेंगे । मुनि श्री महाराजा की इस पवित्र भावना का अनादर करना अप्रासगिक मानकर मौन रहे ।

कुछ समय तक महाराजा महाराज श्री से विविध विषयक चर्चा करते रहे बाद मे वन्दन करके अपने स्थान लौट आये । उसी समय अपने राज्य के प्रतिष्ठित पण्डित को बुलाकर उपाधि पत्र तैयार करने का आदेश दे दिया । जब उपाधि पत्र तैयार हुआ तो महाराजा ने उस पर दस्तखत किये और पत्र को सम्मानपूर्वक एक प्रतिष्ठित के साथ महाराज श्री की सेवामे भेंट किया ।"

अब यहा पर सहज ही प्रश्न उपस्थित होता है कि पू श्री घासीलालजी म सा पदवी को चाहते ही नही थे उनका जीवन पदवियो से परे पहुच चुका था । यथा "चरितनायक जी का व्यक्तित्व स्वत इतना उच्चतर था कि वह उपाधि से परे पहुच चुका था ।" पृष्ठ १६७ अब ऐसी बात थी जब पू श्री घासीलालजी म. सा नें कोल्हापुर राजा द्वारा प्रदत्त "राजगुरु शास्त्राचार्य" की पदवी को कैसे ग्रहण किया ?

यही नहीं आगे फिर आचार्य आदि आदि अन्य पदवियो को भी ग्रहण किया था इसका भी वर्णन आया है ।

पू. श्री घासीलालजी म. सा. जीवन चरित्र पृष्ठ ३०० पर—"श्री सघ ने (कराची में) सगठित होकर महाराज श्री के सामने अपनी भावना व्यक्त की । श्री सघ के प्रमुख व्यक्तियो

से आप ने कहा मैं सघपति बनने की अपेक्षा सघ सेवक बनना अधिक पसन्द करता हू । आचार्य पद एक बहुत बडी जिम्मेदारी का पद है । इस पद को निभाने के योग्य इस समय मैं नही हू । अन्त मे श्रावको का आग्रह तथा सभी मुनिवरो की प्रार्थना पर स्वय इच्छा नही होने पर आप विवश हो आचार्य बनने के बावत मे मौन रहे ।

श्रावको तथा मुनिवरो ने मगलगान के साथ आपका अभिनन्दन किया । मुनियो ने तथा कराची सघ के प्रतिष्ठित सज्जनो ने प्रासगिक प्रवचन दिया । बाद मे सर्व मुनि मण्डल ने बडे हर्ष से प. मुनि श्री घासीलालजी म. सा. को जय घोष के साथ आचार्य पद की चद्दर ओढाई । चद्दर ओढाते समय उपस्थित जनता ने जयनाद से प्रागण को गु जारित कर दिया । संघ के प्रमुख व्यक्तियो ने आचार्य पद एव जैन धर्म दिवाकर पद को समर्पित करने वाली पत्रिका गुरुदेव को अर्पण कर बाद मे उसे समस्त सघ मे वितरित की ।

इसके बाद आचार्य श्री घासीलालजी म. सा ने स्वागत का उत्तर देते हुए फरमाया—

यहा उपस्थित मुनिवरो तथा सज्जनो, सघ ने मेरे प्रति श्रद्धा भक्ति प्रेम को मूर्त रूप देने के लिये जो पद अर्पित किया है यह पद कोई सामान्य पद नही । इस पद को पाने के बाद पद के अनुरूप बनने का दायित्व पद प्राप्त करने वालो पर स्वय आ जाता है । जैन शास्त्रो मे आचार्य पद की विशेषताओ पर अत्यन्त गहरी चर्चा है आचार्य को शास्त्रो मे जिन नही किन्तु जिन सरीखा कहकर उसकी महत्ता का परिचय दिया है । समस्त जैन समाज के ये नेता होते हैं । इसी कारण आचार्य पद का उत्तरदायित्व बहुत बडा है । आचार्य के छत्तीस प्रकार के गुणो का शास्त्रो मे वर्णन है । उनमे धर्माचार्य का स्थान उच्चतम है । धर्माचार्य पद शास्त्रोक्त विधि विधान के जानकर एव उनके अनुसार परम शुद्ध जीवन बनाने वाला विशिष्ठ गुण- वाला व्यक्ति ही आचार्य बन सकता है । पृथ्वी के आधार पर ससार है वैसे ही आचार्य के आधार पर जैन धर्म है । आचार्य नही होगे तो जैन धर्म भी नही होगा । यह अनादि नियम है मैं अपने आपको वैसा सामर्थ्यवान नही मानता हू । परन्तु जब आप सभी ने मिलकर मेरे जिम्मे जैन शासन सेवा का बड़ा विशाल कार्य–भार सौंपा है तो मैं आपके सभी के सहयोग से ही जितना जो कुछ हो सकेगा वह करने का प्रयत्न करूगा । उपरोक्त मेटर से सुस्पष्ट हो जाता है कि कराची सघ के द्वारा निवेदन करने पर पू. श्री घासीलालजी म सा जैनाचार्य एव जैन दिवाकर की पदवी लेने को तैयार हो गये ।

इसी परिप्रेक्ष्य मे कल्पना के तौर पर यह मान भी लिया जाय कि आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा. के आग्रह करने पर तो उन्होने यह कह कर साफ इन्कार कर दिया कि मेरे आचार्य पद ग्रहण करने का त्याग है, मैं पद ग्रहण नहीं करता, जबकि यहा कराची सघ के आग्रह पर उन्होने इस पद को ग्रहण कर लिया, यह कुछ विचित्र सा लगता है । जबकि आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा. के मन मे आपश्री को पद देने की कोई कल्पना भी नही थी ।

अत. पू श्री घासीलालजी म. सा. आचार्य पद ग्रहण करना व सघ के द्वारा दिया जाना शास्त्र के विरुद्ध आचरण था। आचार्यश्री जवाहरलालजी म. सा ने भी ऐसे कई कारणों से इनको पद नही दिया था।

आचार्य जैसा महान् पद मात्र कराची सघ के द्वारा दे देने मात्र से मान्य नही होता, इसके लिये तो विभिन्न स्थानो के गणमान्य व्यक्तियो की सम्मत्ति के साथ गण के समस्त साधु-साध्वी श्रावक–श्राविकाओ की भावनाए अपेक्षित होती हैं। जबकि पू. श्री घासीलालजी म. सा को पद देने एक कराची सघ व अन्य एक दो सघ थे और कुछ सत थे। सतिया तो थी ही नही। तब वे आचार्य कैसे रहे ?

चतुर्विध सघ भी पदवी तब देता है जबकि कोई आचार्य बिना किसी को पद दिये स्वर्गवास हो चुके हो। किन्तु यहा तो वैसी अवस्था भी नही थी। क्योकि स्वयं पू. श्री घासीलालजी म. सा के गुरु श्री जवाहरलालजी म. सा. और उनके द्वारा दिये गये उत्तराधिकारी गणेशाचार्य विद्यमान थे।

दूसरी बात यह है कि कराची सघ को भी ऐसी कौनसी आवश्यकता थी जिसके कारण आचार्य पद देना पडा।

अन्तत पाठक स्वय सोचे कि लेखक प. श्री रूपेन्द्रकुमारजी के लेखन व पू श्री घासीलालजी म सा के कथन मे कितनी सत्यता है या नही। जब इनमे ही परस्पर विरोध है तब इनकी कही व लिखी गई बातो पर कैसे विश्वास किया जा सकता है ?

पू श्री घासीलालजी म. सा. के जीवन चरित्र पुस्तक के पृष्ठ २४५ के मध्य पेराग्राफ में बतलाया है कि ६६ (३) कान्फरेन्स का कायदा अभी तक हमारे पास नही आया है। क्योकि इस साल हम लोगो का चौमासा ऐसे ग्राम मे हुआ था कि हर एक बात की सूचना वक्त पर नही मिल सकती थी। हमको सुनने मे आया है कि कान्फ्रेन्स की कलम नं १४ मे यह बात रखी गई है कि आचार्य जिस साधु को आज्ञा बाहर करे, मत्री व मुख्य साधु की राय लेकर फिर आज्ञा बाहर करे। मगर पूज्यवर ने न तो मंत्री की राय ली न किसी मुख्य साधुओ की राय ली और जिस कारण से हम लोगो ने आज्ञा मगवानी बन्द कर दी वो कारण भी नही पूछा गया और एकदम आज्ञा बाहर की घोषणा करदी तो कान्फ्रेन्स का कायदा की कालम न २५ का उल्लघन हमारी तरफ से हुआ था पर कलम न. १४ का उल्लघन पूज्यवर की तरफ से हुआ। इस पर आप विचार फरमा लेवे और आपके गौर फरमाने पर आज्ञा बाहर की जो घोषणा हुई है वो ठीक पाई जावे जब तो हम लोग इसकी तामिल कर ही रहे है और अगर ठीक नही पाई जाय तो इसकी भी कृपा कर कान्फ्रेन्स मे इत्तला वापस उठवाने की कृपा फरमावें।

यहा पर चिन्तनीय विषय यह है कि जब पू श्री घासीलालजी म को कान्फ्रेन्स का कायदा मिला ही नही था केवल उन्होने सुना था।

पहली बात तो यह है कि सुनने वाले को अच्छी तरह ज्ञात नहीं होता कि कलम

नं १४ कौनसी है और कलम न. २५ कौनसी है। हाँ कुछ बातें सुनकर जानी जा सकती हैं पर वह भी व्यवस्थित रूप से नहीं।

एक बात और यह है कि उनको कायदा मालूम नही था यह कहना भी समुचित नहीं है। क्योकि पू श्री घासीलालजी म. सा के द्वारा भेजे गये दो सत—मनोहरलालजी और सुन्दरलालजी तो अजमेर थे ही तथा अजमेर मे युवाचार्य पद की नियुक्ति जो पच गणमान्य (मूर्धन्य) मुनिवरो ने दी थी इसकी स्वीकृति के लिये इन सतों ने भी दस्तखत करके दिये थे। उन्हें अजमेर मे हुई सारी व्यवस्थाओ का ज्ञान था। वे दोनो सत वापस पू. श्री घासीलालजी म सा के पास गये थे। अत उन्होने पू श्री घासीलालजी म. सा को सारी व्यवस्था बता ही दी होगी इसमे सन्देह नही। अत पू. श्री घासीलालजी म. सा. का यह कहना कि कान्फ्रेन्स का कायदा अभी तक हमारे पास नही आया। पृष्ठ २४५ पर इनके स्वय के कथन के विरुद्ध है।

यह कहना कि "पूज्यवर" ने न तो मत्री की राय ली न मुख्य साधुओं की अनुचित है। मत्री–अध्यक्ष आदि सबको पूछा है।

आचार्य श्री जी द्वारा पू श्री घासीलालजी म सा. के पृथक्करण का घोषणा पत्र आचार्य श्री के जीवन चरित्र पृष्ठ ३२६ पर व पू श्री घासीलालजी म सा. के जीवन चरित्र पृष्ठ २४२ पर बताया है कि—

"मावली मे उदयपुर के नगर सेठ नदलालजी और मेवाड के भूतपूर्व दिवान कोठारी बलवन्तसिहजी सरीके समाज-हितैषी श्रावको ने और मैंने पू श्री घासीलालजी म. सा. तथा मनोहरलालजी म सा को सम्प्रदाय के नियमानुसार वर्ताव करने के लिये बहुत समझाया परन्तु उन्होने सम्मेलन के प्रस्ताव तथा कान्फ्रेन्स द्वारा स्वीकृत पचो के फैसले को भी मानने से इन्कार कर दिया। कई बार पूछने पर भी उन्होने मेरे सामने ऐसी कोई बात नही रखी जो विचारणीय हो। बल्कि मैंने उनके सामने कई ऐसी बातें रखी जो न्यायानुसार उन्हे अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिये थी। परन्तु उन्होने एक भी बात स्वीकार नहीं की तब मेरा विचार उसी समय उन्हे सम्प्रदाय एव मेरी आज्ञा से बाहर घोषित करने का था। परन्तु कोठारी जी तथा नगर सेठ की प्रार्थना से मैंने यह विचार कुछ दिन के लिये स्थगित रखा आखिर पू. श्री घासीलालजी म सा मुझसे चौमासे की आज्ञा मागे बिना ही मावली से चले गये।"

इस विषय की कोई प्रतिक्रिया पू श्री घासीलालजी म. सा. के जीवन चरित्र पुस्तक मे प्रतीत नही होती। अत स्पष्ट है कि आचार्य श्री जी के पूछने पर अजमेर मे हुए कायदे कानून पर और युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. के जीवन चरित्र के विषय मे किंचित् मात्र भी दोष की यथार्थता होती तो अवश्य ही स्वयमेव रखते। किन्तु स्वयमेव रखना तो दूर आचार्य श्री द्वारा पूछने पर भी उन्होने कुछ नही कहा जैसा कि.—

"कई बार पूछने पर भी उन्होंने मेरे सामने (आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा.) ऐसी कोई बात नहीं रखी जो विचारणीय हो।"

अतः कोई विचारणीय विषय होता तो वे अवश्य रखते किन्तु उन्होंने किसी भी

प्रकार का कोई विपरीत कानून या दोष नही बताया । तब बाद मे अट-सट लिखना कि आचार्य श्री ने हमारी बातो का दिये पत्र का जवाब नही दिया तथा कानून कायदो को असत्य बताना बिल्कुल अनुचित है । यदि ऐसी कोई बात ही थी तो आचार्य श्री जी के द्वारा साक्षात् पूछने पर उन्हे बतला देनी चाहिये थी । किन्तु जब इसमे सत्याश था ही नही तब आचार्य श्री जी के सामने बोलने की हिम्मत कैसे करते ।

पू श्री घासीलालजी म. सा को जब ज्ञात था कि श्री गणेशीलालजी म सा मे दोष है—शुद्ध सयम के पालक नही है । तब पूज्य श्री जवाहरलालजी म. सा ने साम्प्रदायिक एकता की बात करने से पहले अपने सतो को दोष शुद्धि के लिये पाच पच नियुक्त किये थे । जिससे कि समस्त साधुओ को जब तक जो कोई दोष लगा हो तो प्रायश्चित आदि के द्वारा शुद्ध कर लिया जाय । जैसा कि आचार्य श्री जी के जीवन-चरित्र पुस्तक के पृष्ठ १५३ पर बताया है —

"पूज्य श्री अत्यन्त दूरदर्शी और सयम के सच्चे प्रेमी थे । जब साम्प्रदायिक एकता सबधी वार्तालाप आरम्भ हुआ तभी आपने मुनि श्री मोडीलालजी म सा, मुनि श्री चादमलजी म, मुनि श्री हरखचदजी म, मुनि श्री घासीलालजी म और मुनि श्री हीरलालजी म को पच नियुक्त किया कि समस्त साधुओ के अब तक के समस्त दोषो की शुद्धि कर ली जाय । कोई किसी का दोष छिपा न रखे । किसी भी साधु का कोई भी दोष मुझ से अज्ञात न रहे । इस प्रकार सब दोषो की शुद्धि की गई । उस समय तक कोई साधु दोषी न रहा । जावरा वाले सतो को लिफाफा देने से तीन दिन पहले ही शुद्धि कर ली गई । पूज्य श्री ने इस प्रकार आन्तरिक तैयारी कर ली ।

अत यह स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि यदि गणेशीलालजी म सा मे कुछ अश मात्र भी दोष होता तो पू श्री घासीलालजी म सा अवश्य बताते । क्योकि पाचो पचो मे से एक पच वे भी चुने गये थे किन्तु उन्होने कुछ भी नही बताया । अत सिद्ध है कि गणेशाचार्य पूर्ण रूप से निर्दोष-शुद्ध सयम के पालक थे ।

"इसके बाद कोई किसी को दोषी न कहे"

इस कथन के अनुसार अब पू श्री घासीलालजी म. सा. को कोई अधिकार नही रहता कि अब किसी भी सत के विषय मे कुछ कहे । सवत् १६६० मे जब अजमेर मे सम्मेलन हो रहा था तब वहा भेजने के लिये आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा ने अपनी तरफ से पाच पच नियुक्त किये थे । किन्तु जब उन सबका यही आग्रह था कि आप स्वय पधारो तब आपने फरमाया कि मै तब जाऊ जब तुम सबको यही मान्य हो कि मैं जो कुछ निर्णय दू गा वह सबको स्वीकार होगा । तब सबने सहर्ष स्वीकार किया । इसका वर्णन पू श्री घासीलालजी म सा जीवन चरित्र मे ही पृष्ठ २३६ पर इस प्रकार आया है—

"ब्यावर मे आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने सम्प्रदाय के प्रमुख मुनियो

के साथ साधु सम्मेलन के सम्बन्ध मे विचार विमर्श किया और सम्प्रदाय के संगठन को मजबूत बनाने के लिये सम्प्रदाय की समाचारी को परिष्कृत किया । साथ-साथ साधु सम्मेलन मे जाने के लिये अपने सम्प्रदाय के पाच प्रमुख मुनिराजो का एक प्रतिनिधि मण्डल बनाया । उन प्रतिनिधि मुनियो की नामावली इस प्रकार है—

(१) प. मुनि श्री मोडीलालजी महाराज
(२) प. मुनि श्री चादमलजी महाराज
(३) प. मुनि श्री हर्षचन्द्रजी महाराज
(४) प. मुनि श्री घासीलालजी महाराज
(५) प मुनि श्री पन्नालालजी महाराज

प्रतिनिधि चुनने के बाद प्रमुख मुनिराजो ने आचार्य श्री के बिना सम्मेलन मे सम्मिलित होना उचित नही समझा । उन्होने आचार्य श्री से प्रार्थना की "आप हमारे नायक है ।" आप अनुभवी एव समर्थ व्यक्ति है । आप अपनी दिव्य प्रतिभा से सम्मेलन को उचित मार्ग पर ले जा सकते हैं । आपका वहा पधारना अनिवार्य है । और सम्प्रदाय के समस्त साधु-साध्वियो का आप पर पूर्ण विश्वास है । मुनिराजों के इस आग्रह पर आचार्य श्री ने कहा कि "यदि आप सब लोगो का यही आग्रह है तो मैं स्वय सघ का प्रतिनिधि बनकर सम्मेलन मे जाऊंगा और वहा जो कुछ भी निर्णय करूंगा उसे आप लोगो को स्वीकार करना होगा ।" इस पर उपस्थित सभी मुनिराजो ने आचार्य श्री के निर्णय को मान्य करने वाले पत्र पर हस्ताक्षर कर वह पत्र पूज्य श्री को दे दिया ।

(इस पत्र की प्रतिलिपि इस प्रकार थी) :

श्रीमान् निज पर शास्त्र सिद्धान्त तत्व रत्नाकार विद्वन्मुकुट चिन्तामणि भव्य जन मानस राजहस, भक्तगण कमल विकासन, प्रभाकर, वाणी सुधा सुधाकर, गम्भीर्य धैर्य माधुर्य औदार्य शान्ति दया दाक्षिण्यादि सद्गुण गुण परिपूर्ण, रमणोय विशाल भवन ऐक्येच्छुक शिरोमणि ज्ञानादि रत्नत्रय सरक्षक, सिरताज जैनाचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज के चरण कमलो मे सर्व सम्भोगो मुनि मण्डल की यह सविनय प्रार्थना है कि आज जिन शासन के उत्थान के लिये जैन साधु सम्मेलन मे अजमेर मे पधार कर जो कार्य करेंगे वह हमेशा सर्वथा मान्य होगा ।

सवत् १९८९ माघ शुक्ला शनिवार सभी उपस्थित मुनियो के हस्ताक्षर

ब्यावर से आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज अजमेर साधु सम्मेलन ता. ५ अप्रेल १९३३ मिती चैत्र शुक्ला दशमी के दिन आचार्य श्री सम्मेलन की कार्यवाही मे सम्मिलित हो गये । सम्मेलन मे साधु एव श्रावक सघ को एकत्रित करने के अनेक प्रस्ताव पास

अजमेर साधु सम्मेलन के अवसर पर ही आचार्य श्री ७ ६९

पं प्रवर श्री घासीलालजी म के बिना विचारे ही श्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बनाने का निर्णय कर लिया । जब पडित प्रवर श्री घासीलालजी महाराज को इस बात का पता चला तो उन्होने कडा विरोध किया ।"

उपरोक्त कथानुसार जब घासीलालजी महाराज ने आचार्य श्री के निर्णय को स्वीकार करने का पत्र सहर्ष लिख दिया था तब वो निर्णय दे, उसका प्रतिकार करना उपयुक्त नही रहता ।

यदि आचार्य श्री जी का निर्णय उन्हे मान्य करना ही नही था तब स्वीकृति पत्र लिखकर आचार्य श्री जी को नही देते ।

दूसरी बात यह है कि लेखक ने यह लिखा कि अजमेर साधु सम्मेलन युवाचार्य बनाने का निर्णय कर लिया ।

यह लिखना भी अनुचित है । क्योकि अजमेर मे अखिल भारतवर्षीय साधु सम्मेलन हुआ था । इस सम्मेलन मे हुक्मीचदजी म की सप्रदाय के दो टुकड़ो का एकीकरण करने के लिये (दो विभाग, एक आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा का दूसरा, आचार्य श्री मुन्नालालजी म सा का) इन दो सप्रदायो से भिन्न सप्रदायो के गणमान्य पाच सतो के दोनो ही सम्प्रदायो के सतो ने मिलकर पच बनाया और कहा कि आप जो निर्णय लेंगे वह हमे मान्य होगा । तब उन्होने चिन्तन करके यह निर्णय लिया कि पूज्य श्री जवाहरलालजी म., पूज्य श्री मुन्नालालजी म. के बाद मे दोनो के स्थान पर युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म. रहेगे । यह बात आज भी समाज का अनुभवी वर्ग अच्छी तरह से जानता है । इसका वर्णन पूज्य श्री गणेशाचार्य जीवन चरित्र पुस्तक के पृष्ठ ८७-८८ पर इस प्रकार से आया है—

"पच मुनिवरो ने एकता के सम्बन्ध मे अभी तक किये गये प्रयत्नो आदि के बारे मे मत्रणा और विचार करने के पश्चात् सं. १९९०, वैशाख कृष्णा ८, दिनाक १७-४-३३ सोमवार को अपना निर्णय दिया ।

निर्णय इस प्रकार है—

आज रोज दोनो पक्ष के भविष्य का फैसला पच निम्न प्रकार से देते हैं —

(१) मुनि श्री गणेशीलालजी म. को युवाचार्य पद पर नियत करें ।

(२) मुनि श्री खूबचदजी म को उपाध्याय पद पर नियत करे ।

(३) अब से जो नये शिष्य हो, वे युवाचार्य की नेश्राय मे रहे ।

(४) भविष्य के धारा-धोरण दोनो पूज्य मिलकर बांधे ।

(५) पूज्य श्री हुक्मीचदजी म. की सप्रदाय के चौमासे ठहराने की और दोष शुद्धि

करने की सत्ता दोनो पूज्यो की हयाती तक दोनो पूज्यो की रहेगी और एक आचार्य रहने पर एक आचार्य की होगी ।

(६) फैसला मिलने के साथ ही परस्पर बारह सभोग खुले करे ।
द० अमोलक ऋषि, द० मुनि रत्नचन्द, द० मुनि मणिलाल,
द० मुनि नानचन्द्र, द० मुनि काशीराम ।

उक्त निर्णय को स्वीकृत करते हुए आचार्य श्री जवाहरलालजी म. ने फरमाया कि—"फैसला मजूर है । अमल दरामद धारा धोरण बनाकर किया जायेगा ।"

पूज्य श्री मुन्नालालजी म ने फरमाया कि "फैसला मजूर है ।"

इस निर्णय की बृहत् साधु सम्मेलन मे उपस्थित सत–मुनिराजो श्रावको आदि सभी ने अनुमोदना की और हृदय उल्लास से भर गये ।

उपरोक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि गणेशीलालजी म. सा. को युवाचार्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. ने नही बनाया था । तब उन्होने बताया—यह मानना बिल्कुल अनुपयुक्त है ।

गणेशीलालजी म सा. को युवाचार्य बनाने के निर्णय को प्रतिपक्ष की सम्प्रदाय के आचार्य मुन्नालालजी म ने भी स्वीकृत किया था । यदि अशमात्र भी गणेशीलालजी म. सा मे श्रमणोचित जीवन के प्रति दोष की शका होती तो, न तो पच इस प्रकार का फैसला ही देते न प्रतिपक्षी आचार्य श्री मुन्नालालजी म. व श्री दिवाकर जी म. आदि उनके संत उस फैसले को स्वीकार ही करते ।

किन्तु पच फैसले को दोनो सम्प्रदाय के आचार्यों व सतो ने ही नही सारी समाज के साधु-साध्वी श्रावक-श्राविकाओ ने स्वीकार किया था ।

इसका वर्णन कान्फ्रेन्स से प्रसारित ग्रन्थ मे भी स्पष्टतया देखा जा सकता है—

"आचार्य जीवन सस्मरण" लेखक सुशील कुमारजी ने भी इस विषय मे स्पष्ट रूप से पृष्ठ १६ पर लिखा है—

अजमेर मे स्थानकवासी सम्प्रदाय के मुनिवरो का एक बृहत् सम्मेलन हुआ था उसमे भारतवर्ष के लगभग सभी स्थानकवासी सम्प्रदाय के मुनिराज सम्मिलित हुए थे। वह एक विराट और अपूर्व प्रसंग था । इस एकल हुए अवसर पर महामुनियो ने सम्प्रदाय को एक सूत्र मे पिरोने के सम्बन्ध मे विचार विमर्श किया । इस विचार विमर्श के फलस्वरूप निश्चय किया गया कि सब सम्प्रदायो का एकीकरण तो अभी आदर्श है, किन्तु हुक्मीचदजी महाराज के सम्प्रदाय मे जो दो विभाग हो गये हैं, उन्हें फिलहाल एक किया जाय ।

प्रश्न उठा यह कैसे सम्भव हो ?

समाधान हुआ—पच नियत कर दिये जाय और उनका निर्णय दोनो पक्ष मान्य करें । पाच पच नियुक्त किये गये ।

(१) कविवर्य श्री नानकचन्द्रजी म.

(२) श्री मणिलालजी म.

(३) शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी म.

(४) आचार्य श्री अमोलक ऋषिजी म

(५) सरपच पजाब केशरी युवाचार्यश्री काशीरामजी म.

पच मुनिवरो ने गहरी मत्रणा और विचारणा के पश्चात् अपना निर्णय सुना दिया। उस निर्णय मे आचार्य श्री मुन्नालालजी म तथा आचार्य श्री जवाहरलालजी म. दोनो पृथक्-पृथक् आचार्य रहे, किन्तु दोनो आचार्यों के उत्तराधिकारी के रूप मे एक ही युवाचार्य बनाया जाय और युवाचार्य का वह पद पडित रत्न श्री गणेशीलालजी म सा. को प्रदान किया जावे ।

इस प्रकार समग्र स्थानकवासी समाज के महान् मूर्धन्य मुनिवरो ने दोनो सप्रदायो का युवाचार्य बनाने का निर्णय करके जलगाव के निर्वाचन के औचित्य पर अपनी मोहर लगादी। इससे बढकर और क्या प्रमाण पत्र हो सकता है, नगर मे धूमधाम और हर्षोल्लास के साथ आप युवाचार्य पदवी से विभूषित किये गये ।

उपरोक्त प्रमाणो से यह सुस्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का जीवन बिल्कुल शुद्ध व स्फटिक की भाति स्वच्छ था ।

उपसंहार :

आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का जीवन एक खुली पुस्तक थी । जिसको कोई भी व्यक्ति आसानी से अध्ययन कर लेता था । स्थानकवासी समाज चतुर्विध सघ को उनके जीवन के प्रति, सयम के प्रति, विचारो के प्रति अगाध श्रद्धा व विश्वास था इसके अनेको उदाहरण है ।

सर्वप्रथम तो जलगाव मे पूज्य श्री हुक्मीचदजी म. सा. की सप्रदाय के चतुर्विध सघ ने अपना अनुशासन व आचार्य श्री जवाहरलालजी ने अपना उत्तराधिकारी बनाने का निर्णय लिया था । जिसका वर्णन आचार्य श्री जवाहरलालजी म. के जीवन चरित्र (लेखक पण्डित शोभाचन्द्र जी भारिल्ल) पृष्ठ १४८-१४९ मे दिया ।

गणेशाचार्य जीवन चरित्र (लेखक देवकुमार जैन) के पृष्ठ ५९-६० पर दिया है

तथा "उपाचार्य जीवन सस्मरण" (लेखक मुनि श्री सुशीलकुमारजी) के पृष्ठ ५५-५६ पर दिया है ।

इसके वाद स्थानकवासी समाज की विभिन्न सप्रदायो का सवत् १६६० मे अजमेर मे सम्मेलन हुआ था ।

वहा पर भी पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा की सप्रदाय व पूज्य श्री मुन्नालालजी म सा. के सम्प्रदाय का युवाचार्य आपको वनाया गया था । इसका वर्णन पिछले पृष्ठो पर दिया जा चुका है ।

उपरोक्त विषय का वर्णन आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा जीवन चरित्र पृष्ठ २३६-४० पर दिया है । स्वर्ण जयन्ति मे भी दिया गया है । जिसको कि स्थानकवासी समाज प्रमाणित मानती है ।

इसके पश्चात् स. २००६ वैशाख शुक्ला तृतीया २७-४-५२ को मारवाड के घाणेराव सादडी मे जब वृहद् साधु सम्मेलन प्रारम्भ हुआ था और जब प्रतिनिधि मुनिराजो की कार्यवाही प्रारम्भ हुई थी तव अध्यक्ष पद पर शान्ति रक्षक के रूप मे सर्वानुमति से आपको नियुक्त किया गया था यह कथन गणेशाचार्य जीवन चरित्र पृष्ठ २६६ पर इस प्रकार किया गया है—

"पूज्य आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. सम्मेलन की कार्यवाही को सुव्यवस्थित और सुचारु रूप से सचालित करने के लिये शान्ति रक्षक निर्वाचित किये गये और आपकी सहायता के लिये व्याख्यान वाचस्पति प रत्न श्री मदनलालजी म सा शान्ति रक्षक चुने गये । यह चुनाव सर्व सम्मति से हुए थे ।

सम्मेलन मे जव आचार्य नियुक्ति के लिये विचार विमर्श हुआ कि सघ के आचार्य किसको वनाया जाय तव सर्व सम्मति से आचार्य श्री गणेशीलालजी म. को सर्व सत्ता सम्पन्न के रूप मे उपाचार्य चुना गया गया । गणेशाचार्य के जीवन चरित्र पृष्ठ २६७-२७३ तक मे यह विषय निम्नोक्त प्रकार से आया है—

"वैशाख शुक्ला ८ को रात्रि की वैठक मे आचार्य पद के लिये सुयोग्य सत प्रवर के चयन पर विचार प्रारम्भ हुआ । तव सवका ध्यान पूज्य आचार्य श्री जी पर केन्द्रित हो गया । पूज्य श्री हस्तीमलजी म. सा ने श्रमण सघ के आचार्य पद के लिये पूज्य श्री आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा का नाम प्रस्तावित करते हुए इस आशय के भाव व्यक्त किये कि आप सव गुणो से सम्पन्न हैं । आपकी शास्त्रो पर प्रगाढ श्रद्धा है, आपमे चरित्र की दृढता है और ज्ञान की गरिमा से ओतप्रोत हैं ऐसे आचार्य के नेतृत्व मे ही हम ज्ञान दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि अच्छी तरह कर सकते हैं । अत. आपको श्रमण सघ के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया ।

लेकिन पूज्य श्री आचार्यश्री जी ने प्रस्ताव समर्थन के बीच ही फरमाया कि आपकी भावना अच्छी है, लेकिन मुझसे विना पूछे मेरा नाम कैसे रख दिया । मैं तो अपना पूर्व भार

ही कम करने की सोच रहा हू और इच्छुक हू कि ज्ञान दर्शन चारित्र सयम साधना की समुचित व्यवस्था बन जाय तो अपने उत्तरदायित्व से हल्का होकर आत्म साधना मे तल्लीन होऊं। लेकिन आप लोग मुझ पर और अधिक उत्तरदायित्व डालने की चेष्टा कर रहे हैं। यह मैं अपने लिये उपयुक्त नही समझता। आप मुनिवरो का मेरे प्रति वात्सल्य भाव सराहनीय है और इसके लिये मैं आपका आभारी हूं। लेकिन इस सघ सचालन के दायित्व से मुझे विमुक्त ही रखें और अन्य किसी भी मुनिवर को इस पद पर प्रतिष्ठित किया जावे।

लेकिन सभी उपस्थित बडे-बडे विद्वान, दीक्षावृद्ध, वयोवृद्ध और विभिन्न सप्रदायो एव गणो के सचालक अनुभवी सतो ने एक स्वर मे पूज्यश्री की सेवामे सानुरोध निवेदन किया कि आपश्री ही इस नवनिर्मित श्रमण सघ के आचार्य पद को स्वीकार करने की कृपा करें।

प्रतिनिधि मुनिवरो की तो एक ही प्रार्थना थी कि वह आचार्य पद के चयन का विषय है जो समस्त मुनिवरो की भावना पर निर्भर है। वे जिनको मनोनीत करना चाहे, उसमे पूछने जैसी बात कौनसी रह जाती है आपश्री के चरणो मे समग्र सत नेतृत्व समर्पण चाहते हैं।

इसलिये सभी प्रतिनिधि सत प्रस्ताव का समर्थन कर रहे हैं और आप इस नेतृत्व को अगीकार करें। अत· पूज्य श्री हस्तीमलजी म सा. द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव "पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा. श्रमण सघ के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किये जायें"—सर्व सम्मति से पारित हुआ।

अनन्तर पूज्य आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. ने अतीव मार्मिक शब्दो मे साधु समुदाय के समक्ष आत्म निवेदन उपस्थित करते हुए कहा—मेरा शरीर वैसा नही रहा जैसा कि जवानो का होता है। मैं वृद्ध हो चला हूं और रुग्ण रहता हूं, आप वृहत् श्रमण सघ का महान् उत्तरदायित्व मुझ पर डाल रहे हैं। आपके इस विश्वास का मैं आभारी हूं किन्तु उसे उठाने मे कठिनता अनुभव कर रहा हूं अत यह उत्तरदायित्व किसी अन्य योग्य, ज्ञानवृद्ध और उत्कृष्ठ सयमी महात्मा को सौंपा जावे तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

पूज्य श्री की इस उदारता और महानुभावता ने एक सुन्दर और स्पृहणीय वातावरण का निर्माण कर दिया। सभी सत आपकी उत्कृष्ट त्यागशीलता के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के साथ साथ सर्व सम्मत निर्वाचन को स्वीकृति देने के लिये साग्रह अनुरोध करने लगे।

इस प्रकार जब यह प्रश्न चर्चा मे पड गया तो प्र. व मुनि श्री सौभाग्यमलजी म सा. ने एक सुझाव रखा कि पजाब सम्प्रदाय के पूज्य श्री आत्मारामजी म. सा. एक माने हुए सत हैं। उनको साहित्य सेवा से समाज ऋणी है। अतः उनको भी कोई उच्चपद देना चाहिये। उन्हे भी आचार्य पद दिया जाय तो अच्छा रहेगा। लेकिन उनके लिये यह पद सिर्फ सम्मानार्थक ही माना जायेगा और कार्य करने की समग्र सत्ता एव अधिकार के लिये पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा का निश्चय हो ही चुका है।

इस पर प्रश्न उपस्थित हुआ कि दो आचार्य बनाने से तो हमारा उद्देश्य—एक आचार्य के नेतृत्व में श्रमण-सघ बनाना पूरा नही हो सकेगा । इसलिये उद्देश्य की पूर्ति में किसी प्रकार के व्यवधान भी न आये और पूज्य श्री आत्मारामजी म सा को उच्च पद भी दिया जा सके, इन दोनो बातो पर विचार करना जरूरी है ।

इस पर कुछ एक प्रतिनिधि सतो ने कहा कि जिस प्रकार राजनैतिक क्षेत्रो मे महाराज प्रमुख और राज प्रमुख शब्दो का प्रयोग किया जाता है, इसी तरह यहा भी दो शब्द निश्चित कर पद के नामाकन मे कुछ भिन्नता रखने से यह गुत्थी सुलझ सकती है । इस सुझाव पर सर्व सम्मति से पूज्य श्री आत्मारामजी म सम्मान की दृष्टि से आचार्य पद से विभूषित किये गये और पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा. श्रमण सघ सचालन की पूर्ण सत्ता के साथ उपाचार्य पद पर निर्वाचित किये गये ।

लेकिन पद की गुरुता ज्ञात होने से पूज्य आचार्य श्री जी म सा इस भार को लेने के लिये सहमत नही हुए और उधर मुनिवरो के सामने दूसरा कोई विकल्प नही था । इसी विचारणा मे रात्रि काफी बीत चुकी थी अत पुन विचार के लिये इस चर्चा को प्रात काल के लिये स्थगित कर दिया गया ।

पूज्य आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा ध्यान आदि कर श्रमापहार हेतु शयनासन पर आसीन भी हुए किन्तु विचार तरगो मे निद्रा नही आई और परिस्थिति के विचारो मे निमग्न रहे । इसी प्रकार प्रतिनिधि मुनिवरो के मनो मे भी अन्तर्द्वन्द्व चलता रहा । रात्रि के तीसरे पहर करीब तीन बजे होगे कि प्रमुख सतो मे से एक के बाद एक आपश्री के निकट एकत्रित होने लगे । और उन्होने हर प्रकार से प्रार्थना की, आश्वासन दिये कि आपश्री नेतृत्व सभालने की स्वीकृति फरमावें । आप यदि इस पद को स्वीकार नही करेंगे तो यह सगठन नही बनेगा । हम सभी जन साधारण मे हास्यास्पद माने जावेंगे कि इतने बडे साधु समुदाय मे नेतृत्व सभालने वाले सक्षम सत प्रवर के नही होने से सगठन नही बन सका ।

कई एक का तो इस स्थिति के कारण गला भर आया और आसू बहाते हुए बोले—हम सब आपका अनुशासन चाहते है, आप जो भी आदेश देंगे, सहर्ष पालन करेंगे और क्रियात्मक रूप देंगे । सुबह की बैठक मे आपको इस पद के लिये स्वीकृति देनी ही पडेगी ।

वार्तालाप करते-करते प्रात.काल हो गया था और प्रतिक्रमण आदि का समय हो जाने से निश्चय किया गया कि प्रात कालीन बैठक मे इस चर्चा को पुन प्रारम्भ किया जावे ।

प्रात.कालीन दैनदिनी कृत्यो से निवृत्त होने के अनन्तर प्रतिनिधि मुनिवरो की बैठक प्रारम्भ हुई, वातावरण मे गभीरता थी । विचारो मे डूबे मुनि-मनो की परछाई बोली और मुखो तक झलक रही थी ।

मगलाचरण के पश्चात् आचार्य पद की स्वीकृति की अधूरी चर्चा पुनः प्रारम्भ हुई ।

उपाध्याय कविरत्न श्री अमरचदजी म सा ने समस्त प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से पूज्य श्री जी के प्रति भावभीनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए प्रासगिक वक्तव्य दिया ।

मैं दो वर्षों से पूज्य श्री के परिचय मे आया हू । आगरा और देहली मे मुझे चरण सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ । मैंने सुन रखा था कि पूज्य श्री चट्टान की तरह कठोर हैं व अनुशासन मे पूरे कडक कदम उठाते हैं । परन्तु प्रत्यक्ष दर्शन करने और सेवा मे रहने का प्रसग आने पर मुझे अनुभव हुआ कि अनुशासन के नाते जितने कठोर हैं, उससे ज्यादा नरम और उदार भी है । हमने आचार्य श्री आत्मारामजी म सा को नियुक्त किया है परन्तु शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा न होने के कारण वे एक स्थान मे ही केन्द्रित है उनकी साहित्य सेवा से सघ ऋणी है इसी हेतु से इनके प्रति श्रद्धा एव सद्‌भावना प्रकट की गई है । परन्तु हमारे विराट सघ को अनुशासित करने के लिये योग्य आचार्य की आवश्यकता है। जो साधु-साध्वी और श्रावक सघ मे श्रद्धा एव प्रेम की लहर पैदा कर सके । हम देखते आ रहे हैं कि छोटे-मोटे साधुओ के आचार्य चुने जाते हैं इसमे एकाध व्यक्ति अडे रहते है । परन्तु अखिल भारतवर्ष के लिये आपको सर्वानुमति से नियत कर रहे है । मुनि मण्डल आपके अनुशासन की आवश्यकता महसूस करता है । अत मैं निवेदन करूगा कि आप हमारी तुच्छ प्रार्थना को जरूर स्वीकार करेंगे ।

आपके पीछे फौज तैयार है । आप जो भी आज्ञा प्रदान करेंगे, हम उसे मूर्त रूप देंगे । बहुत दिनो का पिछडा हुआ सघ मिलता है तो कठिनाई जरूर आ सकती है । परन्तु आचार्य श्री आप उदार एव अनुभवशील है । ऊची-नीची भावनाओ को परखने वाले भी हैं और आपके नीचे आपके कार्यभार को सभालने के लिये मत्रीमण्डल रहेगा । वह व्यवस्थित रूप से सारा कार्य सभालेगा । अत मैं आचार्य श्री से प्रार्थना करता हू कि वे उपाचार्य पद को स्वीकार कर लें ।

प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से जब उपाध्याय श्री अमरचदजी म. सा. उक्त वक्तव्य दे चुके तो सबके चेहरो पर मद मुस्कान मुखरित हो उठी । पूज्य श्री जी भी उस प्रेममय वातावरण से अपने आपको अलिप्त नही रख सके और सब मुनिवरो के प्रेम भरे आग्रह और सहयोग के आश्वासन को मान देकर श्रमण सघ के नेतृत्व को सुशोभित करने के लिये आपने अपनी स्वीकृति प्रदान की ।

जब पूज्य आचार्य श्री जी अपनी स्वीकृति फरमा चुके तो सब मुनिवरो की ओर से मरुधर केशरी श्री मिश्रीमलजी म. सा. ने पूज्य आचार्य श्री जी म सा की सेवामे अभिनन्दन अर्पित करते हुए निम्नलिखित वक्तव्य दिया—

"अत्यन्त खुशी का समय है कि अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन समाज के लिये सर्व सम्मति से आचार्य का चुनाव हो गया । सादडी के लिये हम लोग रवाना हुए और यहा तक पहुचे तब तक लोग यही कहते थे कि महाराज दिन पूरे क्यो करते हो, किन्तु शासन

देव की कृपा से कहिये या विकास और सगठन का समय पक चुका, इस कारण कहिये आज हम सर्व सम्मत होकर सहर्ष आचार्य की नियुक्ति कर सके हैं । विशेष प्रसन्नता की वात यह है कि जैन जगत के चमकते सितारे पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा. ने इस पद को स्वीकार करके हमें कृतज्ञ किया है । एतदर्थ मुनिमण्डल को ओर से उन्हें कोटिश. धन्यवाद प्रदान करता हू ।

इस प्रकार जब आह्लादमय वातावरण मे चुनाव का कार्य सम्पन्न हो गया तो निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया—

आचार्य पद चादर को रस्म वैशाख शुक्ला १३, स. २००६, बुधवार को दिन के १ बजे अदा की जावेगी । इसके पूर्व सर्व मुनि प्रतिज्ञापत्र मय दस्तखत के तैयार रखेंगे जो आचार्य पद पर विराजते हो आचार्य श्री के चरणो मे भेंट कर देंगे ।

आचार्य पद का चुनाव हो जाने के वाद अन्यान्य व्यवस्थाओ के लिये मत्रीमण्डल के १५ सदस्यो का चुनाव हुआ । जिसमे प्रधानमत्री प मुनि श्री आनन्द ऋषिजी म. सा. निर्वाचित किये गये एव अन्य १५ प्रमुख सतो को सहमत्री चुना गया और उनके कार्य निश्चित कर दिये गये । इस प्रकार श्रमण सघ के व्यवस्था सम्बन्धी निर्णय लिये जा चुके थे ।"

आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के जीवन के प्रति स्थानकवासी समाज का पूरा-पूरा विश्वास था । इस विषय मे सर्व धर्म सम्मेलन के सस्थापक मुनि श्री सुशीलकुमारजी ने भी "उपाचार्य जीवन सस्मरण" नामक पुस्तक मे स्पष्ट रूप से लिखा है जिसके कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं—

उपाचार्य जीवन–संस्मरण :

लेखक–मुनिश्री सुशीलकुमार

पृष्ठ ९३-९४

"ससार मे ऐसे युग पुरुष वहुत कम पैदा हुए हैं जिन्होने धार्मिक संप्रदायो के आचार्य पद का परित्याग करके सामाजिक एकता के मच निर्माण मे महत्त्वपूर्ण योग दिया हो ।

धर्माचार्य सयम के परिपालन के निमित्त वडे से वडा उत्सर्ग कर सकता है, किन्तु विचार पर जरा सी भी भिन्नता आडी आ जाती है तो वह अपनी साधर्मिक सप्रदाय मे भी मेल करने के लिये तैयार नही होता । मगर स्थानकवासी सम्प्रदाय इस नियम का अपवाद है । स्वय आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा ने जिन्हे साम्प्रदायिक नियमो का कट्टर पोषक समझा जाता है, सघ ऐक्य के निर्माण मे अपना सपूर्ण योग देने का आश्वासन दिया । आपने सघ की एकता के लिये अपनी आचार्य पदवी का परित्याग कर देने की भी स्पष्ट रूप से घोषणा कर दी । यद्यपि उस समय मारवाड के अन्य अनेक आचार्य और अन्य पदवीधारी सन सांघिक स्थिति को उचित नही मान रहे थे, परन्तु आप सघ की एकता के निमित्त आदि से अन्त तक कटिबद्ध रहे । क्षण भर के लिये भी कभी आपके अन्त करण मे आचार्य पद के प्रति अनुराग का भाव उत्पन्न नही हुआ । इस प्रकार का आदर्श निरोह भाव विरला ही कही देखा जाता है

इस दृष्टि से भी आप असाधारण संत हैं।

वास्तव मे देखा जाय तो सघ एकता के वातावरण मे प्राणो का सचार करने वाले आप ही थे। अलवर चातुर्मास के समय ही आपने समाज के सामने अपना एक वक्तव्य उद्घोषित किया था, जिससे साधु सगठन की योजना का पूर्ण समर्थन किया गया था।

(पृष्ठ ६७ से ६६ तक)

उधर अ. भा. श्वे स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के कार्यकर्ता सम्मेलन की भूमिका तैयार करने मे सलग्न थे। उनका प्रयास सफल हुआ और सादडी मारवाड मे २२ सप्रदायो के प्रतिनिधियो का सम्मेलन हुआ।

स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स का बारहवा अधिवेशन भी उसी अवसर पर सादडी मे ही हो रहा था। उधर भारतवर्ष के विभिन्न भू-भागो मे विचरण करने वाले विभिन्न सप्रदायो के प्रतिनिधि मुनिवर तथा अन्य सहयोगी श्रमण, बहुत बडी सख्या मे उपस्थित थे।

यथा समय शुभ-मूहूर्त मे साधु सम्मेलन का कार्य प्रारम्भ हुआ। नाना प्रकार की चर्चाए और वार्ताए हुई। प्रारम्भ मे ही आचार्य वर्य श्री गणेशीलालजी म सा शान्ति रक्षक के रूप मे निर्वाचित किये गये। साथ ही आपकी सहायता के लिये प्रसिद्ध वक्ता श्री मदनलाल जी महाराज भी शान्ति रक्षक चुने गये। दोनो चुनाव सर्व सम्मति से हुए।

सम्मेलन मे बहुत अच्छे ढग से विचार करने के बाद मुनियो की पार्लियामेन्ट जब सघ-ऐक्य-योजना के विषय मे सहमत हो गई तो प्रश्न उठा समस्त स्थानकवासी जैन सघ का आचार्य किसे बनाया जाय, शताब्दियो से बिखरा समाज पृथक-पृथक आचार्यो के निर्देश मे चलने वाला साधु समुदाय और भिन्न भिन्न सघो के सम्पूर्ण सत्ता सम्पन्न आचार्य किसी एक आचार्य के अनुशासन मे आवे।

एकता की योजना की स्वीकृति कठिन थी परन्तु आचार्य निर्वाचन की समस्या उससे भी कठिन थी। प्राचीन और नवीन विचार परस्पर टकरा रहे थे, सबके मन मे एक ही समस्या थी कि कौन ऐसा महानुभाव निर्वाचित किया जाय जो समग्र सघ का योग्यता पूर्वक सचालन कर सके।

इस समय का वातावरण और भी मार्मिक हो गया जब समाज के उच्चकोटि के सतो, आचार्यो उपाध्यायो और प्रवर्तको ने अपनी अपनी पदविया सघ को समर्पित कर दी। हमारे चरित्र नायक आचार्य महाराज का आचार्य पद समर्पित कर देने का प्रतिज्ञापत्र सबसे पहले प्राप्त हुआ। साथ ही पजाब के आचार्य श्री आत्मारामजी म. सा. का आचार्य पद परित्याग का पत्र और सघैक्य योजना के अनुसार व्यवहार करने का विश्वासमय दृढ सदेश सुनाया गया। सन्देश क्या था, एकता की लहर पैदा कर देने वाला तूफान था।

इस समय सव प्रमुख प्रतिनिधि सतो के विचार के केन्द्र वने हुए थे—आचार्य श्री गणेशीलालजी महाराज । चहू ओर से आवाज आई—पूज्यश्री गणेशीलालजी म सा को समूचे श्रमण सघ के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया जाय । समस्त प्रतिनिधियो की ओर से स्वीकृति का स्वर गूज उठा ।

तव पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा ने अतीव मार्मिक शब्दो मे, साधु समुदाय के समक्ष आत्म निवेदन उपस्थित करते हुए कहा—"मेरा शरीर वैसा नही रहा, जैसा कि जवानो का होता है, मैं वृद्ध हो चला हू और रुग्ण भी रहता हू । आप वृहत श्रमण सघ का महान् उत्तरदायित्व मुझ पर ही डाल रहे हैं, आपके इस विश्वास का मैं आभारी हू, किन्तु इसे उठाने मे मैं अपनी कठिनता अनुभव कर रहा हू । अत यह उत्तरदायित्व किसी अन्य योग्य, ज्ञानवृद्ध और उत्कट सयमी महात्मा को सौंपा जाय तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी ।

पूज्य श्री जी की उदारता और महानुभाव ने एक सुन्दर और स्पृहणीय वातावरण निर्माण किया । सात आपकी उत्कृष्ट त्यागशीलता देख श्रद्धाभाव से भूरि-भूरि आपकी प्रशसा करने लगे । उसी समय समाज के सगठन शिल्पी श्री सौभाग्यमलजी म वोले—

"मेरी इच्छा है कि भारत विख्यात, ज्ञानवृद्ध, वयवृद्ध और जैनागमो के प्रकाण्ड पडित श्री आत्मारामजी म सा को आचार्य पद प्रदान किया जावे और सघ के आश्वासन एव सचालन का उत्तरदायित्व उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा को सौंपा जावे । श्री आत्मारामजी म सा आचार्य पदवी से विभूषित किये जावें । इस प्रकार की योजना सघ के वहुत लाभदायक सिद्ध होगी । यह विकल्प सभी प्रतिनिधि मुनियो को पसन्द आया और सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया गया ।

पृष्ठ ११३—

उपाचार्य श्री ने आचार्य महाराज की और आचार्य महाराज ने उपाचार्य श्री की उपस्थिति मे सम्मेलन करने का विचार व्यक्त किया । यद्यपि दोनो महापुरुषो की उपस्थिति सम्मेलन मे नूतन चेतना सचार करती और सगठन को अपूर्व वल प्रदान करती । मगर दोनो की वृद्धावस्था और शारीरिक दुर्वलता से ऐसा होना शक्य नही था । किन्तु सम्मेलन के आयोजकों के समक्ष एक जटिल समस्या उत्पन्न हो गई । आखिर सम्मेलन करना आवश्यक है, मगर करे तो क्या करे ।

अन्तत मत्री मुनिवरो के निर्णय पर वात छोड दी गई, मत्री मुनियों ने उपाचार्य श्री जी की उपस्थिति समझी । उन्होने सोचा-आचार्य देव अपने सघ मे सम्माननीय स्थिति के स्वामी हैं और सघ संचालन और अनुशासन पालन करवाने आदि का दायित्व उपाचार्य श्री का श्रमण सघ संवधी अनुभव भी मूल्य रखता है । ऐसी स्थिति मे आचार्यदेव का आशीर्वाद प्राप्त करके उपाचार्य श्री के सान्निध्य मे सम्मेलन करना ही उपयुक्त होगा ।

पृष्ठ ११४—

पिछले तीन वर्षो मे प्रेममय व्यवहार के कारण सतो के हृदय उपाचार्य श्री के विराट् व्यक्तित्व ने अपनी ओर आकृष्ट कर लिये थे । उपाचार्य श्री महाराज ने सर्वतोभावेन सत सगठन को सुदृढ वनाने के प्रयत्नो मे कुछ भी कसर नही रखी थी । यही कारण है कि आप

सभी सतो का हृदय जीतने मे सफल हो मके । इन सब परिस्थितियो मे सूर्यालोक की भाति यह सुस्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा का जीवन कितना उज्ज्वल था। जिनके जोवन पर समग्र स्थानकवासी समाज के मूर्धन्य सतो को ही नही समग्र चतुर्विध सघ को पूर्ण विश्वास था ।

ऐसे प्रामाणिक सत रत्न पर पू श्री घासीलालजी म. सा का जीवन चरित्र पुस्तक के लेखक प श्री रूपेन्द्रकुमारजी का व पू श्री घासीलालजी म सा. का कथन कितना क्या सत्य है ।

यह तो सुज्ञ पुरुष स्वयमेव चिन्तन कर सकते हैं ।

परिशिष्ट ४

"आचार्य श्री आनन्दऋषि" नामक पुस्तक मे लेखक "ज्ञानमुनि" (आचार्य श्री आत्मारामजी म सा. के शिष्य) का अप्रमाणिक–कथा–लेखन :

"आचार्य श्री आनन्दऋषि" नामक पुस्तक के "प्रधानाचार्य के रूप मे" नामक चेप्टर के २२० पृष्ठ पर ज्ञान मुनि ने लिखा है—

"श्रमण सघ के अधिकारो वर्ग का चुनाव करते हुए पजाब प्रान्तीय जैन धर्म दिवाकर, जैनागम रत्नाकर परम श्रद्धेय पूज्य श्री आत्मारामजी म सा को सर्व सम्मति से आचार्य पद मे विभूषित किया गया ।"

आगे फिर पृष्ठ २२२ पर लिखा है—

"सर्व सम्मति से आचार्य पद के लिये जैन धर्म दिवाकर आचार्य प्रवर आत्मारामजी म सा का नाम उद्घोषित किया ।"

इसी प्रकार पृष्ठ २२८ पर लिखा है—

"पूज्य श्री आत्मारामजी म. सा को श्रमण सघ का आचार्य उद्घोषित किया । उसी समय उनके कार्य भार को हल्का करने के लिये सहयोगी के रूप मे पण्डित प्रवर पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा. को उपाचार्य पद प्रदान कर दिया । उपाचार्य पद प्रदान करने के पीछे श्रमण सघ की यही भावना एव कामना थी कि श्रमण सघ का कुछ दायित्व आचार्य श्री सभाले व कुछ उपाचार्य श्री । श्रमण सघ के विधान मे जहा उपाचार्य श्री के अधिकारो का उल्लेख है, यही लिखा है कि जितने अधिकार आचार्य श्री जी प्रदान करेंगे, उतने अधिकारो का उपाचार्य श्री प्रयोग कर सकेंगे । इससे स्पष्ट है कि वैधानिक दृष्टि से अधिकारो के मूल स्रोत आचार्य श्री जी हैं । यही कारण है कि आचार्य श्री जी ने जितने अधिकार उपाचार्य श्री जी को सौंपे, उपाचार्य श्री ने उनके अनुसार सघ के शासन को चलाना आरम्भ किया । दोनों

महापुरुषो के आपसी सहयोग तथा सघैक्य के सम्पोषण एव सवर्धन की सद्भावना से वर्षो तक सघ शासन की गाडी बडी सफलता के साथ चलती रही । वि स २००६ से लेकर २०१२ तक कोई गत्यवरोध नही हुआ । समय का प्रकोप समझिए कि आगे चलकर कुछ परिस्थितिया ऐसी पैदा हो गई, जिनके कारण श्रमण सघ के मुख्य अधिकारियो आचार्य श्री और उपाचार्य श्री दोनो महापुरुषो मे वैधानिक मतभेद उत्पन्न हो गया । मतभेद का मूल कारण अधिकारो का प्रयोग था । इस मतभेद को समाप्त करने के लिये अनेकानेक प्रयत्न हुए परन्तु जब वे सब निष्फल हो गये तो गभीरता की सजीव मूर्ति, दूरद्रष्टा पूज्य श्री आचार्य श्री महाराज ने अधिकारो के कारण उत्पन्न सकट को समाप्त करने के लिये उपाचार्य श्री को प्रदत्त समस्त अधिकार वापस ले लिए ।"

लेखक ज्ञानमुनिजी ने जो कुछ लिखा है—वह अप्रामाणिक है ।

उनकी अप्रामाणिकता को बतलाने के लिये कुछ विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

उपर्युक्त उद्धरणो मे कितनी क्या सत्यता है यह तो समाज का अनुभवी वर्ग अच्छी तरह से जानता है । साथ ही यह भी जानते है कि घाणेराव सादडी के बृहत साधु सम्मेलन मे किसके लिये आचार्य बनने का प्रथम विचार आया । किसको किस रूप मे आचार्य बनाया गया ।

उपरोक्त उद्धरणो मे जो भ्रामक अन्यथा बातें लिखी गई हैं वह पचमहाव्रतधारी साधु के लिये शोभास्पद नही है ।

उन उद्धरणो का स्पष्टीकरण करने के लिये हमे "श्रमण सघीय विषयो पर विश्लेषणात्मक निवेदन" नामक पुस्तक को उठाकर देखना चाहिये । जिसके अन्दर प्रत्येक बात का मौलिक व ब्योरेवार प्रामाणिक कथन प्राप्त होता है क्योकि उस पुस्तक के प्रकाशक ने स्पष्ट लिख दिया है कि "यदि उनको हमारे विवेचन मे कही भी न्यूनता या गलती लगे तो वे हमे अवश्य सावधान करे । हम उनका आभार मानकर जहा भी सुधार की आवश्यकता होगी वहा अवश्य सुधार करेगे । यदि उनको लगे कि हमारा कथन युक्तियुक्त है तो वे भी हमारे समर्थक बनकर हमे अपना सहयोग प्रदान करे ।" १ पृष्ठ ख'

अत यदि उस पुस्तक के कथन मे पाठक को कुछ गल्ती या अप्रामाणिकता महसूस हो तो उन्हे अवश्य लिखना चाहिये किन्तु उन्हे न लिखकर अट शट अन्यथा बातें बोलना एव लिखना मानवता से भी बहुत परे का चिह्न है । आज भी इसके अन्दर उन्हे अशमात्र भी गलती प्रतीत हो तो उसे भी प्रामाणिकता के धरातल पर पूछकर उसका निराकरण कर सकते हैं ।

उसी पुस्तक के कुछेक अश स्पष्टीकरण के लिये दिये जा रहे हैं ।

पृष्ठ-२ "आचार्य श्री का चुनाव चादर प्रदान समारोह" नामक चेप्टर मे "तदनन्तर आचार्य पद के लिये योग्य सचालक का प्रश्न आया तब सबकी दृष्टि पूज्य श्री की ओर गयी

तो पूज्य श्री (आचार्य श्री गणेशीलालजी म.) ने इस पद के लिए स्पष्ट अनिच्छा प्रकट की। परन्तु इतने पर भी सव मुनिवर श्रमण-सघ का नेतृत्व और उसके सचालन का दायित्व लेने के लिए पूज्य श्री को आग्रह भरी विनम्र प्रार्थना करते ही रहे। तव पूज्य श्री विचार मे पड गये कि क्या करना और क्या नही ? क्योकि एक तरफ पूज्य श्री की पद तथा अधिकार लेने मवधी विल्कुल भावना नही थी। उनके आज्ञानुवर्ती सत–सती वर्ग का दायित्व उन पर था। यदि श्रमणसघ वनने से उनके सवके तप, सयमारावन आदि की सुव्यवस्था वन जाती हो तो वे उस दायित्व से मुक्त होकर अपना शेप जीवन विशेप तौर पर आत्म साधना मे ही लगाना चाहते थे। दूसरी तरफ स्थानकवासी समाज के वडे-वडे विद्वान्, दीक्षावृद्ध, वयोवृद्ध और विभिन्न सम्प्रदायो एव गणो के सचालक अनुभवी सत एक स्वर से पूज्य श्री को सेवामे अत्याग्रहपूर्वक सोत्साह निवेदन कर रहे थे कि पूज्य श्री इस नवनिर्मित श्रमण सघ के आचार्य पद को ग्रहण कर इसका सचालन करने की कृपा करें।

इतने मे पूज्यश्री हस्तीमलजी म सा ने श्रमण सघ के आचार्य पद के लिए पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा का नाम प्रस्तावित कर दिया। सव एक मत तो थे ही। इसलिए पूज्य श्री जी महाराज सा का आचार्य पद के लिए सर्व सम्मति से प्रस्ताव पारित हो गया।

इतना हो जाने पर भी पूज्य श्री जी म सा इस गुरुतर भार के लिए तैयार न हुए। इस प्रकार जव यह प्रश्न चर्चा मे पड गया तो उस समय प्रसिद्ध वक्ता मुनि श्री सौभाग्यमलजी म सा. ने एक सुझाव रखा कि स्थानकवासी समाज मे पूज्य श्री आत्मारामजी म सा पजाव सम्प्रदाय मे माने हुए एक महान सत हैं उनकी साहित्य सेवा से समाज ऋणी है। अत उनको भी कोई न कोई उच्च पद देना चाहिए। इसलिए उन्हे भी आचार्य पद दिया जावे। जव यह सुझाव सामने आया तो प्रश्न उपस्थित हुआ कि यदि हमारे सघ के दो आचार्य वनाये जावें तो एकता का हमारा उद्देश्य, एक आचार्य के नेतृत्व मे श्रमण सघ वनाना पूरा नही हो सकेगा। इसलिए उद्देश्यपूर्ति भी जरूरी है और पूज्य श्री आत्मारामजी म सा. को उच्च पद देना भी जरूरी है। इस पर विचार विमर्श के वाद यह निर्णय रहा कि एक को सम्मान की दृष्टि से पद विभूपित किये जावे और दूसरे को सघ सचालन के सपूर्ण अधिकार युक्त सत्ता के साथ पद दिया जावे तथा पद के नामाकन मे कुछ भिन्नता रखी जावे। इस– "निर्णय के अनुसार सर्वसम्मति से पूज्य श्री आत्मारामजी म सा सम्मान की दृष्टि से "आचार्य" पद से विभूपित कर दिये गए और पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा श्रमण सघ सचालन की पूर्ण सत्ता के साथ "उपाचार्य" पद पर विभूपित किये गये।"

टिप्पणीः—इन वाक्यो से सुस्पष्ट है कि आचार्य श्री आत्मारामजी म सा. की साहित्य सेवा को ध्यान मे रखते हुए सम्मेलन के मुनिवरो ने, "केवल मान सम्मान के लिये उन्हे आचार्य वनाया था।"

इतना हो जाने पर भी पूज्य श्री जी म. सा इस भार को लेने के लिए तैयार नहीं हुए क्योकि वे इस पद के कार्य की गुरुता को समझते थे। इधर पूज्य श्री जी इसके लिए तैयार नही थे तो उधर मुनिवरो के सामने दूसरा कोई विकल्प नही था। तव उन्होने पुन

पुन अत्याग्रह पूर्वक निवेदन किया और अपने सहयोग का पूरा आश्वासन दिया ।

इस समय प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचदजी म. सा. पूज्य श्री जी मे भावभीनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए सबका सहयोग पूज्य श्री को मिलता रहेगा, इस पर जो वक्तव्य दिया वह नीचे उद्धृत किया जा रहा है—

"मैं दो वर्षों से पूज्य श्री के परिचय मे आया हू । आगरा और देहली मे मुझे चरण सेवा का अवसर प्राप्त हुआ है । ·"परन्तु हमारे विराट् सघ को अनुशासित करने के लिए योग्य आचार्य की आवश्यकता है ।" जो साधु साध्वी और श्रावक सघ मे श्रद्धा की लहर पैदा कर सके । अखिल मुनि-मण्डल आपके अनुशासन की आवश्यकता महसूस करता है । अत मैं निवेदन करूगा कि आप हमारी तुच्छ प्रार्थना को जरूर स्वीकार करेंगे ।

टिप्पणी—इन रेखाकित कविजी के वाक्य, यह निर्देश दे रहे हैं कि "इस विराट सघ को अनुशासित करने के लिये योग्य आचार्य की आवश्यकता है" यदि आचार्य श्री आत्मारामजी म सघ को अनुशासित करने मे सक्षम होते तो कविजी को इस प्रकार कहने की आवश्यकता नही रहती ।

आपके पीछे फौज तैयार है आप जो भी आज्ञा देंगे, हम उसे मूर्तरूप देगे । आपके नीचे आपके कार्य भार को सम्भालने हेतु मत्री मडल रहेगा । वह व्यवस्थित रूप से सारा कार्य सभालेगा । अत आप आचार्य श्री से मैं प्रार्थना करता हू कि "आप आचार्य पद स्वीकार कर ले ।"

प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से कविजी म सा जब उपरोक्त वक्तव्य दे चुके तो सब के चेहरो पर मद-मुस्कान मुखरित हो उठी । पूज्य श्री जी भी उस प्रेममय वातावरण मे अपने आपको अलिप्त न रख सके और सब मुनिवरो के प्रेम भरे आग्रह और कार्य मे सहयोग के वचनो को मान देकर अपनी स्वीकृति प्रदान कर उपाचार्य पद से विभूषित हुए ।

जब पूज्य श्री जी अपनी स्वीकृति फरमा चुके तो सब मुनिवरो की ओर से मरुधर केशरी श्री मिश्रीमलजी म सा ने पूज्य श्री जी म. सा की सेवामे धन्यवाद अर्पण किया । मरुधर केशरीजी का वक्तव्य इस प्रकार है—

"अत्यन्त खुशी का समय है कि अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन समाज के लिए सर्वसम्मति से आचार्य का चुनाव हो गया है "विशेष प्रसन्नता की बात यह है कि जैन जगत के चमकते सितारे पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा ने इस पद को स्वीकार करके हमे कृतज्ञ किया है ।" एतदर्थ मुनि मडल की ओर से मैं उन्हे कोटिश. धन्यवाद देता हू ।

टिप्पणी—(इस प्रकार आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा को यह पद प्रदान करने के बाद समस्त प्रतिनिधि मुनिवरो की ओर से मरुधर केशरीजी ने हार्दिक प्रसन्नता अभिव्यक्त की और यह कहा कि विशेष प्रसन्नता की बात यह है कि जैन जगत के चमकते सितारे पूज्य श्री गणेशीलालजी म. सा ने इस (आचार्य) पद को स्वीकार करके हमे कृतज्ञ किया है ।

इसमे भी यह स्पष्ट जाहिर है कि मुनिवरो की दृष्टि सघ शासक के रूप मे पूज्य श्री पर ही थी ।

इस प्रकार बडे आह्लादमय वातावरण मे जब चुनाव का कार्य सम्पन्न हो गया तो निम्न प्रस्ताव पारित किया गया —

आचार्य-पद प्रदान विधि :

प्र २१ आचार्य पद चद्दर की रस्म वैसाख शुक्ला (तेरस) संवत् २००६ बुधवार को दिन के ग्यारह वजे अदा की जावेगी इसके पूर्व सर्व मुनि प्रतिज्ञापत्र मय दस्तखत के तैयार रहेंगे जो आचार्य पद पर विराजते ही आचार्य श्री के चरणो मे भेंट कर देंगे ।

(सर्व सम्मति से पास ६-५-५२)

इस प्रस्ताव के परिपालनार्थ आचार्य पद की चादर सब मुनिवरो ने सम्मिलित होकर पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा को ओढायी व जयनाद किया । तत्पश्चात् प्रस्तावानुसार प्रतिज्ञापत्र भर के हस्ताक्षर कर उपाचार्य श्री जी म सा के चरणो मे समर्पण किये ।

इस प्रकार आचार्य पद और चादर प्रदान समारोह बडे आनन्दोल्लास से सम्पन्न किया गया ।

यहा उल्लेख करना अप्रासगिक न होगा कि प्रस्ताव मे प्रतिज्ञापत्र आचार्य श्री जी के चरणो मे भेंट करने का विधान है यहा आचार्य श्री से सत्ता सम्पन्न आचार्य मे अभिप्राय है। जो लोग यह कहते हैं कि आचार्य श्री आत्मारामजी म को श्रमण सघ के अधिकार थे उन्हे उपरोक्त दिये गये मुनिवर्गो के वक्तव्यो एव यह प्रस्ताव और इसकी पालना से यह स्पष्ट हो जाएगा कि "उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा श्रमण सघ के सत्ता सम्पन्न आचार्य थे" एव आचार्य श्री आत्मारामजी म सा केवल सम्मान के पद से ही विभूषित थे ।

कुन्दनमलजी फिरोदिया के इस विषय मे क्या विचार थे वह भी आप उन्ही के शब्दो मे सुन लीजिये । कुन्दनमलजी को सादडी सम्मेलन की सारी कार्यवाही ज्ञात थी क्योकि प्रतिनिधि मुनिराजो की चर्चा, जो मिटिंग के रूप मे हो रही थी उसमे वे भी सम्मिलित थे ।

कुन्दनमलजी का वक्तव्य निम्नोक्त प्रकार से—"श्रमण सघीय समस्याओ पर विश्लेषणात्मक निवेदन नामक" पुस्तक के पृष्ठ ५६ पर दिया गया है ।

"मुख्य प्रश्न यह है कि जब यह सब बना तब बनाने वाले का हेतु क्या था ? प्रस्ताव न १८ के अनुसार आचार्य और उपाचार्य इन दोनो की नियुक्ति मुनिराजो ने की है । पजाब के सघ के मत्री श्री कृष्णकान्तजी ने जो अर्थ निकाला है कि आचार्य पद यो ही है इसमे मैं सहमत नही हो सकता, आचार्य श्री आत्मारामजी म. अभी मौजूदा जो मुनिराज है उनमे वह वृद्ध अनुभवी और ज्ञानी है इसी सबब से उनकी आचार्य के पद वास्ते पसदगी हुई

परन्तु यह पसदगी करने के वक्त पर ही सभी मुनिराजो ने यह सोचा कि उनकी मानसिक और शारीरिक स्थिति को देखते हुए उनसे यह काम का बोझ उठाया नही जा सकेगा । उसके लिए साथ–साथ उपाचार्य की नियुक्ति की । यह करने का कारण ही वधारण कलम दो मे दिया हुआ है । यह उनका मन्तव्य न होता तो साथ-साथ उपाचार्य श्री की नियुक्ति करने की जरूरत न थी । आचार्य श्री वर्तमान समय मे अपना काम सम्भालने योग्य होते तो उपाचार्य की नियुक्ति की तावडतोब करने की जरूरत न थी । परन्तु यहा तो वर्तमान परिस्थिति मे तावडतोब ही आचाय की नियुक्ति के साथ उपाचार्य नियुक्त हुए । इससे आचार्य श्री को सम्मान का स्थान दिया गया परतु कार्य करने का सब अधिकार उपाचार्य श्री को ही है यह बात पृष्ठ ५६ कालम दो मे स्पष्ट है ।" पृष्ठ ६० पर जो बात लिखी गई है, वह वर्तमान समय को लागू न होते हुए भविष्य मे कोई आचार्य वृद्धावस्था के कारण अथवा अन्य कारणो के सबब आचार्य का पूरा काम सभालने मे समर्थ स्वत को न समझे तो वह उपाचार्य की नियुक्ति मत्री मडल की सलाह से करा कर कुछ अधिकार और कार्य क्षेत्र उनको दे सकते है ।"

पुष्कर मुनि म सा के भी इस विषयक विचार यथावत् पाठको को प्रस्तुत करते हैं ।

पृष्ठ ६० से उद्धरित—

"वधारण की द्वितीय धारा से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपाचार्य श्री की नियुक्ति "आचार्य श्री की अति वृद्धावस्था व कार्य करने की अक्षमता से हुई है । यदि आचार्य श्री कार्य करने मे सक्षम होते तो प्रथम धारा के अनुसार उपाचार्य श्री की नियुक्ति नही हो सकती थी । इस दृष्टि से कार्यवाहक तरीके उपाचार्य श्री ही माने जा सकते हैं" । जैसे राजस्थान के महाराज प्रमुख व राज प्रमुख । उपाचार्य के कर्तव्य और अधिकार की धारा सार रहित है ।" (पुष्कर मुनिजी म के उपर्युक्त वाक्य भी यही निर्देश कर रहे हैं कि आचार्य श्री आत्मारामजी म सम्मान के आचार्य थे । आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. श्रमण सघ के सत्ता सम्पन्न कार्यवाहक के रूप मे उपाचार्य थे ।)

पूज्य श्री आत्मारामजी म सा ने भी इसी प्रकार के विचार कान्फ्रेन्स के नेताओं को लिखित रूप मे दिए थे ।
पृष्ठ नं ६० से उद्धृत—

"अन्त मे अब हम स्वय पूज्य आचार्य श्री के विचार भी पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हैं । स्वय आचार्य श्री भी श्रमण सघ के निर्माण हो जाने के निकटवर्ती काल मे यह मानते थे कि श्रमण सघ के सचालन के पूर्ण अधिकार विधान की दृष्टि से उपाचार्य श्री को ही हैं । एक बार कान्फ्रेन्स का प्रतिनिधि मडल जब लुधियाना गया था तब आचार्य श्री ने प्रतिनिधि मण्डल को फर्माया था कि "उपाचार्य श्री को सब अधिकार प्राप्त है ।" अत प्राप्त फरियादों पर यथार्थ प्रकार से यथाशीघ्र निर्णय करना चाहिये और करेंगे ।" इसी समय दूसरे प्रश्न के उत्तर मे आचार्य श्री ने फिर फर्माया कि "उपाचार्य श्री को इस पर अधिक विचारने का है ।

"क्योंकि श्रमण सघ का सक्रिय सचालन आप ही के ऊपर है।" (स्वय आचार्य श्री आत्मारामजी म मा के उपर्युक्त वाक्य भी यही वतला रहे है कि सघ सचालन का सर्वाधिकार उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. को है।)

पृष्ठ ६० से ६१ तक उद्धृत—

"अव हम थोडी वन्धारण की चर्चा कर देना चाहते हैं। श्रमण सघीय विधान की धारा दो मे स्पष्ट उल्लेख है कि "आचार्यश्री अति वृद्ध हो अथवा कार्य करने मे अक्षम हो तो, मन्त्रिमण्डल उपाचार्य नियुक्त करेगा। और उपाचार्य श्री आचार्य श्री के सव अधिकार सम्भालेगें।" इस धारा मे "तो" "और सव अधिकार" वाले शब्द वहुत महत्त्व के हैं। आचार्य श्री कार्य करने मे अक्षम हो तो ही उपाचार्य की नियुक्ति का विधान किया गया है। सादडी साधु सम्मेलन ने आचार्य श्री की नियुक्ति के साथ ही उपाचार्य श्री की नियुक्ति की है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि सम्मेलन मे एकत्रित सव ही प्रतिनिधि मुनिवरो ने आचार्य श्री को कार्य करने मे अक्षम मान लिया और इसलिये सर्वानुमति से पूज्य श्री गणेशीलालजी म. को उपाचार्य पद से विभूषित किया। यदि प्रतिनिधि मुनिवरो का ऐसा मन्तव्य न होता तो साथ-साथ ही उपाचार्य श्री की नियुक्ति की जरूरत न थी। इसलिये पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा जव उपाचार्य पद पर विभूषित किये गये तो वन्धारण अनुसार, आचार्य पद के श्रमण सघ सचालन के सव अधिकार उपाचार्य श्री को स्वत ही प्राप्त हो गये और तदनुसार उन्होने कार्य सचालन किया। यह वात इतनी निर्विवाद है कि और स्पष्टीकरण की आवश्यकता नही रहती। तथापि आचार्य श्री ने, उपाचार्य श्री द्वारा व्यवस्थानुसार कार्य सचालन मे हस्तक्षेप किया, वह स्पष्टत अवैधानिक है।

हम समझते है कि उपरोक्त उद्धरणो से यह नितान्त स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री जी म. सा के पास श्रमण सघीय सचालन के कोई अधिकार थे ही नही। ऐसी दशा मे जवकि आचार्य श्री जी म के पास अधिकार थे ही नही तो पाच मुनिवरो की नियुक्ति और उनको अधिकार सौंपना कैसे वैधानिक रहा ?

एक वात और, श्रमण सघ के आचार्य उपाचार्य को आजीवन के लिये साधु सम्मेलन मे प्रतिष्ठित किया गया था, और श्रमण सघ के कार्य सचालन का समस्त अधिकार उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. के सक्षम कन्धो पर ही रखा गया था। इसलिये आचार्य श्री म. सा द्वारा अधिकार देने लेने सम्वन्धी घोषणा का कोई अर्थ नही रहता है। अधिकार किसको है, यह वात पूर्व मे उल्लिखित सतो के वक्तव्य मे सुस्पष्ट है।"

सवत् २०१६ मे प्रकाशित पुस्तक "उपाचार्य जीवन सस्मरण" नामक पुस्तक में लेखक मुनि सुशील कुमारजी ने भी स्पष्ट रूप से लिखा है।

पृष्ठ ६८ से उद्धृत—

"उस समय सव प्रमुख प्रतिनिधि सतो के विचार के केन्द्र वने हुए थे आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा., चहु ओर से आवाज आई पूज्य गणेशीलालजी म. को समूचे श्रमण सघ

के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया जाय । समस्त प्रतिनिधियो की ओर से स्वीकृति का स्वर गूज उठा ।

तब पूज्य श्री घासीलालजी म ने अतीव मार्मिक शब्दो मे साधु समुदाय के समक्ष आत्म निवेदन उपस्थित करते हुए कहा—मेरा शरीर वैसा नही रहा जैसा कि जवानो का होता है, मैं वृद्ध हो चला हू और रुग्ण भी रहता हू, आप वृहत् श्रमण सघ का महान् उत्तरदायित्व मुझ पर डाल रहे हैं, आपके इस विश्वास का मैं आभारी हू, किन्तु उसे उठाने मे अपनी कठिनता अनुभव कर रहा हू, अत यह उत्तरदायित्व किसी अन्य योग्य ज्ञानवृद्ध और उत्कट सयमी महात्मा को सौंपा जाय तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी ।

पूज्य श्री की इस उदारता और महानुभावता ने एक सुन्दर और स्पृहणीय वातावरण निर्मित किया । सत आपकी उत्कृष्ट त्यागशीलता देख श्रद्धा भाव से भूरि–भूरि आपकी प्रशसा करने लगे । उसी समय समाज के सगठन शिल्पी श्री सौभाग्यमलजी म सा वोले—मेरी इच्छा है कि भारत विख्यात ज्ञानवृद्ध और जैनागमो के प्रकाण्ड पडित श्री आत्मारामजी म. सा को आचार्य पद प्रदान किया जाय और सघ के अनुशासन एव सचालन का उत्तरदायित्व आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा को सौंपा जाय । श्री आत्मारामजी म आचार्य पदवी से और श्री गणेशीलालजी म सा. उपाचार्य पदवी से विभूषित किये जावे, इस प्रकार की योजना सघ के लिये वहुत लाभदायक सिद्ध होगी ।

यह विकल्प सभी प्रतिनिधि मुनियो को पसंद आया और सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया गया ।"

पृष्ठ ११३ से उद्धृत—

(पुस्तक "उपाचार्य जीवन सस्मरण") ले० मुनि सुशीलकुमारजी

"अन्तत मंत्री मुनिवरो के निर्णय पर वात छोड दी गई, मंत्री मुनियो ने उपाचार्य श्री की उपस्थिति समझी, उन्होने सोचा "आचार्य देव अपने सघ में सम्माननीय स्थिति के स्वामी हैं । और सघ सचालन और अनुशासन पालन करवाने आदि का दायित्व उपाचार्य श्री का श्रमण सवधी अनुभव भी मूल्य रखता है," ऐसी स्थिति मे आचार्य देव का आशीर्वाद प्राप्त करके उपाचार्य श्री के सान्निध्य मे सम्मेलन करना ही उपयुक्त होगा ।" (मुनि सुशीलकुमार के (श्रमण सघ के समय मे प्रकाशित पुस्तको) विचार आचार्य श्री आत्मारामजी म. सा. को सम्माननीय रूप मे श्रमण सघ के आचार्य बतला रहे हैं ।

यहां पर विचारणीय विषय यह है कि उपाचार्य श्री जी को आचार्य श्री जी ने अधिकार दिया हो ऐसा कही प्रामाणिक उल्लेख ही नही है । अधिकार तो उपाचार्य श्री को सम्मेलन के सभी प्रतिनिधि मुनिराजो से प्राप्त था ही । इस वात का समर्थन आचार्य श्री जी ने भी किया है । और आचार्य श्री जी उन्हे अधिकार दे भी कैसे सकते थे, वे तो मात्र

सम्मान के आचार्य थे अत अधिकार उनके पास थे ही नही तो देने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता । तव तो "उपाचार्य श्री को प्रदत्त अधिकार वापिस ले लिये" यह लिखना तो निपट अज्ञानता ही कही जायेगी । अतः उपरोक्त प्रामाणिक उद्धरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान मुनिजी के द्वारा "आचार्य श्री आनदऋषि" नामक पुस्तक मे श्रमण सघ के आचार्य उपाचार्य सवध को लेकर किये गये अधिकारो का वर्णन अप्रामाणिक एव असत्य तो है ही, साथ गुरु शिष्य मे भी परस्पर विरोध प्रतिभासित कर रहा है, क्योकि आचार्य श्री आत्मारामजी ने स्पष्ट रूप में कान्फ्रेन्स नेताओ को लिखवाया कि "उपाचार्य श्री को सव अधिकार प्राप्त हैं ।" (लेखक ने जिनका जीवन परिचय लिखा है उनके विचार भी आचार्य श्री जी के प्रति क्या थे, यह वतलाये रहे हैं)

उपाध्याय श्री (वर्तमान मे तथाकथित श्रमण सघ के आचार्य) का बम्बोरी से दिनाक १६-३-६० का पत्र विद्याभूषणजी त्रिपाठी द्वारा उपाचार्य श्री को प्राप्त हुआ ।

उसका हूवहू अश दिया जा रहा है ।

वम्बोरी से दिनाक १६-३-६० का उपाध्यायजी श्री आनदऋषिजी म सा के पत्र से—

उपाचार्य श्री जी म की हितशिक्षा उपाध्यायजी शिरोधार्य करते हैं । श्रमण सघ का सगठन दृढता पूर्वक रहे और वीतराग भगवान् की आज्ञा का पालन होता रहे ऐसी व्यवस्था वावना मुख्य कर्तव्य है । ऐसा उपाध्यायजी म ने जो अर्ज उपाचार्य जी की सेवामे की, उसका मूल कारण यह है कि श्रमण सघ के छत्र स्वरूप उपाचार्य श्री जी हैं, शारीरिक अवस्था और वृद्धावस्था के वजह से आपश्री की उपस्थिति मे ही यदि कुछ व्यवस्था हुई तो भविष्य के लिये अच्छा रहेगा । क्योकि पारस्परिक मतभेद श्रमण सघ की नाव को खोखला वना रहा है, और अधिक मतभेद वढ रहे हैं । उनकी उपशाति हो जाय यह भावना है । यहा पर तो उपाध्यायजी म ने कोई व्यवस्था सोची नही है । —विद्याभूषण त्रिपाठी

उपर्युक्त पत्र से स्वय आचार्य श्री आनदऋषिजी म सा भी उपाचार्य श्री को श्रमण सघ के छत्र स्वरूप एव सर्वसत्ता सम्पन्न मान रहे हैं ।

अतत यह सुस्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री आत्मारामजी म सा मात्र सम्मान हेतु आचार्य थे । सघ के पूर्ण सचालन का सर्व सत्ता सम्पन्न अधिकार उपाचार्य श्री जी को था ।

भीनासर सम्मेलन मे लाउडस्पीकर मे वोलने सवधी प्रस्ताव पर कोई निर्णय नही हुआ था, मात्र विचार विमर्श ही हुआ था । जव तक इस विषय मे हुए प्रस्ताव के अन्तर्गत शब्दो का निर्णय नहीं हो जाय तव तक के लिये लाउडस्पीकर मे वोलना स्पष्ट निषेध था ।

इतना होने पर भी ज्ञान मुनिजी ने पजाव मे लाउडस्पीकर का प्रयोग प्रारभ कर दिया । जवकि उसका निर्णय नही हो पाया था । अव वे ही ज्ञानमुनिजी अपनी स्वच्छदता को प्रच्छन्न रखकर "आचार्य श्री आनन्द ऋषि" नामक पुस्तक मे पृष्ठ २२५ पर लिखते हैं कि

"उन दिनो ध्वनियंत्र को लेकर बडा आदोलन चल रहा था । कुछ मुनि इस पर बोलने के पक्ष मे थे, कुछ-कुछ इसके प्रयोग का विरोध करते थे । दोनो पक्ष अड हुए थे । श्रमण सघ के दूरदर्शी अधिकारी मुनियो ने मध्यम मार्ग निकाल कर इसका सतोषजनक निर्णय दिया । कुछ प्रतिबधो के साथ प्रायश्चित लेकर इसके प्रयोग की अनुमति दे दी गई । जो प्रयोग करना चाहता है वह इसका प्रयोग करने के अनन्तर प्रायश्चित ग्रहण करे । अन्यथा इसका प्रयोग न करे ।"

उपरोक्त कथन की असत्यता को स्पष्ट करने के लिये "श्रमण सघीय विषयो पर पर विश्लेषणात्मक निवेदन" को देखिये । यहा उसी पुस्तक के ध्वनिवर्धक यंत्र के कुछ उद्धरण दिये जा रहे हैं—

पृष्ठ १३ से उद्धृत —

"आचार्य श्री जी ने उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म को भी लिखवाया" कि 'किसी प्रकार उपाध्याय मडल और मत्रीमडल को सहमत कर "उपाचार्य श्री चाहे सो निर्णय कर सकते हैं, वह निर्णय आचार्य श्री को मान्य होगा ।" जब इतना स्पष्ट हो गया तो उपाचार्य श्री जी ने अधिकारी मुनियो के निवेदन के मुख्य अश को चिन्हित करके सभी अधिकारी मुनिवरो के पास उनका मत जानने को भिजवाया । वह अश निम्न प्रकार है—

"आचार्य श्री उपाचार्य श्री, पारस्परिक लिखित विचारो से ध्वनि यंत्र की समस्या को शीघ्र हल करने की कृपा करें । जब तक दोनो महापुरुषो का सयुक्त निर्णय प्रकट न हो, तब तक ध्वनि यंत्र मे न बोलने की घोषणा अनिवार्य है । यदि आचार्य श्री उपाचार्य श्री द्वारा होने वाले निर्णय की उपेक्षा कर कोई साधु साध्वी ध्वनियंत्र मे बोलेगा तो वह स्वच्छद एव अवैधानिक समझा जायगा और ऐसी प्रवृत्ति करने वाले के साथ शास्त्रानुसार छेद प्रायश्चित (जो कि आचार्य श्री जी म को भी किसी अश मे मान्य है) द्वारा शुद्धिकरण होने पर ही श्रमण सघ का पारस्परिक सबध रह सकेगा अन्यथा नही ।"

इन सारभूत पक्तियो पर अधिकारी मुनिवरो के अनुकूल मत आये । कवि श्री अमरचदजी म. ने तो अपने एक अलग पत्र मे यहा तक लिखवाया (पत्र दिनाक ३०-७-५७) कि —

"आजकल जिस उच्छृखल पद्धति से ध्वनिवर्धक यंत्र का प्रयोग किया जा रहा है, वह तो सर्वथा गलत है । उसके प्रति तो कठोर कदम उठाना ही चाहिये ।"

इधर यह कार्यवाही चल रही थी तथापि समाज मे इससे वातावरण तो शात नहीं था, अतः इसी प्रसग मे उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म एव प्रान्त मंत्री श्री पन्नालालजी ने अलग अलग पत्र द्वारा उपाचार्य श्री जी म. की सेवामे फिर से निवेदन किया ।

प्रान्त मत्री श्री पन्नालालजी म. सा. ने दिनाक २६-६-५७ के पत्र में लिखवाया कि —

"···आचार्य श्री मामले को सुलझाने के बजाय लम्वायमान करना चाहते है। चातुर्मास काल मे शिथिलाचार, ध्वनियत्र एव सवत्सरी के विषय में जो भी करना हो, कर लेना चाहिये। विशेष लवान मे नही डालना चाहिये। लंवान मे डालने से गड़बड होती है।"

उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. ने दिनाक ६–८–५६ के पत्र द्वारा लिखवाया कि.—

" · महाराज के विचार से ध्वनियत्र के लिये सव और कुछ नही करके अपना उनके साथ नियम विरुद्ध प्रवृत्ति का प्रायश्चित नही होने तक सवध विच्छेद घोषित कर देना चाहिये।"

इतना ही नहीं इसके पूर्व एक पत्र द्वारा तो उपाध्याय श्री जी म. ने यहा तक लिखवाया कि.—

"ध्वनियत्र मे वोलने का उपाचार्य श्री द्वारा प्रायश्चित घोषित हो जाना चाहिये, अन्य सदस्यो से पूछने की इसमे आवश्यकता प्रतीत नही होती ·।"

यह अनिर्णीत स्थिति चल ही रही थी कि इसी वीच कानोड चातुर्मास मे श्रमण सम्पर्क समिति के सदस्यगण जिनमे स्वर्गीय श्री विनयचद भाई जौहरी, श्री कानमलजी नाहटा, श्री मोहनलालजी चौरडिया आदि सज्जन थे, उपाचार्य श्री जी की सेवामे दर्शनार्थ उपस्थित हुए। उस समय समाज की स्थिति को चर्चा चली और ध्वनिवर्धक यत्र का प्रश्न सामने आया तो उपाचार्य श्री जी ने आद्योपात सारी स्थिति उनके सामने रख दी।

जिस प्रकार आचार्य श्री ने इस विषय का निर्णय करने के लिये फरमाया था और जिस विधि से उपाचार्य श्री जी ने एक मत एकत्रित करके एक निर्णय लिया इन सारी बातों को इन नेतागणो ने अच्छी तरह समझ लिया तो उनको पूर्ण सतोष हुआ। तव विचार विमर्श के वाद यह वात तय पाई कि ध्वनियत्र सवधी सारी स्थिति का सकलन करके इसको पत्र द्वारा पडित लालचंदजी अधिकारी मुनिवरो की सेवामे भेज दें और कान्फ्रेन्स आफिस द्वारा समस्त श्री सघो को भिजवा दिया जाय। तदनुसार सकलन कर लालचदजी ने आचार्य श्री, उपाध्याय मडल तथा मत्रीमडल की सेवामे भेज दिया और कान्फ्रेन्स द्वारा भिजवाने के लिये श्री विनयचद भाई अध्यक्ष की इच्छानुसार एक प्रति श्री कानमलजी नाहटा को दिनाक १६-१०-५७ को दे दी गई।

उक्त सूचना यहा उद्धृत की जा रही है—
ध्वनियत्र विषयक
उपाचार्य श्री जी म. की चतुर्विध सघ को सूचना

अपवाद, प्रायश्चित व स्वच्छन्दता का निर्णय भीनासर सम्मेलन मे नही किया गया

है जिसकी स्पष्ट घोषणा ता १-८-५६ को आचार्य श्री जी म की तरफ से हो चुकी है । अत: अनिर्णीत अवस्था मे किसी भी चीज का प्रयोग होना वैधानिकता के अनुकूल कैसे हो सकता है?

श्रमण सगठन को शुद्धिकरण पूर्वक सैद्धातिक रक्षक के साथ टिकाये रखने की हार्दिक भावना से और आचार्य श्री जी म का भी सकेत होने से जो प्रयत्न हुए उनके परिणाम स्वरूप उपाध्याय मडल व मत्री मडल मे से बहुतो की ध्वनियत्र आदि विषयक जो विचारणा आई उसका साराश यह है कि —

"आचार्य श्री उपाचार्य श्री पारस्परिक लिखित विचारो से ध्वनियत्र की समस्या को शीघ्र हल करने की कृपा करें । जब तक दोनो महापुरुषो का सयुक्त निर्णय प्रकट न हो, तब तक ध्वनि यत्र मे न बोलने की घोषणा करना अनिवार्य है । यदि आचार्य श्री तथा उपाचार्य श्री द्वारा होने वाले निर्णय की उपेक्षा कर कोई साधु साध्वी ध्वनियत्र मे बोलेगा तो वह स्वच्छन्द एव अवैधानिक समझा जायेगा और ऐसी प्रवृत्ति करने वाले के साथ शास्त्रानुसार छेद प्रायश्चित (जो कि आचार्य श्री म को भी किसी अश मे मान्य है) द्वारा शुद्धिकरण होने पर ही श्रमण सघ का पारस्परिक सम्बन्ध रह सकेगा अन्यथा नही ।"

उपर्युक्त स्थिति आचार्यश्री म के समक्ष भेजी जा चुकी है परन्तु उसके प्रत्युत्तर से अपवाद प्रायश्चित आदि अनिर्णीत शब्दो के निर्णय की स्थिति वर्तमान मे मालूम नही दे रही है ।

ऐसी अवस्था मे सैद्धातिक भ्रान्ति के साथ ध्वनियत्र की अवैधानिक प्रवृत्ति से समाज की हालत डावा डोल एव अस्थिर सी बन रही है और ऐसी अस्थिर अवस्था मे अधिक दिन चलना समाज के लिये हितावह नही है । अत उपाध्याय मडल व मत्री मडल के विचारो को ध्यान मे रखते हुए उपाचार्य श्री जी म चतुर्विध सघ को सूचना देते है कि जब तक सयुक्त निर्णय प्रकट न हो जाय, तब तक उपर्युक्त विचारणा के अतिम वाक्य (यदि अन्यथा नही) के अनुसार ध्वनियत्र का प्रयोग सत एव सतियो के लिये अवैधानिक एव स्वछद समझा जाय और प्रयोग करने वाले के साथ शास्त्रानुसार छेद प्रायश्चित होने पर श्रमण सघ का पारस्परिक सबध रह सकता है अन्यथा नही ।

इस बात का ध्यान सगठन प्रेमी चतुर्विध सघ के प्रत्येक सदस्य को पूरा पूरा रखने की महती आवश्यकता है) ता १६-१०-५७

उक्त सूचना के परिपालनार्थ यह भी लिखवाया गया कि "यह सूचना आपश्री के अधीनस्थ व प्रान्तस्थ सिघाडे के आगेवान मुनिराज व महासतीजी को दे दी जाय और सत-सतियों मे से किसने कितने दिन तक ध्वनियत्र का उपयोग किया तथा किया, तो लगातार कितने दिन तक? और बीच-बीच मे छोडकर कितने दिन तक व किस अवस्था मे? कितनी जनसंख्या मे? आदि स्थिति व्योरे वार आने की आवश्यकता है, जिससे पारस्परिक सबध की स्थिति स्पष्ट हो सके ।"

उक्त सूचना पत्र आचाय श्री म की सेवामे भी भेजा गया था। उसकी लुधियाना से दिनाक २४-१०-५७ के पत्र द्वारा पहुच आगई थी कि "पत्र मिल गया है। आचार्य श्री की मेवामे पेश कर दिया है आदि।"

पृष्ठ २२ मे उद्धृत—

"हमारे यहा अन्य जैन सम्प्रदाय भी हैं उनमे वडे वडे विद्वान् सत भी हैं और उनके यहा भी पर्युषण पर्व, सवत्सरी, महावीर जयती आदि बहुत से पर्व मनाये जाते हैं। श्रोताओ की सख्या भी हजारो मे होती है। मगर न तो उनके सत ध्वनिवर्धक यंत्र मे ही बोलते हैं और न उनके अनुयायी श्रावको मे ही इस प्रश्न को लेकर ऊहापोह है। मूर्ति-पूजक समाज मे यद्यपि कुछ सत ध्वनिवर्धक यत्र मे बोलते है, तथापि उनके यहा इसका आग्रह नही है। परतु दुर्भाग्य कहे या और कुछ कि हमारे कुछ सतो ने इस प्रश्न को इतना भारी बना दिया है मानो आत्मोत्थान के लिये इसका उपयोग नितात आवश्यक है।

मूर्तिपूजक समाज मे जहा इस पर ज्यादा ऊहापोह नही है वहा ऐसे विद्वान् आचार्य भी हैं, जो इसके समर्थक नही है, तपागच्छीय आचार्य श्री विजय प्रेमसूरिजी, आचार्य श्री विजय रामचन्द्रसूरिजी, आचार्य श्री विजय जम्बूसूरिजी म सा. ने दिनाक २५-४-६२ को अपनी सम्प्रदायो मे ध्वनिवर्धक यत्र के उपयोग पर सर्वथा बधन लगा दिया है। उधर हमारी ही समाज के स्थानकवासी दरियापुरी सम्प्रदाय के आचार्य श्री भाईचन्दजी म सा. ने अपनी सम्प्रदाय की समाचारी बनाकर दिनाक १०-५-६२ को ध्वनिवर्धकयत्र पर सर्वथा बधन लगा दिया है। उन्होने इससे पैदा होने वाले दुष्परिणामो को समझा है, मगर हमारे श्रमण सघ और कान्फ्रेन्स को तो शायद इसमे उत्थान ही नजर आया है "लेकिन भविष्य बतलाएगा कि समाज को इसका क्या परिणाम भुगतान पडेगा।"

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भीनासर सम्मेलन मे ध्वनिवर्धकयत्र मे बोलने की अनुमति नही दी गई थी तथा ज्ञानमुनिजी का यह लिखना कि "कुछ प्रतिबन्धो के साथ प्रायश्चित लेकर इसके प्रयोग की अनुमति दे दी थी।(पृष्ठ २२५)असत्य एव अप्रामाणिक है।"

अतिम मेटर के रेखाकित वाक्य विशेष चिन्तनीय है "लेकिन भविष्य बतायेगा की समाज को इसका क्या परिणाम भुगतना पडेगा" इससे स्पष्ट हो रहा है कि तथाकथित श्रमण सघ मे ध्वनियत्र के प्रयोग की छूट दे देने से कैसी दयनीय स्थिति बनी हुई है ?

उपर्युक्त ठोस प्रमाणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपाचार्य श्री के नाम मे श्री ज्ञानमुनिजी ने जो कुछ भी अन्यथा लेखन किया है वह सर्वथा अप्रामाणिक है।



परिशिष्ट—५

श्री देवेन्द्रमुनिजी ने "पुष्कर मुनि अभिनदन ग्रन्थ" मे अपने गुरु की प्रशसा का आख्यान करते हुए अप्रमाणित वातो का समावेश भी किया है। जिनकी यथार्थता का दिग्दर्शन करवाया जा रहा है।

पृष्ठ १८१ पर वतलाया है—

"आपश्री के कुशल नेतृत्व से प्रभावित होकर उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. ने मुनि श्री हस्तीमलजी और तपस्वी राजमलजी को अनुशासन वद्धता सिखाने के लिये उदयपुर वर्षावास हेतु प्रेषित किया।"

उपर्युक्त कथन मे देवेन्द्र मुनि ने यह वतलाने का प्रयास किया कि पुष्कर मुनि के नेतृत्व से उपाचार्यश्री जी वहुत प्रभावित थे, इसलिये उनके पास दो सतो को अनुशासन सिखाने के लिये प्रेषित किया। वास्तव मे इस कथन मे सत्यता का सस्पर्श भी नही है। क्योकि स्थानकवासी समाज अग्रगण्य व्यक्ति यह अच्छी तरह से जानते हैं कि पुष्कर मुनिजी का नेतृत्व कैसा था और है।

पुष्कर मुनिजी ने स्वय ने श्रमण सघीय अनुशासन को भग किया था। जव उपाचार्य श्री जी एव उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. से पुष्कर मुनिजी के मिलन का प्रसग आया। उस वक्त उपाचार्य श्री जी ने एव उपाध्याय श्री जी ने उन्हे अनुशासन भग का प्रायश्चित देकर भविष्य मे अनुशासन युक्त रहने के लिये आदेश दिया। जिसको कि पुष्कर मुनि ने स्वीकार किया। यह तो एक नमूना है ऐसी अनेक वातें हैं, जिनका फिलहाल उल्लेख नही किया जा रहा है।

"अखण्ड रहे यह सघ हमारा।" नामक चेप्टर में देवेन्द्र मुनि ने पुष्कर मुनिजी, उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म, मत्री श्री पन्नालालजी म का सयुक्त वक्तव्य दिया है। उनमे भी यह नही वतलाया कि इतना अश अमुक सत का है, इतना अश अमुक सत का है। किसी का भी नाम निर्देश न करके सयुक्त रूप से सवका वक्तव्य अपनी भाषा मे दिया है।

इससे एक वात यह सिद्ध होती है कि यदि उनका वक्तव्य यथार्थ रूप मे था तो उन्हें तीनो सत महापुरुषो का अलग-अलग इनवरटेड " " कोमा में वक्तव्य देते। किन्तु वैसा नही किया गया। अपनी ही भाषा मे उनका नाम देकर कुछ भी लिख देना योग्य नही है। पृष्ठ १८२ पर देवेन्द्रमुनि ने तीनो मुनिवरो के वक्तव्य मे लिखा है कि—

"आचार्य श्री एव उपाध्याय श्री मे मतभेद हो गया और इन महापुरुषों के पारस्परिक विरुद्ध निर्णय हमारे समक्ष आए।"

उपर्युक्त कथन मे कितना सत्य तथ्य रहा हुआ है यह तो उपर्युक्त "कुशल नेतृत्व"

के प्रकरण से स्पष्ट जाना जा सकता है। जो व्यक्ति साधु मर्यादा को गौण कर मात्र स्वयं की प्रतिष्ठा को वढाने के लिये तथ्यो को भी तोड़ मरोड कर सत्य की भी परवाह नही करता है। वह व्यक्ति-साधु अगला लेखन भी सत्य लिखेगा, यह आशा दुराशा मात्र है।

तीन मुनियो के वक्तव्य शब्द का प्रयोग कर जनता पर भ्रामकता का सुनहला जाल विछाया है।

यदि आचार्य श्री व उपाचार्य श्री मे मतभेद था तो किस वात को लेकर, इसका भी कोई उल्लेख नही है। किस वात को लेकर, किस तरह का, क्या कुछ मतभेद हुआ और किसका कौनसा विरुद्ध निर्णय सामने आया आदि कुछ भी नही लिखकर विरुद्ध निर्णय हमारे समक्ष आए यह लिखना निपट भ्रामक-मिथ्या है। नैतिकता से भी निम्न-स्तर का है।

श्रमण सघीय विषयो पर वैधानिक एव प्रामाणिक वर्णन "आचार्य श्री आनद ऋषि" नामक पुस्तक की समालोचना मे दिया गया है। पाठक वहा से पढकर स्पष्ट रूप से जान लेवें।

अत यह असदिग्ध रूप से सिद्ध हो जाता है कि आचार्य श्री आत्मारामजी को सम्मान के स्थान से अतिरिक्त कोई अधिकार नही था। तव वे किसी भी विषय पर कुछ भी निर्णय कैसे दे सकते हैं। यदि उनका कुछ भी निर्णय श्रमण सघीय मुनिवरो के समक्ष आया तो उनमे कम से कम नैतिकता का इतना साहस तो होना ही चाहिये था कि वे स्पष्ट लिख व कह सकते थे कि आचार्य श्री के पास कोई अधिकार ही नही है। अत' विना अधिकार के उनका निर्णय अवैधानिक है जो कि स्वत अपने आप मे निरस्त–खडित है। कुछेक मुनिवरो ने ऐसा कहा भी था।

दूसरा प्रश्न यह है कि यदि आचार्य श्री तथा कथित श्रमण सघ के सचालन व निर्णय मे सक्षम होते तो फिर उपाचार्य श्री की नियुक्ति ही क्यो की जाती।

इस वात को पुष्कर मुनिजी ने भी माना है। जिसको कि "श्रमण सघीय विषयो पर विश्लेषणात्मक निवेदन" के पृष्ठ ६० से उनके हुवहु वाक्य वताये हैं।

"ववारण की द्वितीय धारा से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपाचार्य श्री की नियुक्ति आचार्य श्री की अति वृद्धावस्था व कार्य की अक्षमता से हुई थी। यदि आचार्य श्री कार्य करने मे सक्षम होते तो प्रथम धारा के अनुसार उपाचार्य श्री की नियुक्ति नही हो सकती थी। इस दृष्टि से कार्यवाहक तरीके उपाचार्य श्री ही माने जा सकते हैं। जैसे राजस्थान के महाराज प्रमुख व राज प्रमुख। उपाचार्य के कर्तव्य और अधिकार की धारा सार रहित है।"

इसके अतिरिक्त स्वय आचार्य श्री आत्मारामजी म. सा. ने भी यह माना है कि उपाचार्य श्री को सर्वाधिकार है। जिसका उल्लेख आचार्य श्री जी ने उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. के पत्र मे किया है। जो कि इस प्रकार है—

"आचार्य श्री जी ने उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म. को भी लिखवाया कि" "किसी प्रकार उपाध्याय और मत्री मडल को सहमत कर उपाचार्य श्री चाहे सो निर्णय कर सकते हैं। वह निर्णय आचार्य को मान्य होगा।"

(श्रमण स. वि पर वि नि पृष्ठ "३ से उद्धृत")।

"कान्फ्रेन्स के नेताओ को भी स्पष्ट रूप मे लिखवाया गया था। वह यह है—

"उपाचार्य श्री जी को सब अधिकार प्राप्त है। अत' प्राप्त फरियादो पर यथार्थ प्रकार से यथाशीघ्र निर्णय करना चाहिये और करेंगे।"

"उपाचार्य श्री को इस पर अधिक विचारने का है क्योकि श्रमण सघ का सक्रिय सचालन आप ही के ऊपर है।"

(पृष्ठ ६० से उद्धृत)

उपरोक्त उद्धरणो से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री आत्मारामजी म. मात्र सम्मान के आचार्य थे। उनको किसी भी विषय मे कोई अधिकार नही था। तब उनका किसी भी प्रकार का प्रयोग करना ही अवैधानिक है।

आचार्य श्री जी ने जो कुछ भी निर्णय दिये, वे सब जनतत्रीय पद्धति के साथ उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. एव प्रवर्तक पन्नालालजी म. आदि के परामर्श पूर्वक दिये गये। उस समय पुष्कर मुनिजी म सा भी उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त भी अनेको गणमान्य मुनिवरो एव वरिष्ठ अधिकारियो से प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से परामर्श लिये जाते थे। जिन सबका वर्णन देने से मेटर बढ सकता है। अत नही दिया जा रहा है। और दिये गये निर्णय को श्रमण सघ के अधिकारी मुनिवरो के पास भी भेजे गये थे और उनका भी उससे किसी प्रकार ननुनच नही आया था। अत उपाचार्य श्री द्वारा किये गये निर्णय सर्वमान्य एव वैधानिक थे और हैं अत उपाचार्य श्री द्वारा दिये गये निर्णय के विषय मे अब किसी को भी प्रामाणिक रूप कहने का अवकाश ही नही है।

उपर्युक्त सत्य तथ्य को इस लेखन मे न उभार कर देवेन्द्र मुनि जी द्वारा' का यह लेखन "आचार्य श्री उपाचार्य श्री मे "मतभेद हो गया और इन दोनो महापुरुषो के पारस्परिक विरुद्ध निर्णय हमारे समक्ष आए"।

(पुष्कर मुनि अभिनंदन ग्रन्थ) पृ १८२

यह भ्रामक वक्तव्य साधु जीवन के योग्य नही है। देवेन्द्र मुनिजी ने जिन तीन मुनिवरो के नाम से वक्तव्य का उल्लेख किया। क्या वे अजमेर की कार्यवाही मे सम्मत नही थे ? यदि नही थे तो अजमेर मे उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. अपने हाथों से निर्णय कैसे लिखते और समय समय पर उपाचार्य श्री को कड़क अनुशासन के लिये पत्रो के माध्यम से

कैसे लिखवाते । वैसे ही प्रवतक पन्नालालजी म. सा के पत्र भी आचार्य श्री को कैसे प्राप्त होते ?

आचार्य श्री की वैधानिक पद्धति के लिये स्पष्ट वक्ता प्र. मत्री श्री मदनलालजी म सा के पास जाते समय कहा था कि मैं उपाचार्य श्री जी का निर्णय वैधानिक मानता हू और उसी के अनुसार चलने की भावना रखता हू । तदनुसार अव मेरा आचार्य श्री आत्माराम जी म. सा. से सभोगिक सम्वन्ध नही है । मैं उनके पास उनकी अस्वस्थता होने से शरीर समाधि पूछने के लिये उपस्थित हो रहा हू न कि सभोगिक दृष्टि से ।

यदि तीनो मुनिवरो ने तथाकथित वक्तव्य के अनुसार उपाचार्य श्री की घोषणा को अवैधानिक माना और श्रमण सघ की अखडता को गु जारित किया तव उस श्रमण सघ से प्रवर्तक श्री पन्नालालजी म. एव उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा. अलग क्यों हुए ?

उपाचार्य श्री तो विधिवत् पद्धति के दिये गये पत्र के नोट के अनुसार तथाकथित श्रमण सघ से अलग हो चुके थे । वैसी स्थिति मे श्रमण सघ की उन्नति मे उनके कथनानुसार वाधकता का तो कोई प्रश्न ही नही था, और न ही उनके मतानुसार परस्पर विरुद्ध घोषणा करने वाले थे । तव फिर "वर्तमान मे हमारो आचार व्यवस्था किन्हीं कारणो से शिथिल हो गई ।"

(पू अभिनदन ग्र थ पृ १८२) .

ऐसे वक्तव्य देने का क्या कारण था । जवकि लेखक के अनुसार "कुशल नेतृत्व" करने वाले मौजूद थे । तव वह प्रभावशाली नेतृत्व कहा चला गया और इस समय भी उस प्रभावशाली नेतृत्व का क्यो नही प्रभाव दिखाया जाता है । क्यो नही तथाकथित श्रमण सघ की दयनीय दशा सुधार दी जाती है । जिस दयनीय दशा पर आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. को भी क्षोभ है, उन्होने युवाचार्य चादर प्रदान समारोह के समय अपनी घोषणा मे भी स्पष्ट रूप से जाहिर किया है—

विचारणीय विषय यह है कि उपाचार्य श्री का कार्य आदि अवैधानिक होता तो वर्तमान मे तथाकथित श्रमण सघ के आचार्य आनद ऋषिजी म अपनी घोषणा मे उपचार्य श्री के विचारो को तथाकथित श्रमण संघ मे क्रियान्वित करने की प्रेरणा क्यो देते ?

उपरोक्त कथन से यह सर्वांग रूप से सिद्ध हो जाता है कि उपाचार्य श्री जी ने जो कुछ भी व्यवस्था व निर्णय दिये थे, वे सर्वथा वैधानिक एव श्रमण सस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिये आगमिक धरातल पर दिये थे ।

उपाचार्य श्री जी ने श्रमण सघ से त्यागपत्र की घोषणा की उसे स्वय उपाचार्य श्री ने अवैधानिक माना ऐसा "पुष्कर मुनि ग्रन्थ पृष्ठ न १८२-१८३" पर लिखा है ।

उपाचार्य श्री गरणेशीलालजी म. सा. को लगा कि मेरी अवैधानिक कार्यवाही को श्रमण सघ के मूर्धन्य मुनिगण अनादर की दृष्टि से देख रहे है । अतः उन्होने श्रमण सघ से व उपाचार्य-पद से त्यागपत्र की घोषणा कर दी । आपश्री के त्यागपत्र की सूचना मिलते ही विजयनगर से उपाचार्य को सेवा मे एक शिष्ट मण्डल प्रेषित करवाया, उस शिष्ट मडल, ने उपाचार्य श्री से यह निवेदन किया कि आप त्याग पत्र न देवें । जो आपश्री से अवैधानिक कार्यवाही हो चुकी है, उसका परिष्कार कर दिया जाय, पर उपाचार्य श्री भक्तो को प्रसन्न रखना चाहते थे । अत. ऐसा न कर सके ।"

उपरोक्त कथन मे सबसे पहले तो यह प्रश्न उठता है कि लेखक ने यह कैसे जान लिया कि उपाचार्य श्री जी यह मानते है कि मेरे से अवैधानिक कार्यवाही हो चुकी है । क्या उनके पास उपाचार्य श्री का इस प्रकार का कोई पत्र आया, या ऐसा किसी पत्रिका मे छपा ? अथवा उन्हे ऐसा विशिष्ट ज्ञान हो गया ? जिसे कि सिद्धान्त की भाषा मे मनपर्यवज्ञान कहते है । जिससे वे उपाचार्य श्री के मनोगत भाव जान सके ।

परन्तु विचार करने पर यह स्पष्ट साबित होता है कि उपाचार्य श्री ने बहुत ही चिन्तन मनन के बाद कई कारणो को देखते हुए घोषणा की थी । उसे उन्होने अवैधानिक माना इसका कही कोई उल्लेख नही है । न ही लेखक को ऐसा कोई पत्र उपाचार्य श्री ने दिया और न ही किसी पत्रिका मे ऐसा कोई वर्णन ही छपा है । अन्यथा यदि वैसा होता तो "निवेदन पत्र" मे अवश्यत. आता किन्तु वहा कोई इसका नामोनिशान नही है । और न ही लेखक को मनपर्यवज्ञान ही है जिससे कि वह मनोगत भाव जान सके । बल्कि उपाचार्य श्री जी ने तो अत तक यही कहा कि कोई भी श्रमण सघ मे फैली शिथिलताओ को दूर करदे तो मैं उसी समय श्रमण सघ मे सम्मिलित होने को तत्पर हू । तब यह तो हो नही सकता कि वे अपनी घोषणा को अवैधानिक मानते हो । दूसरी बात यह है कि लेखक स्वय वक्तव्य मे यह मान रहा है कि सघ मे शिथिलता व्याप्त हो गई । जैसा कि पृष्ठ १८२ मे ही लिखा है ।

"सोजत और भीनासर सम्मेलन मे उस अपूर्ण समाचारी तथा तत्कालीन समस्याओ पर विचार विमर्श किया गया । पर अत्यन्त परिताप की बात यह है कि हमारा कदम जो दिन प्रतिदिन प्रगति के पथ पर मुस्तैद रूप से बढना चाहिये था वह रुक गया । रुका ही नही पर कुछ पीछे भी खिसका ।

"हमारा यह दृढ मन्तव्य है कि वर्तमान मे हमारी आचार व्यवस्था किन्ही कारणो से घिथिल हो गई है ।"

उपर्युक्त कथा मे यह स्वत सिद्ध हो जाता है कि श्रमण सघ मे शिथिलता व्याप्त थी, तब वैसे श्रमण सघ में आचार निष्ठा के परम हिमायती उपाचार्य श्री कैसे रहना पसद करते । उपाचार्य श्री जी ने वृद्धावस्था मे भी सघ मे व्याप्त शिथिलता दूर करने का भरसक प्रयत्न किया । किन्तु गुरु शिष्य मोह, स्वच्छदता, दोष गोपन वृत्ति आदि कई कारणों से

सफलता प्राप्त न हो सकी । एक कारण यह भी था कि जिन सत महापुरुषो ने लिखित रूप से उपाचार्य श्री जी को निवेदन किया था कि आप ऐसा अनुशासनात्मक कठोर कदम उठावे जिससे संघ मे व्याप्त शिथिलता दूर हो सके, हम आपके साथ मे है और फिर वे ही अनुशासनहीन तत्वो के पोषक बन गए । इस प्रकार कुत्सित राजनीति का प्रवेश सत समुदाय मे घर कर गया। तब सघ मे अनुशासन हीनता व स्वछदता की प्रवृत्ति कैसे रुक सकती थी । धार्मिक समाज मे भी राजनीति का कुत्सित रूप खेलने वाले सत महापुरुषो के कारण साधु समाज मे शिथिलता शैतान की आत की भाति बढती ही गई ।

उपाचार्य श्री ने अक्षुण्ण रूप से श्रमण सघ को सैद्धान्तिक धरातल पर चलाये रखने के लिये अथक प्रयास किया । किन्तु जब अनुशासन हीनता की स्थिति बढती ही गई, तब उपाचार्य श्री जी ने विवशता वश दूसरा प्रयोग किया, वह था सशर्त त्याग–पत्र । वैधानिक व्यवस्था का अमली रूप एव अनुशासन पद्धति को सुरक्षित रूप मे रखने की शर्त थी । तब श्रमण सघ के वरिष्ठ सत मुनिराजो ने उपाचार्य श्री को त्यागपत्र पुन लेने की प्रार्थना तो अवश्य की परन्तु शर्त पूर्ति के आश्वासन के अभाव मे उपाचार्य श्री का त्यागपत्र बना रहा । उन तथाकथित कुशल नेतृत्व रखने वाले संत मुनिराजो को चाहिये था कि श्रमण सघ मे फैली विपाक्त शिथिलता को परिष्कृत करे । किन्तु वैसा न कर उसी स्वछदता एव अनुशासन हीनता तथा साध्वाचार की शिथिलता मे ही उपाचार्य श्री को सम्मिलित करने का प्रयास किया जाय तो वह कब सभव था ? जब उपाचार्य श्री उस सघ मे सम्मिलित नही हुए तब यह कह देना कि "भक्तो को प्रसन्न रखना चाहते थे · · "

भक्तो की बात तो दूर रही उपाचार्य श्री जी सघ को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये सतो की भी परवाह नही करते थे । इसके भी कई नमूने हैं । विषयातर के भय से वे यहा नही दिये जा रहे हैं । उपाचार्य श्री जी संघ की अक्षुण्णता आगमिक एव सैद्धान्तिक धरातल पर चाहते थे ।

मात्र एकता का झण्डा फहरा देना, नारा लगा देना, "अखण्ड रहे यह सघ हमारा" विज्ञापन कर देना, उन्हे कतई अभीष्ट नही था । वे दीर्घ द्रष्टा महापुरुष इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि इस नाम मात्र की एकता से भविष्य मे क्या परिणाम भुगतना पडेगा । अत उपाचार्य श्री जी ने नाम की एकता को महत्त्व न देकर कार्य की एकता को महत्त्व दिया ।

जिन संत महापुरुषो ने शर्त पूर्ति का आश्वासन उपाचार्य श्री जी को दे दिया था उनके लिये तो त्याग-पत्र स्वत ही नही रहा । साथ ही श्रमण सघ के शुद्ध उद्देश्य के पोषक सत-सती वर्ग पर उन उद्देश्यो को साकार रूप देकर जो अनूठा कार्य किया है । जिसके अभीप्सित परिणाम को भी समाज भली भाति जान रहा है । आज उस संघ मे श्रमण सघ के उद्देश्यपूर्ण अक्षुण्णता के साथ चल रहे हैं । एक दृष्टि से देखा जाय तो यही वैधानिक श्रमण सघ है । क्योकि जिस संघ के जो विधान है उनका पालन करने वाले साधु समाज को यथार्थता

मे श्रमण सघ कहा जाएगा। न कि नाम का झण्डा लेकर चलने वाले समाज को श्रमण सघ कहा जायगा। खोटे सिक्के को चलाने वाले का परिणाम अततः बुरा ही होता है। जो कि आज श्रमण सघ की दयनीय अवस्था स्पष्ट रूप से बतला रही है।

यदि श्रमण सघ के उद्देश्यानुरूप व्यवस्था वर्तमान के तथाकथित श्रमण सघ मे आ जाय तो उपाचार्य श्री की घोषणा के अनुसार उनके पाट के अधिनायक आचार्य श्री नानालाल जी म जो कि श्रमण सघ की वैधानिक अवस्था को लेकर चल रहे हैं उन्हे सम्मिलित होने मे किसी भी प्रकार की आपत्ति नही होगी।

उपाचार्य श्री जी ने श्रमण सघ से त्यागपत्र देकर कोई नया काम नही किया है। यह प्राचीन अर्वाचीन युग मे भी अनेको क्रान्तिकारी आचार्यो द्वारा भी कृत है। आगमो मे गगाचार्य का वर्णन आता है। जिन्होने सघ की शिथिलताओ को देखकर सघ को छोड दिया था। वैसे भी आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा की परपरा एक क्रान्तिकारी परपरा रही है। सयम की अक्षुण्णता को रखने के लिए इस परपरा के आचार्यों ने अनेको क्रान्तिकारी कार्य किये हैं और वर्तमान मे किये जा रहे हैं।

अतत उपाचार्य श्री जी की व्यवस्था को अवैधानिक कहने वाले सत मुनियो मे तथा साध्वी वर्ग एव श्रावक श्राविकाओ के समुदाय से यही विनम्र निवेदन है कि पहले वे अपने अन्तर्चक्षु खोलकर यथार्थताका परिज्ञान करें और अपने दुराग्रह के रग को हटावें। तव स्थिति स्पष्ट हो जायेगी कि उपाचार्य श्री जी ने किस सूझबूझ के साथ वैधानिक तरीके से श्रमण सघ को सुन्दर व्यवस्था दी थी।

एतदर्थ "पुष्कर मुनि अभिनदन ग्रन्थ" मे या अन्य ग्रन्थो मे अट शट असत्य एव अप्रामाणिक लिखना साधुता के कर्तव्य से बहुत परे है। यदि उन्हे श्रमण सघ के अदर दी गई उपाचार्य श्री की व्यवस्थाओं मे जरा कमी महसूस हो तो वे सहर्ष उनके सघ के अधिनायक वर्तमान आचार्य श्री जी से पूछे। परन्तु उन्हें न पूछकर अट शट लिखकर उसे प्रकाशित कर कुप्रचार करना तो कतई उपयुक्त नही है। इसका स्पष्टीकरण करने के लिये यह समाधान प्रस्तुत किया गया है।



जिन शासन प्रद्योतक

धर्मपाल प्रतिबोधक

समता विभूति

समीक्षण ध्यान योगी

विद्वद्शिरोमणि

आचार्य

श्री नानालाल जी म. सा.

卐 हु शि उ चौ श्री ज ग ना ना 卐

ना ना

जिन शासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक, समता दर्शन प्रणेता
विद्वद् शिरोमणि चारित्र चूडामणि, बाल ब्रह्मचारी, परमश्रद्धेय
पूज्यवाद आचार्य

श्री नानालालजी महाराज साहब

आचार्यश्री नानालालजी म.सा.

१ महिमामंडित भूमि पर महिमामंडित का जन्म
२ निमित्त की चिनगारी
३. सुयोग्य गुरु के सुयोग्य शिष्य
४ एकनिष्ठा से चरण चल पडे ज्ञान और क्रिया की दुधारी तलवार पर
५ फलोदी का पहला चातुर्मास और अपूर्व क्षमाशीलता की गहरी छाप
६. वि स २००१ से २००७ तक के चातुर्मास और सिद्धात व आचरण की दृढता का विकास
७ जाति जन्म से नही कर्म से होती है
८ श्रमण सस्कृति के सजग प्रहरी को धर्म रक्षा की कमान सभला दी
९ अतिम क्षण तक गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण
१० भविष्यवाणी दिव्य सिद्धी की ओर
११ आचार्य पद पर प्रथम चातुर्मास
१२ मालव धरा पर प्रभावशाली विहार शकाओ के अद्भुत समाधान और सराहना के स्वर
१३ 'तुम बिन कौन उबारे हमको'–की गुहार, जन कल्याण का यज्ञारम्भ
१४. वचनो का अमृत झरा और भावो के फूल खिले
१५ छत्तीसगढ क्षेत्र मे महान क्रातिकारी विहार
१६ उडीसा प्रात मे कठिन परिषह किंतु कोरे घडो मे पानी शोषने के आल्हादकारी अनुभव
१७ राजनादगाव के चातुर्मास मे दीक्षाओ का ऐतिहासिक महोत्सव
१८ धमतरी मे मूर्ति पूजको का समाधान, रायपुर मे दीक्षाए एव दुर्ग मे वर्षावास
१९. बडीमादडी सघ की उदारता, अमरावती मे वर्षावास
२० ज्ञानगगा की धारा मेदपाट की भूमि पर और सामाजिक उत्क्राति का नया अध्याय
२१ ध्वनि विस्तारक यत्रो के प्रयोग मे वैज्ञानिक दृष्टि मे भी जीव हिंसा
२२ राजस्थान की राजधानी मे चार माह तक जीवन दर्शन पर हृदयस्पर्शी विवेचना
२३. धोरो की धरती पर वचन मुक्ता की लडिया और पाच चातुर्मासो का पवित्र हार
२४ दो आचार्यो का स्नेह मिलन, सयुक्त उद्घोष एव जीवन व्यवहार की पचसूत्री योजना
२५ मरुधरा के सुदूर अचलो मे व्यापक विचरण और अनेक मुमुक्षु आत्माए सयम पथ पर
२६ राणावास की ज्ञान वाटिका मे नव सूत्र के नव सुमन विकसे
२७. दाता की पावन माटी पर पतित पावन के चरण और उदयपुर वर्षावास
२८. गुजरात के मुख्य नगर अहमदाबाद मे
२९. सफल सौराष्ट्र प्रवास एव भावो की नगरी मे भावामृत वर्षा
३०. पिछलो पंचशतो का अभूतपूर्व दीक्षा महोत्सव
३१. बहु आयामी महानगरी बम्बई मे आचार्य श्री का श्रद्धा भावभीना स्वागत

आचार्य श्री नानालालजी म.सा.

जीवन-तथ्य

जन्म स्थान		दाता जिला चित्तोडगढ (राज०)
जन्म तिथि	.	वि.स १९७७ ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया
पिता	:	श्री मोडीलालजी पोखरना
माता	:	श्रीमती श्रृंगारबाई
दीक्षा तिथि	:	वि.स १९९६ पौष शुक्ला अष्टमी
दीक्षा स्थान	:	कपासन (राज०)
युवाचार्य पद स्थान	:	उदयपुर (राज०)
युवाचार्य पद तिथि		वि स २०१९ आश्विन शुक्ला द्वितीया
आचार्य पद स्थान	:	उदयपुर (राज०)
आचार्य पद तिथि	:	वि स २०१९ माघ कृष्णा द्वितीया

आचार्य श्री नानालालजी म.सा. के चातुर्मास

संवत्	स्थान	संवत्	स्थान
१९९७	फलौंदी		आचार्यपद
१९९८	बीकानेर	२०२०	रतलाम
१९९९	ब्यावर	२०२१	इन्दौर
२०००	बीकानेर	२०२२	रायपुर
२००१	सरदारशहर	२०२३	राजनादगाव
२००२	बगडी	२०२४	दुर्ग
२००३	ब्यावर	२०२५	अमरावती
२००४	बडीसादडी	२०२६	मन्दसौर
२००५	रतलाम	२०२७	बडीसादडी
२००६	जयपुर	२०२८	ब्यावर
२००७	दिल्ली	२०२९	जयपुर
२००८	दिल्ली	२०३०	बीकानेर
२००९	उदयपुर	२०३१	सरदारशहर
२०१०	जोधपुर	२०३२	देशनोक
२०११	कुचेरा	२०३३	नोखामण्डी
२०१२	बीकानेर	२०३४	गंगाशहर-भीनासर
२०१३	गोगोलाव	२०३५	जोधपुर
२०१४	कानोड	२०३६	अजमेर
२०१५	जावरा	२०३७	राणावास
२०१६	उदयपुर	२०३८	उदयपुर
२०१७	उदयपुर	२०३९	अहमदाबाद
२०१८	उदयपुर	२०४०	भावनगर
२०१९	उदयपुर	२०४१	बोरीवली (बम्बई)
		२०४२	घाटकोपर (बम्बई)

❀ साधना की पगडडी पर जो अविचल रूप से निर्भयता के साथ चलते रहे
❀ श्रमण सस्कृति की अक्षुण्य सुरक्षा के लिये जो अनेक तूफानो एव झझावातो के बीच भी हिमानी की तरह अडिग बने रहे ।
❀ गुरु चरणो मे सर्वतोभावेन समर्पित होकर जो आत्मिक–मशाल को निरन्तर प्रज्वलित करते रहे ।
❀ चिन्तन की गहराइयो से निसृत समता–सुधा द्वारा जो, विषमता से विपाक्त विश्व को आप्लावित कर रहे हैं ।
❀ दलित–पतित शोषित–उत्पीडित निम्न समझे जाने वाले जनसमूह को जिसने अपने पावन पूत जीवन से सस्कारित कर धर्मपाल की सज्ञा से अभिव्यजित किया है ।
❀ जैन समाज की भावनात्मक एकता के लिये जो अपने महत्वपूर्ण चिंतन के साथ सदा तत्पर है ।
❀ मानवो के मानसिक तनाव की उपशांति के साथ आत्मिक शाति जागृत करने के लिये जिसने आगम–सम्मत 'समीक्षण ध्यान साधना' का अभिनव प्रयोग जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है ।
❀ जटिल से जटिल प्रश्नो का समाधान, जो अपनी प्रखर–प्रतिभा से सहजता के साथ आगमिक वैज्ञानिक, तार्किक एव व्यवहारिक तरीके से पूर्ण सन्तोप पद प्रस्तुत करते हैं ।
❀ जिनके प्रवचन आगमिक विवेचना के साथ ही विश्व की तात्कालीन समस्याओ का सचोट समाधान प्रस्तुत करते हैं ।
❀ एक साथ २५ दीक्षाए देकर जिसने ५०० वर्ष पूर्व के इतिहास को पुन तरोताजा कर दिया है ।
❀ जिनके जीवन का नैसर्गिक चमत्कारिक प्रभाव आधिव्याधि और उपाधि से सतप्त जीवन मे शाति का वर्षण करता है ।
❀ भारत के कोने–कोने मे विस्तृत इस विशाल सघ का जो कुशल सचालन कर रहे हैं ।
❀ पचमाचार्य श्री श्रीलालजी म सा की भविष्य घोषणा, वर्तमान के परिप्रेक्ष्य मे सत्यता की कसौटी पर कसी जाती हुई जिनके जीवन से प्रदीप्त हो रही है ।

ऐसे युग–पुरुष है, समता विभूति, विद्वद् शिरोमणि, जिन शासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक, समीक्षण ध्यान योगी, हुक्म गच्छ के अष्टम पाट सुशोभित हमारे चरित्र नायक–

आचार्यश्री नानेश

(आचार्यश्री नानालालजी म.सा.)

महिमा-मंडित भूमि पर
महिमा-मंडित का जन्म

मेवाड के गौरवशाली इतिहास की अधिकाशत संरचना चित्तोडदुर्ग पर अथवा समीपवर्ती क्षेत्रो मे हुई है। चितौड दुर्ग पर केसरिया वाने और जोहर की ज्वालाओ ने त्याग-बलिदान के जिस अदम्य-शौर्य एव शात विसर्जन का उदाहरण प्रस्तुत किया है उसकी मिसाल विश्व के किसी भी राष्ट्र के इतिहास मे नही मिलती है। सच पूछे तो इसी इतिहास ने सम्पूर्ण भारतीय इतिहास को गौरवान्वित बनाया है।

वीर भूमि चितौडगढ के इसी पावन क्षेत्र मे हमारे चरित्र नायक का जन्म हुआ। भूमि-महिमामडित थी तो आज आपश्री भी ऐसे महिमा-मडित हो रहे हैं जो महिमा देश-देशात तक सुवासित हो रही है। वर्तमान चित्तोडगढ जिले मे कपासन कस्वे के निकट एक छोटे गाव दाता मे आपश्री का शुभ जन्म हुआ। इस शुभ जन्म का शुभ दिन वि स १९७७ की, ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया का दिन था। यही दिन दाता के तीन श्रेष्ठि परिवारो मे अपनी गौरवशाली नैतिकता मे सुसमृद्ध परिवार के प्रमुख श्री मोडीलालजी पोखरना एव उनकी धर्मपरायण पत्नी श्रीमती शृ गार कु वरबाई के परम प्रफुल्लित होने का दिन भी था, जिनकी लाड भरी गोदी मे हमारे चरित्र नायक का परम स्नेह से लालन-पालन हुआ। आपश्री के जनक और जननी बहुत ही मृदुल एव सरल-स्वभावी थे तथा धार्मिक वृत्तियो मे सजग एव दृढ चित्ती थी। आपश्री से बडे दो भाई तथा बडी पाच बहिने थी, जिनमे से दो बहिनो ने आपश्री का ही अनुसरण करते हुई सयम-पथ स्वीकार किया था। वे महासतीजी श्री धापु कु वरजी एव महासती श्री छगन कु वरजी के नाम से विख्यात हुई। आपश्री के भाईश्री मीठूलालजी का पूरा परिवार अर्थात् भौजाई तथा भतीजे रतनलालजी दीपचन्दजी, रूपलालजी आदि अपने-अपने व्यवसाय मे लगे हुए हैं।

आपश्री चू कि अपने सभी भाई-बहिनो मे सबसे छोटे थे अत आपका प्यार मे 'नाना' नाम रख दिया। यद्यपि आपका जन्म नाम गोवर्द्धनलाल था, आपका प्यार भरा नाम 'नानालाल' ही विख्यात हुआ। यह नाम भी बडा सारपूर्ण सिद्ध हुआ कि आपश्री स्वय को नाना मानकर चलते रहे और दुनिया ने आपके समुन्नत जीवन मे महानता के दर्शन किये। प्रारम्भ से ही सरल-सहज प्रकृति, विचारो मे प्रखरता आपश्री की नैसर्गिक विशेषता थी, जिसके कारण आपश्री अल्प वय में ही ग्रामवासियो की प्रशसा के पात्र बन गये। आपश्री वृद्धजनो की स्वत. ही कोई न कोई सेवा करते रहते थे।

प्रकपित कर युगलो से कुए मे पानी भरकर ले जाती हुई वृद्ध महिलाओ को देखकर आपश्री का मन दयार्द हो उठता और आपश्री उनके हाथ से घडा लेकर स्वयं ही पहुचा देते। आपश्री भावुक मन भी थे। कभी शैल मालाओ पर अपनी दृष्टि टिका देते तो कभी शून्याकाश मे चमकते सितारो को निहारते रहते। आपश्री की वह सजग दृष्टि थी जो भाति-भाति के विचारो एव कल्पनाओ को जन्म देती रहती थी। जब जन्मगत सस्कार श्रेष्ठ एव धार्मिक हो तो विचारो एव कल्पनाओ की गति भी उसी दिशा मे आगे बढती है। अल्पवय से अभ्यास मे आया हुआ आपश्री का चिन्तन, सदा अपनी प्रखरता से विभिन्न क्षेत्रो मे चलता रहा है, किंतु उसका गूढ स्वरूप सदा एक सा ही है।

बचपन से आपश्री एकाकी ही अधिक रहते थे और साथियो के साथ से बचते थे। साधारण खेल खेलकर अपना मनोरजन करने की आपकी आदत कभी नही बनी। आप मनोरजन ऐसा चाहते थे जिसमे कार्य, समय और मन तीनो की सार्थकता सफल बने। कल्पनाओ मे सबसे पहली कल्पना आपश्री के मानस मे यह उभरी कि मैं भी ऊचे आकाश मे क्यो न उड चलू? आप सोचते कि पक्षी से अधिक शक्तिशाली होते हुए भी मैं उडने मे सफल क्यो नही हो रहा हू? आपश्री की दूसरी कल्पना जागृत हुई पहली बार रेलगाडी देखकर। सोचा, इसमे बैल या घोडा नही है और एक आदमी ही इस दैत्याकार गाडी को खीचकर ले जा रहा है।

उन्होने ड्राइवर को पहिया व राड घुमाते हुए देखा तो कल्पना करनी शुरु की कि मै भी ऐसा बलशाली चालक क्यो नही हो सकता हू? आपश्री की तीसरा कल्पना जागृत हुई प्रत्येक ग्रामवासी के मुख से निकलते हुए परमात्मा के नाम से। लोग कहते कि परमात्मा की ज्योति दीपक की लौ की तरह होती है और आपश्री घटो इस लौ को निरखते रहते कि उसमे परमात्मा के दर्शन हो जाय।

प्रकृति की यह क्रूर विडम्बना ही थी कि मन की ऐसी कल्पनाओ और आशाओ मे डूबा बालक पितृहीन हो गया। यह वज्राघात के समान था जब आपश्री की आयु मात्र आठ वर्ष की थी। इस आघात की भी आपश्री के चितन मे यह अनुकूल प्रतिक्रिया हुई कि आप बाहर से भीतर चले गये और चिन्तन का एक नया स्त्रोत मिल गया। पिताश्री के दुखद देहावसान के समय आप और आपके बडे भाई श्री मीठूलालजी रह गये थे क्योंकि अन्य भाइयो का देहान्त आपकी छोटी आयु मे ही हो गया था। आपका प्रारम्भिक अध्ययन गांव की छोटी सी पाठशाला मे ही हुआ, जहा 'कक्के केवलिये' से चलकर कुछ पहाडे ही सिखाये जाते थे। आगे का विद्याध्ययन भादसोडा और चिकारडा मे हुआ जहा आपकी दोनो बहिनें व्याही हुई थी। ज्यो-ज्यों आपश्री समझ पकडते गये,आपकी आज्ञाकारिता एव भक्ति अपनी पूज्य मातुश्री मे केंद्रित होती गई। परिस्थितिया आपको पाठशाला से व्यापार मे खीच लाई। पहले तो आप अपने पिताजी का वस्तु क्रय–विक्रय का व्यापार ही करते रहे परन्तु बाद मे अपने चचेरे भाई कन्हैया लालजी के साथ कपडे का व्यापार "कन्हैयालाल नानालाल" फर्म के नाम से आरम्भ कर दिया। उन तेरह वर्षीय बालक मे इतनी सूझ–बूझ आ गई थी कि अपने भागीदार के साथ भोपाल–सागर से रुई की गाठें बम्बई भेजने का थोक व्यापार प्रारम्भ करने का सोच लिया। तभी

भोपाल-सागर मे महान् ज्योतिर्धर श्री जवाहराचार्य का आगमन हुआ और दोनो भागीदारो ने आचार्यश्री से गुरुधारणा ग्रहण कर ली। सम्यक्त्व का वही बीज गहरे पैठकर आज विस्तृत वट-वृक्ष बनता जा रहा है। यही छोटा-सा बीज उस समय आपश्री के चिंतन मे एक अग्निकण सा चमक उठा। यह निमित्त की चिनगारी आपके बाल हृदय मे उत्थान-कामना की प्रज्वलित मशाल बन उठी।

निमित्त की चिनगारी

श्रीमद् जवाहराचार्य द्वारा आपश्री को प्राप्त सम्यक्त्व की चिनगारी जब निमित्त बनी तो चिंतन के क्षेत्र मे सासारिकता की भावना धू-धू करके जलने लगी। आपश्री के हृदय मे दबी हुई वैराग्य भावना उभर उठी। यद्यपि तब तक आपका किसी भी धार्मिक अनुष्ठान से परिचय नही हुआ था, आपकी बुद्धि विचक्षण थी जो किसी भी क्षेत्र मे चिंतन का धरातल पुष्ट बनाने मे सक्षम थी। उस बुद्धि को मात्र अवसर की प्रतीक्षा थी और वह अवसर भी आ गया। आपकी बडी बहिन श्रीमती मोतीबाई का विवाह भादसोडा मे श्री सवाईलालजी लोटा के साथ हुआ था। वहा मेवाडी मुनि श्री चौथमलजी म सा का स १९९४ का चातुर्मास चल रहा था। उस समय आपकी बहिन ने पचोले की तपस्या की और रीति के अनुसार पीहर से वेश वगैरह दाता मे भादसोडा ले जाने का प्रश्न आया तो बडे भाई सा० ने आपको उस प्रसग पर भादसोडा जाने के लिये कहा।

जिन्होंने अब तक किसी भी धार्मिक क्रिया की न तो जानकारी ली थी और न उसमे अपनी रुचि ही जगाई थी, कोई नही जानता था कि धार्मिक अनुष्ठान का प्रथम परिचय ही आपकी जीवन गति को चिरस्थाई गतव्य की ओर मोड देगा? भादसोडा पहुचकर आपने रीति पूर्वक बहिन को वेश वगैरह ओढाया और सुबह लौटने का ख्याल बनाकर रात्रि मे सो गये। किंतु सुबह आपके बहनोई जी ने समझाया कि अभी पर्यूषण चल रहे है, और महाराज का चातुर्मास है इसलिये कल यही ठहर जाओ तथा पवित्र दिनो को धार्मिक अनुष्ठानो मे व्यतीत करो। उनके कहने को न टाल कर दूसरे दिन आपश्री भादसोडा मे ही रुक गये। आपके बहनोई जी आपको प्रवचन मे भी ले गये। प्रवचन कुछ सुना कुछ नही सुना और कुछ समझ मे आया, कुछ समझ मे नही आया लेकिन महाराज के अन्तिम शब्दो-कल एक ऐसी कहानी सुनाऊगा जिसमे ससार की दशा का ज्ञान होगा, ने आपका ध्यान खीच लिया और अगले दिन कहानी सुनकर जाने का निश्चय किया। दूसरे दिन कहानी सुनने के साथ प्रवचन मे भी आपकी रुचि जागृत हुई। उस प्रवचन मे हिंसा न करने का भाव-प्रवण शैली मे उपदेश दिया गया। प्रवचन सुनते समय तो आपके मन पर विशिष्ट प्रभाव पडा हो ऐसा प्रतीत नही हुआ। भादसोडा से आप सवत्सरी के दिन ही भदेसर के लिये रवाना हो गये जहा आपकी माताजी अपने भाई के यहा गई हुई थी भादसोडा से भदेसर के बीच मे एकान्त सुरम्य वनस्थली, पक्षियो के कलरव और शातलमद समीर के साथ कुछ ऐसा प्राकृतिक वातावरण मिला कि चलते-चलते प्रवचन के

नये सुने विषय पर आपके मन मस्तिष्क मे गम्भीर चिंतन चल पडा । प्रवचन मे महाराज श्री ने पाचवे और छठे आरो (काल विशेष) का वर्णन करते हुए फरमाया था कि पाचवा आरा ह्रास काल है । पाचवे आरे की पूर्णता पर छठा आरा प्रारम्भ होगा । उस समय मानव धृति, बल, कांति और आयुष्य से अत्यधिक हीन होगा । मानव की आयुष्य घटते-घटते बीस वर्ष की रह जाएगी । देहमान एक हाथ प्रमाण रहेगा । अतृप्त आहार की इच्छा रहेगी, कितना भी कुछ खा लेने पर तृप्त नही हो सकती । खान-पान मासाहार होगा । उस समय मानव दीन-हीन, दुर्बल, दुर्गन्धी, नग्न, आचारहीन रोगिष्ट, आचार विचारहीन, माता, बहिन पुत्री का भी विचार करने वाले नही होगे । छ वर्ष की स्त्री माता हो जाएगी । जिनका निवास गुफाओ मे पशु तुल्य होगा । वही स्थिति २१००० वर्ष तक चलती रहेगी । उस एकात वातावरण मे आप काल विशेष के वर्णन पर ही गहराई से सोचने लग गये कि क्या छठे आरे के अत्यन्त क्लेशमय लघु कायिक मानव जीवन मे भी आना पडेगा ?

इस प्रश्न के साथ आपके मस्तिष्क मे ऐसे ही सैकडो प्रश्न मडराने लगे । काल विशेष का उनका वह चिंतन जीवन का जीवन्त चिन्तन बन गया । और वे विचार अपने पिछले कृत्यो मे टकराने लगे तो पश्चात्ताप की भावना से भीतर का मैल पिघल-पिघल कर आखो के रास्ते बाहर प्रवाहित होने लगा । आपश्री ने माताजी की धार्मिक क्रियाओ मे कई बार बाधाएं डाली तो उस अधार्मिकता का क्या उन्हे फल नही भोगना पडेगा ? ऐसी अनेक बातें आपश्री के मन मे उठने लगी और जैसे एक नई चेतना करवट लेने लगी । आपश्री को ऐसी अनुभूति हुई जैसे भीतर-बाहर सब कुछ किसी अलौकिक प्रकाश से जगमगा उठा हो । भादसोडा से भदेसर की छोटी सी यात्रा आतरिक जागरण की दृष्टि से आपके जीवन की महायात्रा बन गई ।

भदेसर गाव के बाहर तक पहुचे तो जैसे आप भीतरी चिन्तन से जागे । आखें आसुओ से भीगी हुई थी और चेहरा उतरा हुआ सा दिखाई दे रहा था । आपने हाथ-मुह धोकर स्वय को सहज बनाया और ननिहाल पहुचे । तब भी आपका आन्तरिक भावावेश मन्द नही हुआ । जाते ही आप अपनी माता के पावो मे गिर पडे और पश्चात्ताप से अश्रुपूरित हो निवेदन करने लगे—मैंने आपको बहुत कष्ट दिये । आपके धर्म-ध्यान मे बाधाए डाली जिससे मैंने बहुत पाप बाध लिया है । अब मेरे जीवन की दिशा बदल गई है । मैं आपके धार्मिक कार्यो मे कतई बाधा नही डालूगा बल्कि आप जो भी धर्म कार्य कहेगी, मैं उसमे सहयोग दूगा और स्वय भी धर्म की आराधना मे तल्लीन बनूगा ।

आपश्री ने इस प्रकार जीवन के सत्य का उद्घाटन कर लिया था और यह निश्चय कर लिया था कि जीवन को धर्म एव लोकोपकार मे समर्पित भाव से लगा देना चाहिये । अब जब अगले वर्ष उन्ही मेवाडी मुनिश्री का चातुर्मास आकोला मे होने की आपको जानकारी हुई तो आपश्री पूरे चातुर्मास काल मे कभी अकेले तो कभी माताजी को लेकर जाते-आते रहे । आकोला दाता से मात्र ६ मील की दूरी पर है । आपके हृदय मे वैराग्य की भावना शनै. शनै. प्रबल बनने लगी क्योकि वह आपश्री के ज्ञान, चिन्तन एव अनुभव की आधारशिला पर पल्लवित हुई थी ।

एक दिन वह था जब आपश्री माताजी के त्याग प्रत्याखानो को ढोग कहकर उडा देते थे अब जब आपश्री ने विविध प्रकार के त्याग–प्रत्याख्यान प्रारम्भ किये, तो माताजी समझ गई कि उनका सुपुत्र वैरागी हो रहा है और तब वे कहने लगी मैं तुम्हारे त्याग–प्रत्याख्यानो को नही मानती। हकीकत मे वैराग्य के कारण एक टकराव की सी स्थिति पैदा हो गई। जितना टकराव बढा, आपका वैराग्य भाव उतना ही सुनिश्चित बनता गया। एक बार आपको यह जानकारी मिली कि आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज पिछले कई वर्षो से अन्न बिल्कुल नही ले रहे हैं और केवल तरल पदार्थो पर ही रह रहे हैं तो आपके भावुक मन मे भी सकल्प जागा कि वे भी क्यो नही केवल पानी के आधार पर रह सकते हैं ? तब आपने अपने भोजन की मात्रा घटानी शुरू की और कुछ दिनो मे एक चौथाई रोटी खाकर पानी पी लेने की स्थिति पर आ गये। कुछ महिनो की ऐसी कठिन तपस्या से आपका शरीर बहुत दुर्बल हो गया। आपकी माताजी ने इसे दीक्षा की आज्ञा देने का सत्याग्रह समझा इसलिये एक दिन बोली— तुम्हे दीक्षा लेनी है तो मिल जायेगी लेकिन इतनी जल्दी मत करो। इस ससार को भी देखो परखो और अपने अनुभव को पकाओ। इसे भी नही मानो तो कम से कम मेरे बुढापे को देखकर अपने कर्त्तव्य के बारे मे तो जरूर सोचो। मेरे चले जाने के बाद जैसा सुख हो वैसा करना। इस कथन से आपके सामने दीक्षा की समस्या अधिक जटिल हो गई। फिर भी आप अपने चितन स्तर से हटे नही, बोले-माताजी ! कौन जानता है कि पहले आप जायेंगी या कही मैं ही चला जाऊं ? काल किसी को छोडता नही। यहा ससार मे रहकर मैं केवल आपकी ही सेवा कर पाऊंगा किंतु यदी सयम स्वीकार कर लेता हू तो अनेकानेक माताओ की धर्म सेवा कर सकूंगा।

सुयोग्य गुरु के सुयोग्य शिष्य–

आपश्री के वैराग्याभिभूत हृदय मे यह धुन समा गई कि सुयोग्य गुरु को पाने के लिये गहरी खोज की जाय। इसी धुन मे आप एक दिन दाता से भोपाल सागर पहुच गये और वहा से ट्रेन पकड कर उदयपुर। उस समय वहा पजाब केसरी आचार्यश्री आत्मारामजी म.सा. एव युवाचार्यश्री शुक्लचन्दजी म.सा. चातुर्मास मे विराज रहे थे। आपश्री दर्शनार्थ वहा पहुचे और आपने व्याख्यान सुना तदनन्तर अन्यान्य मुनियो से भी सम्पर्क साधा। आपने एक मुनि श्री जवरीलालजी म.सा. के सामने वैराग्य भाव के साथ ज्ञान-ध्यान सीखने की बात कही। फिर क्या था, वे आपश्री को युवाचार्यजी के पास ले गये और बताया कि इन्हे आपके समीप ही दीक्षा लेनी है। हमारे चरित्र नायक को ऐसा आग्रह उचित नही लगा और आप थोडी देर इधर-उधर की बातें करके वहा से चल दिये। फिर सिंघीजी की हवेली मे पहुचे जहा मेवाडी मुनिश्री के सम्प्रदाय की कुछ सतिया विराज रही थी। आप दर्शन करने के लिये वहा पहुच गये। बातचीत मे सकेत पाकर उन सतियो ने भी आपको तुरन्त बदनोर मेवाडी पूज्यश्री की सेवा मे चले जाने का आग्रह करते हुए कहा कि जगह-जगह घूमने की आवश्यकता नही है। चू कि मेवाडी पूज्यजी मोतीलालजी म.सा. से पहले आपका परिचय हो चुका था, आपने बदनोर जाना ही उपयुक्त समझा। आप बदनोर के लिये रवाना हो गये लेकिन मार्ग मे पता करते रहे

कि कही अन्य मुनिराज भी विराज रहे हैं या नही । भीम मे पता चला कि मेवाडी मुनिश्री चौथमलजी म सा वहा विराज रहे हैं । आप उनके पास गये तो आपश्री की दीक्षा भावना जानकर कहने लगे–साधु बनकर क्या करोगे ? मैं तुम्हे आक(फीचर न०) बता देता हू सो बवई जाकर अपनी किस्मत बनाओ और मौज करो । आपको आश्चर्य हुआ कि एक जैन साधु यह क्या कह रहा है ? अन्तत आप बदनौर पहुचे जहा तीन-साढे तीन माह लगातार रहे और ज्ञानाध्ययन करते रहे । साथ मे एक चौथाई रोटी वाली तपस्या भी करते रहे । इतने समय तक वहा रह जाने के बाद भी आपको वहा देखी आचार पद्धति से सतोष नही हुआ । वहा आपको ज्ञात हुआ कि व्यावर मे भी कुछ सत विराज रहे हैं, आप वहा चले गये ।

व्यावर मे उस समय श्रीमद् जवाहराचार्य के आज्ञानुवर्ती स्थविर सत प. मुनिश्री जौहरीमलजी म सा आदि विराज रहे थे । आपने उनके दर्शन किये और अपना परिचय देते हुए आचार्यश्री की सघीय व्यवस्था की जानकारी ली । वहा आपने जो कुछ देखा और सुना उससे आपके मन को सहज सतोष मिला । आचार्यश्री के जीवन परिचय से तो आपकी आस्था बलवती बन गई आपको यह विदित हुआ कि वर्तमान मे ज्ञात-द्रष्टा युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा ही सघ नायक का भार सभाल रहे हैं । तब आपश्री अपना दृढ विचार बनाकर एक बार वापिस दाता पहुच गये । वहा कुछ दिन और विचार मथन चलता रहा । तब एक दिन आपश्री कपासन पहुचकर स्थानीय प्रमुख श्रावक श्री मीठालालजी चंडालिया से पूछने लगे कि मैं पूज्यश्री गणेशीलालजी म सा के पास जाना चाहता हू । आप बतावे कि उनका इस समय विराजना कहा हो रहा है ? श्री चडालियाजी ने वही कपासन मे विराज रहे मुनिश्री इन्द्रमलजी म सा (प श्री समर्थमलजी म सा मे सम्बन्धित) के पास आपश्री को कुछ दिन अध्ययन करने के लिये भेज दिया । सप्ताह भर मे ही आपका मन वहा से भी ऊब गया । इस बीच आपको ज्ञात हो गया कि युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म सा कोटा मे विराज रहे है । किन्तु उन्ही दिनो आपके बड़े भाई श्री मीटूलालजी कपासन आये तो आपको अपने साथ दाता ले गये । आपके मन मे सच्चे गुरु की खोज की धुन लग रही थी और कोटा जाने की उतावली चल रही थी इसलिये एक दिन बिना किसी को कुछ कहे आप दाता से निकल पड़े । कोटा पहुचकर आपने पूज्यश्री गणेशीलालजी म सा के दर्शन किये तो आपके हृदय पर गहरा प्रभाव अकित हो गया । आपको ऐसी अनुभूति हुई कि जैसे किसी अलौकिक महापुरुष के दर्शन किये हो । आप मत्र-मुग्ध से हो गये ।

उस अमिताभ तेज से अभिभूत होकर आपने कुछ ही पलो मे निश्चय कर लिया और युवाचार्यश्री की सेवा मे निवेदन किया–गुरुदेव मैं आपश्री के चरणो मे दीक्षित होकर सयम साधना करना चाहता हू आप मुझे कृपा करके श्री चरणो में स्थान दें । यह स्थान-स्थान के कटु अनुभव लेकर कहा हुआ एक सच्चे अन्वेषक का आत्म-निवेदन था किन्तु युवाचार्यश्री ने इसे सहज भाव से लिया और निस्पृहता पूर्वक फरमाया–भाई साधु बनना कोई हसी खेल नही है । इसके पहले साधुता को समझो, ज्ञान–ध्यान सीखो और वैराग्य को स्थायी बनाओ ।

भावावेश मे ऐसे कठिन मार्ग पर बढ जाना श्रेयस्कर नही होता । जिसके पास दीक्षा लेनी हो उस गुरु की भी पहले परीक्षा कर लेनी चाहिये । अभी तो तुम आये ही हो, न

तुमने हमको ठीक से देखा है और न हमने तुमको। यह उत्तर सुनकर आपश्री विस्मित रह गये, सोचने लगे कि एक ओर तो जगह-जगह उन्हें पकड मे लेने की कोशिशें की गई और दूसरी ओर यहा छूट दी जा रही है। इस अनासक्त उत्तर ने आपश्री को अत्यधिक प्रभावित कर दिया।

युवाचार्यश्री की सेवा मे इस कारण आपने पुन निवेदन किया—पूज्यश्री, मैं तो कई सतो के पास घूम-फिर कर यहा पहुचा हू। यदि दीक्षार्थियो के सामने ऐसी कडी शर्ते रखी जायेगी तो कौन शिष्य बनेगा ? युवाचार्यश्री ने तब गम्भीर मुद्रा मे फरमाया—अगर मेरा कोई शिष्य नही बनेगा तो मेरे आत्म कल्याण मे कौन सी बाधा आ जायेगी ? मुझे जमात नही बढानी है मुझे तो खरी साधना चाहिये। गुरु शिष्य का सम्बन्ध सयम साधना मे पारस्परिक सहकार पर आधारित होना चाहिये और इसी कारण एक-दूसरे की परख जरूरी है। यह मार्मिक विवेचन सुनकर आपश्री का सकल्प सुदृढ बन गया कि इन महापुरुष की चरण सेवा मे ही दीक्षा अगीकार करनी है। ये ही वे सच्चे गुरु है जिनकी अब तक खोज की जा रही थी। इस वार्तालाप मे गुरु एव होने वाले शिष्य का पारस्परिक परिचय हो चुका था, अत आपश्री को युवाचार्यश्री के सान्निध्य मे रहकर ज्ञानार्जन करने की आज्ञा प्राप्त हो गई।

कोटा वर्षावास के बाद युवाचार्यश्री का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ तब आपश्री ने उनकी सेवा मे रहकर सजगता के साथ ज्ञान साधना भी की तो कठिन तप आराधना भी। उदयपुर मे ऐसे कई अवसर आए जब श्रावको ने वैरागी नानालालजी की विवेकपूर्ण प्रज्ञा को देखकर युवाचार्यश्री के समक्ष प्रशसा एव प्रसन्नता व्यक्त की। इस पावन सनग म आपश्री का वैराग्य दीक्षातुर बन गया और दाता जाकर आपने बडी समझाइश एव तेले की साधना के बाद किसी तरह दीक्षा की आज्ञा प्राप्त कर ली किन्तु परिवारजनो एव कपासन श्री सघ की भावना थी कि दीक्षा समारोह कपासन मे रखा जाय।

कपासन मे दीक्षा के पहले दिन आपश्री की सहजवृत्ति का परिचय हुआ। जब युवाचार्यश्री को जानकारी मिली कि वैरागी का रात मे जुलूस निकाला जायेगा तो उन्होंने फरमाया कि धर्म प्रभावना के उद्देश्य को दिन के दूसरे कार्यक्रमो मे पूरा कर सकते है लेकिन रात्रि में आरम्भ-समारम्भ करना उचित नही है। उस समय आपश्री भी वही खडे हुए थे, कहने लगे—गुरुदेव, ये जुलूस किसका निकालेगे ? मैं जाऊगा तब तो। मैंने तो सामायिक पचख ली है। इस पर श्री मागीलालजी बागमार ने सबको कहकर जुलूस का कार्यक्रम रद्द कराया।

वि.स. १९९६ की पौष शुक्ला अष्टमी को विशाल जनसमूह एक जुलूस के रूप मे कपासन शहर के बाहर सरोवर के किनारे पहुचा। यहा पर आपश्री की दीक्षा आयोजित थी। युवाचार्यश्री गणेशीलालजी म सा ने दीक्षा की सैद्धान्तिक प्ररूपणा करते हुए दीक्षा क्यो, किसलिये और कसे ली जाती है आदि का मार्मिक विवेचन किया। हमारे चरित्र नायक विराट् शोभा यात्रा के साथ प्रवचन-मडप मे पहुचे। गुरु को विधिवत् वन्दन कर आपश्री ने मगल-पाठ सुना

श्रौर चतुर्विध सघ का आशीर्वाद लेकर वस्त्र परिवर्तित करने मुनिवेश धारण करने के लिये पास की छतरियो मे चले गये श्रौर जब वापिस लौटे तो वे नवोदित मुनि के रूप मे धर्माह्लाद मे भरे हुए थे । आपको विधिवत् भागवती दीक्षा दिलाई गई ।

आपश्री की गुरु की गहरी खोज सफल हुई श्रौर उस दिन आपने सच्चे गुरु की चरण सेवा ग्रहण कर ली । अब वैरागी नानालालजी मुनिश्री नानालालजी के रूप मे बदल गये श्रौर इस प्रकार द्विजन्मा हो गये । आखिर विचार एव आचार की दृष्टि से साधु जीवन को ग्रहण करना नया जन्म पाना ही तो होता है ।

एक-निष्ठा से चरण चल पड़े ज्ञान और क्रिया की दुधारी तलवार पर

दीक्षा ग्रहण कर ली तो वह भावुक मन भी युवा हो गया श्रौर दीक्षा की उत्कृष्टता को प्राप्त करने के उपायो पर निरन्तर चिन्तन करने लगा । आपश्री ने विचार किया कि जैन दीक्षा मात्र वेश परिवर्तन का नाम नही है वल्कि दीक्षित को अपने सजग ज्ञानार्जन एव कठिन तपश्चरण से दीक्षा को सार्थक एव सफल बनानी होती है । बस जुट गये नवदीक्षित इस गुरुतर प्रयास मे श्रौर एक निष्ठा से चरण चल पडे ज्ञान श्रौर क्रिया की दुधारी तलवार पर ।

आपश्री की बुद्धि मे तीक्ष्णता श्रौर एकाग्रता थी । अत सबसे पहले जब थोकडे (शास्त्रीय ज्ञान के सक्षिप्त वर्गीकरण के स्तोत्र) सीखने लगे तो थोडे ही समय मे आपश्री ने १५०-२०० थोकडे कंठस्थ कर लिये । उसके बाद सम्पूर्ण दशवैकालिक व सुख विपाक सूत्र, उत्तराध्ययन के कुछ अध्ययन एव तत्वार्थ-सूत्र जैसे गूढ ग्रथो को भी आपश्री ने भलीभाति हृदयगम कर लिये । प्राय सभी आगमो का गहन गम्भीर मथन कर नवनीत प्राप्त किया यही नही नव्य-न्याय, सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, षड्दर्शन, गीता, वेद, पुराण, कुराण, बाइबिल, पाश्चात्य दर्शन, मनोविज्ञान, ब्रह्मसूत्र, शाकर भाष्य भामतिटीका सहित सिद्धात कौमुदी टीका सहित प्रमेयकमल मार्तण्ड आदि का भी तलस्पर्शी अध्ययन किया । दूसरे चरण के रूप मे आपका सस्कृत एव व्याकरण का अध्ययन उद्‌भट विद्वान् श्री अम्बिकादत्तजी ओझा के सान्निध्य मे आरभ हुआ । उसमे आपश्री की अद्‌भुत प्रतिभा तुरन्त फलीभूत हुई । लघु सिद्धात कौमुदी से प्रारम्भ होकर पाणिनि की अष्टाध्ययी तक श्रौर हितोपदेश से लेकर अभिज्ञान-शाकुतलम् एव कादम्बरी तक मे आपश्री ने अतिशीघ्र प्रवीणता प्राप्त कर ली । अध्ययन मे आपश्री का ध्यान इतना अधिक केंद्रित रहता था कि कई बार सामने आये हुए व्यक्ति तक का ख्याल नही रहता श्रौर ख्याल आता भी तो 'दया पालो' कहकर फिर अध्ययन मे तल्लीन हो जाते । लोगो के साथ बातचीत करने की तो आपने आदत ही नही डाली । धुन के पक्के थे अत आपकी ज्ञानार्जन की धुन आगे से आगे सफलता के चरण बढाती ही रही ।

ज्ञान तभी स्वरूप ग्रहण करता है जब वह तदनुसार क्रिया में ढलता है आपश्री एक चक्र के रथ पर नही चल रहे थे । रथ के दोनो चक्र एक से घूम रहे थे श्रौर रथ उग्र गति से आगे बढ रहा था । ज्ञानार्जन के साथ आत्मसयम साधना के क्षेत्र मे भी आपश्री ने

को उसी निष्ठा मे तपा रहे थे । वैराग्य अवस्था मे ही आपश्री ने कठिन तप का आदर्श प्रस्तुत किया था उसे अब अधिक प्रकाशमान बनाने लगे । शरीर पर से व्यामोह को घटाते हुए आपश्री ने स्वय को कठोर धार्मिक क्रियाओ में नियोजित किया । जैन श्रमण की सयम साधना वैसे ही बहुत कठोर होती है किन्तु आपश्री ने विचक्षण आत्मबल प्रदर्शित करते हुए अधिक कठोरता से साधना को अनूठा निखार दे दिया ।

जब ज्ञान और क्रिया की एक साथ सफल साधना बन पडती है तो उससे जीवन मे अनेक प्रकार के सद्गुणो का विकास होने लगता है । आपश्री मे तब विनय और विवेक की मृदुलता एव सजगता का विस्तार होने लगा । एक प्रकार से आपके जीवन मे परिपक्वता के दर्शन होने लगे और श्रद्धालुजन कहने लगे कि योग्य गुरु के शिष्य भी योग्य हो चले है । तब वे युवाचार्यश्री से भी पूछा करते–गुरुदेव अब आपके पीछे सघ नैया का खेवनहार कौन होगा ? शिष्य की योग्यता प्राप्ति से आश्वस्त गुरुदेव तब गम्भीरता से फरमाया करते–देखा करो, ऐसी हस्ती छोड जाऊंगा कि आप चन्द श्रावक ही नही, दुनिया देखा करेगी ।

आपश्री ने सयमी जीवन के श्रेष्ठ विकास हेतु तीन लक्ष्य निर्धारित किये थे–ज्ञानार्जन तपाराधन एव गुणदृष्टि की साधना । आपने अपने सम्पूर्ण आत्म–पुरुषार्थ को इन लक्ष्यो की प्राप्ति की दिशा मे सतत सक्रिय बना दिया । इसके साथ ही आपश्री ध्यान–साधना अभ्यास करने लगे । ध्यान या योग, ध्यानी का समस्त ध्यान आत्मा मे केन्द्रस्थ कर देता है, जिससे ध्यानी मे आत्मस्वरूप के दर्शन की क्षमता बढने लगती है । आपभी ध्यानस्थ होकर आत्मस्थ हो जाते थे । जो आत्मस्थ होता है वही स्वस्थ होता है । जो स्वस्थ होता है वही निजात्मा एव ससारी आत्माओ के क्रिया–कलापो पर नियत्रक दृष्टि रख सकता है । दीक्षित हो जाने के बाद बहुत अधिक समय नही बीता था फिर भी आपश्री ने अपने आन्तरिक जीवन मे ऐसा आश्चर्यजनक विकास सम्पादित कर लिया था जिसका अनुभव करके कोई भी प्रभावित हुए बिना नही रहता था । आपका व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा का धनी हो गया था । यह उपलब्धि ज्ञान और क्रिया की दुधारी तलवार पर कुशलता से चलकर ही आप प्राप्त कर सके थे । साधु धर्म को दुधारी तलवार पर चलने की उपमा इसी कारण दी गई है कि साधुत्व का उच्चादर्श स्वप्रेरणा से प्राप्त होता है तो वह दूसरो को निरन्तर प्रेरणा भी प्रदान करता है । हमारे चरित्र नायक ने उस कठिन मार्ग की यात्रा मे जो निश्चलता एव अडिगता दिखाई थी वह अपने गुरुदेव सहित सभी की सराहना का विषय हो गई थी ।

फलौदी में पहला चातुर्मास और अपूर्व क्षमाशीलता की गहरी छाप

जब धाणेराव सादडी मे ज्योतिर्धर आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा. एव युवाचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. का मिलन हुआ तब हमारे चरित्र नायक भी अपने गुरु के साथ थे । उस समय आपश्री उन ज्योतिर्धर के भव्य व्यक्तित्व को निहार कर अत्यधिक भाव विभोर हो गये थे । उस अनूठे व्यक्तित्व का आपके हृदय पर गहरा प्रभाव भी पडा । सादडी से बगडी तक

आपश्री ने उस महान् व्यक्तित्व का सहज ससर्ग भी प्राप्त किया तो आपश्री ने उनकी भावभीनी सेवा करके स्वय को धन्य भी माना । वगडी मे आचार्यश्री का स्वास्थ्य अनुकूल नही रहता था फिर भी श्री सघ के अत्याग्रह से १०–२० मिनिट प्रवचन दिया करते थे, जिन्हे भी सुनने का आपश्री को सौभाग्य मिला । आचार्यश्री की गहरी छाप आपश्री आज भी सजोते आ रहे है ।

वगडी मे सभी का पधारना अजमेर हुआ किन्तु युवाचार्यश्री के साथ आपश्री का विहार चातुर्मासार्थ फलौदी की ओर हुआ । फलौदी का चातुर्मास आपश्री के साधु जीवन का पहला चातुर्मास था, जो आपश्री का सयमीय साधना के साथ सजग–अध्ययन तल्लीनता मे सम्पन्न हुआ । इसी चातुर्मास मे आपका प्रथम 'केश-लु चन' भी हुआ जो शरीर के प्रति अनासक्ति का कठिन परीक्षण रूप होता है । आप तो कठोरतम श्रमण परिचर्या के अभ्यासी थे । वि सं. १९९७ के इस फलौदी चातुर्मास मे एक ऐसी घटना घटित हुई जिससे प्रकट हुआ कि हमारे चरित्र नायक ने अपनी ज्ञान एव क्रिया की सफल साधना से आत्म नियन्त्रण का कितना उच्च स्तर प्राप्त कर लिया था । युवाचार्यश्री की सेवा मे भिक्षावृत्ति आदि का सयोजन कार्य सेवा भावी मुनिश्री रतनलालजी म सा किया करते थे । वे प्रकृति से कुछ तेज थे और अपनी इस कमजोरी को युवाचार्यश्री के सामने प्रकट करते हुए कहा भी करते थे–गुरुदेव, मेरा स्वभाव कुछ तेज है । मुझ प्राय सभी पर किसी न किसी कारण क्रोध आ जाता है परन्तु मुझे बहुत ताज्जुब होता है कि इन नये मुनिश्री नानालालजी पर कभी क्रोध नही आता । कभी-कभी मैं क्रोध आने जैसा प्रसग भी ले आता हू लेकिन ये नव-मुनि विनय भरी मधुर मुस्कान के साथ ऐसा उत्तर देते है कि मैं खुद ही पानी–पानी होकर हस पडता हू और मेरा गुस्सा गायब हो जाता है । मैं सोचता हू कि आप अगर मुझे दो चार साल इनके साथ रख दे तो शायद है मेरा क्रोध ही समाप्त हो जाय ।

यह कथन उन मुनिराज का प्रभाव सूत्र है जो आपश्री की अति सरल एव विनम्र वृत्ति मे उद्भुत । इस पृष्टभूमि मे आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि आपश्री ने स्वात्म नियत्रण का कितना गहरा अभ्यास कर लिया था । आप की ऐसी अपूर्व क्षमाशीलता ने अपने गुरुदेव को, अपने सत-साथियो को तथा श्रावक वर्ग को भी अपने प्रति आकृष्ट बना लिया था । इसी कारण सभी आपके प्रति अनन्य स्नेह रखने लगे थे । क्षमावृत्ति के कारण आपका स्वभाव भी थोडा–थोडा सकोचशील हो गया था । इससे आप सबके साथ खाना खाने मे भी सकोच करते और कम खाकर उठ जाते थे । एक दिन यह बात जब युवाचार्यश्री के ध्यान मे आई तो उन्होने आपको शिक्षा दी कि आहार व्यवहार मे सकोच नही करना चाहिये । नीति कहती है कि इनमे स्पष्टभाषी बनना चाहिये । तब से आपश्री ने इस शिक्षा को हृदयगम कर ली ।

फलौदी का ऐतिहासिक चातुर्मास सानन्द सम्पन्न करके युवाचार्यश्री पुन अपने गुरुदेव की चरण सेवा मे पहुचने के लिये वगडी की ओर पधारे । आपश्री भी साथ ही थे । मार्ग मे आपको ज्वर हो आया ठीक मे उपचार के साधन साधु–मर्यादानुसार उपलब्ध न होने के कारण

ज्वर ग्रस्तता चलती रही । यह आपश्री का आत्मबल एव गुरुदर्शन का उत्कृष्ट भाव ही था कि आपश्री वैसी शारीरिक स्थिति मे भी निरन्तर विहार करते रहे । बगडी मे भी सामान्य उपचार ही हुआ अत आचार्यश्री ने आपको वही कुछ और ठहर कर स्वास्थ्य लाभ करने की सलाह दी किन्तु आपश्री चरण सेवा छोडने को तैयार नही हुए और बगडी से भी विहार मे गुरुदेवो के साथ साथ ही चले । गगाशहर–भीनासर पहुचने के बाद एक वैद्य श्री रामरतनजी ने जब आपका शरीर परीक्षण किया तो वे चौंके और बोले कि इतनी लम्बी ज्वरग्रस्तता के बावजूद आपश्री की मुखाकृति पर जो सौम्य तेज झलकता है वह किसी को भी विस्मय मे डालने वाला है । कुछ महीनो तक अन्न वगैरह बन्द करके केवल दूध पर आपका उपचार चलता रहा जिसमे देह मे काफी दुर्बलता आ गई, अध्ययन मे भी बाधा आने लगी ।

इधर आगामी चातुर्मास का समय समीप आ रहा था । अत युवाचार्यश्री आचार्य श्री की आज्ञा से सरदारशहर मे चातुर्मास करने के लिये थली प्रात की ओर पधार गये किन्तु शरीर दुर्बलता के कारण आपश्री को वि स १९९८ का वर्षावास बीकानेर मे ही व्यतीत करना पडा । इस चातुर्मास मे आपश्री ने वहा विराजित वयोवृद्ध प्रज्ञाचक्षु स्थविर मुनिश्री श्रीचदजी म सा की ऐसी अनन्य भाव से अनूठी सेवा की कि वह आपकी अपूर्व क्षमाशीलता का एक और उदाहरण बन गई । वे वयोवृद्ध मुनिश्री कहा करते–देखा, यह नव दीक्षित मुनि स्वय रुग्ण होते हुए भी कितनी उच्च भावना से मेरी सेवा भी कर रहा है और उतनी ही तल्लीनता मे अध्ययन भी कर रहा है, यह प्रशसनीय है । सभी को इस नव–दीक्षित मुनि से प्रेरणा लेना चाहिए । आपश्री का बीकानेर चातुर्मास सेवा साधना, ज्ञानाराधना एव स्वास्थ्य सुधार की प्रक्रिया के साथ सम्पन्न हुआ । तब तक आपश्री का ज्वर तो टूट गया था लेकिन शरीर की कमजोरी विशेष बढ गई थी इसलिये चातुर्मास समाप्त हो जाने के बाद भी कुछ समय तक आपको वही ठहरना पडा । प इन्द्रचन्दजी शास्त्री आपके अध्यापन हेतु आते थे, तब आपश्री सजल नेत्रों से बार–बार यही कहते–मेरे कैसे अन्तराय कर्म उदय मे आये हैं कि मेरा शरीर पूर्ण रूप से नीरोग नही हो रहा है और मेरे ज्ञानाभ्यास मे बाधा पडती जा रही है ।

जब आपश्री का स्वास्थ्य सतोषजनक रूप से सुधर गया और उसकी जानकारी युवाचार्यश्री को हुई तो उन्होने आपश्री को उनके पास लाडनू पहुचने का आदेश भेजा । लाडनू मे कुछ दिन साथ रखकर आपश्री को ब्यावर मे विराजित स्थविर मुनिश्री प्यारचन्दजी म सा श्री बोथलालजी म सा आदि की सेवा करने के लिये प मुनिश्री जोहरीलालजी म सा के साथ ब्यावर पहुचने का आदेश दिया । अत. आपश्री का वि स १९९९ का चातुर्मास ब्यावर मे वृद्ध सतो की सेवा मे व्यतीत हुआ । वहा भी आपने दीर्घ दीक्षा वाले उन वृद्ध सतो के हृदय को अपनी विनयशील एव सहिष्णु सेवा से इस तरह जीत लिया कि आपकी अपूर्व क्षमाशीलता निखरती ही गई और सराहना पाती ही गई । उन वृद्ध सतो के मुखारविन्द से बार–बार शुभाशीर्वाद के शब्द निकल पडते, ऐसा विनीत कम बोलने वाला और ज्यादा सहने वाला साधु हमने अपनी दीक्षा के इतने दीर्घकाल में भी नही देखा । ऐसा विलक्षण साधु जिन शासन में सितारा बनकर चमकेगा ।

ब्यावर चातुर्मास मे आपश्री ने अध्ययन के साथ-साथ प्रवचन का कार्य भी प्रारम्भ कर दिया था । इस कारण सेवा की प्रसन्नता के साथ वस्तुविषय के प्रति मग्नता का क्रम भी प्रारम्भ

हो गया। इस चातुर्मास के बाद ही युवाचार्यश्री के निर्देशानुसार आपश्री पुन. भीनासर आचार्य श्री एव युवाचार्यश्री के चरणो मे पहुंचकर आचार्य देव की सेवा सुश्रूषा मे जुट गये। सजग प्रहरी की तरह आप हर समय गम्भीर रूप से रोगग्रस्त आचार्य देव के आसपास ही बने रहते। यही कारण था कि आचार्य देव की अन्तिम वेला मे रात्रि को १० से १२ बजे के बीच आप ही को उनकी सेवा का स्वर्ण अवसर मिला। एक दिन रात्रि को ११ बजे जब आचार्यश्री की श्वासोच्छ्वास की प्रक्रिया गडबडाने लगी तब आप ही सेवा मे थे और आपने ही सबको उस स्थिति से अवगत कराया। तभी युवाचार्यश्री ने आचार्यश्री की नाडी देखी और उन्हे सागारी सथारा कराया।

आचार्यश्री के स्वर्गारोहण के समय भी आप वही विराज रहे थे। आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हो जाने के बाद पूज्यश्री गणेशीलालजी म सा का वि स २००० का चातुर्मास तो देशनोक मे हुआ लेकिन आपश्री ने वृद्ध एवं स्थविर मुनियो की सेवा मे बीकानेर मे ही यह चातुर्मास व्यतीत किया। विद्वान् पडितो का सयोग भी वही था अत. चातुर्मास मे सिद्धात कौमुदी का अध्ययन भी चलता रहा।

वि स. २००१ से २००७ तक के चातुर्मास और सिद्धात व आचरण की दृढता का विकास

शात क्रान्ति के अग्रदूत आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा के वि स २००१ से २००५ तक के चातुर्मास क्रमश सरदारशहर, ब्यावर, बगडी, बडी सादडी तथा रतलाम मे हुए। आपश्री भी बीकानेर से चातुर्मास समाप्त करके अपने गुरुदेव के चरणो मे पहुच गये थे तथा उपर्युक्त सभी चातुर्मासो मे उनके सान्निध्य मे ही रहे। इन सभी चातुर्मासो मे आपश्री का अध्ययन अबाध रूप से चला। इसके साथ ही आप उच्चमनोयोग से सेवाकार्यो मे भी समर्पित रहे। गुण सचय का आपश्री का पुरुषार्थ भी उतना ही सक्रिय रहा। इस प्रकार सिद्धान्त और आचरण की भूमिका पर अपने ओजस्वी गुरुदेव के सान्निध्य मे आपश्री के पुष्ट चरण द्रुतगति से आगे बढते रहे।

जब बगडी का चातुर्मास सम्पन्न करके मेवाड प्रात के छोटे-छोटे क्षेत्रो मे विहार चल रहा था, तब आपश्री के जीवन की एक विशिष्ट घटना घटित हुई जो मानो एक कसौटी थी जिस पर आपश्री की मुनि मर्यादा घर्षित होकर स्वर्ण की तरह निखर उठी। आचार्यश्री के साथ आपश्री एव कुछ अन्य विद्यार्थी सत भी थे। जिनका सस्कृत का अभ्यास चल रहा था, तब प्रतिदिन थोडी-थोडी दूरी का ही विहार किया जाता था ताकि सघन धर्म सम्पर्क हो सके, लेकिन इससे विद्यार्थी-मुनियो के अध्ययन मे बाधा पडती थी अत आचार्यश्री ने एक वयोवृद्ध सत श्री मोहनलालजी म.सा को साथ देकर आपश्री एव विद्यार्थी मुनियो को बम्बोरा ग्राम मे पहुचने का आदेश दिया—तुम लोग वहां पहुचकर अध्ययन करते रहो, मैं कुछ और गावो मे विचरण करता हुआ वहा पहुचूंगा। आपश्री आदि सत बम्बोरा पहुचकर अध्ययन में लग गये। अध्ययन

अधिकाधिक समय तक चले इस दृष्टि से भिक्षाचारी सिर्फ प्रात काल ही करने लगे। एक दिन शौचनिवृत्ति हेतु आपश्री समीपस्थ पहाडी खाइयो मे पधारे। सायकाल का समय था निवृत्त होकर लौट रहे थे कि यकायक किसी पशु के कराहने की आहट सुनाई दी। देखने पर पता चला कि नीचे नाले मे फैली वृक्ष की जडो मे एक भेड फसी हुई थी। इधर-उधर देखा तो कोई भी व्यक्ति दिखाई नही दिया। साधु-मर्यादा के अनुसार किसी पशु को छूना कल्पता नही है। गाव मे किसी को कहने जावे और वापिस स्थान वताने आवे तव तक सूर्यास्त हो जाने की आशका थी। एक ओर आपश्री का हृदय द्रवित हो रहा था तो दूसरी ओर साधु मर्यादा का विचार अन्तंद्वन्द्व पैदा कर रहा था। हिंसा और अहिंसा मे से अहिंसा को चुनना ही चाहिये, यह आपश्री की अन्तरात्मा से आवाज उठी। आपने नाले मे पहुचकर भेड को सहारा दिया, बाहर निकाली और गाव तक अपने साथ ले गये। आपने गाव वालो को सारी बात भी बताई। इस प्रकार आपश्री ने आत्मा की पुकार को सुनकर अहिंसा के मात्र रूढ अर्थ का ही अनुसरण नही किया वल्कि उसके गूढ अर्थ को व्यावहारिक रूप से क्रियान्वित कर दिया।

रतलाम का चातुर्मास काल समाप्त करके जब आचार्यश्री आपश्री सहित अपनी शिष्य मडली के साथ इन्दौर पधारे तव सर्वोदयी सत विनोवा भावे से उनका मिलन हुआ और सैद्धान्तिक चर्चा चली। उस चर्चा मे विनोवाजी ने कहा था—आचार्यश्री, आप सोचते होगे कि जैनियो की सख्या वहुत कम है किन्तु मेरी अपनी धारणा के अनुसार 'जैन' नाम धराने वालो की सख्या भले ही कम हो लेकिन जैन धर्म के मौलिक सिद्धात दूध मे मिश्री की तरह दुनिया की सभी विचारधाराओ मे घुलते जा रहे हैं। इस चर्चा मे हमारे चरित्रनायक ने भी भाग लिया था और विनोवाजी का उक्त कथन आपके मानस पटल पर ऐसा अकित हो गया कि प्रसग आने पर आपश्री आज भी इस कथन का उल्लेख करते रहते हैं।

इन्दौर से मुनि मण्डल सहित आचार्यश्री उज्जैन पधारे जहा जयपुर श्री सघ ने आचार्यश्री का चातुर्मास जयपुर मे कराने की कारणवशात् आग्रह भरी विनती की। आचार्यश्री ने उस पर अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। उज्जैन से जयपुर की दूरी वहुत थी, गर्मी भी तेज थी अत दो-दो, तीन-तीन मुनियो के अलग-अलग सिघाड़े बनाकर आगे-पीछे विहार करने को कहा गया। आपश्री के साथ मे मुनिश्री सुन्दरलालजी आदि एक-दो सत देकर आगे विहार करवाया गया। भवानीमडी से आगे के रास्ते की जानकारी ली कि वहा से चार मील की दूरी पर जगल मे एक चौकी है जहा रात्रि विश्राम के लिये स्थान मिल सकता है। इस जानकारी के अनुसार आपश्री आदि वहा से चल पडे लेकिन चौकी तक पहुच कर मालूम हुआ कि वहा मकान पर ताला लगा हुआ है। आसपास मे भी कोई व्यक्ति दिखाई नही दिया। उधर सूर्यास्त होने जा रहा था। निकट मे कोई गाव भी नही था। अन्त मे वृक्ष के नीचे ही रात बिताने का निश्चय किया गया। आसपास मे ऐसा वृक्ष भी नही दिखाई दिया जिसके नीचे प्रासुक (बिना हरी दूब वाला) स्थान हो। अत सूर्य की गति के साथ जल्दी-जल्दी आगे बढने पर प्रासुक स्थान वाला एक वृक्ष दिखाई दिया जिसके नीचे सभी ने रात बिताई। यह आपके सिद्धान्त एव आचरण की दृढता की परीक्षा थी कि पहली बार सिघाडे के नायक बनकर चले और पहले ही नायकत्व वाले विहार मे आपश्री ने सयम निष्ठा के साथ अपूर्व साहस का परिचय दिया।

इतना ही नही, इसी विहार चर्या मे एक दिन आपश्री विकट मार्ग मे उलझ गये। मुख्य मार्ग छोड़कर एक पगडण्डी इस विचार से पकडी कि कम दूरी तय करनी पडेगी। लेकिन वह पगडण्डी आपश्री आदि को पहाडियो के जगल मे ले गई। चलने से प्यास बढ गई, बिना पानी के कठ सूखने लगे। कही सही रास्ता मिलने का आसार नही दिखाई दिया। सभी मुनि असमजस मे पड गये। तभी दो ग्रामीण व्यक्ति सामने से आते हुए दिखाई दिये। उनसे रास्ता पूछा तो वे बोले कि हम भी भटक गये हैं। हमे रास्ता तो मालूम नही है, मगर दिशा का ध्यान है सो हमारे साथ पधारिये। काफी चक्कर लगा लेने के बाद जब दूर एक गाव दिखाई दिया तो वे व्यक्ति मुनि-मडली को छोडकर चले गये।

वि स २००६ का जयपुर चातुर्मास कई दृष्टियो से आचार्यश्री का ऐतिहासिक चातुर्मास रहा। इसी चातुर्मास मे आपश्री ने न्याय मे अनेक ग्रन्थो का गूढ अध्ययन किया। इसी अध्ययनकाल मे आपश्री ने दिगम्बर समाज के प्रो विद्वान् श्री चैनसुखदासजी से परिग्रह की परिभाषा के विषय मे प्रश्न किया-जिसकी मान्यता के विषय मे श्वेताम्बर एव दिगम्बर परम्पराओ मे मतभेद है। यह चर्चा काफी सूक्ष्म रीति से चली और आखिर मे पडितजी को मानना पडा कि दिगम्बर मुनियो के लिये जिस प्रकार से यात्रा व्यवस्थाए की जाती हैं और तद् हेतु जो आरम्भ-समारम्भ किया जाता है वह उचित नही है। पडितजी ने यह भी माना कि परिग्रह की परिभाषा पदार्थ की दृष्टि से नही अपितु मूर्च्छा भाव की दृष्टि से करनी ही अर्थ सगत होगी एक पडित के साथ एक छात्र मुनि ने जिस प्रकार की गूढ चर्चा करके उन्हे अपने मत से सम्मत बना लिया यह आपश्री के सिद्धान्त व आचरण की दृढता का सम्यक् एव परिपक्व विकास ही कहलाएगा।

जाति जन्म से नही कर्म से होती है-

इसी प्रकार की दृढता का एक और आदर्श उदाहरण आपश्री की विहारचर्या मे सामने आया। जयपुर से हिण्डौन के मार्ग मे करौली के आसपास सूर्यास्त होते-होते आपश्री एक गाव के बाहर पहुचे। वहा एक मकान के बाहर एक व्यक्ति बैठा था। आपने उससे पूछा-भाई यह मकान तुम्हारा स्वय का है या ग्राम पचायत का है? कारण, हमे रात्रि विश्राम के लिये आवश्यकता है। उसने तत्काल कहा-महाराज साहब, यह मकान ग्राम पचायत का है और मेरी ही देखरेख मे है। आपश्री ने तब रात्रि-विश्राम हेतु उसे आज्ञा देने के लिये पूछा। उसने बडे सकोच के साथ उत्तर दिया-आज्ञा तो मैं आपको नही दे सकता। आपश्री ने उसे समझाया-भाई, आज्ञा नही देने का क्या कारण है? हम तो बरामदे मे ही रात भर विश्राम कर लेंगे तुम्हारे पर किसी तरह का भार नही डालेंगे। वह व्यक्ति और अधिक सकोच के साथ बोला-भार-वार से मैं नही डरता। महाराज, मकान भी खाली है और आपके लिये बिछौने भी मैं ले आऊगा, लेकिन. . कहते-कहते वह रुक गया। आपश्री ने जिज्ञासा से पूछा-भाई, कहते-कहते रुक क्यो गये? तब दबी जबान से वह बोला-महाराज और कोई बाधा नही, केवल यही है कि मैं हरिजन हू। आपश्री ने आश्चर्य से पूछा-तो इससे क्या हुआ? उस हरिजन ने दुगुने आश्चर्य

से पूछा–क्या आप एक हरिजन की आज्ञा से ठहर जायेंगे ? आपश्री ने पूरा विश्वास जताते हुए फरमाया–क्यो नही भाई, हम जातिवाद को जन्म की अपेक्षा से नही मानते, न ही छुआछूत मे विश्वास करते हैं । तब तो खुशी से विराजिये कहते हुए हरिजन का चेहरा खिल उठा, और बोला–तो क्या आप मुझे अपने पैर छूने देंगे ? आपने फरमाया–वैसे हम किसी को अपने पैर छूने के लिये कहते नही है, किंतु कोई छू ले तो हम एतराज भी नही करते हैं । हा, मैं फिर स्पष्ट कर दू कि हम छुआछूत को बिल्कुल नही मानते । हमारे भगवान् महावीर का कहना है कि कोई भी व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र जन्म से नही होता बल्कि अपने कर्म से होता है । वह हरिजन भाई यह सब सुनकर श्रद्धा विभोर हो उठा और आपश्री के चरण छूकर बोला–आपने आज मेरी आखे खोल दी है । मैं हरिजन अवश्य हू लेकिन शाकाहारी होकर वैद्यगिरी करता हू । तब उसने आपश्री से जैन-धर्म की गहरी जानकारी ली और यह भी बताया कि इस क्षेत्र के ७०० गावो मे हजारो की सख्या मे हरिजन है, यदि उन्हे महात्मा पुरुषो का प्रतिबोध मिले तो दुर्व्यसनो को त्याग कर श्रेष्ठ जीवन अपनाने को तैयार हैं । आपश्रीने आश्वासन दिया भाई यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई है और मैं यह सूचना, अपने आचार्यश्री की सेवा मे अवश्य रखूगा ताकि उनके पावन चरण इस क्षेत्र मे विचरण करे ।

आपश्री हिंडौन से आचार्यश्री के साथ भरतपुर तथा वहा से अलवर पधारे । सयोग से वहा तेरहपथ के आचार्यश्री तुलसी का भी आगमन हो गया । तब कुछ स्थानकवासी बधु आचार्यश्री तुलसी के पास पहुचकर दान सम्बन्धी उनकी मान्यता का स्पष्टीकरण चाहने लगे । उन्होने भगवती सूत्र के एक पाठ को इस तरह बताया कि दक्षतापूर्वक एक शब्द 'तहास्त्र' को आवृत कर दिया । वे स्थानकवासी बधु तब आपश्री के पास पहुंचे और बोले महाराजश्री जी तेरहपथ आचार्यजी ने उनकी मान्यता के अनुसार दान की परिभाषा भगवती सूत्र के आधार पर सिद्ध कर दी है उन्होने नोट किया हुआ वह पाठ आपश्री को दिखलाया । सूत्रो का अध्ययन जिन्होने परिपुष्ट बना लिया था, उन शास्त्र–मर्मज्ञ आपश्री के लिये, दिखाये गये पाठ मे से भूल को खोज लेना कठिन नही था । फिर 'तहास्त्व' का अभिप्राय उनके सामने स्पष्ट किया । तभी अकस्मात् सरदारशहर निवासी श्री मोतीलालजी बरडिया वहा आ पहुचे । उन्हे आपश्री ने सारी बात बताई । तब बरडियाजी उन श्रावको को लेकर आचार्यश्री तुलसी के पास पहुचे । बरडिया जी को देखते ही वे चौक उठे । फिर उनके गोलमाल उत्तर से सभी श्रावक खिन्न होकर चले आये । इस प्रकार सिद्धान्तो के प्रति आपश्री का गहरा ज्ञान सहज ही मे प्रमाणित हो गया ।

वि स २००७ का चातुर्मास आपश्री ने अपने गुरुदेव के साथ दिल्ली मे व्यतीत किया । वहा आपश्री को भारी कमजोरी महसूस होने लगी थी । तब एक वैद्यजी ने आपकी चिकित्सा की और नौ महीने तक केवल मट्ठा पर रखा, कोई खाना नही बल्कि पानी की एक बूद तक नही लेने को कहा गया । इस दौरान आपश्री ने अपनी जिह्वा पर वैसा अनुपम नियत्रण रखा उसे देखकर वैद्यजी भी आश्चर्य करने लगे और बोले–महाराज अपनी रसना पर इतना कठिन सयम रखने वाला मरीज मुझे आज तक नही मिला । मुझे लगता है कि आपने गजब का आत्म नियत्रण साध लिया है ।

श्रमण संस्कृति के सजग प्रहरी को धर्म-रक्षा की 'कमान' सम्भला दी—

आपश्री का स्वास्थ्य चातुर्मास समाप्ति के अनन्तर भी विहार के योग्य नही हो पाया अत आचार्यश्री तो वि स २००८ का चातुर्मास करने के लिये अलवर पधार गये लेकिन आपश्री ने वह चातुर्मास काल सब्जी मडी दिल्ली मे ही व्यतीत किया। वैद्यजी की चिकित्सा से आप पूर्ण स्वस्थ हो गये। अत चातुर्मास समाप्त होते ही गुरुदेव की सेवा मे अलवर पहुच गये। वहा से आचार्यश्री के सान्निध्य मे ही विहार करते हुए जयपुर, अजमेर, ब्यावर होते हुए घाणेराव मादडी पधारे जहा वृहद् साधु सम्मेलन होने वाला था।

साधु-सम्मेलन की सम्पूर्ण कार्यवाही मे आपश्री गुरुदेव के साथ ही रहे तथा निजी सहायक के रूप मे योगदान देते रहे। तत्पश्चात् वि स २००९ के उदयपुर चातुर्मास मे भी आपश्री गुरुदेव के साथ ही विराजे तथा उनकी कर्मठ सेवा मे लगे रहे क्योकि उस समय आचार्यश्री का स्वास्थ्य खराव रहने लगा था। आचार्यश्री की आपश्री द्वारा की जाने वाली तल्लीनतापूर्ण सेवा से आश्वस्त होकर डॉक्टर ने आपश्री को ही इजेक्शन लगाना आदि सिखा दिया ताकि विहार चर्या मे भी चिकित्सा का क्रम टूटे नही। उदयपुर का चातुर्मास सम्पूर्ण करके मत्रि-मण्डलीय वैठक के लिये आचार्यश्री को सोजत पधारना था, लेकिन मार्ग मे नाथद्वारा मे वर्तमान मे विराजमान घायमातृपद विभूषित, शासन प्रभावक, कर्मठ सेवाभावी श्री इन्द्रचन्द जो म सा को निमोनिया हो गया तब आचार्यश्री ने आपको उनकी सेवा मे वही रुकने का आदेश दिया। इस पर आपने निवेदन किया—गुरुदेव, आपका स्वास्थ्य ठीक नही चल रहा है और 'शूगर' नापना तथा इजेक्शन लगाना मैं सीख चुका हू, फिर आप जो भी आज्ञा दे। आचार्यश्री ने यह फरमाया कि मेरा जैसा भी ध्यान दूसरे रख सकेंगे रख लेगे। तुम तो इन सेवाभावी मुनिश्री की सेवा का कार्य देखो।

प्रस्तुत प्रकरण मे हमारे चरित्र नायक को स्व आचार्य-प्रवर ने जिनकी सेवा मे नियोजित किया, वे मुनिश्री भी सघ की एक विरल विभूति हैं, जिनका कुछ परिचय देना अप्रासगिक नही होगा। इन मुनिश्री का पूरा नाम है, शासन प्रभावक घायमातृपद विभूषित, कर्मठ सेवाभावी १००७ श्री इन्द्रचदजी म सा (इन्द्र भगवान्)।

यहा यह स्मरणीय है कि आप मुनिश्री ने शासन की अभूतपूर्व सेवा की है। स्व आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा के सान्निध्य मे स्व आचार्य-प्रवर एव सतो की अनन्य सेवा करके सेवा के क्षेत्र मे एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है सेवा के साथ ही आपश्री का स्व आचार्य प्रवर के साथ शासन परामर्श मे भी गम्भीर विचार-विमर्श होता रहता था, वर्तमान मे भी आपश्री का उसी प्रकार का अनुचिन्तन चलता रहता है। सघ एव शासन के गम्भीर विषयो पर आपश्री का परामर्श अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जाता है। आपश्री सेवा की साकार मूर्ति तो है ही, साथ ही शासन की अभिवृद्धि मे भी आपश्री का महत्वपूर्ण योगदान रहा है और है।

आचार्यप्रवर तो इतने निस्पृह हैं कि कोई भी दीक्षार्थी भाई–वहिन समक्ष उपस्थित हो जाते हैं तो वस इतना ही फरमाते हैं कि अभी ज्ञान-ध्यान सीखो, सयम की मर्यादाओ को पालन करने मे समर्थ वनो ।

किन्तु उन दीक्षार्थियो का सयमीय शिक्षण–प्रशिक्षण संचालन आदि का सारा कार्य आपश्री ही करते है । मैं अपनी ही वात वता दू कि मैं ग्यारह वर्ष का अवोध वालक आपश्री के पास पहुचा था। आपने मुझे आत्मोन्नति की दिशा मे गतिशील वनाया, आपश्री के ही सहप्रयासो से मेरी दीक्षा आचार्यप्रवर के सान्निध्य मे लगभग १३ वर्ष की वय मे ही सम्पन्न हो गई । मुझे अपने आप मे सात्विक गौरवानुभूति है कि अव तक की दीक्षाओ मे इतनी अल्पायु मे और किसी भाई की दीक्षा सम्पन्न नही हुई । गुरुदेव ने इस अवोध अवस्था मे मेरे ऊपर अपना समर्थ वरद हस्त रखकर मुझ शाश्वत लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये लक्ष्यानुरूप दिशा मे नियोजित कर दिया । दीक्षा लेने के अनन्तर भी लगभग ५वर्ष तक मैं आपश्री के पास ही मे रहा । आपने मुझ जैसे अवोध वालक को धार्मिक–आगम प्राकृत, सस्कृत आदि अध्ययन की ओर नियोजित किया । मेरा सारा कार्य सभाल करके मुझे अधिक से अधिक समय अध्ययन के लिये प्रदान किया उसी का परिणाम था कि मैं अठारह वर्ष की धार्मिक परीक्षा वोर्ड की अन्तिम रत्नाकर परीक्षा उत्तीर्ण कर पाया । तदनन्तर आपश्री ने मुझे गुरुदेव के सान्निध्य मे रख दिया । तव से अव तक गुरुदेव का साक्षात् अनवरत अमूल्य सान्निध्य, मेरे जीवन को लक्ष्यानुरूप दिशा मे गतिशील वना रहा हू ।

मैं शासन नायक की अनन्त–अनन्त उपकृति के साथ आपश्री की भी अनत उपकृति को कभी भी विस्मृत नही कर सकता हू ।

यह तो मैं अपनी वात स्पष्ट कर गया किंतु मेरी तरह आपने अनेको को मातृ-तुल्य स्नेह देकर नि स्वार्थ सेवा करके सयमीय साधना मे वहुमूल्य सहयोग दिया और दे रहे हैं । आपश्री की यह प्रमुख विशेषता रही है कि आप किसी भी भाई को अपना शिष्य वनाने की कतई भावना नही रखते, जो भी भाई–वहिन प्रतिवोधित होते है, उन्हे सम्प्रदाय के नियमानुसार शासन-नायक ही शिष्य वनाने के लिये सप्रेरित करते हैं । शासन निष्ठा आपश्री के हृदय मे कूट–कूट कर भरी हुई है । यद्यपि वर्तमान शासन नायक आपश्री के गुरु भ्राता हैं लेकिन आपश्री अपने गुरु के रूप मे ही नही अपितु भगवान् की तरह उनकी उपासना करते हैं । उनके प्रत्येक सकेत को एक सुयोग्य शिष्य की तरह अतर्क पालन करने मे सदा तन्मय रहते है ।

शासन के प्रति अनन्य निष्ठा को अनुभूत कर शासन नायक ने आपश्री को 'शासन प्रभावक' एव रुग्ण आदि सतो की अग्लान भाव से अहर्निश सेवा को देखकर कर्मठ 'सेवा भावी' तथा छोटे मुनियो को मातृ वात्सल्य देते हुए उनकी भी सर्व-विध सेवा निष्ठा को देखकर आप श्री को 'धाय-मातृ पद–विभूषित' जैसे सार्थक शब्दो से सम्वोधित किया, आपश्री का जन्म मारवाड के नागौर जिले मे वावडी के पास छोटे से गाव माढपुरा के निवासी सुश्रावक धर्मनिष्ठ श्री रूपचन्दजी चोरडिया की धर्म–पत्नी सुश्राविका वृजावाई की कुक्षि से हुआ था ।

वर्तमान मे भी आपश्री का स्वास्थ्य अस्वस्थ होते हुए भी बीकानेर मे अनेक वृद्ध सतो की सेवा मे अपने शरीर की उपेक्षा करके भी तन्मय बने हुए है। वैसे सेवा तो आपश्री ने अनेक सत महापुरुषो की की है और कर रहे हैं। उनमे वर्तमान मे परम तपस्वी प्रमोद मुनिजी म सा का नाम विशेष रूप मे उभर कर आता है। प्रमोद मुनिजी म पजाब मे आचार्यश्री आत्मारामजी म सा के पास दीक्षित थे। लगभग ४० वर्ष तक सयम भी पाला, किन्तु वृद्धावस्था मे कोई सेवा करने वाला न होने से उन्हे गृहस्थ होना पडा लेकिन गृहस्थावस्था मे रहना आपको असह्य हो गया और आप आचार्य प्रवर के पास पहुचे, उनकी सुन्दर शासन व्यवस्था देखी तो वे दीक्षा की प्रार्थना करने लगे। गुरुदेव ने उनकी सयम पालन की तीव्र भावना को देखकर उन्हे दीक्षित कर दिया। उस समय आपके शरीर की हालत ऐसी थी कि एक पातरी भी इधर उधर उठाके नही रख सकते थे। ऐसे ग्लान की आपश्री ने तन्मयता के साथ सेवा की और कर रहे हैं। प्रमोदमुनिजी अस्वस्थ होने से उन्हे कई बार कपडो पर ही वमन एव दस्ते लग जाया करती थी, किंतु सेवा साधना के आदर्श आपश्री ने कभी भी मुख नही मोडा–उनकी अग्लान भाव से सेवा करते रहे उसी का परिणाम है कि आज वे प्रमोदमुनि जी म स्वस्थ एव तप सयम की अच्छी तरह से आराधना कर रहे है। अग्लान भाव की सेवा आपश्री की ऐसी बेजोड है, जो कि नन्दीसेन अनगार की स्मृति दिलाती है। शासन-नायक से शरीर से इतने दूर होते हुए भी आपश्री का भावनात्मक सबध बना हुआ है। शासन सम्बन्धी विचार चलता रहता है। आपश्री को मैं शासन नायक की भुजा से भी उपमित कर दू तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

आपश्री के भावो का पत्र हमारे पास जब कभी भी आता है तो उसमे यह लिखा रहता है। तुम लोग धन्य हो जो तुम्हे ऐसे महापुरुष की सेवा का लाभ मिल रहा है। मेरे तो अतराय कर्म का उदय है जिससे मैं ऐसे महापुरुषो की सेवा से वचित हू • •।

आपश्री की शासन के प्रति अनन्य निष्ठा एव अग्लान भाव से चतुर्विध सघ की सेवा को देखकर चतुर्विध सघ के सदस्य आपश्री के प्रति अपनी श्रद्धा की अभिव्यक्ति 'इन्द्रभगवन्' शब्द के सबोधन के साथ करते हैं। नीतिकारो ने भी कहा है—सेवा–धर्म परमगहनो योगनाम-प्यगम्य, सेवा धर्म पर गहन है, जो योगियो के लिये भी अगम्य है।

वर्तमान मे हमारे शासन नायक गुरुदेव के दो गुरु भ्राता हैं जिनमे एक तो आपश्री हैं और एक शासन प्रभावक, दीर्घ तपस्वी श्री ईश्वरचन्दजी म सा हैं। जिनका सक्षिप्त परिचय देना भी अप्रासगिक नही होगा।

आपश्री तपानुष्ठान के साथ ही एक निस्पृह योगी, नरपु गव हैं। आपश्री के मन मे भी शासन-नायक के प्रति अनन्य निष्ठा है, आपश्री के मुख से शासन नायक के प्रति सदा भगवन् शब्द ही प्रयुक्त होता है।

आपश्री ने दीर्घकाल तक सयमीय साधना से अपने जीवन को निखारा है।

आज इतनी अधिक उम्र हो जाने पर भी तप-सयम की साधना के साथ निरन्तर विहार यात्रा मे तन्मय है।

शासन नायक की प्रत्येक आज्ञा को गुरोराज्ञा विचारणीया के रूप मे मानकर उसके पालन मे सदा तत्पर रहते है। जिस प्रकार लक्ष्यानुवेष्टित तीर धनुष से छूट कर लक्ष्य तक पहुच जाता है उसी प्रकार शासन नायक के मुख से वचन रूप सकेत को पाकर आप तदनुरूप पालन मे सदा तत्पर रहते हैं। आपश्री दीर्घ तपोनिष्ठ महापुरुष है। जिनका सयमीय व्यक्तित्व हमारे लिये एक प्रेरणा स्रोत है।

आपश्री का जन्म देशनोक मे सुराना परिवार मे हुआ था उष्ण जल के आधार पर तपश्चर्या करने के साथ ही आपने रसनेन्द्रिय का दमन करने के लिये छाछ के आधार पर भी अनेक वार दीर्घ तपश्चर्याए की है। आपश्री के इस दीर्घ तपानुष्ठान एव शासन के प्रति अनन्य निष्ठा को अनुभूत कर शासन नायक ने आपश्री को दीर्घ-तपस्वी एव शासन प्रभावक के सार्थक शब्दो से सम्वोधित किया है।

आपश्री की इतनी दीर्घ दीक्षा होते हुए भी हम बच्चो के साथ भी अत्यन्त स्नेहपूर्ण व्यवहार करते हैं। जो स्नेह वश हमे विलक्षण सुख की अनुभूति करवाता है।

सक्षेप मे कहा जाय दोनो महापुरुष शासन-नायक के शासनाकाश मे दैदिप्यमान सितारे है।

आपश्री इस कारण नाथद्वारा ही रुक गये। आप रुके तो थे सेवा के लिये लेकिन खुद वीमार हो गये। फिर भी सेवा मे रत रहे और थोडे दिनो मे मुनिजी का स्वास्थ्य ठीक हो गया। आपका सर्दी जुकाम तो तव भी चल रहा था। लेकिन आपका मन अपने गुरुदेव के स्वास्थ्य पर टिका हुआ था, अपने शरीर पर नही। इसलिये सोजत यथा साध्य शीघ्र पहुचने हेतु आपश्री ने वहा से विहार कर दिया। काकरोली मे राजसमद की पाल पर चलते हुए आपके जुकाम ने उग्र रूप ले लिया और आपको ज्वर भी हो आया। तव आहार का लघन करके आपश्री आगे चलते रहे। सरदारगढ पहुचकर ज्वर को मापा तो वह १०२५ डिग्री निकला। वहा लघन और औषधि के उपचार से ज्वर को ९९-१०० डि० पर ले आये और आगे वढ चले क्योकि गुरुदेव के स्वास्थ्य की आपको अत्यधिक चिन्ता हो रही थी। उग्र विहार करके जव आप श्री सोजत पहुचे तो ज्ञात हुआ कि विना जाच व इजेक्शन के गुरुदेव की 'शूगर' वढ जाने से शारीरिक अशक्तता वहुत वढ गई है। उस समय एक ओर आचार्यश्री का स्वास्थ्य प्रतिकूल होता जा रहा था तो दूसरी ओर श्रमण-सघीय विवादो की उलझनें जटिल होती जा रही थी। आचार्यश्री ने सारी स्थिति पर आपश्री से गम्भीर मत्रणा की। उस मंत्रणा मे आपश्री की जिस तीक्ष्ण मति, उदात्त प्रतिभा एव गूढ मनन शैली का आचार्यश्री को परिचय हुआ उससे वे आह्लादित भी हुए और भविष्य के लिये निश्चिन्त भी। आचार्यश्री को यह स्पष्ट और पुष्ट विश्वास हो गया कि यदि आपश्री को शासन की कमान सम्भला दी जायेगी तो

उसका निर्वहन अतीत दक्षता एव निर्भीकता से हो सकेगा। उनके इस विश्वास का यह कारण था कि आपश्री उन्हे श्रमण-सस्कृति के सजग प्रहरी दिखाई दिये।

श्रमण-सघ की मत्रिमडलीय वैठक मे तथा वाद मे तत्सबधी पत्राचार मे आपश्री का तव विशेष सहयोग लिया जाने लगा। आपश्री ने प्रत्येक कार्य मे अपनी अद्भुत कुशलता का परिचय देकर आचार्यश्री को सतोष दिया। वि स २००६ से २०१२ तक के क्रमश उदयपुर, जोघपुर, कुचेरा व वीकानेर के चातुर्मासो मे आपश्री ने जितनी गहराई से साधु सम्मेलन के क्रिया-कलापो मे आचार्यश्री को सहयोग दिया वह अवर्णनीय है। यह कहा जा सकता है कि पृष्ठभूमि मे रहकर आपश्री ने एक सुयोग्य सलाहकार की भूमिका वखूबी निभाई। ये वर्ष ही श्रमण–सघीय व्यवस्था के लिये तूफानी वर्ष थे क्योकि सोजत की मत्रिमण्डलीय वैठक मे, जोघपुर के सयुक्त चातुर्मास से तथा भीनासर के दूसरे वृहद साधु–सम्मेलन मे आचार्यश्री के अथक प्रयत्नो के वावजूद व्यवस्था एव अनुशासन का कार्य सुचारू नही वन पाया एव अन्ततोगत्वा आचार्यश्री को श्रमण सघ से पृथक भी हो जाना पडा। इन अथक प्रयत्नो मे पृष्ठवल आपश्री का ही था। गुरुदेव के चरणो मे वैठकर आपश्री ने समस्त कार्यवाही एव व्यवस्था समझ ली थी। अत शिष्ट मण्डलो से वार्तालाप आदि कई कार्य आपश्री ने ही सम्भाल लिये थे।

वि स २०१३ का वर्षावास भी आपश्री ने आचार्यश्री की सेवा मे ही गोगोलाव मे किया। इस चातुर्मास के वाद आगामी कानोड व जावरा चातुर्मासो मे आपश्री गुरुदेव की सेवा सुश्रुषा मे एक निष्ठा से लगे रहे। आपश्री की इस रूप मे की गई आभ्यन्तर तपस्या को आदर्श रूप ही कह सकते है। यही तपस्या उदयपुर के चातुर्मासो मे भी परम तल्लीनता पूर्वक चलती रही। तव तक आचार्यश्री का स्वास्थ्य खराव ही चलता रहा और चतुर्विघ सघ के लिये चिन्तनीय वन गया इस वीच आचार्यश्री ने शात–उत्क्राति का नया कदम उठाकर श्रमण सस्कृति की सरक्षा हेतु अपने आज्ञानुवर्ती सत–सतियो का पुन सजग संगठन वना लिया था। अत सभी दृष्टियो मे चिन्तन करके आचार्यश्री ने वि स. २०१८ की अक्षय तृतीय दि. १८.४.६१ को अपने प्रवचन मे सार्वजनिक घोषणा करके चतुर्विघ सघ की सुव्यवस्था का सर्वाधिकार एव पूर्ण उत्तरदायित्व अपने अनन्य अन्तेवासी, अक्षय यशस्वी, गूढ चिन्तक एव वाल ब्रह्मचारी प. रत्न श्री नानालालजी म सा के सशक्त नेतृत्व को सौंप दिया। या यो कहे कि श्रमण-सस्कृति के सजग प्रहरी को धर्म-रक्षा की कमान सम्भला दी।

उपर्युक्त घोषणा के पहले कुछ मुनियो एवं श्रावको के सिवाय किसी को भी नाम की जानकारी नहीं थी और वाद मे जिनको जानकारी हुई उनमे से किन्ही लोगो ने टीका की कि श्री नानालालजी म सा इस भार को कैसे सम्भालेंगे जो न किसी से परिचय साधते हैं और न वातचीत करते हैं? किन्तु आज वे सभी व्यक्ति परम आश्चर्य के साथ कहते हैं कि हम ऐसा नही समझते थे कि गुरुदेव श्री नानालालजी म.सा. इतने गजव के पुण्य प्रभावन्त अनुशास्ता सिद्ध हो जायेंगे। जव इस घोषणा की जानकारी आपश्री को हुई तो आपने आचार्यश्री से निवेदन किया कि इतने विशाल सघ के सचालन का दायित्व मुझ अल्पज्ञ वालक के अशक्त कधो

पर आरोपित न किया जाय । तब आचार्य देव ने स्पष्ट शब्दो मे कहा 'तुम्हे बीच मे तर्क-वितर्क करने की आवश्यकता नही है । तुम्हे अभी पूछ कौन रहा है? जो मेरी अन्तरात्मा को ठीक लगेगा, वह करूगा । तुम्हे बीच मे बोलने का अधिकार नही है, यदि सदा की भाति आज्ञा की आराधना करनी है, तो जो मे कहू उसके अनुसार करना होगा ।'

यह सुनकर आपश्री कुछ भी बोल नही पाए और मौन गए ।

श्रमण-सघ की अनुशासनहीनता से खिन्न होकर जब आचार्यश्री श्रमण-सघ से पृथक हो गये तब उदयपुर मे सतीवृ द एव श्रावक वृन्द ने दिनाक २२-८-१९६२ को लिखित आवेदन पत्रो द्वारा आचार्यश्री की सेवा मे निवेदन किया कि शात-उत्क्राति के फलस्वरूप सुसगठन का निर्माण किया जावे । एक माह तक विचार-विमर्श के बाद आचार्यश्री ने एक विस्तृत घोषणा (परिशिष्ट स १ मे देखिये) जारी की जिसमे श्रमण सघीय परिस्थितियो का विशद रूप से उल्लेख करते हुए पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा. की पाट परम्परा को पुनर्जीवित करके प मुनिश्री नानालालजी म सा को युवाचार्य घोषित किया गया । यह घोषणा दिनाक २२-९-१९६२ को की गई । इस घोषणा के प्रत्युत्तर मे आपश्री ने बडे ही विनम्र हृदयोद्‌गार व्यक्त किये ।

युवाचार्य पद की चादर प्रदान करने का समारोह उदयपुर राजप्रसाद के सूर्य गोखड के सामने वाले मैदान मे आयोजित किया गया था । वह दिवस था वि स २०१९ की आश्विन शुक्ला द्वितीया दिनाक ३०-९-१९६२ ई० । मैदान मे २५-३० हजार की मानव-भेदिनी श्रद्धा पूर्ण भावना के साथ इस पावन समारोह की साक्षी थी । उपस्थित जनसमूह मे दिगम्बर, मदिर मार्गी तेरहपथी आदि सम्पूर्ण स्थानीय जैन समाज के अतिरिक्त हिन्दु, मुस्लिम, बोहरा समाज आदि के हजारो जैनेतर बन्धु भी थे । आचार्यश्री के पाटे के सामने ही मेवाड के महाराणा श्री भगवतसिहजी बैठे हुए थे । उनके साथ कई राज्याधिकारी एव गणमान्य सज्जन भी उपस्थित थे ।

आचार्यश्री का स्वास्थ्य अनुकूल नही था अत वे डोली मे पधारकर जब पाट पर विराजे तो जनता ने जय-जयकार के नारो से आकाश गु जा दिया । मगलाचरण एव स्वाध्याय के पश्चात् तपस्वी श्री केशवनलालजी महाराज साहब ने श्वेत स्वच्छ सादगी के प्रतिरूप खादी के चादर आचार्यश्री को ओढाई और वही चादर आचार्यश्री ने युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित करते हुए आपश्री को ओढाई । विराजित मुनिमण्डल ने ओढाते समय चादर के हाथ लगाकर अपना समर्थन प्रकट किया । इस अवसर पर आचार्यश्री ने अपने सक्षिप्त प्रवचन मे चादर की महत्ता बताते हुए युवाचार्यश्री से उसके गौरव की रक्षा करने की प्रेरणा दी तो चतुर्विध सघ को युवाचार्यश्री की आज्ञाए शिरोधार्य करने का निर्देश दिया ।

चादर प्राप्त करने के बाद परम श्रद्धेय युवाचार्यश्री ने अपने प्रवचन (देखिये परिशिष्ट स २) मे अपनी लघुता एव विनयशीलता का परिचय दिया ।

इस अवसर पर पजाबी प. रत्नश्री सत्येन्द्रमुनिजी ने भी अपने प्रासगिक विचार प्रकट किये । युवाचार्यश्री को चादर प्रदान करने की शुभकामनाए प्रकट करने वाले सतमुनियो

मे उल्लेखनीय नाम है– वहुश्रुत प रत्न श्री समर्थमलजी म सा.(वीकानेर से), प रत्न उपाध्याय श्री हस्तीमलजी म सा (सैलाना म प्र) से तपस्वी मुनिश्री लालचन्दजी म सा (साचोर मारवाड) से । श्रावको मे सर्वश्री माणकचदजी जैन वकील(भवानी मडी),चम्पालालजी वाठिया(भीनासर) जवाहरलालजी मुणोत(अमरावती) हरजसरायजी जैन(अमृतसर), किशनलालजी धीग (कानोड) प्यारचदजी(सैलाना), कन्हैयालालजी वोथरा(कलकत्ता) तोलारामजी भूरा(करोमगज)सिद्धमलजी (साचोर), चम्पालालजी काकरिया (कलकत्ता) रतनलालजी डोसो(सैलाना) उगमराजजी मेहता (जोधपुर), जुगराजजी वोका(मद्रास), हीरालालजी कोठारी (वुलडाणा) आदि के नाम मुख्य है । सैलाना के पाक्षिक पत्र 'सम्यग्दर्शन' ने युवाचार्यश्री जयवन्त हो शीर्षक से सम्पादकीय लिखते हुए वताया कि युवाचार्यश्री सुयोग्य, सयमप्रिय और सस्कृति प्रेमी, गम्भीर एव सहनशील हैं । हमारा विश्वास है कि उनके द्वारा वीर शासन की वास्तविक सेवा होगी, निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति एव मर्यादा का रक्षण होगा । अपने उत्तरदायित्व को निभाते हुए वे जैन धर्म को दीपावेंगे ।

इस समारोह के साथ एक हृदयस्पर्शी घटना भी जुड गई । अपने सपूत का समारोह देखने आपश्री की मातुश्री भी दाता से पधारी थी । वह जव आचार्यश्री को वन्दन करके सुख-साता पूछ रही थी तो आचार्यश्री ने मधुरता के साथ पूछा–कई माजी, वेटा महाराज का दर्शन कर लीधा? अवे ई 'नाना'नाना नी रिया, घणा मोटा वेइग्या है । भद्रिक मा श्रीमती शृ गारवाई ने मा की ममता भरा उत्तर दिया—अन्नदाता, ई घणा भोला टावर है, या पे अतरो वोझो मती नाको । फिर मा ने अपनी स्नेहिल दृष्टि से युवाचार्यश्री की ओर गहराई से देखा, मानो कह रही हो–म्हारा धोरा दूध री अणी चादर मे कालो दाग मत लगाइजो ।

अन्तिम क्षण तक गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण–

आपश्री के सयमी जीवन की सवसे वडी विशेषता गुरु–सेवा के रूप मे उल्लेखित की जा सकती है ।

यह प्राय विरल सत विभूतियो में ही देखने को मिलता है कि विद्वत्ता के साथ जो उच्चकोटि के सेवावृत्ति भी हो । ऐसा विरल सयोग था, आपश्री के जीवन मे । आपश्री ने अपने गुरुदेव आचार्यजी गणेशीलालजी म सा. की जो भावपूर्ण सेवा की वह आदर्श रूप थी । गुरु सेवा में तन-मन की एक लगन और एक निष्ठा से आपश्री जुटे रहे । अस्वस्थता के दौर मे वि स २०१६ से २०१९ तक के चार चातुर्मास आचार्यश्री ने उदयपुर मे ही व्यतीत किये और आपश्री इन चारो वर्षो मे गुरुदेव के सान्निध्य मे ही परिचर्या करते हुए विराजे रहे । अन्तिम चातुर्मास के वाद तो आचार्यश्री की वेदना वहुत वढ गई थी । डॉक्टरों ने वरावर औषधि लेते रहने का आग्रह किया लेकिन आचार्यश्री ने फरमा दिया कि अव उन्हे एक चित्त होकर परमात्मनाम स्मरण की औषधि ही लेने दी जाय । अन्त मे डॉ० रामावतारजी ने आपश्री को सकेत भी किया कि अव शरीर की स्थिति को देखते हुए औषधि के लिये आग्रह करना

व्यर्थ है। किन्तु आपश्री का मन कह रहा था कि अभी आचार्यश्री का शरीर इतना जल्दी नही जायेगा। आचार्यश्री बार–बार सथारा कराने को कह रहे थे किन्तु आपश्री फरमाते कि नाडी की गति को देखते हुए अभी मेरी अन्तरात्मा नही मान रही है। और वास्तव मे आपश्री की अन्तरात्मा की आवाज सत्य भी सिद्ध हुई। डॉक्टरो के अनुमान के ४८ और ७२ घटे भी निकल गये लेकिन आचार्यश्री का स्वास्थ्य यथावत चलता रहा। डॉक्टर लोग हैरान थे एव चतुर्विध सघ भी, कि यह कौनसी शक्ति है जो आचार्यश्री की सेवा मे नत मस्तक है ? साथ ही वे सब युवाचार्यश्री की गहरी सूझ-बूझ और सूक्ष्म दृष्टि की भी प्रशसा कर रहे थे कि एक ओर सभी आचार्य श्री को सथारा करा देने के पक्ष मे थे तो दूसरी ओर अकेले युवाचार्यश्री ही ठहरने का सकेत दे रहे थे। आपश्री को अपनी आत्म विचारणा पर इतना विश्वास था, इसी कारण आपश्री अपनी बात पर अडे रहे।

इसके साथ ही अपने गुरुदेव के निर्देशानुसार आपश्री इतने सावधान भी थे कि ज्यो ही अपनी आत्मा की आवाज उठे, तुरन्त आचार्यश्री को सथारा पच्चक्खा दे। ऐसा न हो कि आचार्यश्री का देह त्याग बिना सथारे के हो जाय। आप यह भी जानते थे कि वैसी दशा मे सारा चतुर्विध सघ आपको कोसेगा। किन्तु जिस वैय्यावृत्ती शिष्य ने अपने परम श्रद्धेय गुरुदेव की सेवा सुश्रुषा मे अपने आप को ही भुला दिया हो, वह समर्पित शिष्य भला गुरू की अन्तिम सेवा मे भूल कैसे कर सकता है? आपश्री पूर्ण सचेष्ट एव सावधान रहते हुए विना किसी निद्रा आदि व्यवधान के घण्टा-आध घण्टा नाडी-सस्थान को टटोल लेते और श्वासोच्छ्वास का परीक्षण कर लेते।

आश्चर्य की बात रही कि इस अवस्था मे आचार्यश्री ने कई दिन निकाले। उन दिनो मे आपश्री अहर्निश अपने गुरुदेव के समीप मे ही बने रहते। अपनी नीद पर भी आपने जैसे पूरा काबू पा लिया था। सतत जागृत, सतत अप्रमत युवाचार्यश्री गुरू सेवा मे तन-मन की एक लगन से खडे रहते और नाडी व श्वास की बारीकी से जाच करते रहते। उस समय आपश्री को न खाने-पीने की चिन्ता थी तो न सोने की चिन्ता। एकमात्र चिन्ता थी आचार्य श्री को अधिक से अधिक शाता पहुचाने की और अन्तिम समय मे सथारे का सुयोग जुटाकर पडित–मरण कराने की।

आपश्री एक आदर्श सेवक की भाति अपने आराध्य के सान्निध्य मे सजगतापूर्वक बने हुए थे। अन्ततोगत्वा दिनाक ६-१-१९६३ की रात्रि मे आपश्री को आचार्यश्री की नाडी की गति मे कुछ बदलाव नजर आया। आप आशकित हुए। तब आपने नि सकोच आचार्यश्री से निवेदन किया–आप कई दिनो से सथारा पच्चखाने का फरमा रहे थे। अब किसी से राय करके वैसा करना हो तो कर लेना चाहिये। आचार्यश्री मधुरता से मुस्कराये और बोले–तो क्या अब आपकी आत्म-साक्षी तैयार है ? आपश्री ने विनयावनत होकर फरमाया–तहत् गुरुदेव, अब मुझे नाडी की गति मे बदलाव नजर आ रहा है इसलिये सुबह डॉ० शूरवीरसिहजी से राय करके निर्णय कर लेना चाहिये। दूसरे दिन आचार्यश्री ने ही डॉक्टर सा से पूछा–अब आप

राय दीजिये, मैं यावत् जीवन का सथारा लेना चाहता हू । उन्होने यही कहा—आप जैसे महात्मा के सामने हमारी डॉक्टरी तो फैल हो चुकी है । ऐसी स्थिति मे आपश्री की अन्तरात्मा जैसा कहे, आप कर सकते है ।

तदनन्तर आचार्यश्री ने आपश्री को यावत् जीवन का सथारा ग्रहण करने की अपनी तत्परता प्रकट की । आपश्री के मन मे 'तहत्' कहने के साथ ही एक विचार यह भी उठा कि पूर्वाचार्यों की परम्परा के अनुसार आचार्यश्री एव सन्त–सती वर्ग को सथारा पच्चखाने के पूर्व चतुर्विध सघ के प्रमुख सदस्यो से परामर्श लेना आवश्यक है । तब आपके अन्तर्मन ने ही उत्तर दिया कि सभी तो कभी से सथारा कराने की बात कह रहे हैं, अतः अब परामर्श के चक्कर मे उलझे तो, समय निकल जायेगा । कमरे मे आचार्यश्री के अलावा आप अकेले ही थे । कुछ क्षणो के लिये आचार्यश्री ध्यानस्थ हो गये और जब उन्होने नेत्र खोले तो जैसे उनमे से अलौकिक तेज फूट रहा था । आपश्री ने सथारा–विधि को पूर्ण करने के सदर्भ मे विधि पाठ एव दशवैकालिक सूत्र के अध्ययन सुनाने शुरु किये । सथारा एव आलोचना विधि के सम्पन्न हो जाने पर युवाचार्यश्री ने बाहर निकल कर सघ को आचार्यश्री के यावज्जीवन सथारे की सूचना दे दी । अविलम्ब यह सूचना नगर मे तथा देश के कोने–कोने मे पहुच गई ।

सथारे का समय आनन्द पूर्वक व्यतीत हो रहा था । युवाचार्यश्री मधुरता के साथ आचार्यश्री को अध्यात्मपद सुना रहे थे । दोपहर के समय कुछ स्थानकवासी एव मूर्तिपूजक साध्विया आचार्यश्री के दर्शन करने पधारी तो उन्होने जागृत चेतना के साथ 'खमत–खामणा' किया । दोपहर बाद लगभग तीन बजे आचार्यश्री ने आपको सकेत किया कि अब कमरा खाली करवा दो, मुझे एकान्त चाहिये । बाद मे कमरे मे केवल आपश्री और प. मुनिश्री सूरजमलजी म सा ही रह गये । आचार्यश्री पुन ध्यानस्थ हो गये । उनकी इतनी सावधानी को देखकर आपश्री के मन मे सकल्प विकल्प उठने लगे कि मैंने सघ-प्रमुखो की अनुमति लिये बिना ही सथारा पच्चखा दिया और कोई आगार भी नही रखा तो कैसे क्या होगा ? किन्तु आत्म-चेता शिष्य को आत्म-साक्षी मिल गई कि स्वय ने वैसा करके एक पवित्र कर्त्तव्य की पूर्ति ही की है ।

युवाचार्यश्री ने अपने गुरुदेव के महाप्रयाण की अन्तिम वेला मे सजगता पूर्ण धैर्य एव दायित्व बोध के साथ कर्तव्य बुद्धि का परिचय देकर योग्य शिष्यत्व का अद्वित्तीय उदाहरण प्रस्तुत किया ।

भविष्यवाणी दिव्य सिद्धि की ओर—

पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा. के पचम पट्टधर पूज्यश्री श्रीलालजी म सा ने एक बार सहज भाव से फरमाया था कि भविष्य मे अष्टम पट्टधर आचार्य इतने अधिक पुण्यशाली होंगे कि जिनके आचार्यत्व काल मे धर्म की महत्ती प्रभावना होगी एव यह पाट परम्परा अत्यन्त

दीपेगी । यह भविष्यवाणी, जिस दिन हमारे चरित्र नामक आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किये गये उससे कोई ५० वर्ष पूर्व की गई थी, जबकि आपश्री का जन्म भी नही हुआ था । आज यह भविष्यवाणी न केवल सत्य सिद्ध हुई है अपितु यह कहने मे कोई अतिशयोक्ति नही है कि आचार्यश्री श्रीलालजी म सा के शुभ वचन आज भी दिव्य सिद्धि की दिशा मे गतिमान है ।

स्व० आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा. के प्रति श्रद्धाजलि समर्पण का कार्यक्रम सपन्न हो जाने के पश्चात् नवाचार्यश्री विहार हेतु तत्पर हो गये । तभी उदयपुर श्रीसघ के अध्यक्ष मूक सेवी श्री कुन्दनसिहजी खमेसरा आपश्री के समीप सजल नेत्रो से उपस्थित हुए और कहने लगे—मैं एक छोटी-सी विनती लेकर सेवा मे उपस्थित हुआ हू । आचार्यश्री ने सरलता से पूछा—बताइये, ऐसी क्या बात है ? यह तो आप जानते ही हैं कि साधु मर्यादा के अनुसार अब यहां ठहरने का अवसर नही है । खमेसराजजी ने सविनय निवेदन किया—यह तो मैं जानता हू । छोटी-सी प्रार्थना यह है कि यहा से विहार करके पहली मजिल मेरा वगला हो । श्री चरणो की धूलि मेरे वहा न जाने फिर कब पडेगी ? आचार्यश्री ने मधुर स्मिति के साथ फरमाया—इसमे कोई बात नही है । पहला विहार वैसे भी लम्बा नही हो सकेगा । अत आपकी ऐसी भावना है तो देखा जायेगा ।

यह स्वीकृत्ति जैसी बात दूसरे श्रावको की जानकारी मे आई तो वे आचार्यश्री से निवेदन करने लगे—गुरुदेव, अध्यक्ष साहब का वगला तो मधुवन मे है और वहा जाने के लिये हाथी पोल दरवाजे से गुजरना पडेगा । उस दिशा मे आज विहार नही हो सकेगा क्योकि उधर दिशाशूल है और मुहूर्त भी शुभ नही है । आपश्री ने मधुर स्वर फरमाया आप अनुभवी और शासननिष्ठ श्रावक हैं किन्तु एक बार साधु भाषा मे जो आश्वासन दिया जा चुका है उसे मुहूर्त के चक्कर मे बदला नही जा सकता । आप लोग किसी तरह का विचार न करे, साधक के लिये सभी मुहूर्त और सभी दिशाए सदा अच्छी होती है । ग्रह नक्षत्र सदा साधना के अनुकूल रहते हैं, दिशा शूल उसका कुछ नही विगाड सकता । आपश्री के स्पष्ट विचार सुनकर आगन्तुक श्रावक चले तो गये लेकिन उसका मन नही माना अत वे एकप्रसिद्धज्योतिषीजी को लेकर आपश्री के समीप पुन आये । आचार्यश्री ने हसते हुए फरमाया—आपने पण्डितजी को क्यो कष्ट दिया ? मैं आपको अपनी बात कह ही चुका हू । आगे जैसी स्पर्शना होगी, देखा जायेगा । ज्योतिषीजी ने उस दिन के मुहूर्त का विवेचन करते हुए कहा कि ज्योतिष शास्त्र मे गणित के द्वारा फलाफल का जो निर्देश होता है उसे नकारा तो नही जा सकता । उस दिशा मे आज का दिन निषेधात्मक है । आचार्यश्री ने निश्चित भाव से कहा—आपका कथन किसी अपेक्षा से सही हो सकता है और मैं ज्योतिषशास्त्र का निषेध भी नही कर रहा किन्तु हमे खमेसराजी के वगले पर जाना तो है । इस पर ज्योतिषीजी ने वजाय हाथी पोल दरवाजे के सूरजपोल गेट से होकर शुभता की दृष्टि से पधारने का आग्रह किया । आपश्री ने पुन यही फरमाया कि मुहूर्त के लिये यह चक्कर भी उचित नही है । मेरे लिये सव अच्छा ही है । ज्योतिषीजी फिर इतना ही कह सके—आप सरीखे आत्मवली के लिये मुहूर्त का विशेष महत्व नही है ।

उदयपुर से आचार्यश्री की विदाई का दृश्य अतीव ही कारुणिक हो उठा था। धर्मानुराग से आप्लावित हजारो आखें अविरल अश्रुधारा बहा रही थी तो हजारो चेहरे निराश से शून्य की ओर ताक रहे थे। जैन वन्धु ही नही, समस्त नगरवासी खेदग्रस्त थे कि जिन महात्मा ने चार वर्ष एक साथ विराजकर इस नगर मे धर्म की ज्योति जलाई, वे अब चले जा रहे हैं तो क्या होगा ?

आपश्री की नेश्राय मे प्रथम शिष्य के रूप मे वैरागी श्री सेवन्तकुमारजी की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई थी। आपश्री जव उदयपुर से विहार करके भोपालपुरा मे पधारे तो व्याख्यान मे खड होकर उदयपुर के धर्मनिष्ठ श्रावक श्री मोतीलालजी कोठारी ने अपनी सुपुत्री सुशीला कुमारी को दीक्षा देने का आज्ञा पत्र आपश्री के चरणो मे भेट किया और दीक्षा यथा साध्य शीघ्र दिलाने की प्रार्थना की। तदनुसार दीक्षा तिथि माघ कृष्णा द्वादशी निश्चित हुई। वहा से आपश्री विद्या भवन और भुवाना होते हुए आयड पधारे। दूसरे दिन कुमारी सुशीला की दीक्षा तिथी थी। उस समय श्री अमरचन्दजी पामेचा भी वैराग्य भाव मे चल रहे थे। तभी उनके पिताजी श्री वृद्धिचन्दजी पामेचा आचार्यश्री की सेवा मे आये हुए थे। वार्तालाप के दौरान सत–मुनिराजो ने कह दिया–श्रावकजी, अमरचन्द को दीक्षा की आज्ञा क्यो नही देते हो ? वृद्धिचन्दजी ने वैसा ही उत्तर दे दिया—गुरुदेव उसे आज्ञा दे दू तो मुझे वन्दन करना पडेगा। उसी विनोद के स्वर मे सत मुनिराजो ने पुन फरमाया–तो फिर आप पहले तैयार हो जाइये। उन्होने कहा–हां, महाराज साहव मैं भी ऐसा ही सोच रहा हू कि कल होने वाली दीक्षा के साथ मुनिवेश धारण कर लू। सत मुनिराजो ने फिर भी उसे विनोद ही समझा और कहा—जिसे आगे वढना है वह कल नही देखता। लेना है तो आपके लिये आज का मुहूर्त सबसे अच्छा है, और हकीकत मे वृद्धिचदजी यह कहते हुए उठ खडे हुए कि मैं अभी जाकर ओघा, पात्रा और वस्त्र ले आता हू। सत तव तक भी विनोद ही समझ रहे थे कि यह ६७ वर्ष का वृद्ध क्या दीक्षा लेगा ? वे सीधे कोठारीजी की हवेली पहुचे, जहा उनके पुत्र अमरचदजी परिवार सहित रहते थे। दीक्षा के सभी उपकरण घर मे मौजूद थे सो उन्हे लेकर वापिस आचार्यश्री की सेवा मे पहुच गये और भरे-पूरे आत्म विश्वास के साथ वोले—गुरुदेव, मुझे दीक्षा पच्चखाने की कृपा कीजिये।

श्री वृद्धिचदजी का यह निवेदन सुनकर और उन्हे मुनिवेश मे देखकर आचार्यश्री ने सविस्मय फरमाया–आपने यह क्या कर दिया ? ऐसे कोई दीक्षा पच्चखाई जाती है ? आप वृद्ध हैं, आपका इतना वडा परिवार है, दीक्षा के लिये आज्ञा भी तो चाहिये। अव तो धर्मशूर उतावला हो गया था। उनका स्वर निकला–इस वुढापे में परिवार वाले दीक्षा की आज्ञा नही देंगे इसीलिये तो मैं मुनिवेश पहनकर ही आ गया हू और किसी की आज्ञा की जरूरत ही क्या है ? मैं खुद परिवार का मुखिया हू। आप तो दीक्षा पचक्खा दीजिये। आचार्यश्री ने स्पष्ट निषेध कर दिया कि विना आज्ञा दीक्षा नही दी जायेगी। दीक्षा का दीवाना वोल उठा—आप नही पच्चखाते तो किसी और सत से पच्चख लूगा। लेकिन आचार्यश्री ने जव फरमाया कि मेरी आज्ञा के विना कोई संत दीक्षा नही पच्चखा सकता है तो वे वोले–फिर आप मगल पाठ

तो सुना दीजिये । आपश्री ने मगल पाठ सुना दिया । तब उन्होने स्वय ही 'करेमि भन्ते' का पाठ बोलकर दीक्षा पच्चखली । उस वृद्ध के युवा मन ने हार मानना मजूर नही किया ।

जब वैरागी अमरचदजी को मालूम हुआ कि पिताश्री ने स्वय मुनिवेश पहन कर दीक्षा पच्चख ली है तो उन्होने अपने निवास स्थान पीपलिया मडी अन्य भाइयो को तार से इसकी सूचना भेजी । दूसरे दिन यथा निश्चय कुमारी सुशीला का दीक्षा समारोह सानद सम्पन्न हुआ । इस प्रकार आचार्यश्री के प्रथम शिष्य हुए मुनिश्री सेवन्तकुमारजी म सा और शिष्या महासती श्री सुशीलाकुमारीजी म सा हुई ।

आचार्य पद पर प्रथम चातुर्मास

'जे कम्मे सूरा, ते धम्मे सूरा' का उदाहरण श्री वृद्धिचदजी ने प्रस्तुत ही नही किया वरन् उस पर अडिग भी रहे कि जो कर्म मे शूर होता है वह धर्म मे भी शूर होता है । उनके पुत्रो ने आकर आचार्यश्री से उन्हे दीक्षा न पच्चखाने का निवेदन किया तो अपने पिताश्री को भी दीक्षित न होने के लिये मनाना शुरु किया । आचार्यश्री ने तो स्पष्ट फरमा दिया मैंने तो इन्हें दीक्षा पच्चखाई नही है और बिना आज्ञा पच्चखाने के लिये भी मना कर दिया । ये खुद ही मुनिवेश पहन कर आ गये अत मेरी ओर से आप स्वतन्त्र हैं । किन्तु कर्म शूर और धर्म शूर श्री वृद्धिचदजी ने कडक जवाब दिया—मुनिवेश कोई बच्चो का खेल नही है जो आज पहना और कल फेंक दिया । मैंने बहुत सोच समझ कर ही यह काम किया है । अब तो यह वेश जीवन पर्यन्त रहेगा ।

अन्तत परिवार वालो ने श्री वृद्धिचदजी को दीक्षा की आज्ञा दे दी तथा आचार्यश्री के डबोक पधारने पर वहा उनकी विधिवत् भागवती दीक्षा भी दिनाक २७–१–१९६३ को सम्पन्न हो गई ।

मेदपाट की भूमि से मालव धरा पर विचरण करते हुए परम सौभाग्यशाली आचार्य श्री मार्ग मे मानव-मगल का अलख जगाते हुए चले । धर्म जागृति की एक अपूर्व लहर चारो ओर फैल गई । आपश्री की प्रेरणा-दायिनी वाणी जैसे जादू बनकर मुमुक्षु प्राणियो को धर्म पथ पर अग्रसर बनाने लगी । आकोला पधारने पर वैरागी श्री शातिलालजी की दीक्षा का आज्ञा-पत्र लाने की उनके मामा हिंगडजी ने जिम्मेवारी ले ली और उसे पूरा कर दिखाया । आकोला से सनवाड की ओर विहार का विचार चल रहा था कि किन्ही श्रावको ने आपश्री को मातुश्री के अस्वस्थ रहने के कारण आपकी जन्मभूमि दाता की ओर विहार करने का निवेदन किया । आचार्यश्री के वहा पधारने पर दाता ने एक तीर्थ-स्थल का रूप ले लिया । वह भूमि धन्य हो उठी जहा का सपूत महान् रत्न बन कर आज उस भूमि का अलौकिक अलकार बन गया था ।

मा ममतामयी होती है तो एक आदर्श शिक्षक भी । 'नाना' बेटा मोटा हो गया है यह तो वे स्व० आचार्यश्री के मुख से सुन ही चुकी थी और अब वह उनके सामने भी आ गया

था तो शिक्षा की बात कहने से भी वे नही चूकी । अपने पुत्र आचार्य महाराज से मगल–पाठ सुनकर वे वात्सल्य भरे शब्दो मे बोली—अबे मोटा वेड्या हो पण फूलमती जाज्यो और इस शिक्षा मे भी मातृ हृदय की गहरी ममता ही भरी हुई थी । वे जानती थी कि अभिमान उच्चतम उन्नति का सबसे बडा रोडा होता है और वे नही चाहती थी कि उनके महान् पुत्र की उन्नति कही भी बाधित हो जाय । आपश्री भी इतने गुणवान् सिद्ध हुए कि मा की सीख को आपश्री ने गाठ ही नही बाधी बल्कि अपने तन-मन मे एक रूप बना ली । आज भी ये महापुरुष विनयशीलता एव सरलता की सजीव प्रतिमूर्ति हैं । आपश्री को 'मनसा-वाचाकर्मणा' कभी भी अभिमान ने छुआ नही और छूता नही । मा की मगल सीख को आपश्री ने पूर्णरूप से आत्मसात् कर ली है ।

जब आपश्री का मगलवाड पदार्पण हुआ तो अप्रत्याशित ही मान व मगल का एक और प्रसग उपस्थित हो गया । वैरागी श्री शातिलालजी के पारिवारिक जन आकर बोले गुरुदेव हम शातिलाल का आज्ञापत्र चरणो मे भेंट करने को तैयार है । लेकिन एक शर्त है—

आचार्यश्रीने मुस्कराते हुए फरमाया–भेंट भी करना और उसमे शर्तें भी रखनी । ये दोनो बातें समझ मे नही आई । तब वे बोले—आचार्यश्री, शर्तें जैसी कोई बात नही है । आप वैरागी श्री कवरचदजी को दीक्षा देने हेतु बडी सादडी पधार रहे हैं तो हमारी प्रार्थना है कि आप भदेसर मे शातिलाल को दीक्षा देते पधारे ।

आचार्यश्री ने साधु भाषा मे स्वीकृति फरमा दी । भदेसर फाल्गुन शुक्ला एकम दिनाक २५–२–७३ को वैराग्यानुरजित श्री शातिलालजी सरूपरिया ने गुरुदेव के कर कमलों से भागवती दीक्षा अगीकार कर ली । वर्तमान मे आप विद्वद्वर्य मुनिश्री द्वारा ही 'अन्तर्पथ के यात्री आचार्यश्री नानेश' के नाम से गुरुदेव का जीवन वृत्त आलेखित किया गया ।

बडी सादडी की कृष्णवाटिका के बाहर विशाल मैदान के नीचे दिनाक २८-२-६३ को हजारो की जनमेदिनी के बीच वैरागी श्री कवरचदजी की भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई । तदनन्तर कुछ दिनो तक गुरुदेव वहा पर धर्मामृत की वर्षा करते रहे । श्रद्धालु भक्त विनतिया लेकर उपस्थित हुए । तदनुसार आपश्री डूगला, कानोड होते हुए लसडावन पधारे जहा श्री चादमलजी कोठारी ने अपने सुपुत्र श्री हरकचदजी को दीक्षा का आज्ञा पत्र प्रस्तुत किया । वहां से आप निम्बाहेडा मे महावीर जयन्ति के अवसर पर उद्बोधनात्मक प्रवचन फरमाकर पीपलिया मडी पधारे जहा पर वैरागी श्री अमरचदजी के साथ उनकी पत्नी वैराग्यवती कस्तूर बाई का दीक्षा समारोह आयोज्य था । वि स. २०२० वैशाख शुक्ला तृतीया को इन आदर्श दीक्षाओ के कारण पीपलिया मडी पावन पुण्य भूमि बन गई थी । इस आदर्श दम्पति का त्याग भी कम अनोखा नही था । इतने भरे यौवन मे ११, ६ एव ३ वर्ष की सतानो को अपने भाइयो को पालनार्थ सौंप कर लाखो की सम्पत्ति को तिलाजलि दी थी । जब इस दम्पति की ग्यारह वर्षीय सुपुत्री कुमारी चदना ने स्वय दीक्षिता होने की आतुरता के साथ यह गीत-'म्हारे

ज्ञान रग लागो, म्हारे मन को धोको भागो' गाया तो दीक्षा समारोह मे उपस्थित सभी की आखें बरस पडी ।

पीपलिया मडी के इतिहास मे यह पहला अवसर था कि १५–२०हजार का विशाल जनसमूह इस दीक्षा समारोह हेतु एकत्र हुआ । इस भव्य समारोह मे अमरचदजी एव उनकी धर्मपत्नी को आचार्यश्री ने मुनिव्रत ग्रहण कराया । इस समारोह के साथ पामेचा परिवार को एक अद्भुत चमत्कार के दर्शन भी हुए । समारोह मे चार–पाच हजार व्यक्तियो के ही सम्मिलित होने की सम्भावना मानी गई थी अत भोजन एव निवास की उतनी ही व्यवस्था की गई थी । किंतु दीक्षा समारोह समाप्ति के बाद जब उसी खुले मैदान मे १५००० लोगो को जीमने के लिये बिठाया गया तो न जाने क्या जादू हुआ कि उतनी सी भोजन सामग्री मे सभी लोग सतोष पूर्वक जीम भी लिये तो पास के गावों मे बाटने लायक मिठाई और भी बच गई ।

वि स २०२० के चातुर्मास का समय निकट आ रहा था तो आपश्री के आचार्यपद के पहले चातुर्मास के लिये मुख्य रूप से जावद, जावरा और रतलाम श्रीसघो के बीच होड सी लग गई । इस होड ने थोडा सघर्ष का रूप भी ले लिया, जिस पर आचार्यश्री ने शिक्षा दी— मेरा चातुर्मास कही भी हो, पहले आप सभी यह प्रतिज्ञा कर लें कि ईट का जवाब पत्थर से नही फूलो से देगे । एक गाल पर एक चपत पडने पर दूसरा गाल भी सामने कर देंगे । उसके बाद ही मैं अपना चातुर्मास विषयक निर्णय सुनाऊगा । सभी लोगो द्वारा क्षमाभाव की प्रतिज्ञा ले लेने पर आपश्री ने रतलाम के लिये अपने चातुर्मास की सागार स्वीकृति दी । इस अवसर पर लसडावन का कोठारी परिवार भी वहा उपस्थित था, निवेदन किया—हमने अपने परिवार के सदस्य की दीक्षा का आज्ञा–पत्र श्री चरणो मे अर्पित कर दिया है अब हमारी एक ही भावना है कि आपश्री यथाशीघ्र लसडावन पधार कर उसे दीक्षित करने की कृपा करे । इसकी भी आचार्यश्री ने साधु मर्यादा से स्वीकृति दे दी ।

लसडावन मे दीक्षा देने हेतु आपश्री का विहार पुन मेवाड भूमि पर हुआ । ज्येष्ठ कृष्णा पचमी दिनाक १३–५–१९६३ को वैरागी श्री हरकचदजी की अति उत्साहपूर्ण वातावरण मे दीक्षा सम्पन्न हुई । इस बीच मार्ग मे वैशाख शुक्ला दशमी को चिकारडा मे आचार्यश्री की विशेष अनुमति से स्वर्गीय श्री दीपचदजी धीग की धर्मपत्नी श्रीमती हुलासबाई की दीक्षा भी विदुषी महासती श्री पानकवरजी मनोहर कवरजी के सान्निध्य मे सम्पन्न हुई ।

चातुर्मास हेतु जब अष्टम पट्टधर आचार्यश्री ने धर्म प्राण रतलाम नगर मे प्रवेश किया तब वहा का समूचा वातावरण एव दृश्य दर्शनीय था । अपार जनसमूह 'हू शि उ चौ श्री जग नाना, लाल चमकता भानु समाना' के नारो से गगन गुंजा रहा था । दो सौ स्वय सेवक शोभा यात्रा की व्यवस्था मे सलग्न थे । चौमुखी पुल के पास स्थित पौषधशाला पर पहुच कर शोभा यात्रा विशाल धर्म सभा मे परिवर्तित हो गई । वहा सिद्ध स्तुति के पश्चात् आचार्य श्री ने अत्यन्त मार्मिक एव ओजपूर्ण किंतु सक्षिप्त प्रवचन फरमाया । इस चातुर्मास मे आपश्री

ने जिस अध्यात्म विषय का प्रतिपादन किया, वह था 'स्वरूप बोध के प्रति जागरण।' प्रति दिन प्रवचन के दूसरे अग के रूप मे आपश्री आगम विवेचन फरमाया करते थे और तीसरे अग के रूप मे रुक्मणी विवाह के कथा प्रसग से समाज सुधार की दिशा मे सचोट विवेचन किया जाता था अन्य प्रकार से भी धर्मोपकार के कई कार्य सम्पन्न हुए।

श्रमण सघ से सबध विच्छेद हो जाने के बाद कुछ अति साम्प्रदायिक तत्व आपश्री पर आरोप लगाया करते थे कि ये अन्य सम्प्रदायो की निंदा करते हैं और किसी से प्रेम सबध नही रखते। इस चातुर्मास मे अन्य सम्प्रदाय के सन्तो के साथ आपका जिस स्वाभाविक रीति से मिलन हुआ उसने स्वत ही उक्त आरोप को असत्य सिद्ध कर दिया। जब आपश्री को यह ज्ञात हुआ कि नीम चौक के धर्म स्थान मे विराजित स्व० जैन दिवाकर श्री चौथमलजी म सा के शिष्य मुनिश्री चम्पालालजी कुछ दिनो से अधिक अस्वस्थ हैं तो आपश्री सत समुदाय के साथ नगर प्रवेश के दिन ही उनके वहा पधार गये और स्नेह मिलन के साथ कुछ वार्तालाप हुआ। यह भी पता चला कि ऊपर की मजिल मे श्री मगनमलजी म सा भी अस्वस्थ हैं तो आपश्री ऊपर पधार कर उनसे भी मिले। आपश्री के इस मृदु—व्यवहार का बहुत ही अनुकूल असर हुआ। इस व्यवहार से वहा विराजित प रत्न मुनिश्री सौभाग्यमलजी म सा भी बहुत प्रभावित हुए। व स्वय पौषध शाला आये और आपश्री से कहने लगे कि मैं आपको पुन' श्रमण सघ मे लेकर रहूगा। आचार्यश्री ने फरमाया—मैं श्रमण सघ से बाहर कहा हू? भगवान् महावीर के श्रमण सघ मे तो हू ही किंतु सादडी मे नवनिर्मित श्रमण सघ मे स्व० आचार्यश्री ने प्रवेश भी सशर्त किया था और पद त्याग भी सशर्त, अत शर्त पूरी होती हो तो मैं भी तत्पर हू।

रतलाम मे उन दिनो एक ओर जैनो—जैनो (साधुमार्गी—स्थानकवासी) के बीच अन्त सघर्ष चल रहा था तो दूसरी ओर जैनो व वैष्णवो के बीच मे भी सम्बन्ध कटु बने हुए थे। आचार्यश्री के प्रभावशाली व्यक्तित्व का ही यह अतिशय माना जायेगा कि ये दोनो प्रकार के सघर्ष मिट गये और आपस मे प्रीतिमय सम्बन्ध बन गये।

मालव धरा पर प्रभावशाली विहार और शंकाओ के अद्भुत समाधान—

रतलाम से विहार करके आपश्री रावटी पधारे और वहा से मेरागढ। वहा कुछ घरो मे जब सत गोचरी लेने के लिये पहुचे तो उन्होने भिक्षा देने से मना कर दिया। मुनिश्री अमरचदजी म.सा ने समझाया—भाई, हम तो कोई बची हुई भोजन सामग्री हो और आपकी जरूरत से ज्यादा हो तभी लेते हैं। हमारे निमित्त से बनाया हुआ भोजन हम नही लेते। यह सुनकर उस घर का मुखिया बहुत लज्जित हुआ और बोला हम तो ब्राह्मण हैं, आपकी भिक्षा-चरी विधि नही जानते लेकिन कल पास के गाव के दो व्यक्ति आकर हमे बता गये थे कि आप साधुओ को कोई आहार मत देना। फिर उन्होने बची हुई सामग्री यथा विधि भिक्षा मे

दी । जब यह बात आचार्यश्री की जानकारी मे लाई गई तो आपश्री ने यही फरमाया कि हमें समता रखनी चाहिये, इससे अपने कर्मो की निर्जरा ही होती है । आगे खवासा गाव मे भी दुर्बुद्धि ग्रस्त विरोधियो के बहकावे के कारण आपश्री को कठिन परिषह सहने पड़े । वहा से आपश्री युग पुरुष जवाहराचार्य की जन्म भूमि थादला पधारे जहा अनेक भील बधुओ ने मद्य–मास आदि दुर्व्यसनो का त्याग किया । आदिवासियो मे जागरण का कार्य करने वाले 'मामाजी' से पहले ही आपका परिचय हो चुका था ।

यहा पर मामाजी बालेश्वर दयालजी ने आपश्री के साथ चर्चा मे एक ऐसा बिदु उठाया जिसका आपश्री ने सुन्दर समाधान दिया । मामाजी ने कहा–आप मासाहार का त्याग कराते हैं, यह अहिसा को आधार बनाकर भारत जैसे गरीब देश मे आर्थिक दृष्टि से उचित नही है । आचार्यश्री ने फरमाया–आपका यह चितन एकागी है । मासाहार से अन्न समस्या हल होती है, यह भी भ्रात धारणा है । आप सोचिये, जिन पशुओ के वध से मास प्राप्त होता है, उनके लिए कितना खर्च होता है ? क्या धनी देश आर्थिक लाभ के लिये लाखो टन अनाज समुद्र मे नही फेंक देते हैं ? क्या मासाहार से सात्विक भावना उत्पन्न हो सकती है ? अब अन्य समस्या के समाधान के लिये मैं आपको अहिसात्मक प्रयोग बता दू । आज देश मे कुल ४०-५० करोड आबादी होगी । उसमे से १०–१५ करोड बच्चो को कम कर ले तो ३०–३५ करोड व्यक्तियो के लिये एक दिन मे अनुमानत १५–२०करोड किलो अन्न चाहिये । अब यदि सत्प्रेरणा देकर सभी से साप्ताहिक उपवास कराया जाय तो क्या अन्न समस्या का सहज समाधान नही हो जायेगा ? इस चर्चा से प्रसन्न होकर मामाजी स्वय ने आदिवासियो को लाकर उन्हे व्यसन मुक्त कराया ।

धार नगर मे भी आपश्री से वहा की जिला काग्रेस कमेटी के तत्कालीन अध्यक्ष, वकील एव वैदिक दर्शन के विद्वान् श्री सिद्धनाथजी उपाध्याय की ईश्वर कर्तव्य के प्रश्न पर बडी गम्भीर चर्चा हुई । उन्होने प्रश्न उठाया कि क्या जैन धर्म नास्तिक धर्म है ? आचार्यश्री ने आत्मा, परमात्मा एव पुनर्जन्म का विवेचन करते हुए परमात्मा स्वरूप पर जैन दर्शन एव वैदिक दर्शन की मान्यताओ का तुलनात्मक विश्लेषण किया । आपश्री ने मुक्त, सिद्ध एव बद्ध ईश्वर के रूपो पर भी प्रकाश डाला और उन्हे सतुष्ट किया कि ईश्वर को ससार का कर्त्ता न मानने की जैन दर्शन की मान्यता समीचीन है । धार मे ही एक ख्यातिलब्ध विद्वान् श्री गजानद जी शास्त्री ने यह प्रश्न उठाया कि क्या स्याद्वाद सशयवाद है ? आचार्यश्री ने स्यात् शब्द का विश्लेषण करते हुए वस्तुस्वरूप के विविध पहलुओ पर दृष्टि डालने की बात कही कि इस तरह स्याद्वाद सशयवाद नही वरन् वस्तु के पूर्णस्वरूप को उसकी विभिन्न अपेक्षाओ के साथ जानने का एक सशक्त माध्यम है । अधिकाशतः अपने–अपने मत को दुराग्रह पूर्वक लोग सत्य मानकर बैठ जाते हैं तो स्याद्वाद प्रत्येक मत मे रहे हुए सत्याश को अलग छाटता है और सत्याशो को मिलाकर पूर्ण सत्य के दर्शन कराता है । तब शास्त्रीजी ने मान लिया कि स्याद्वाद सशयवाद नही अनेक रूपी निश्चयात्मक स्थिति का प्रतिपादक है ।

स्वर्गीय आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा की प्रथम पुण्य तिथि माघ कृष्णा द्वितीया तक भी आपश्री धार मे ही थे । आचार्यश्री ने इस प्रसग से श्रमण वर्ग मे फैलती जा रही विकृतियो एव साम्प्रदायिक व्यामोह पर करारा प्रहार करते हुए निर्ग्रन्थ श्रमण–सस्कृति की महत्ता पर विस्तार से प्रकाश डाला । इससे प्रेरित होकर वहा के प्रतिष्ठित श्रावक श्री माणक लालजी वकील ने स्व० आचार्य देव के प्रति अपनी भावपूर्ण श्रद्धा अर्पित करते हुए सादडी के साधु सम्मेलन मे वने श्रमण सघ के घटनाचक्र पर अपना विवेचन किया जिससे स्व० आचार्यश्री से सम्वन्धित स्थिति का पूर्णत स्पष्टीकरण हो गया ।

धार मे रतलाम तथा इन्दौर के कई दर्शनार्थी उपस्थित हुए । इन्दौर श्री सघ की ओर से श्री लाभचदजी काठेड ने इन्दौर क्षेत्र को पावन करने हेतु भावभीनी विनती करते हुए निवेदन किया कि आज देश मे फैल रही भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, कर्तव्यहीनता की वृत्तियो का उन्मूलन करने के लिये आप जैसे महान् सत की अमृतवाणी की आवश्यकता है ताकि लाखो व्यक्तियो के हृदय परिवर्तित करके उन्हे कर्तव्यनिष्ठ वनाया जा सके । इस दृष्टि से इन्दौर जैसे महानगर मे आपश्री का पदार्पण अतीव धर्म-प्रेरक रहेगा ।

इन्दौर नगर का आपश्री का २१ दिन का प्रवास अभूतपूर्व जागृति का कारणभूत हुआ । कई विद्वानो ने आपश्री के साथ ज्ञान चर्चा से पूरा लाभ उठाया । वैज्ञानिक प्रश्नो के धर्म के परिप्रेक्ष्य मे आपश्री द्वारा दिये गये उत्तर प्रश्नकर्त्ताओ को भावविभोर कर देते थे । इस समय भी चातुर्मास हेतु वहुत आग्रहपूर्ण विनती की गई ।

इन्दौर से हातोद, देपालपुर गौतमपुरा, आदि छोटे-छोटे गावो मे जिन वाणी की पीयूषधारा का वर्षण करते हुए आपश्री वडनगर पधारे । यहा पर मूर्तिपूजक, दिगम्वर एव जैनेतर भाइयो ने भी प्रवचनो एवं चर्चाओ मे भाग लिया । दिगम्वर विद्वान् प विष्णुकुमारजी शास्त्री एवं वैद्यराजजी व्रजवल्लभजी ने अपने उद्‌गार प्रकट किये कि जैसा तात्विक विवेचन आचार्यश्री ने किया है वैसा हृदयस्पर्शी विवेचन पहले हमे किन्ही भी दिगम्वर या श्वेताम्वर सत अथवा पडित से नही मिला । वदनावर और कानवन मे भी धर्म की अपूर्व ज्योति जागृत हुई। यहा से विहार करते हुए सजग सयमी जीवन की एक घटना सामने आई । मुनि श्री अमरचद जी म सा किसी गृहस्थ के यहा से सिलाई के लिये सुवह ही एक सुई लाये थे जो धर्म स्थान मे ही रह गई और जिसे लौटाना भूल गये । उन्होने यह वात चार मील चलने के वाद याद आने पर आपश्री से कही । सजग–सयमी आचार्यश्री ने तत्काल आदेश दिया–एक भाई के साथ जाकर तुम स्वय यथा स्थान सुई लौटा कर आओ । साथ मे चल रहे श्रावको ने मुनिश्री को आठ मील का चक्कर न देने का निवेदन करते हुए कहा कि हम वापस जाकर सुई ढूढकर दे देंगे । आचार्यश्री ने हसते हुए कहा–आपकी भावना प्रशस्त है किन्तु हमारी सयमी मर्यादा कहती है कि हम अपना कार्य स्वय करे । आज छोटा सा कार्य गृहस्थ से करवा लेंगे तो कल वडा कार्य भी करवाने लग जायेंगे, जिससे शिथिलता का प्रवेश होगा । दूसरे अभी ये मुनिजी जाकर इस कार्य को कर लेंगे तो आगे से पूरी सावधानी रहेगी ।

'तुम बिन कौन उबारे हमको'
की गुहार जनकल्याण का यज्ञारम्भ–

मानवीय सवेदनाओ से ओत-प्रोत आचार्यश्री की अपूर्व दूरदर्शिता का ही यह प्रमाण है कि आज से करीब २० वर्ष पूव जनकल्याण के जिस यज्ञ का आरम्भ आपश्री की धर्मोप-देशना से हुआ था, वह आज जनकल्याण का ऐसा विस्तीर्ण अनुष्ठान बन गया है कि दुव्यसनों मे ग्रस्त हजारो पिछडे हुए मानव सस्कारित हो गुण सम्पन्न धर्म पथ पर सतुलित जीवनचर्या के साथ निरन्तर आगे बढते जा रहे हैं ।

ऐसी विलक्षण सामाजिक क्राति का जन्म तब हुआ, जब आप अपनी इस विहारचर्या मे नागदा पधारे । यहा पर गुजराती बलाई समाज के प्रमुख श्री सीतारामजी बलाई आपश्री का प्रवचन सुनने के लिये आये । एक तो आचार्यश्री के जाज्वल्यमान व्यक्तित्व से वे अत्यधिक प्रभावित हो गये और दूसरे, जीवन उद्धारिणी वाणी से भाव विभोर बन गये । प्रवचन के बाद वे आचार्यश्री की सेवा मे आये और अपनी टोपी चरणो मे रखते हुए बोले–गुरुदेव, इस मालव प्रात मे हम गुजराती बलाइयो के कोई एक लाख घर होगे और हम करीब–करीब सभी मद्य-मास आदि विविध दुर्व्यसनो से ग्रस्त हैं । क्या आपश्री जैसे महापुरुष के रहते हुए और जैन धर्म के ऐसे उदार सिद्धातो के प्रचारित होते हुए भी हमारा उद्धार नही होगा? आचार्यश्री ने आश्चर्य के साथ पूछा–आप क्या कहना चाह रहे हैं, मैं पूरी तरह से समझा नही । आप किस तरह के उद्धार की बात कर रहे हैं और आपका परिचय क्या है ? तब सीतारामजी ने अपना परिचय देते हुए अपनी जाति की दुरावस्था का विस्तार से वर्णन किया । उन्होंने यह भी बताया कि गुजराती बलाइयो की जाति इन्दौर, उज्जैन, रतलाम, जावरा, मदसौर आदि शहरो के आसपास के सैकडो छोटे-बडे गावो मे फैली हुई है । सवर्णों के लिये हम अछूत माने जाते हैं । यद्यपि ईसाई आदि हमे अपनाने को तैयार रहते हैं फिर भी तिरस्कार सहते हुए हम जी रहे हैं । आपकी अतीव कृपा हो कि आपश्री इन गावो मे विहार करके हमारी जाति के लोगो मे सुसस्कारिता का नया सदेश फूकें । हमे मार्गदर्शन की चाह है और आपश्री की सत्प्रेरणा से इस सामाजिक क्राति का सूत्रपात हो जायेगा तो हमारी जाति का भी उद्धार हो जायेगा ।

तब आचार्यश्री ने सम्पूर्ण समस्या पर गम्भीरता से विचार-विमर्श किया और साधु मर्यादा के अनुसार इस मानव उद्धार के कार्य मे अपना सयमोय सम्पूर्ण योग देने का वचन भी दे दिया । आपश्री ने उनके निवेदन पर सबसे पहले सीतारामजी को ही सप्त कुव्यसनो-जुआ, मास, मदिरा, चोरी, पर स्त्री गमन, वेश्यागमन एव शिकार का स्वरूप समझाया और उन्हें छोड कर श्रेष्ठ जीवन अपनाने की सलाह दी । इस प्रकार उस दिन एक ऐसी शुभ प्रवृत्ति का श्रीगणेश हुआ जो आगे चलकर 'धर्मपाल प्रवृत्ति' के नाम से विख्यात हुई । सीतारामजी ने गुहार लगाई कि 'तुम बिन कौन उबारे हमको' और आचार्य भगवन् कारुणिक हृदय के साथ उद्धार की दिशा मे चल पडे । फिर तो सैकडो गावो से यही गुहार उठने लगी और आचार्यश्री

उन सभी क्षेत्रो को पावन करते रहे । आचार्यश्री के इस सत्साहसी अभियान मे फिर सारा सघ और सघ के प्रमुख नेता इस तरह जुट गये कि आज हजारो की संख्या मे ये धर्मपाल बन्धु अपने पिछड़े हुए जीवन से ही नही उबरे है अपितु एक नये स्वस्थ एव 'धर्ममय' जीवन को अपनाकर अपनी सर्वांगीण उन्नति के नये आयामो की शोध मे निरन्तर गतिशील हैं ।

धर्मपाल प्रवृत्ति की सफलता ने आचार्यश्री को युवाचार्य श्रीमद् रत्नप्रभ सुरीश्वरजी के समकक्ष रख दिया है, जिन्होने उस काल मे जैन धर्म की अमित प्रभावना करते हुए ओसवाल समाज का निर्माण किया । इतिहास का इसे स्वर्णिम पृष्ठ ही कहेगे कि आचार्यश्री के क्रांतिकारी व्यक्तित्व ने हजारो मानव हृदयो मे जीवन विकास की सुन्दर अभिलाषा जागृत कर दी । आचार्यश्री नागदा से गुराडिया ग्राम पधारे जहा से यह मानिये कि इस सामाजिक क्राति अथवा जन कल्याण के यज्ञ का समारम्भ हुआ । वहा कुछ ही प्रवचन हुए होगे कि वहा के सभी ४०-५० घर दुर्व्यसनो से मुक्त होने के लिये तत्पर हो उठे । उन्ही दिनो मे पास के गाव मे एक विवाह के निमित्त से ७० गावो के गुजराती बलाई वहा एकत्रित होने वाले थे, तब सीतारामजी के निवेदन पर आचार्यश्री बनवना गाव पधारे जहा आपश्री के मार्मिक उपदेशो से जादू का सा प्रभाव पडा ।और ७० गावो की पचायतो से आये हुए ५३१ परिवारो के सदस्यो के साथ अन्य २०० व्यक्तियो ने भी शराब, मास, शिकार आदि दुर्व्यसनो का त्याग कर आपश्री के सान्निध्य मे सम्यक्त्व ग्रहण करते हुए जैन धर्म अगीकार किया । उस समय सीतारामजी ने ही निवेदन किया–गुरुदेव, मुझे विश्वास है कि आपका यह सस्कार-शुद्धि एव जीवन–विकास का अभियान अवश्यमेव सफल होगा, किन्तु क्या तब भी हमारे नामो के साथ घृणा–बोधक शब्द बलाई ही लगा रहेगा ? आचार्यश्री ने उनकी भावना को समझकर इस जाति का गुण सम्पन्न नाम रख दिया धर्मपाल । इस प्रकार वह छोटा सा गाव गुराडिया धर्मपालो की उद्भव भूमि होने के कारण एक तीर्थ धाम-सा हो गया । फिर तो आचार्यश्री गुजराती बलाइयो के छोटे-छोटे गावों मे पधारे और एक ही व्यापक भ्रमण मे करीब १५०० परिवारो के १० हजार व्यक्ति नवजीवन निर्माण के पथ पर चल पडे । आपश्री के चातुर्मास हेतु इन्दौर पधार जाने के पश्चात् भी यह शुभ अभियान चलता रहा और अभी तक पूरी सफलता के साथ चल रहा है जिसके कारण करीब–करीब यह पूरी जाति धर्मपालो के रूप मे परिवर्तित हो चुकी है । जिन धर्मपालो की सख्या अस्सी हजार से लाख तक बताई जाती है । हृदय परिवर्तन करके सामूहिक रूप से जीवन सुधारने का यह अद्वितीय उदाहरण है ।

वचनो का अमृत झरा और भावो के फूल खिले–

इन्दौर का वि स २०२१ का चातुर्मास आचार्यश्री के प्रभावोत्पादक पुण्यातिशय के साथ प्रारम्भ हुआ । इन्दौर मे प्रतिपक्षियो का कुछ अधिक प्रभाव था अत आपश्री के चातुर्मास की स्वीकृति होते ही उन्होने महावीर भवन आदि जितने धर्म स्थानक थे एक या दूसरे कारण को बताकर अपने अधिकार मे कर लिये । इससे इन्दौर श्रीसघ के लिये यह विकट समस्या खड़ी हो गई कि आचार्यश्री का चातुर्मास कहा कराया जाय ? वकील श्री रोशनलालजी खाबिया

इस प्रबन्ध हेतु अत्यन्त चिन्तित हो उठे। रात दिन इसी ख्याल मे डूब गये कि उपर्युक्त भवन की व्यवस्था नही होगी तो कैसे क्या होगा ?

यही चिन्ता वकील साहब को अदालतो मे अपना कार्य करते वक्त भी बनी रहती। उनके एक सिक्ख वकील निकट के मित्र थे। एक दिन उन्होने खाबियाजी से पूछा—ऐसा क्या कारण है कि मैं आपको बहुत दिनो से चिन्तित और उदास देख रहा हू ? खाबियाजी ने पहले तो उस सवाल को टालना चाहा लेकिन अधिक आग्रह करने पर बोले—भाई, हमने इस वर्ष एक प्रकाड विद्वान् और चरित्रनिष्ठ महात्मा का चातुर्मास यहा इन्दौर मे कराने का निश्चय किया है किंतु इस चातुर्मास के योग्य आवास एव प्रवचन हेतु विशाल भवन की आवश्यकता है। हमारे अपने ही समाज के जो भवन हैं वे हमे मिल नही रहे हैं और उस हेतु किराये आदि पर लिये हुए भवन मे हमारे महात्मा ठहरते नही है। अत उपयुक्त भवन की ही चिन्ता मुझे लगी हुई है। इस पर मुक्त हसी बिखेरते हुए उन सिक्ख वकील महोदय ने कहा—आपने मुझे पहले बताया नही, खैर अब भी इसकी कोई चिंता न करिये। राजमोहल्ले मे ही कन्या विद्यालय के लिये हमारे समाज का नया भवन करीब-करीब पूरा बन चुका है और मैं अपने समाज का अध्यक्ष भी हू। इसलिये सारी व्यवस्था हो जायेगी, आप निश्चिन्त रहे। खाबियाजी का मुह यह सुनते ही खिल उठा। आपश्री का चातुर्मास फिर खालसा कन्या विद्यालय के भवन मे ही हुआ।

धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्यश्री जब इन्दौर चातुर्मास हेतु उज्जैन की ओर विचरण करते हुए रतलाम पधारे तो वहा एक प्रतिपक्षी ने रात्रि चर्चा के समय आपश्री से पूछा-महाराज आपके चौमासे मे कितना खर्च आता है ? मधुर मुस्कान बिखेरते हुए आपश्री ने उत्तर दिया—भाई, हमारे तो चातुर्मास मे एक पैसे का भी खर्च नही होता है। हमे भोजन और वस्त्र की आवश्यकता होती है वह हम आप लोगो के बचे हुए पदार्थों से थोडा-थोडा लेकर पूरी कर लेते हैं। हम तो साधुत्व का यही उद्देश्य मानते हैं कि समाज से कम से कम लेना और धर्मोपदेशो के रूप मे अधिक से अधिक देना। उत्तर सुनकर वह व्यक्ति आगे कुछ नही बोल सका। इसी बीच पीपलिया कला मे मालदामाडी (महाराष्ट्र) निवासी श्री चम्पालालजी मुणोत की सुपुत्री गेंदाबाई (ज्ञानकवरजी) की भागवती दीक्षा महासतीजी श्री सुगनकवरजी गुलाबकवरजी के नेश्राय मे सम्पन्न हुई।

चातुर्मास हेतु इन्दौर नगर मे प्रवेश करने के एक दिन पूर्व कुछ श्रावको ने आपश्री को बताया कि यहा आपके विरुद्ध बहुत जोरो से प्रचार किया जा रहा है और लोगो को भडकाया जा रहा है कि वे आपके स्वागत प्रवचन आदि मे नही आवें। यदि कल ही लोग नही आवेंगे तो हमको अच्छा नही लगेगा। सहज मुस्कान के साथ आपश्री ने फरमाया—आप भी कैसी भोली बात कर रहे हैं ? कोई स्वागत के लिये आये तो अच्छा लगे और नही आये तो अच्छा नही लगे—यह साधारण चिन्तन है। मैं पूछता हू कि स्वागत किसे कहते हैं ? क्या भीड का इक्कट्ठा होना और जय-जयकार का नारा लगाना ही स्वागत है ? कभी प्रवचन मे

इस पर विस्तार से चर्चा करने का भाव रखता हू । अभी तो यही कहता हू कि किसी भी बात को हमे मान–सम्मान का विषय नही बनाना चाहिये ।

मानव–मनोविज्ञान का सम्भवत यह यथार्थ सिद्धान्त है कि किसी बात के लिये निषेध करो तो उसका विधि रूप ही अधिक दिखाई देता है और वास्तव मे आपश्री ने जब नगर मे प्रवेश किया तो ऐसा ही दिखाई दिया । लगभग ५००० नर-नारियो का समूह अपने श्रद्धेय के स्वागत के लिये उमड पडा । भव्य एव आकर्षक शोभा यात्रा का शब्द चित्र श्री सोहनलालजी सुराणा ने 'शुभागमन की झाकिया' के नाम से खीचते हुए जो शीर्षक दिये हैं वे मनोहारी हैं, जैसे–मेघो का तना बना दर्पण, केसरिया कसूमल का ठाट, मदिरमार्गी जैन बधुओ द्वारा स्वागत, जैनेतर बधु भी भक्ति धारा मे, अल्पमत का भी बहुमत, परलोक और इहलोक दोनो का सुधार आदि । इन शीर्षको मे सबसे अधिक सार्थक शीर्षक था वचनो का अमृत झर रहा है और भावो के फूल खिल रहे हैं ।

वस्तुत समग्र विरोधी वातावरण के अस्तित्व मे होते हुए भी इन्दौर चातुर्मास मे आचार्यश्री के कान्तिमान एव तपोमय व्यक्तित्व से निखरे हुए जो वचन प्रवचनो आदि के माध्यम से नि सृत हुए उनका अमृत ऐसा झरा जो सभी के दिलो मे समाकर फलदायी बना। अमृत झरा तो फूल भी खूब खिले, सुन्दर-सुन्दर भावो के फूल जिन्होने इन्दौर का वातावरण स्वच्छ ही नही सुगधित भी बना दिया । इस चातुर्मास मे इन्दौर के इतिहास मे त्याग-प्रत्या–खानो तथा तपस्याओ का नया कीर्तिमान स्थापित हुआ । आपश्री के प्रति सच्ची श्रद्धा का अमित रूप से विस्तार हुआ और अनेको ने आपश्री से गुरुमत्र एव शुद्ध सम्यक्त्व ग्रहण किया। यहा पर श्री शातिलालजी रतनलालजी बोहरा की माताजी श्रीमती सोहनबाई का दीक्षा महोत्सव भी मनाया गया ।

दिनाक ११–७–१९६४ को मध्यप्रदेश के योजनामत्री श्री गगवाल तथा खाद्यमत्री गौतम शर्मा आपश्री का प्रवचन सुनने के लिये उपस्थित हुए । प्रवचन मे व्यष्टि से समष्टि के निर्माण एव जीवन के कर्त्तव्यो के प्रति सजगता पर विशद्-विवेचन किया गया, जिसे सुनकर मत्री–द्वय बहुत प्रभावित हुए और श्री गौतमजी शर्मा ने अपने भाव–प्रवण भाषण मे कहा— मुझे महाराजश्री की वाणी सुनने और दर्शन करने का आज सुअवसर मिला । आपश्री ने एक मूलभूत बात कही है कि समाज की रचना 'जन' से होती है और अगर जन-जन अपने आप मे आध्यात्मिक दृष्टि का निर्माण करके जीवन यापन करता है तो वह स्वय को और समाज को ऊचा उठा सकता है । हमारे देश को जैन धर्म ने बहुत कुछ दिया है और आज हम जो कुछ भी पा रहे हैं, मूल रूप से ये वे ही सिद्धान्त हैं जो महावीर स्वामी ने दिये थे । राजनीति मे समाजवाद भी अपरिग्रह की भावना का ही दूसरा रूप है । इसी प्रकार दिनाक २४–८–१९६४ को तत्कालीन केन्द्रीय इस्पात एव खान उपमत्री वर्तमान मे भारत के योजनामत्री श्रीप्रकाशचदजी सेठी ने भी आचार्यश्री का तल-स्पर्शी प्रवचन सुनकर व्यक्त किया कि आचार्यश्री के उपदेशानुसार जब तक वात्सल्य और करुणा आंतरिक हृदय मे नही बहेगी तब तक मानवता की सच्ची सेवा नही हो सकेगी ।

अ भा साधुमार्गी जैन सघ के तत्वावधान मे होने वाले धर्मपाल सम्मेलन का उद्घाटन करने हेतु जब मध्यप्रदेश के राज्यपाल महोदय श्री पाटस्कर आये तो उन्होने आचार्यश्री के साथ कई विषयो पर चर्चा की मुख्यत धर्मपाल नाम से हो रही सामाजिक–उत्क्राति के बारे मे विस्तार से विचार–विमर्श हुआ । इस सम्मेलन के अवसर पर जो गुजराती बलाई बधु धर्मपाल बन चुके थे, जिला उज्जैन, रतलाम, इन्दौर, देवास, मदसौर, धार, बडनगर, शाजापुर आदि के सैंकडो गावो के इन नवजागृत बधुओ ने समस्त पचान गुजराती बलाइयान के नाम पर एक सूचना पत्र (देखिये परिशिष्ट स ३) प्रकाशित करवा कर अपील की कि शेष गुजराती बलाई भी जीवन सुधार की इस डगर पर आगे पग बढावे ।

नगर प्रवेश के एक दिन पहले जो आशका प्रकट की गई थी वह तो दूसरे ही दिन निर्मूल सिद्ध हो गई किंतु विदाई की वेला ने तो श्रद्धा के ऐसे फूल खिलाए कि सारा इन्दौर नगर महक उठा । हजारो नर-नारी आकुल–व्याकुल हृदय से आसू बरसा रहे थे । गीता भवन के कर्मठ कार्यकर्त्ता बाबा बालमुकुन्दजी के अत्यधिक आग्रह से आपश्री का गीता भवन मे विराजना हुआ । वहा गीता पर हुई प्रवचन गगा मे श्रोतागण ऐसे नहाये कि आपश्री की छवि हृदय मे बसा बैठे । गीता भवन के मत्री श्री जसवन्तरायजी जख्मी ने तो बहुत ही भावपूर्ण गीत सुनाया । (देखिये परिशिष्ट स ४)

छत्तीसगढ़ क्षेत्र में महान् धर्मोपकारी विहार–

तदनन्तर आपश्री ग्रामीण अचलो मे विचरण करते हुए और अपने सदुपदेशो से क्राति की नई लहर फैलाते हुए हाट-पीपलिया पधारे । यहा पर आपश्री ने समाज, राष्ट्र, नीति एव धर्म के विषय पर अतीव सारगर्भित प्रवचन दिया जिसे सुनकर कई प्रबुद्ध व्यक्ति बहुत ही प्रभावित हुए । चार विभिन्न राजनैतिक पार्टियो के प्रमुखो ने जब आपश्री द्वारा निर्मित समता दर्शन[1] की रूपरेखा देखी तो वे अत्यन्त प्रभावित हुए और हर्षित होकर एक साथ बोल उठे–यह रूपरेखा तो अद्वितीय है । समता के ऐसे सिद्धातो से सारे राजनैतिक क्षेत्र को सुधारा जा सकता है और राष्ट्र को ही नही सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र मे बाधा जा सकता है । यहा से आपश्री भोपाल पधारे ।

भोपाल मे छत्तीसगढ क्षेत्रीय श्रीसघ के अध्यक्ष श्री भूरचदजी देशलहरा, मत्री श्री सम्पतराजजी धाडीवाल, श्री भीकमचदजी वैद, श्री चम्पालालजी सुराना आदि ने आपश्री से छत्तीसगढ क्षेत्र मे पधारने की भावभीनी प्रार्थना की । इसके साथ ही श्री सम्पतराजजी ने निवेदन किया—आप छत्तीसगढ पधारिये, मैं दीक्षा लेने को तत्पर हू । आचार्यश्री ने इस निवेदन को विनोद या चातुर्मास का प्रलोभन ही समझा कि लाखो का व्यापार करने वाला और भरे–

१– आचार्यश्री के समता दर्शन पर दिये गये प्रवचनो का सारभूत सग्रह 'समता दर्शन और व्यवहार' के नाम से प्रकाशित हुआ है ।(स श्री शातिचन्द्र मेहता)

पूरे परिवार का मुखिया यह व्यक्ति भला दीक्षा क्या लेगा । तभी रायपुर (म प्र) श्रीसघ के सदस्य भी आ गये । आचार्यश्री ने विनोद मे ही पूछा—क्या उधर मेरे चातुर्मास के लिये आप दीक्षा की युक्ति तो नही लगा रहे है ? तब दीक्षा के विषय पर विस्तृत वार्ता हुई और श्री घाडीवालजी ने आज्ञा पत्र प्रस्तुत करने की तत्परता दिखाई ।

छत्तीसगढ क्षेत्र का मार्ग विकटवनो और भयावह पर्वतमालाओ के मध्य से होकर जाता था । मार्ग मे आहार-पानी की असुविधा के साथ अनेक परिषहो के आने की भी पूरी-पूरी आशका थी और यह भी आशका थी कि नवमुनियो की कष्ट—सहिष्णुता क्या पार पड सकेगी ? किन्तु इस समस्या का दूसरा पहलू भी था । इस क्षेत्र के अधिकाश निवासी पिछडे हुए पर भोले लोग हैं । कस्बो मे जो व्यापारी समाज है वह भी धर्मोत्सुक है । आशय यह है कि यह धरती धर्मपिपासु है । अत आचाय ने उधर विहार कर दिया । यह विहार चर्या बहुत ही उग्र रही । कही १६—१६ मील तक का लम्बा विहार करना पडा तो कही कोलतार के खाली डिब्बो के टीन से बनी झोपडियो मे विश्राम किया ।

होशगाबाद मे दिगम्बर तारण-पथ के बहुत घर है । इस समाज के एक मस्ताना वकील आपश्री के साथ ज्ञान चर्चा करके बहुत प्रभावित हुए और बोले—आज तक मैंने कई दिगम्बर, श्वेताम्बर एव वैष्णव साधुओ के साथ चर्चा की किंतु मेरी पटरी किसी के साथ फिट नही बैठी । आपश्री की तरह न तो किसी ने इतने धैर्य से मेरी बात सुनी और न इतनी गूढता मे मेरे गम्भीर प्रश्नो के उत्तर दिये । उन्होने तो तारण समाज का उद्धार करने के लिये आपश्री को वही रुकने का आग्रह किया ।

बैतूल मे गाधीवादी विचारक श्री भसालीजी का आपसे मिलना हुआ । बैतूल से आपश्री नागपुर पधारे । यहीं पर वि स २०२२ के वर्षावास हेतु रायपुर मे विराजन की स्वीकृति प्रदान की गई । नागपुर से रायपुर पहुचने तक की विहार चर्या मे अतीव कठिन परिषह सहने पडे । रायपुर नगर मे जब आपश्री का प्रवेश हो रहा था तो अचानक सामने से मध्यप्रदेश राज्य विधानसभा के सदस्य महत श्री लक्ष्मीनारायणदास जी हाथ मे नारियल व पुष्पाहार लिये हुए मार्ग मे आगे बढे और आचार्यश्री को भेंट करने के लिये उद्यत हुए तब आचार्यश्री ने जैन—साधु मर्यादा समझा कर उन्हे सतुष्ट किया । नगर प्रवेश के समय यहा जो धर्मोत्साह देखने मे आया वह अवर्णनीय था ।

नगर प्रवेश के दो—एक दिन बाद ही एक ऐसी घटना घटी जिससे आचार्यश्री की आदर्श क्षमाशीलता का प्रभाव सारे नगर पर अमित रूप से छा गया । हुआ यह कि नगर प्रवेश के पूर्व श्री सघ के कार्यकर्त्ताओ ने 'भगवान् महावीर स्वामी की जय, आचार्यश्री नानालाल जी म सा की जय' आदि के बेनर सदर बाजार मे लगा दिये थे । दूसरे या तीसरे दिन ही मुस्लिम समाज का ईद का पर्व था । जब ईद का जुलूस सदर बाजार पार कर रहा था तो किन्ही मुस्लिम युवको ने घाडीवाल ज्ञानभवन के ऊपर लगे एक बेनर को फाड दिया । इस पर नगर

मे कुछ विक्षुब्ध वातावरण बन गया। दूसरे दिन प्रवचन मे महन्तजी के साथ मुस्लिम समाज के पदाधिकारी मौलाना हमीद अली, श्री फजलुद्दीन आदि तथा एस पी, एस डी ओ आदि राज्याधिकारी आपकी सेवा मे आये । उन्हे आशका थी कि कही तनाव के उग्र हो जाने से दगा न हो जावे । मौलाना साहब ने क्षमायाचना करते हुए उन युवको की उद्दण्डता के लिय स्वय या मुस्लिम समाज की कोई भी दण्ड लेने की तैयारी बताई । तब आचार्यश्री ने अपने प्रवचन मे क्षमाशीलता की वह शीतलधारा प्रवाहित की कि सभी गद्गद् हो उठे । रायपुर चातुर्मास मे प्रवचन,शास्त्र–वाचन,अध्ययन,अध्यापन एव ज्ञान चर्चा के दैनिक कार्यक्रमो मे वडी सख्या मे लोग उत्साहपूर्वक भाग लेते थे । कई दम्पत्तियो ने ब्रह्मचर्य व्रत लिया । तपश्चरण का भी अनूठा ठाट रहा । शरीर से वृद्ध किंतु मन से युवक श्री वृद्धिचन्दजी म सा ७० वर्ष की आयु मे केवल गर्म जल के आधार पर ३५ दिन तक निराहार रहे । इसी तरह तपोनिष्ठ श्री कवरलालजी म सा (वडे) ने छाछ के आधार पर एक साथ २५१ दिन की तपस्या की

उड़ीसा प्रात मे कठिन परिषह के साथ ही आल्हादकारी अनुभव–

रायपुर का चातुर्मास आध्यात्मिक उत्क्राति के साथ सम्पन्न करके आचार्यश्री ने उडीसा प्रात के विस्तृत अ चलो मे जन कल्याणार्थ विहार करना आरम्भ कर दिया । गुडीहारी जोटागाव आदि मार्गवर्ती क्षत्रो को पावन करते हुए आपश्री आरग पधारे । आरग मे जैन परिवार एक भी नही था किंतु १००–१२५ घर अग्रवाल गुप्ताओ के थे जो रायपुर मे आपश्री के प्रवचन परिचय मे आ चुके थे । वहा से वेलसोडा, महासमुन्द, शागहरा होते हुए खरियार रोड पधारे जो मध्यप्रदेश की सीमा समाप्त होने पर उडीसा प्रात का सीमावर्ती नगर है । खरियार रोड मे धार्मिक ज्ञानार्जन की होड सी लग गई और धर्मोपकार का इतना सुन्दर वातावरण वना कि आपश्री को वहा पूर्ण शेष काल (२९ दिन) व्यतीत करना पडा । विशेष रूप से विद्यालयीन छात्रो ने भारी धर्मोत्साह दिखाया ।

उडीसा प्रात की अति कठिन विहार चर्या प्रारम्भ हो गई थी खरियार रोड से मार्ग इतना विकट था कि सोलह मील तक रेलवे लाईन के पास-पास चलना पडा। मार्ग मे कही भी पानी उपलव्ध नही हुआ । वहा से काटावाजी होते हुए आपश्री वगोमु डा पधारे । गाव मे प्रवेश करते समय ही पचासो व्यक्तियो को मछलिया पकड़ने के जाल ले जाते हुए और मध्य वाजार मे कतार वन्द लोगो को मछली बेचते हुए देख कर आपश्री का हृदय करुणा से ओत–प्रोत हो गया । सत तो कहने लग गये—गुरुदेव, आप किस हिंसक और अनार्य देश मे पधार गये हैं ? क्या यहा अपना आहार-विहार चल सकेगा ? आचार्यश्री ने मधुरता से समझाया साधु जीवन को असह्य कष्ट उठाकर भी अपना पतित पावन स्वरूप सक्रिय वनाये रखना चाहिये । इतनी दूर आकर धर्मोपकार किये विना वापिस लौट जाय क्या यह उपयुक्त होगा ? यहा पर केसिगा के धर्मनिष्ठ वधुओ ने वहा पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की । वगोमु डा मे ९ दिन तक जिन वाणी की अमृत वर्षा होती रही और वहा से आपश्री सिंघिकेला पधारे ।

सिघिकेला मे तेरह पथ सम्प्रदाय के लगभग ३० परिवार रहते हैं। वे लोग यहा पर साम्प्रदायिक सकुचितता मे न पडते हुए आपश्री की सेवा मे आये और उन्होने दयादान, तथा भिक्षावृत्ति विधि के सदर्भ मे विस्तृत चर्चा की एवं अपने उद्गार प्रकट किये—महाराज श्री सच्ची साधुता और जैन सिद्धातो का सही ज्ञान हमे अब हुआ है। इससे पहले हमारे सम्प्रदाय के साधु आये थे लेकिन उन्होने रास्ते की सेवा के लिय पारिया बाधी थी। सच्ची साधु चर्या के दर्शन हमे आप मे हुए हैं। यहा से आपश्री खुलान होते हुए टीटीलागढ पधारे। वहा सत किन्ही वैष्णव घरो मे भिक्षा के लिये पधारे और जो भिक्षा ली उसे देखकर वे सराहना के स्वर मे कह उठे कि हमारे महाराज के लिये तो हम रसगुल्लो और मिठाइयो के टिफिन लेकर पहुच जाते हैं और आप घर पर पधार कर भी सूखी रोटी ही ले रहे हैं।

केसिगा मे आचार्यश्री लगभग २५ दिन तक विराजे जो धर्म-जागृत्ति का अनूठा काल रहा वहा जैनो और वैष्णवो के बीच लम्बे समय से सघर्ष चल रहा था वह मिट गया और पारस्परिक सद्भावना का वातावरण बन गया। वैष्णव धर्मानुयायी आपश्री के मृदु व्यवहार से ही नही जैन सिद्धातो के सरल स्पष्टीकरण से भी अत्यधिक प्रसन्न हुए। एक श्री मागीलालजी जो कभी भी महावीर भवन मे पग नही धरते थे और अपने आपको कट्टर वैष्णव मानते थे वे आचार्यश्री की सेवा मे महावीर भवन मे प्रतिदिन कई बार आने-जाने लगे। विदाई के समय समस्त जैन एव जैनेतर जनता ने केसिगा मे चातुर्मास करने का हार्दिक भावना भरा एक विनय पत्र लिखित रूप मे प्रस्तुत किया (देखिये परिशिष्ट स ५) जिसके माध्यम से केसिगावासियो के आपश्री के प्रति अपार श्रद्धा के भाव प्रकट होते हैं।

केसिगा नगर मे ही आगामी चातुर्मास के लिये विनती करने वाले श्री सघो के श्रावक आपश्री की सेवा मे पहुचे। राजनादगाव के अलावा रायपुर, दुर्ग दलोद आदि के श्रीसघो ने भी अपनी विनतिया रखी। राजनादगाव श्रीसघ की ओर से श्री भीखमचदजी टाटिया ने भावपूर्ण स्वरो मे गीत के माध्यम से विनती निवेदित की। केसिगा क्षेत्र के लिये उडीसाप्रातीय तेरहपथी सभा के अध्यक्ष श्री जगमोहनजी और उपमत्री श्री जगदीशप्रसादजी ने भी आग्रहपूर्ण विनती की। किंतु श्री मागीलालजी वैष्णव ने जो विनती की उसके बाद घटित घटना से उनके हार्दिक भावो का परिचय मिला। जब ये अकेले ही प्रवचन मे विनती करके घर आये तो कुछ लोगो ने उन्हे उलाहना दिया कि हजारो दर्शनार्थियो के आवास और भोजन की व्यवस्था पर होने वाले व्यय का बिना अनुमान लगाये ऐसा करके उन्होने भूल की है। तब उन्होने गम्भीर स्वर मे कहा कि मैंने सोच-समझकर ही विनती की है और अपनी तिजोरी की चाबी उनके सामने फेंक दी कि विश्वास न हो तो चाहे जितना पैसा निकाल लो। श्री मागीलालजी आपश्री की भक्ति मे इतने रग गये थे कि वे जैनियो को अक्सर कहने लगे कि तुम जैनी नही मैं सच्चा जैनी हू।

महावीर जयन्ति के अवसर पर आपश्री का विराजना बगोमुडा मे रहा। वहां से आप अक्षय तृतीया पर खरियार रोड़ पधारे। जहा सेठ श्री सोभागमलजी साड की धर्मवीरागना

पत्नी श्रीमती सूरजबाई की प्रशसनीय मनोभावना का एक प्रसग बना । पारणे के अवसर पर जब आचार्यश्री उनके यहा गोचरी पधारे तो श्रीमती सूरजबाई ने एक साथ पाच लड्डू बहराने की हठ की । आपश्री ने मना किया कि इतने नही खायेंगे तो वे बोल पड़ी कि मना करके आप अपशकुन न करे । फिर अपशकुन का मर्म उन्होने समझाया कि मैं अपने घर मे ऐसा धर्ममय वातावरण बना रही हू कि एक साथ पाच दीक्षाए हो और हुआ भी यही कि स्वय ने, उनके पतिदेव ने तथा एक पुत्र व दो पुत्रिया कुमारी श्रीकाता व चन्दनबाला ने एक साथ साधना के मार्ग पर कदम बढाए ।

उडीसा प्रात मे आचार्यश्री को अपने विचरण काल मे अचिन्तनीय कठिनाइयो का सामना करना पडा किंतु आपश्री को इस तथ्य के आल्हादकारी अनुभव भी हुए कि वहा के निवासियो ने कोरे घडो की तरह आपके वचनामृत जल को पाकर अपने हृदयो को तरल सरल एव भावनामय बना लिया ।

खरियार रोड से रायपुर पधारते आचार्यश्री सामने से आती हुई एक ट्रक के कारण सडक से किनारे हटते हुए चिकनी मिट्टी पर फिसल जाने से दुर्घटनाग्रस्त हो गये । इससे आपश्री के दाये हाथ की कलई की हड्डी दो जगह से टूट गई । आपश्री ने सतो को हाथ खीचकर हड्डी बिठाने के लिये कहा । कई सतो की ऐसा करने की हिम्मत नही हुई फिर घोर तपस्वी श्री अमरचदजी म सा आगम व्याख्याता श्री कवरचदजी म सा ने हड्डी बिठाई व ऊपर से कपडे की पट्टी कसकर बाध दी । उस असह्य वेदना मे आपश्री के अदम्य साहस एव यथावत् सौम्य मुद्रादेखकर सभी आश्चर्य चकित थे । फिर वैरागी श्री धाडीवालजी डॉक्टर को लेकर भी आये लेकिन सूर्यास्त हो जाने के कारण सूजन के बावजूद आपश्री ने कोई चिकित्सा नही ली । रायपुर मे कुछ दिनो तक उपचार चला । वही पर तपस्वी मुनिश्री वृद्धिचदजी म सा का लगभग एक घटे के सथारे के साथ देहावसान हुआ । रायपुर से दुर्ग होते हुए चातुर्मास हेतु आपश्री का राजनादगाव की तरफ विहार हुआ ।

राजनादगांव मे दीक्षाओं का ऐतिहासिक महोत्सव

वि स २०२३ का आपश्री का राजनादगाव चातुर्मास अनेक मुमुक्षु आत्माओ द्वारा दीक्षाए अ गीकार करने के कारण ऐतिहासिक हो गया । यह चातुर्मास काल उस भूमि की श्रद्धागरिमा के अनुसार पाच माह का रहा । पाच माह तक अविरल रूप से आपश्री की प्रवचन गंगा का निर्मल वेगवान प्रवाह चलता रहा, जिसका यहा के नागरिको ने भरपूर लाभ उठाया । कई अजैन विद्वानो ने जैन दर्शन के स्याद्वाद आदि सिद्धान्तो पर गूढ चर्चाए करके नव ज्ञान प्राप्त किया ।

आचार्यश्री नियमित रूप से ध्यान–साधना के द्वारा आत्म शोधन किया करते थे । वैसे आपश्री यह ध्यान योग एकान्त मे ही करते थे, किंतु इस चातुर्मास मे एक बार श्री माणक

लालजी श्रीश्रीमाल और श्री हुलासमलजी मोदी ने आचार्यश्री की ध्यानमुद्रा के दर्शन कर लिये। उन्होंने वाहर वताया कि आचार्यश्री की ध्यान मुद्रा को अपलक देख भी नही सकते हैं। उस समय मुख पर विभिन्न प्रकार की भाव-भगिमाए प्रकट होती रहती हैं कि किन्ही को देखकर भावविभोर हो जाते हैं तो किन्ही से भयभीत। इसके वाद ध्यान योग के द्वारा आचार्यश्री जो गूढतम प्रयोग करते हैं, उनका दर्शन सावधानी पूर्वक वर्जनीय कर दिया गया।

इस चातुर्मास काल मे वैराग्य भावो की जैसे वाढ आ गई और यह आपश्री की ओजस्विनी वाणी का ही चमत्कार था। मद्रास से एक युवा दम्पति श्री धर्मप्रकाशजी वोका एव उनकी पत्नी दोनो दीक्षा लेने की भावना से यहा उपस्थित हुए, जिन्हे विवाह किये दो-ढाई माह ही हुए थे। उनके वैराग्य के प्रति यह कहा गया कि वे अपनी पत्नी के जीवन के साथ ऐसा करके क्या खिलवाड नही कर रहे हैं? तव स्पष्ट किया गया कि दोनो स्वेच्छापूर्वक आन्तरिक वैराग्य से ही दीक्षा के लिये तत्पर हुए हैं। उस समय आचार्यश्री ने उनको अध्ययन करने का निर्देश दिया।

सवत्सरी के अवसर पर जैन कान्फ्रेस के वरिष्ठ नेता एव प्रवुद्ध विचारक श्री जवाहर लालजी मुणोत यहा आए तव आचार्यश्री के अनुशासनवद्ध सगठन के स्वरूप को देखकर वे वहुत ही प्रभावित हुए और उन्होंने हजारो की जनमेदिनी के वीच उद्घोषणा की—श्रमण सघ के सगठन विघटन के सदर्भ मे आचार्यश्री स मेरा कुछ विचार भेद था किन्तु आपश्री के इस नये सगठन का श्रमण मर्यादित स्वरूप देखकर मैं आपश्री की चारित्रिक महिमा के समक्ष श्रद्धावनत हू। मैं सोचता हू कि काश, श्रमण सघ का भी ऐसा ही स्वरूप होता।

अपने ऐतिहासिक दीक्षा महोत्सव के आयोजन के कारण राजनाद गाव अपनी मनोरम छटा के साथ एक तीर्थ धाम जैसा हो गया। मारवाड, मेवाड आदि सुदूर क्षेत्रो से हजारो दर्शनार्थी उपस्थित हुए तो मद्रास से सेठ श्री गणपतराजजी वोहरा के नेतृत्व मे एक ट्रेन वहा पहुची। इस दीक्षा महोत्सव मे ६ मुमुक्षु आत्माओ ने—श्री सम्पतराजजी धाडीवाल रायपुर, श्री प्रेमचन्दजी ककड भोपाल, श्री पार्श्वकुमारजी भण्डारी दलोदा, श्री ज्ञानकुवरजी राणावास, कुमारी प्रेमलता जी मेहता (गुजराती) रायपुर, श्री इन्दुवालाजी श्री श्रीमाल राजनाद गाव ने आपश्री के सान्निध्य मे ससार के दलदल स निकल कर वीतराग धर्म के प्रकाशित पथ पर अपने चरण वढाये। धाडीवालजी तो छत्तीसगढ प्रातीय जैन समाज के प्रमुख और इजीनियर डॉक्टर आदि पुत्रों, पुत्रियो एव पौत्र-पौत्रियो के सयुक्त परिवार के सरक्षक थे। इस दीक्षा महोत्सव के समय घटित एक मर्मस्पर्शी प्रसग का उल्लेख आवश्यक है। उस समय सेठ सौभाग्यमलजी साढ ने अपनी सुपुत्री कुमारी मगला की दीक्षा का आज्ञा-पत्र अर्पित किया तव दूसरी सुपुत्री कुमारी श्रीकाता ने भी आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञा ग्रहण की तभी छोटी सुपुत्री ६ वर्षीय कुमारी चन्दना स्वयमेव खडी होकर आचार्यश्री से आग्रह करने लगी कि उसे भी विवाह करने का त्याग करा दिया जाय। पिताजी ने और सभी ने वहुत समझाया किन्तु वह हठ करती ही रही। वह दृश्य वडा हृदयद्रावक हो गया, और कई लोगों की आखो मे आसू छलछला आये।

धमतरी में मूर्तिपूजकों का समाधान, रायपुर में दीक्षाएं एवं दुर्ग मे वर्षावास

राजनादगाव से विहार करके आचार्यश्री ने पुन छत्तीसगढ के ग्रामीण अचलो मे परिभ्रमण करने हेतु डोगर गाव मे अपने चरण-कमल रखे । यहा पर श्रीमती गगाबाई और श्रीमती पारसबाई की भागवती दीक्षाए उल्लासमय वातावरण मे सम्पन्न हुई । यहा से अछोली गाव होते हुए आपश्री धमतरी पधारे । यहा पर मूर्तिपूजक परिवारो का अधिक प्रभाव था । उन लोगो मे जोशीले प्रबुद्ध युवक भी थे । अत स्वाभाविक रूप से मूर्ति पूजा के सम्बन्ध मे गहरी चर्चा हुई ।

धमतरी पधारने के दूसरे दिन ही किन्ही मूर्तिपूजक बन्धुओ ने आपश्री से कहा—आपकी सच्ची साधुता एव कठिन चर्याओ से हम बहुत प्रभावित हुए हैं, किंतु आप जैसे उच्च कोटि के विद्वान् शास्त्रो मे वर्णित तीर्थों को नही मानते हैं, यह हमे उचित नही लगता । आचार्यश्री ने मधुर मुस्कान के साथ उत्तर दिया—कौन कहता है कि हम तीर्थ नही मानते हैं ? वे बन्धु चौंक कर बोले—तो क्या आप शत्रु जय, गिरनार, पालीताना आदि तीर्थों को मानते हैं ? तब आपश्री ने उनसे ही प्रश्न किया—आप ही बताइये, भगवान् महावीर अथवा पहले के तीर्थंकरो ने कितने तीर्थों की स्थापना की थी ? वे झट से कह गये कि साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका के चार तीर्थों की । तब आचार्यश्री ने फरमाया—हम इन्ही चार तीर्थों को मानते हैं । भगवान् ने कोई पाचवा तीर्थ बताया नही तो शत्रु जय वगैरह को तीर्थ कैसे माने ? वे इस यथार्थ बोध से अपने तर्क की रिक्तता को समझ गये फिर भी बोले—आपका फरमाना तो यथार्थ है किंतु जहा भव्य आत्माए मोक्ष मे गईं वहा तीर्थ मानने मे क्या आपत्ति है ? आपश्री ने समाधान दिया कि अब तक अनन्त आत्माए मोक्ष मे पधारी हैं और शास्त्र दृष्टि से देखे तो पूरे अढ़ाई द्वीप मे कोई भी स्थान ऐसा नही मिलेगा जहा से कोई आत्मा मोक्ष मे न गई हो । फिर शत्रु जय आदि तीर्थों को ही तीर्थ क्यो मानते हैं जबकि पूरा अढाई द्वीप तीर्थ भूमि है । तीर्थ उसे कहते हैं जिसके द्वारा तिरा जाय याने कि मुक्ति की साधना की जा सके । अत ऐसे वे चार तीर्थ ही होते हैं। तदनन्तर मूर्तिपूजा के सम्बन्ध मे भी प्रश्न किये, जिनके उत्तर आचार्यश्री ने शास्त्रीय प्रमाणो से युक्त सौम्य एवं सद्भावनापूर्ण वातावरण मे दिये और प्रश्नकर्त्ताओ को सतुष्ट कर दिया कि शास्त्रो मे कही भी मूर्तिपूजा का विधान नही है ।

धमतरी से रायपुर पधारने पर वहा मद्रास के दम्पति श्री धर्मप्रकाशजी एव श्रीमती जयश्री की दीक्षाए सम्पन्न हुईं किन्तु दीक्षा तिथि के एक दिन पूर्व श्री धर्मप्रकाशजी की दादीजी आकर आचार्यश्री से निवेदन करने लगी—महाराज, यह धरम मेरा बहुत लाडला पोता है । इसका वैराग्य पक्का है इस कारण मैं आपके चरणो मे इसे सौंप रही हूं, किंतु मेरी एक प्रार्थना है । मैं मूल से तेरहपथी सम्प्रदाय की श्राविका रही हू । अब, जब बेटे पोतो ने सच्चा धर्म समझ लिया है तो पहले मुझ भी सच्चा धर्म धारण तो करवा दें । आचार्यश्री ने तब उन्हे

धर्म, दान, दया आदि का स्वरूप सक्षेप मे समझाया और उन्होने गुरुमत्र सम्यक्त्व धारण किया। आचार्यश्री के सदुपदेशो से ही पूरा घोका परिवार जीवन के सात्विक स्वरूप की ओर मुड गया। श्री घर्मेश प्रकाशजी अपनी मा के इकलौते बेटे थे।

आपश्री का वि.स. २०२४ का वर्षावास दुर्ग मे सम्पन्न हुआ। यहा तपस्या के अलावा धार्मिक एव सामाजिक क्राति के कई प्रेरणास्पद कार्य हुए। इसी वर्षावास मे कुमारी मगला साड तथा कुमारो शकु तला साखला (सुपुत्री श्री सम्पतलालजी साखला बीजा) ने दीक्षित होकर आपश्री की चरण शरण ग्रहण की। दुर्ग का वर्षावास समाप्त करके आचार्यश्री ने खेरागढ, छुईखदान, डोगरगढ, गादिया, बालाघाट, वारासिवनी आदि क्षेत्रो मे धर्म जागृति का शंखनाद करते हुए नागपुर मे पदार्पण किया। यहा एक ओर प्रवुद्ध जैन एव जैनेतर बधुओ ने विविध प्रश्नो द्वारा आपश्री से तत्ववोध प्राप्त किया तो दूसरी ओर समाज के कई व्यक्तियो ने श्रमण सघ से सम्वन्धित अपनी कई भ्रातियो का निराकरण किया। यहा पर दानवीर स्वर्गीय सेठ श्री सरदारमलजी पूगलिया के सुपुत्र उत्साही युवक श्री नवलचदजी पूगलिया सामायिक करने से परहेज करते थे किन्तु आपश्री की प्रेरणा से तल्लीनता पूर्वक नियमित सामायिक करने लगे। नागपुर से आपश्री अमरावती पधारे जहा आगामी चातुर्मास की विनतिया करने वडीसादडी, वडावदा, व्यावर, बीकानेर, हिगनघाट, रतलाम, आकोला, जावरा, मद्रास, वैगलोर आदि के सघ प्रमुख उपस्थित हुए। वडीसादडी संघ की विनती प्रवल थी क्योकि पिछले २१ वर्षो से वहा आचार्यश्री का चातुर्मास नही हुआ था। आचार्यश्री ने सभी विनतिया ध्यान मे लेकर सभी आगतुको के साथ वि.स. २०२५ का चातुर्मास वडीसादडी मे करने का भाव प्रकट किया।

वड़ीसादड़ी संघ की उदारता से अमरावती वर्षावास

अमरावती के युवावर्ग मे अनूठा जोश समाया हुआ था। युवा मडल के अध्यक्ष उत्साही बधुश्री प्रकाशचदजी कोठारी आचार्यश्री के वडीसादडी मे वर्षावास होने की घोषणा से व्यग्र हो उठे। वे स्थानीय सघ के स्तम्भ श्री धनराजजी मुणोत के पास पहुचकर कहने लगे कि कुछ भी हो आचार्यश्री का चातुर्मास अमरावती मे ही होना चाहिये। फिर चतुर्मुखी प्रयास आरम्भ हो गये। श्रीमती सिरेकवरबाई अपने पति श्री जवाहरलालजी मुणोत के सामने अड गई कि आप इसी समय कान्फ्रेस से त्यागपत्र दो और घर आई गगा को कतई वाहर मत जाने दो।

तब अमरावती संघ का एक शिष्टमण्डल वडीसादडी गया और उसने चातुर्मास की भिक्षा मागी। लेकिन परोसी हुई थाली आसानी से कौन छोड़ता है, वडीसादडी सघ इनकार हो गया। फिर श्री गणपतराजजी वोहरा तत्कालीन अध्यक्ष श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन सघ से सम्पर्क साधा गया और वे अमरावती चातुर्मास के लिये झोली माडकर वडीसादडी पहुचे। उन्होने समझाइश की कि बडीसादडी मे तो वाद मे भी चातुर्मास हो सकेगा किन्तु महाराष्ट्र

से एक बार निकल आने पर अमरावती मे आचार्यश्री के चातुर्मास की कोई सम्भावना नही रहेगी । आखिर में बडीसादडी संघ ने उदारता दर्शाई और तदनुसार एक प्रस्ताव पारित किया। इस प्रकार वि.स २०२५ का चातुर्मास अमरावती मे सम्पन्न हुआ।

चातुर्मास सम्बन्धी दैनिक धार्मिक प्रवत्तियो मे तब भी कोई बाधा नही आई जबकि पर्यूषण पर्व के प्रसग पर छात्रो की कुछ मागो को लेकर नगर मे तनावपूर्ण वातावरण बन गया था और पूरे शहर मे धारा १४४ लगा दी गई थी । यहा पर जैन समाज के युवावर्ग मे तो पूर्ण उत्साह था ही किन्तु स्थानीय माहेश्वरी समाज भी आपश्री के प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व से अत्यधिक आकृष्ट रहा । प्रारम्भ मे तो कई माहेश्वरी बंधुओं ने कहा कि यदि ओसवाल-समाज आचार्यश्री का चातुर्मास नही करवाएगा तो हम करवायेंगे, माहेश्वरियो ने इस चातुर्मास मे जैन धर्म के सिद्धातो को समझने एव आत्मोत्थान हेतु धार्मिक क्रियाए करने मे बहुत रुचि दिखाई।

इस चातुर्मास काल मे एक अप्रिय घटना भी घटी । हुआ यो कि अगाध महिमा मण्डित स्वर्गीय आचार्यश्री श्रीलालजी म सा ने श्री ज्ञानचदजी म सा की सम्प्रदाय को क्षेत्र विचरण आदि सहयोग दिया था । वह प्रेम सबध तब से चला आ रहा था, किन्तु सामान्य विकास के साथ ही उसमे अहं का प्रवेश दोनो सम्प्रदायो के प्रेम सम्बन्ध मे व्यवधान बनकर खडा हो गया । ऐसी स्थिति मे आचार्य प्रवर ने प्रेम बनाए रखने का अथक प्रयास किया, तथापि वह सफल नहीं हो सका । इस चातुर्मास मे ज्ञान-चर्चाए बहुत ही महत्वपूर्ण रहीं । क्षायिक सम्यक्त्व के प्रकारो एव सिद्धो मे उत्पादव्यय एवं ध्रौव्य के विषयो पर आचार्यश्री ने सूक्ष्म एव बोधगम्य विचारणा दी ।

अमरावती चातुर्मास से वहा के जैन व जैनेतर समाज मे आचार्यश्री के प्रति अपार श्रद्धा का उदय हुआ । विदाई के अवसर पर समस्त नागरिको की ओर से एक लिखित अभिनन्दन पत्र आपश्री को सेवा मे समर्पित किया जाकर पद वन्दना की गई । यहा से विहार करके आपश्री यवतमाल पधारे । यवतमाल मे धर्म ज्योति जगाते हुए आकोला, खामगाव, बुलढाणा होते हुए जामनेर पधारे । जामनेर मे श्री चम्पालालजी गोलछा खीचन निवासी ने पं रत्नश्री समर्थमलजी म सा के सम्प्रदाय से सम्बन्ध विच्छेद के बारे मे जानकारी ली और आपश्री के स्पष्टीकरण से सतुष्ट हुए ।

जामनेर से भुसावल, जलगाव, अमलनेर होते हुए जब आपश्री का पधारना, फागणा मे हुआ तो श्री उत्तमचदजी सिंघी की धर्मपत्नी श्रीमती सिरेकवरबाई ने आत्मीय हर्ष प्रकट किया और निवेदन किया—गुरुदेव, मैंने जब आपश्री के अमरावती मे दर्शन किये तब मन ही मन प्रतिज्ञा कर ली थी कि अगर मेरा फागणा गांव आपश्री की चरणरज से पावन नही होगा तो मैं जीवन पर्यन्त घी-शक्कर नही खाऊगी । मुझे प्रसन्नता है कि मेरी प्रतिज्ञा पूरी हुई । धूलिया सघ के अतीव आग्रह से आपश्री ने अक्षय तृतीया वहा पर बिताई । वहा कुछ साम्प्रदायिकता का वातावरण था जो आपश्री के प्रभाव से मिट गया ।

तदनन्तर मालवा के क्षेत्रो को पावन बनाते हुए आचार्यश्री वि स २०२६ के चातुर्मास हेतु मन्दसौर मे पधारे । यह चातुर्मास यहा की नई आबादी मे हुआ । यहा पर पर्यूषण एवं सघ अधिवेशन के प्रसंग पर मध्यप्रदेश के सूचना एव प्रसारणमत्री बालकवि वैरागी तथा राजस्थान के मुख्यमन्त्री श्री मोहनलालजी सुखाडिया ने आकर आचार्यश्री की पीयूष वर्षिणी वाणी का आनन्द लिया । आपश्री की उद्‌बोधक प्रवचन धारा एव मेघ नि सृत सरस जलधारा पूरे चातुर्मास तक बरसती रही । यहीं पर कुमारी कुसुम व कुमारी प्रेम की भागवती दीक्षाए अपार उत्साह के साथ सम्पन्न हुई ।

ज्ञान–गंगा की धारा मेदपाट की भूमि पर
और सामाजिक उत्क्रांति का नया अध्याय

मदसौर चातुर्मास के सम्पन्न हो जाने के पश्चात् धर्मवीर के चरण वीर वसुन्धरा पर आगे बढे । प्रतापगढ, पीपलिया मडी, रायपुरा, मनासा, नीमच आदि क्षेत्रो मे धर्म जागरण की दुन्दुभि बजाते हुए आचार्यश्री उदयपुर पधारे । जहां पूज्य श्री हुक्मीचदजी म सा की ऐतिहासिक परम्परा के श्रमण वर्ग का एक लघु सम्मेलन आयोजित था । इसमे श्रमण मर्यादाओ की सुव्यवस्था के सम्बन्ध मे विचार–विमर्श किया गया । यहां पर आचार्यश्री का जेल के बदियो के समक्ष प्रवचन हुआ । ऐसा अवसर बदियो के लिये पहला ही था । जेलर श्री जमनालालजी मट्टा पहले धर्म विमुख थे किन्तु आपश्री के प्रवचन से आत्मोन्मुखी बन गये । कई बदियो ने पुन अपराध न करने की प्रतिज्ञाए ली जिसकी सख्या ४५० थी ।

उदयपुर से जब आपश्री बम्बोरा पधारे तो वहा पर बडी सादडी, ब्यावर, बडावदा बीकानेर, अहमदाबाद, धुलिया, नीमच आदि क्षेत्रो के अनेक सघ चातुर्मास विनती हेतु उपस्थित हुए । किन्तु बड़ी सादडी का पलडा अधिक भारी था । अत वि स २०२७ के चातुर्मास की स्वीकृति बड़ी सादडी को प्राप्त हुई । जो गगा दो वर्ष पूर्व बड़ी सादडी सघ की उदारता से अमरावती और मंदसौर की धरती को रस-प्लावित करती हुई प्रवाहित हुई वही पतितपावनी ज्ञान गगा अब बड़ी सादड़ी की मेदपाट की भूमि पर अवतरित हो गई । इस ज्ञानगगा की धारा मे अपनी आत्माओ को निर्मल बनाकर मेवाड़वासियो ने आपश्री की सामाजिक–उत्क्राति के नये अध्याय से अपने आपको जोड दिया ।

बम्बोरा मे भीडर, खेरोदा होते हुए आपश्री का मावली पधारना हुआ । यहा पर सनवाड सघ के पदाधिकारियो ने आपश्री से सनवाड पधारने की प्रार्थना की । उस समय सनवाड मे पं. रत्न श्री समर्थमलजी म सा का भी विराजना हो रहा था, अतः आचार्यश्री ने उन्हे सम्बन्ध विच्छेद विषय पर जानकारी देते हुए उस समय तो इतना ही कहा आपके विचार मैंने सुन लिये हैं, अब मुझे जैसा उचित लगेगा वैसा विचार करूंगा । किन्तु दूसरे दिन बिना किसी पूर्व सूचना के आचार्यश्री सनवाड पधार गये । आपश्री के अनुकूल भावो के उपरात भी पण्डितजी की म.सा. के साथ सार्थक वार्ता नही हो सकी बल्कि बरसात के छीटो को लेकर आपश्री

को मिथ्या रूप से आरोपित करने की कुचेष्टा की गई, जो आरोप उन्ही के मत्थे जा गिरा ।

राजस्थान की ऐतिहासिक नगरी चित्तौडगढ मे अक्षय तृतीया के पुनीत प्रसग पर आपश्री का विराजना रहा । तदनन्तर भीलवाडा, बेंगू आदि के क्षेत्रो को जिनवाणी से सिंचित करते हुए आपश्री ने वर्षावास हेतु इतिहास प्रसिद्ध झाला मन्ना की नगरी बड़ी सादडी मे पदार्पण किया । यह चातुर्मास चमत्कारिक उपलब्धियो का प्रतीक बना । नगर प्रवेश के समय ५–६ हजार की जनमेदिनी अपने आराध्य के स्वागत मे उमड पडी । विशेषता यह रही कि कभी पैदल न चलने वाले बडी सादडी के राजराणा श्री हिम्मतसिंहजो भी श्रद्धावनत हो, तीन मील तक आचार्यश्री के साथ–साथ पैदल चलते रहे । दैनिक धार्मिक चर्चाए अतीव उत्साह के साथ चलती रही । प्रवचनो मे राजराणा के सिवाय काकाजी श्री भीमसिंहजी, क्षेत्रीय विधायक आदि जैनेतर सज्जन भी भारी सख्या मे वाणी श्रवण का लाभ लेते रहे । श्री बालकिशनजी राठौड और श्री गोविन्दलालजी शर्मा आपश्री के अनन्य भक्त बन गये । कई ब्राह्मण, स्वर्णकार तथा अन्यान्य जातियो के बधुओ ने आपश्री के मुखारविंद से दुर्व्यसन मुक्ति प्राप्त की । स्थानीय श्री सघ के स्नेहिल सेवामय व्यवहार की सभी आगन्तुक सराहना करते रहे ।

बडी सादडी चातुर्मास का भव्य प्रसग था—सात मुमुक्षु आत्माओ का ससार-परित्याग । ये भविक आत्माए थी—श्री रणजीतमलजी भडारी (पीपलिया) एव उनकी धर्मपत्नी श्रीमती विमलाबाई, श्री ताराचन्दजी वैद मूथा (अमलनेर), श्री माणकचदजी चोरडिया (उदयपुर), श्रीमती कमलाबाई (जेठाना—ब्यावर), सुश्री पुष्पा एव कुमारी सुमति (वडीसादडी) जिनका उद्धार-कार्य आचार्यश्री के मगलमय कर कमलो द्वारा सम्पन्न हुआ । इस दीक्षा प्रसग पर किन्ही विघ्न सतोषी बधुओ ने वातावरण को कुछ दूषित बना दिया था, किन्तु आचार्यश्री की अमित शान्ति, धीरता, एव दिव्य—दृष्टि का चमत्कार था कि वातावरण स्वत ही शात हो गया । यह स्मरणीय है कि राजनादगाव मे हुई छ दीक्षाओ के पश्चात् अन्तराल मे दीक्षाओ के होते हुए भी बडीसादडी मे एक साथ सात दीक्षाए सम्पन्न हुई ।

बडी सादडी, धरियावद, कानोड के क्षेत्रो की जनता ने आपश्री की सत्प्रेरणा से सामाजिक उत्क्राति मे प्रशसनीय सहयोग दिया । मृत्यु भोज करने या खाने, तिलक लेने या देने, जातिगत झगडो से धार्मिक क्षेत्र मे मनमुटाव रखने, वैरागियो की दीक्षा में बाधक बनने, मृत्यु के बाद एक महीने से अधिक शोक रखने के कानोड मे क़रीब १०० व्यक्तियो ने त्याग लिये । महिलाए भी पीछे नही रही और करीब १५० महिलाओ ने आचार्यश्री के उद्बोधन से विवाह आदि समारोहो मे गदी गालिया न गाने और न नाचने तथा सास बहुओ मे मा बेटी सा व्यवहार बनाने, पुरुषो के साथ होली नही खेलने आदि की १२ प्रतिज्ञाए ली । इसी प्रकार युवावर्ग ने भी दहेज, मादक वस्तुओ आदि के त्याग सहित १६ प्रतिज्ञाए ग्रहण की । फिर तो मेवाड और मालवा के विविध अचलो मे इस सामाजिक उत्क्रांति का विस्तार होता गया । संखानिया महाराज ग्राम तक पहुचते—पहुचते इस नई क्रांति ने नया मोड ले लिया । यहा पर

१७ गांवो के प्रतिनिधि एकत्रित हुए और प्रत्येक ग्राम के लिये एक-एक प्रतिनिधि नियुक्त हुआ। आगत प्रतिनिधियो ने सामाजिक सुधारो का श्रीगणेश करने वाले १६ नियमो की स्वय प्रतिज्ञाए ली तथा नियुक्त प्रतिनिधि ने अपने-अपने ग्राम मे ऐसी अधिकाधिक प्रतिज्ञाएं लिवाने का दायित्व ग्रहण किया। वे १६ नियम निम्नांकित हैं:—

१– मोसर या स्वामी वात्सल्य आदि किसी भी नाम से किये जाने वाले मृत्यु भोज मे न जीमने जायेंगे और न ऐसा मृत्यु भोज करेंगे।

२– विवाह मे तिलक या लेन-देन की सौदेवाजी नही करेंगे।

३– सगाई (सम्बन्ध) होने के बाद उसे कोई पक्ष नही छोडेगा।

४– मृत्यु के बाद एक मास से अधिक शोक नही रखेंगे।

५– धर्म स्थान पर सादी वेशभूषा मे जायेंगे और प्रवचन मे मौन रखेंगे।

६– स्वय यथाशक्ति धार्मिक–शिक्षण लेंगे व बालक-बालिकाओ को दिलायेंगे।

७– धर्म स्थान पर अथवा सामूहिक स्थान पर प्रतिदिन सामूहिक प्रार्थना करेंगे।

८– विवाह आदि समारोहो पर गदे गीत गाने पर रोक लगवायेंगे।

९– जाति व धार्मिक रीति रिवाजो मे व्यर्थ खर्च नही करेंगे।

१०– प्रात उठते समय व साय सोते समय ११ नवकार मन्त्र का जाप करेंगे।

११– दीक्षार्थी भाई बहनो की दीक्षा भावना मे बाधक नही बनेंगे बल्कि सहयोग देंगे और सादगी से सम्पन्न करावेंगे।

१२– कोई भी भाई-बहिन त्यौहारो के दिनो मे शोक वाले के यहां रोने व रुलाने के लिये नही जावेंगे।

१३– विवाह आदि अवसरो पर बैंड बाजो मे अनावश्यक खर्च नहीं करेंगे।

१४– प्रतिदिन एक या माह मे ३० सामायिक पूरी करेंगे।

१५– जाति सम्बन्धी व व्यक्तिगत झगडो को धर्म में नही डालेंगे।

१६– अनमेल विवाह नहीं करेंगे।

१७– आध्यात्मिक आहार हेतु धार्मिक पुस्तको का यथाशक्ति पठन-पाठन करेंगे ।

१८– सत-सतियो के यहा जहा भी दर्शनार्थी जायेंगे वहा सादा भोजन करेंगे ।

१९– नैतिक व चारित्रिक बल बढाने तथा असहायो को सहायता करने हेतु यथा शक्ति उदारता करेंगे ।

मगलवाड मे एक पुरोहित परिवार मे ५०-६० वर्षों से आपसी वैमनस्य व मुकदमे बाजी चल रही थी जो आपश्री की स्नेहधारा से चन्द समय मे विगलित हो गई । इसी प्रकार टाटगढ मे तेरहपंथ समाज मे आपसी तनाव था वह भी आपश्री की जादूभरी वाणी से शांत हो गया ।

देवगढ मे अमेरिका मे कार्यरत एव विश्व ख्याति प्राप्त उदयपुर निवासी युवा वैज्ञानिक श्री के एम सिंघवी ने आपश्री के दर्शन किये तथा धन सम्पन्न अमेरिका वासियो की अशात चित्तवृत्ति का परिचय दिया । उन्होने जैविक जीवाणु एव परमाणु के वैज्ञानिक विकास के बारे मे भी आपश्री को जानकारी देते हुए कहा कि यह विकास जैन दर्शन की परमाणु अवधारणा से मेल खाता है । श्री सिंघवी अमेरिका मे रहते हुए भी धार्मिक चर्या एव आध्यात्मिक विचारो से पूरा लगाव रखते हैं ।

देवगढ से आपश्री का विहार ब्यावर की तरफ हुआ । जहा वि स. २०२८ का वर्षावास निश्चित था ।

ध्वनि-विस्तारक यंत्रो के प्रयोग में वैज्ञानिक दृष्टि से भी जीव हिंसा

ब्यावर चातुर्मास मे तपस्या एव उपकारी कार्यों के अलावा अपूर्व दीक्षोत्सव का आयोजन हुआ जिसमे अब तक की तुलना मे सर्वाधिक नौ मुमुक्षु आत्माओ ने आपश्री के सान्निध्य मे भागवती दीक्षाए अगीकार की । इनके नाम है—श्री सौभाग्यमलजी साड स्वय, उनके सुपुत्र सुरेन्द्रकुमारजी साड, उनकी दो पुत्रिया कुमारी श्रीकाता एव कुमारी चदना तथा साड साहब की धर्मपत्नी श्रीमती सूरजदेवी साड, श्री रमेशकुमार जी बाफना (उदयपुर निवासी श्री रगलाल जी बाफना के सुपुत्र), सुश्री ताराकुमारी (रतलाम निवासी श्री सुगनमलजी पिरोदिया की सुपुत्री) कुमारी कल्याणबाई (बीकानेर निवासी श्री सम्पतलालजी बाठिया की सुपुत्री) एव कुमारी केसर (रावटो निवासी श्री नानालालजी कटारिया की सुपुत्री) एक देवगढ निवासी नगर सेठ श्री गणेशीलालजी देशलहरा की दीक्षा तो स्वतत्र रूप से पहले ही अनन्त चतुर्दशी को हो चुकी थी ।

इसे इस वर्षावास का अविस्मरणीय प्रसग मानना होगा, जब वैज्ञानिक सदर्भो मे ध्वनि विस्तारक यत्रो के विषय मे विस्तार से चर्चा हुई । देश के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त

वैज्ञानिक शिक्षाविद् एव तत्कालीन 'कोठारी-आयोग' तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डा दौलतसिंहजी कोठारी एक दिन रात्रिकालीन ज्ञान चर्चा के समय आचार्यश्री की सेवा मे पधारे। तव भीनासर निवासी सेठ चम्पालालजी बाठिया ने कोठारी सा से पूछा—डा साहब वैज्ञानिक दृष्टि से बिजली अचित्त है या सचित्त अर्थात् जीवाणु रहित होती है अथवा जीवाणु युक्त ? उन्होने गम्भीरता से उत्तर दिया—यह कहा जा सकता है कि आकाश मे कोधने वाली विद्युत् भट्टी मे जलने वाली आग एव प्रयोगशाला मे यत्रो द्वारा उत्पन्न होने वाली विद्युत् के गुण धर्मो मे कोई अन्तर नही है। यदि शास्त्रकारो की दृष्टि मे आकाश मे कोधने वाली बिजली और आग सचित्त है तो 'पावर हाउस' से उत्पन्न बिजली को भी सचित्त ही मानना पडेगा। बाठियाजी ने मूल भावना को स्पष्ट कराने की दृष्टि से पुन जिज्ञासा प्रकट की—महान् सतो के प्रवचनो मे हजारो लोगो की भीड इकट्ठी होती है ऐसी दशा मे यदि हम श्रावक ध्वनि विस्तारक यत्र (लाउड स्पीकर) लाकर महाराज के सामने रख दें तो क्या आपत्ति है ? डा० साहब ने मन्तव्य स्पष्ट किया—मैं आपके इन विचारो से सहमत नही हू। मुनियो की बिना इच्छा के अथवा उनकी इच्छा के विरुद्ध आप ध्वनि-विस्तारक यत्र नही रख सकते हैं क्योकि यह यत्र विद्युत् से चलता है और आकाशीय विद्युत् की तुलना मे यह भी सचित्त ही सिद्ध होती है। दूसरे, ध्वनि-विस्तारक यत्र के प्रयोग को मैं साधु जीवन के लिये एक परिग्रह ही मानता हू और साधुओ को इस परिग्रह से दूर ही रहना चाहिये। इस प्रकार वैज्ञानिक दृष्टि से स्पष्ट कर दिया कि विद्युत् सचित्त है और जीव हिंसा होने के कारण ध्वनि विस्तारक यत्रो का प्रयोग मुनियो के लिये निषिद्ध माना जाना चाहिये।

ब्यावर चातुर्मास से विदा होते समय २५ हजार के श्रद्धालु जन–समूह ने जिस भाव प्रवणता से आपश्री के प्रति अमित आस्था का प्रदर्शन किया वह दृश्य हृदयस्पर्शी था। ब्यावर से आपश्री का जब एक छोटे से गाव लीड़ी मे पधारना हुआ तो वहा जैन समाज मे १०० वर्ष से दो धडे होकर संघर्ष की कटुता चल रही थी जो आपश्री के प्रतिबोध से मिट गई और स्नेह व सौहार्द का वातावरण बन गया। जयपुर के १९ दिवसीय प्रवास काल मे आपश्री से गहरी ज्ञान चर्चाए करके बुद्धि जीवियो ने सतोष प्राप्त किया तो रामलीला मैदान मे रतलाम निवासी श्री हीरालालजी राका की सुपुत्री कुमारी तारा की दीक्षा भव्य समारोह के साथ सम्पन्न हुई। तभी आगामी चातुर्मास हेतु कई विनतियो मे से जयपुर श्री सघ की विनती को स्वीकृति हुई। उन दिनो जयपुर मे एक शिक्षण सस्था के आधिपत्य को लेकर मुकदमेबाजी सहित लम्बा सघर्ष चल रहा था जो आपश्री की प्रेरणा से समाप्त हो गया। उस समय केन्द्रीय कारागृह राजस्थान के मुख्याधिकारी आई.जी.पी श्री राणावत के आग्रह पर आचार्यश्री ने बदियो के मध्य प्रवचन दिया जिसमे प्रभावित होकर एक हजार बन्दियो ने यह प्रतिज्ञा ग्रहण की कि अब से ऐसी कोई प्रवृत्ति नही करेंगे, जिससे कि पुन कारागृह मे आना पडे।

राजस्थान की राजधानी मे चार माह तक
'समता दर्शन' पर हृदयस्पर्शी विवेचना

जयपुर से विहार करके आचार्यश्री ने समीपस्थ क्षेत्रो में विचरण किया। महावीर

जयन्ति के प्रसग पर टोक मे आपश्री के समीप कानोड-निवासी श्री हनुमानमलजी गाधी की सुपुत्री कुमारी चेतनश्री ने सयमी जीवन स्वीकार किया। पूज्यश्री श्रीलालजी म सा की जन्म भूमि टोक से अभूतपूर्व धर्म-जागृति की लहर फैलाते हुए एव बू दी, कोटा, चौथ का बरवाडा, श्यामपुरा एव सवाईमाधोपुर को पावन करते हुए आपश्री पुन वर्षावास हेतु जयपुर पधार गये।

जयपुर मे प्रबुद्ध लोगो की सख्या अधिक है। एक दिन कई प्रबुद्ध जन आपश्री की सेवा मे पहुचे और निवेदन करने लगे—आचार्यश्रीजी यदि पूरे चार माह तक आपके एक ही विषय पर प्रवचन हो तो उनसे प्रबुद्ध वर्ग अधिक लाभान्वित हो सकेगा। एक ही विषय के प्रतिपादन से उसकी सूक्ष्मता मे प्रवेश किया जा सकेगा। आचार्यश्री ने सहजभाव से कहा—आप ही कोई विषय सुझा दीजिये। मैं प्रयास करूगा कि उस विषय की गहनता मे प्रवेश करू। तब उन्होने कहा—हमारी सम्मति मे यह विषय—'मेरी दृष्टि मे जीवन दर्शन' श्रेष्ठ रहेगा। आजकल जीवन जीने की कला लुप्त होती जा रही है और इस विषय पर जब आपके धारा-प्रवाही प्रवचन होगे तो सब पर बडा उपकार होगा। आचार्यश्री ने तुरन्त स्वीकृति दे दी और फिर चार माह तक आपश्री लगातार 'किं जीवनम्' का स्वय ही प्रश्न सूत्र बनाकर स्वय निर्मित्त उत्तर सूत्र—'सम्यक् निर्णायक समतामय च यत्तज्जीवनम्' के माध्यम से जीवन दर्शन पर हृदयस्पर्शी विवेचना करते रहे।

जयपुर चातुर्मास के इस प्रवचनो का सग्रह पावस प्रवचन[1] के नाम से पाच भागो मे प्रकाशित हुआ है। इस चातुर्मास मे कानवन निवासी श्री रेखचदजी गोखरू तथा निकुम्भ निवासी श्री भवरलालजी (सुपुत्र श्री ओकारलालजी सहलोत) की भागवती दीक्षाए भी सम्पन्न हुई। तपाराधना का भी अनूठा रेकार्ड रहा एक ६१, एक ४१ तथा २१ व्यक्तियो ने ३१ दिवसीय तप किया और सैकडो अठाइया हुई। जयपुर का यह चातुर्मास प्रवचन प्रभावना प्रतिभा एव अन्य दृष्टियो से ऐतिहासिक रहा।

जयपुर से आपश्री ने थली प्रदेश की ओर प्रस्थान किया। बीकानेर मे बारह दीक्षाओ के भव्य-महोत्सव ने नया कीर्तिमान स्थापित किया। आष्टा निवासी श्री राजेन्द्रकुमार जी ने पहले स्वत ही दीक्षा ले ली थी, देशनोक मे उनकी विधिवत् दीक्षा हुई। दीक्षा महोत्सव मे जिन १२ भावितात्माओ ने साधना पथ अपनाया वे थी—गगाशहर निवासी श्री हुलासचद जी सेठिया एव उनके युवा पुत्र श्री राजेन्द्रकुमारजी, बीकानेर निवासी श्री जतनलालजी सोनावत उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भवरबाई, उनके किशोर सुपुत्र श्री विजयकुमारजी एव उनकी सुपुत्री कुमारी प्रभावती, अजमेर निवासी चडालिया परिवार की बहु और नागेलाव निवासी श्री रतनलालजी कोठारी की सुपुत्री श्रीमती तेजप्रभा बाई, सुश्री कुमारी कुसुम (जावरा निवासी श्री

१— आचार्यश्री के प्रवचनो से सम्बन्धित कई ग्रन्थ प्रकाशित हुए है (देखिये परिशिष्ट स १०)

शातिलालजी पगारिया की सुपुत्री), कुमारी राजमती (दलोदा निवासी श्री भवरलालजी भडारी की सुपुत्री तथा विद्वद्वर्य मुनिश्री पार्श्वकुमारजी की ससार पक्षीया भगिनी), कुमारी पुष्पा बोथरा(देशनोक निवासी श्रीघेवरचदजी बोथरा की सुपुत्री तथा शा प्र परम विदुषी महासतीजी श्री नानूकवरजी की ससार पक्षीया भतीजी), कुमारी वसता (बीकानेर निवासी श्री इन्द्रचद जी पुगलिया की सुपुत्री) और कुमारी मजु बाला (बीकानेर निवासी श्री रतनलाल जी सेठिया की सुपुत्री) ब्यावर मे हुई नो दीक्षाओ के बाद पुन एक साथ १२दीक्षाओ का भीनासर मे प्रसग बना । शासन नायक के सान्निध्य मे सघ प्रभावना निरन्तर विकास की ओर गतिशील है । इस दीक्षा महोत्सव मे २५–३० हजार की जनमेदिनी के साथ जो अद्भुत छटा दिखाई दी वह अवर्णनीय थी । विलम्ब मे अनुमति प्राप्त होने के कारण श्रीमती ललिता बाई (सुपुत्री श्री घेवरचदजी गोलछा, नोखामडी) की दीक्षा बाद मे सेठिया कोटडी मे सम्पन्न हुई । बीकानेर के समीपस्थ क्षेत्रो मे विचरणकाल मे नोखामण्डी मे कुमारी सुशीला (मोडीग्राम म प्र. निवासी श्री सूरजमलजी नपावलिया की सुपुत्री) एव कुमारी समता (अजमेर निवासी श्री पूरणमलजी कोठारी की सुपुत्री) ने आपश्री के सान्निध्य मे साधना पथ पर चरण बढाए । यहा से आपश्री वि स २०३० के वर्षावास हेतु बीकानेर पधारे ।

धोरो की धरती पर वचनामुक्ता की लड़ियां और पाच चातुर्मासो का पवित्र हार

थली प्रात के प्रवेश द्वार बीकानेर से ही भागवती दीक्षाओ के जिस मगल कृत्य का शुभारम्भ हुआ था वह थली प्रदेश मे निरन्तर चलता रहा । आपश्री के वि स २०३० से २०३४ तक के क्रमश बीकानेर, सरदारशहर, देशनोक, नोखामडी तथा गगाशहर-भीनासर के पाच चातुर्मासो मे अनेकानेक मुमुक्षु आत्माए आपश्री के भव्य नेतृत्व मे कठिन साधना के आत्म कल्याणी पथ पर अग्रसर बनती रही । बीकानेर वर्षावास मे धर्माराधना का क्रम सुव्यवस्थित रूप से चला तथा वहा के बुद्धिजीवियो एव राज्याधिकारियो आदि ने आपश्री के सदुपदेशो से प्रभावित होकर अपने विचार–आचार-विचारो मे धर्ममय परिवर्तन के सकल्प लिये, वर्षावास मे पुन कुमारी निर्मला (बडी सादडी निवासी श्री लक्ष्मीलालजी पामेचा की सुपुत्री) तथा कुमारी शाता (ब्यावर निवासी श्री मगलचदजी कोठारी की सुपुत्री) की भागवती दीक्षाए सम्पन्न हुई । वर्षावास समाप्त होने पर जब आपश्री गगाशहर–भीनासर पधारे तो वहा स्वय दीक्षित माता–पुत्री श्रीमती पारसबाई एव कुमारी सुशीला (आगम व्याख्याता श्री कवरचदजी म.सा. की भगिनी व भाजी) को वकील सा भूरचदजी देशलहरा रायपुर की सरक्षकता के आधार पर विधिवत् दीक्षा प्रदान की गई ।

भीनासर मे राजस्थान के तत्कालीन वित्तमत्री श्री चन्दनमलजी वैद आचार्यश्री के दर्शन प्रवचन हेतु उपस्थित हुए तब जैन समाज के सगठन के विषय पर गम्भीर विचार-विमर्श हुआ । आचार्यश्री ने स्पष्ट किया कि कोई भी एकता तभी स्थाई हो सकती है जब वह ठोस सैद्धान्तिक धरातल पर गढ़ी की जाय । आपश्री ने, यदि कोई ऐसी एकता होती है तो अपनी

क्षमता के अनुसार सहयोग देने की तत्परता दिखाई। इन्ही दिनो मे भू पू बीकानेर नरेश एव तत्कालीन सासद श्री करणीसिंहजी ने भी आपश्री का प्रभावशाली प्रवचन सुना तो श्रद्धापूर्वक सराहना करने लगे।

सरदारशहर की भावपूर्ण विनती को ध्यान मे रखते हुए आपश्री की विहार चर्या उस दिशा मे हुई। उन्ही दिनो तेरह पथ के आचार्यश्री तुलसी के किसी लेखन की प्रतिक्रिया मे चूरू मे अप्रिय घटना घटित हुई थी, अत आपश्री जब नापासर मे पधारे तो विश्व हिन्दू परिषद की स्थानीय शाखा की ओर से आपश्री का भव्य स्वागत किया गया। नापासर मे जैन समाज का एक भी परिवार नही है। वहा उपर्युक्त अप्रिय घटना से वातावरण कितना दूषित हो गया था, उसका परिचय तब मिला जब आपश्री के सत भिक्षार्थ गये। वहा किन्ही अनजान हिन्दु युवाओ ने यहा तक कह दिया कि ये सीता माता को दुराचारिणी कहने वाले है इन्हे डण्डा मार कर भगा दो। बाद मे उन्हे अन्तर मालूम हुआ तो उन्होने खेद प्रकट किया। इसी तरह श्री डूगरगढ मे भी आपश्री के सान्निध्य मे विश्व हिन्दू कल्याण दिवस आयोजित किया गया जिसमे आपश्री के मुखारविंद से हिन्दुत्व की सारगर्भित व्याख्या सुनकर लगभग दो हजार उपस्थित श्रोता आनदमग्न हो गये। वर्षावास के पहले आपश्री का जब सरदारशहर पधारना हुआ तो महाराजा करणीसिहजी पुन आपश्री की सेवा मे आए (सयोग से उस दिन सूर्यास्त के १०–१५ मिनिट पहले ही वे पहुचे थे। यद्यपि वे घटे भर ज्ञान चर्चा की अभिलाषा से आये थे किन्तु आचार्यश्री ने स्पष्ट कर दिया कि हमारी दैनिक चर्या के अनुसार अब प्रति–क्रमण शुरू होगा, इस कारण अधिक समय देना सम्भव नही है। उठते हुए भी उन्होने आचार्य श्री की विशुद्ध साधु मर्यादा के पालन की सराहना की। इन्ही दिनो स्थानीय सघ के प्राण श्री मोतीलालजी बरडिया एव उनके भतीजे श्री भवरलालजी बरडिया के बीच वर्षों से एक मकान को लेकर सघर्ष चल रहा था वह आपश्री के एक ही प्रवचन से सद्भावना के साथ समाप्त हो गया।

सरदारशहर मे ही राजस्थान प्रातीय भगवान् महावीर २५००वा निर्वाण महोत्सव समिति के सदस्य श्री सम्पतकुमारजी गाधा आपश्री से किन्ही आयोजनो के बारे मे सम्मति लेने के लिये आये, तब आचार्यश्री ने सौम्य स्वर मे फरमाया–हमारा तो सम्पूर्ण जीवन ही प्रभु महावीर के शासन की सेवा करने के लिये समर्पित है। अत. ये आयोजन तो आप देखिये लेकिन मेरा यह सुझाव है कि अगर सवत्सरी मनाने के बारे मे सम्पूर्ण जैन समाज का एक मत बन सके तो बडी उपलब्धि हो सकेगी। मेरी ओर से मैं आश्वासन दे सकता हू कि सावत्सरिक एकता की दृष्टि से अगर हमे अपनी परम्परा भी छोडनी पडे तो मैं किसी पूर्वाग्रह को आडे नही आने दूगा। तेरह पथ की मान्यता वाले श्री गधैया, आपश्री की ऐसी आदर्श उदारता देखकर गद्गद् हो उठे क्योकि वे अपने विचार से आपश्री को परम्परावादी माने हुए थे।

वर्षावास के पूर्व गोगोलाव मे (ज्ञान)कुमारी ललिता (ब्यावर निवासी श्री मागीलाल जी मेहता के सुपुत्री) तथा कुमारी रजना व कुमारी अ जना (उदयपुर निवासी श्री गुलाबचदजी चपलोत की सुपुत्रिया) ने आपश्री के चरणो मे सयम स्वीकार किया। यह दीक्षोत्सव ग्रीष्मकाल मे आयोजित हुआ किंतु गुरुदेव की कृपा से आकाश मे मेघ छाये रहे और समूचे वातावरण को शीतलता प्राप्त होती रही।

सरदारशहर मे साधुमार्गीय जैन परम्परा के घर वहुत कम है किन्तु जैन एव जैनेतर के श्रद्धापूर्ण सहयोग से इस वर्षावास मे प्रार्थना, प्रवचन एव ज्ञान चर्चा के कार्यक्रमो मे महती उपस्थिति रहती थी। प्रति रविवार को मध्य वाजार मे सार्वजनिक प्रवचन रखा जाता था जिसमे हजारो की सख्या मे लोग आपश्री के वचनामृत का पान करके हर्षित होते थे। इसी वर्षावास मे पीपलिया मडी के गौरवशाली पामेचा परिवार से सम्वन्धित आदर्श त्यागी घोर तपस्वी श्री अमरचन्दजी म सा के ससार पक्षीय अग्रज श्री वावूलालजी पामेचा, इन्ही की सुपुत्री पुष्पा तथा जमनालालजी की सुपुत्री श्री सुशीलाकुमारी, मधुर व्याख्यानी रणजीत मुनिजी म सा की ससार पक्षीय भानजी सुशीलाकुमारी कच्छावा तथा पजाव निवासी श्री फूलचदजी मोयल ने साधु जीवन अ गीकार किया। इन्ही दिनो गाधी विद्या मन्दिर के सस्थापक श्री कन्हैयालालजी दुग्गड ने उनकी सस्था के एक महोत्सव मे कई राजनेताओ के आने के प्रसग पर आपश्री से भी पधारने का आग्रह किया। तव आपश्री ने मधुर उत्तर दिया—राजनेताओ मे हमे क्या लेना देना है ? उनमे से यदि किसी को तत्वज्ञान की जिज्ञासा होगी तो वे स्वय आकर मुझसे परिचय प्राप्त कर लेगे।

वर्षावास की समाप्ति के पश्चात् देशनोक की पुण्य धरा ६ दीक्षाओ की सम्पन्नता के कारण तीर्थ-धाम सी वन गई। ये दीक्षार्थी थे—श्री मोतीलाजी सुराना गगाशहर, श्री रामलाल जी भूरा (देशनोक निवासी श्री नेमीचन्दजी के सुपुत्र), श्रीमती प्रेमकान्ताजी (श्री सागरमलजी सहलोत, निकुम्भ की धर्मपत्नी), कुमारी सुशीला (श्री सोहनलालजी देवासरिया, देवगढ की सुपुत्री), कुमारी किरण (श्री करणीदानजी पटवा, वीकानेर की सुपुत्री) तथा कुमारी सोमलता (श्री नानालालजी कटारिया रावटी की सुपुत्री)। यहां से आचार्यश्री ने पाचू, झज्झू जैसे छोटे-छोटे गावो मे भी धर्म का प्रकाश फैलाकर लोगो को सत्पथ का मार्ग दिखाया। पुनः भीनासर—गगाशहर मे भी ६ मुमुक्षु आत्माओ की दीक्षा का भव्य प्रसग बना। श्री कस्तूरचदजी सुराणा (गगाशहर), श्रीमती मजुला देवी (श्री भवरलालजी भूरा, देशनोक की धर्मपत्नी), कुमारी सुलोचना (श्री वावूलालजी सहलोत, कानोड की सुपुत्री), कुमारी प्रतिभा (श्री पानमल जी सेठिया, वीकानेर की सुपुत्री), कुमारी वनिता (श्री गुलावचंदजी गुलगुलिया वीकानेर की सुपुत्री तथा कुमारी सुप्रतिभा (श्री चम्पालालजी डाकरिया, गोगोलाव की सुपुत्री), आचार्यश्री की अमृतवर्षिणी वाणी से उद्बोधित होकर दीक्षित हुए।

देशनोक चातुर्मास मे जैनेतर वधुओ तथा विद्वद्वर्ग ने आपश्री की चरण सेवा मे गहरी रुचि दिखाई। वर्षावास मे ३ मुमुक्षु आत्माओं श्री प्रकाशचदजी एव श्री भवरलालजी

(श्री सम्पतलालजी भूरा देशनोक के युवा सुपुत्र) तथा कुमारी हेमलता (श्री फकीरचदजी पारख बीकानेर की सुपुत्री) का दीक्षोत्सव आपश्री के सान्निध्य मे अतीव भव्य एव प्रभावशाली रहा। चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् बीकानेर मे सेठिया परिवार के उत्साही युवक श्री गौतमकुमारजी की भागवती दीक्षा भी सम्पन्न हुई ।

नोखा मण्डी वर्षावास के पूर्व ही वहा पर कुमारी सुवा (सुदर्शना) श्री मूलचदजी पारख की सुपुत्री की दीक्षा समारोह पूर्वक सम्पन्न हुई । वर्षावास मे ही राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री हरिदेव जोशी आचार्यश्री के दर्शन-प्रवचन हेतु आये और आपश्री के धर्मपाल जागरण तथा समता दर्शन मूलक विचारो से बहुत प्रभावित हुए । यहा पर एक चमत्कारिक घटना भी घटित हुई । स्व० श्री खेमराजजी लूणावत की धर्मपत्नी ८५ वर्षीय श्रीमती पन्नीबाई पिछले ११ वर्षो से अपनी आखो की ज्योति पूरी तरह खो चुकी थी एक दिन आचार्यश्री उधर से पधार रहे थे तो इस वृद्ध महिला ने आपके दर्शन कर तीन द्रव्य से अधिक द्रव्य खाने का त्याग करवाने का निवेदन किया । आचार्यश्री ने उनकी अति वृद्धावस्था को देखते हुए वैसा न करके, उनसे पूछकर सागार १८ पापो के त्याग करवा दिये । आचार्यश्री तो पधार गये किन्तु श्रीमती पन्नी बाई अपने पौत्रो से रास्ते मे पडी चीजो को ठीक जगह पर रखने के लिये कहने लगी, तब सभी ने जाना कि यह दृष्टिदान गुरु कृपा का सुफल है । इसी वर्षावास मे विद्वद्वर्य आदर्श त्यागी श्री सम्पतराजजी म सा. की ससार पक्षीया धर्मपत्नी श्रीमती रम्भादेवी धाडीवाल ने भी आपश्री के चरणो दीक्षा अगीकार करके अपने आदर्श पति का आदर्श अनुसरण किया । यहा पर आचार्यश्री की शारीरिक अस्वस्थता रही एव तद् हेतु आपश्री ने प्राकृतिक उपचार लिया ।

गगाशहर-भीनासर चातुर्मास भी मुमुक्षु आत्माओ के साधना पथ पर अग्रसर होने से गौरवशाली चातुर्मास सिद्ध हुआ । पिछले चार–पाच वर्षो मे इस वर्षावास की दीक्षाओ को मिलाकर कुल २४ दीक्षाए सम्पन्न हुई । इनमे से ६ दीक्षाए वर्षावास के प्रवेशकाल मे सम्पन्न हुई । ये मुमुक्षु आत्माए थी—श्री ताराचन्दजी (प्रशम कुमार जी), श्री गोपीचन्दजी छल्लानी गगाशहर के सुपुत्र, कुमारी आदर्श प्रेम (श्री त्रिलोकचदजी सेठिया, उदासर की सुपुत्री), कु० श्रीकाता (श्री मेघराजजी लूणावत भीनासर की सुपुत्री), कुमारी हर्षिला (श्री किशनलालजी सोनावत, गगाशहर की सुपुत्री) तथा सुश्री साधना कुमारी (श्री सतोकचदजी भूरा, गगाशहर की सुपुत्री), चातुर्मास की समाप्ति के कुछ दिनो बाद ही बीकानेर मे इन तीन भवि आत्माओ का दीक्षोत्सव सम्पन्न हुआ—सुश्री मुन्नीकुमारी (श्री सूरजमलजी नौपावलिया, मोडी की सुपुत्री), सुश्री गुलाब कुमारी (श्री सम्पतलालजी सेठिया, उदासर की सुपुत्री) एव कुमारी मधुबाला (श्री शातिलालजी नागौरी छोटी सादडी की सुपुत्री) । आपश्री के नोखा मण्डी पदार्पण के समय ही श्री मूलचन्दजी काकरिया की दीक्षा अत्यन्त सादगी पूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुई ।

धोरो की धरती पर आचार्यश्री के पाच चातुर्मास का यह पवित्र हार बना जिसमे वचन–मुक्ता की श्वेत लडिया जुडी हुई थी । इनमे धर्मोपकार के अन्य कार्य तो सम्पन्न हुए ही

वर्षावास के पूर्व गोगोलाव मे (ज्ञान)कुमारी ललिता (व्यावर निवासी श्री मागीलाल जी मेहता के सुपुत्री) तथा कुमारी रजना व कुमारी अ जना (उदयपुर निवासी श्री गुलाबचदजी चपलोत की सुपुत्रिया) ने आपश्री के चरणो मे सयम स्वीकार किया । यह दीक्षोत्सव ग्रीष्मकाल मे आयोजित हुआ किंतु गुरुदेव की कृपा से आकाश मे मेघ छाये रहे और समूचे वातावरण को शीतलता प्राप्त होती रही ।

सरदारशहर मे साधुमार्गीय जैन परम्परा के घर वहुत कम है किन्तु जैन एव जैनेतर के श्रद्धापूर्ण सहयोग से इस वर्षावास मे प्रार्थना, प्रवचन एव ज्ञान चर्चा के कार्यक्रमो मे महती उपस्थिति रहती थी । प्रति रविवार को मध्य वाजार मे सार्वजनिक प्रवचन रखा जाता था जिसमे हजारो की सख्या मे लोग आपश्री के वचनामृत का पान करके हर्षित होते थे । इसी वर्षावास मे पीपलिया मडी के गौरवशाली पामेचा परिवार से सम्वन्धित आदर्श त्यागी घोर तपस्वी श्री अमरचन्दजी म सा के ससार पक्षीय अग्रज श्री वावूलालजी पामेचा, इन्ही की सुपुत्री पुष्पा तथा जमनालालजी की सुपुत्री श्री सुशीलाकुमारी, मधुर व्याख्यानी रणजीत मुनिजी म सा की ससार पक्षीय भानजी सुशीलाकुमारी कच्छावा तथा पजाव निवासी श्री फूलचदजी मोयल ने साधु जीवन अ गीकार किया । इन्ही दिनो गाधी विद्या मन्दिर के सस्थापक श्री कन्हैयालालजी दुग्गड ने उनकी सस्था के एक महोत्सव मे कई राजनेताओ के आने के प्रसग पर आपश्री से भी पधारने का आग्रह किया । तव आपश्री ने मधुर उत्तर दिया—राजनेताओ से हमे क्या लेना देना है ? उनमे से यदि किसी को तत्वज्ञान की जिज्ञासा होगी तो वे स्वय आकर मुझसे परिचय प्राप्त कर लेंगे ।

वर्षावास की समाप्ति के पश्चात् देशनोक की पुण्य धरा ६ दीक्षाओ की सम्पन्नता के कारण तीर्थ-धाम सी वन गई । ये दीक्षार्थी थे—श्री मोतीलाजी सुराना गगाशहर, श्री रामलाल जी भूरा देशनोक निवासी श्री नेमीचन्दजी के सुपुत्र), श्रीमती प्रेमकान्ताजी (श्री सागरमलजी महलोत, निकुम्भ की धर्मपत्नी), कुमारी सुशीला (श्री सोहनलालजी देवासरिया, देवगढ की सुपुत्री), कुमारी किरण (श्री करणीदानजी पटवा, वीकानेर की सुपुत्री) तथा कुमारी सोमलता (श्री नानालालजी कटारिया रावटी की सुपुत्री) । यहा से आचार्यश्री ने पाचू, झज्झू जैसे छोटे-छोटे गावो मे भी धर्म का प्रकाश फैलाकर लोगो को सत्पथ का मार्ग दिखाया । पुन. भीनासर—गगाशहर मे भी ६ मुमुक्षु आत्माओ की दीक्षा का भव्य प्रसग बना । श्री कस्तूरचदजी सुराणा (गगाशहर), श्रीमती मजुला देवी (श्री भवरलालजी भूरा, देशनोक की धर्मपत्नी), कुमारी सुलोचना (श्री वावूलालजी सहलोत, कानोड की सुपुत्री), कुमारी प्रतिभा (श्री पानमल जी सेठिया, वीकानेर की सुपुत्री), कुमारी वनिता (श्री गुलावचदजी गुलगुलिया वीकानेर की सुपुत्री तथा कुमारी सुप्रतिमा(श्री चम्पालालजी काकरिया, गोगोलाव की सुपुत्री), आचार्यश्री की अमृतवर्षिणी वाणी से उद्वोधित होकर दीक्षित हुए ।

देशनोक चातुर्मास मे जैनेतर वधुओ तथा विद्वद्वर्ग ने आपश्री की चरण सेवा मे गहरी रुचि दिखाई वर्षावास मे ३ मुमुक्षु आत्माओ श्री प्रकाशचदजी एव श्री भवरलालजी

(श्री सम्पतलालजी भूरा देशनोक के युवा सुपुत्र) तथा कुमारी हेमलता (श्री फकीरचदजी पारख बीकानेर की सुपुत्री) का दीक्षोत्सव आपश्री के सान्निध्य मे अतीव भव्य एव प्रभावशाली रहा। चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् बीकानेर मे सेठिया परिवार के उत्साही युवक श्री गौतमकुमारजी की भागवती दीक्षा भी सम्पन्न हुई ।

नोखा मण्डी वर्षावास के पूर्व ही वहा पर कुमारी सुवा (सुदर्शना) श्री मूलचदजी पारख की सुपुत्री की दीक्षा समारोह पूर्वक सम्पन्न हुई । वर्षावास मे ही राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री हरिदेव जोशी आचार्यश्री के दर्शन-प्रवचन हेतु आये और आपश्री के धर्मपाल जागरण तथा समता दर्शन मूलक विचारो से बहुत प्रभावित हुए । यहा पर एक चमत्कारिक घटना भी घटित हुई । स्व० श्री खेमराजजी लूणावत की धर्मपत्नी ८५ वर्षीय श्रीमती पन्नीबाई पिछले ११ वर्षों से अपनी आखो की ज्योति पूरी तरह खो चुकी थी एक दिन आचार्यश्री उधर से पधार रहे थे तो इस वृद्ध महिला ने आपके दर्शन कर तीन द्रव्य से अधिक द्रव्य खाने का त्याग करवाने का निवेदन किया । आचार्यश्री ने उनकी अति वृद्धावस्था को देखते हुए वैसा न करके, उनसे पूछकर सागार १८ पापो के त्याग करवा दिये । आचार्यश्री तो पधार गये किन्तु श्रीमती पन्नी बाई अपने पौत्रो से रास्ते मे पडी चीजो को ठीक जगह पर रखने के लिये कहने लगी, तब सभी ने जाना कि यह दृष्टिदान गुरु कृपा का सुफल है । इसी वर्षावास मे विद्वद्वर्य आदर्श त्यागी श्री सम्पतराजजी म सा की ससार पक्षीया धर्मपत्नी श्रीमती रम्भादेवी घाडीवाल ने भी आपश्री के चरणो दीक्षा अगीकार करके अपने आदर्श पति का आदर्श अनुसरण किया । यहा पर आचार्यश्री की शारीरिक अस्वस्थता रही एव तद् हेतु आपश्री ने प्राकृतिक उपचार लिया ।

गगाशहर-भीनासर चातुर्मास भी मुमुक्षु आत्माओ के साधना पथ पर अग्रसर होने से गौरवशाली चातुर्मास सिद्ध हुआ । पिछले चार-पाच वर्षों मे इस वर्षावास की दीक्षाओ को मिलाकर कुल २४ दीक्षाए सम्पन्न हुई । इनमे से ६ दीक्षाए वर्षावास के प्रवेशकाल मे सम्पन्न हुई । ये मुमुक्षु आत्माए थी—श्री ताराचन्दजी (प्रशम कुमार जी), श्री गोपीचन्दजी छल्लानी गगाशहर के सुपुत्र, कुमारी आदर्श प्रेम (श्री त्रिलोकचदजी सेठिया, उदासर की सुपुत्री), कु० श्रीकाता (श्री मेघराजजी लूणावत भीनासर की सुपुत्री), कुमारी हर्षिला (श्री किशनलालजी सोनावत, गगाशहर की सुपुत्री) तथा सुश्री साधना कुमारी (श्री सतोकचदजी भूरा, गगाशहर की सुपुत्री), चातुर्मास की समाप्ति के कुछ दिनो बाद ही बीकानेर मे इन तीन भवि आत्माओ का दीक्षोत्सव सम्पन्न हुआ—सुश्री मुन्नीकुमारी (श्री सूरजमलजी नीपावलिया, मोडी की सुपुत्री), सुश्री गुलाब कुमारी (श्री सम्पतलालजी सेठिया, उदासर की सुपुत्री) एव कुमारी मधुबाला (श्री शातिलालजी नागौरी छोटी सादडी की सुपुत्री) । आपश्री के नोखा मण्डी पदार्पण के समय ही श्री मूलचन्दजी काकरिया की दीक्षा अत्यन्त सादगी पूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुई ।

धोरो की धरती पर आचार्यश्री के पाच चातुर्मास का यह पवित्र हार बना जिसमे वचन-मुक्ता की श्वेत लडिया जुडी हुई थी । इनमे धर्मोपकार के अन्य कार्य तो सम्पन्न हुए ही

किन्तु इतनी बडी सख्या मे मुमुक्षु आत्माओ का आपश्री के चरणो मे जीवन समर्पण आश्चर्य ही रहा ।

दो आचार्यों का स्नेह-मिलन, संयुक्त उद्घोष एवं जीवन–व्यवहार की पचसूत्री योजना

आचार्यश्री थली प्रात मे लगभग पाच वर्षों तक धर्मोद्योत प्रसारित करके एव ७१ वैराग्याभिभूत आत्माओ को सयम सबल प्रदान करके नागौर, डेह, कुचेरा, आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए भोपालगढ पधारे । वहा आचार्यश्री हस्तीमलजी म सा पहले से विराज रहे थे अत यहा पर दोनो आचार्यो के स्नेह–मिलन का सुखद सयोग हुआ । ये दोनो गणाधीश जिस दिन यहा मिले, वह भारतीय गणराज्य का गणतन्त्र दिवस था तो 'गुरुणागुरु' गणेशाचार्य का सोलहवा स्वर्गारोहण दिवस भी था । यह भी एक सयोग था कि दोनो गणाधीश अपनी-अपनी पट्ट परम्परा से अष्टम पट्टधर हैं और उस समय दोनो अष्ट–अष्ट श्रमण शिष्यो से परिवृत थे। यह स्नेह मिलन ऐतिहासिक ख्याति का धारक रहा क्योकि दोनो सघ नायको ने विस्तृत एव गम्भीर मन्त्रणा करके निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा हेतु सुदृढ पृष्ठभूमि का निर्माण किया।

दोनो आचार्यो ने अपनी विचार चर्चा के निष्कर्ष रूप उस समय एक सयुक्त उद्घोष (देखिये परिशिष्ट स ६) भी जारी किया जो दोनो गणाधीशो एव दोनो गणो के मध्य पारस्परिक प्रेम सम्बन्ध का प्रतीक माना जा सकता है । वह सयुक्त उद्घोष समाज मे फैले हुए राग-द्वेष एव निन्दामय कलुषित वातावरण को दूर करने तथा सद्भावनामय एकता का वातावरण बनाने के उद्देश्य से जारी किया गया । यदि कुछ आगम प्रेमी मुनिराज भी आचार शुद्धि के साथ सगठन की भूमिका पर आ सके तो बडे सगठन के निर्माण का मार्ग निर्बाध हो सकता है । इसके पीछे यह भी भावना थी कि कम से कम एक सवत्सरी की मान्यता तथा एक व्याख्यान की व्यवस्था भी समाज–सम्मत बन जाय तो एकीकरण की दिशा मे कदम आगे बढने की सभावना साकार हो सकती है । इस उद्घोष मे यह भी आशा की गई कि एकता का ऐसा प्रयास चाहे वह कुछ चुने हुए बिन्दुओ पर ही सफलता प्राप्त करे लेकिन इस एकता का विस्तार समग्र जैन समाज तक हो सके तो अति श्रेष्ठ होगा ।

भोपालगढ मे स्नेह मिलन की यह समन्वयात्मक सद्भाव की उपलब्धि देकर दोनो आचार्यश्री भिन्न–भिन्न मार्गो से जोधपुर के लिये प्रस्थान कर गये । तदनन्तर दोनो का जोधपुर मे फिर से मिलना हो गया जहा साथ–साथ प्रवचन देने आदि के द्वारा सद्भाव मे अभिवृद्धि हुई। आपश्री का जोधपुर मे एक लम्बे अर्से के बाद पधारना हुआ था अत. नागरिको के हृदय धर्मभावनाओ से ओत–प्रोत हो गये ।

आचार्यश्री उस समय जोधपुर के उपनगर सरदारपुरा मे विराजे । वहा पर आपश्री ने समता पर मार्मिक प्रवचन दिये एवं उनके माध्यम से जन-जागरण और सामाजिक उत्क्रांति

हेतु अपना रचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इस दृष्टिकोण को जीवन व्यवहार की पच-सूत्री योजना का नाम दिया गया। आपश्री ने इस पच सूत्री योजना की भूमिका मे फरमाया–अपने मूल स्वरूप से सभी आत्माएं एक समान होती हैं। सिद्धात्माएं तो सर्वप्रकारेण एक समान ही होती हैं किन्तु ससाराध्यो के स्वरूप पर अपने कर्मों के आवरण चढे हुए होते हैं, जिन्हे उतार फैंकने की क्षमता सभी भव्य आत्माओ मे समान होती है। इस समता के जागरण की क्षमता भी सभी आत्माओ मे समान होती है। आवश्यकता यही है कि इस क्षमता को अपने समतामय पुरुषार्थ से सम्पूर्ण रूप मे विकसित कर ली जाय। जो पिंड मे वही ब्रह्माड मे है। जैसे सभी अवयवो की समता से पिंड एक रूप होकर सचालित होता है उसी प्रकार यह ब्रह्माड भी जड चेतन पिंडो के नियमन से गतिशील रहता है। वैसे तो समता एक व्यक्ति से लेकर ब्रह्माड तक स्वाभाविक रूप मे फैली हुई है। किंतु यह व्यक्ति ही बाहरी विषमताओ के चक्रव्यूह मे फसकर अपनी समता को विकृत बनाता है तो सासारिक व्यवस्था की समता को भी बिगाड देता है। इस दृष्टि से व्यक्ति अपने जीवन मे समता का सम्यक् दर्शन करे और समता की अपार शक्ति को उद्घाटित करे तो स्व-पर के जीवन व्यवहार मे समता के समावेश को सफल आयाम दे सकता है।

व्यक्ति के आचरण क्रम को समता की दिशा मे अग्रगामी बनाने के लिये आचार्यश्री ने जिस पचसूत्री योजना का उपदेश दिया उसके पाच सूत्र निम्नाकित है—

१–सबकी समानता मे आस्था–प्रत्येक व्यक्ति न केवल सम्पूर्ण मानव समाज के साथ अपितु समस्त प्राणी जगत के साथ एकात्म भाव का अभ्यास करे और सभी आत्माओ को निजात्मा के समान समझे–समझे ही नही बल्कि हृदय मे अभिन्नता का भाव बनाकर सभी के दु ख-दर्द से द्रवित होना सीखे और ऊ च-नीच, वर्ण-वर्ग, जाति-कुल, स्पृश्य–अस्पृश्य के कृत्रिम भेदो के मूल मे रही हुई समानता मे दृढ आस्था भी रखे।

२–समाज के गुण-कर्म आधारित वर्गीकरण मे विश्वास–प्रत्येक व्यक्ति समाज मे वर्गीकरण का आधार व्यक्ति, सत्ता अथवा सम्पत्ति को न माने बल्कि गुण एव कर्म के आधार पर सामाजिक वर्गीकरण मे विश्वास रखे एव इस आधार को बनाने तथा मजबूत करने की चेष्टा करे। इसी प्रकार वह स्वस्थ रीति से ग्राम धर्म, नगर-धर्म एव राष्ट्र धर्म आदि का पालन करने मे स्वय विश्वास रखे और दूसरो का विश्वास बनाने मे सहायता दे। वह आवश्यकता से अधिक सम्पत्ति अथवा जीवनोपयोगी पदार्थो का सचय न करे और यदि सचित हो तो अपने आपको उनका ट्रस्टी माने तथा उनके सम वितरण की भावना रखे। सत्ता और सम्पत्ति को आसक्ति के साथ स्वार्थ मूलक न माने और न उनका दुरुपयोग करे। इन शक्तियो को वह जन सेवा एव लोक कल्याण के साधन माने। इस प्रकार के आचार–विचार बनाकर व्यक्ति समाज के सभी वर्गों को गुणो और कर्मो पर आधारित बनाने मे पूर्ण विश्वास करे तथा प्रयत्नशील बने।

३–व्यक्तिगत जीवन-शुद्धि का अभ्यास–प्रत्येक व्यक्ति सभी प्रकार के दुर्व्यसनो, आडम्बरो तथा बनावटी दिखावो को छोडने की चेष्टा रखे। वह अपने जीवन को सादा, सरल और

सहज बनावे ताकि उसके जीवन-व्यवहार मे दोहरापन न रहे । कथनी और करनी के अन्तर को जितने अ शो मे वह मिटाता रहेगा उतना ही उसका जीवन सत्यनिष्ठ बनता जायेगा । माया और कपट मिटेगा तो प्रामाणिकता बढेगी । मन, वचन और कर्म से वह सदाशयी बनता जावेगा तो यह निश्चित है कि वह स्वय, परिवार, समाज, राष्ट्र आदि के विरुद्ध ऐसा कोई कार्य नही करेगा जो कलक स्वरूप माना जाय । जीवन के मूल्यो मे श्रेष्ठता आ जाने पर वह व्यक्ति ससार मे महान् माना जायेगा तो आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी परम आत्मार्थी बन जायेगा ।

४—गरीब अमीर की भेदजनक सामाजिक कुरीतियो का परित्याग—प्रत्येक व्यक्ति विवाह आदि मे तिलक, दहेज आदि की सौदेबाजी और अन्य समारोहो मे भी ऐसी आडम्बरी वृत्ति का त्याग करे जिससे गरीब और अमीर का भेद कटु विषमता के रूप मे दिखाई न दे । धन के दिखावे को अपने रहन-सहन के स्तर मे भी प्रकट नही करे । सादा जीवन रखे और सरलता मे व्यवहार करे ताकि गरीब उसमे विश्वास रख सके और वह गरीबो के प्रति सहानुभूतिपूर्ण सहयोग बना सके । निरर्थक खर्चों को रोक कर वह अपने अतिरिक्त धन को जन कल्याण के कार्यो मे लगावे तथा सामाजिक विषमता बढाने वालो के साथ अहिसक रीति से परिवर्तनकारी प्रयोग करे ।

५-नियमितदिनचर्या-पूर्वक समता भाव की साधना—प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन कम से कम एक घटे तक स्वाध्याय एव समतापूर्ण चिन्तन के द्वारा अपने आचरण की समीक्षा करता रहे और भावी योजना बनाता रहे कि वह किस प्रकार सभी क्षेत्रो मे विषमता मिटाते हुए समता का अधिकाधिक प्रसार किन उपयो से कर सकता है । स्वय की दिनचर्या को भी साधना पूर्ण बनावे और प्रतिदिन समाज सेवा एव जनकल्याण की प्रवृत्तियो मे कुछ न कुछ अपना सहकार अवश्य दे ।

मरुधरा के सुदूर अ चलो में व्यापक विचरण और अनेक मुमुक्षु आत्माए सयम के पथ पर

वर्षावास के पूर्व जोधपुर के इस प्रवासकाल मे ही पाच मुमुक्षु आत्माओ की भव्य दीक्षाए हुई । यह दीक्षोत्सव तृतीयाचार्य पूज्य श्री उदयसागरजी म सा. की पुण्य जन्म स्थली मे अभूतपूर्व रीति मे सम्पन्न हुआ । ये पुण्यात्माए थी—सजग अध्यापक ७२ वर्षीय प श्री माधव लालजी (बम्बोरा), कुमारी राजश्री एम ए (प्रि एव जैन सिद्धान्त शास्त्री श्री जीवनसिहजी कोठारी, उदयपुर की सुपुत्री), कुमारी शशिकाता (श्री मदनलालजी गदिया, बडीसादडी की सुपुत्री), कुमारी कमला (श्री गौतमलालजी पिरोदिया रतलाम की सुपुत्री) एवं कुमारी सुशीला (श्री गणेशीलालजी बोथरा, देशनोक की सुपुत्री) । जोधपुर मे आपश्री के रूप मे इस पाट परम्परा के किसी आचार्य का ४८ वर्षो बाद आगमन हुआ था ।

यहा से आपश्री बालेसर पधारे जहा अपूर्व धर्म जागरणा हुई । यही वि.स २०३५ मे आपश्री के चातुर्मास के लिये जोधपुर श्रीसघ को स्वीकृति प्राप्त हुई । बालेसर मे १५ वर्षो

से चला आ रहा सामाजिक मतभेद आपश्री की सत्प्रेरणा से पारस्परिक प्रेम मे परिवर्तित हो गया । यहा से ग्रामीण अंचलो मे धर्मोत्साह बढाते हुए आपश्री का पदार्पण अक्षय तृतीया पर बालोतरा मे हुआ जहा ६३ तपस्वियो ने पारणे किये । यहां से गढ सिवाना पधारने पर श्रमण सघीय सत श्री हीरामुनिजी के सान्निध्य मे सम्पन्न कुमारी सुमिता की दीक्षा विधि एव प्रत्याख्यान आपश्री द्वारा करवाया गया । फिर मोकलसुर, समदडी आदि क्षेत्रो मे वचनामृत की वर्षा करते हुए आपश्री वर्षावास हेतु जोधपुर पधारे ।

जोधपुर मे स्नेह सम्बन्ध स्थापित हो जाने के कारण आपश्री के साथ आचार्यश्री हस्तीमलजी म सा के सन्त श्री लक्ष्मीचन्दजी म सा का सयुक्त चातुर्मास धार्मिक जागृति की दृष्टि से अनुपम रहा । आचार्यश्री के प्रवचनो मे हजारो की उपस्थिति रहती थी और स्थान की कमी पडने से बार-बार प्रवचन स्थल बदलने पडे । इससे आचार्यश्री की निरन्तर बढती हुई श्रद्धा सम्पन्न लोकप्रियता की जानकारी होती है । इस वर्षावास मे विशेष रूप से वकीलो एव न्यायाधीशो ने ज्ञान चर्चा का अधिक लाभ उठाया । वर्षावास मे चार भव्य आत्माओ—श्री रतनलालजी (श्री दाडमचन्दजी चत्तर रतलाम के सुपुत्र), श्रीमती निर्मला देवी (स्व श्री जतनलालजी सेठिया, गगाशहर की धर्मपत्नी), कुमारी चन्द्रकला (श्री मोहनसिंहजी बाबेल, कानोड की सुपुत्री) तथा कुमारी कुमुद (श्री धूडचदजी बोथरा, गगाशहर की सुपुत्री) ने आपश्री के चरणो मे सयमी जीवन ग्रहण किया ।

चातुर्मास समाप्त होने पर आपश्री ने मरुधरा के सुदूर अचलो मे व्यापक विचरण किया । जोधपुर से छोटे-छोटे गाव कस्बो मे धर्म-भावनाए जगाते हुए मथाणिया, ओसिया होते हुए आचार्यश्री लोहावट पधारे । यहा २०-२२ दिन तक विराजे, जिस अवधि में जैनो के सिवाय विश्णोई, सेवक, दर्जी, माली, स्वर्णकार आदि जैनेतर वधुओ ने भी बडी सख्या मे जैन विधि के अनुसार दयाव्रत आदि धर्म साधनाए की । इन्होने दुर्व्यसनो के त्याग भी लिये । फिर फलौदी मे भी आपश्री का २६ दिन तक विराजना रहा । वहां से खीचन पधारे जहा ३५० छात्रो एव अन्य वधुओ ने आपश्री के सदुपदेशो से प्रभावित होकर मद्य, मास, धूम्रपान आदि दुर्व्यसनो के त्याग लिये । आपश्री का होली चातुर्मास मेडतासिटी मे हुआ, जहा वि स २०३६ के वर्षावास की स्वीकृति अजमेर सघ को प्रदान की गई । यहा से आपश्री ब्यावर पधारे । मार्ग मे बावरा गाव मे आपश्री का उपदेशामृत पीकर सैकडो राजपूतो ने दुर्व्यसनो का त्याग किया । कुवर श्री रतनसिंहजी विदाई के समय इतने भावुक हो गये कि उनकी आखो मे आसुओ की धारा बहने लगी । वे बोले—आचार्यश्रीजी, मेरा दिल तो पत्थर जैसा है कि मैं कभी नही रोता हू, किंतु आपके जादू ने उसे भी पिघला कर मोम कर दिया है ।

ब्यावर मे विशाल दीक्षा महोत्सव का भव्य रीति से आयोजन हुआ, जहा १५ पुण्यशालिनी आत्माओ ने आपश्री के सान्निध्य मे सयम के पथ पर पग बढाने की प्रतिज्ञाएं ग्रहण की । ३०-४० हजार की अपार जनमेदिनी के बीच इस दीक्षोत्सव की छटा दर्शनीय थी । दीक्षित होने वाली मुमुक्षु आत्माए थी—श्री जितेशकुमारजी (श्री नेमीचन्दजी पटवा, पूना के

सुपुत्र), श्री शांतिलालजी (श्री नगराजजी खेरी–महाराष्ट्र के सुपुत्र), धायमातृपद विभूषित कर्मठ सेवाभावी, शासन प्रभावक इन्द्रचन्दजी म सा के ससार पक्षीय लघु भ्राता श्री नगराजजी चोरडिया, श्री विनयकुमारजी (श्री मोहनलालजी बाठिया, व्यावर के सुपुत्र), कुमारी पुखराज एम ए. साहित्यरतन श्री सौभाग्यमलजी बुरड, महिदपुर की सुपुत्री), कुमारी मधुबाला बी ए (श्री सोहनलालजी सुराना, इन्दौर की सुपुत्री), कुमारी काता (श्री आनन्दमलजी भूरा, देशनोक की सुपुत्री), कुमारी विजया (श्री पारसमलजी छिंगावत, पीपलिया मण्डी की सुपुत्री) कुमार दर्शना (श्री जयचन्दलालजी छल्लाणी, देशनोक की सुपुत्री), कुमारी प्रवीणा (श्री सागरमलजी पोरवाल मदसौर की सुपुत्री), कुमारी शकुतला (श्री लूणकरणजी सुखानी, वीकानेर की सुपुत्री), कु० कमला (श्री मोतीलालजी कोठारी, उदयपुर की सुपुत्री) कुमारी स्नेहलता (श्री रामलालजी सेठिया गगाशहर, की सुपुत्री), कुमारी पुष्पा (श्री ख्यालीलाल जी मुणोत, बडीसादडी की सुपुत्री), कुमारी मीना (श्री किशनलालजी सोनावत, गगाशहर की सुपुत्री) एव सुश्री जतनकुमारी (श्री रतनलालजी कोठारी व्यावर की सुपुत्री) ।

यहा पर आपश्री के आज्ञानुवर्ती ११८ सत–सतिया एकत्रित हुए अत एक लघु सम्मेलन के रूप मे आचार–पद्धत्ति पर विचारणा के साथ ही आचार्यश्री ने सबको साधु-जीवन की सजगता का सकेत दिया । विश्व हिन्दू परिषद् के महामन्त्री श्री एम पी डेवेकर तथा मंत्री श्री पाटोदिया आदि ने आपश्री से सामाजिक क्राति का मार्गदर्शन प्राप्त किया । अक्षय तृतीया के पारणो का प्रसग पीपलिया कला मे उपस्थित हुआ, जहा के निवासी दानवीर श्रेष्ठी श्री गणपतराजजी बोहरा हैं । आचार्यदेव के यहा पर पधारने की स्मृति को चिरस्थायी बनाने की भावना से श्री बोहराजी ने समाजोत्थान के कार्यों हेतु १० लाख रुपये के एक मुश्त आदर्शदान की घोषणा की । इतना ही नही, उन्होने यह भी घोषित किया कि सरकारी नियमो के अन्तर्गत स्वीकृति मिलने पर यह राशि बढाकर २० लाख और धारा ३५(२) ए के अन्तर्गत स्वीकृति मिलने पर एक करोड तक कर दी जायेगी ।

यहा से आचार्यश्री कुशालपुरा पधारे तो वहा विराजित प. रत्न मुनि श्री लालचद जी म सा (स्व श्री जयमलजी म सा के सम्प्रदाय) ने अपनी अपनी अनुभूति का नया सत्य प्रकट किया और कहा—आचार्यश्री जी, इतने दिन तो मैं सुनता ही था किन्तु आज तो प्रत्यक्ष साक्षात् देख रहा हू कि आप मे स्व० आचार्यश्री गणेशीलालजी म.सा ही प्रतिबिम्बित हो रहे हैं । क्या आपकी छवि मे स्वर्गीय आचार्यश्री का अवतरण हो गया है ? आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए फरमाया—भोले भक्त तो श्रद्धातिरेक से ऐसे ही बोल दिया करते हैं, लेकिन आप भी वैसे ही कहने लगे । फिर उनमे परस्पर वार्तालाप होता रहा ।

आपश्री यहा से निम्बाज, जैतारण, बलूदा, कुडकी, बींजायल, गोविन्दगढ, पोसांगन, नागेलाव, मसा, लोडी, जेठाना आदि क्षेत्रो मे धर्म–जागरण करते हुए वर्षावास हेतु अजमेर पधारे ।

अजमेर का यह चातुर्मास धार्मिक, सामाजिक एव शैक्षणिक उत्क्रांति की दृष्टि से वहा के पिछले ७० वर्ष के इतिहास मे अभूतपूर्व सिद्ध हुआ । अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के उपलक्ष मे आपश्री के सान्निध्य मे जैन विद्वत्परिषद् तथा साधुमार्गी जैन सघ के सयुक्त तत्वावधान मे बाल शिक्षा के सम्बन्ध मे एक विचार गोष्ठी आयोजित हुई जिसमे देश के विभिन्न क्षेत्रो से ८० विद्वान् सम्मिलित हुए । आयोजक थे डॉ नरेन्द्र भानावत। तीन दिन तक डॉ नेमीचन्द जैन, (प्रो इन्दौर विश्व विद्यालय), डॉ महावीर शरण जैन, (प्रो जबलपुर विश्वविद्यालय), तथा डॉ प्रेमसुमन जैन (प्रो उदयपुर विश्वविद्यालय) ने बाल शिक्षा-दीक्षा एव मनोविज्ञान के विभिन्न विषयो पर सारपूर्ण वार्ताए प्रस्तुत की । आचार्यश्री जी ने सम्पूर्ण वार्ताओ एव विचार विमर्श का समापन करते हुए एक प्रेरक, दिशा-निर्देशक तथा मार्मिक उद्बोधन फरमाया इसमे आपश्री ने आह्वान किया कि बालक के चरित्र निर्माण की समस्या उनकी अपनी समस्या कम लेकिन सुज्ञजनो का दायित्व अधिक है । सभी चाहते हैं कि बालक सभी प्रकार से सुन्दर बने तो इसमे उसकी भीतरी सुन्दरता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिये । बालक की स्वाभाविकता का सहज विकास तभी किया जा सकता है जब वर्तमान शिक्षा पद्धति के दोष दूर किये जाय तथा बालक के चारो ओर के वातावरण को सुधारा जाय । इस प्रकार के कई उपायो से बालक के कोमल मन मे सुसस्कारो का एव समता की भावना का बीजारोपण किया जा सकेगा । इस वर्षावास मे सघर्षरत दो भाइयो — श्री नेमीचन्दजी व श्री अनोपचन्दजी चोपडा का आपश्री की सत्प्रेरणा से स्नेहपूर्ण भ्रातृ-मिलन हो गया ।

राणावास की ज्ञान-वाटिका मे
नव-सूत्र के नव-सुमन विकसे

अजमेर वर्षावास की समाप्ति के पश्चात् भी आचार्यश्री का अपने गाठ के दर्द के उपचार हेतु अजमेर के उपनगर आनासागर लिंक रोड स्थित श्री गुमानमल जी नाहटा के बगले पर करीब एक माह पच्चीस दिन अधिक विराजना हुआ । हड्डी के दर्द का उपचार करने मे दक्ष श्री श्यामजी पहलवान का नि स्वार्थ उपचार लिया गया । दर्द मे साधारण सुधार होने पर आपश्री ने वहा से विहार कर दिया और नसीराबाद, मसूदा, रामगढ, रामपुरा, जालिया, विजयनगर, गुलाबपुरा, जयनगर, शम्भूगढ, आसीद, भीम, बडा खेडा, जाम्बूडा, खारण, सिरियारी आदि क्षेत्रो मे समता का सदेश गुजायमान करते हुए आचार्यश्री के सोजतरोड विराजने पर धर्म जागृति का उत्साह पूर्ण वातावरण रहा । यह आपश्री के एकत्वभूत व्यक्तित्व का सुप्रभाव था कि यहा पर वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ के अध्यक्ष, तेरहपथी सभा के अध्यक्ष तथा सोजतरोड ग्राम पचायत के सरपच तीनो ने सयुक्त रूप से लिखित एव प्रकाशित अभिनन्दन पत्र आपश्री के चरणो मे समर्पित किया (देखिये परिशिष्ट स ७) वि स २०३७ के वर्षावास को राणावास के लिये स्वीकृति भी यही से हुई । उदयपुर श्री सघ का आग्रह बहुत प्रबल था किंतु विद्यानगरी राणावास के सैकडो छात्रो का आग्रह प्रबलतर सिद्ध हुआ । एक ब्राह्मण सुरेश शर्मा छात्र की ये गीत पक्तिया अचूक निशाने का काम कर गईं—उठ सवेरे बैठ मुडेरे, काईजी बोल्यो कागलियो. . । सपना मे नाना गुरु मिलिया चौमासे रो हा भरियो ॥

सुपुत्र), श्री शातिलालजी (श्री नगराजजी खेरी–महाराष्ट्र के सुपुत्र), घायमातृपद विभूषित कर्मठ सेवाभावी, शासन प्रभावक इन्द्रचन्दजी म सा के ससार पक्षीय लघु भ्राता श्री नगराजजी घोरडिया, श्री विनयकुमारजी (श्री मोहनलालजी वाठिया, व्यावर के सुपुत्र), कुमारी पुखराज एम ए. साहित्यरत्न श्री सौभाग्यमलजी बुरड, महिदपुर की सुपुत्री), कुमारी मधुवाला बी. ए (श्री सोहनलालजी सुराना, इन्दौर की सुपुत्री), कुमारी काता (श्री आनन्दमलजी भूरा, देशनोक की सुपुत्री), कुमारी विजया। श्री पारसमलजी छिंगावत, पीपलिया मण्डी की सुपुत्री) कुमार दर्शना (श्री जयचन्दलालजी छल्लाणी, देशनोक की सुपुत्री), कुमारी प्रवीणा (श्री सागरमलजी पोरवाल मदसौर की सुपुत्री), कुमारी शकुतला (श्री लूणकरणजी सुखानी, बीकानेर की सुपुत्री), कु० कमला (श्री मोतीलालजी कोठारी, उदयपुर की सुपुत्री। कुमारी स्नेहलता (श्री रामलालजी सेठिया गगाशहर, की सुपुत्री), कुमारी पुष्पा (श्री ख्यालीलाल जी मुणोत, बडीसादडी की सुपुत्री), कुमारी मीना (श्री किशनलालजी सोनावत, गगाशहर की सुपुत्री) एवं सुश्री जतनकुमारी (श्री रतनलालजी कोठारी ब्यावर की सुपुत्री) ।

यहा पर आपश्री के आज्ञानुवर्ती ११८ सत–सतिया एकत्रित हुए अत एक लघु सम्मेलन के रुप मे आचार–पद्धत्ति पर विचारणा के साथ ही आचार्यश्री ने सबको साधु-जीवन की सजगता का सकेत दिया । विश्व हिन्दू परिषद् के महामन्त्री श्री एम पी. डंबेकर तथा मत्री श्री पाटोदिया आदि ने आपश्री से सामाजिक क्राति का मार्गदर्शन प्राप्त किया । अक्षय तृतीया के पारणो का प्रसग पीपलिया कला मे उपस्थित हुआ, जहा के निवासी दानवीर श्रेष्ठी श्री गणपतराजजी बोहरा हैं । आचार्यदेव के यहा पर पधारने की स्मृति को चिरस्थायी बनाने की भावना से श्री बोहराजी ने समाजोत्थान के कार्यों हेतु १० लाख रुपये के एक मुश्त आदर्शदान की घोषणा की । इतना ही नही, उन्होने यह भी घोषित किया कि सरकारी नियमो के अन्तर्गत स्वीकृति मिलने पर यह राशि बढाकर २० लाख और धारा ३५(२) ए के अन्तर्गत स्वीकृति मिलने पर एक करोड़ तक कर दी जायेगी ।

यहा से आचार्यश्री कुशालपुरा पधारे तो वहा विराजित प रत्न मुनि श्री लालचद जी म.सा (स्व. श्री जयमलजी म सा. के सम्प्रदाय) ने अपनी अपनी अनुभूति का नया सत्य प्रकट किया और कहा—आचार्यश्री जी, इतने दिन तो मैं सुनता ही था किन्तु आज तो प्रत्यक्ष साक्षात् देख रहा हू कि आप मे स्व० आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा ही प्रतिबिम्बित हो रहे हैं । क्या आपकी छवि मे स्वर्गीय आचार्यश्री का अवतरण हो गया है ? आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए फरमाया—भोले भक्त तो श्रद्धातिरेक से ऐसे ही बोल दिया करते हैं, लेकिन आप भी वैसे ही कहने लगे । फिर उनमे परस्पर वार्तालाप होता रहा ।

आपश्री यहा से निम्बाज, जैतारण, बलूंदा, कुडकी, बीजाथल, गोविन्दगढ, पीसांगन, नागेलाव, मखा, लीडी, जेठाना आदि क्षेत्रो मे धर्म–जागरण करते हुए वर्षावास हेतु अजमेर पधारे ।

४– हे ज्योतिर्मय आत्मन्, तू समभाव से चिन्तन कर कि मैं क्या सोच रहा हू, क्या बोल रहा हूं और क्या कर रहा हू ? मेरा सोचना, बोलना एव चिन्तन करना तुच्छ भाव से युक्त तो नही है ?

५– हे सुज्ञ चैतन्य, तू जिन भौतिक पदार्थों को ही सर्वोपरि मानकर उनकी प्राप्ति के लिये असत्य, प्रपच, आदि दुष्प्रवृत्तियो मे उलझता हुआ अमानवीय भावो मे बहता रहता है एव तू कटुवचनो के द्वारा अनेक हृदयो को चोट पहुचाता रहता है क्या यह तेरे गौरव के अनुरूप है ? नही, कदापि नही ।

६– हे प्रबुद्ध चैतन्य, यह निश्चित समझ कि मिथ्या श्रद्धा, मिथ्या ज्ञान, मिथ्या–आचरण पर पदार्थों पर ममत्वभाव एव कषाय तेरे वैभाविक भाव है, स्वभाव नही । पर निन्दा करना, सक्लेश उत्पन्न करना एव मोह वृद्धि के कार्य तेरी एव अन्य किसी की आत्मा के लिये हितकर नही है ।

७– हे विज्ञाता, तू यह अविचल श्रद्धान कर कि सुदेव, सुगुरु, सुधर्म, अहिंसा, सत्य अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह एव स्याद्वाद आदि सिद्धान्त ही तेरी आत्मा की उन्नति करने वाले हैं।

८– हे सिद्ध-बुद्ध–निरजन–आत्मन्, सिद्धावस्था की अपेक्षा से न तू दीर्घ है न तू ह्रस्व आदि लौकिक विशेषणो से युक्त है । तेरा कोई वर्ण, गध, रस, स्पर्शादि युक्त आकार भी नही है । न तू स्त्री है, न तू पुरुष है और न नपुसक है । तो फिर क्या है ? अरूपी है, शाश्वत है, अशरीरी है, अजर है, अमर है, अवेदी है, अखेदी है, अलेशी है, अक्षय सुखरूप है एव ज्ञाता व द्रष्टा आदि सम्परिपूर्ण गुणो से सम्पन्न है । अत अपने इस स्वरूप को समझ ।

९– हे सुज्ञानी आत्मन्, तू ध्यान घर कि मैं विशुद्ध आत्मिक स्वरूप के आदर्श को सदा समक्ष रखता हुआ सम्यक् विधि से जीवन को उन्नत बनाऊं तथा अन्त मे समग्र बधनो से विनिर्मुक्त बनू । इसी अन्तरात्मा की शुद्ध श्रद्धा, प्ररूपणा एव आराधना के लिये सतत प्रयत्नशील रहू ।

समत्व भज भूतेषु, निर्ममत्व विचिन्तय ।
अपा–कृत्य मन शल्य, भावशुद्धि समाश्रय ॥

जहा सैकडो की सख्या मे छात्रो ने आपश्री की प्रवचन धारा मे अवगाहन किया वहा छात्रो के सस्कार निर्माण की उपलब्धि इस वर्षावास की वास्तविक उपलब्धि भी रही । बालको के कोमल मानस मे विनय, विवेक, शालीनता, सच्चरित्रता और अध्यात्म के शिष्ट सस्कारो का बीजारोपण हुआ । इसी वर्षावास मे विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ डी. एस कोठारी भी आपश्री के दर्शन, प्रवचन श्रवण हेतु आए । उस समय मध्याह्न मे 'इहमेगेसि णो णाय' भवई सूत्र गाथा का विवेचन चल रहा था । इसमे 'एगेसि' का लाक्षणिक अर्थ आपश्री के श्रीमुख से सुनकर

सोजतरोड से आपश्री वगडी पधारे जहा दो सघर्षरत झामर भाइयों के मनमुटाव का आपश्री के सदुपदेश से अन्त हो गया । महावीर-जयन्ती पर पाली विराजे, जहां पर ज्ञान चर्चा मे कई बुद्धिजीवियो को अपनी जिज्ञासाओ के समाधान प्राप्त हुए । पाली पधारते हुए मार्ग मे सोजतसिटी मे आपश्री की प्रेरणा से दो मेहता कोचर भाइयो का सघर्ष मिटा और प्रेममय सम्बन्ध हो गया ।

राणावास यद्यपि छोटा गाव है किन्तु विद्यालय, महाविद्यालयो एव छात्रावासो के कारण इसे विद्यानगरी कहा जाता है । आपश्री का चातुर्मास होना यहा निश्चित हुआ । इस प्रसग पर ही आचार्यश्री के आत्म प्रेरक प्रवचनो से आध्यात्मिकता का सारभूत तत्व प्रस्फुटित हुआ । राणावास की ज्ञान वाटिका मे चिन्तन के नव-सूत्र रूपी नव-सुमन विकसे जो सम्पूर्ण चातुर्मास तक अपना सुवासित पराग वायुमण्डल मे छोडते रहे और समग्र वातावरण को आत्माभिमुखी बनाते रहे । पूरे चातुर्मास काल मे इन्ही चिन्तन के नव सूत्रो पर आचार्यश्री की ज्ञान गम्भीर प्रवचन धारा प्रवाहित होती रही ।

अक्षय तृतीया के बाद आपश्री ने अरावली के अचलो मे भ्रमण किया, इस प्रवास काल मे आपश्री एक छोटे से गाव गादाणा पधारे जहा तेरह पथ समाज क आठ परिवार थे । कई घरो मे घूमने पर भी मुनियो को प्रासुक जल नही मिला । वे कहने लगे कि हमारे मुनि तो सचित पानी मे राख या चूना डाल देने पर उसे प्रासुक मान कर ले जाते हैं । तब आपश्री ने उन्हे समझाया कि मुनि को घोलन नहीं, धोवन ले जाना चाहिये जो वर्तन वगैरह धोने से तैयार होता हो । यह सुनकर उन लोगो ने यही कहा—महाराज, थारा कानून करडा घणा । बूसी मे रायपुर निवासी उद्योगपति श्री केवलचन्दजी मूथा की प्रेरणा से कुमारी नीता (श्री नथमलजी झावक की सुपुत्री) का दीक्षोत्सव बहुत समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ । बिना किसी आमन्त्रण पत्रिका के भी दस हजार से अधिक लोग उपस्थित हुए ।

राणावास मे चिन्तन के जिन नवसूत्रो को आधार बनाकर आचार्यश्री की भावधारा वही वे निम्नाकित है —

१— हे चैतन्य, तू चिन्तन कर कि मैं कौन हू, कहा से आया हू, किसलिये आया हू और क्या कर रहा हू ?

२— हे चैतन्य देव, तू सत् चित् आनन्द घन स्वरूप ज्ञाता एवं द्रष्टा है । किन्तु कर्म बन्धन के कारण अनादिकाल से चतुर्गति ससार मे भटकता आ रहा है, प्रबल पुण्योदय से तुझे यह अमूल्य मनुष्य जन्म एव आर्य कुल आदि उत्तम सयोग प्राप्त हुए हैं । अतः सोच कि अब तुझे क्या करना चाहिये ।

३— हे ज्ञान पुंज, ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि आत्मगुणो के विकास एवं परम शांति, अखण्ड आनन्द की प्राप्ति हेतु तुझे यह मानव तन प्राप्त हुआ है ।

४– हे ज्योतिर्मय आत्मन्, तू समभाव से चिन्तन कर कि मैं क्या सोच रहा हू, क्या बोल रहा हू और क्या कर रहा हू ? मेरा सोचना, बोलना एव चिन्तन करना तुच्छ भाव से युक्त तो नही है ?

५– हे सुज्ञ चैतन्य, तू जिन भौतिक पदार्थों को ही सर्वोपरि मानकर उनकी प्राप्ति के लिये असत्य, प्रपच, आदि दुष्प्रवृत्तियो मे उलझता हुआ अमानवीय भावो मे बहता रहता है एव तू कटुवचनो के द्वारा अनेक हृदयो को चोट पहुचाता रहता है क्या यह तेरे गौरव के अनुरूप है ? नही, कदापि नही ।

६– हे प्रबुद्ध चैतन्य, यह निश्चित समझ कि मिथ्या श्रद्धा, मिथ्या ज्ञान, मिथ्या–आचरण पर पदार्थों पर ममत्वभाव एव कषाय तेरे वैभाविक भाव है, स्वभाव नही । पर निन्दा करना, सक्लेश उत्पन्न करना एव मोह वृद्धि के कार्य तेरी एव अन्य किसी की आत्मा के लिये हितकर नही है ।

७– हे विज्ञाता, तू यह अविचल श्रद्धान कर कि सुदेव, सुगुरु, सुधर्म, अहिंसा, सत्य अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह एव स्याद्वाद आदि सिद्धान्त ही तेरी आत्मा की उन्नति करने वाले हैं।

८– हे सिद्ध-बुद्ध–निरजन–आत्मन्, सिद्धावस्था की अपेक्षा से न तू दीर्घ है न तू ह्रस्व आदि लौकिक विशेषणो से युक्त है । तेरा कोई वर्ण, गध, रस, स्पर्शादि युक्त आकार भी नही है । न तू स्त्री है, न तू पुरुष है और न नपु सक है । तो फिर क्या है ? अरूपी है, शाश्वत है, अशरीरी है, अजर है, अमर है, अवेदी है, अखेदी है, अलेशी है, अक्षय सुखरूप है एव ज्ञाता व द्रष्टा आदि सम्परिपूर्ण गुणो से सम्पन्न है । अत अपने इस स्वरूप को समझ ।

९– हे सुज्ञानी आत्मन्, तू ध्यान धर कि मैं विशुद्ध आत्मिक स्वरूप के आदर्श को सदा समक्ष रखता हुआ सम्यक् विधि से जीवन को उन्नत बनाऊं तथा अन्त मे समग्र बधनो से विनिर्मु क्त बनू । इसी अन्तरात्मा की शुद्ध श्रद्धा, प्ररूपणा एव आराधना के लिये सतत प्रयत्नशील रहू ।

समत्व भज भूतेषु, निर्ममत्व विचिन्तय ।
अपा–कृत्य मन शल्य, भावशुद्धि समाश्रय ।।

जहा सैकडो की सख्या मे छात्रो ने आपश्री की प्रवचन धारा मे अवगाहन किया वहा छात्रो के सस्कार निर्माण की उपलब्धि इस वर्षावास की वास्तविक उपलब्धि भी रही । बालको के कोमल मानस मे विनय, विवेक, शालीनता, सच्चरित्रता और अध्यात्म के शिष्ट सस्कारो का बीजारोपण हुआ । इसी वर्षावास मे विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. डी एस. कोठारी भी आपश्री के दर्शन, प्रवचन श्रवण हेतु आए । उस समय मध्याह्न मे 'इहमेगेसि णो णाय' भवई सूत्र गाथा का विवेचन चल रहा था । इसमे 'एगेसि' का लाक्षणिक अर्थ आपश्री के श्रीमुख से सुनकर

डॉ साहव हठात् बोल उठे—इतनी गम्भीर विवेचना इस सूत्र की आज पहली बार सुन रहा हू। मैं स्वय आचाराग सूत्र के अध्ययन के समय इस विषय मे सदेहशील था किन्तु आज मेरा सदेह समाप्त हो गया।

इस वर्षावास की यह विशिष्ट उपलब्धि रही कि स्वाध्याय शिविरो के माध्यम से मुमुक्षु आत्माओ ने ध्यान साधना मे प्रवेश किया। आचार्यश्री की ध्यान मुद्रा ध्याना-भ्यासियो के लिये अनुभूति का विषय रहती थी। राणावास मे तपश्चरण का नया कीतिमान श्री पुष्पमुनिजी म सा ने ५८ तथा श्री बलभद्रमुनिजी म सा. ने ४२ व १८ उपवास केवल गर्म जल के आधार पर करके स्थापित किया। इसी वर्षावास मे कुमारी शाता (श्री किशनलालजी पुगलिया, बीकानेर की सुपुत्री) तथा कुमारी हेमलता (श्री हुकमचन्दजी बरडिया—केसिगा—उडीसा की सुपुत्री की भागवती दीक्षाए सम्पन्न हुई।

दांता की पावन माटी पर पतितपावन के चरण और उदयपुर वर्षावास

राणावास का वर्षावास समाप्त करके आचार्यश्री काठा प्रात के ग्रामीण अचलो मे समता की भाव लहरे जगाते हुए देवगढ पहुचे। यहा पर भी सघ मे विषम भाव चल रहा था जो आपश्री की सत्प्रेरणा से समाप्त हो गया। उस समय समता प्रचार सघ का शिविर भी यहा आयोजित हुआ। फिर आपश्री गोवाजी के गाव पधारे जो आदर्श त्यागी धर्मेशमुनि जी म सा की जन्मस्थली है। इस गाव मे लगभग तीस घटे तक लगातार कोहरा छाया रहा जिसके लिये आपश्री ने फरमाया कि मैंने अपने जीवन मे कोहरे का इतने लम्बे समय तक टिकना नही देखा। यहा से भीम पधारने पर श्री चादमलजी लूणिया—नोखा मण्डी के सुपुत्र श्री बाबूलालजी ने आपश्री के चरणो मे साधु जीवन स्वीकार किया। भीम से आपश्री पुन देवगढ पधारे और यहा से गगापुर। मार्ग के कई गावो मे पारस्परिककटुता के कई मामलो मे आपश्री के सदुपदेश से सद्भावना का वातावरण बना। गंगापुर से आपश्री भीलवाडा पधारे जहा पर आगामी वर्षावास की स्वीकृति उदयपुर श्रीसघ को प्राप्त हुई।

महावीर जयन्ती के अवसर पर आचार्यश्री का विराजना चित्तौडगढ मे हुआ। उस दिन के प्रभावशाली प्रवचन मे सारे जिले से आये हुए लोगो की इतनी अधिक उपस्थिति थी कि सातरमहल का विशाल मैदान भी छोटा पड गया। इसके बाद ही अक्षय तृतीया के पारणे गगापुर हुए जहा श्री राजेन्द्रकुमारजी (श्री भीकमचदजी चोरडिया फलौदी के सुपुत्र) एव कु० ललितप्रभा (श्री भवरलालजी डोसी-विनोता की सुपुत्री) की भव्य दीक्षाए सम्पन्न हुई। देवगढ मे गिलू ड होते हुए आपश्री कपासन पधारे। यहा पर समाज मे और कई परिवारो मे राग-द्वेष की आग जल रही थी जिसे आपश्री की मधुर वाणी ने कुछ ही पलो मे शात कर दी। इसका यहा के माहेश्वरी समाज पर भी गहरा प्रभाव पडा और माहेश्वरी बधुओ ने आपश्री का अगले दिन का प्रवचन अपने नोहरे मे कराया। यहा माहेश्वरी नवयुवक मण्डल के सरक्षक तथा निम्बार्क

बी.एड कॉलेज के वाइस प्रिंसिपल श्री गोवर्धनलाल जी लढा ने आचार्यश्री की समता-प्रसारिणी शक्ति की भूरि-भूरि सराहना की ।

कपासन से पतितपावन आचार्यश्री के चरण अपनी जन्मस्थली दाता की पावन माटी पर आगे बढे । करीब ११ वर्ष बाद आपश्री का वहा पधारना हो रहा था अत अपने श्रद्धेय के स्वागत में दाता का एक-एक व्यक्ति स्वागतोत्सुक खडा था । १७५ कुल घरो के लोग गाव के बाहर एकत्रित थे । वहा जैन परिवार तो केवल ८ ही है । वहा जब आपश्री का विराजना रहा तो सभी जाति वर्ग के लोग आपकी सेवा मे आये और अपने-अपने ढग से स्नेह सिक्त वार्ता करते रहे । कई जैनेतर बन्धुओ ने दुर्व्यसनो के त्याग किये तो धर्म क्रियाओ के सकल्प भी लिये । यहा से उमड, करूकडा होते हुए आकोला पधारे जहा हिगड परिवार के पारस्परिक क्लेश को दूर किया ।

उदयपुर वर्षावास मे ज्ञान-साधना एव तपाराधना के उल्लेखनीय कार्य सम्पन्न हुए । तपस्वी मुनिश्री अमरचन्दजी म सा ने ५७ दिन का महासती श्री शकुतलाकवरजी म सा ने ३७ दिन का तप केवल गर्मजल के आधार पर किया ।श्रावक-श्राविका वर्ग मे अठाई आदि कई प्रकार की तपस्याए हुई । सप्त-दिवसीय स्वाध्याय एव साधना शिविर तथा समता प्रचार सघ के त्रिदिवसीय शिविर उत्साहपूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुए, प्रबुद्ध वर्ग आचार्यश्री की प्रवचनधारा से आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी प्रबुद्ध बना । महावीर सेवा सस्थान के अध्यक्ष डॉ आर. सी जैन (मूर्ति पूजक मान्यता वाले) तो इतने प्रभावित हुए कि उन्होने अपने हृदयोद्गार प्रवचन-समय मे ही प्रकट किये कि उन्होने लीबिया, मिश्र, यूनान, इटली फ्रास, ब्रिटेन आदि देशो मे कई धर्म गुरुओ का सत्सग किया और भारत मे भी ऐसे कई अवसर आये किन्तु इस बार जो इन गुरु से पाया है वह असाधारण है । ऐसा व्यक्तित्व अद्भुत अलौकिक,विलक्षण और विचक्षण है । इनकी विचारधारा मानवीय विचारो से ओत-प्रोत है, जैसे गुरु महाराज का समग्र जीवन ही करुणा,दया और ज्ञान का जीवन है । महाराज सा के उपदेश सहज-सरल भाषा मे देश, भाव और काल परिस्थिति को देखते हुए मानव-जीवन को अज्ञान से ज्ञान की ओर, अधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर ले जाने के लिये हृदय को स्पर्श करने वाले हैं । आपश्री अमृत के सागर हैं, जितना चाहे-ले सके, केवल जागने की, पाने की, देखने की, ग्रहण करने की पात्रता मात्र चाहिये ।

इस वर्षावास मे तीन विशेष प्रकार के अभियान भी आपश्री की शुभ प्रेरणा से चलाए गये, जिनसे उपयोगी उपलब्धिया प्राप्त हुई । ये अभियान निम्न हैं —

१—ब्रह्मचर्य व्रत अभियान—शास्त्रो मे सभी तपो मे श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य को माना गया है और इस श्रेष्ठ तप का आराधन विचारवान व्यक्ति ही कर सकते हैं । इस अभियान के परिणाम स्वरूप १०० से अधिक व्यक्तियो ने सपत्नीक आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया ।

डॉ साहब हठात् बोल उठे—इतनी गम्भीर विवेचना इस सूत्र की आज पहली बार सुन रहा हू। मैं स्वय आचाराग सूत्र के अध्ययन के समय इस विषय मे सदेहशील था किन्तु आज मेरा सदेह समाप्त हो गया।

इस वर्षावास की यह विशिष्ट उपलब्धि रही कि स्वाध्याय शिविरो के माध्यम से मुमुक्षु आत्माओ ने ध्यान साधना मे प्रवेश किया। आचार्यश्री की ध्यान मुद्रा ध्याना भ्यासियो के लिये अनुभूति का विषय रहती थी। राणावास मे तपश्चरण का नया कीर्तिमान श्री पुष्पमुनिजी म सा ने ५८ तथा श्री बलभद्रमुनिजी म सा. ने ४२ व १८ उपवास केवल गर्म जल के आधार पर करके स्थापित किया। इसी वर्षावास मे कुमारी शाता (श्री किशनलालजी पुगलिया, बीकानेर की सुपुत्री) तथा कुमारी हेमलता (श्री हुकमचन्दजी बरडिया—केसिंगा—उडीसा की सुपुत्री की भागवती दीक्षाए सम्पन्न हुई।

दाता की पावन माटी पर पतितपावन के चरण और उदयपुर वर्षावास

राणावास का वर्षावास समाप्त करके आचार्यश्री काठा प्रात के ग्रामीण अचलो मे समता की भाव लहरें जगाते हुए देवगढ पहुचे। यहा पर भी सघ मे विषम भाव चल रहा था जो आपश्री की सत्प्रेरणा से समाप्त हो गया। उस समय समता प्रचार सघ का शिविर भी यहा आयोजित हुआ। फिर आपश्री गोधाजो के गाव पधारे जो आदर्श त्यागी धर्मेशमुनि जी म मा की जन्मस्थली है। इस गांव मे लगभग तीस घटे तक लगातार कोहरा छाया रहा जिसके लिये आपश्री ने फरमाया कि मैंने अपने जीवन मे कोहरे का इतने लम्बे समय तक टिकना नहीं देखा। यहा से भीम पधारने पर श्री चादमलजी लूणिया—नोखा मण्डी के सुपुत्र श्री बाबूलालजी ने आपश्री के चरणो मे साधु जीवन स्वीकार किया। भीम से आपश्री पुन देवगढ पधारे और यहा से गगापुर। मार्ग के कई गावों मे पारस्परिककटुता के कई मामलो मे आपश्री के सदुपदेश से सद्भावना का वातावरण बना। गगापुर से आपश्री भीलवाडा पधारे जहा पर आगामी वर्षावास की स्वीकृति उदयपुर श्रीसघ को प्राप्त हुई।

महावीर जयन्ती के अवसर पर आचार्यश्री का विराजना चित्तौडगढ मे हुआ। उस दिन के प्रभावशाली प्रवचन मे सारे जिले से आये हुए लोगो की इतनी अधिक उपस्थिति थी कि खातरमहल का विशाल मैदान भी छोटा पड गया। इसके बाद ही अक्षय तृतीया के पारणे गगापुर हुए जहा श्री राजेन्द्रकुमारजी (श्री भीकमचदजी चोरडिया फलौदी के सुपुत्र) एव कु० ललितप्रभा (श्री भवरलालजी डोसी-विनोता की सुपुत्री) की भव्य दीक्षाए सम्पन्न हुई। देवगढ से गिलूड होते हुए आपश्री कपासन पधारे। यहा पर समाज मे और कई परिवारो मे राग-द्वेष की आग जल रही थी जिसे आपश्री की मधुर वाणी ने कुछ ही पलो मे शात कर दी। इसका यहा के माहेश्वरी समाज पर भी गहरा प्रभाव पडा और माहेश्वरी बधुओ ने आपश्री का अगले दिन का प्रवचन अपने नोहरे मे कराया। यहां माहेश्वरी नवयुवक मण्डल के सरक्षक तथा निम्बार्क

बी.एड कॉलेज के वाइस प्रिंसिपल श्री गोवर्धनलाल जी लढा ने आचार्यश्री की समता-प्रसारिणी शक्ति की भूरि-भूरि सराहना की ।

कपासन से पतितपावन आचार्यश्री के चरण अपनी जन्मस्थली दाता की पावन माटी पर आगे बढे । करीब ११ वर्ष बाद आपश्री का वहा पधारना हो रहा था अत अपने श्रद्धेय के स्वागत मे दाता का एक–एक व्यक्ति स्वागतोत्सुक खडा था । १७५ कुल घरो के लोग गाव के बाहर एकत्रित थे । वहा जैन परिवार तो केवल ८ ही है । वहा जब आपश्री का विराजना रहा तो सभी जाति वर्ग के लोग आपकी सेवा मे आये और अपने–अपने ढग से स्नेह सिक्त वार्ता करते रहे । कई जैनेतर बन्धुओ ने दुर्व्यसनो के त्याग किये तो धर्म क्रियाओ के सकल्प भी लिये । यहा से उमड, करूकडा होते हुए आकोला पधारे जहा हिंगड परिवार के पारस्परिक क्लेश को दूर किया ।

उदयपुर वर्षावास मे ज्ञान–साधना एव तपाराधना के उल्लेखनीय कार्य सम्पन्न हुए । तपस्वी मुनिश्री अमरचन्दजी म सा ने ५७ दिन का महासती श्री शकुंतलाकवरजी म सा ने ३७ दिन का तप केवल गर्मजल के आधार पर किया ।श्रावक–श्राविका वर्ग मे अठाई आदि कई प्रकार की तपस्याए हुई । सप्त–दिवसीय स्वाध्याय एव साधना शिविर तथा समता प्रचार सघ के त्रिदिवसीय शिविर उत्साहपूर्ण वातावरण मे सम्पन्न हुए, प्रबुद्ध वर्ग आचार्यश्री की प्रवचनधारा से आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी प्रबुद्ध बना । महावीर सेवा सस्थान के अध्यक्ष डॉ आर सी जैन (मूर्ति पूजक मान्यता वाले) तो इतने प्रभावित हुए कि उन्होने अपने हृदयोद्‌गार प्रवचन-समय मे ही प्रकट किये कि उन्होने लीबिया, मिश्र, यूनान, इटली फ्रांस, ब्रिटेन आदि देशो मे कई धर्म गुरुओ का सत्संग किया और भारत मे भी ऐसे कई अवसर आये किन्तु इस बार जो इन गुरु से पाया है वह असाधारण है । ऐसा व्यक्तित्व अद्‌भुत अलौकिक,विलक्षण और विचक्षण है । इनकी विचारधारा मानवीय विचारो से ओत-प्रोत है, जैसे गुरु महाराज का समग्र जीवन ही करुणा,दया और ज्ञान का जीवन है । महाराज सा के उपदेश सहज–सरल भाषा मे देश, भाव और काल परिस्थिति को देखते हुए मानव–जीवन को अज्ञान से ज्ञान की ओर, अधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर ले जाने के लिये हृदय को स्पर्श करने वाले हैं । आपश्री अमृत के सागर हैं, जितना चाहे–ले सके, केवल जागने की, पाने की, देखने की, ग्रहण करने की पात्रता मात्र चाहिये ।

इस वर्षावास मे तीन विशेष प्रकार के अभियान भी आपश्री की शुभ प्रेरणा से चलाए गये, जिनसे उपयोगी उपलब्धिया प्राप्त हुई । ये अभियान निम्न है —

१–ब्रह्मचर्य व्रत अभियान–शास्त्रो मे सभी तपो मे श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य को माना गया है और इस श्रेष्ठ तप का आराधन विचारवान व्यक्ति ही कर सकते हैं । इस अभियान के परिणाम स्वरूप १०० से अधिक व्यक्तियो ने सपत्नीक आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया ।

डॉ साहव हठात् बोल उठे—इतनी गम्भीर विवेचना इस सूत्र की आज पहली बार सुन रहा हू। मैं स्वयं आचाराग सूत्र के अध्ययन के समय इस विषय मे सदेहशील था किन्तु आज मेरा सदेह समाप्त हो गया।

इस वर्षावास की यह विशिष्ट उपलब्धि रही कि स्वाध्याय शिविरो के माध्यम से मुमुक्षु आत्माओ ने ध्यान साधना मे प्रवेश किया। आचार्यश्री की ध्यान मुद्रा ध्याना भ्यासियो के लिये अनुभूति का विषय रहती थी। राणावास मे तपश्चरण का नया कीर्तिमान श्री पुष्पमुनिजी म सा ने ५८ तथा श्री बलभद्रमुनिजी म सा ने ४२ व १८ उपवास केवल गर्म जल के आधार पर करके स्थापित किया। इसी वर्षावास मे कुमारी शाता (श्री किशनलालजी पुगलिया, बीकानेर की सुपुत्री) तथा कुमारी हेमलता (श्री हुकमचन्दजी बरडिया—केसिंगा—उडीसा की सुपुत्री की भागवती दीक्षाए सम्पन्न हुई।

दाता की पावन माटी पर पतितपावन के चरण और उदयपुर वर्षावास

राणावास का वर्षावास समाप्त करके आचार्यश्री काठा प्रात के ग्रामीण अचलो मे समता की भाव लहरें जगाते हुए देवगढ पहुचे। यहा पर भी सघ मे विषम भाव चल रहा था जो आपश्री की सत्प्रेरणा से समाप्त हो गया। उस समय समता प्रचार सघ का शिविर भी यहा आयोजित हुआ। फिर आपश्री गोघाजी के गाव पधारे जो आदर्श त्यागी धर्मेशमुनि जी म सा की जन्मस्थली है। इस गाव मे लगभग तीस घटे तक लगातार कोहरा छाया रहा जिसके लिये आपश्री ने फरमाया कि मैंने अपने जीवन मे कोहरे का इतने लम्बे समय तक टिकना नही देखा। यहा से भीम पधारने पर श्री चादमलजी लूणिया—नोखा मण्डी के सुपुत्र श्री बाबूलालजी ने आपश्री के चरणो मे साधु जीवन स्वीकार किया। भीम मे आपश्री पुन देवगढ पधारे और यहा से गगापुर। मार्ग के कई गावो मे पारस्परिककटुता के कई मामलो मे आपश्री के सदुपदेश से सद्भावना का वातावरण बना। गगापुर से आपश्री भीलवाडा पधारे जहाँ पर आगामी वर्षावास की स्वीकृति उदयपुर श्रीसघ को प्राप्त हुई।

महावीर जयन्ती के अवसर पर आचार्यश्री का विराजना चित्तौड़गढ मे हुआ। उस दिन के प्रभावशाली प्रवचन मे सारे जिले से आये हुए लोगो की इतनी अधिक उपस्थिति थी कि सातरमहल का विशाल मैदान भी छोटा पड गया। इसके बाद ही अक्षय तृतीया के पारणे गगापुर हुए जहा श्री राजेन्द्रकुमारजी (श्री भीकमचदजी चोरडिया फलौदी के सुपुत्र) एव कु० ललितप्रभा (श्री भवरलालजी डोसी-विनोता की सुपुत्री) की भव्य दीक्षाए सम्पन्न हुई। देवगढ से गिलूड होते हुए आपश्री कपासन पधारे। यहा पर समाज मे और कई परिवारो मे राग-द्वेष की आग जल रही थी जिसे आपश्री की मधुर वाणी ने कुछ ही पलो मे शात कर दी। इसका यहा के माहेश्वरी समाज पर भी गहरा प्रभाव पडा और माहेश्वरी बधुओ ने आपश्री का अगले दिन का प्रवचन अपने नोहरे मे कराया। यहा माहेश्वरी नवयुवक मण्डल के सरक्षक तथा निम्बार्क

जीवन मे आध्यात्मिक परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है जो एक प्रकार से साहजिक योग का रूप ले लेता है । इस चरण मे अह का सर्वथा विसर्जन हो जाना चाहिये । इस ध्यान माध्यम से भीतर से बाहर और बाहर से भीतर की यात्राए सफल बनती हैं तथा इसकी पूर्णता प्रकट होती है, समता को पूर्णत आत्म-सात कर लेने पर ।

वर्षावास की समाप्ति पर हिरण मगरी सेक्टर ११ मे कुमारी विद्या (पुत्री श्री बाबुलालजी जैन, आदर्श नगर सवाई माधोपुर) की भागवती दीक्षा आचार्यश्री की नेश्राय मे समारोहपूर्वक सम्पन्न हुई । आचार्यश्री उदयपुर विश्वविद्यालय के डॉ कमल सोगानी आदि की विनती पर विश्व-विद्यालय मे भी पधारे जहा आपश्री का 'समता दर्शन का व्यावहारिक उपयोग' विषय पर सारगर्भित प्रवचन हुआ । सभी प्राध्यापक एव विद्यार्थी उससे बहुत प्रभावित हुए । डॉ सोगानी ने भावाभिभूत होकर कहा—मैं आचार्यश्री के बहुत निकट सम्पर्क मे आया हू । आपने प्लेटो, काट और अरस्तू सभी को पचा लिया है । आप विश्व की वे विभूति हैं जिनमे सम्पूर्ण योग एव पूर्ण समत्व के दर्शन होते हैं ।

उदयपुर के उपनगरो मे धर्मजागृति करते हुए आपश्री मटूण पधारे, जहा पर अहमदाबाद श्री सघ के श्री प्रेमराजजी काकरिया के नेतृत्व मे एक शिष्ट-मण्डल होली चातुर्मास अहमदाबाद मे करने की प्रार्थना लेकर आपश्री की सेवा मे पहुचा । सघ के भावपूर्ण आग्रह को देखते हुए आपश्री ने स्वीकृति प्रदान करदी । फिर आपश्री बम्बोरा होते हुए गुर्जरधरा की ओर बढ चले । बम्बोरा मे विनीता निवासी श्री नक्षत्रमलजी की सुपुत्री कुमारी विरक्ता की भागवती दीक्षा आपश्री के चरणो मे सम्पन्न हुई ।

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद मे

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद के लिये बम्बोरा से विहार करने के ३०-४० किमी बाद ही आचार्यश्री के पाव के दर्द ने उग्र रूप धारण कर लिया । बडीसादडी और कानोड श्रीसघो के कई श्रावक वहा पहुचे व आग्रह करने लगे कि ऐसी स्थिति मे हम आपको मेवाड से बाहर नही निकलने देंगे । आचार्यश्री ने अपनी स्वीकृति पर बल दिया और कहा कि इन साहसी युवा मुनियो के बल पर ही मैं यहा तक पहुचा हू और आगे भी जाने का भाव रखता हू । इस प्रकार मार्ग की अनेकानेक कठिनाइयों को सहते हुए आपश्री का पदार्पण अहमदाबाद की पुण्य गुर्जरधरा पर हुआ । वहा पर वाडीभाई कामदार, गुजरात के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री हितेन्द्रभाई देसाई आदि गणमान्य व्यक्तियो एव राज्याधिकारियो ने आपश्री का भावभीना स्वागत किया ।

आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा के विद्वान् शिष्य श्री सरदारमुनिजी म सा स्वागतार्थ आचार्यश्री के सामने पधारे । अस्पताल भवन पर पहुचकर जुलूस ने धर्मसभा का रूप ले लिया ।

२–दहेज उन्मूलन अभियान–आचार्यश्री सामाजिक कुरूढियो के विरुद्ध भी प्रबल प्रेरणा फूकते हैं क्योंकि सामाजिक शुद्धि के बिना व्यक्ति की आत्मशुद्धि बहुत कठिन होती है। प्रवचनो के प्रभाव स्वरूप सैकडो व्यक्तियो ने दहेज की माग एव प्रदर्शन आदि नही करने के सकल्प ग्रहण किये । इस प्रकार के शपथ पत्र इन लोगो ने सघ को लिखित रूप मे दिये ।

३–आदिवासी जागरण: दुर्व्यसन मुक्ति–आदिवासी आदि पिछडे हुए लोग तो दुर्व्यसनो के दलदल मे फसे हुए है ही किंतु उच्च वर्ग के कई लोग भी 'खाओ, पीओ और मौज उडाओ' के सिद्धान्त से दुर्व्यसनो मे फंसते जा रहे हैं । आचार्यश्री ऐसे दोनो वर्गों मे दुर्व्यसन मुक्ति का सदेश अपने प्रवचनो मे देते रहते थे । फलस्वरूप नगर मे और नगर के निकटस्थ आदिवासी क्षेत्रो मे दुर्व्यसन मुक्ति के लिये एक व्यवस्थित अभियान चलाया गया जिससे अन्य लोगो सहित सैकडो आदिवासी स्त्री-पुरुषो ने दुर्व्यसनो का परित्याग कर दिया ।

उदयपुर मे ६ मुमुक्षु, आत्माओ का दीक्षोत्सव भी उल्लासमय वातावरण मे सम्पन्न हुआ । जिन मुमुक्षु आत्माओ ने आचार्यश्री का चरणाश्रय प्राप्त किया वे थी–कुमारी इन्द्रप्रभा (सुपुत्री श्री केसरीचन्दजी बोथरा-बीकानेर), कुमारी ज्योतिप्रभा (सुपुत्री श्री सूरजमलजी छाजेड-गगाशहर), कुमारी रचना (सुपुत्री श्री मदनलालजी गादिया–उदयपुर), कुमारी सुरेखा (सुपुत्री श्रीपारसराजजी महता–जोधपुर), कुमारी चित्रा(सुपुत्री श्री सम्पतलाल जी कोटड़िया–नीलगिरि) एव कुमारी लब्धिश्री (सुपुत्री श्री धूडचन्दजी बोथरा, गगाशहर) ।

उदयपुर वर्षावास की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि यह मानी जायगी कि आचार्यश्री द्वारा आविष्कृत ध्यान की एक नई विधा के रूप मे 'समीक्षण ध्यान' का प्रायोगिक स्वरूप व्यापक रूप से उत्साही ध्यानाभ्यासियो के बीच विकसित हुआ । इस वर्षावास की पुनीत स्मृति मे आगम, अहिंसा, समता एव प्राकृत सस्थान की स्थापना साधुमार्गी जैन सघ की सहायता से हुई।

समीक्षण-ध्यान मे 'समीक्षण' शब्द का अर्थ है सम्यक् प्रकार से अर्थात् समतापूर्वक देखना । कोई भी आत्मा यह देखने की क्रिया अपनी सज्ञानुसार करती है । सज्ञा स्वाभाविक भी होती है किंतु अधिकाशत वैभाविक होती है । जब आत्मा के मूल गुण दब जाते है और वह सासारिक आवरणो से लिप्त हो जाती है, तब उसका अपना स्वभाव भी दब जाता है । वह अपने स्वभाव के विपरीत विभावो मे भटकती रहती है । इस समीक्षण–ध्यान-पद्धति का उद्देश्य यह है कि आत्मा विभावो के चक्रवात मे से बाहर निकले और अपने मूल स्वभाव को पहिचानने की कोशिश करे और क्योकि स्वभाव की पहिचान हो जाने के बाद आत्मा अपने स्वरूप को उज्ज्वल बनाने की दिशा मे आगे बढने के लिये स्वत: प्रेरित हो जायेगी । समीक्षण ध्यान के अनुसधान के रूप में आचार्यश्री ने जो उद्बोधक प्रवचन दिये उनसे इस ध्यान के वैचारिक परिवेश की सुदृढ पुष्टि हुई । इस ध्यान की प्रयोग विधि मे भूमिका शुद्धि, सकल्प ग्रहण के साथ आत्मा की अन्तर्यात्रा मे प्रवेश करना होता है । इसके प्रथम एव प्राथमिक चरण के बाद द्वितीय चरण मे जीवन की व्यावहारिक मनोवृत्तियो में सयम का मनोभाव एव आदर्श का लक्ष्य स्थापित करना होता है । तीसरे चरण मे भविष्य का निर्धारण करते हुए समूचे

जीवन मे आध्यात्मिक परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है जो एक प्रकार से साहजिक योग का रूप ले लेता है । इस चरण मे अह का सर्वथा विसर्जन हो जाना चाहिये । इस ध्यान माध्यम से भीतर से बाहर और बाहर से भीतर की यात्राए सफल बनती हैं तथा इसकी पूर्णता प्रकट होती है, समता को पूर्णत आत्म–सात कर लेने पर ।

वर्षावास की समाप्ति पर हिरण मगरी सेक्टर ११ मे कुमारी विद्या (पुत्री श्री बाबुलालजी जैन, आदर्श नगर सवाई माधोपुर) की भागवती दीक्षा आचार्यश्री की नेश्राय मे समारोहपूर्वक सम्पन्न हुई । आचार्यश्री उदयपुर विश्वविद्यालय के डॉ कमल सोगानी आदि की विनती पर विश्व-विद्यालय मे भी पधारे जहा आपश्री का 'समता दर्शन का व्यावहारिक उपयोग' विषय पर सारगर्भित प्रवचन हुआ । सभी प्राध्यापक एव विद्यार्थी उससे बहुत प्रभावित हुए । डॉ सोगानी ने भावाभिभूत होकर कहा–मैं आचार्यश्री के बहुत निकट सम्पर्क मे आया हू । आपने प्लेटो, काट और अरस्तू सभी को पचा लिया है । आप विश्व की वे विभूति हैं जिनमे सम्पूर्ण योग एव पूर्ण समत्व के दर्शन होते हैं ।

उदयपुर के उपनगरो मे धर्मजागृति करते हुए आपश्री मटूण पधारे, जहा पर अहमदाबाद श्री सघ के श्री प्रेमराजजी काकरिया के नेतृत्व मे एक शिष्ट–मण्डल होली चातुर्मास अहमदाबाद मे करने की प्रार्थना लेकर आपश्री की सेवा मे पहुचा । सघ के भावपूर्ण आग्रह को देखते हुए आपश्री ने स्वीकृति प्रदान करदी । फिर आपश्री बम्बोरा होते हुए गुर्जरधरा की ओर बढ चले । बम्बोरा मे विनीता निवासी श्री नक्षत्रमलजी की सुपुत्री कुमारी विरक्ता की भागवती दीक्षा आपश्री के चरणो मे सम्पन्न हुई ।

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद मे

गुजरात की राजधानी अहमदाबाद के लिये बम्बोरा से विहार करने के ३०–४० किमी बाद ही आचार्यश्री के पाव के दर्द ने उग्र रूप धारण कर लिया । बडीसादडी और कानोड श्रीसघो के कई श्रावक वहा पहुचे व आग्रह करने लगे कि ऐसी स्थिति मे हम आपको मेवाड से बाहर नही निकलने देंगे । आचार्यश्री ने अपनी स्वीकृति पर बल दिया और कहा कि इन साहसी युवा मुनियो के बल पर ही मैं यहा तक पहुचा हू और आगे भी जाने का भाव रखता हूं । इस प्रकार मार्ग की अनेकानेक कठिनाइयो को सहते हुए आपश्री का पदार्पण अहमदाबाद की पुण्य गुर्जरधरा पर हुआ । वहा पर वाडीभाई कामदार, गुजरात के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री हितेन्द्रभाई देसाई आदि गणमान्य व्यक्तियो एव राज्याधिकारियो ने आपश्री का भावभीना स्वागत किया ।

आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा के विद्वान् शिष्य श्री सरदारमुनिजी म सा स्वागतार्थ आचार्यश्री के सामने पधारे । अस्पताल भवन पर पहुचकर जुलूस ने धर्मसभा का रूप ले लिया ।

उसमे नवरगपुरा सघ के मन्त्री श्री काति भाई, स्था. वाडी नारायणपुरा सघ के मन्त्री श्री जयती भाई, एच एल कॉमर्स कॉलेज के प्रिंसिपल श्री वी. आर सिंघवी तथा राजस्थान सेवा समिति के सहमन्त्री श्री सम्पतराजजी हुडिया ने आपश्री के स्वागत मे अपने हृदयोद्गार व्यक्त किये। मधुर वक्ता श्री सरदारमुनिजी म सा ने धाराप्रवाही गुजराती मे फरमाया—जैन जगत के सितारे जन–जन के तारणहार आचार्यश्री के दर्शन चार-पाच वर्ष पूर्व मैंने बीकानेर मे किये थे तभी गुजरात मे पधारने की आग्रहपूर्ण विनती भी की थी। आज हमारी कामना सफल हुई। मैं आपश्री का हृदय से स्वागत करता हू। आचार्यश्री ने अपने सक्षिप्त प्रवचन मे सच्ची शाति और सच्चे सुख की प्राप्ति के लिये परस्पर भावात्मक एकता पर बल दिया।

महावीर जयती एव अक्षय तृतीया के पारणे भी यही पर हुए तथा वि स. २०३६ का वर्षावास भी आचार्यश्री ने यही पर व्यतीत किया आपश्री के यहा पधारने के पश्चात् गुजराती सम्प्रदायो के आचार्य एव सत–सती आपश्री से मिलने के लिये पधारे। मधुर वक्ता श्री सरदार मुनिजी म सा के अतिरिक्त दरियापुरी आठ कोठी सम्प्रदाय का महासती श्री मोटा हीराबाई, महासती श्री सुशीलाबाई तथा इसी सम्प्रदाय के आचार्य श्री शातिलालजी म सा व उनके शिष्य श्री वीरेन्द्रमुनिजी म सा. आदि आपश्री से मिले तथा विविध विषयो पर उन्होने वार्तालाप किया।

अहमदाबाद मे आचार्यश्री के विराजने की यह महत्वपूर्ण उपलब्धि रही कि ब्यावर मे हुए १५ मुमुक्षु आत्माओ के दीक्षा महोत्सव के पश्चात् यहा पर पुन १५ ही मुमुक्षु आत्माओ का दीक्षा महोत्सव भव्य रीति से आयोजित हुआ। इस दीक्षा महोत्सव की यह विशेषता थी कि दो–दो आचार्य अपने शिष्य समुदाय सहित विराजित थे और १००से अधिक साध्वी समुदाय भी उपस्थित था। इसकी यह विशेषता भी उल्लेखनीय है कि दीक्षा के पश्चात् उपस्थित करीब३० हजार से भी अधिक जनमेदिनी मे भी बिना ध्वनि-विस्तारक यत्र के आचार्यश्री के धारा प्रवाही प्रवचन मे प्रारम्भ से लेकर अत तक अपूर्व शाति बनी रही। जिन १५ विरक्तात्माओ ने आचार्यश्री के समक्ष सयमी जीवन स्वीकार किया वे इस प्रकार थी—श्री चम्पालालजी टाटिया, राजनादगाव, श्री धर्मेन्द्रकुमारजी सुपुत्र श्री हेमराजजी देशलहरा साखटा महाराष्ट्र, कुमारी जमुना सुपुत्री श्री राणुलालजी गिडिया राजनादगाव, कुमारी अंगूरबाला सुपुत्री श्री हस्तीमलजी श्री श्रीमाल रतलाम, कुमारी विमला सुपुत्री श्री गेंदमलजी साखला, छुईखदान म.प्र, कुमारी कमला सुपुत्री श्री मोतीलालजी बुरड, केशकाल म.प्र. सुश्री सुमनलता सुपुत्री श्री हस्तीमलजी श्री श्रीमाल रतलाम, सुश्री मणिप्रभा सुपुत्री श्री भवरलालजी बैद गगाशहर, सुश्री सरला सुपुत्रीश्री जवरीलाल जी पीचा नागौर, सुश्री सरोज सुपुत्री श्री उत्तमचन्दजी नाहर जगदलपुर, बस्तर, कुमारी सुप्रतिभा सुपुत्री श्री आसकरणजी ओस्तवाल राजनादगाव, सुश्री काता सुपुत्री श्री सोहनलालजी चंडालिया कपासन, सुश्री विजया सुपुत्री श्री मूलचदजी भसाली गगाशहर, सुश्री कुसुम एव सुमन सुपुत्रिया श्री गुलाबचन्दजी गुलगुलिया बीकानेर।

इस अवसर पर अहमदाबाद सघ के मत्री-श्री पीरदानजी पारख ने निम्नाकित ६ सूत्री योजना प्रस्तुत करके मुमुक्षु आत्माओ द्वारा ससार परित्याग के साथ–साथ श्रावक-श्राविका वर्ग से भी त्याग प्रत्याख्यानो की यथाशक्ति भेंट आचार्यश्री के चरणो मे चढाने की अपील की –

१ १५०० जीवो को अभयदान, जिसमे लगभग ३ लाख का अनुदान ।

२ १५०० भाई–बहिनो द्वारा तप साधना जिसमे ५०० अट्म (तेले) ५०० छट्ट (बेले) एव ५०० उपवास ।

३ १५०० व्यक्ति जुआ, शराब एव मास का आजीवन परित्याग करे ।

४. १५ दम्पतियो को आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने हेतु प्रेरित करे ।

५ १५० व्यक्ति दहेज न मागने का सकल्प करे और अपनी अपेक्षा से दहेज कम आने पर आगत कन्या के साथ दुर्व्यवहार न करने की प्रतिज्ञा ले ।

६ राजस्थान सेवा समिति द्वारा सचालित चतुर्भुज लाजपतराय हॉस्पिटल हेतु बडी राशि का ध्रुव फण्ड कायम करना व ब्याज से रोगियो को निशुल्क औषधि दिलवाना ।

इस छ. सूत्री योजना मे चौथे सूत्र को छोडकर अन्य पाच सूत्रो की पूर्ति मे पर्याप्त सफलता मिली । जिसकी पूर्ति अहमदाबाद चातुर्मास तक करीब पहुच गई ।

अहमदाबाद मे तीन आचार्यों का भावपूर्ण मिलन भी एक उल्लेखनीय प्रसग रहा । आचार्य त्रय आचार्यश्री नानालालजी म सा, बरवाला सम्प्रदाय के आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा. एव दरियापुरी आठकोटी सम्प्रदाय के आचार्यश्री शातिलालजी म सा का यह शुभ मिलन नवरगपुरा मे हुआ । आचार्यत्रय के मध्य सैद्धातिक प्रश्नो पर गहरी चर्चा भी हुई तो समाधान भी लिये गये । महावीर जयन्ति के अवसर पर नारायणपुरा मे आचार्यश्री का 'आर्य सस्कृति' मे अहिसा की प्रधानता विषय पर सारगर्भित सार्वजनिक प्रवचन हुआ जिससे प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियो ने हिंसा करके बनाए जाने वाले शृगार-प्रसाधनो को उपयोग मे नही लेने के सकल्प लिये । अक्षय-तृतीया का प्रसग भी नवरगपुरा मे ही सम्पन्न हुआ।

अहमदावाद वर्षावास के पूर्व के प्रवास काल मे तथा वर्षावास मे सम्पन्न आध्यात्मिक प्रक्रियाओ से आचार्यश्री की चारित्रनिष्ठा एव व्यक्तिगत मृदुता का गुजरात के विभिन्न सम्प्रदायों के साधु-साध्वी समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा । वर्षावास मे आचार्यश्री की प्रवचन धारा समीक्षण साधना के रूप मे प्रवाहित होती रही ।

उसमे नवरगपुरा सघ के मन्त्री श्री काति भाई, स्था वाडी नारायणपुरा सघ के मन्त्री श्री जयती भाई, एच एल कॉमर्स कॉलेज के प्रिंसिपल श्री वी. आर सिंघवी तथा राजस्थान सेवा समिति के महमन्त्री श्री सम्पतराजजी हुडिया ने आपश्री के स्वागत मे अपने हृदयोद्गार व्यक्त किये। मधुर वक्ता श्री सरदारमुनिजी म सा ने धाराप्रवाही गुजराती मे फरमाया–जैन जगत के सितारे जन–जन के तारणहार आचार्यश्री के दर्शन चार-पाच वर्ष पूर्व मैंने बीकानेर मे किये थे तभी गुजरात मे पधारने की आग्रहपूर्ण विनती भी की थी। आज हमारी कामना सफल हुई। मैं आपश्री का हृदय से स्वागत करता हू। आचार्यश्री ने अपने सक्षिप्त प्रवचन मे सच्ची शांति और सच्चे सुख की प्राप्ति के लिये परस्पर भावात्मक एकता पर बल दिया।

महावीर जयती एव अक्षय तृतीया के पारणे भी यही पर हुए तथा वि.स. २०३६ का वर्षावास भी आचार्यश्री ने यही पर व्यतीत किया आपश्री के यहा पधारने के पश्चात् गुजराती सम्प्रदायो के आचार्य एव सत–सती आपश्री से मिलने के लिये पधारे। मधुर वक्ता श्री सरदार मुनिजी म सा. के अतिरिक्त दरियापुरी आठ कोठी सम्प्रदाय का महासती श्री मोटा हीराबाई, महासती श्री सुशीलाबाई तथा इसी सम्प्रदाय के आचार्य श्री शातिलालजी म सा व उनके शिष्य श्री वीरेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि आपश्री से मिले तथा विविध विषयो पर उन्होने वार्तालाप किया।

अहमदाबाद मे आचार्यश्री के विराजने की यह महत्वपूर्ण उपलब्धि रही कि ब्यावर मे हुए १५ मुमुक्षु आत्माओ के दीक्षा महोत्सव के पश्चात् यहा पर पुन. १५ ही मुमुक्षु आत्माओ का दीक्षा महोत्सव भव्य रीति मे आयोजित हुआ। इस दीक्षा महोत्सव की यह विशेषता थी कि दो–दो आचार्य अपने शिष्य समुदाय सहित विराजित थे और १००से अधिक साध्वी समुदाय भी उपस्थित था। इसकी यह विशेषता भी उल्लेखनीय है कि दीक्षा के पश्चात् उपस्थित करीब३० हजार से भी अधिक जनमेदिनी मे भी विना ध्वनि-विस्तारक यत्र के आचार्यश्री के धारा प्रवाही प्रवचन मे प्रारम्भ से लेकर अंत तक अपूर्व शाति बनी रही। जिन १५ विरक्तात्माओ ने आचार्यश्री के समक्ष सयमी जीवन स्वीकार किया वे इस प्रकार थी—श्री चम्पालालजी टाटिया, राजनादगाव, श्री धर्मेन्द्रकुमारजी सुपुत्र श्री हेमराजजी देशलहरा साखटा महाराष्ट्र, कुमारी जमुना सुपुत्री श्री रागुलालजी गिडिया राजनादगाव, कुमारी अंगूरबाला सुपुत्री श्री हस्तीमलजी श्री श्रीमाल रतलाम, कुमारी विमला सुपुत्री श्री गेंदमलजी माखला, छुईखदान म प्र, कुमारी कमला सुपुत्री श्री मोतीलालजी बुरड, केशकाल म प्र. सुश्री सुमनलता सुपुत्री श्री हस्तीमलजी श्री श्रीमाल रतलाम, सुश्री मणिप्रभा सुपुत्री श्री भवरलालजी बैद गगाशहर, सुश्री सरला सुपुत्रीश्री जवरीलाल जी पीचा नागौर, सुश्री सरोज सुपुत्री श्री उत्तमचन्दजी नाहर जगदलपुर, बस्तर, कुमारी सुप्रतिभा सुपुत्री श्री आसकरणजी ओस्तवाल राजनादगाव, सुश्री काता सुपुत्री श्री सोहनलालजी चण्डालिया कपासन, सुश्री विजया सुपुत्री श्री मूलचदजी भसाली गगाशहर, सुश्री कुसुम एव सुमन सुपुत्रिया श्री गुलाबचन्दजी गुलगुलिया बीकानेर।

इस अवसर पर अहमदाबाद सघ के मत्री श्री पीरदानजी पारख ने निम्नाकित ६ सूत्री योजना प्रस्तुत करके मुमुक्षु आत्माओ द्वारा ससार परित्याग के साथ–साथ श्रावक-श्राविका वर्ग से भी त्याग प्रत्याख्यानो की यथाशक्ति भेंट आचार्यश्री के चरणो मे चढाने की अपील की –

१ १५०० जीवो को अभयदान, जिसमे लगभग ३ लाख का अनुदान ।

२ १५०० भाई–बहिनो द्वारा तप साधना जिसमे ५०० अट्ठम (तेले) ५०० छट्ट (बेले) एव ५०० उपवास ।

३ १५०० व्यक्ति जुआ, शराब एव मांस का आजीवन परित्याग करे ।

४ १५ दम्पतियो को आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने हेतु प्रेरित करे ।

५. १५० व्यक्ति दहेज न मागने का सकल्प करे और अपनी अपेक्षा से दहेज कम आने पर आगत कन्या के साथ दुर्व्यवहार न करने की प्रतिज्ञा ले ।

६ राजस्थान सेवा समिति द्वारा सचालित चतुर्भुज लाजपतराय हॉस्पिटल हेतु बडी राशि का ध्रुव फण्ड कायम करना व ब्याज से रोगियो को नि शुल्क औषधि दिलवाना ।

इस छ सूत्री योजना मे चौथे सूत्र को छोडकर अन्य पाच सूत्रो की पूर्ति मे पर्याप्त सफलता मिली । जिसकी पूर्ति अहमदावाद चातुर्मास तक करीब पहुच गई ।

अहमदावाद मे तीन आचार्यो का भावपूर्ण मिलन भी एक उल्लेखनीय प्रसग रहा । आचार्य त्रय आचार्यश्री नानालालजी म सा , बरवाला सम्प्रदाय के आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म.सा एव दरियापुरी आठकोटी सम्प्रदाय के आचार्यश्री शातिलालजी म सा का यह शुभ मिलन नवरगपुरा मे हुआ । आचार्यत्रय के मध्य सैद्धातिक प्रश्नो पर गहरी चर्चा भी हुई तो समाधान भी लिये गये । महावीर जयन्ति के अवसर पर नारायणपुरा मे आचार्यश्री का 'आर्य सस्कृति' मे अहिंसा की प्रधानता विषय पर सारगर्भित सार्वजनिक प्रवचन हुआ जिससे प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियो ने हिंसा करके बनाए जाने वाले शृगार-प्रसाधनो को उपयोग मे नही लेने के सकल्प लिये । अक्षय-तृतीया का प्रसग भी नवरगपुरा मे ही सम्पन्न हुआ।

अहमदावाद वर्षावास के पूर्व के प्रवास काल मे तथा वर्षावास मे सम्पन्न आध्यात्मिक प्रक्रियाओ से आचार्यश्री की चारित्रनिष्ठा एव व्यक्तिगत मृदुता का गुजरात के विभिन्न सम्प्रदायों के साधु-साध्वी समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा । वर्षावास मे आचार्यश्री की प्रवचन धारा समीक्षण साधना के रूप मे प्रवाहित होती रही ।

यह आश्चर्य का विषय था कि बहुसख्यक गुजराती श्रोताओ की दृष्टि से आपश्री ने विना किसी विशेष पूर्वाभ्यास के गुजराती भाषा मे प्रवचन देने प्रारम्भ कर दिये ।

वर्षावास समाप्त कर सौराष्ट्र के कई श्री सघो की भावभरी विनती पर आचार्यश्री ने सौराष्ट्र की दिशा मे विहार किया । चातुर्मास समाप्ति पश्चात् शासन प्रभाविका विदुषी लीला वाई महासतीजी, विदुषी कुसुमवाई महासतीजी आदि सती मण्डल के आग्रह से आपश्री ने अपनी मर्यादानुसार रेखा व्हेन को दीक्षित किया ।

सफल सौराष्ट्र प्रवास एवं
भावो की नगरी में भावामृत वर्षा

सौराष्ट्र के सुरेन्द्रनगर, वीरमगाम, लखतर, भावनगर, जूनागढ, बटवाला आदि कई स्थान स्पर्शने की आचार्यश्री के ममक्ष विनतिया की । उनमे से सुरेन्द्रनगर सघ के विशेष आग्रह को ध्यान मे रखते हुए आपश्री ने सुरेन्द्रनगर की दिशा मे विहार करने का सकेत फरमाया। नवरगपुरा से आपश्री पालडी पधारे । यहा पर ज्ञानचर्चा का क्रम वहुत सुन्दर रीति से चला। अन्तिम दिन सघ के मत्री श्री खेमचन्दभाई दडिया ने कहा-मैं पिछले४५वर्षों से साधु-मुनिराजों के प्रवचन एव समाधान मुनता रहा हू किन्तु आपश्री ने जिस प्रकार आगमिक विषयो पर हृदय-स्पर्शी विवेचन किया एव प्रश्नो के सचोट समाधान वताए वैसा मैंने कभी नही सुना । अध्यक्ष श्री पोपटभाई ने भी ऐसे ही भाव प्रकट किये । यहा से आप श्री सरखेम, तेलाव, साणद होते हुए वीरमगाम पधारे । यहा जैन एव जैनेतर लोगो ने आपश्री के प्रवचनो का खूब लाभ उठाया। वढवाण सिटी मे आपश्री का आचार्य पद ग्रहण दिवस समारोह आयोजित किया गया, सुरेन्द्र नगर मे गुजराती सम्प्रदायो के कई सत–सतियो ने आपश्री की सेवा का लाभ लिया । यहा पर आचार्यश्री ने सयमी जीवन की शुद्धता को अक्षुण्ण वनाये रखने की क्रातिकारी प्रेरणा दी ।

वि म २०४० के चातुर्मास हेतु आपश्री की सेवा मे सौराष्ट्र के कई श्रीमघो की भावभरी विनतिया प्रस्तुत हुई । मेवाड और मारवाड के भी कई स्थानो की विनतिया थीं । उनमे मे आचार्यश्री ने भावो की नगरी भावनगर के लिये चातुर्मास हेतु अपनी स्वीकृति प्रदान की । इस स्वीकृति मे प्रवल प्रभावक आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म.सा तथा प्रखर व्याख्याता सरदार मुनिजी म सा आदि का आग्रह भी विशेष था जहा दोनो आचार्यों ने परम स्नेह के साथ सयुक्त चातुर्मास किया ।

आचार्यश्री ने ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए सौराष्ट्र का व्यापक प्रवास किया । सायला, सुदामडा, फौरटा, चौकडी, चूडा, वेजलका होते हुए आपश्री मुनिवृन्द ठाणा ८ सहित राणपुर पधारे । यहा धर्म भावना का सुन्दर वातावरण रहा । जाणोला गाव मे रतलाम मे श्री पी सी. चौपडा के तार मे परम विदुषी शासन प्रभाविका महासती श्री मनोहरकवरजी के स्वर्गवास

का दुखद समाचार मिला । यहा से आपश्री बरवाला पधारे जहा आचार्यश्री चम्पक मुनिजी म सा विराज रहे थे । वहा कुछ दिन विराज कर आपश्री का पधारना धन्धुका हुआ जहा अक्षय तृतीया के पारणो का प्रसग सम्पन्न हुआ । पारणो मे ५६ तपस्वी आत्माए सम्मिलित हुईं ।

तदनन्तर लीबाला, रघोला, आवला, सोनगढ, सिहोर, राजपुरा, वरतेज, विजयराज नगर आदि स्थानों को पावन करते हुए दिनाक २० जुलाई १९८३ को आपश्री का आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा के साथ भावनगर मे भव्य प्रवेश हुआ । स्वागत का आयोजन बहुत ही भावपूर्ण था ।

भावनगर चातुर्मास मे दैनिक धार्मिक कार्यक्रम अतीव अनुशासन एव धर्मोत्साह के साथ सम्पन्न होते थे । आचार्यश्री के प्रवचन अतीव भावपूर्ण एव उद्बोधक होते थे, जिनसे यह प्रतीत होता था कि भावो की नगरी मे मानो आचार्यश्री के भावाकाश से भावामृत की सतत वर्षा हो रही हो । आपश्री के प्रवचनो मे कभी प्लेटो के दार्शनिक सिद्धान्त की विवेचना होती तो कभी भारत की शासन व्यवस्था पर भी साधु भाषा मे प्रकाश डाला जाता । ग्राम-धर्म, नगर धर्म, राष्ट्र-धर्म आदि की व्याख्या करते हुए आचार्यश्री शाश्वत स्वतन्त्रता का विवेचन करते और आत्मा को बधनमुक्त करने की मार्मिक प्रेरणा देते ।

इस वर्षावास मे पर्यूषण-पर्व विशेष ज्ञान-साधना, कठिन तपश्चरण एव धर्ममय प्रगाढ उमग के साथ मनाया । इसी वर्षावास मे वैराग्यवती आत्माओ-श्रीमती रक्षा बहिन धर्मपत्नी स्व० श्री पारसमलजी कवाड-पाली मारवाड, सुश्री कुसुम सुपुत्री श्री सम्पतलालजी मुकीम-अहमदाबाद एव कुमारी मजुलता तथा वीणा सुपुत्रिया श्री समर्थमलजी पटवा वैशाली नगर भिलाई म प्र की दीक्षाए आपश्री के सान्निध्य मे सानद सम्पन्न हुईं। इन्ही दीक्षाओ के साथ सोत्साह दिनाक ८-१०-१९८३ को आचार्यश्री का युवाचार्य पदारोहण दिवस भी मनाया गया । इस अवसर पर कई सतो एव सतियो ने आचार्यश्री का गुणगान किया ।

आगामी चातुर्मास हेतु विनतियो का ताता बध गया । बम्बई, उदयपुर, मद्रास, रतलाम, कानोड आदि कई स्थानो के श्री सघो ने आचार्यश्री से अपने-अपने क्षेत्रो मे चातुर्मास करने का भावभरा निवेदन किया । किन्तु उस समय आचार्यश्री ने सभी विनतियो को झोली मे ग्रहण करके उचित अवसर पर निर्णय करने का आश्वासन दिया ।

भावनगर मे तपाराधन ने उच्च कीर्तिमान स्थापित किया । मुनिश्री बलभद्रजी म सा. ने ५१ दिन का, श्री पारसमुनिजी म सा ने ३० दिन का, श्री तरुणमुनिजी म सा ने ३० दिन का तथा महासतीजी श्री जयन्तश्रीजी ने ३१ दिन का उपवास किया । अन्य तपस्याए इस प्रकार हुईं—३३ दिन १, ३१ दिन ६, ३० दिन ११, २५ दिन १, २१ दिन २, २० दिन १, १९ दिन १, १६ दिन ७, १५ दिन ५, १२ दिन १, ११ दिन १०, ९ दिन ८, ८ दिन ५०,

६ दिन ७, तथा ५ दिन १ । आचार्य द्वारा एक सयुक्त निवेदन (देखिये परिशिष्ट सख्या ८) भी जारी किया गया ।

भावनगर चातुर्मास की समाप्ति पर आपश्री की विदाई का दृश्य अतीव भावपूर्ण था । मुख्यरूप मे आचार्यद्वय एव उनके सत मण्डल के मध्य जो अतीव स्नेहपूर्ण व्यवहार रहा था, उसके फलस्वरूप विदाई वेला के हृदयोद्गार भी बहुत ही भावपूर्ण थे । विद्वान् श्री सरदार मुनिजी म सा ने फरमाया–सौराष्ट्र और गुजरात मे इस क्रातिकारी पाट परम्परा के महान् आचार्यश्री श्रीलालजी म सा तथा ज्योतिर्धर आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा का पदार्पण हुआ था । शात–क्राति के जन्मदाता, आचार्यश्री गणेशीलालजी म.सा से भी इधर पधारने के लिये कई वार विनती की गई किन्तु अस्वस्थता की वजह से वे नही पधार सके । उनके सुशिष्य समता विभूति आचार्य प्रवर श्री नानालालजी म सा. ने विनती स्वीकार करके गुजरात एव सौराष्ट्र मे पदार्पण किया जिससे आपश्री के सद्गुणो की सुवास सव ओर फैल गई । भावनगर चातुर्मास मे तो ज्ञान-ध्यान, तप-त्याग का प्रवाह ही वह चला । आचार्य प्रवर जैन–सस्कृति का श्रेय अधिकाशत आपको ही जाता है । सौराष्ट्र भूमि का सौभाग्य था कि उस पर ऐसे महान् सत के चरण पडे । आचार्यश्री ने फरमाया कि विद्वान् सरदारमुनिजी गुणग्राही हैं । वे भव्य भावना रखते है । लेकिन मैं तो यही कहता हू कि मेरे जैसे 'नाना' बालक को बहुत ज्यादा ऊपर नही चढाना चाहिये । मुझे यह सब सुनकर सकोच होता है । हमारा यह चातुर्मास कितनी प्रेम भावना एव आत्मीयता से पूर्ण हुआ है यह सभी के सामने है । आपश्री ने वीर लोकाशाह के जीवन कार्यो पर भी प्रकाश डाला । अन्त मे सहमन्त्री श्री मनसुख भाई ने अपने भाव व्यक्त किये–आपश्री का जीवन पूर्ण रूप से समतामय है । आपश्री 'जिन नही पर जिन सदृश' हैं । आचार्यश्री की गुण गरिमा के लिये मेरे पास शब्द नही है । भावनगर चातुर्मास का जैन एव जैनेतर समाज ने पूरा–पूरा लाभ उठाया । आज पूर्णाहुति के अन्तिम दिवस पर श्री सघ आपश्री का हृदय से आभार व्यक्त करता है ।

यहा से आपश्री कृष्णनगर मे विराजे । तदनन्तर ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आचार्यश्री का विहार रतलाम की तरफ हुआ । (प्रबुद्धजनो के उद्गारो के लिये परिशिष्ट सख्या ९ देखे) ।

पिछली पंच–शती का अभूतपूर्व दीक्षा–महोत्सव

गुजरात एव सौराष्ट्र भूमि को अपने उपदेशामृत से सिंचित करते हुए आचार्यश्री ज्योतिर्धर जवाहराचार्य की जन्मस्थली थादला पधारे । वहा पर अपूर्व धर्म–जागृति हुई । वहा से सवासा, वामनिया, पेटलावद, करड़ावद, करवड, रावटी आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए दिनाक १९-२–८४ को आपश्री मालवा के गौरवशाली धर्मनगर रतलाम मे पधारे जहा एक अतिभव्य आयोजन सम्पन्न होने को था ।

लगभग पाच शताब्दियो पूर्व वीर लोकाशाह की क्रांति के समय एक साथ बडी सख्या मे भागवती दीक्षाए सम्पन्न हुई थी । उसके बाद यहा पर पहला अवसर उपस्थित होने वाला था कि जिस दिन हमारे शासन नायक अतिशय पुण्य प्रभावन्त आचार्यश्री के चरणो मे एक साथ २५ मुमुक्षु आत्माए सयम साधना पथ पर अग्रसर होने को तत्पर थी । इस दृष्टि से आचार्यश्री की परम तेजस्विता एव परम प्राभाविकता तो अभूतपूर्व है ही एव यह दीक्षा महोत्सव भी अभूतपूर्व सिद्ध हुआ ।

इस दीक्षा-महोत्सव का शुभ-समाचार ज्यो ही रतलाम नगर मे तथा देश के सभी क्षेत्रो मे पहुचा, परमोत्साह की लहरे हिलोरें मारने लगी सब ओर "रतलाम चलो, रतलाम चलो" का स्वर गूज उठा तो रतलाम नगर मे भी यह महोत्सव मात्र स्थानकवासी समाज अथवा सम्पूर्ण जैन समाज (यथायोग्य स्थानकवासी, मूर्तिपूजक आदि सभी) ने इस महोत्सव की व्यवस्था का बीडा उठाया तो अग्रवाल, माहेश्वरी, ब्राह्मण, बोहरा (मुसलमान) ईसाई आदि सभी समाज के लोगो ने यथाशक्य अधिकाधिक सहयोग प्रदान किया । सारे नगर मे एक अनूठा ही वातावरण छा गया था हर टेम्पो, तागे और वाहन पर या हर होटल और रेस्टोरेन्ट मे 'जय गुरु नाना' के बेनर लगे हुए थे । सभी नागरिको की जबान पर एक ही चर्चा थी-आचार्य के तेजोमय व्यक्तित्व की ओर उनके सान्निध्य मे होने वाली २५ मुमुक्षु आत्माओ की दीक्षा की।

देश के विभिन्न प्रातो—उत्तरप्रदेश, गुजरात, पश्चिमी बगाल, महाराष्ट्र, उडीसा, कर्नाटक, दिल्ली, आसाम, सौराष्ट्र आदि के सिवाय राजस्थान और मध्यप्रदेश के तो गाव-गाव से दर्शनार्थी उमड पडे । मद्रास समता युवा सघ स्पेशल ट्रेन लेकर आया तो इन्दौर सघ ७ बसें, बीकानेर, उदयपुर, बडीसादडी, कानोड, रायपुर सघ ४-४ बसें, भीनासर ५ बसें, ब्यावर ३ बसें, अहमदाबाद चित्तोडगढ, देशनोक, दुर्ग, जावद, कजारडा, गगाशहर, नीमगावखेडी, नोखामण्डी, उज्जैन, पीपलिया मण्डी सघ २—२ बसें तथा अजमेर, भदेसर, दिल्ली, धार, जोधपुर, बीड बेतुल, राजनादगाव, सिंगोली, मनासा, मनावर, निम्बाहेडा, प्रतापगढ भीडर सघ १—१ बस लेकर रतलाम पहुचे । इसके अतिरिक्त भी हजारो की सख्या मे दर्शनार्थी उपस्थित हुए जिनका सकलन नही हो पाया ।

इस प्रकार दीक्षा के दिन रतलाम सघ के भोजनालय मे जीमने वालो की सख्या करीब एक लाख तक बतलाई जाती है ।

धर्मनगर रत्नपुरी (रतलाम) मे २५ धर्मरत्नो ने अध्यात्म क्षेत्र के अमूल्य रत्न आचार्यश्री की चरण सेवा मे रत्न-त्रय के साधना पथ पर चरण बढाये जिनके नाम हैं—
१. श्री धनपालजी सुपुत्र श्री कारूलालजी काठेड जावद २. श्री कातिलालजी सुपुत्र श्रीनगराजजी चोरडिया, सेवटा-महाराष्ट्र, ३- सुश्री पुष्पा बाई सुपुत्री श्री इन्द्रचदजी पूगलिया, बीकानेर, ४. कुमारी गुणमाला एम.ए प्रि (सस्कृत) बी एड सुपुत्री श्री मदनलालजी नलवाया उदयपुर, ५ कुमारी सरोजबाला एम.ए. सुपुत्री श्री समरथमलजी जैन गोटावाला मन्दसौर ६ कुमारी,

सरिता सुपुत्री श्री डूगरमलजी दस्साणी कलकत्ता, ७ कुमारी शकुन्तला सुपुत्री श्री नाथूलालजी गाधी एडवोकेट रतलाम, ८ कुमारी निर्मला सुपुत्री श्री दयालालजी दोशी उदयपुर, ९ कुमारी शारदा सुपुत्री श्री हजारीमलजी भसाली, डोडी लोहारा म प्र. १० कुमारी रेणुका सुपुत्री श्री मुलतानमलजी गोलछा वीकानेर, ११ कुमारी तारा सुपुत्री श्री भवरलालजी अव्वानी चित्तौडगढ १२ कुमारी काता सुपुत्री श्री सूरजमलजी नपावलिया मोडी म.प्र, १३ श्रीमती प्रीतिबाला भण्डारी सुपुत्री श्री मिश्रीलालजी माडोत वडाखेडा(राज०) १४ सुश्री सतोपकुमारी सुपुत्री श्री मेघराज जी नूणावत भीनासर, १५ कुमारी राजकुमारी सुपुत्री श्री रखबचन्दजी पिरोदिया रतलाम, १६ कुमारी मुक्ता सुपुत्री श्री लूणकरणजी बाठिया, वीकानेर १७ सुश्री सगीता कुमारी सुपुत्री श्री शातिलालजी पोखरना बेंगू, १८. कुमारी राजकुमारी सुपुत्री श्री नुनियामलजी जैन, वगु मु डा (उडीसा) १९ कुमारी आजाद सुपुत्री श्री गुलाबचंदजी भाणावत कानोड २० सु श्रीमजू सुपुत्री श्री तोलारामजी सेठिया बीकानेर, २१ सुश्री गुणश्री(गायत्री)सुपुत्री स्व श्री दौलतरामजी जैन, पोरवाल चौथ का बरवाडा (राज०),२२ कुमारी हर्ष कुमारी सुपुत्री श्री रुगलालजी काकरिया नोखा, २३ सुश्री किरण सुपुत्री श्री सुन्दरलालजी कछारा, पीपलिया मण्डी. २४ सुश्री अनीताकुमारी सुपुत्री श्री छगनलालजी काठेड,जावरा २५ सुश्री किरण कुमारी सुपुत्री श्री कन्हैयालालजी पीतलिया, पीपलिया मण्डी । इन मुमुक्षु आत्माओ मे कोई भी ऐसी नहीं थी जिसने कम से कम एक वर्ष का वैराग्यकाल न विताया हो । किन्तु इनमे ज्यादातर वे थीं जिन्होने चार से लेकर ९ साल तक का वैराग्यकाल विताया था सभी ने काफी विस्तृत धार्मिक अध्ययन भी कर रखा था और कई ने साधुमार्गी बोर्ड से कोविद, विशारद एव शास्त्री तक की परीक्षाए उत्तीर्ण कर ली थी ।

इन सभी दीक्षार्थी भाई–बहिनो की जो शोभा यात्रा निकली वह अपने ढग की दर्शनीय निराली वतलाई गई ।

शोभायात्रा लगभग दो कि.मी लम्बी थी जिसमे रतलाम की जैन जनता के अलावा जैनेतर जनता बहुत बड़ी सख्या मे शामिल थी । जैनेतर जनता के नारे इस प्रकार गू ज रहे थे।

जय गुरु नाना हमारे हैं
जय गुरु नाना तुम्हारे हैं
जय गुरु नाना सभी के हैं
सबके भाग्य विधाता–जयगुरु नाना ।

यह शोभा यात्रा दिनाक ३–३–१९८४ को प्रात ८ ३० बजे जैन विद्यालय से प्रारम्भ हुई जो लक्कडपीठा, चादनीचौक, तोपखाना, वजाजखाना, नोलाईपुरा, घास बाजार, माणकचौक, धानमण्डी, न्यूरोड होते हुए नेहरू स्टेडियम पहुची ।

शोभा यात्रा मे पहले दिन मूर्ति पूजक जैन खतरगच्छ समाज की ओर से विदुषी महासती श्री चन्द्रप्रभाजी के सान्निध्य मे मुमुक्षु आत्माओ का भव्य अभिनन्दन किया गया जो

जैन समाज की एकता को प्रेरणा देने वाला था । इसी समाज ने इस दिन सब की शोभा यात्रा भी निकाली । इस शुभावसर पर देश के विभिन्न क्षेत्रो से प्राप्त अनेक शुभ सदेश पढे गये । जिनमे आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा की ओर से प्राप्त सदेश अतीव प्रेरणास्पद था ।

दिनाक ४ मार्च १९८४ का दिन जैन समाज के इतिहास मे स्वर्णाक्षरो मे लिखा जायगा, जिस दिन आचार्य प्रवर के सान्निध्य मे एक साथ २५ मुमुक्षु, आत्माए भोग से योग की ओर, राग से विराग की ओर एव आगार से अणगार की ओर मुडी । दीक्षा महोत्सव स्थानीय कालिकामाता के विशाल मैदान मे आयोजित था जिसमे भी उपस्थित जन समुदाय समा नही रहा था । मगलाचरण से लेकर दीक्षा दान तक के कार्यक्रम आचार्यश्री प्रवर की पुण्यशाली छत्रछाया मे अपूर्व शाति एव शालीनता से सम्पन्न हुए । उस समय आपश्री के आज्ञानुवर्ती ३० मुनिराज तथा १२६ महासतियाजी विराजमान थे । इन दीक्षाओ को मिलाकर तब तक आपश्री की नेश्राय मे कुल २१७ दीक्षाए सम्पन्न हो गई और तभी तीन और मुमुक्षु आत्माओ की दीक्षा हेतु आज्ञा पत्र प्राप्त हुए । दीक्षा प्रसग पर उपस्थिति लगभग एक–डेढ लाख तक आकी गई । २५ दीक्षा मिलाकर १८१ सत-सतियो का एक स्थान पर एकीकरण का उल्लेख नही मिलता ।

इस भव्य दीक्षा महोत्सव को सफल बनाने मे रतलाम श्री सघ के अभूतपूर्व सहयोग की मुक्त कठ से जनता द्वारा सराहना की गई । इस अवसर पर आचार्यश्री नानालालजी म सा. की दिव्य प्रतिभा की ख्याति रतलाम एव मध्यप्रदेश के अनेक समाचार पत्रो ने आपश्री के प्रभावशाली प्रवचनो को अथवा दीक्षा महोत्सव के समाचारो को प्रमुखता के साथ प्रकाशित करके जन–जन तक पहुचाई । इन समाचार पत्रो मे नई दुनिया इन्दौर, रतलाम समाचार, जनवृत्त-प्रसारण, आलोकन, हमदेश, स्वदेश दैनिक पत्र मुख्य थे । पत्रकार श्री विनोद जैन तथा स्वदेश के प्रतिनिधि श्री शरदजोशी ने आचार्यश्री से भेंटवार्ता करके आपश्री के समुन्नत विचारो का प्रसारण किया ।

आचार्यश्री का पूर्ण कल्पकाल तक रतलाम मे विराजना रहा यही पर कई सघो के अग्रणी श्रावक आपश्री के आगामी चातुर्मास हेतु उपस्थित हुए । आपश्री ने अपने उपचार की दृष्टि से सभी आगारो सहित बम्बई साधुमार्गी जैन सघ को आगामी वर्षावास की स्वीकृति दी ।

बहु आयामी महानगरी बम्बई में आचार्यश्री का श्रद्धा-भावभीना स्वागत

रत्नपुरी (रतलाम) मे रत्नत्रय के साधको की पच्चीस दीक्षाओ का ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न करके आचार्यश्री ने यथा स्वीकृति- बहु आयामी महानगरी बम्बई (बोरीवली) की दिशा मे प्रस्थान किया । ज्यो–ज्यो अपने आराध्य के चरण आगे बढते गये, त्यों–त्यो बम्बई

साधुमार्गी सघ का प्रत्येक सदस्य अधिकाधिक पुलकित होने लगा—उसके मानस मे आन्तरिक आनन्द की ऊर्मिया तरगित होने लगी ।

रतलाम से विहार हो जाने के पश्चात् जीरावद ग्राम मे धूलिया सघ की तरफ से श्री कान्तिलालजी चौधरी, श्री नेमीचन्दजी बोरा आदि पन्द्रह श्रावको ने यह विनति आचार्यश्री की सेवा मे प्रस्तुत की कि धूलिया नगर की स्पर्शना की कृपा की जाय तथा अक्षय तृतीया के अवसर पर वर्षीतप के पारणो का लाभ भी इसी नगर को प्रदान कराया जाय । उनकी भक्ति भावना को दृष्टि मे रखते हुए आचार्यश्री ने धूलिया क्षेत्र पर अनुग्रह कर अपनी स्वीकृति प्रदान की । इससे धूलिया सघ मे हर्ष की लहर दौड गई ।

सोनगीर आदि ग्रामो मे धर्म जागृति का शखनाद करते हुए दिनाक १–५–८४ को आचार्यश्री का धूलिया नगर मे पदार्पण हुआ । दिनाक ४–५–८४ को अक्षय तृतीया के पावन पर्व पर वहा के शिवाजी महाविद्यालय के विशाल प्रागण मे समारोह आयोजित किया गया, जिसमे आचार्यश्री ने उद्‌बोधन दिया कि आत्मा की निधि अक्षय होती है और उसकी प्राप्ति अन्तर्हृदय की जागृति से ही सम्भव हो सकती है । यह अक्षय तृतीया ज्ञान, दर्शन एव चारित्र्य की त्रिपुरा से परिचित कराकर वैराग्यभाव को प्रबल बनाने की प्रेरणा देती है । प्रवर्तनी महासती श्री प्रमोदसुधाजी म सा ने आत्म स्वरूप मे रमण करने की प्रेरणा प्रदान की ।

कुल पारणार्थी ५७ भाई बहिने थे । राजस्थान से ३३, गुजरात से १, मालवा से ३, उडीसा से १, कलकत्ता मे १ तथा महाराष्ट्र से १८ बहिन पारणार्थी थे । आसपास के ग्रामो से तथा दूरस्थ नगरो से करीब २५०० दर्शनार्थियो का भी आगमन हुआ । यहा से मालेगाव, चादवड, कोकलगाव आदि ग्रामनगरो मे धर्मोद्योत प्रसारित करते हुए आचार्यश्री नासिक पधारे ।

आचार्यप्रवर नासिक पहली ही बार पधारे थे अत. तत्रस्थ क्षेत्र की आपश्री को पूरी जानकारी नही थी । पहले दिन प्रवचनोपरान्त उस स्थल की जानकारी हुई तो उसमे साधु मर्यादा के प्रतिकूल स्थिति परिलक्षित हुई । इस पर आचार्यश्री ने स्थानीय सघ के प्रमुख श्रावको को वैसा सकेत किया । तब श्रावको ने कल्पानुसार परिस्थिति बनाने का आश्वासन दिया । किन्तु दूसरे दिन प्रवचन स्थल पर पधारने के बाद विदित हुआ कि आश्वासन के अनुरूप कार्य नहीं हुआ है फिर भी सघ मे कोई विग्रह उत्पन्न न हो इस भावना से आचार्यश्री ने उस दिन पाडाल से बाहर के स्थान पर प्रवचन फरमा दिया । किन्तु तीसरे दिन प्रवचन का आग्रह करने पर आपश्री ने स्पष्ट फरमाया कि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादानुकूल स्थिति होने पर प्रवचन सम्भावित है । तब प्रमुख श्रावको ने दोपहर में वार्तालाप करने की बात कही । वार्तालाप के अनुसार ज्ञात हुआ कि उस स्थल के सिवाय अन्य उपयुक्त स्थल के होने पर भी कुछ प्रमुख श्रावक वहा प्रवचन करवाने की मन स्थिति मे नही हैं जबकि अन्य सभी लोग चाहते हैं। वैसी स्थिति मे नासिक संघ मे विभेद की स्थिति पैदा हो—ऐसा आचार्यश्री नही चाहते थे ।

नासिक संघ का गौरव भी बना रहे और श्रमण संस्कृति का अनुपालन भी अक्षुण्णरूप से चलता रहे एतदर्थ आचार्यश्री नासिक सिटी से विहार करके सिडको (नया नासिक) पधार गये जिससे सिटी के अनेक श्रद्धालुओ को अत्यन्त खेदानुभूति हुई तो सिडको के श्रद्धालु अनायास लाभ को पाकर प्रफुल्लता से पुलक उठे ।

सिडको मे ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया दिनाक १-६-८४ को आचार्यप्रवर का ६५वा जन्म दिवस अतीव भक्तिभाव से मनाया गया । जन्म जयन्ति का कार्यक्रम करीब ४ घटे तक चला । इस प्रसग पर आचार्यश्री ने फरमाया कि मैं तो आप सबकी जन्म जयन्तिया मनाना चाहता हू क्योकि विषमता से हटकर समता मे रमण करना प्रारम्भ करने पर आत्मा का एक प्रकार से नया जन्म होता है और ऐसा नया जन्म ही आध्यात्मिक साधना को परिपूर्ण बना सकता है । जीवन के आमूलचूल परिवर्तन के साथ ऐसे नये जन्म की जयन्तिया मनानी चाहिये ।

आचार्यश्री के ६५वें वर्ष मे प्रवेश करने की पावन वेला मे बम्बई साधुमार्गी सघ के अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता ने समता समाज रचना के लिये ६५ हजार के दान की घोषणा की । यहा से विल्टोली, घोटी, लासलगाव, इगतपुरी, कसराघाट, लतीफलाडी आदि क्षेत्रो को पावन करते हुए आपश्री भिवडी पधारे ।

उस समय भिवडी एव समीपस्थ क्षेत्रो मे साम्प्रदायिक दगो का जोर था जिसके कारण सेना की गश्त चल रही थी किन्तु आचार्यश्री के पदार्पण से वातावरण मे शाति की लहर फैल गई । समता विभूति के प्रभाव से विषमता का परिहार होने लगा ।

बम्बई के सघ–अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता ने महाराष्ट्र के मुख्यमन्त्री श्री वसन्त दादा पाटील के समक्ष जब अपने गुरुदेव के निष्कलक निर्मल व्यक्तितत्व का वर्णन किया तब मुख्यमन्त्री अत्यधिक प्रभावित हुए । दिनाक २३-६–८४ को अपने अन्य कार्यक्रमो को स्थगित कर वे बम्बई से हेलीकोप्टर द्वारा भिवडी मे आचार्यश्री के दर्शन हेतु उपस्थित हुए । उनके साथ उनकी धर्मपत्नी श्रीमती शालिनीबाई, शिक्षामत्री श्री सुधाकर नायक तथा निर्माण मन्त्री श्रीमती यशोधरा बजाज भी थी ।

श्री वसन्त दादा पाटील आदि ने दर्शनोपरान्त आचार्यश्री से स्वास्थ्य की पृच्छा की तथा प्रवचन श्रवण हेतु वे वही बैठ गये । आचार्यश्री ने वर्तमान युग मे बढती हुई विषमता के कारण मानव मूल्यो के ह्रास तथा अशान्ति के प्रसार को विश्लेषित करते हुए प्रश्न किया कि क्या भारतीय जनता ने वास्तव मे स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है? फिर आपश्री ने ही उत्तर दिया कि वास्तविक स्वतन्त्रता के अभाव मे ही साम्प्रदायिक दगे देखने को मिलते है । यद्यपि प्रशासन सत्ता के बल पर इन्हें शमित करने का प्रयास कर रहा है किन्तु यह शमन कब तक स्थायी रहने वाला है ? विषमता के इस रूप को शान्त करने के लिये जन–जन के हृदय मे समता

का समरस सिंचित करना होगा। आचार्यश्री ने समता समाज की रचना पर बल दिया तथा समता दर्शन के विविध-स्वरूपो पर प्रकाश डाला।

आचार्य प्रवर के मार्मिक उद्‌वोधन को मुख्यमन्त्रीजी आदि ने एकाग्रता के साथ श्रवण किया। उन्होने करवद्ध होकर मगल पाठ का श्रवण भी किया। भिवडी के विपदाग्रस्त लोगो को श्री चुन्नीलालजी मेहता की ओर से वस्त्र-वर्तन मुख्यमन्त्री ने एक अन्य कार्यक्रम में वितरित किये।

यह उल्लेखनीय है कि आधुनिकता के प्रवाह मे वहाते हुए कई आधुनिक सत अपनी मर्यादाओ से अलग हटकर यशोलिप्सा की दौड मे भागने लगते हैं परन्तु आचार्यश्री उस विरल व्यक्तित्व के धनी हैं जिन्हे सयमीय मर्यादाओ मे आशिक कटौती भी अभीष्ट नही होती है। जव मुख्यमन्त्रीजी का आगमन हुआ था, उस समय कई फोटोग्राफर उस समय के चित्र लेने को उत्सुक हो उठे थे किन्तु आचार्यश्री ने स्पष्ट सकेत कर दिया कि उनका चित्र कतई नही लिया जाना चाहिये। परिणाम स्वरूप जानकारी मिली कि भिवडी के कार्यक्रमो की फिलम टी वी पर जो फिलम दिखाई गई थी, उसमे कही भी आचार्यश्री का चित्र नही आया था।

वस्तुत· आचार्यश्री के चातुर्मास हेतु राजेन्द्रनगर (वोरीवली) मे प्रवेश का दृश्य विशाल जनसमुदाय के भक्तिभाव से ओतप्रोत दिखाई दे रहा था। घाटकोपर मे अपने चार प्रभाविक प्रवचनो से जन-मन मे आध्यात्मिक भावना को जगाते हुए जव आचार्यश्री ने वोरीवली पश्चिम से राजेन्द्रनगर की ओर प्रयाण किया तव सहस्राधिक जनमेदिनी ने ही अपने आराध्य का जयनाद गुजित नही किया वलिक विहार से पूर्व कुछ मिनट तक प्रकृति ने भी आपश्री के स्वागत मे वर्षा रूप हर्षाश्रु वरसाये। इस अवसर पर रतलाम, उदयपुर, अहमदावाद, मद्रास, जयपुर, वीकानेर, इन्दौर, वेंगलोर, उज्जैन, धूलिया आदि अनेक ग्रामनगरो से वडी सख्या मे दर्शनार्थी श्रद्धालुजन भी उपस्थित हुए थे।

राजेन्द्रनगर मे मगल प्रवेश के वाद यह जुलूस धर्मसभा के रूप में वदल गया। उस समय विशाल पाडाल पूरा भर गया था। सघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता, दौलतनगर सघ के प्रमुख श्री केसर भाई- अ. भा साधुमार्गी सघ के अध्यक्ष श्री दीपचन्दजी भूरा, महिला समिति की मत्री श्रीमती प्रेमलता वहिन, डॉ छावटा, वृहद् वम्वई (३२ सघ) महासघ के अध्यक्ष श्री गोजू भाई आदि ने अपने स्वागत भाषणो में भक्तिभाव पूरित विचार व्यक्त किये।

आठ पक्ष के श्री सुभाष मुनिजी म सा. आचार्यश्री को वोरीवली से राजेन्द्रनगर तक पहुचाने साथ पधारे। उन्होने भी अपने विचार व्यक्त किये कि जनता को ऐसे महान् आचार्य प्रवर के आत्मोद्धारक उपदेशो का अधिकाधिक लाभ लेना चाहिये।

आचार्य प्रवर ने इस अवसर पर विश्व शांति, धर्म एव विज्ञान के सम्बन्ध तथा निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा आदि विविध समस्याओ पर सचोट समाधान फरमाये। करीब

आधे घटे तक आपश्री का धारा प्रवाही प्रवचन चलता रहा। फिर मगल पाठ श्रवण कर जनता विसर्जित हुई।

स्वागतार्थ उपस्थित जन समुदाय के विषय मे कई लोगो के मुह से सुना गया कि बम्बई मे किसी सन्त महापुरुष के प्रवेश प्रसग पर इतनी अधिक सख्या मे जनता तथा उसका ऐसा भावभीना स्वागत पहली ही बार देखने मे आया है।



बम्बई के उपनगरो में धर्मोद्योत

आचार्य प्रवर बोरीवली का यशस्वी चातुर्मास सम्पन्न करके अपने शिष्य परिकर के साथ राजेन्द्रनगर से विहार कर बोरीवली वेस्ट मे श्रद्धालु भाई श्री लालचन्दजी घासवाला के स्वतन्त्र मकान मे पधारे। विहार मे भावभीनी विदाई देते हुए विशाल सख्या मे जन समूह साथ चल रहा था जो कि भाई लालचन्दजी के मकान के बाहर मैदान मे सभा के रूप मे परिवर्तित हो गया। विहार मे बाहर से आए हुए दर्शनार्थी सैकडो की सख्या मे विद्यमान थे। आचार्य प्रवर के प्रार्थना व सामयिक प्रवचन के अनन्तर, जनता मागलिक श्रवण कर विसर्जित हो गई।

लालचन्दजी घासवाला के यहा से दूसरे दिन विहार कर प्रमुख केशवभाई आदि के अत्यन्त आग्रह से आचार्य प्रवर दौलत नगर पधारे। दौलत नगर से मूलजी नगर पधारे। मूलजी नगर से कादीवली १३–६–८४ को पधारे। यहा आचार्य प्रवर सात दिन तक विराजे। स्थानीय जनता ने अच्छी सख्या मे लाभ लिया। उपाश्रय मे कच्चे पानी, लाइट आदि की कुछ अकल्पनीय स्थिति थी। प्रात सूर्योदय होने से पहले ही वहिनो का उपाश्रय मे प्रवेश भी हो जाता था। ऐसी स्थिति मे आचार्य प्रवर के वहा रहने की स्थिति ही नही थी, सघ प्रमुख किन्तु लक्ष्मीकात भाई ने वस्तुस्थिति समझते ही सारी कल्पनीय स्थिति बना दी। तभी आचार्य प्रवर का एक सप्ताह तक विराजना हुआ। जनता पर आचार्य प्रवर के विशुद्ध सयम, प्रखर व्यक्तित्व एव प्रभावशाली वक्तृत्व का जोरदार प्रभाव पडा।

१९–११–८५ को कादीवली से विहार कर आचार्य प्रवर दशा श्रीमाली नगर पधारे दशाश्रीमाली नगर यद्यपि २००-३०० घर की वस्ती का है और जैनभवन भी छोटा ही है। किन्तु श्रावक–श्राविकाओ की धार्मिक भावना प्रबल है। समझने की जिज्ञास है, शुद्ध साधुत्व के निष्ठा है।

दशा श्रीमाली नगर के धर्म पिपासु भाई–बहिन काफी समय से इन्तजार कर रहे थे। उनकी पिपासा शांत करने के लिये आचार्यश्री जी करीब एक सप्ताह विराजे। साप्ताहिक प्रवास काल मे प्रात समीक्षण ध्यान साधना का प्रयोगात्मक रूप महत्त्वपूर्ण रूप से उल्लेखनीय है। काफी सख्या मे भाइयो ने श्रद्धेय पूज्य गुरुदेव के मुखारविन्द से समीक्षण ध्यान साधना के विषय मे श्रवण कर आत्म निरीक्षण, विचार-सशोधन, श्वास समीक्षण, ध्वनि समीक्षण आदि आयामो मे जुडकर अनिवचनीय शांति की अनुभूति की। समीक्षण ध्यान साधना के दौरान उत्साही भावुक हृदय नवनीत भाई आदि ने बताया कि हमे इस ध्यान साधना द्वारा तनाव मुक्ति का सुन्दर एव सुगम मार्ग मिला। उन्होने कहा अभी हुई भायखला ट्रेन दुर्घटना के रोमाचित दृश्य से हृदय दहल उठा था। मन मे अनेक प्रकार की विचार तरगे तरगित होने लगी, आर्तध्यान से दिल भरने लगा, तब हमने आपश्री द्वारा बतायी गयी ध्यान विधि की तो तत्क्षण प्रभाव हुआ, हमारी सारी विचार तरगे समाहित हो गई। मन की उथल–पुथल शात हो गई। हृदय मे वैराग्य की बिजलिया कौंध गई। सारी की सारी स्थितिया उलट गई। यह हमारे जीवन का एक नये अनुभव का क्षण था। उन्होने प्रण किया कि हम हर रोज इस साधना पद्धति को करते जायेगे और अपनी आत्मिक समृद्धि से जीवन मे आनन्द भरते जायेंगे। इसी तरह रविवारीय विशेष प्रवचन मे आचार्य प्रवर ने विशेषतया शहरो मे बढ रहे दुर्व्यसनो एव पापाचरणो पर सचोट विवेचना फरमायी। दुर्व्यसनो से होने वाली हानियो का प्रभावशाली वैज्ञानिक धरातल का विवेचन श्रवण कर जनमानस निर्व्यसन, सात्विक जीवन जीने की दिशा मे अग्रगामी बनने का इच्छुक हुआ और बहुतो ने सप्त कुव्यसनो के त्याग किये। प्रवचन के उपरान्त अनेक जिज्ञासुओ ने प्रश्नोत्तरो के सिलसिले मे अपनी जिज्ञासाओ के समीचीन समाधान प्राप्त किये। दशा श्रीमाली नगर के धर्मनिष्ठ सघ ने आचार्य प्रवर से आगामी चातुर्मास के उपरात अपने यहा चातुर्मास करने की विनती प्रस्तुत की। उनकी भावना पर आचार्य प्रवर ने प्रसन्नता व्यक्त की और फरमाया आपकी विनती झोली मे ग्रहण करता हू। समय पर कैसी क्या स्पर्शना बनती है यह भविष्य ही बता सकेगा। सघ की अटूट श्रद्धा भावनाओ के साथ ही आचार्य प्रवर ने अपने चरण कमलो से मलाड सघ को पावन किया।

मलाड सघ महानगर बम्बई का एक अच्छा ख्याति प्राप्त सघ है। यहा के धर्मानुरागी भाई–बहिनो मे धर्म के प्रति अच्छा उत्साह है और क्रियावान् सतो के प्रति तो विशेष आदर है। ज्ञान एव क्रिया के सगम स्थल आचार्य प्रवर के पुनीत पदार्पण से यहा के सघ मे एक नया ही उत्साह प्रसारित हो गया। अध्यात्म की गम्भीर एव हृदयस्पर्शी विवेचना श्रवण कर तो मन मयूर नाच उठे। प्रबुद्धजीवी सघ अध्यक्ष मन्त्री उमरशी भाई एवं सहमन्त्री नटवर भाई के साथ अनेक धर्म श्रद्धालु भाई–बहिनों ने पूज्य गुरुदेव के चरण सरोजों मे अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किये और पूरे शेषकाल यहा विराजने की साग्रह विनती की। आचार्य प्रवर उत्साही श्रावको के आग्रह पर करीब दो सप्ताह विराजे। प्रवास काल मे आचार्य देव के मुखारविन्द से आगम की अनुभूति गम्य व्याख्यानो को श्रवण कर स्थानीय लोग इतने प्रभावित हुए और कहने लगे—'जे वातो आज सुदी न साभली हती ते ज्ञाननी वातो सांभली। ने घणो

जाणवानो मल्यु । साथे–साथे साधु जीवन मा केवी रीते चालवा नु होय, साधु ना नियम–उपनियम क्रिया कलाप केवा होय छे ऐ आपना व्यवहार थी जाणवानु मल्यु । अमे तो अत्यार सुदी अ धकार मा हता आपे अही पधारी ने जे वीतराग–वाणी नो प्रकाश आप्यो ते खरेखर अमारे जीवन ने मोटे महान् सौभाग्य नु विषय छे ।'श्रद्धाभिषिक्त भावुकता का प्रवाह यहा तक प्रवाहित हुआ कि पूरे मलाड सघ की ओर से सघ के कार्यकर्त्ताओ ने आचार्य प्रवर की आगामी चातुर्मास की विनती प्रस्तुत की । उन्होने कहा कि इस वर्ष का चातुर्मास हमारे यहा नक्की हो गया । अगला चातुर्मास आपको यही करना है । साथ ही अभी निकट भविष्य मे सम्पन्न होने वाला होली चातुर्मास भी हमारे यही करने की कृपा करें । होली चातुर्मास के लिये कादीवली सघ, कुला सघ, अलीबाग के भण्डारी परिवार ने भी समय–समय पर अपनी विनतियां प्रस्तुत की हैं । लेकिन आचार्य प्रवर ने अभी कहीं का सकेत नही फरमाया था । मलाड सघ मे आचार्य प्रवर ने दो रविवार व्यतीत किये । दोनो रविवारो को जाहिर प्रवचन एव प्रश्नोत्तरो का अच्छा रोचक कार्यक्रम हुआ । मलाड मे रविवार के दिन मध्याह्न मे कुछ भाइयो की शास्त्रीय विषयो एव समाचारी सम्बन्धी जिज्ञासाए थी, उनका भी आचार्य प्रवर ने स्पष्ट एवं आगमिक धरातल पर समाधान प्रदान किये । प्रश्नकर्त्ताओ मे प्रमुख जादवजी भाई थे । जादव जी भाई कच्छ नानीपक्ष के आगेवान श्रावक हैं । साथ ही आगम धारणाओ एव मान्यताओ पर अपना मुखर चिंतन रखते हैं । प्रतिवर्ष स्वतन्त्र रूप से पर्युषणो मे प्रवचन दिया करते हैं, उनके अनेक प्रश्न वर्षों से उलझे हुए थे । जिनमे कुछेक प्रश्नो का समाधान तो प्रवचनोपरात ही जाहिर मे किये गये और बाकी के प्रश्नो का समाधान मध्याह्न मे । जादवजी भाई आचार्य प्रवर के समाधानो से अत्यन्त सन्तुष्ट एव प्रसन्न थे । रात्रि चर्चा मे भी वे विशेषतया अपनी शकाओ का समाधान करते । जादवजी भाई एव कच्छ के अन्य अनेक भाई बहिनो ने आचार्य श्री जी के सान्निध्य का सम्यग् रीत्या लाभ लिया । कुल मिलाकर श्रद्धेय आचाय प्रवर की सरलता, स्पष्टवादिता गहरो आगमिक अनुप्रेक्षा का तथा मनसा, वाचा, कर्मणा सयम जीवन के प्रति समर्पणा का अद्भुत प्रभाव जन–मानस पर सदा के लिये अ कित हुआ ।

गुजराती भाई–बहिनो मे एव प्राय सभी क्षेत्रो मे एक लहर सी व्याप्त है कि राजस्थान के एक धुरन्धर आचार्य बम्बई मे पधारे हुए हैं, तो उनका अधिक से अधिक वाछित लाभ उठाना चाहिए । आचार्य प्रवर के प्रवासकाल मे अनेक सघो के प्रतिनिधि भाई–बहिनें अपने–अपने क्षेत्रो मे शीघ्र पधारने की विनतिया लेकर उपस्थित हुए । जिसमे बालकेश्वर, कुर्ला दादर, सायन खार, अन्धेरी, शाताक्रुज, गोरेगाव, कादिवली आदि अनेक सघो ने पूज्य गुरु चरणो की सान्निध्य से लाभान्वित होने की भावनाए प्रकट की । इसीतरह अनेक सघ अप्रत्यक्ष रूप से भी अपने–अपने भाव सजोये हुए आश लगाये बैठे हुए थे । दिनाक १०-१२–१९८४ सोमवार को आचार्यश्रीजी अपने शिष्यवृन्द सहित मलाड से विहार कर गोरेगाव पधारे । आचार्य प्रवर के विहार से मलाड निवासियो को धक्का लगा । उनका बार–बार आग्रह रहा कि आपको पूरे शेषकाल यहा विराजना है, लेकिन क्षत्राधिक्य आदि अन्य बातो को ध्यान मे रखकर मलाड सघ की अटूट भावनाओ के होने पर भी आचार्य प्रवर विहार करके गोरेगाव पधार गये ।

मलाड प्रवास मे सैकडो भाई-वहिनो ने सप्त कुव्यसन के प्रत्याख्यान लिए । मलाड मे वैसे अनेक मारवाडी वन्धु सपरिवार व्यवसायरत है । व्यावसायिक क्षेत्र होने के बावजूद भी अनेक भाई-वहिनो ने आचार्यदेव के सान्निध्य का पूरा-पूरा लाभ उठाया ।

मलाड मे भी उपाश्रय की कल्पनीय स्थिति परिलक्षित नही होने पर आचार्य प्रवर ने मलाड के प्रमुखो को सकेत किया । सुज्ञ श्रावको ने तुरन्त कल्पनीय स्थिति बना दी । आचार्य प्रवर का श्रावको के अत्यन्त आग्रह से यहा पर लगभग १५ दिन विराजना रहा ।

आचार्य प्रवर का गोरेगाव मे ४-५ दिन तक लगभग विराजना रहा । लोगो की भावभक्ति सराहनीय रही । यहा से विहार कर जोगेश्वरी पधारे । यहा पर एक-दो दिन विराजे । यहा से अन्धेरी पधारे । अन्धेरी मे विलेपार्ला और विलेपार्ला से शाताक्रुज पदार्पण हुआ । शाताक्रुज से खार और खार से दादर, दादर से वर्ली पधारे । सभी क्षेत्रों मे आचार्य प्रवर के सयमीय जीवन के साथ प्रखर वक्तृत्व, विशुद्ध व्यक्तित्व का अत्यन्त प्रभाव रहा । लोगो को यह देखकर सुखद आश्चर्य होता कि वास्तव मे साधु जीवन का पालन इस प्रकार होता है । सभी क्षेत्रो मे वाहर जगल आदि की सुविधा थी । सघो का अधिकाधिक आग्रह होने पर भी डॉक्टर ढोलकिया को दिखलाने की स्थिति होने से आचार्य प्रवर यथावकाश रुकते हुए दि २१-१-८५ को वर्ली विहार कर सुख-शातिपूर्वक वालकेश्वर पधार गए । यहा पर भी कुछ ही दिन विराजने की स्थिति थी । क्योकि अभी अनेक उपनगरो को स्पर्शना अवशेष था । स्थान-२ से अपने-२ क्षेत्रो को स्पर्श करने की विनती निरन्तर आ रही थी । किन्तु आचार्य प्रवर के स्वास्थ्य एव प्रोस्टेट के उपचार को देखते हुए आचार्य प्रवर का कारण से लगभग २½ मास तक विराजना रहा । वालकेश्वर के निवासी भौतिक समृद्धि से समृद्ध समझे जाते है । वालकेश्वर के निवासियो ने भी आश्चर्यजनक रूप से प्रवचन प्रश्नोत्तर आदि कार्यों मे भाग लिया । यद्यपि आचार्य प्रवर ने सभी आगारो के साथ होली चातुर्मास कादीवली मे स्वीकृत किया था । किन्तु स्वास्थ्य के कारण होली चातुर्मास का परिवर्तन करना पडा और यह लाभ भी वालकेश्वर वालो को मिला । यहा पर अनेक विनतियो के होने पर भी घाटकोपर की भावना को लक्ष्य मे रखते हुए आचार्य प्रवर ने अक्षयतृतीया एव चातुर्मास की स्वीकृति घाटकोपर सघ को दी । वालकेश्वर के मन्त्री शातिभाई तथा प्रमुख सुशीला वहिन, उप प्रमुख श्री चम्पालालजी कोठारी आदि सभी भाई-वहिने आचार्य प्रवर से अत्यन्त प्रभावित हुए ।

खीवसर परिवार की सेवा भावना सराहनीय रही । स्वास्थ्य लाभ लेकर यहा से विहार कर आचार्य प्रवर नेपियनसी रोड पर स्थित अभिषेक पत्रिका के प्रकाशक मथुराभाई, हिम्मत भाई, हर्षद भाई, भायाणी के स्वतन्त्र वगले मे पधारे । एक दिन तक विराजना रहा । भायाणी परिवार की सेवा भावना सराहनीय रही । यहां से दूसरे दिन विहार कर नवजीवन सोसायटी एक दिन विराजकर दूसरे दिन शाम को आख दिखाने के उद्देश्य से कादावाडी पधारे यहा पर एक रात विराजकर दूसरे दिन चिचपोखली पधार गए । यहा से दादर (पूर्व), कुर्ला

आदि स्पर्शते हुए अक्षय तृतीया के प्रसग पर घाटकोपर पधारे । वहा भी उपाश्रय मे कुछ कल्प स्थिति नही थी । किन्तु पूर्व मे ही विद्वद्वर्य श्रीविजयमुनिजी म सा. एव मधुरव्याख्यानी सेवाभावी अजीतमुनिजो म सा. के वहा पधार जाने से कल्प की स्थिति, सघ प्रमुखो ने पूर्व में ही बना दी थी । अक्षय तृतीया के प्रसंग से कुछ दिन यहा विराजकर आचार्य प्रवर चेम्बूर होते हुए माटुगा पधारे । माटुगा के पदार्पण से धर्मोद्योत की कैसी स्थिति रही । उसके लिये माटुगा के मन्त्री द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को अविकल रूप से दिया जा रहा है—

माटुंगा नु भाग्योदयः

साधुमार्गी सघना पूज्य आचार्य गुरुदेव श्री नानालालजी म सा घाटकोपर थी चेम्बूर थई ने आजे माटुगा पधारया छे । माटुंगा सघना अहोभाग्य छे जे गुरुदेव नु अत्रे पदार्पण थयू छे खरेखर माटुगा सघ पोता ने भाग्यशाली माने छे । आपणा सघना भाइयो पूज्य महाराज साहेब ने विनन्ती करवा माटे बे वख्ते दादर गया हता । पण ते समय पूज्य महाराज साहेब ने अक्षय तृतीया पच्चक्खाण माटे घाटकोपर जवानु हतु एटले मांटुगा न पधारि सकचा । ते पछी घाटकोपर पण माटुगा सघे विनन्ती करेल पूज्य गुरुदेव यथा अवसरे आपणी विनन्ती ने मान आपी आजे पधारचा छे । हु सघवती पूज्य गुरुदेव नु हार्दिक अभिनन्दन करू छु । स्वागत करु छु, सम्मान करु छू अने पूरा-परा शेषकाल माटे लाभ आपवा नम्र विनन्ती पण करु छू । आ शब्दो माटुगा सघना प्रमुख कार्यकर्ता सुश्रावक मन्त्री श्री महासुख भाई ए पूज्य गुरुदेव नुं स्वागत करता समय कहेल ।

ऐना पेहला पूज्य गुरुदेवे सिद्ध परमात्मा प्रार्थना करी संक्षिप्त मां सार भरेलु उद्‌बोधन आप्यो हतो । पूज्य गुरुदेवे सघनी विनन्ती नूं उत्तर आपता फरमाव्यु हतु माटुगा सघनी विनन्ती घणा वख्ते थी म्हारी सामी आवी हती ते समय बीजी-बीजी परिस्थितियो हती एटले माटुगा नी स्पर्शना न बनी शकी हू सामल्यो छू के माटुगा ने तुगिया नगरी नी उपमा आपेल छे । अह्याना श्रावक-श्राविका वीतराग वाणी ना रसिक छे अने स्वाध्याय आदि मा पण अग्रसर छे आमाटे मने पण विचार थयू के जे तुगिया नगरी नी उपमा था उपमित छै ऐवा माटुगा क्षेत्र नी सौरभ तो लइ लेवी जोइये एटले हु आवी गयो छू । महासुख भाई ए जे विनन्ती करी छे आ माटुगा सघनी भावना हू समझी रह्यो छूं । पण अत्यारे हु कई-केइ शक्तो नत्थी केम के अत्यार साधु मर्यादा अनुरूप द्रव्य क्षेत्र काल भावनी अनुकूलता जोवानी छे अत्यारे सुधी म्हारे साभलावा मा आवेल छे के अही जगल जावा अने परठवा नी वधी सगवडता नत्थी आमाटे पेहला तेनी गवेषण करवानी छे आगे जेवो अवसर हशे ते काम आवसे ।

पूज्य गुरुदेवनी आ वात साभली ने एमने पूज्य गुरुदेवो नी संयमी मर्यादा नी चुस्तता नी खरेखर खातरी थई गयी । अमारामन मा विचार थवा लाग्या के अही जगल नी वधी सगवडता नत्थी ऐटले महाराज साहेब अह्या वधारे लाभ आपी नही सके पण वीजा दिवसे

ज्यारे महाराज सा ने जगल पण खोज करी लीधी अने जणाव्यु के जगलनी जग्या तो मली छे जेने वधारे सुविधाजनक तो न कही सकाय छता पण काम चाली सके । आ सांभली थोडो मन मा विश्वास थयो के पूज्य गुरुदेव नु लाभ मली शकसे । तीजा दिवसे तो पूज्य गुरुदेव फरमाव्यु के एटलो जगल मली गयो के ५–७ साधु पण होय तो जगल ओछो न पडे । सघना सदस्य पूज्य गुरुदेयनी वात साभली आश्चर्य पामवा लाग्या के अमे माटु गा एटला वर्षों थी रहिये छिए छत्ता पण जानकारी नत्थी, पूज्य गुरुदेवे पुरुषार्थ करी जगलनी जाग्या खोज करी लीधी । त्यारे सघ ना सभ्यो हर्ष थी केहवा लाग्या हवे तो अमने शेष कालनु लाभ मलवेज जोइए । पूज्य गुरुदेव सघनी विनन्ती पोतानी झोली मा लीधी छे अमने विश्वास छे के पूज्य गुरुदेव सघनी भावना ध्यान मां राखशे ।

पूज्य गुरुदेव ने ज्यारे जगलनी वात बतावी त्यारे अमारा सघना सभ्यो नी एक भावना थई के आपणे पण ते जाग्या जोई लेवी जोइए वयारे दया, पौषध, मा आपणे पण काम पडी शके अने बीजा कोई गुरुदेव पधारे तो तेने पण बतावामा आवी शके एटले सघना प्रमुख कार्यकर्त्ता श्री महासुखभाई अने श्री मनसुखभाई एक दिवस पूज्य गुरुदेवना साथे गया अने जगल जोई आइवा । जगल जोवाथी तेओने हर्ष थयो कि आटला वधा सारो जगल अह्या माटु गा मा छे अमने खबर ज न हती ।

हु एक वात फरी थी कहेवा मागु छु के पूज्य गुरुदेवे घाटकोपर मा जगल सोधी लीधो छे एवीज रीते मुम्बईना बीजा बीजा क्षेत्रो मा पण जगल जावानी जग्या नी शोध करोघे ।

पूज्य गुरुदेवे प्रवचनमा जे तत्व नी छणावट करे छे ते अपूर्व छे अने आथी पूज्य गुरुदेव नू क्षयोपशम केवो सारो छे ऐनो पण बोध पोतेज थई जाय छे । स्थानकवासी समाज मा ऐवा तत्वज्ञ, चिन्तक, महामनस्वी आचारवान आचार्य विराजमान छे आ वधाना माटे गौरव नी वात छे ।

माटु गा १३–५–८५ मानद् मन्त्री

आचार्य प्रवर नीं जन्म जयन्ति

जेमनी अमृतवाणी सामलवी ते पण प्रचुर पुन्योदय नी निशाणी छे । ते वीतराग वाणी ने आजे लगभग त्रण–त्रण अठवाडिया थी माटु गा ना मुमुक्षोओने भावविभोर बनावी रही छे ते उपकारी श्री आचार्य भगवत नी जन्म जयन्ति मनाववानो दिव्य दिन आज जेठ सुदी २ सवत् २०४२ दिनाक २१ मई ८५ माटुंगा मा ऊग्यो ।

तपस्वी पूज्य श्री रामुनिजी ए पूज्य आचार्य भगवन्त नो परिचय संक्षिप्त मा सचोट रीते आप्यो । माता–पिता जन्म बालपण वैराग्य दीक्षा साथ–साथ गुरुसेवा सघसेवा ने क्दी पण विसर्या नथी । जीवन मा समता दर्शन नो गुण मनना परीक्षण माटे तेमज अंतर प्रवेश

माटे समीक्षण ध्यान योगनो प्रयोग बताव्यो छे । लगभग एकाद लाख मानवीयो ने मास-मदिरा हिंसा नो मार्ग त्याग करावी धर्ममुखी बनावी, धर्मपाल बनाववानी सिद्धि वीरल छे ।

त्यार बाद सघ कार्यकर श्री महासुख भाई शेठे परम पूज्य आचार्य भगवत अने अन्य मुनिराजो ने वन्दना नमस्कार करी जणाव्यु के सघना अहोभाग्य छे के पूज्य श्री आचार्य भगवन् त्रण-त्रण अठवाडिया थी जिनवाणी नु अमृतपान श्री सघ ने करावी रहेल छे पूज्य गुरुदेव ना शेषकाल माज तेमनी जन्म जयन्ति नो अवसर प्राप्त थयो ते पण महान् पुण्य नी निशाणी छे । सघ ने गई काले ज जाण थई के पूज्य गुरुदेव नु जन्म दिन आवती काले छे । थोडा भाईयो आ माटे प्रासगिक बोलवा मागे छे एटले आजे व्याख्या पहेला हु पूज्य गुरुदेव ना दर्शन करवा रूम मा गयो अने व्याख्यान मा थोडा जल्दी पधारवा कह्यू कारण के आप पूज्य श्री ना जन्म दिन प्रसग केटलाक भाईयो बोलवानी भावना राखे छे । त्यारे तेमने जणाव्यु के हु आवा प्रसगों ने महत्व आपतो नथी । पोतानी उपस्थिति माज गुणग्राम थाय तेवू इच्छतो पण नथी केवी पूज्य श्री निस्पृहता । परन्तु मैं पूज्य श्री ने जणाव्यु के आप त्यागी महात्मा तेवी इच्छा न राखो पण भक्तो नी भावना अने तेमनु कर्तव्य उपरात गुरु ना गुणग्राम करवा तेमनी आवश्यक फरज छे । आवा महान् सत स्थानकवासी समाज मा छे ते समाज नु महत् पुन्य छे । तेमना सयम त्याग नो परिचय प्रभाव आपणे दर रोज रोज व्याख्यान मा प्रत्यक्ष निहाली रहया छीअे । आवा आचार्य भगवन स्व पर कल्याण ना साधक होय छे तेओ श्री शासन नी अमूल्य मुडी छे । तेमना आरोग्य नी प्राप्ती सदा रहे । अने शासन ने जयवन्तु बनावे तेवी माटुगा सघ नी हार्दिक भावना छे ।

त्यार बाद श्री जसवतभाई शाहे जणावेल के आजे पूज्य श्री नो जन्म दिवस छे । आपणा माटे देव, गुरु धर्म आ त्रण तत्वो आराध्य छे आजे वतमान काले अत्रे देवाधीदेव प्रत्यक्ष नथी पण गुरु धर्म नो सहयोग प्राप्त छे । धर्म ना वोधक गुरु होय छे माटे ज महामन्त्र मा सिद्ध भगवान् थी प्रथम अरिहन्त भगवान् ने नमस्कार कराय छे । पूज्य गुरुदेव ना विषय मा शु कहेवु तेमनो प्रत्यक्ष परिचय तेमना जीवन नो ख्याल आपे छे । महान् पूर्वजो ना महान् शिष्य ते ओ छे ते ओ श्री ना दादा गुरु पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा आगम प्रेमी अने शास्त्रज्ञ हता तेमनो राजकोट चातुर्मास दरम्यान उत्तराध्ययन सूत्र ना २९ मा अध्ययन उपर नी छणावट त्रय भाग मा आवेली छे । तेवाचन करवाथी तेमनु चिंतन केटलु आगाध-हतु ते जाणी सकाय छे । तेमना प्रत्यक्ष दर्शन थमेल न हता परन्तु आपना गुरुदेव श्री गणेशीलालजी म सा नो दर्शन नो लाभ उदयपुर मा मल्यो हतो तेओ आगम प्रेमी प्रकाड विद्वान अने निरतिचार चरित्र पालन करवावाला हता । तेओ श्रो ने श्रमण सघ नु सचालन करवानी पुरी सत्ता हती आचार्य तरीके पूज्य श्री आत्माराम जी म.सा हता पण ते प्रज्ञा चक्षु होवा थी उपाचार्य नु पद पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा ने आप्यो हतु ज्या सुधी तेओ श्रमण सघ मा रह्या त्या सुधी श्रमण सस्कृति ने जिन आज्ञा प्रमाण सुरक्षित राखवानो सतत प्रयास कर्यो हतो । ज्यारे तेमने लागयु के तेमनो प्रयत्न विफल थतो जाय छे । त्यारे तेमने अधिकार पदे थी राजीनामु आपी

ज्यारे महाराज सा ने जगल पण खोज करी लीधी अने जणाव्युं के जगलनी जग्या तो मली छे जैने वधारे सुविधाजनक तो न कही सकाय छता पण काम चाली सके । आ साभली थोडो मन मा विश्वास थयो के पूज्य गुरुदेव नुं लाभ मली शकसे । तीजा दिवसे तो पूज्य गुरुदेव फरमाव्यु के एटलो जगल मली गयो के ५–७ साधु पण होय तो जगल ओछो न पडे । सघना सदस्य पूज्य गुरुदेवनी वात साभली आश्चर्य पामवा लाग्या के अमे माटुंगा एटला वर्षो थी रहिये छिए छत्ता पण जानकारी नत्थी, पूज्य गुरुदेवे पुरुषार्थ करी जगलनी जाग्या खोज करी लीधी । त्यारे सघ ना सभ्यो हर्ष थी केहवा लाग्या हवे तो अमने शेप कालनु लाभ मलवेज जोइए । पूज्य गुरुदेव सघनी विनन्ती पोतानी झोली मा लीधी छे अमने विश्वास छे के पूज्य गुरुदेव सघनी भावना ध्यान मा राखशे ।

पूज्य गुरुदेव ने ज्यारे जगलनी वात बतावी त्यारे अमारा सघना सभ्यो नी एक भावना थई के आपणे पण ते जाग्या जोई लेवी जोइए क्यारे दया, पौषध, मा आपणे पण काम पडी शके अने बीजा कोई गुरुदेव पधारे तो तेने पण बतावामा आवी शके एटले सघना प्रमुख कार्यकर्त्ता श्री महासुखभाई अने श्री मनसुखभाई एक दिवस पूज्य गुरुदेवना साथे गया अने जगल जोई आव्या । जगल जोवाथी तेओने हर्ष थयो कि आटला वधा सारो जगल अह्या माटुंगा मा छे अमने खबर ज न हती ।

हु एक वात फरी थी कहेवा मागु छु के पूज्य गुरुदेवे घाटकोपर मा जगल सोधी लीधो छे एवीज रीते मुम्बईना बीजा बीजा क्षेत्रो मा पण जगल जावानी जग्या नी शोध करोधे ।

पूज्य गुरुदेवे प्रवचनमा जे तत्व नी छणावट करे छे ते अपूर्व छे अने आयो पूज्य गुरुदेव नू क्षयोपशम केवो सारो छे ऐनो पण बोध पोतेज थई जाय छे । स्थानकवासी समाज मा ऐवा तत्वज्ञ, चिन्तक, महामनस्वी आचारवान आचार्य विराजमान छे आ बधाना माटे गौरव नी वात छे ।

माटुंगा १३–५–८५ — मानद् मन्त्री

आचार्य प्रवर नों जन्म जयन्ति

जेमनी अमृतवाणी साभलवी ते पण प्रचुर पुन्योदय नो निशाणी छे । ते वीतराग वाणी ने आजे लगभग त्रण–त्रण अठवाडिया थी माटुंगा ना मुमुक्षोओने भावविभोर बनावी रही छे ते उपकारी श्री आचार्य भगवत नो जन्म जयन्ति मनाववानो दिव्य दिन आज जेठ सुदी २ सवत् २०४२ दिनाक २१ मई ८५ माटुंगा मा ऊग्यो ।

तपस्वी पूज्य श्री राममुनिजी ए पूज्य आचार्य भगवन् नो परिचय सक्षिप्त मा सचाट रीते आप्यो । माता–पिता जन्म बालपण वैराग्य दीक्षा साथ–साथ गुरुसेवा संघसेवा ने कदी पण विसर्या नथी । जीवन मा समता दर्शन नो गुण मनना परीक्षण माटे तेमज अंतर प्रवेश

माटे समीक्षण ध्यान योगनो प्रयोग बताव्यो छे । लगभग एकाद लाख मानवीयो ने मास-मदिरा हिंसा नो मार्ग त्याग करावी धर्ममुखी बनावी, धर्मपाल बनाववानी सिद्धि वीरल छे ।

त्यार बाद सघ कार्यकर श्री महासुख भाई शेठे परम पूज्य आचार्य भगवत अने अन्य मुनिराजो ने वन्दना नमस्कार करी जणाव्यु के सघना अहोभाग्य छे के पूज्य श्री आचार्य भगवन् त्रण-त्रण अठवाडिया थी जिनवाणी नु अमृतपान श्री सघ ने करावी रहेल छे पूज्य गुरुदेव ना शेषकाल माज तेमनी जन्म जयन्ति नो अवसर प्राप्त थयो ते पण महान् पुण्य नी निशाणी छे । सघ ने गई काले ज जाण थई के पूज्य गुरुदेव नु जन्म दिन आवती काले छे । थोडा भाईयो आ माटे प्रासगिक बोलवा मागे छे एटले आजे व्याख्या पहेला हु पूज्य गुरुदेव ना दर्शन करवा रूम मा गयो अने व्याख्यान मा थोडा जल्दी पधारवा कह्यू कारण के आप पूज्य श्री ना जन्म दिन प्रसग केटलाक भाईयो बोलवानी भावना राखे छे । त्यारे तेमने जणाव्यु के हु आवा प्रसगों ने महत्व आपतो नथी । पोतानी उपस्थिति माज गुणग्राम थाय तेवू इच्छतो पण नथी केवी पूज्य श्री निस्पृहता । परन्तु मैं पूज्य श्री ने जणाव्यु के आप त्यागी महात्मा तेवी इच्छा न राखो पण भक्तो नी भावना अने तेमनु कर्तव्य उपरात गुरु ना गुणग्राम करवा तेमनी आवश्यक फरज छे । आवा महान् सत स्थानकवासी समाज मा छे ते समाज नु महत् पुन्य छे । तेमना सयम त्याग नो परिचय प्रभाव आपणे दर रोज रोज व्याख्यान मा प्रत्यक्ष निहाली रह्या छीए । आवा आचार्य भगवन स्व पर कल्याण ना साधक होय छे तेओ श्री शासन नी अमूल्य मुडी छे । तेमना आरोग्य नी प्राप्ती सदा रहे । अने शासन ने जयवन्तु बनावे तेवी माटु गा सघ नी हार्दिक भावना छे ।

त्यार बाद श्री जसवतभाई शाहे जणावेल के आजे पूज्य श्री नो जन्म दिवस छे । आपणा माटे देव, गुरु धर्म आ त्रण तत्वो आराध्य छे आजे वतमान काले अत्रे देवाधीदेव प्रत्यक्ष नथी पण गुरु धर्म नो सहयोग प्राप्त छे । धर्म ना बोधक गुरु होय छे माटे ज महामन्त्र मा सिद्ध भगवान् थी प्रथम अरिहन्त भगवान् ने नमस्कार कराय छे । पूज्य गुरुदेव ना विषय मा शु कहेवु तेमनो प्रत्यक्ष परिचय तेमना जीवन नो ख्याल आपे छे । महान् पूर्वजो ना महान् शिष्य ते ओ छे ते ओ श्री ना दादा गुरु पूज्य श्री जवाहरलालजी म सा. आगम प्रेमी अने शास्त्रज्ञ हता तेमनो राजकोट चातुर्मास दरम्यान उत्तराध्ययन सूत्र ना २९ मा अध्ययन उपर नी छणावट त्रय भाग मा आवेली छे । तेवाचन करवाथी तेमनु चिंतन केटलु आगाध-हतु ते जाणी सकाय छे । तेमना प्रत्यक्ष दर्शन थमेल न हता परन्तु आपना गुरुदेव श्री गणेशीलालजी म सा. नो दर्शन नो लाभ उदयपुर मा मल्यो हतो तेओ आगम प्रेमी प्रकांड विद्वान अने निरति-चार चरित्र पालन करवावाला हता । तेओ श्री ने श्रमण सघ नु सचालन करवानी पुरी सत्ता हती आचार्य तरीके पूज्य श्री आत्माराम जी म.सा हता पण ते प्रज्ञा चक्षु होवा थी उपाचार्य नु पद पूज्य श्री गणेशीलालजी म सा ने आप्यो हतु ज्या सुधी तेओ श्रमण सघ मा रह्या त्या सुधी श्रमण सस्कृति ने जिन आज्ञा प्रमाण सुरक्षित राखवानो सतत प्रयास कर्यो हतो । ज्यारे तेमने लागयु के तेमनो प्रयत्न विफल थतो जाय छे । त्यारे तेमने अधिकार पदे थी राजीनामु आपी

श्रमण मघ थी अलग थया आ तेमना सयम पालन नु ज्वलंत उदाहरण छे । आ बतावे छे के सत्ता करता पण जिन आज्ञा प्रमाणे सयम पालन श्रेष्ठ छे । आपश्री तेओ ना शिष्य छे। सामायिक ना भाणेनु अमृतपान करावी रह्या छे । ते विषय आपनु घेरु चिन्तन बतावे छे। मनना परीक्षण माटे कषायो नो उपशम करवानो आपनो उपदेश जीवन मा उतरशे तो जन्म जयन्ति उजवी सार्थक गणाशे ।

पूज्य गुरुदेव आराधना करी पोताना लक्ष्य मोक्ष ने शीघ्र प्राप्त करे तेवी शुभ भावना। त्यार बाद राजेमती महिला मण्डल गीत द्वारा पूज्य श्री ना गुणगान कर्या।

त्यार बाद साधुमार्गी जैन सघ बम्बई ना सहमन्त्री श्री कुन्दनमलजी नवलखाए पूज्य श्री गुरुदेव नु सक्षिप्त मा परिचय आप्या बाद जणावेल के हू गई काले अत्रे ना सूचना बोर्ड उपर पूज्य गुरुदेव नी जन्म जयन्ति नी सूचना लखवा गयो । त्यारे सेवाभावी पूज्यश्री प्रकाश मुनिजी म.सा नी नजर बोर्ड तरफ गयी त्यारे श्री प्रकाश मुनि ए लखवा साफ ना पाडी अने जणाव्यु के गुरुदेव नी मनाई छे । एटले अमो जनता ने जाहेर करी सक्या नही । तेथी लोगे हाजर रही शक्या नही जेनु अमारा मनमा कमी लागेल छे । मुबई मा आ तेमनी प्रथमज जन्म जयन्ति आवेल छे । पूज्य गुरुदेव ने विनन्ती छे के आपनी ओछा मा ओछी वे त्रण जन्म जयन्ति मुम्बई मा ऊजवाय । त्यार बाद तेमणे चेम्बूर फरसवानी विनती करेल हती ।

कुर्ला निवासी श्री कोमल कुमार कठालिया ए पोताना भाव रजु करता जणावेल के पूज्य गुरुदेव नी जन्म जयन्ति कोई पण तप त्याग ना प्रत्याख्यान लई ने उजवशु तो सार्थक गणाशे ।

मलाड निवासी भाई भवरलालजी नाहटा ए जणावेल के पूज्य गुरुदेव नु ज्ञान, दर्शन, चारित्र मौलिक छे आवा भाव पुष्पो गुरु चरणो मा रजु कर्या हता ।

त्यार बाद उपसंहार करता गुरुदेव उद्बोधन कर्यु आ प्रकार नी जन्मजयन्ति उजववानु हु इच्छतो नथी कारण के आ अनुकूल परिषह छे तेमा कषाय नू पोषण थवा सम्भव छे । वली केटलाक दिवसो पहेला कादीवली सघना भाईयो नो अति आग्रह हतो के जेठ सुदी २ नी आपनी जन्म जयन्ति उजववा संमती आपो कारण के अमारी होली चौमासा नी ईच्छा पूर्ण थई शकी नथी । ते पण कारण वसात गुरुदेव नु पदार्पण थई शक्यो नही । त्यारे पण कह्यु के त्यागियों नी जन्म जयन्ति दर रोज होय छे । कारण के सयमी जीवन नी साधना मा प्रतिक्षण जयन्ति राखवी अने सयम नी नवी नवी पर्यायो नो विकास साधवो तेने हु नित्य जन्म जयन्ति मानु छु । ज्यारे देह नो विकास माधवो तेने हु नित्य जन्म जयन्ति मानु छु । ज्यारे देह नी जन्म जयन्ति वर्ष मा एकज वार आवे छे । आत्म निरीक्षण वगर सयमी जयन्ति नू निरीक्षण शक्य नथी । सयम साधना पामे शरीर पिंड नी जयन्ति नु कोई महत्व नथी । सन्त जीवन नी जयन्ति ऊजववी होय तो तेमना स्तुति गान करीने नही पण साधनामय जीवन उज्ज्वल बने तेवा सशोधन रूप थवु जोइये । छद्मस्थ साधक नी सामे गुणग्राम करवा ते मोटा

जेर समान छे । साघक पोता ने सम्पूर्ण मानो आगल साधना करतो अटकी जाय छे । प्रतिकूल परिषह ने अनुकूल परिषह करता सहलाई थी जितो शकाय छे । ज्यारे अनुकूल परिषह मा साधक वश थई जाय तो परिषह साधक ने वश करोले छे । अर्थात् जिती ले छे । आ माटे साघके सयम मा दररोज आगल वधवु ने तेनी खरेखर भाव जयन्ति छे तेवी जयन्ति उजववानो आस्वाद पोतेज मानी शके छे ।

अन्त मा पूज्य गुरुदेवे फरमाव्यु के आप गुणग्राही होवा थी आप गुणनीज गाथाओ गाव छो परन्तु अम्मा–पिया ए मने कोई शिक्षा नी वात जणावशे तो ते हु खुशी–पूर्वक ग्रहण करीश अने आप सर्वो ए जे गुणगान कर्या छे ते प्रभु महावीर ना शासन ने हु समर्पण करु छुं ।

आजे सघ ना भाई श्री प्रभुदास खुशालचन्दजी दोशी ना तरफ थी लाडवानी प्रभावना करवामा आवी हती तेमज सघ ने स्वधर्मी वात्सल्य नो लाभ मलेल छे । ते पण सघ नो अहो भाग्य छे । पूज्यश्री राममुनिजी ए २५–५–८५ शनिवार मा व्याख्यान मा जणाव्यु के साधु मर्यादा ना हिसाब थी माटुगा नो शेषकाल आवती काले पूर्ण थवानो छे । शाला मे जे विद्यार्थी अध्ययन केवो सारो थयो छे एनो परीक्षा पण आपे छे एटले म्हारे कहेवानु छे के पूज्य गुरुदेवे शेषकाल विराजो ने अह्या आत्म साधना नो जे वाता बतावो छे अर्थात् शेषकाल सुधो उपदेश ना माध्यम थी जे अध्ययन कराव्यो छे तेनी परीक्षा नो समय आवी गयो छे । माटुगा सघ नो आ कर्तव्य थई जाय छे के जे साधना मार्ग पूज्य गुरुदेव थी साभल्यो छे समज्यो छे तदन्त आवती काले परीक्षा देवाना रूप मा साधना दिवस रूप थी उभो करवानो ।

२६–५–८५ नो दिवस रविवार नो दिवस रज्जानो होवा थी तेमज गुरुदेव नो शेष काल पूर्ण थई रह्यो छे आ जाण होवा थो उपाश्रय चिक्कार नर-नारी युवानो थी भेराई गयो हतो । प्रारम्भ मा पूज्यश्रो राममुनि जोए व्याख्यान नो प्रारम्भ कर्यो अने जे सुख विपाक सूत्र व्याख्यान मा चालतो हतो तेना १० अध्ययना सक्षिप्त मा पूर्ण कर्या त्यार बाद आचार्य भगवते पोतानी अमृतवाणी फरमावी मुक्ति ना सोपान (पगथीया) विषे बीजा सोपान नो रजुआत सुन्दर सचोट दृष्टात साथे पूर्ण कर्यु मुक्तिना चौदह सोपान पूरा करवानो समय हतो नही परन्तु प्रथम अने बीजा सोपान ऊपर चढ वार मुमुक्षु मुक्ति ना अतिम सोपाने चढी आत्मानु अनत सुख प्राप्त करी सके छे । त्यार बाद फरमाव्यु माटुगा नी धर्म भावना ज्ञान पिपासा सारी छे । अमारी सयम साधना माटे माटुगा सघ ना जे सहकार मल्यो एटले ते उपोकार केवी रीते भूली शकाय । अन्तमा तेओ श्रीए फरमाव्यु के म्हारी भावना वीतराग वाणी ना अनुरूप परुपणा करवा नी रहे छे । छता छद्मस्थता ने कारण वीतराग वाणी थी कोई पण भाव ओछो अधिक कहेवा मा आवी गयो होये तेने हु इच्छतो (कामी) नथी साथो साथ माटुगा संघना भाई बहनो थी पण पूज्य गुरुदेवे खमत् खामणा नो प्रसग उभो कर्यो हतो ।

त्यार बाद सघना मन्त्री श्री महासुख भाई शेठे सघवती आचार्य भगवत पूज्य गुरुदेव नो उपकार प्रदर्शित करता कह्यु के आज थी २९दिवसे पहेला गुरुदेवनु आगमन थयु त्यार थी

सघमा आनद नो उत्साह शुरु थयो छे नव मुमुक्षुओ ने प्रतिति थई छे। तेमनो जिनवाणी ना व्याख्यानो नो लाभ पर्षदा ने अमृतमय वाणी थी लोको ने भाव विभोर बनावटी रही छे दरेक बावत ना रहस्य ने सरलता थी जनमानस मां उतरी जाय माटे अत्यत सचोट दाखला थी तत्व ने समझावी देता हता। श्री महासुख भाई अे कहयु के आनी पाछल नु रहस्य पूज्य आचार्य भगवत नो सयम ऊने उडु चिंतन मुख्यत्वे काम करी रहेल छे। तेमना आवा महान् प्रभाव थी तेमनो आचार्यकाल दरम्यान २१६ मुमुक्षुओ ने निर्ग्रथ मुनि नी दीक्षा, अनेको ने नाना मोटा व्रतो, तेमज विशेप एक लाख लोको ने मास, मदिरा, हिंसा थी मुक्त करावी धर्मपाल बनाव्या छे जे सिद्धि बिलकुल मानी न गणाय। तेमना व्याख्यानो शेषकाल दरम्यान सामायिक, नव तत्व, ज्ञान प्रकाम मुक्ति ना सोपानो उपर हता। आवा सुन्दर उपकार बदल महासुख भाई सघवती तेमज कार्य कर भाईयो वती या अन्य भाई बहनो वती कोई पण जातनी असातना विराधना थई होय तो ते बदल खूबज भावपूर्वक नम्रता थी क्षमापना मागी। साथो साथ घाटकोपर चातुर्मास पूर्ण करी फरी फरी माटुगा ने लाभ आपी उपकार करवा विनती करी तेमज सायन क्षेत्र पण माटुगा नु उपक्षेत्र छे। त्या पधारता पण श्री सघ खुवज आनद अनुभवे छे। अने घाटकोपर चातुर्मास प्रवेश थाय त्या सुधी पुरो शेपकाल नो सायन मे समय आपवा वीनती करी छे। साथो साथ पूज्य आचार्य भगवन्त शासन नी अमूल्य मुडी छे। तेमना आरोग्य दिर्घायु साथे जैन शासन नी वधु उन्नति करता रहे अने शासन नो प्रकाश खुवज फैलावे तेवी भावना भावे छे। त्यार बाद फरी गुरु भगवते अत्रानी भुक्ति बदल आनद प्रदर्शित कर्यो अने मागलिक फरमाव्यु अने सभा विसर्जन थई।

दिनाक ११–६–८५ —महासुख भाई सेठ

आचार्यप्रवर का चातुर्मासार्थ घाटकोपर पदार्पण

समता विभूति विद्वद् शिरोमणि परम पूज्य आचार्य भगवन् अपने शिष्य परिवार सहित सायन से चेम्बूर और दिनाक २६–६–८५ को चेम्बूर मे विहार कर विभिन्न राजपथो को अपने पद पकजो मे पावन करते हुए घाटकोपर एव बम्बई महानगर के अन्य उपनगरो के सैकडो भाई बहिनो की आगवानी के साथ हींगवाला लेन, घाटकोपर जैन उपाश्रय मे पधारे। स्थानीय भाई बहिनो ने काफी दूर उपस्थित होकर आचार्य प्रवर एव सत वर्ग का हार्दिक स्वागत वन्दन, अभिनन्दन किया। पूज्य गुरुदेव के उपाश्रय मे पधारने के बाद एव व्याख्यान स्थल पर विराजमान होने के उपरान्त श्रद्धालु भक्तजनो की स्वागत सम्मान की यशोगाथाए वायुमण्डल मे थिरकने लग गयी सर्व प्रथम वैराग्यवती बहिनो ने गुरु चरणो मे उपस्थित होने तथा दर्शनों की तीव्र पिपासा शांत होने की प्रसन्नता मे अपनी भावाभिव्यक्ति सुन्दर सगीत के साथ प्रस्तुत की इसके बाद मल्ली महिला मण्डल की ओर से बहिनो ने गुजराती भाषा मे गीतिका प्रस्तुत करते हुए कहा 'अमने अनेरो अने अनुपम अवसर मल्या छे।" इसी कडी मे जैन शाला की उत्साहित बालिकाओ ने भी सगीत के माध्यम से गुरु महिमा का वर्णन किया। श्रावक वर्ग की ओर से सघ के प्रबुद्ध उत्साही कार्यकर्ता श्रीमान् शान्तिभाई वाविशी ने अत्यन्त गद्–गद् होते

होते हुए गुरुदेव के मगलमय पदार्पण की प्रसन्नता व्यक्त की तथा वर्षावास की अनुपम पुनीत बेला मे सबको हिलमिल कर धर्मध्यान मे आगे बढने की प्रेरणा दी।

इसी तरह सघ के प्रमुख सुज्ञ सुश्रावक श्रीमान् वज्जु भाई (वृजलाल गाधी) ने गुरुदेव के स्वागत सम्मान मे बोलते हुए कहा कि आज हमारी बहुत अर्से की प्रतीक्षा सफल हो रही है।

इस प्रकार सकल सघ की अपार प्रसन्नता का निरूपण किया। श्री वज्जु भाई ने कहा कि आज हमारा महान् पुण्योदय है कि पूज्य गुरुदेव ने हमारे सघ की विनती को मान देकर यहा चातुर्मास की स्वीकृति फरमायी। हमारा सघ गुरुदेव का ऋणी है। आपने अनन्त उपकार किया है। आपने महा प्रभावकारी पूज्यश्री जवाहरलालजी म.सा. का अनुसरण करके हमे अपने सान्निध्य का लाभ दिया है। यह हमारे जीवन का अविस्मरणीय प्रसग है।

श्री गाधी ने अपने वक्तव्य मे सरसता लाते हुए कहा कि हमारा घाटकोपर क्षेत्र युग द्रष्टा ज्योतिर्धर महान् सन्त श्रीमद् जवाहराचार्यजी के चातुर्मास से गौरवशाली बना हुआ है। हमारे गौरव मे और वृद्धि की है, उन्ही के प्रशिष्य आचार्यश्री ने चातुर्मास करके। सघ के प्रमुख की हैसियत से मैं गुरुदेव को विश्वास दिलाना चाहता हू कि आपके सान्निध्य का सघ पूरा-पूरा लाभ उठायेगा। साथ ही प्रमुखश्री ने सकल सघ से अनुरोध किया कि हमे अपूर्व अवसर मिला है। गुरुदेव के प्रवचन, प्रश्नोत्तर, ज्ञान ध्यान का हमे अधिक से अधिक लाभ उठाना है। आचार्य भगवन के स्वागत समायोजन मे प्रसिद्ध शास्त्रज्ञ, सिद्धान्त निष्ठ श्रीमान् हीराभाई तुरखिया ने गुरुदेव के पदार्पण एव चातुर्मास की मगल घडियो को सफल बनाने के लिए सभी भाई बहिनो से निवेदन किया कि हमे आचार्यश्री जैसे ज्ञान एव क्रिया के प्रखर तेजस्वी सन्त रत्न का लाभ मिल रहा है इसका अधिकाधिक उपयोग करना हमारा कर्तव्य है। आपने प्रसिद्ध गीतिका की पक्तिया उद्धृत करते हुए जन-जन को मुखरित करते हुए कहा—'गुण थी भरेला गुण जन देखी, हैयु मारू नृत्य करे।' सन्तो ना चरण कमल मा, मुझ जीवन नु अर्घ्य रहे।

श्रावक-श्राविकाओ के स्वागत सम्मान की अभिव्यक्तिया एक के बाद एक बढती ही जा रही थी। समय का चक्र अपनी गति से गतिमान था। करीब १०-३० का समय हो गया। अत: सघ मत्री ने ब्रेक लगाते हुए अन्त मे गुरुदेव की पीयूष वर्षिणी अमृतवाणी का लाभ लेने का अनुरोध किया। आचार्य प्रवर के प्रवचन प्रारम्भ होने से पूर्व अत्यन्त उग्र विहार कर पधारने वाली शासन प्रभाविका विदुषी महासतिया श्री इन्द्रकवरजी म.सा. की समीपस्थ विदुषी श्री सुलोचना श्री जी म सा ने अपनी मधुर एव गम्भीर वाणी मे गुरुदेव के महिमा मडित जीवन की विशेषताओ का विवेचन किया और दर्शनो की तीव्र प्यास एव ज्ञान प्राप्ति की क्षुधा तृप्ति की आशा व्यक्त की। प्रबुद्ध चेता श्री शरद भाई मेहता ने अपनी ओजस्वी भाषा मे पूज्यश्री गुरुदेव के गुणानुवाद करते हुए युवा मण्डल की ओर से गुरुदेव का हार्दिक स्वागत अभिनन्दन किया।

अन्त मे आचार्य भगवन ने अपनी सरल एव सहज वाग्धारा से जन-जन को आनन्दित करते हुए फरमाया कि अभी सघ के प्रबुद्ध श्रावक-श्राविकाओ ने मेरे स्वागत के विषय मे जो कुछ गुणगान की बाते कही, मैं उन बातो को आवश्यक नही समझता । आप मेरा स्वागत कर रहे है, लेकिन मैं सोचता हू यह मेरा स्वागत नही हैं । भगवान् महावीर के द्वारा प्ररूपित तप, त्याग एव सयम जीवन का स्वागत है । घाटकोपर सघ के भाई-बहिनो की काफी समय से विनती चल रही थी, सयोग ही समझिए कि गत वर्ष बोरीवली चातुर्मास करने का प्रसग आ गया, बोरीवली जब आना हो गया तब घाटकोपर वालो की भावना बलवती हो गई, क्षेत्र स्पर्शना थी कि यहा के लिए चातुर्मास स्वीकार करना पडा । जब चातुर्मास के लिए सन्तो का आगम होता है तो श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ का मन-मयूर नाच उठता है । उनमें धर्म आराधना की कामनाएं उमडने लग जाती हैं । तदनुसार स्थानीय विशाल सघ के प्रत्येक सदस्य को अधिक से अधिक तप-त्याग-सयम के द्वारा स्वय की आत्मा का स्वयं से स्वागत करना है । 'स्वस्मिन् आगतम् स्वागतम्' पर भावो से हट कर स्व भावो मे आ जाना ही सच्चा स्वागत है ।

स्थानीय सघ के प्रमुख वज्जुभाई ने स्वर्गीय आचार्यदेव श्री जवाहरलालजी म सा. की स्मृति तरोताजा करवायी । उन्होने भी घाटकोपर मे चातुर्मास किया था । आपका सघ सौभाग्यशाली है, जिसने महान् आत्माओ के सान्निध्य का लाभ उठाया है । कुछ दिन पूर्व वज्जु भाई मिले थे और कह रहे थे कि गुरुदेव की पुण्य तिथि समीप मे ही आ गई है तो आप गुरुदेव की पुण्यतिथि पर अवश्य हमारे यहा पधार जाय । हम पुण्यतिथि मनाना चाहते हैं । सयोग ऐसा ही बना कि मैं पुण्य तिथि के दो रोज पूर्व ही आ गया हू, अब पुण्यतिथि के उपलक्ष्य मे अधिक से अधिक धर्म ध्यान करके महान् आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त करें तथा उनके गुणो को अपना कर अपने जीवन का शुभ निर्माण करें यही शुभकामना है ।

अन्त मे आचार्य प्रवर ने सिद्ध परमात्मा और हमारे बीच मे रहे अन्तराल को पाटने के लिए राग, द्वेष विमुक्त समत्व भाव की समाराधना मे प्रत्येक आत्मा को नियोजित होने की प्रेरणा दी ।

धर्म ध्यान का ठाठ

मेघमाला की अनवरत वृष्टि के साथ वीतराग देव की पवित्र वाणी का भी अनवरत सवर्षण हो रहा है, जिससे जन-जन का सताप हरण हो रहा है । आबाल वृद्ध अपने कर्म कालुष्य को धोने मे सक्रिय बने हुए है । घाटकोपर सघ के पुनीत प्रागण मे पूज्य गुरुदेव श्री के विराजने से धर्म ध्यान, त्याग, तपस्या का अनुपम ठाठ लगा हुआ है । स्थानीय एव बाहर के श्रद्धालु श्रोता विशाल संख्या मे उपस्थित होकर जिनवाणी के रसपान मे तल्लीन बने हुए हैं । पूज्य आचार्य भगवन् के सरल, सरस एव आकर्षक प्रवचनो मे दिनो-दिन जन सख्या की वृद्धि होती चली जा रही है । अधिकाश श्रोता जनो ने यही मुखरित हो रहा है—कि हमें ऐसे आगमिक एव अनुभूतिगम्य मौलिक विचार। प्रवण प्रवचनो के श्रवण करने का प्रथम बार ही

सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वास्तव में आचार्यश्री का ज्ञान अगाध है। गूढार्थ भरे छोटे-२ सूत्रो को वे इस तरह सरल एव रोचक बनाकर प्रस्तुत करते हैं, जिससे श्रोताजनो के हृदय मे बात तुरन्त बैठ जाती है।

अनेक प्रबुद्ध अनजान श्रावको का तो यह भी स्वर प्रस्फुटित होता है कि ज्ञात ही नही है कि हमारी स्थानकवासी जैन समाज मे ऐसे सन्त रत्न है जिनका इतना ओजस्वी प्रवचन होता है। साथ ही वीतराग देव की वाणी पर इतनी श्रद्धा और वैसा ही पालन करने मे कटिबद्धता। ऐसे सन्तो के दर्शन बहुत बहुत सौभाग्य से प्राप्त होते हैं।

स्थानीय क्षेत्र एव पूरे बृहत्तर बम्बई महानगर मे आचार्य देव के यशस्वी, त्याग, वैराग्यमय चातुर्मास की यशोगाथाए प्रसारित हो रही हैं। बम्बई महानगर से प्रतिदिन कोई न कोई सघ दर्शनार्थ उपस्थित हो जाया करता है। इसी तरह दूरस्थ क्षेत्रो से भी दर्शनार्थियो का आवागमन निरन्तर बना हुआ है।

दक्षिण प्रान्त से अर्थात् मद्रास श्री साधुमार्गी सघ की ओर से २५–३० भाई-बहिनो का एक शिष्टमण्डल दर्शनार्थ उपस्थित हुआ। उत्साही व प्रबुद्ध कार्यकर्त्ता, श्री केशरीचन्दजी सेठिया प्रभृति सारे सुज्ञ जनो ने मौन-मुखर रूप से यही भावना प्रदर्शित की कि गुरुदेव के पुनीत पदार्पण के लिए पूरा दक्षिण प्रान्त तरस रहा है। वहा के निवासी वर्षों से आशा सजोए हुए बैठे हैं।

जिस तरह से श्री रामचन्द्रजी के लिए अयोध्या नागरिक तरसते थे, वैसे ही दक्षिण निवासी गुरुदेव के आगमन की प्रतीक्षा मे पलक पावडे बिछाए बैठे हैं। सब देख रहे है कि घाटकोपर चातुर्मास के बाद गुरुदेव के पवित्र श्री चरण किस दिशा मे गतिमान होगे ? दक्षिण निवासियो को पूरी आशा है कि गुरुदेव हमारी विनती को अवश्य स्वीकार करेगे। इसी तरह सेवाभावी उत्साही कार्यकर्त्ता श्री सुगनचन्दजी घोका, युवा सघ के मन्त्री प्रेमचन्दजी बोथरा आदि कई युवको ने पृथक्–पृथक् रूप से अपनी भावनाए अभिव्यक्त की और सभी की अभि–व्यक्तिया मुख्यतया दक्षिण की ओर बढने को ही सकेतित कर रही थी।

मद्रास श्री सघ के साथ पधारे हुए श्रीमान् श्रेष्ठिवर्य गुलाबचन्दजी बोहरा ने गुरुदेव के प्रवचनो से प्रभावित होकर सजोडे शीलव्रत अगीकार किया। जिनका स्थानीय सघ ने चदन हार एव शाल से अभिनन्दन किया।

इसी तरह से मारवाड, मेवाड, मालवा, महाराष्ट्र, बगाल अनेक प्रातो से पुरजोर आग्रह भरी विनतिया हो रही हैं कि चातुर्मास परिसमापन के अनन्तर गुरुदेव का हमारे क्षेत्र की ओर पदार्पण हो।

महामहिम गुरुदेव सभी भावुक भक्तो की विनतिया झोली मे ग्रहण करते हुए यही सकेत फरमाते हैं कि आप लोग विनति के लिए बार-बार दौड़भाग न करें। भावी मे क्या होने वाला है-यह ज्ञानी जानें।

परमपूज्य देव के सान्निध्य मे तपस्याओ का अनूठा ठाठ लगा हुआ है।

महापर्व की पुनीत आराधना

परम पुनीत, परम श्रद्धेय समता विभूति आराध्य प्रवर आचार्य भगवन् के सुखद सान्निध्य मे विविध प्रकार की धार्मिक, आध्यात्मिक प्रवृत्तियो का अनुपम ठाठ लगा हुआ है। चिर प्रतीक्षित पर्युषण महापर्व की मगलमय घडियो के उपस्थित हो जाने के बाद तो भव्य उपासको के हृदय मे अपूर्व उत्साह का जागरण हो गया और वे धार्मिक अनुष्ठानो की आराधनाओं मे प्रतियोगी की तरह सलग्न हो गये। श्रोताओ की उपस्थिति तो रेकार्ड तोड़ने वाली बन गयी। प्रतिदिन नियमित रूप से अलग-अलग स्थानो पर दो प्रवचन तो होते ही, पर अत्यधिक जन-प्रवाह के उमडने पर तीन-चार स्थलो पर भी प्रवचन हो जाते। इसके अलावा घाटकोपर वेस्ट (श्राविकाश्रम) मे भी विदुषी श्री प्रेमलताजी म सा. आदि ने अनवरत प्रवचन फरमाये। इसी तरह कालीना मे विदुषी महासती श्री ललिता श्री जी म सा, श्री मजुला श्री जी आदि महासतियो ने पधार कर तत्रस्थ उपासको को धर्म-साधना का अवबोध करवाया। सर्वत्र खूब धर्म ध्यान एव प्रवचन प्रभावना तथा त्याग तपस्या का ठाठ रहा। पूरे घाटकोपर क्षेत्र मे एक प्रकार का धार्मिक वातावरण सर्जित हो गया और अत्यधिक भीड को देखकर जैन-जैनेतर लोगो मे आश्चर्य-सा होने लगा कि इतने लोग यहा क्यो आ रहे हैं? क्या कोई बडे महात्मा आये हुए है? जिनका प्रवचन सुनने के लिए ये लोग आ रहे है। जब उनको ज्ञात होता कि वास्तव मे जैन दर्शन के जाने-माने गूढ व्याख्याता दार्शनिक चिन्तक, विशिष्ट विद्वान् एव सयमनिष्ठ आचार्य का पदार्पण हुआ है तो उनका भी मन मचल उठता और वे भी अपने जीवन मे प्रथम बार ऐसी महान् सौम्य एव समता विभूति के दर्शन कर उनका प्रवचन श्रवण कर अनिर्वचनीय आनन्दानुभूति करते।

आराध्यदेव आचार्य प्रवर के विविध सिद्धान्तनिष्ठ, मौलिक, यथार्थतावादी प्रवचनो का ठाठ तो अत्यन्त ही निराला था। गुरुदेव को समझाने की एव वस्तु तत्व को प्रतिपादित करने की शैली से ग्राम जनता से लेकर प्रबुद्ध जनता का प्रभावित होना भी एक आश्चर्य कारक था।

आचार्य भगवन् के प्रवचन के पूर्व अन्तगड सूत्र का विवेचन मेरे द्वारा किया जाता। इसी तरह स्वतन्त्र रूप से प्रायश्चित शाला के विशाल हाल में सर्व प्रथम मधुर व्याख्यानी श्री अजीत मुनिजी म सा अन्तगड सूत्र का वाचन फरमाते। तदुपरात विद्वद्वर्य मुनिश्री विजयकुमार जी म.सा विविध विषयो पर गुजराती भाषा मे प्रभावोत्पादक प्रवचन फरमाते। मध्याह्न

मे विद्वान् तरुण तपस्वी श्री राममुनिजी म.सा प्रखर वाणी मे कल्पसूत्र का वाचन कर भव्य उपासको को जैन इतिहास से परिचित करवाते ।

जनमेदिनी के बढते हुए प्रवाह को देखते हुए आचार्य प्रवर को भी जन–जन के कर्ण गुह्वरो तक वीतराग वाणी पहुचाने के लिए प्रवचन के स्वरो को तेज करना पडता है । इन स्वरो की तीव्रता के कारण पर्युषण महापर्व के तीन दिन मे ही आचार्य प्रवर का गला अवरुद्ध सा हो गया । अत चौथे दिन आचार्य देव को विश्रान्ति लेनी पडी, क्योकि जुकाम तो पहले ही था । इस दिन अन्तगड सूत्र का वाचन विद्याविनोदी श्री विनयमुनिजी म सा ने किया, तदनन्तर प्रवचन मैंने (विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म सा ने) किया । कुछ विश्राति से आचार्य भगवन् के स्वस्थता आ जाने से पाचवें दिन आचार्य प्रवर पधार गये । आज भी अन्तगड सूत्र का वाचन श्री विनयमुनिजी म सा ने फरमाया, तदनन्तर, विदुषी शा प्र महासती श्री इन्द्र कवरजी म सा का सारगर्भित उद्वोधन हुआ । तत्पश्चात् आचार्य प्रवर ने लगभग ४० मिनिट तक गले की स्थिति पूर्ण स्वस्थ न होते हुए भी धाराप्रवाह प्रवचन फरमाकर जनता के तृषित मन को शान्त किया । तरुण तपस्वी श्री राममुनिजी म सा ने भी जनता को असयम की प्रवृति से हटकर सयम की ओर बढने के लिए उद्वोधन किया ।

पर्युषण पर्व के षष्ठ एव सप्तम दिवस का प्रवाह पूर्ववत् चलता रहा किन्तु सवत्सरी के रोज जो कि जैनो का एक आध्यात्मिक महापर्व है । साधना का अप्रतिम अवसर उस समय प्राप्त होता है । अत जनमेदिनी प्रवचन सुनने के लिए उमड पडी । इस सम्भावना को पूर्व मे ही देखते हुए आचार्यश्री जी से सघ प्रमुख श्री वज्जुभाई ने निवेदन किया कि गुजराती लोगो को आपश्री के प्रवचनो का अधिक से अधिक लाभ मिले इसके लिए मारवाडी, राजस्थानी (हिन्दी भाषी) बन्धुओ का अलग प्रवचन करवा दिया जाय, क्योकि हिन्दी भाषी बन्धुओ से ही प्रवचन हाल लगभग भर जाता है, जिसमे गुजराती लोगो को आपश्री की वाणी सुनने का अवसर कम मिल पाता है । आचार्य प्रवर का पहले भी कोई निषेध नही था । लेकिन सघ प्रमुख के बार–बार आग्रह करने पर भी बाहर के दर्शनार्थी बन्धु अपने आराध्य देव के प्रवचन को छोडना नही चाहते थे । तब गुरुदेव ने जो सकेत दिया उसे मैंने जनता के सामने सुनाया कि गुरुदेव का यह सकेत है कि आप लोग एक दिन के लिए जहा सघ प्रमुख अन्य स्थान पर प्रवचन की व्यवस्था करें, वहा सुनने का प्रयास करे । बस फिर क्या था गुरुदेव के इस सकेत को स्वीकार किया और तुरन्त सवत्सरी के व्याख्यान की जहा सघ प्रमुख ने व्यवस्था की वहा अनुशासन प्रिय श्रावको का प्रवाह उपाश्रय के समीप ही राष्ट्रीय शाला के विशाल हाल मे जा पहुंचा । देखते ही देखते हाल खचाखच भर गया और शाति के साथ बैठकर प्रवचन की प्रतीक्षा करने लगे । थोडी ही देर मे श्री विनयमुनिजी म सा पधार गये और उपस्थित जनता के समक्ष अन्तगड सूत्र का वाचन किया तदनन्तर एक भजन श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा ने मधुर शैली से प्रस्तुत किया तथा विद्वान्, काव्यकार श्री काशीनाथजी ने भी अपने सारगर्भित शब्दो में कहा कि 'मैंने गुरुदेव के वर्षों पूर्व दर्शन करके उनसे प्रभावित हो समकित दीक्षा ली है । मुझे यह पक्का विश्वास है कि यदि मुक्ति मिलेगी तो इन्ही गुरुचरणो से ही. . . .'

महामहिम गुरुदेव सभी भावुक भक्तो की विनतिया झोली मे ग्रहण करते हुए यही सकेत फरमाते है कि आप लोग विनति के लिए बार-बार दौडभाग न करें। भावी मे क्या होने वाला है-यह ज्ञानी जानें।

परमपूज्य देव के सान्निध्य मे तपस्याओ का अनूठा ठाठ लगा हुआ है।

महापर्व की पुनीत आराधना

परम पुनीत, परम श्रद्धेय समता विभूति आराध्य प्रवर आचार्य भगवन् के सुखद सान्निध्य मे विविध प्रकार की धार्मिक, आध्यात्मिक प्रवृत्तियो का अनुपम ठाठ लगा हुआ है। चिर प्रतीक्षित पर्युषण महापर्व की मगलमय घडियो के उपस्थित हो जाने के बाद तो भव्य उपासको के हृदय मे अपूर्व उत्साह का जागरण हो गया और वे धार्मिक अनुष्ठानो की आराधनाओ मे प्रतियोगी की तरह सलग्न हो गये। श्रोताओ की उपस्थिति तो रेकार्ड तोडने वाली बन गयी। प्रतिदिन नियमित रूप से अलग-अलग स्थानो पर दो प्रवचन तो होते ही, पर अत्यधिक जन-प्रवाह के उमडने पर तीन-चार स्थलो पर भी प्रवचन हो जाते। इसके अलावा घाटकोपर वेस्ट (श्राविकाश्रम) मे भी विदुषी श्री प्रेमलताजी म.सा. आदि ने अनवरत प्रवचन फरमाये। इसी तरह कालीना मे विदुषी महासती श्री ललिता श्री जी म सा, श्री मजुला श्री जी आदि महासतियो ने पधार कर तत्रस्थ उपासको को धर्म-साधना का अवबोध करवाया। सर्वत्र खूब धर्म ध्यान एव प्रवचन प्रभावना तथा त्याग तपस्या का ठाठ रहा। पूरे घाटकोपर क्षेत्र मे एक प्रकार का धार्मिक वातावरण सर्जित हो गया और अत्यधिक भीड को देखकर जैन-जैनेतर लोगो मे आश्चर्य-सा होने लगा कि इतने लोग यहा क्यो आ रहे हैं? क्या कोई बडे महात्मा आये हुए है? जिनका प्रवचन सुनने के लिए ये लोग आ रहे हैं। जब उनको ज्ञात होता कि वास्तव मे जैन दर्शन के जाने-माने गूढ व्याख्याता दार्शनिक चिन्तक, विशिष्ट विद्वान् एव सयमनिष्ठ आचार्य का पदार्पण हुआ है तो उनका भी मन मचल उठता और वे भी अपने जीवन मे प्रथम बार ऐसी महान् सौम्य एवं समता विभूति के दर्शन कर उनका प्रवचन श्रवण कर अनिर्वचनीय आनन्दानुभूति करते।

आराध्यदेव आचार्य प्रवर के विविध सिद्धान्तनिष्ठ, मौलिक, यथार्थतावादी प्रवचनों का ठाठ तो अत्यन्त ही निराला था। गुरुदेव को समझाने की एव वस्तु तत्व को प्रतिपादित करने की शैली मे आम जनता मे लेकर प्रबुद्ध जनता का प्रभावित होना भी एक आश्चर्य कारक था।

आचार्य भगवन् के प्रवचन के पूर्व अन्तगड सूत्र का विवेचन मेरे द्वारा किया जाता। इसी तरह स्वतन्त्र रूप से प्रायश्चित शाला के विशाल हाल मे सर्व प्रथम मधुर व्याख्यानी श्री रंजीत मुनिजी म सा. अन्तगड सूत्र का वाचन फरमाते। तदुपरात विद्वद्वर्य मुनिश्री विजयकुमार जी म.सा विविध विषयो पर गुजराती भाषा मे प्रभावोत्पादक प्रवचन फरमाते। मध्याह्न

मे विद्वान् तरुण तपस्वी श्री राममुनिजी म.सा प्रखर वाणी मे कल्पसूत्र का वाचन कर भव्य उपासको को जैन इतिहास से परिचित करवाते ।

जनमेदिनी के बढते हुए प्रवाह को देखते हुए आचार्य प्रवर को भी जन–जन के कर्ण गुह्वरो तक वीतराग वाणी पहुचाने के लिए प्रवचन के स्वरो को तेज करना पडता है । इन स्वरो की तीव्रता के कारण पर्युषण महापर्व के तीन दिन मे ही आचार्य प्रवर का गला अवरुद्ध सा हो गया । अत चौथे दिन आचार्य देव को विश्रान्ति लेनी पडी, क्योकि जुकाम तो पहले ही था । इस दिन अन्तगड सूत्र का वाचन विद्याविनोदी श्री विनयमुनिजी म सा ने किया, तदनन्तर प्रवचन मैंने (विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म.सा ने) किया । कुछ विश्राति से आचार्य भगवन् के स्वस्थता आ जाने से पाचवें दिन आचार्य प्रवर पधार गये । आज भी अन्तगड सूत्र का वाचन श्री विनयमुनिजी म सा ने फरमाया, तदनन्तर, विदुषी शा प्र महासती श्री इन्द्र कवरजी म सा का सारगर्भित उद्बोधन हुआ । तत्पश्चात् आचार्य प्रवर ने लगभग ४० मिनिट तक गले की स्थिति पूर्ण स्वस्थ न होते हुए भी धाराप्रवाह प्रवचन फरमाकर जनता के तृषित मन को शान्त किया । तरुण तपस्वी श्री राममुनिजी म सा ने भी जनता को असयम की प्रवृति से हटकर सयम की ओर बढने के लिए उद्बोधन किया ।

पर्युषण पर्व के षष्ठ एव सप्तम दिवस का प्रवाह पूर्ववत् चलता रहा किन्तु सवत्सरी के रोज जो कि जैनो का एक आध्यात्मिक महापर्व है । साधना का अप्रतिम अवसर उस समय प्राप्त होता है । अत जनमेदिनी प्रवचन सुनने के लिए उमड पडी । इस सम्भावना को पूर्व मे ही देखते हुए आचार्यश्री जी से सघ प्रमुख श्री वज्जुभाई ने निवेदन किया कि गुजराती लोगो को आपश्री के प्रवचनो का अधिक से अधिक लाभ मिले इसके लिए मारवाडी, राजस्थानी (हिन्दी भाषी) बन्धुओ का अलग प्रवचन करवा दिया जाय, क्योकि हिन्दी भाषी बन्धुओ से ही प्रवचन हाल लगभग भर जाता है, जिसमे गुजराती लोगो को आपश्री की वाणी सुनने का अवसर कम मिल पाता है । आचार्य प्रवर का पहले भी कोई निषेध नही था । लेकिन सघ प्रमुख के बार–बार आग्रह करने पर भी बाहर के दर्शनार्थी बन्धु अपने आराध्य देव के प्रवचन को छोडना नही चाहते थे । तब गुरुदेव ने जो सकेत दिया उसे मैंने जनता के सामने सुनाया कि गुरुदेव का यह सकेत है कि आप लोग एक दिन के लिए जहा सघ प्रमुख अन्य स्थान पर प्रवचन की व्यवस्था करें, वहा सुनने का प्रयास करें । बस फिर क्या था गुरुदेव के इस सकेत को स्वीकार किया और तुरन्त सवत्सरी के व्याख्यान की जहा सघ प्रमुख ने व्यवस्था की वहा अनुशासन प्रिय श्रावको का प्रवाह उपाश्रय के समीप ही राष्ट्रीय शाला के विशाल हाल मे जा पहुचा । देखते ही देखते हाल खचाखच भर गया और शाति के साथ बैठकर प्रवचन की प्रतीक्षा करने लगे । थोडी ही देर मे श्री विनयमुनिजी म सा पधार गये और उपस्थित जनता के समक्ष अन्तगड सूत्र का वाचन किया तदनन्तर एक भजन श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा ने मधुर शैली से प्रस्तुत किया तथा विद्वान्, काव्यकार श्री काशीनाथजी ने भी अपने सारगर्भित शब्दो मे कहा कि 'मैंने गुरुदेव के वर्षों पूर्व दर्शन करके उनसे प्रभावित हो समकित दीक्षा ली है । मुझे यह पक्का विश्वास है कि यदि मुक्ति मिलेगी तो इन्ही गुरुचरणो से ही. ।'

तत्पश्चात् मैंने लगभग दो घण्टे पैंतालीस मिनिट तक सवत्सरी के महत्व को समझाते हुए प्रभावशाली प्रवचन फरमाया । इधर सवत्सरी के रोज जनता अत्यधिक हो जाने से मधुर व्याख्यानी श्री अजीत मुनिजी म सा ने अलग से अन्तगड सूत्र का वाचन कर प्रवचन फरमाया।

प्रतिदिन चल रहे विशाल पांडाल मे सवत्सरी के रोज सेवा भावी श्री प्रकाशमुनिजी म सा. ने अन्तगड सूत्र का वाचन किया । तदनन्तर दीक्षा के लिए कादीवली से श्री बाबूलाल जी जैन, बम्बई की ओर से श्री उमरावसिहजी ओस्तवाल, अलीबाग की ओर से सघ के सक्रिय कार्यकर्त्ता श्री प्यारेलालजी भण्डारी आदि ने भावभीनी विनतिया की तथा स्थानीय सघ के प्रमुख श्री वज्जुभाई ने भी जोरदार शब्दो मे आगामी होने वाली दीक्षाओ की विनति की, जिसे आचार्य प्रवर ने झोली मे ग्रहण की । अब तक लगभग ११ बज चुके थे । व्याख्यान हाल बाहर एव पीछे तक खचाखच भर चुका था । जिज्ञासु भक्त गुरुदेव की अमृतमय वाणी को सुनने के लिए लालायित हो रहे थे , आचार्य प्रवर की वाणी का पान करने के इच्छुक थे । बाहर बरसात की बारीक–बारीक बून्दे बरस रही थी, मौसम अति सुहावना लग रहा था। जनता प्रतीक्षा कर रही थी, तब आचार्य भगवन् के सयमीय उत्तुगगिरि से जिनवाणी की अमृतमयी देशना निर्झरित होती हुई, सौम्य मुख ने प्रवाहित जन–जन के मन को आल्हादित कर भव्य आत्माओ को आत्मविभोर करने लगी, जनता अपूर्व तन्मयता के साथ आचार्य प्रवर के अन्तस्तल से निकल रही, गम्भीर गिरा का पान कर रही थी । आचार्य प्रवर ने सवत्सरी के पावन पवित्र पर्व पर मार्मिक सयुक्तिक उपदेश प्रदान किया, एक ही धारा मे आचार्य प्रवर लगभग २ घण्टे तक फरमाते चले गये । अब तक लगभग एक बज चुका था । जनता शान्त प्रशान्त भाव मे श्रवण कर रही थी ।

सवत्सरी के रोज लगभग चार स्थानो पर सन्त मुनिराजो के प्रवचन हुए और इधर महासतियाजी नही चाहते हुए भी आचार्य प्रवर के निर्देश को पाकर महासती विदुषी श्री प्रेमलताजी म सा , विदुषी महासती श्री सुमतिकंवरजी म सा., विद्या. महासती श्री साधनाजी म.सा एव विद्या. श्री दर्शनाश्री जी म सा आदि ने घाटकोपर की मर्यादा मे ही श्राविकाश्रम मे धाराप्रवाह प्रवचनो से जनता को लाभान्वित करते रहे । विदुषी श्री प्रेमलताजी म.सा. गुजरात के ही होने से उनकी मातृ भाषा वैसे ही गुजराती ही है । (घाटकोपर) कालीना मे विदुषी श्री ललितप्रभाजी म.सा , विद्या सेवा. श्री मजुलाश्री जी म सा. विद्या , श्री पूर्णिमाश्री जी भी वहां पहुचकर जिन शासन की भव्य प्रभावना की, धर्म ध्यान, त्याग तपस्या का अच्छा ठाठ रहा ।

इस प्रकार ७ स्थलो पर प्रवचन हुए । आचार्य प्रवर ने यह सिद्ध कर दिया कि बिना लाउडस्पीकर के भी जिज्ञासु जनता लाभान्वित हो सकती है । सवत्सरी के रोज विद्वद्वर्य श्री विजयकुमारजी म.सा. ने आयबिल शाला के ऊपर लगभग ढाई घण्टे तक तो प्रवचन और दोपहर को आलोचना करवायी । नीचे प्रवचन हाल मे मधुर व्याख्यानी श्री अजीतमुनिजी म सा. ने आलोचना करवायी । तदनन्तर फिर से लगभग एक घण्टा तक आचार्य भगवान् का गहन गम्भीर प्रवचन हुआ । जिसमे लोगों ने अपनी जिज्ञासाओ का समाधान प्राप्त किया ।

तपस्याओ का अनुपम ठाठ लग रहा है । सतवृन्द मे घोर तपस्वी श्री पुष्पमुनिजी म सा ने ४४ की तपस्या का पारणा किया । इसी तरह विदुषी महासती श्री अजना श्री जी म सा के आज (२५–८–८५ को) ३० की तपस्या है सुखे समाधे आगे बढने की भावना है और भी छोटी–मोटी अनेक तपस्याओ के पारणे हो गये हैं और अनेको के चल रही है । तपस्याओ के जो आकडे प्रकट रूप मे मिल पाये उन्ही के अनुसार निम्न तपस्याए हुई—श्री चमनलालजी घनजी भाई ४१, श्री सविता बहन ३३, श्री निर्मला बहन ३०, श्री वर्षा दिलीप भाई ३०, श्री शाता बहन गाला ३०, श्री हरेश मणिलालजी ३०, श्री भानुमति विनोदराय बदाणी ३०, श्री मनोरमा बहन बृजलालजी गाधी सिद्धीतप सोलह तक तपस्याओ का विवरण– श्री कोकिला मेहता, श्री शारदा बहन, श्री हसा बहन, श्री जीया बहन, श्री कनक बहन, श्री दीपीका नवीनचन्द रूपाणी ।

श्री रमेशचन्दजी रतिलालजी ने १३ की तपस्या की । इग्यारह की १७, नव और अठाइया १६८, सात और छ २८ सिद्धीतप एकासना, आयबिल के ५० आदि हुए । उपवास हजारो एव पौषध सैकडो की तादाद मे हुए है ।

वैराग्यवती २ बहिनो के भी इग्यारह–इग्यारह तपस्या है आगे बढ रही हैं । इसके अलावा अनेक भाई बहिनो मे मौन सहित गुप्त तपस्याए एव छोटे–मोटे त्याग प्रत्याख्यान भी फुटकर हुए हैं ।

श्रमण सस्कृति की सुरक्षा का क्रांतिकारी कार्य

निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति, सम्यक् ज्ञान के साथ आचरण की सुदृढ नीव पर खडी है । सम्यक् ज्ञान के साथ सम्यक् आचरण का दुर्लभ सयोग निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति मे सहज सुलभ है । ऐसी सस्कृति की समानता मे भारतीय सस्कृतियो की बात तो क्या विश्व की कोई भी सस्कृति नही हो सकती ।

धर्म एव सस्कृतियो का सर्वेक्षण किया जाय तो बहुताश सस्कृतिया ऐसी है जिनमे कुछ न कुछ न्यूनाधिकता अवश्य परिलक्षित होगी । किसी सस्कृति ने ज्ञान पर अधिक जोर दिया है तो वही आचरण मे शून्यता ही परिलक्षित होती है और जिस संस्कृति ने आचरण पर जोर दिया है तो ज्ञान का अभाव ही वहा देखने को मिलता है । आचरण के अभाव मे ज्ञान लगडा है तो ज्ञान के अभाव मे आचरण पगु है ।

ज्ञान कितना ही अधिक प्राप्त कर लिया जाय, लेकिन उसका आचरण विलासिता से सना है तो वह ज्ञान, ज्ञान नही होगा और यदि आचरण क्यो न कठोर से कठोर किया जा रहा हो, महीनो तक अन्न–जल का त्याग किया जा रहा हो, वृक्षो पर औधे मुह लटककर साधना की जा रही हो या पचाग्नि का ताप किया जा रहा हो या फिर किसी भी प्रकार का

जनता की दृष्टि मे भयकर कष्ट साध्य तपश्चरण किया जा रहा हो किन्तु सम्यक् बोध के अभाव मे उससे आत्म शुद्धि एव वास्तविक परम सुख की प्राप्ति नही हो सकती।

किंतु यह स्थिति निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति मे नही है। वहा सम्यक् ज्ञान और सम्यक् क्रिया, दोनो को समान अधिकार दिया है। सम्यक् ज्ञान सम्मत क्रिया की साधना जीवन की चरम एव प्रकर्ष साधना है। ऐसी साधना बतलाने वाले वीतराग देव थे। जिन्होने अनुभूति को विशिष्ट ज्ञान से अवलोकित कर अभिव्यक्ति दी है, अत उसकी सत्यता को कही पर भी सशकित नही किया जा सकता।

निग्रंथ श्रमण सस्कृति मे निग्रंथ साधु की साधना, एक विशिष्टतम साधना है। पूरे विश्व के लिये प्रेरणास्पद साधना है। जो साधक के जीवन के साथ ही विश्व मे रूपातरण लाने की साधना है। साधक का जीवन, सबसे पहले स्वय की साधना करने मे तत्पर होता है। जब तक स्वयं का जीवन संशोधित एव परिष्कृत नही हो जाता, दूसरो के जीवन को सशोधित नही किया जा सकता। जो स्वय डूब रहा है, वह दूसरो को नही बचा सकता।

महाप्रभु महावीर ने भी लगभग १२½ वर्ष तक अपना जीवन सशोधित-परिष्कृत कर ज्ञान की परिपूर्ण अभिव्यक्ति के बाद उपदेश देकर जन-मानस को लाभान्वित किया था। साधक जीवन मे उपदेश जितना महत्त्वपूर्ण नही, उतनी साधक की साधना महत्त्वपूर्ण है। एक साधक, उपदेशक कुछ भी नही देता हैं, किन्तु अपनी साधना मे वह पूर्ण दृढ है तो उसका प्रभाव स्वत ही जनमानस पर पड जाता है, और वह प्रभाव भी अमिट होता है। उपदेश भी यदि साधक को देना है तो अपनी मर्यादाओ को सुरक्षित रखते हुए। मूल मर्यादाओ को तोड कर दिये जानेवाला उपदेश कभी भी जन-मानस को सही निर्देशन नही दे सकता।

महाप्रभु महावीर चाहते तो एक ही बार मे पूरे विश्व को अपना अनुयायी बना सकते थे, उनमे इतनी शक्ति थी। किंतु नही, महाप्रभु ने ऐसा नही किया। उन्होने स्वय की साधना के साथ उपदेश दिया किन्तु इधर गोशालक ने साधना को एक तरफ छोडकर लब्धि प्रयोग से जनमानस को आकर्षित किया तो भले उस समय अग्नि के क्षणिक भभके की तरह गोशालक के भक्त महाप्रभु से भी अधिक हो गये किन्तु वे जल्दी ही समाप्त भी हो गये। अर्थात् उसका सिद्धांत अधिक अर्सों तक नही टिका। जबकि महाप्रभु की सिद्धात परम्परा अढाई हजार वर्ष बीत जाने के बाद आज भी अक्षुण्ण रूप से चली आ रही है, यह महाप्रभु की साधनापूर्ण अभिव्यक्ति का ही परिणाम है।

किन्तु महत् आश्चर्य के साथ दु ख होता है कि महाप्रभु के अनुयायी कहे जाने वाले निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की परम्परा को लेकर चलने वाले कई साधको मे अनेक विध विकृतिया प्रवेश करती जा रही है। श्रमण सस्कृति के साधक की मर्यादा है कि अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह का परिपूर्ण रूप से पालन करना। वह अपनी मर्यादाओ का पालन करने के

लिये ही जिन्दगी भर तक पैदल यात्रा करता है। प्राण चले जाय, तब भी सचित जल का उपयोग नहीं करता। एक पैसा भी अपने पास नही रखता, नही रखवाता है। याने कि पाचो महाव्रतो का तीन करण, तीन योग से पालन करने वाला निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति का सच्चा साधक होता है।

लेकिन आज के युग मे कई साधको मे प्रचार–प्रसार यशलिप्सा आदि के नाम से अनेक विकृतिया प्रवेश करती जा रही हैं। परोपकार के नाम से अपनी यशलिप्सा पूरी करने के लिये कई साधक हिंसात्मक एव परिग्रह की प्रवृत्तियो मे बढते जा रहे हैं। धर्म के प्रचार-प्रसार के नाम से साधुत्व की मर्यादाओ को विस्मृत किया जा रहा है। लेकिन सत्य है कि मर्यादा शून्य जीवन का कभी स्थायी प्रभाव पडने वाला नही है।

आधुनिक युग के कई युवान जो साधुत्व की मर्यादाओ से पूर्ण विज्ञ नही हैं, वे साधुओ को प्रचार–प्रसार के नाम से श्रमण सस्कृति से गिराने के लिये प्रेरित कर रहे हैं। लेकिन सोचने का विषय है कि श्रमण सस्कृति मे आने वाली विकृति किस कदर बढती जा है। परिणाम स्वरूप अन्य को सुसस्कारित करने के बजाय कई जैनी भी सस्कार हीन और धर्म से विमुख होते जा रहे हैं।

श्रमण सस्कृति मे आनेवाली अनेक विकृतियो के बीच लाउड स्पीकर के प्रयोग सम्बन्धी विकृति भी विषवल्लरी का रूप लेती जा रही है। कुछ जोशीले युवाओ तथा वृद्धो का यह कहना है कि विशाल पब्लिक को सुनने के तिए माईक होना आवश्यक है। थोडे से दोष के पीछे महान् लाभ हो तो, अल्प दोष की ओर ध्यान नही देना चाहिये। परिणाम स्वरूप कई साधक भी प्रचार–प्रसार के नाम पर लाउडस्पीकर मे बोलने लगे हैं। जिसके कारण समाज मे कितनी विकृति फैल गई है और फैलती जा रही है, यह सबके सामने है।

जिन शासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक समता दर्शन प्रणेता, विद्वद् शिरोमणि आचार्यश्री नानेश, इस युग के श्रमण–सस्कृति की सुरक्षा के दृढतम सेतु हैं। जिन्होने अपने धर्म सघ को सम्यक् ज्ञान के साथ विशुद्ध आचरण की नीव पर सुस्थिर करने का विशिष्ट प्रयत्न किया है। परिणाम स्वरूप सघ रूप रथ सम्यक् ज्ञान सम्मत क्रिया चक्को पर निरन्तर गतिशील है।

आचार्य प्रवर के प्रवचन इतने प्रभावशाली होते हैं कि प्रवचनो मे हजारो की सख्या मे जनता उपस्थित रहती है। इस विशाल जनता को देखकर आपके समक्ष भी कई लोगो ने माईक मे बोलने के लिये सुझाव रखा। युग बदल रहा है। युग के साथ बदलने के लिये उत्प्रेरित किया।

तब प्रज्ञासिन्धु आचार्य प्रवर ने जो लाउडस्पीकर को लेकर आगमिक धरातल पर सैद्धातिक, वैज्ञानिक, सयुक्तिक ढग से समय–समय पर जो समाधान प्रस्तुत किये, उसे ही सकलित

सम्पादित कर 'लाउडस्पीकर-ध्वनिवर्धक यंत्र और मुनि धर्म' के नाम से प्रस्तुत किया गया। प्रस्तुत समाधान वस्तुतः हृदयग्राही एव सचोट समाधान है। कोई भी श्रमण सस्कृतिनिष्ठ व्यक्ति इसका अध्ययन करने के बाद कभी भी नही कहेगा कि लाउडस्पीकर का प्रयोग होना चाहिये।

आचार्य प्रवर ने स्वय के जीवन से यह सिद्ध कर बतलाया है कि साधु जीवन मे लाउडस्पीकर की कोई आवश्यकता नही है। हजारो की जनमेदिनी भी यदि शात है तो आचार्य श्री की आवाज विना किसी के सहारे एक छोर से दूसरे छोर तक पहुच जाती है।

जिसे सुन एव देखकर जनता को बडा आश्चर्य होता है। उदयपुर की घटना है। सवत्सरी के रोज, पचायती नोहरा चारो तरफ से खचाखच भरा हुआ था। उस समय आचार्य प्रवर का प्रवचन इस छोर से उस छोर तक बराबर सुनाई दे रहा था। लगभग १२½ बजे शासननिष्ठ सुश्रावक श्री भवरलालजी सेठिया के साथ भागीरथजी वैद्य भी उपस्थित हुए। उन्हे मुख्य द्वार पर ही आचार्य प्रवर की आवाज सुनाई दी तो आश्चर्य हुआ। सोचने लगे कि कही आचार्य प्रवर माईक का प्रयोग तो नही कर रहे हैं ? लेकिन जब आगे बढे तो ज्ञात हुआ कि नही बिना किसी के सहारे आचार्य प्रवर की अजस्र वाग्धारा निकल रही है। वे बहुत प्रभावित हुए और कहने लगे कि यह तो आचार्य देव की दीर्घ ब्रह्मचर्य की साधना का ही परिणाम है कि इस अवस्था मे भी इतना तेज बोल लेते हैं। ऐसा एक से नही अनेको से सुनने को मिलता है।

स्थानकवासी कान्फ्रेंस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री जवाहरलालजी मुणोत जब आचार्य प्रवर से वर्षों पूर्व बेतूल मे मिले, तब तो उन्होने माईक का पक्ष लेकर गुरुदेव को भी बोलने के लिये प्रेरित किया था। गुरुदेव ने उस समय उन्हे बहुत समझाया, पर वे मानने को तैयार नही थे। किंतु अब जब उन्होने देखा कि माईक मे बोलने वाले साधु कितने सुविधा भोगी हो गए हैं तो उनकी आंखें खुल गई और बोरीवली वर्षावास मे तो प्रवचन मे उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि पहले मैं भी माईक का पक्षपाती था लेकिन अब मैं उसका विरोधी हू। वस्तुत मर्यादाओ को तोडकर जैन धर्म का सच्चा, प्रचार-प्रसार नही किया जा सकता, आदि भाव व्यक्त किये। इस बम्बई प्रवास के दौरान अनेको बार आचार्य प्रवर के सान्निध्य मे मुणोतजी आ चुके हैं और यह स्पष्ट आह्वान कर चुके है कि आपको अब श्रमण सस्कृति की सुरक्षा करनी है। श्रमण सस्कृति मे बढ रही विकृतियो को दूर करना है। वर्तमान मे आप जैन समाज मे वीतराग वाणी के सिद्धातो को लेकर चलने वाले जगमगाते नक्षत्र हैं आदि।

यह तो मुणोतजी का कहना है, पर इधर घाटकोपर सघ की ही बात ले लीजिये। प्रथम तो आचार्य प्रवर ने घाटकोपर के प्रमुखो से यह स्पष्ट कहा था कि श्रमण सस्कृति की मर्यादाओ के विपरीत कोई काम नही होगा। व्याख्यान मे चन्दा चिट्ठा इकट्ठा नही होगा, लाउडस्पीकर का प्रयोग उपाश्रय मे नही हो सकेगा। सूर्योदय से पूर्व एव सूर्योदय के पश्चात् सतो के स्थान मे बहिनो का प्रवेश एव सतियो के स्थान पर भाइयो का प्रवेश नही हो सकेगा

आदि अनेक मर्यादाओ को पालन करने की विश्वस्त अभिव्यक्ति के बाद ही घाटकोपर वर्षावास की घोषणा की गई थी ।

घाटकोपर सघ ने गुरुदेव के निर्देशानुसार मर्यादाओ को एव श्रमण सास्कृति को विशुद्ध बनाए रखने मे महत्वपूर्ण योगदान दिया । जब गुरुदेव को यह ज्ञात हुआ कि सवत्सरी के दिन प्रतिक्रमण मे श्रावको की सख्या बहुत होने से श्रावको का प्रतिक्रमण लाउडस्पीकर मे करवाया जाता है । घाटकोपर मे यह वर्षों से होता चला आ रहा है । गुरुदेव जहा विराजे हैं, वहा तो लाउडस्पीकर आने का कोई प्रश्न ही नही था । अत श्रावक लोगो ने अलग वाडी मे जाकर सवत्सरी प्रतिक्रमण लाउडीस्पीकर मे करने का विचार किया ।

जब यह बात गुरुदेव को ज्ञात हुई तो गुरुदेव ने प्रवचनो के माध्यम से जनता को समझाने का प्रयास किया कि कहा तो आप सभी प्राणियो को अभय देने के लिये सावत्सरिक साधना का प्रतिक्रमण करने जा रहे है और कहा लाउडस्पीकर मे बोलकर जिन जीवो से क्षमायाचना कर रहे हैं, उन्ही को मार रहे हैं तो यह कैसी क्षमायाचना होगी कि एक तरफ बिजली के सटर लगाए जाय और दूसरी तरफ उनसे माफी मागी जाय तो यह मात्र साधना का प्रदर्शन ही होगा ।

इस प्रकार गुरुदेव, अनेक प्रकार से मार्मिक ढग से घाटकोपर वासियो को समझाने लगे । गुरुदेव की वाणी को सुनकर लोगो मे बहुत तेजी से ऊहापोह होने लगी । जनता ने जब लाउडस्पीकर से होने वाली हानियो को सुना, सुनकर वे लाउडस्पीकर मे सुनने की अनिच्छुक हो गई । जनता चाहने लगी कि हम तो वैसे ही सुन लेंगे पर लाउडस्पीकर नही चाहिये । सघ के प्रमुख पदाधिकारियो को भी गुरुदेव ने पर्याप्त समय देकर बहुत ही सुदर ढग से समझाया । आखिर सभी मान गए और सवत्सरी के एक दो दिन पहले यह घोषणा कर दी गई, इस वर्ष आचार्य श्री नानालालजी म सा के आदेश से सवत्सरी प्रतिक्रमण मे लाउडस्पीकर नही लगाया जाएगा ।

लोगो को भय था कि जनता विरोध करेगी । पर जहा समता रस से आपूरित आचार्य देव विराजमान हो वहा विषमता या सघर्ष की स्थिति तो हो ही नही सकती ।

पर्युषण के दिनो मे पब्लिक की अधिकता होने से सब शाति से सुन सकें, इसके लिये पर्युषण के सात दिनो मे अलग-अलग चार स्थलो पर तो व्याख्यान होते ही थे किन्तु सवत्सरी के दिन जनता की अत्यधिकता के कारण एक ही समय पर छ स्थानो पर आचार्य प्रवर ने अपने शिष्याओ-शिष्य को भेजकर प्रवचन करवाये और सब जिज्ञासु व्यक्तियो को वीतराग वाणी सुनाकर यह प्रमाणित कर दिया कि व्याख्यान सुनने के लिये लाउडस्पीकर की कोई आवश्यकता नही है ।

जनता ने शाति के साथ पर्युषण के प्रवचनो का लाभ लिया था । कभी कोई सघर्ष की स्थिति नही आई थी । तब सवत्सरी के प्रतिक्रमण मे श्रावक, सघर्ष करें यह कैसे हो

सकता था। फिर भी प्रमुख भाइयो को बहुत भय था। आखिर सवत्सरी की शाम भी हो गई। प्रतिक्रमण का समय भी आ गया। श्रावको के प्रतिक्रमण भी पाच स्थलो पर हुए। सभी स्थल भरे हुए थे, किन्तु आश्चर्य कि सभी जगह बहुत शाति के साथ प्रतिक्रमण श्रवण कर रहे थे। जिस शाति के लिये चर्च एव मस्जिदो के उदाहरण दिये जाते हैं कि वहा शाति रहती है किन्तु घाटकोपर के सावत्सरीक प्रतिक्रमण मे भी आश्चर्यजनक शाति बनी रही।

जिसे देखकर लोगो को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। यह लोगो को विश्वास ही नही था कि इतनी शाति बनी रहेगी। प्रतिक्रमण के बाद यह स्पष्ट शब्दो मे कहते हुए श्रावक पाये गए कि वास्तव मे गुरुदेव की विशिष्ट तेजोमय साधना का ही प्रभाव है कि घाटकोपर मे इतनी शाति बनी रही और प्रतिक्रमण दूर तक सुना जा सका। यहा तो लाउडस्पीकर के होते हुए भी इतनी शाति नही रहती, जितनी शाती लाउडस्पीकर के नही रहते हुए बनी रही। हजारो लोगो का इस शाति को देखकर यह मानस बन गया कि लाउडस्पीकर से सुनने की कोई आवश्यकता नही है।

घाटकोपर निवासी अनेक भाई–बहिनो ने सामायिक–प्रतिक्रमण मे लाउडस्पीकर के प्रयोग का त्याग कर दिया। आचार्य भगवान के सान्निध्य मे हुई श्रावको की इस क्राति ने पूरी बम्बई पर प्रभाव डाला। सवत्सरी के बाद जैसी कि बम्बई की परम्परा है कि वहा के श्रावकगण एक–दूसरे स्थान पर क्षमायाचना करने जाते हैं। आचार्यप्रवर की सेवा मे भी लग–भग बम्बई के सभी उपनगरो के श्रावकगण सामूहिक रूप से दर्शनार्थ उपस्थित हुए। आचार्य प्रवर की वाणी का लाभ भी लिया। आचार्य प्रवर ने अन्य अनेक बातो के साथ सवत्सरी के दिन होने वाली माईक के माध्यम से की जाने वाली जीवो की हिंसा की ओर श्रावक-श्राविकाओ का ध्यान आकर्षित किया। गुरुदेव के सकेत को समझकर अनेक स्थलो के श्रावक–श्राविकाओ ने भी धार्मिक अहिंसक अनुष्ठानो मे लाउडस्पीकर के प्रयोग का त्याग कर दिया। इस प्रकार जनता मे एक अभिनव क्राति घटित हुई। श्रावको मे सात्विक जोश आया–श्रमण सस्कृति की सुरक्षा के लिये।

घाटकोपर मे हुए इस क्राति का कुछ दिग्दर्शन जैन प्रकाश के सम्पादक ने अपने सम्पादकीय मे गुजराती मे करवाया है। जानकारी के लिये उसे हिन्दी लिपि मे अविकल रूप से प्रस्तुत कर रहे है।

सुखद अनुभव

श्री एम. जे. देसाई–मानद् सम्पादक
श्री अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन
कॉम्फरन्सनु मुखपत्र 'जैन प्रकाश'
पहली सप्टेंबर १९८१

आपणी सौनी अने खास करीने मुंबईना जैन समाज नी ऐ मान्यता छे के पर्युषण मा के विशिष्ट प्रसगोए धर्मस्थानकोमा हाजरी विशेष प्रमाणमा होय छे, त्यारे ध्वनिवर्धक यत्रनो

उपयोग करवानु अनिवार्य बने छे । ध्वनिवर्धक यत्र नो उपयोग न थाय तो प्रवचन सम्भलाय नहि । घोघाट वधु प्रमाणमा थाय, तेज प्रमाणे सवत्सरी प्रतिक्रमण समये पण ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग थाय तो शाति जलवाय अने बधा ने प्रतिक्रमण बराबर साभली शकाय, अन्यथा घोघाट–धमाल थवा पामे अने सवत्सरी प्रतिक्रमण बगडी जाय, परन्तु आ मान्यता भ्रामक छे तेवो अनुभव आ वखते घाटकोपर हीगवाला लेन श्रावक सघना भाई–बहेनो ने थवा पामेल छे ।

आ वर्षे घाटकोपर हीगवाला लेन धर्म स्थानकमा साधुमार्गी जैन सघना पू आचार्य श्री नानालालजी म सा नु चातुर्मास छे । तेओ ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग करता नथी, ऐटलु ज नहि परन्तु ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग धर्मस्थानक मा कोई थी पण शके नहि तेवी मान्यता तेओ धरावे छे, विजली थी के बेटरी थी चालती घडियालपण धर्म स्थानक मे राखी शकाय नहि तेवी तेमनी दृढ मान्यता छे, तेमनी आ मान्यताना यथायोग्य अमल माटे तेओ पुरो आग्रह पण राखे छे ।

सवत्सरी नजीक आवती गई तेम सवत्सरी प्रतिक्रमण वखते ध्वनिवर्धक यत्रना उपयोगनी चर्चा शुरु थई । कार्यकर्त्ताओए नक्की कर्यु के सवत्सरी प्रतिक्रमण समये उपाश्रय मा ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग करवा नहि । परन्तु राष्ट्रीय शाला अने भानुशाली वाडी मा सवत्सरी प्रतिक्रमण वखते ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग करवामा हरकत नथी, केमके आ स्थलो धर्मस्थानक नी हद नी बहार छे । बाबतनी पू० आचार्य म सा ने जाण थई त्यारे तेओए कह्यु के सघना आश्रये गमे त्या प्रतिक्रमण थाय, कोई पण जग्याए ध्वनिवर्धक यत्रनो उपयोग थई शकशे नहि । कार्यकर्त्ताओ नी मूझवण वधी गई, आ प्रश्न चर्चानो विषय बनी गयो, आखरे पू० आचार्य म.सा. ना आदेश ने मान आपवानु नक्की थयु ।

पू आचार्यश्री ना लक्षमा आवी गयु के आ क्षेत्रना भाई–बहिनो सवत्सरी प्रतिक्रमण ध्वनिवर्धक यत्र द्वारा साभलवा टेवायेला छे । ऐटले तेनो उपयोग नहि थाय तो धमाल–धाधल थवानी शक्यता छे । ऐटले पू आचार्यश्री ऐ प मुनिश्री विजयमुनिऐ तथा अन्य मुनिराजो अने महासतीजी ओऐ सवत्सरी अगाऊ ध्वनिवर्धक यत्र ना उपयोग विना भाई-बहेनो सवत्सरी प्रति–क्रमणमा बराबर शाति जालवे तेनी भूमिका तैयार करी । ते समये मौन सेववाना प्रत्याख्याना पण आप्या । तेनी भारी असर थवा पामी ।

सवत्सरी प्रतिक्रमण वखते मात्र दीठ ऐक–ऐक व्यक्ति प्रतिक्रमण बोलावे तेवी व्यवस्था करवा मा आवी । पूज्य म सा ऐ अगाऊ थी भूमिका तैयार करी हती, ऐटले सवत्सरी प्रतिक्रमण वखते अपूर्व शाति रही । शिस्त अने शांतिपूर्वक सोए प्रतिक्रमण कर्यु । ध्वनिवर्धक यत्रना उपयोग विना पण सौ शिस्ता जालवे अने मौन राखे तो सवत्सरी प्रतिक्रमण बराबर साभली शकाय छे अने सारी रीते थई शके छे । तेवो सुखद अनुभव सौने आ वखते प्रथम वखत थवा पाम्यो, ऐटलु जनहि परन्तु सौए सवत्सरी प्रतिक्रमण सारी रीते कयानो सतोष पण अनुभव्यो ।

मुबई जेवा स्थलमा जाहेर स्थलोए कार्यक्रमो होय अने विशाल मेदनी होय त्यारे ध्वनिवधक यत्रनो उपयोग अनिवार्य बने छे। ते एक बात छे, परन्तु वक्ता प्रवचन आपे ते ध्वनिवर्धक यत्रनी सहायता विना सीधु झीलाय अने ध्वनिवर्धक यत्र द्वारा सम्भलाय तेनी असरमा जमीन आसमाननो तफावत पड़े छे। वक्ता सामे होय अने ते जे बोले सीधु झीलाय ते वधु असरकारक बने छे।–ते शब्दो सीधा हृदय ने स्पर्शे छे, ध्वनिवर्धक यत्र द्वारा जे शब्दो सभलवाय छे तेना आन्दोलनो ऐटला वेगथी चारे बाजु फैलाई जाय छे के तेनी हृदयने स्पर्शवानी क्षमता ओछी थई जाय छे। सवत्सरी प्रतिक्रमण आ वखते ध्वनिवर्धक यत्र नी मदद विना बधाए साभल्यु–सीधु झील्यु तेनी जे असर थवा पामी तेना आ प्रकारना प्रत्याघातो घणा पासेथी साभलवा मलेला छे।

आ प्रयोग प्रेरणा आपे छे के सवत्सरी प्रतिक्रमण यथायोग्य करवानी भावना होय, प्रतिक्रमण समये पुरी शाति जलवाय अने मन ने प्रतिक्रमण साभालवामा तल्लीन बनाववामा आवे तो ध्वनिवधक यत्रनी सहायता विना पण प्रतिक्रमण बराबर साभली शकाय छे, प्रतिक्रमण सारी रीते थई शके छे, अने प्रतिक्रमण सारी रीते कर्यानो सतोष पण अनुभवी शकाय छे।

अलबत शरुआत मा पू साधु-साहिबजी ओए भूमिका तैयार करवानी जरूर रहे, परन्तु ऐक वखत सुखद अनुभव थयाबाद, दर वर्षे ध्वनिवर्धक यत्र नी मदद विना ज सवत्सरी प्रतिक्रमण करवानो सौ कोई आग्रह राखशे तेवो स्पष्ट अभिप्राय घाटकोपर हीगवाला लेन श्रावक सघना कार्यकर्त्ताओ,युवान वर्ग तथा सघना भाई-बहिनो व्यक्ति करी रह्या छे।

जे जे सघो मा सवत्सरी प्रतिक्रमण वखते ध्वनिवर्धक यत्र नो उपयोग थतो होय ते बधा सघो आ प्रयोग जरूर करे, तेमा तेमने अवश्य सफलता प्राप्त थशे, आनदनी अनुभूति थशे।

गुजराती जैन प्रकाश
से साभार

रोहतक मण्डी मे विराजमान पडितरत्न, प्रखर वक्ता श्री सुदर्शनलालजी म सा ने इस क्रातिकारी कार्य की अनुमोदना करते हुए स्पष्ट शब्दो मे लिखवाया था–पत्राश (३–६–८५ रोहतकमण्डी) सवत्सरी महापर्व के पुनीत अवसर पर, बम्बई निवासियो का अपूर्व, अद्‌भुत, धार्मिक उत्साह, एक-एक समय छ छ व्याख्यान विना ध्वनियत्र के नौ-दस हजार श्रद्धालुओ द्वारा समवेत प्रतिक्रमण, धर्म प्रभावना यह क्रिया पक्ष की सुदृढ स्थापना देखकर सबको परम आह्लाद हुआ। पूज्य आचार्यश्रीजी म.सा. की पुण्याई, प्रभाव महिमा और आकर्षण शक्ति अलौकिक है। सभी मुनिराज इनकी सुखद वरद कृपादृष्टि के परम अभिलाषी है।

अहमदाबाद-अम्बाडी मे विराजमान परम प्रभावक आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म सा. एव पडितरत्न सरदार मुनिजी म सा. ने लिखवाया कि— (६–६–८५ अम्बावाडी) पत्राश

'घाटकोपर सघ की जागृति के समाचार जानकर हृदय परम उल्लसित होता है । आपश्री के पावनकारी पदार्पण से अच्छी धर्मजागृति होगी । ऐसा पूर्ण विश्वास ही था । श्रावको को साधु समाचारी की जानकारी भी शायद पहली ही बार हो रही है । जिन शासन की भूरि-भूरि प्रभावना हुई जिससे हमे परम हर्ष हो रहा है ।'

इतिहासमार्तण्ड आचार्यश्री हस्तीमलजी म सा के यहा से भोपालगढ से पत्र आया उसका पत्राश यह है(५ सप्टेंबर ८५ भोपालगढ)बिना माईक के ९-१० हजार श्रावक-श्राविकाओ का शातिमय वातावरण मे प्रतिक्रमण हुआ । यह बहुत सराहनीय है, जहा ऐसे आचार्य प्रवर समता विभूति धर्मपाल प्रतिबोधक विराजते हैं । वहा ऐसे प्रसग स्वय ही परिलक्षित हो जाते हैं ।

इसके अतिरिक्त 'बम्बई समाचार' नामक पत्रिका मे भी जो श्रमण सस्कृति मे लाउडस्पीकर की अनुपादेयता के विषय मे मेटर प्रकाशित हुआ है, उसका अ श भी हिन्दी लिपि मे अविकल रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है—

ध्वनिवर्धक यंत्र

'जय जिनेन्द्र' मु बई समाचार
मगलवार २३-७-१९८५
सम्पादक—धर्म प्रिय

जैनोमा ध्वनिवर्धक यत्र ऐटले के माइक वापरवा अगे मतभेद प्रवर्ते छे। ऐक वर्ग तेमा दोष माने छे ऐटले तेना थी अलग रहे छे । तेनो उपयोग करतो नथी, ज्यारे बीजो वर्ग तेनामा दोष नथी ऐम तो कहेतो नथी पण समय नी माग छे, वधारे लोको लाभ लेई शके माटे तेनो उपयोग करे छे अने दोषनु प्रायश्चित ले छे ऐम कहे छे ।

माइक वापरवा दोष छे के केम ? अथवा जो दोष होय अने दोष छे ऐम मानता होय तो पछी तेनो उपयोग करवु अने प्रायश्चित लेवु ऐ योग्य गणाय खरु ? आ प्रश्नो हाल अत्यारने तबके अमारे छेडवा नथी, आ अगाऊ आ अगे विशद चर्चा करी चुक्या छीए ।

ऐक वखत पूज्य आचार्यश्री विजयकीर्तिचन्द्र सूरीश्वरजी ना गुरु, दक्षिण देशोद्धारक स्व पूज्य आचार्यश्री विजयलक्ष्मण सूरिश्वरजी साथे मारे खूब चर्चा थयेली ।

तेओनु कहेवु हतु के जो कदाच अग्निकाय के वायुकायना जीवो नी हिंसानो के ऐवो कोई पण दोष न होय तो पण माइक नो उपयोग साधु-साध्वियो ना चारित्र पालन नी दृष्टि ऐ हितावह नथी, तेमनी वात तद्दन स्पष्ट हती तेमना कहेवानो आशय अेवो हतो के जैन साधु-साध्वियो मा विजली ना वापराश अगे जे सकोच प्रवर्ती रह्यो छे तेमा ज तेमनु पोतानु अने समस्त सघ नु हित जलवाई रहेल छे ।

जो एक वखत छूट थी विजलीनो वपराश शरु थई जाशे तो पछी ए वात क्या जइने अटकशे ऐनी कल्पना थवी मुश्केल छे ।

मोटी सभा होय अने व्याख्याता वृद्ध होय अथवा तेमनो आवाज क्षीण थयेलो होय तेवा सजोगो मा आपने सामान्य रीते लाउडस्पीकरनी तरफेण करीअे छीअे के जे थी ओछा दोषे वधु लोको लाभ लई शके ऐटले शास्त्रमा कहैल अल्पदोष अने महानिर्जरावाली उक्तीनो उपयोग करीअे छी अे ।

परन्तु तेमा केटलु अहित थवा सम्भव छे तेनो आपणे विचार करता नथी । अेक वखत उपाश्रय के ज्या मात्र सवर अने निर्जरानी ज करणी थई शके त्या आ वात प्रवेश पामे ऐटले एक पछी एक केवा अनिष्टो सजता थई जाय तेनो विचार करवा जेवो छे ।

१ लाउड स्पीकर अे प्रतिष्ठानु प्रतीक वनी जाशे ।

मानो के आजे एक वयोवृद्ध आचार्य के प्रज्ञावत मुनिराजनो आवाज पहोची शकतो नथी अेटले ते लाउड स्पीकरनो उपयोग करे छे, पण पछी तेमना ज पट्टधरो, मानव-मेदनी होय के न होय, सभा मा त्रणनी के तेरनी उपस्थिती होय तो पण ते लाउडस्पीकर नो आग्रह रखवाना, ते ओ सघ ने कहशे के अमारा गुरु महाराजना समयमा लाउडस्पीकर राखता अने अमारा वखते केम नही ? फलाणा मुनिश्री ना चातुर्मास वखते तमे लाउडस्पीकर राखेलु अने अमारी वखते नहि ? अे मोटा अने अमे नाना ? आम लाउडस्पीकर अे प्रतिष्ठानी वस्तु वनी जशे अने तेने परिणामे सघ मा फाटफुट पडशे अनु साधु–श्रावक सघ वच्चे जे अेक वाक्यता जोइये ते जलवाशे नहि ।

२ लाउड स्पीकरनो अेक वखत छूट थी वपराश थवा माडयो अेटले पछी टेलीफोन नो उपयोग करता अचकाट कोण अनुभवशे ? आजे पण तमे जुओ छो के तमारे त्या टेलीफोन होय अने कोई साधु मुनिराज आवे अने जुअे तो पछी तेमने कोईनी जरूर पडशे त्यारे कहेशे के आ नम्बर मा जरा फोन जोडीने फलाणा भाई के फलाणा बेनने जरा आटलु कही दोने । आतो हजु सकोच छे माटे नहि तो पछी टेलीफोन करवानी ज रजा मागशे अने पोते जाते ज डायल फेरवणा माडशे अने गमे तेनी साथे सीधो सम्पर्क साधी लेशे ।

३. उपाश्रय मा विराजमान साधु मुनिराज ना वहार थी जो वहु टेलीफोन आवता थया तो पछी पेढीवालाओ पण कटालशे अेटले तेमने अेम थशे के आना करता अेक लाइन उपाश्रयमा ज टेलीफोननी राखो अेटले वारे घडीअे वोलाववा जवु न पडे अने माणस रोकाई न रहे । अमुक वखत पछी लाइन शु करवा, स्वतन्त्र टेलीफोन ज उपाश्रयमा राखवामा आवशे भले तेनु वील पेढी भोगवे पण साधुने ससारी ओना ससर्गमा स्वतन्त्र रीते आववानु आ रीते अेक साधन मली रहेशे ।

पछी तो जेम बातो चाले छे के फलाणा महाराज फलाणा शेठ ने वेपारीनी रुख आपे छे। फलाणा भाई फलाणा महाराज ने लीधे ज पैसावाला थई गया अेवी बातो साची नहि पडे अेनी कोई खात्री खरी ?

अने आ वस्तु आटलेथी ज नहि अटके पण रातना वखते कोइकने टेलिफोन करीने बोलावी पण शकशे ने ? जो आम थाय तो पच महाव्रतमा थी केटला अखण्ड रहेशे ?

अेटले आ अेक जातनो रोग छे, रोग अने शत्रुने तो उगता ज दलावी देवा अे शाणपण नु काम छे।

पूज्यश्री ना आ कथन नी साथे मनें पण अेक अनुभव थयेलो। अेक मुनिश्री अे मने सदेशो आपवा माटे बहारगाम थी कोल करावेलो। पेला भाई बात करे पण बात बरावर थई शके नहि अेटले अंते मैं कहयु के भाई ? हु आपने वधारे शु कहयु ? महाराज साहेब होय तो मारी वात समजी शके त्या तुरन्त सामेथी महाराज साहेब ज आवाज सम्भलायो के बोलो–बोलो मैं सुनता हू।

त्यारे मने थयु के तेमनी वात साची हती। जैन समाजमा वे प्रकारनी विचार धाराओ चाले छे जो के बने पोत पोतानी दृष्टिअे साचा छे छता परिणामनो विचार तो करवो ज रहयो।

श्वेताम्बर स्थानकवासी सम्प्रदाय मा जैनु सौ थी मोटु सख्यावल छे अे श्री वर्धमान जैन श्रमण सघ लाउडस्पीकर अगे चौक्कस निर्णय करी शक्यो नथी तेना सभ्योमा वे प्रकारना मतो प्रवर्ते छे। अेक मत तेमा दोष मानतो ज नथी, जो दोष होय तो साधुअे दीक्षा लेती वखते त्रण करण अने त्रण योगे करी पापकारी प्रवृति न करवामा पच्चखाण लीधेला छे तेनो भग थाय छे अने पाप जाणवा छता ते आचरवु अने प्रायश्चित लेवु अे तो एक प्रकारनी आत्म प्रतारणा छे। ज्यारे वीजो पक्ष जरुर होय तो वापरवु अने पछी प्रायश्चित लेवु अेम माने छे।

प्रायश्चित लेता जवु अने पाप आचरता जवु अे बात बराबर नथी। कोई वखत कोइक दोषनु सेवन अनायाशे थई गयु होय तो तेनु प्रायश्चित लई दोष मुक्त थई शकाय पण पाप जाणवा छता आचरता जवु अेनु प्रायश्चित होई शके खरु ? जे आचरण भूल थी थयु होय तेना पस्तावो करवो अने प्रायश्चित लेवु अे वरावर छे पण पछी वीजी वखत अेवु करवु न जोईअे अेवो अभिप्राय शास्त्र समत लागे छे।

इस प्रकार एक नही अनेक प्रवुद्ध लोगो के अभिप्राय पढने–सुनने को मिले हैं कि लाउडस्पीकर का प्रयोग श्रमण सस्कृति के लिये कभी भी हितावह नही है। लाउडस्पीकर के प्रयोग खुलने से फिर सारे विद्युत सचालित प्रयोग का खुला सकेत है। जिन्हे रोकना बहुत मुश्किल हो जाएगा। जैसा कि देखने को मिल रहा है।

मेरा उन महानुभावो से कहना है कि जो आधुनिकता के प्रवाह मे वहते जा रहे हैं और साधुओ को भी मर्यादाओ को तोड बढकर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं, वे आचार्यप्रवर के इन मौलिक विचारो को पढें और अपने विचारो को परिष्कृत कर अपनी शक्ति को श्रमण सस्कृति की रक्षा के लिये लगावें न कि श्रमण सस्कृति को तोडने के लिये।

[घाटकोपर का वर्षावास ऐतिहासिक ढग से चल रहा है]



परिशिष्ट-१

साध्वी वर्ग की ओर से अलग तथा श्रावक वर्ग की ओर से दिनाक २२-८-१९६२ को दिये गये लिखित आवेदनो के सन्दर्भ मे दिनाक २२-९-१९६२ को उदयपुर के व्याख्यान मे—

आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा द्वारा प्रसारित—

सार्वजनिक-घोषणा

लगभग डेढ वर्ष पूर्व जव अचानक मेरे शरीर पर रोग ने आक्रमण किया और स्वास्थ्य निर्वल होता जा रहा था तव शासन हितैषी सुसगठन प्रेमी चतुर्विध सघ मे चिन्ता व्याप्त हो गई थी। उस समय मुझसे प्रार्थना की गई थी कि आपश्री की कल्पना आदि के अनुसार जव तक सुसगठन होकर सर्वाधिकार पूर्ण उत्तरदायित्व एक आचार्य के अधीन नही हो जाए, तव तक हमारा भावी आधार क्या हो ?

समाज की स्थिति को देखते हुए चतुर्विध सघ के मन मे ऐसे विचार आना स्वाभाविक ही था। उनकी उपर्युक्त भावना की प्रार्थना आने पर समाज की स्थिति और अन्यान्य वातो पर गम्भीरता से मनन करके कुछ व्यवस्था करना मैंने अपना कर्त्तव्य समझा। उस समय मैंने यही सोचा कि चतुर्विध सघ की चिंता निर्मूल नही है। अतः मैंने दिनाक १८ अप्रैल १९६१ को सुसगठन सवधी निम्न भावना व्यक्त करते हुए कहा था कि मैं सुसगठन का किसी से कम हिमायती नही हू। मैं अव भी यही चाहता हू कि मेरा सतोषजनक समाधान होकर मेरी कल्पना और उद्देश्य के अनुसार जैसा कि मैं पूर्व मे व्यक्त कर चुका हू, एक के नेतृत्व मे श्रमण सगठन साकार रूप होकर सुदृढ वने अथवा मेरे सतोषजनक समाधान पूवक समस्त मुनिमण्डल या यथा

सम्भव जितने भी मुनिवृन्द शास्त्र सम्मत एक समाचारी मे आबद्ध होकर अपने मे से किसी एक शास्त्रज्ञ, श्रद्धावान एवं चरित्रनिष्ठ मुनिवर को आचार्य माने और शिक्षा, दीक्षा, चातुर्मास, विहार व शिष्य परम्परा आदि सब उन्हीं आचार्य के अधीन रहे । यदि ऐसी स्थिति बनती हो तो मैं सदैव तैयार हू और अन्य संत-सतियो से भी मैं यही अपेक्षा करता हू कि जब भी ऐसी स्थिति का निर्माण हो उसमे अपना विलीनीकरण करने को तैयार रहे। इन भावो को व्यक्त करते हुए चतुर्विध सघ की प्रार्थना को लक्ष्य करके आदेश दिया था कि यदि मेरी कल्पना व भावना आदि के अनुसार सुसगठन की सुव्यवस्था मेरे जीवन मे न बन सके तो मेरे पश्चात् चतुर्विध सघ की व्यवस्था का सर्वाधिकार तथा पूर्ण उत्तरदायित्व भविष्य के लिये पडित मुनि श्री नानालालजी को सौंपता हू । उनको यह भी निर्देशन करता हू कि वे यथासम्भव मेरी कल्पना आदि के अनुसार सुसगठन बनाने मे सदैव प्रयत्नशील रहे और चतुर्विध सघ उनकी आज्ञाओं को शिरोधार्य करता हुआ ज्ञान, दर्शन, चरित्र की अभिवृद्धि करता रहे ।

उक्त भावना एव निर्देशन मे सन्निहित भावो से सुज्ञ वर्ग को ज्ञात होना चाहिये कि चतुर्विध सघ की प्रार्थना पर ध्यान देकर जहाँ मैंने एक व्यवस्था दी, वहा शास्त्र सम्मत एक समाचारी मे आबद्ध होकर सर्वाधिकार सम्पन्न एक के नेतृत्व मे श्रमण सगठन बनता हो तो उसमे विलीन होने के लिये भी मार्ग खुला रखा है । आज भी मेरे वही विचार है ।

अभी गत ज्येष्ठ मास मे उपाध्याय प रत्नश्री हस्तीमलजी म उदयपुर पधारे तब श्रमण सघ सबधी उनसे वार्तालाप हुआ था । इसके पश्चात् पर्यूषण पर्व से पूर्व अ भा श्वे स्था. जैन कान्फ्रेंस का एक शिष्ट मण्डल भी आया था उससे भी श्रमण सघ सबंधी चर्चा वार्ता हुई थी । सभी ने सुसगठन सबधी मेरी उक्त भावना एव विचारो को भगवान् महावीर की निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की रक्षार्थ, सहायक माना । परन्तु इतना समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् और चर्चा–विचारणा के उपरान्त भी तदनुसार पालन करने कराने का कही से कोई चिह्न दृष्टिगोचर नही हो रहा है ।

स. २००९ मे सादडी सम्मेलन मे स्था जैन धर्मानुयायी विभिन्न सम्प्रदायो के मुनिवरो ने मिलकर भिन्न-भिन्न परम्परा और समाचारी मे एकता लाकर एकीकरण पारस्परिक प्रेममय, ऐक्यवृद्धि एव सयम मार्ग मे उत्पन्न विकृतियो को निर्मूल करने की दृष्टि से एक आचार्य के नेतृत्व में एक और अविभाज्य श्रमण सघ की स्थापना की थी । वहा एकत्र सब प्रतिनिधि मुनिवरो ने मिलकर सर्वसम्मति से उपाचार्य पद पर मुझे आसीन कर श्रमण सघ सचालन का पूर्ण उत्तरदायित्व मुझे सौंपा । तब मेरी इच्छा नही होते हुए भी मैंने प्रतिनिधि मुनिवरो को मान देकर श्रमण सस्कृति की पवित्रता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये उस गुरूत्तर उत्तर–दायित्व को बनाये रखने के लिये उस गुरुत्तर उत्तरदायित्व को सघ सेवार्थ स्वीकार किया और जो भी समस्याएं मेरे सामने आईं अथवा मुझे सौंपी गई उन पर न्याय नीति पूर्वक विचार करके आत्मसाक्षी से निर्णय दिये । यद्यपि विधि-विधान के अनुसार ऐसी समस्याओ का निर्णय लेने का मुझे पूर्ण अधिकार था परन्तु मेरी दृष्टि सघ हित की मुख्य रही, एव जहा भी मुझे

आवश्यकता अनुभव हुई मैंने अधिकारी मुनिवरो आदि से परामर्श लेकर निर्णय दिये। इतना सब होते हुए भी ऐसे निर्णयो की न केवल मौन अवज्ञा ही की गई बल्कि विपरीत अध्यादेशो आदि द्वारा उनकी स्पष्ट अवहेलना भी की गई और कराई गई। आश्चर्य तो इस बात का रहा कि मेरे द्वारा किये गये श्रमण सघीय ऐसे निर्णयो पर जब किसी ने मुझसे चर्चा की, तो जहा तक मुझे स्मरण है, किसी ने भी उन निर्णयो मे मुख्य रूप से अमुक त्रुटिया या कमी रही, ऐसा नही कहा फिर भी उनकी पालना नही हुई। इस प्रकार न्याय, नीति और अनुशासन की अवहेलना होते हुए भी मैंने धैर्यपूर्वक और प्रतीक्षा की, परन्तु जब मुझे लगा कि अब मेरे जैसे व्यक्ति का श्रमण सघ मे रहना व्यर्थ है तब मुझे विवश होकर उस नव निर्मित श्रमण सघ से सकारण पृथक होना पडा परन्तु मार्ग खुला रखा।

बाद मे श्रमण सघीय अधिकारी मुनिवरो एव श्रावक सघो द्वारा मेरे त्याग पत्र सम्बन्धी विचार पर पुनर्विचार करने के पत्र, प्रार्थना पत्र आदि आये। उनमे मैंने मेरे प्रति उनके प्रेम की झलक तो देखी किन्तु जिन कारणो को लेकर मैं श्रमण सघ से पृथक हुआ, उनके निराकरण का कोई सन्तोषजनक समाधान, आश्वासन नही दिखा। इसलिये मैंने सधन्यवाद उनकी प्रेम भावना की सराहना करते हुए जब तक मेरा सन्तोजनक समाधान नही हो जाये तब तक क्या करू, ऐसा उत्तर दिया।

यद्यपि इन सब बातो को काफी समय हो गया, फिर भी मुझे आशा थी कि सादडी सम्मेलन मे स्वीकार किये हुए उद्देश्य की पूर्ति हेतु मेरी योजना को कार्यान्वित करने का कही सक्रिय कदम उठेगा, परन्तु अभी पिछले दिनो जब विकेन्द्रीकरण की योजना मेरे सामने आई और मुनि रूपचन्द्रजी के विषय को, शास्त्रीय मर्यादाओ को भी अलग रखकर जिस ढग से निपटा हुआ मान लिया गया, तो अब मुझे ऐसा लग रहा है कि मेरी भावानुकूल एक आचार्य के नेतृत्व मे पूर्व स्वीकृत उद्देश्य की पूर्ति की सब मुनिवरों द्वारा कम से कम निकट भविष्य मे सम्भावना नही है।

इन दिनो मेरा स्वास्थ्य पुन गडबडा गया है और शरीर मे अधिक निर्बलता अनुभव हो रही है। इधर समाज की अस्थिर स्थिति और नैराश्य से सुसंगठन प्रेमी महानुभाव भी विचलित हैं और चाहते हैं कि सघ सचालन का कुछ ठोस निर्णय लिया जाय। मैं भी अब इसकी आवश्यकता अनुभव कर रहा हूं। इसलिये प. मुनि श्री नानालालजी को शुभेच्छु चतुर्विध श्रीसघ की सम्मति से परम प्रतापी तपोधनी यशस्वी महान् सन्त पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म सा की पाटपरम्परा पर युवाचार्य घोषित करता हू। मेरे जीवनकाल मे ये इस पद से विभूषित रहेगे और मेरे बाद मे आचार्य पद के अष्टम पाट की शोभा बढायेंगे। यही मेरी भावना है।

यदा–कदा मेरे कान पर एक बात आती रहती है कि उपाचार्य पद से त्यागपत्र देकर श्रमण सघ से पृथक हो जाने के पश्चात् मेरे अंगरूप श्रमण वर्ग सहित मेरी स्थिति क्या रहती है। अब अवसर आ गया है कि इस बिन्दु पर भी प्रकाश डाल दूं, जिससे स्थिति स्पष्ट हो जाये।

सादडी मे निर्मित श्रमण सघ मे प्रवेश इस शर्त के साथ था कि यह सघ ऐक्य योजना अखण्ड रहे, तब तक के लिये मैं वाध्य हू ।

श्रमण सघ सचालन की अवधि मे, शिथिलाचार उन्मूलन की दिशा मे तथा ध्वनि वर्धक यन्त्र के उपयोग नही करने के सम्बन्ध मे मैंने विधिवत् व्यवस्थाए दी थी । परन्तु उन व्यवस्थाओ के विपरीत आचार्यश्री द्वारा अध्यादेश आदि निकाले गये जिससे तत्काल तो दिल्ली विराजित पजाबी मुनिवरो मे और पश्चात् अनन्य भी साभोगिक सम्बन्ध विच्छेद हो गये । इस प्रकार विभेद पड़कर योजना-अखण्डित नही रही । मेरी उपर्युक्त शर्त के अनुसार मैं उस नव निर्मित श्रमण सघ से पृथक होने मे उसी समय से स्वतन्त्र था, परन्तु इधर समाज मे मेरी उक्त व्यवस्थाओ को पालन कराने के प्रयत्न चल रहे थे, इसलिये जावरा सघ से निवेदन प्रकाशित कर मेरी साभोगिक स्थिति को मर्यादित करते हुए मैंने सावधानी दिला दी थी और त्यागपत्र नही देकर प्रतीक्षा करता रहा । इसके पश्चात् लम्बे काल तक प्रतीक्षा करने के उपरान्त भी जब टूटे हुए साभोगिक सम्बन्ध मे सुधार नही हुआ और दूसरी-दूसरी वातो द्वारा व्यवस्था और विगडने लगी तो मुझे विवश होकर उपाचार्य पद से त्यागपत्र देकर श्रमण सघ से पृथक होना पडा ।

इस प्रकार श्रमण सघ से पृथक हो जाने के पश्चात् मैं अपने अग रूप श्रमण वर्ग सहित अपने आप ही यथापूर्व स्थिति मे आ गया । इसमे और विशेष कुछ करने का नही रहता ।

प मुनिश्री नानालालजी को युवाचार्य पदवी प्रदान के पश्चात् भी जहा तक श्रमण वर्ग के साथ साभोगिक सम्बन्ध आदि व्यवस्था का प्रश्न है उसके लिये मैं पूर्व मे व्यक्त कर चुका हू , तदनुसार जिसके साथ जैसा योग्य जान पडेगा, वैसा सम्बन्ध आदि रखा जा सकेगा ।

मेरे मे श्रद्धा रखने वाले सन्त-सती वर्ग एवं श्रावक-श्राविकाए प. मुनिश्री नानालाल जी की आज्ञाओ को शिरोधार्य करते हुए इनको पूर्ण सहयोग देवें और ज्ञान, दर्शन, चारित्र की उतरोत्तर अभिवृद्धि करते रहें ।

मैं यहां पुन निवेदन करता हू कि मेरी भावना और कल्पना आदि के अनुसार जब भी ऐसी (सुसगठित की) स्थिति का निर्माण हो, उसमे ये अपना विलीनीकरण करने को तैयार रहें और सुसगठन बनाने में सदा प्रयत्नशील रहे ।

सघ सचालन के वृहद् कार्य मे सत-सतिया एव श्रावक-श्राविकाओ ने मुझे जो सह-योग दिया, उसके लिये मैं उनका पूर्ण आभार मानता हू ।

श्रमण सघ के कार्यकाल मे तथा उसके पश्चात् मेरे द्वारा किसी का भी दिल दुखा हो, तो मैं एक वार पुन. अन्त करण से क्षमायाचना करता हू । इति शुभम् ।

उदयपुर,
दिनाक आसोज कृष्णा ९ स. २०१९
ता० २२ सितम्बर १९६२.

परिशिष्ट—२

चादर प्राप्त करने के पश्चात परम श्रद्धेय पं. रत्न युवाचार्य श्री नानालालजी म.सा. का प्रवचन (दि. ३०–६–१९६२)

मैं इस महती सभा मे अपने विचार रखने के लिये खडा हुआ हू । मेरी इच्छा भार ग्रहण करने की नही थी क्योकि यह पद बहुत महत्वपूर्ण एव गुरुत्तर दायित्व का है । मेरे विचार मे इस पद पर किसी योग्य महामुनि को नियुक्त करने की आवश्यकता थी, पर स्थिति की गम्भीरता ने इस प्रश्न को भी गम्भीर बना दिया और मुझको ही इसके लिये चुना गया ।

सादडी मे निर्मित श्रमण सघ ने एक आचार्य की अधीनता मे ही शिक्षा, प्रायश्चित, चातुर्मास आदि होने का तथा साधु सस्था मे उत्पन्न विकृतियो को दूर करने का जो लक्ष्य निर्धारित किया था, उनकी प्रमुख मुनिवरो द्वारा बाद मे पुष्टि तो हुई किन्तु तदनुसार वह अमल मे नही आया और अनुभव ऐसा हुआ कि उस लक्ष्य के प्रतिकूल दिशा मे ही प्रवृत्ति होने लगी । पूज्यश्री जी ने समय–समय पर एतद् विषयक सावधानी दिलाई पर उस पर कोई ध्यान नही दिया गया, जिसके परिणाम स्वरूप निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति के ऊपर भी एक बहुत बडा खतरा उपस्थित हो गया । पूज्य आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा इसको सहन नही कर सके और निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति की रक्षा के लिये पूज्य आचार्यश्री के ये प्रमाण समाज के सामने आ रहे है, अन्य भावना से नही ।

पूज्य आचार्यश्री ने अब भी उपयुक्त लक्ष्य (उद्देश्य) की पूर्ति के लिये सब द्वार खुले रखे हैं । अत निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की रक्षार्थ पूज्य आचार्यश्री का सन्तोषजनक समाधान होकर सादडी सम्मेलन मे निश्चित किये गये उद्देश्य की पूर्ति सही माने मे जिस समय भी होगी उसी समय यह सुसगठन प्रेमी चतुर्विध सघ पीछे रहने वाला नही है, ऐसा मेरा विश्वास है ।

मैं अपने आपको विद्यार्थी के रूप मे समझता हू और अपने अन्दर इस पद की योग्यता अनुभव नही कर रहा हू । मैने तो विद्यार्थी जीवन के अन्दर रहते हुए श्रावक पद से ऊपर उठकर गुरुदेव के चरणो मे मुनिपद ग्रहण किया । यह मुनि पद भी अपने आप मे एक महत्वपूर्ण स्थिति है । यह भार भी कोई थोडा नही है । यदि यह भी ठीक ढग से वहन हो जाय तो मै समझू कि मेरा जीवन ठीक ढग से आगे बढ रहा है । मै तो इसी भावना को लेकर चल रहा था, लेकिन आचार्यश्री की भावना और चतुर्विध सघ की इच्छा हुई कि इस महान् उत्तरदायित्व का यह भार इस विद्यार्थी पर डाला जाय । इसमे आचार्यश्री जैसे महापुरुष

का क्या आशय रहा है–इसको हमे समझना है । मै इसमे हस्तक्षेप तो नही करता क्योकि यह चादर तो जो मुझे प्रदान की गई है, यह भारतीय सस्कृति मे अपूर्व त्याग एव तपस्या को द्योतक मानी गई है जहा ससार मे अन्य पदवियो दी जाकर उनको पदक आदि द्वारा महत्त्व आंका जाता है, वहा यह चादर निराला महत्त्व रखती है ।

चादर की परम्परा निर्ग्रन्थ श्रमरण सस्कृति का द्योतक करने के लिये नवीन नही है, बल्कि यह तो विशिष्ट ज्ञानियो व पूर्वाचार्यो द्वारा चतुर्विध संघ के सामने चिरकाल से चली आ रही है । यद्यपि व्यक्ति अलग–अलग रूप मे रहकर विकास कर सकता है, लेकिन जहा सामूहिक रूप बनकर समाज बनता है, वहां व्यक्ति अलग न रहकर सामाजिक रूप मे प्रवेश करता है । तब उसका कोई न कोई चिह्न अवश्य होता है । यह जो चादर दी गई है, यह धार्मिक दृष्टि का एक चिह्न है ।

चादर के विषय मे पूज्य आचार्यश्री ने मुझे फरमाया है कि यह चादर सुधर्मा स्वामी आदि आचार्यो से चली आ रही है । जितने भी आचार्य तथा महापुरुष हुए हैं, उन्होने पाट परम्परा पर चादर धारण की है यह चादर श्वेत एव उज्जवल है, निष्कलक, पवित्रत तथा धब्बो से रहित है । इसके समान अपने जोवन मे स्वच्छता, निर्मलता, पवित्रता एव उज्जवलता आदि रखने का जो सदेश चादर के रूप मे पूज्य आचार्यश्री द्वारा मुझे प्राप्त हुआ है, उसको मै आप तक पहुचा रहा हू ।

आज का यह चतुर्विध सघ जिस एक रूप मे यहां एकत्र हुआ है उससे मुझे बडी प्रसन्नता है । इस प्रकार की जो भी घटनाए घटित होती है और उनमे जो धार्मिक सस्कार गतिमान है, उन सस्कारो को जीवन मे उतार कर उन्नत कराने की दृष्टि से हम सबको प्रत्येक भारतीय के प्रति आत्मीय सम्बन्ध कायम करना है ।

ससार मे जितने भी प्राणी हैं सब एक हैं । आत्मीय दृष्टि से हममे कोई भेद नही है । हम सब विश्व कल्याण की कामना लेकर चलें । इसका प्रतीक कोई न कोई चाहिये ही । ससार मे अनेक तरह के रग है जो अलग–अलग रूप मे आते हैं । राष्ट्रीय झण्डे मे तीन रग है । ये तीनो रग तीन भावनाओ को व्यक्त करने वाले हैं लेकिन इस चादर का रग सफेद है जो सात्विक गुण और शान्ति का प्रतीक है । यह बताता है कि इस भारत के अन्दर रहने वाले प्रत्येक भाई मे शाति, प्रेम, एव सात्विक गुणो का सचार हो, हमारा जीवन ढग से चले और चतुर्विध सघ अपना कर्त्तव्य लेकर निरन्तर आगे बढे ।

पूज्य आचार्यश्री के साथ–२ मुनिवृन्द भी इस चादर के हाथ लगाकर मुझको देने की प्रक्रिया मे सम्मिलित हुए हैं । दूसरे मुनियो व साध्वियो की भी शुभकामनाए प्राप्त हुई है । पजाबी मुनिवर प रत्न श्रीसत्येन्द्र मुनिजी,प. लखपतरायजी व प मुनिश्री पदमशयनजी म. सुदूर पजाब भूमि से यहा पधारे हैं । त श्री केशूलालजी म जो बेले बेले की तपस्या करते हैं; मुनिश्री सुन्दरलालजी म सा.,

तपस्वी श्री ईश्वरमुनि जी म., मुनिश्री इन्द्रमलजी म. व लघु मुनिश्री बाबूलालजी म एवं साध्वी वृन्द आदि सब इस भावना को व्यक्त करते हैं कि वे मुझे सहयोग देते हुए निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति को आगे बढावेंगे।

आज हम सब पूज्य आचार्यश्री के चरणो मे बैठे है। पूज्य आचार्यश्रीजी की सेवा का लाभ कई भाइयो ने लिया है और ले रहे हैं। यहा उपस्थित डॉ. शूरवीरसिंहजी, डॉ एस. एल न्यायतीर्थजी एव प्राकृतिक चिकित्सक डॉ श्री हिम्मतसिंहजी और अनुपस्थित डॉ वी एन. शर्मा, डॉ. पी के माथुर सा, डॉ पी एम ओ, डॉ ऋषि एव डॉ. ए एस. गुप्ता सा. आदि महानुभाव तथा वैद्य श्री बाबू भाई ने अनन्य भाव से आचार्यश्री की सेवा की है। उनकी यह हितैषी भावना कभी भुलाई नही जा सकेगी।

महाराणा सा भी आज यहा उपस्थित हुए है। आपको देखकर मुझे आपके पूर्वज महाराणा प्रताप की स्मृति हो आई है, जिन्होने धर्म के लिये अनेक दु खो को सहते हुए अकेले रहना स्वीकार किया, घास की रोटिया खाई, परन्तु धर्म से विमुख नही हुए। इन्ही महाराणा प्रताप की पुण्य भूमि उदयपुर मे पूज्य आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा जैसे महापुरुष का जन्म हुआ है। ये महापुरुष शारीरिक दृष्टि से यद्यपि दुर्बल हैं, परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से इनमे इतनी शक्ति है कि वह तरुणो मे भी नही है।

निष्पक्ष भावना मे जो चादर ओढाई गई है, इसमे ऊचा नीचा धागा नही है। सब धागे सगठित है, समान है। पतले अथवा मोटे नही है। ठीक इसी प्रकार इस चादर को ओढाने मे सम्मिलित होने वाले चतुर्विध सघ को भी मन, वचन, काया की एकरूपता मे लाना है। श्रद्धा प्ररूपणा, स्पर्शना का भी एक रूप होना नितान्त आवश्यक है। मैं कहता हूं कि प्रत्येक भाई, चाहे वह जैनी हो या अन्य धर्मावलम्बी हो, किसी भी सम्प्रदाय का नाम धराता हो, प्रत्येक की आत्मा ईश्वर के रूप मे समान है। मैं तो सम्प्रदाय को ऊपर का कलेवर मात्र ही समझता हू।

आज हम पर बडा भारी उत्तरदायित्व आया है। मैं चाहता हू कि आप और हम सब विद्यार्थी के रूप मे होकर मानव जीवन को उन्नत बनाकर इसी गुरुत्तर उत्तरदायित्व को निभावे बीच मे जो भी बाधाए आवे उनको सम्यक् रीति से पाटने का एव विश्व मे अशाति के जो बादल मडरा रहे हैं, उनको अपने-अपने स्थान पर रहकर दूर करने का प्रयत्न करें।

मैं आपसे कहूगा कि इस चादर का उत्तरदायित्व चतुर्विध सघ पर पूर्ण रूप से आ गया है। चतुर्विध सघ ने अपने ऊपर बड़ी भारी जिम्मेदारी ली है। मैं तो एक विद्यार्थी हू। आपका कर्तव्य है कि आप मेरे सहयोगी बने। मेरे मे रही त्रुटि को निकालकर मेरे जीवन को उन्नत बनावें। मैं एक साधारण व्यक्ति हू। आचार्य देव के चरणो मे आने से पूर्व मेरा जीवन लक्ष्य विहीन था। इन महापुरुष ने मुझ जैसे छोटे ग्रामीण व्यक्ति को अपने चरणो मे स्थान देकर मेरे पर जो उपकार किया, उससे मैं जन्म–जन्मातर मे भी उऋण नही हो सकूगा। आज ये

महापुरुष शरीर से अस्वस्थ हैं। आप हम सब यही चाहते है कि आचार्यश्री स्वास्थ्य लाभ कर दीर्घायु हो।

मेरे अन्दर मे क्या—क्या भावनाएं काम कर रही हैं—उनको शब्दो द्वारा व्यक्त करना कठिन हो रहा है। इनके श्री चरणो मे रहते हुए आज जो मैं सयम पालने मे अपने आपको थोडा तैयार कर पाया हू, यह सब इन्ही के आशीर्वाद एव कृपा दृष्टि का प्रसाद है। परन्तु अभी मुझे आचार्यश्री से बहुत कुछ प्राप्त करना है। इसलिये मेरे अन्तर्मन मे रह-रह कर यही भावना उठती है कि प्रभो पूज्यश्री का वरद्हस्त मेरे मस्तक पर दीर्घ काल तक बना रहे ताकि इनकी साधना के अनुभाव द्वारा मैं अपनी साधना मे यत्किंचित वृद्धि करके अपने आपको धन्य मान सकू। आप लोगो की भावना का समूह विराट एव महान् है। यह भावना मुझे भी उन्नत बनाने मे सहायक होगी—ऐसा मेरा विश्वास है।

आचार्यश्री ने जो भार मुझ पर डाला है, वह चतुर्विध सघ के सहयोग से ही प्रगतिशील हो सकता है। मानव जीवन की उच्चता प्राप्त करने मे और इस पद का भार वहन करने मे शक्ति प्राप्त हो तथा शातिपूर्वक निर्बाध गति से प्रगति होती रहे, यही आचार्यश्री से मैं शुभाशीर्वाद चाहता हू।

मैं इस पद को अपने आपके लिये महत्व नही दे रहा हू। मैं तो यह समझता हू कि पूज्य आचार्यश्री ने इस प्रकार चतुर्विध सघ की सेवा मे मुझे रखा है अत मैं चतुर्विध सघ का छोटा सा सेवक हू। चतुर्विध सघ मेरे लिये माता—पिता के तुल्य है। चतुर्विध सघ के मध्य मुझे रखा है तो बीच मे रहने वाले की सुरक्षा का दायित्व चतुर्विध सघ पर आ जाता है। यहा पर उपस्थित साधु—साध्वी, श्रावक—श्राविका तथा अन्य महानुभावो से भी शुभकामना चाहूगा कि मेरे से इस विश्व के अन्दर जनकल्याण,विश्वमैत्री एव विश्व शाति तथा निर्ग्रंथ श्रमण सस्कृति का सरक्षण हो सके ऐसा शुभ सकल्प आप लोगो का हो।

उदयपुर सघ ने पूज्य आचार्यश्री की सेवा आदि करने का जो अपूर्व कार्य कर दिखाया है, उस कार्य को सारा चतुर्विध सघ कभी भूल नही सकता। यह सदा के लिये चिर स्मरणीय रहेगा। उदयपुर सघ का आभार इस रूप मे साधुमार्गी समाज पर रहेगा।

भगवान् महावीर क्षत्रिय थे। वे राजसिंहासन परित्याग करके जनपद के मध्य आये। जनता के दु खो की अनुभूति की। दु ख निवारण के उपायो को उन्होने घोर साधना करके ढूढ निकाला। कष्ट और बाधाओ को सहन किया। निर्मल ज्योतिजगाई। उन्ही भगवान् महावीर की यह शासन परम्परा चल रही है। इसमे क्षत्रिय वीरो को विशेष भागलेने की महती आवश्यकता है।

यहा उपस्थित महाराणा सा. भी क्षत्रिय है। अत. आपके ऊपर भी उत्तरदायित्व है। महाराणा सा को भी मै तो कहूगा कि आप वास्तविक क्षत्रिय धर्म को अपनाकर भगवान महावीर की तरह राज छोडकर धर्म का उपदेश दें तो जनकल्याण की भावना के साथ—साथ भगवान् महावीर के शासन की अच्छी सेवा हो सकती है।

आप सेठिया लोग और अन्य साधारण प्रजाजन जो यहा एकत्र हुए हैं, वे अपनी सम्पत्ति से चिपक कर न रहे । अपनी सेठाई की बात को अलग रखकर सम्पत्ति पर से मोह दूर करके शासन की सेवा करे अथवा त्याग की भावना से कुछ उदारता धारण करके जन शान्ति के लिये कुछ करके दिखावे । आप भी क्षत्रिय है, वीर है । आप बनिये ही गये तो क्या हुआ ? आपमे भी वह तेज है । आप अपने निज रूप को पहिचानने और जनमानस की भावनाओ को लक्ष्य मे रखकर कर्तव्य पर विशेष ध्यान देवें ।

यह चादर एक शुभ भावना की प्रतीक भी है । शुभ भावनाएं उज्जवल होती है और यह चादर भी उज्जवल एव खादी की होकर सादी है । सादगी ही स्वतन्त्रता का प्रतीक है । पूज्य गुरुदेव फरमाया करते हैं कि सादगी ही स्वतंत्रता है और फैशन ही फासी है । अत भारत के अन्दर इस सादगी की ओर भी विशिष्ट ध्यान देने की आवश्यकता है ।

मै इस चादर पर पूरे विचार नही रख पाया हू फिर कभी प्रसगोपात समय मिलने पर इस पर कुछ विशेष प्रकाश डालने का भाव रखता हू । इस चादर की तरह जीवन को उज्जवल, सादा, पवित्र, निर्मल और मन-सा वाचा कर्मणा को एकरूपता मे रखकर सहयोगी बनेंगे तो यह सघ चिरकाल तक उन्नत दशा मे पहुचेगा । इसी भावना को देखते हुए मै अपना कर्तव्य पूरा करता हू ।



परिशिष्ट-३

धर्मपाल बन्धुओ द्वारा सम्पूर्ण समाज को व्यसनमुक्त बनने का आग्रह करते हुए प्रकाशित सूचना-पत्र

श्री पंचान गुजराती बलाइयान की सूचना

आदरणीय समस्त गुजराती बलाई भाइयो को सूचित करते हुए हर्ष होता है कि पूजनीय महात्मागाधी की प्रेरणा से हमारे रहन-सहन और खान-पान मे कुछ तवदीली आकर सुधार हुआ, लेकिन फिर भी हम ग्रामीण भाइयो को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है, यह दु ख की बात है। लेकिन विशेष हर्ष की बात यह है कि हमारे भाग्योदय से आचार्य प्रवर पूज्यश्री १००८ श्री नानालालजी म जब नागदा पधारे और नागदा से गुराडिया पधारे तब यहा के गुजराती बलाई भाइयो ने आचायश्री जी के चरणो मे प्रार्थना की, हमारा गुजराती बलाई समाज पिछडा हुआ माना जाता है, आपश्री इसका उद्धार करें।

आचार्य प्रवर ने फरमाया कि आप मास, मदिरा, शिकार, वैश्यागमन, आत्महत्या आदि बुरे व्यसनो का प्राणपण से पूर्णरूपेण त्याग करें तो उन्नति हो सकती है। हमने आचार्य प्रवर की आज्ञा के मुताबिक चलने की प्रतिज्ञा ली। साथ ही साथ आपश्री से गुरु दीक्षा लेकर जैन धर्म स्वीकार किया और यह निश्चय किया कि हमारा समाज अब तक गुजराती बलाई कहलाता था, वह अब 'धर्मपाल जैन' के नाम से कहा जावेगा। उसके बाद आचार्य प्रवर गुरा-डिया से आक्या, ताल, लीबोदिया, डेमची, नारायण, खेडी, बोरखेडा, घुमहेडा, वरखेडा, तागभिरी, चीकली, लक्ष्मणखेडी, यताना, सिलाय, कजलाना, जायोदी, मक्सी आदि इन्दौर, उज्जैन व रतलाम जिलो के ग्रामो मे विचरते हुए अनेक गुजराती बलाई भाइयो के दुर्व्यसनो को छुडाकर उनको जैन बनाते हुए इन्दौर पधार गये हैं और चौमासे के चार महीनो तक इन्दौर ही बिराजेंगे।

गुजराती बलाईयान अनेक गावो मे रहते हैं और उनकी सख्या करीब एक लाख से ऊपर है। उन सबकी सेवा मे हम नीचे दस्तखत करने वाले धर्मपाल जैन (गुजराती बलाई) प्रार्थना करते हैं कि आप भी मास मदिरा आदि कुव्यसनो को त्यागकर धर्मपाल जैन बनें। इससे हमारे समाज की हर तरह से उन्नति होगी और हम सम्मान की दृष्टि से देखे जावेंगे।

जिला उज्जैन—धुलजीरामजी पालाखेडी, शकरलालजी, गनपतजी उभरना, नन्दरामजी रूनखेडा, कवरलालजी जीवाजी उज्जैन, भागीरथजी हीराजी बोरखेडा, धुलाजी, केवलजी, थावरजी धन्नाजी गुराडिया, गगारामजी, सीतारामजी नागदा, पुनाजी गगारामजी राणाखेडी, रामजी भुवानजी ग्राम ढेलची, काजूजी पीराजी लक्ष्मीनारायणजी लेकोडा, हरजी लसुडिया, नगनीराम जी कमटाना, गम्भीरजी गनपतजी नाथाजी सिमवास, शोभाराजजी झालारिया, नानूरामजी,

रुगनाथजी रामाजी सोनेडा, हीरालालजी अनोपजी मटेरा, भूवानजी आकिया, किशनजी झारादा, भेराजी, गनपतजी हीडो, राधुजी जागीरपुर, नानूरामजी खेडा भाजगामदनी, नाथाजी ऊंकारलाल जी पूनाजी सडादा, मागीलालजी आडेसीगा, भेरूलालजी बालोदा, भेराजी, गोपालजी, बालाराम जी नोयन, सुखरामजी पीपलोद, दयारामजी धुलजी आकिया, बदीरामजी नन्दरामजी बरखेडा, लालाजी हलाणा, वावरूजी बूचाखेडी, धुलजीरामजी पीलेखडी, गगारामजी शकरजी मताना, देवाजी नागाझेरी, किसनजी मुन्नालालजी सालारखेडी, आमराजी कुवरजी पुवारिया, बगडीराम जी शकरजी अमल्हावद, शकरलालजी कानाजी पलहुना, गोपालजी चन्देसरा, घासीरामजी सकरवासा, आकीया घुलाजी नन्दरामजी नलवा, भुवानजी झोकरा, गगारामजी रावजी पीपलिया, पीराजी रुगनाथजी रावा, हीडूजी सावजी पीपलिया, रूपाजी सालोदा, नागजीरामजी डनालडा, हरीगजी नाथूजी मोरना, अमरजी भीमपुरा, धुलाजी नानाखेडी, धुलाजी सेमलिया, कालूजीभोसला, गनपतजी पोसलोड, घनाजी जोडूमा ।

जिला रतलाम—घासीरामजी करमदी, फकीरचदजी घराड, नदरामजी वीवडोद, नारायणजी नंदाजी डेलनपुर, हरीरामजी गुडखेडा, भवपनजी, नाथजी बेराखेडी, भेरूजी गनवानिया, तरसिंगजी मोतीजी रोहल, रजला रामचन्द्रजी धुलाजी नानखेडा, ऊंकारलालजी मन्नालालजी, हीरालालजी पीपलोदा, उमाजी जेठाना, रूपाजी मोतीजी कवरजी लिम्बोदिया, नाथाजी, हसराज जी गअरवाडिया, नागुजी ताजखेडा, अमराजी तालखजूरिया, कनीरामजी सरूपजी, नागुजीलोगरजी कडाई अरनीया, गगारामजी, किसनाजी गुराडिया, वीसनजी पालखेडा ।

जिला इन्दौर–देवास—पटेल पुनाजी भेराजी लखामनखेडी, जामुदी मोहनलालजी सीधाजी सोलसदा, रुगनाथजी सकाशीरामजी जेरामजी पीराजी वीसाखेडी, कालूरामजी सरूज, हीरालाल जी सालोदा, धुलजीरामजी पानोड, धुलजी हथुनिया, नाथूलालजी गनपतजी दयाखेडा, गोरधन लालजी बाकलियाखेडा, सीधाजी कुवरजी हसाखेडी, शकरलालजी खामेदा, परताबजी एमजी कासीरामजी बाराखेडी, पटेल धुलाजी दीलाजी लसुडिया, परवतजी शोभाजी बोलावली, नगाजी, पन्नालालजी खातीखेडी, भुवानजी कालूरामजी टीगोरिया, कचनजी बलवनजी सिंघनाजी परताब जी बिलाणा, गनपतजी वहोडिया, छोगालाल जी कैलोद, घनालालजी घनखेडी, दोलाजी बेएगर पठावलाल कालूरामजी घनाजी जास्या हीराजी हरसिंगजी आमलीखेढा, पीराजी वानला जागीर, सेवारामजी मीडकी ।

जिलामन्दसौर, धार, बडनगर—तुलसीरामजी, भेरूलाल जी, मोडीरामजी, गोविंदजी मन्दसौर । देवीलाल जी, कन्हैयालाल जी, तुलसीरामजी, सीतारामजी, सेरुलाल जी, लूघना । भगवानजी राकोदास लूघना । शकरलाल जी, भागीरथजी सोभाखेडी । सीतारामजी धुलाजी समेलाया, कालूजी भेसला, गनपतजी पासलोदा, नानूरामजी सोउड, रामाजी ढावला, नागुजी जेलेखेडी, नागुजी मनीरामजी कन्हैयालाल जी भेरूलाल जी देवची, हमीजी भील नागदा, शकर लाल जी रोजेटा सडला डुंगाजी मुडावन, सालरामजी, कालूरामजी जावरा ।

जिला शाजापुर—नदरामजी, कचरूजी, रुगनाथजी मक्सी । थावरजी, कासीरामजी कठासोया भागीरथजी करज गणपतजी वणजारो, हमीरजी गनपतजी रुडकी, नदरामजी सोघनाथजी सीरोलिया, हरचदजी भमरी, नानुरामजी, मागीलाल जी चौसला ।

परिशिष्ट-४

गीता भवन इन्दौर के मंत्री श्री जसवंतरायजी जख्मी द्वारा रचित गीत—

आचार्यश्री महाराज का

किस तरह स्वागत करू आचार्यश्री महाराज का ।
तपी त्यागी साधुमार्गी सघ के सिरताज का । १ ।
आपकी महिमा सुनाऊ, मुझ मे यह शक्ति नही ।
मुझमे वह विद्या नही, सेवा नही, भक्ति नही । २ ।
वावाजी की ओर मेरी प्रार्थना को मानकर ।
कृपा की है आपने गीता भवन मे आनकर । ३ ।
आपके आने से पत्ते डालिया सब खिल गये ।
जो अभी तक दूर थे वे भी यहा पर मिल गये । ४ ।
आपके दर्शन को यहा नरनारिया आने लगे ।
वृक्षो पर बैठे हुए पछी चहचहाने लगे । ५ ।
जिस तरह जुगनू चमकता है अन्धेरी रात मे ।
मोर जैसे नाचता है सावनी वरसात मे । ६ ।
इसी तरह सब पे जादू करने वाली आपकी तस्वीर है ।
आपकी वाणी मे भी कुछ इस तरह तासीर है । ७ ।
छ दिन यहा ज्ञान का सागर वहाया आपने ।
असली गीता भवन क्या है, यह बताया आपने । ८ ।
ज्ञान और मोक्ष का मार्ग बताया आपने ।
प्रेम अमृत का प्याला, भर पिलाया आपने । ९ ।
आशा है आचार्यश्री, फिर भी यहा पर आयेंगे ।
एक चातुर्मास गीता भवन मे कर जायेंगे । १० ।
वावा की इच्छा है, स्वामी अभी मत जाइये ।
कम से कम गीता जयन्ति तक यहा रुक जाइये । ११ ।
अन्त मे है प्रार्थना, उस सर्वशक्ति भार से ।
हम यही वर मागते परमपिता भगवान से । १२ ।

आप भी हो अमर और कुछ दिन हम सभी जीते हैं।
प्रेम प्याला आप पिलाते रहे और हम सब पीते रहे। १३।
'जख्मी' स्वर निकला है यह टूटी हुई आवाज का।
किस तरह स्वागत करूं, आचार्यश्री महाराज का। १४।



परिशिष्ट-५

केंसिगा (उत्कलप्रदेश) के सत्संग प्रेमी जन द्वारा दिनांक १५-२-१९६६ को आचार्यश्री की सेवा में समर्पित विनय-पत्र

परम श्रद्धेय चारित्र चूडामणि, श्रमण सस्कृति के रक्षक, शान्त क्राति के जन्मदाता, शास्त्र महोदधि, आचार्य प्रवर पूज्यश्री १००८ श्री गणेशीलालजी म सा के पट्टधर शिष्य बाल ब्रह्मचारी, श्रमण सस्कृति के प्राण, आध्यात्मिक तत्ववेत्ता, चारित्रनिष्ठ श्रमण परम्परा के प्रहरी पूज्यपाद, आचार्य प्रवर श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म.सा के चरण कमलो मे भक्ति एव श्रद्धापूर्वक समर्पित–

विनय-पत्र

हे दयानिधे, आज हम नगरवासियो को अपार हर्ष व आनन्द है एव हमारे केंसिगा नगर का महान सौभाग्य है कि आपश्री ने हम उडीसावासियो पर अनुपम दया करके ग्रामानुग्राम विचरते हुए दुर्गम रास्तो के तथा भूख-प्यास के परिषह को सहन कर केंसिगा मे पदार्पण किया है इसके लिये हम आपश्री के महान् आभारी है।

हे श्रमण सस्कृति के प्रहरी इस ससार रूपी अटवी मे आप जैसे महापुरुष ही सच्चे मार्गदर्शक दृष्टिगोचर होते हैं। आपश्री वीतराग प्ररूपित तत्वो को सुगम रूप से समझकर दु ख और क्लेश को निर्मूल करने वाले हैं तथा इस हिंसामय प्रदेश मे दु ख दावानल मे सतप्त मानवो को अपनी अमृतमयी वाणी के द्वारा परम सन्तोष की उपलब्धि कराने में सक्षम हैं।

हे वीर सेनानी, आप महाराणा प्रताप की जन्मभूमि मेवाड के अन्तर्वर्ती दाता गाव मे ओसवाल वंशज श्रेष्ठी श्री मोडीलालजी की गृह भार्या महाभाग्यशालिनी श्रृ गारमाता की की कुक्षि से जन्म लेकर इस भू-भाग पर अवतरित हुए हैं। आपने आचार्य हुक्मेश के अष्टम पाट को अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा सुशोभित किया है और थोडे ही समय मे लम्बे-लम्बे

विहार कर आगत समस्याओ को अपने अदम्य साहस और धैर्य के बल पर हल किया है। आप गन्तव्य पथ से किंचिदपि विचलित नही हुए। यह स्थानकवासी समाज के लिये गौरव की बात है, जो इतिहास के पृष्ठो पर अकित रहेगी।

हे आभ्यन्तर तपस्विन्, आप मानव समाज मे वास्तविक धर्म का बीजारोपण करने की भावना से उसके धरातल को शुद्ध करने हेतु मानव समाज से अनैतिकता, असदाचार, झूठ, कपट एव बेईमानी आदि को दूर करने मे प्रयत्नशील हैं और अपने 'समता दर्शन' द्वारा मैत्री भाव उत्पन्न कर विश्व मे शाति स्थापित करने का जो मार्गदर्शन दिया है, वह समस्त मानव समाज के लिये उपादेय है।

हे विशिष्ट गुण भण्डार, अन्त मे हम आपका ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं कि उडीसा निवासी जनसाधारण को प्रबुद्ध करने हेतु आपश्री का जो इधर पदार्पण हुआ, जिसके परिणामस्वरूप कई व्यक्तियो ने साधु और श्रावक के स्वरूप को समझने के साथ-साथ अहिंसा के निषेध रूप अर्थ किसी प्राणी को मनसा वाचा कर्मणा न सताना और न मारना है तथा विधिरूप अर्थ सताये जाने वाले प्राणी के प्राणो की शुद्धभाव से रक्षा करना है इसको अच्छी तरह समझ कर सच्ची प्रेरणाएं हृदयगत करके गलत धारणाओ को निर्मूल किया है।

हे चारित्र चूडामणि, आपके प्रति हमारे हृदय मे जो विशुद्ध श्रद्धा एव भक्ति भावना उत्तरोत्तर जागृत हुई है, वह सदा अमिट रहेगी। आपका विशुद्ध प्रेम कभी विस्मृत नही हो सकता। इसी से प्रेरित होकर यह विनय-पत्र आपश्री के चरण कमलो मे श्रद्धापूर्वक सादर समर्पित है। इसे स्वीकार कर हमे कृतार्थ करें। हम आपश्री के चरणो मे अनुनय-विनय पूर्वक यह भी प्रार्थना करते हैं कि आपश्री यहा पर पूरा शेषकाल विराजकर, आगामी चातुर्मास भी यहा पर फरमाने की महती कृपा करें।

विनयावनत
हम है केसिंगावासी सत्सग प्रेमीजन

केसिंगा,
१५-२-१९६६

परिशिष्ट-६

आचार्यद्वय (श्री हस्तीमलजी म.सा. एवं श्री नानालालजी म.सा.) की संयुक्त विचार चर्चा का निष्कर्ष—

संयुक्त उद्घोष

बहुत दिनो की प्रेरणा और प्रतीक्षा के पश्चात् हम दोनो का औपचारिक प्रेम मिलन भोपालगढ की पवित्रभूमि पर सम्पन्न हुआ। शासन हित की दृष्टि से हमने श्रमण वर्ग की वर्तमान स्थिति को ध्यान मे रखकर चिन्तन किया।

परम वीतराग श्रमण भगवान् महावीर का धर्मशासन उपशमभाव प्रधान है, वीतराग भाव की प्राप्ति जिसका लक्ष्य है। जप–तप की कठोर साधना भी धर्मशासन मे उपशम–भाव के साथ ही सफल मानी गई है। एतदर्थ, समाज मे व्याप्त राग, द्वेष, निन्दा के कलुषित वातावरण को दूर करने और शास्त्रीय आचार परम्परा को सुरक्षित रखने तथा शात, स्वच्छ, समता भाव की वृद्धि के लिये तदनुकूल वातावरण का निर्माण करना परमावश्यक है। कषाय घटाने की शिक्षा देने वाला वीतराग मार्ग यदि राग द्वेष की वृद्धि का क्षेत्र बनता है तो हर धर्मप्रेमी के लिये सहज चिन्ता का विषय हो जाता है। इस दृष्टि से चिंतन करते हुए हमको आवश्यक लगा कि जब तक आगम प्रेमी मुनिवर्ग आचार शुद्धि के साथ स्वय सगठन की भूमिका पर नही आवें तब तक पूरे सघ का सुव्यवस्थित स्थिति मे आना सम्भव नही लगता, अत हम लोगो ने ३–४ दिनो तक विचार–विमर्श मे इस पर गम्भीर चिंतन किया और इस निष्कर्ष पर पहुचें कि एक सवत्सरी की भावनापूर्वक कुछ मौलिक नियमो पर आश्रित एक चातुर्मास, निंदावर्जन और एक व्याख्यान की व्यवस्था समाज–मान्य हो, तो शासन की सुव्यवस्था का मार्ग व्यापक रूप से सरलता से गतिमान हो सकता है।

एतदर्थ समाज की भावना और आवश्यकता को ध्यान मे रखकर हमने अन्य साथियो से विना परामर्श किये तत्काल मगलाचरण के रूप मे यह सोचा कि समग्र जैन समाज की अथवा श्वेताम्वर जैन समाज की या स्थानकवासी जैन समाज की सावत्सरिक एकता वनने का अवसर आए तो हमारी पूर्ण तैयारी है और तदुपरात एक चातुर्मास, एक पट्ट पर व्याख्यान आदि का प्रेम सम्वन्ध स्वीकार किया है।

इस प्रकार आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा. के स्वर्गवास के पश्चात् हमारा यह प्राथमिक मिलन होते हुए भी वडा ही प्रेमवर्धक और आशाप्रद रहा। कुछ वातें ऐच्छिक रही हैं जिन पर समयानुसार आगे विचार हो सकता है।

हम दोनो ने तटस्थ भाव से आगमीय सिद्धान्तो के अनुरूप गृहीत महाव्रतो के सरक्षार्थ एक भूमिका तैयार की है। हम इससे आगमप्रेमी श्रमणो के सहकार एव विचार की अपेक्षा रखते हैं।

माघ कृष्णा २ स २०३४
दिनांक २६–१–१९७८

परिशिष्ट ७

सोजतरोड मे वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ व तेरापथो सभा के अध्यक्ष तथा सरपच, ग्राम पचायत की ओर से आचार्यश्री की सेवा मे सयुक्त रूप से समर्पित–

अभिनन्दन-पत्र

(णमोत्थुण समणस्स भगवओ महावीरस्स)

परम श्रद्धेय, जिन शासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिवोधक,
समता दर्शन प्रणेता, सत शिरोमणि, चारित्र
चूडामणि, बाल ब्रह्मचारी, प्रात. स्मरणीय
महामहिम श्री मज्जैनाचार्य श्री
श्री १००८ श्री नानालाल जी
म० सा० एव सत–सतिवृन्द के

चरणारविन्द मे कोटि–कोटि वन्दन–अभिनन्दन ।

परमश्रद्धेय,

हमारे ग्राम सोजत रोड की धरती आज आपके पदार्पण से पावन हो गई है । हम ग्रामवासियो के लिये आज का यह क्षण चिरस्मरणीय रहेगा । एक लम्वे समय से हम आपसे सोजतरोड स्पर्शने की करवद्ध प्राथना करते आये हैं, लेकिन आपके सम्मुख भी शारीरिक अस्वस्थता, पांव की असह्य पीडा जैसी वाधाए थी जो हमे दर्शन लाभ से वचित रख रही थी, फिर भी आखिर आज वह क्षण आ गया है, जव हमारी इच्छा फलवती हुई है । हमारी विनती को ध्यान मे रखते हुए, ग्रामानुग्राम विहार करते छोटे–वडे क्षेत्रो को भगवान श्री महावीर प्रभु की जनकल्याणकारी वाणी का रसास्वादन कराते एव पांव की पीडा की उपेक्षा करते हुए अरावली का दुर्गम कटकाकीर्ण व दुरूह मार्ग को तय करते हुए आज आप अपने शिष्य समुदाय सहित पधारे हैं । यह हमारे लिये परम सौभाग्य का क्षण है । आपकी इस अनुकम्पा से आज इस ग्राम का ही नही, समूचे क्षेत्र का हर नर–नारी हर्षोल्लसित हो आपश्री का हृदय से वन्दन अभिनन्दन कर रहा है ।

प्रातः स्मरणीय गुरुदेव,

हम आपश्री का क्या परिचय दें। सन्तो की वाणी व मर्यादित जीवन ही उनका परिचय होता है। हम अपनी तुच्छ सासारिक वाणी से आप जैसी महान विभूति के गुणानुवाद करने मे असमर्थ हैं, फिर भी जो तुच्छ शब्द हृदय के अन्तराल मे उठे है, इन्हे अभिव्यक्त किये विना रहा भी नही जा सकता, इसलिये हम ये श्रद्धा सुमन आपश्री के चरणो मे अर्पित कर अपने आपको सौभाग्यशाली अनुभव करते हैं।

समता दर्शन प्रणेता,

सोजतरोड एक छोटा सा कस्वा है जिसकी जनसख्या दस हजार की है जिसमे जैनो के लगभग १२५ घर सभी सम्प्रदायो को मिलाकर है, फिर भी इस छोटे से कस्वे का सगठन एव पारस्परिक सहयोग व सद्भाव अवर्णनीय है। जैनों के अतिरिक्त अजैन भाई-वहिन भी विना किसी भेदभाव के साम्प्रदायिक सकुचितता से ऊपर उठकर ग्राम के प्रत्येक सामाजिक व धार्मिक सेवा कार्य मे सदैव तत्पर रहते हैं। यही कारण है कि आज आपका अभिनन्दन करने सम्पूर्ण ग्राम उमड पडा है। आज के इस पावन दिन आपका अभिनन्दन करने हेतु समाज की ही नही, पूरे ग्राम की ओर से प्राप्त आदेश को शिरोधार्य कर हम इस ग्राम के प्रतिनिधि के रूप मे आपश्री का वन्दन कर, अपने आपको कृतकृत्य अनुभव करते हैं।

जिनशासन प्रद्योतक,

परम पूज्य प्रात स्मरणीय स्व गुरुदेवश्री १००८ श्री श्री गणेशीलालजी म सा ने अपनी इहलीला समाप्त करने से पूर्व उदयपुर के राजमहलो के प्रागण मे चतुर्विध सघ की उपस्थिति मे अ भा साधुमार्गी जैन सघ की स्थापना की घोषणा के साथ आपश्री को श्रमणसस्कृति की रक्षा का जो भार सौंपा था, उसका आपने अत्यन्त ही योग्यता चातुर्य एव कर्मठता से निर्वाहकर श्रमण सस्कृति की मर्यादा को अक्षुण्ण रखते हुए एव साधु मर्यादाओ का अक्षरश पालन करते हुए, इस सस्कृतिको गौरवान्वित किया है। आपने जव से आचार्यपद ग्रहणकिया है, इस पद की गरिमा दिनानुदिन वढती जा रही है। आपश्री ने अपने पूर्वाचार्यों के समान ही जिन शासन की गरिमा को प्रदीप्त रखा है। आपका सत एव सतीवृन्द एक आचार्यश्री की परम्परा मे श्रद्धावान अनुशासनप्रिय है। आपसे उन्हे सदैव गुरु तुल्य असीम वात्सल्य प्राप्त होता रहता है। आज आपश्री की आज्ञा से प्रेरित २०० सन्त मुनिराज व साध्वी समुदाय प्रभु महावीर के सदेश को प्रचारित प्रसारित कर रहे है। आपके पदारूढ होने के पश्चात् लगभग १५० मुमुक्षु आत्माओ ने आपके चरणो मे दीक्षा प्राप्त कर अपना जीवन जनकल्याण के महान् कार्य मे समर्पित किया है। आज वे ग्रामानुग्राम विहार कर भगवान महावीर के सन्देश को घर-घर एव जन-जन तक पहुचाने के कार्य मे सलग्न हैं। यह आपकी ओजस्वी, प्रभावशाली एव प्रेरणादायी वाणी का ही प्रभाव है।

धर्मपाल प्रतिवोधक,

मालवा (मध्यप्रदेश) के विहार के समय उस क्षेत्र मे कुव्यसनो के शिकार ग्रामीण वलाई जाति के लोगो के कष्टो, दुर्दशा एव दीन-हीन अवस्था से द्रवित हो आपश्री ने अपना

कार्य क्षेत्र शहरो की अपेक्षा ग्रामो का ही बना लिया और लगातार १० वर्षों तक उन पिछड़े क्षेत्रो में विचरण कर उन लोगो मे जागृति लाने व उन्हे कुव्यसनो व कुमार्ग से सन्मार्ग पर लाकर उन्हे उनके पावो पर खडा करने हेतु सकल्प लिया, एवं उस क्षेत्र के श्रावक समुदाय को भी इस महान् कार्य मे सलग्न कर दिया, उन अनुसूचित जाति के भाई–बहिनो के कल्याण हेतु आपने जो शखनाद किया,उसकी प्रतिध्वनि से भ महावीर के उपदेशो तथा सदेशो से अल्प समय मे ही वहा चमत्कारिक परिवर्तन हुआ एव सैकडो ग्रामो मे जैन धर्म की दुदुभि बजने लगी। हजारो भाई–बहिन जैन धर्म को अगीकार कर भगवान महावीर के अनुयायी बन गये। आज उस क्षेत्र मे लगभग ८० जैन धार्मिक पाठशालाए चल रही हैं। हमारे लिये यह अत्यन्त गौरव की बात है कि हमारे पडोसी ग्राम पीपलिया के निवासी सेठ श्री गणपतराजजी सा बोहरा मालवा के उन जैन मतावलम्बी श्रद्धालु नागरिको की सेवा मे प्रतिवर्ष लाखो रुपया व्यय कर जैन धर्म के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह कर रहे हैं। आपको वे भाई पितामह के नाम से सम्बोधित करते हैं।

सन्त शिरोमणि,

स २०३४ मे आपश्री से भीनासर चातुर्मास के समय हमने हमारे इस ग्राम मे हेतु सत–सतिया जी की माग की थी, उस समय आपने तत्काल ही युवा सत श्री धर्मेशमुनिजी एव प्रशम मुनिजी को सोजतरोड पहुचने का आदेश फरमा दिया, जिससे इन सन्तो ने धर्म की जो प्रभावना व लाभ इस नगर के निवासियो को प्रदान किया, वह चिरस्मरणीय रहेगा। उक्त दोनो सतो ने ज्ञान, ध्यान, तप, चारित्र एव स्नेह की प्रभा से इस क्षेत्र को प्रभावान बना दिया। आपकी इस अनुकम्पा के लिये स्थानीय सघ व ग्रामवासी आपश्री के चिरऋणी रहेगे।

महामहिम,

जैसा कि सर्व विदित है कि हमारे इस क्षेत्र को मरुधर केसरी, श्रमण सूर्य, प्रवर्तक, पडितरत्नमुनि श्री श्री १००८ श्रीश्री मिश्रीलालजी म सा. के स्नेह एव विशेष कृपापात्र होने का सौभाग्य प्राप्त है। उनकी सदैव यही प्रेरणा रही है कि सोजतरोड कांठा प्रात का प्रवेश द्वार एव मालवा मेवाड से पधारने वाले सत-सतीवृन्द की विश्रामस्थली है, अत यहा पधारने वाले सत-सतीवृन्द की सेवा सुश्रूषा का पूर्ण धर्मलाभ अर्जित किया जाना चाहिये। श्री मरुधर केसरीजी म सा को आपश्री के इस क्षेत्र मे पधारने व होली चातुर्मास की सूचना मिली तो हम नगरवासियो को आपश्री की सेवा सुश्रूषा एव प्रवचनादि का पूरा–पूरा लाभ उठाने का सकेत फरमाया। यह है मरुधरा के सतो की आप व अन्य सभी सत मुनिराजो के प्रति श्रद्धा-सद्भावना।

आचार्य भगवन्,

एक निवेदन इस क्षेत्र के निवासियो का यह भी है कि आपश्री का इस क्षेत्र मे २७ वर्ष बाद पधारना हुआ है पर चातुर्मास जैसी विशाल योजना का लाभ आज तक नहीं प्राप्त हुआ। अब जबकि काठा प्रान्त के प्रमुख शिक्षा स्थली राणावास के श्रावक समुदाय ने इस

आगामी चातुर्मास हेतु विनती ही नही, सारी व्यवस्था की रूपरेखा भी तैयार कर ली है, मत हमारी भी सानुग्रह विनती है कि इस वर्ष का चातुर्मास काठा प्रान्त मे फरमाकर व पाली जिले को ही नही, मेवाड के क्षेत्रो को भी लाभ दिलावे । ऐसी हमारी ही नही, जन–जन की हार्दिक अभिलाषा है ।

अन्त मे हम नगर निवासी आपश्री के हृदय से आभारी हैं कि आपने कडकडाती धूप मे पाव की पीडा की परवाह किये बिना लगातार लम्बे विहार कर हमे जो दर्शनो व क्षेत्र स्पर्शने का लाभ प्रदान किया है, उसके लिये हम आपके कृतज्ञ हैं एव आपश्री के दीर्घायु की कामना करते हैं जिससे न केवल सघ, समाज, राष्ट्र को वरन् सम्पूर्ण मानव जाति को आपका ज्ञान और शिक्षाओ का लाभ प्राप्त होता रहे । पुन आपका कोटि-कोटि वन्दन अभिनन्दन ।

हम है सोजतरोड के समस्त नागरिको की ओर से

गणेशमल कटारिया मूथा
अध्यक्ष
वर्धमान स्थानक जैन श्रावक सघ

चम्पालाल आछा
अध्यक्ष
तेरापथी सभा

केवलचद माडोत
सरपच
ग्राम पचायत, सोजतरोड (राज०)



परिशिष्ट ८

आचार्यद्वय समता विभूति, बाल ब्रह्मचारी: पूज्य आचार्यश्री नानालालजी म.सा. और परम प्रभावक पूज्य आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म.सा. का

संयुक्त निवेदन

परम हर्ष की बात है कि वीर.सं. २५०९ (सन् १९८३ ई.)के वर्ष मे हम दोनो का चातुर्मास भावनगर की पुण्यधरा पर परिपूर्ण होने मे आया है ।

निर्ग्रन्थ प्रवचन की शुद्ध आराधना और निर्ग्रन्थ सस्कृति की सुरक्षा हेतु अनेक बार विचार विनिमय होता रहा है ।

अनादिकाल से भव–भवान्तर मे भ्रमण करते हुए इस आत्मा ने अनेक वार द्रव्य सयम का पालन किया होगा । परन्तु उससे आत्मा का कल्याण हो गया होता तो इस पचमकाल मे जन्म लेना नही पडता । एक वार भी आन्तरिक शुद्धतम भावो से इस निर्ग्रन्थ अवस्था की परिपूर्ण आराधना हो जाय तो निश्चित रूप से यह जीव शाश्वत सुखो को प्राप्त करे ही ।

वर्तमान समय मे श्रमण साधना की आराधना मे नये जमाने के नाम पर परिवर्तन करने के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न हो रहे हैं । उनसे वच पाना अनेक जीवो के लिये बहुत कठिन हो गया है । ऐसे प्रसग मे श्रमण भगवान महावीर के शासन के प्रति वफादार रहकर निर्मल सयमी जीवन को आराधना के लिये आचरित कई सूचनाए सयमी जीवन की सुरक्षा मे अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी–ऐसा हम दोनो का मतव्य है ।

१ एक सवत्सरी के लिये–सपूर्ण जैन समाज अथवा श्वेताम्बर जैन समाज अथवा स्थानकवासी जैन समाज एक मत होकर जो निर्णय करे उसे स्वीकार करने के लिये हमे तैयार रहना चाहिये ।

२ ध्वनिवर्धक यत्र (माइक) सम्वन्धी–पहले वहुत चर्चाए हुई हैं । पावर हाउस, जेनरेटर, वैट्री अथवा अन्य किसी भी प्रकार से उत्पन्न विद्युत पावर तेजस्काय के अन्तर्गत सचित्त है । इसलिये उसका उपयोग श्रमण मर्यादा मे विल्कुल योग्य नही है ।

३ किसी भी सस्था–चाहे वह स्वय के नाम के साथ अथवा अपने गुरुजनो के नाम के साथ सम्वन्धित हो,के लिये किसी प्रकार के फड या चदे मे नही पडना चाहिये । इसी प्रकार दीक्षा आदि के प्रसग पर किसी भी प्रकार की पैसो की 'उछामणी' नही होने देनी चाहिये ।

४ उपाश्रय भवन, वाडी वगैरह किसी भी प्रकार के मकान के निर्माण सम्वन्धी, उपदेश नही देना चाहिये और उसी प्रकार उसके लिये किसी प्रकार के फड या चदे मे भी नही पडना चाहिये ।

५ धातु, प्लास्टिक अथवा चीनी मिट्टी के बने हुए वर्तन (तसल्ली, वाल्टी, प्लेट वगैरह) काम मे नही लेने चाहिये ।

६ वायुकाय के जीवो की रक्षा के लिये डोरी पर कपडो को लटकाकर नही सुखाना चाहिये ।

७ किसी भी प्रकार का सर्फ, सावुन तथा वाशिग पाउडर का उपयोग नही करना चाहिये ।

आगामी चातुर्मास हेतु विनती ही नही, सारी व्यवस्था की रूपरेखा भी तैयार कर ली है, अत. हमारी भी सानुग्रह विनती है कि इस वर्ष का चातुर्मास काठा प्रान्त मे फरमाकर व पाली जिले को ही नही, मेवाड के क्षेत्रो को भी लाभ दिलावे । ऐसी हमारी ही नही, जन–जन की हार्दिक अभिलाषा है ।

अन्त मे हम नगर निवासी आपश्री के हृदय से आभारी हैं कि आपने कडकडाती धूप मे पाव की पीडा की परवाह किये बिना लगातार लम्बे विहार कर हमे जो दर्शनो व क्षेत्र स्पर्शने का लाभ प्रदान किया है, उसके लिये हम आपके कृतज्ञ हैं एव आपश्री के दीर्घायु की कामना करते हैं जिससे न केवल सघ, समाज, राष्ट्र को वरन् सम्पूर्ण मानव जाति को आपका ज्ञान और शिक्षाओ का लाभ प्राप्त होता रहे । पुन आपका कोटि-कोटि वन्दन अभिनन्दन ।

हम है सोजतरोड के समस्त नागरिको की ओर से

गणेशमल कटारिया मूथा
अध्यक्ष
वर्धमान स्थानक जैन श्रावक सघ

चम्पालाल आछा
अध्यक्ष
तेरापथी सभा

केवलचद माडोत
सरपच
ग्राम पचायत, सोजतरोड (राज०)



परिशिष्ट ८

आचार्यद्वय समता विभूति, बाल ब्रह्मचारी: पूज्य आचार्यश्री नानालालजी म.सा. और परम प्रभावक पूज्य आचार्यश्री चम्पकमुनिजी म.सा. का

संयुक्त निवेदन

परम हर्ष की बात है कि वीर.स २५०९ (सन् १९८३ ई.)के वर्ष मे हम दोनो का चातुर्मास भावनगर की पुण्यधरा पर परिपूर्ण होने में आया है ।

निर्ग्रन्थ प्रवचन की शुद्ध आराधना और निर्ग्रन्थ सस्कृति की सुरक्षा हेतु अनेक बार विचार विनिमय होता रहा है ।

अनादिकाल से भव–भवान्तर मे भ्रमण करते हुए इस आत्मा ने अनेक वार द्रव्य सयम का पालन किया होगा । परन्तु उससे आत्मा का कल्याण हो गया होता तो इस पचमकाल मे जन्म लेना नही पडता । एक वार भी आन्तरिक शुद्धतम भावो से इस निर्ग्रन्थ अवस्था की परिपूर्ण आराधना हो जाय तो निश्चित रूप से यह जीव शाश्वत सुखो को प्राप्त करे ही ।

वर्तमान समय मे श्रमण साधना की आराधना मे नये जमाने के नाम पर परिवर्तन करने के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न हो रहे हैं । उनसे बच पाना अनेक जीवो के लिये बहुत कठिन हो गया है । ऐसे प्रसंग मे श्रमण भगवान महावीर के शासन के प्रति वफादार रहकर निर्मल सयमी जीवन को आराधना के लिये आचरित कई सूचनाए सयमी जीवन की सुरक्षा मे अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी–ऐसा हम दोनो का मतव्य है ।

१ एक सवत्सरी के लिये–सपूर्ण जैन समाज अथवा श्वेताम्बर जैन समाज अथवा स्थानकवासी जैन समाज एक मत होकर जो निर्णय करे उसे स्वीकार करने के लिये हमे तैयार रहना चाहिये ।

२. ध्वनिवर्धक यत्र (माइक) सम्बन्धी–पहले बहुत चर्चाए हुई हैं । पावर हाउस, जेनरेटर, बैट्री अथवा अन्य किसी भी प्रकार से उत्पन्न विद्युत पावर तेजस्काय के अन्तर्गत सचित्त है । इसलिये उसका उपयोग श्रमण मर्यादा मे बिल्कुल योग्य नही है ।

३. किसी भी सस्था–चाहे वह स्वय के नाम के साथ अथवा अपने गुरुजनो के नाम के साथ सम्बन्धित हो,के लिये किसी प्रकार के फड या चदे मे नही पडना चाहिये । इसी प्रकार दीक्षा आदि के प्रसग पर किसी भी प्रकार की पैसो की ‘उछामणी’ नही होने देनी चाहिये ।

४ उपाश्रय भवन, वाडी वगैरह किसी भी प्रकार के मकान के निर्माण सम्बन्धी, उपदेश नही देना चाहिये और उसी प्रकार उसके लिये किसी प्रकार के फड या चदे मे भी नही पडना चाहिये ।

५ धातु, प्लास्टिक अथवा चीनी मिट्टी के बने हुए वर्तन (तसल्ली, वाल्टी, प्लेट वगैरह) काम मे नही लेने चाहिये ।

६ वायुकाय के जीवो की रक्षा के लिये डोरी पर कपडो को लटकाकर नही सुखाना चाहिये ।

७ किसी भी प्रकार का सर्फ, साबुन तथा वाशिग पाउडर का उपयोग नही करना चाहिये ।

८. रात्रि मे न तो पानी रखना चाहिये और न रात मे रहे हुए पानी को लेना चाहिये ।

९ लाइट, पखे वगैरह जहा चलते हो वैसे स्थान मे नही उतरना चाहिये ।

१०. नित्य-पिंड (उसी घर से दूसरे दिन) आहार पानी उपयोग में नही लाना चाहिये ।

११ विहार मे गृहस्थियो द्वारा अपने साथ लाए गए टिफिन से तथा विहार मे दर्शनार्थ आए हुए बाहर के दर्शनार्थियो के पास से आहार-पानी नही लेना चाहिये ।

१२ सचित्त मेवा-पूरी बादाम, दाख वगैरह नही लेना चाहिये ।

१३ सूर्योदय से पहले विहार नही करना चाहिये क्योकि उसमे अनेक प्रकार के स्पर्श सम्बन्धी विराधना होती है । जैसे—जिस स्थान मे उतरे हुए हो वहा रात्रि मे छोटे–मोटे जीवो का प्रतिलेखन किये बिना उपकरणो के साथ आना हो सकता है । परिणाम स्वरूप उनकी हिंसा अथवा स्थानान्तर होने की सम्भावना रहती है । और रात्रि मे विहार मे ईर्या समिति का पालन भी नही हो सकता है अतः सूर्योदय के पहले और सूर्योदय के बाद विहार नही करना चाहिये ।

सूर्यास्त होने के बाद सूर्योदय न हो तब तक नारी वर्ग को श्रमण वर्ग के उपाश्रय मे तथा पुरुष को श्रमणी–वर्ग के उपाश्रय मे प्रवेश नही करने दिया जाना चाहिये ।

१४ साधु-साध्वी की तपस्या के निमित्त से पत्रिका अथवा क्षमापना पत्रिका, दीपावली के आशीर्वाद वगैरह की पत्रिकाए अपने हाथ से गृहस्थ को लिखनी नही चाहिये, छपवानी नही चाहिये । गृहस्थो को दर्शन करने के लिये आमन्त्रित नही करना चाहिये । ये कार्य यदि गृहस्थ करते हो तो उन्हे भी रोकना चाहिये ।

१५ फोटो खिचवाना नही चाहिये, पाट, गाड़ी, पगलिया, समाधि आदि की जड मान्यता भी नही करनी चाहिये, न करवानी चाहिये । समाधि, पगलिया अथवा गुरुओ के फोटो पर धूप-दीप चढाने को अथवा नमस्कार करने को उपदेश देकर रोकना चाहिये ।

इनके सिवाय अन्य बहुत सारी बातें हैं जिनका उल्लेख नही किया गया है परन्तु उनके लिये भी सजग रहना आवश्यक है ।

यो तो साधु जीवन की साधना मे पाच महाव्रत एव उनकी समाचारी का पूर्ण उल्लेख शास्त्रो मे है ही, फिर भी वर्तमान काल मे किन्ही साधु–साध्वियो मे किन्हीं विषयो को लेकर विकृतिया प्रवेश कर चुकी हैं अथवा फैल रही है । शुद्ध सयम के पालन हेतु चतुर्विध सघ के प्रत्येक सदस्य के लिये इन बातो मे सजग रहना आवश्यक है ।

बढती हुई इन विकृतियो को यदि रोकने का प्रयास नही किया जायगा तो यह स्थिति कहा तक पहुचेगी और निर्मल-निर्ग्रन्थ श्रमण सम्कृति का क्या होगा ? यह एक गम्भीर विचारणीय विषय हो गया है ।

शास्त्रोक्त साधु-समाचारी के अनुसार सभी शुद्ध और निर्मल सयम की आराधना करके अपनी तथा शासन की शोभा बढावें यही हमारी शुभकामना है ।

प्रस्तोता

दीपचन्द भूरा
अध्यक्ष श्री अ भा. साधुमार्गी
जैन सघ.

नवनीतभाई सी. पटेल
प्रमुख बरवाला सम्प्रदाय,
सगठन समिति



परिशिष्ट ९

आचार्यश्री नानालालजी म.सा. के सहज सम्पर्क मे आये गुजरात एवं सौराष्ट्र के प्रबुद्ध व्यक्तियो के अभिमत—

१ सुश्री प्रफुल्ला पी दोशी, एम ए कोविद भावनगर

आचार्यश्री नानेश का गुजरात, सौराष्ट्र मे आगमन और उसमे भी भावनगर मे चातुर्मास परम सौभाग्य की बात है । वर्षो से तृषातुर और अलभ्य चातुर्मास हमे सहज ही प्राप्त हो गया है । इस महापुरुष के जीवन का मेरे जैसी पामर क्या वर्णन कर सकती है ।

जब आपश्री प्रवचन फरमाते हैं तब आपका वास्तविक बहुमुखी व्यक्तित्व पूर्णरूप से खिलता है । अनेक विषयो का आपश्री को अगाध ज्ञान है । उसके अतल ज्ञानोदधि मे से एकाध रत्नकणिका भी प्रदर्शित करने मे मैं असमर्थ हू । एक-एक प्रवचन बढकर होता है । प्रवचन या प्रश्नो का निराकरण करते समय प्रश्नकर्त्ता को पूर्ण सतोष हो जाय उतनी सूक्ष्म विवेचना आपश्री करते हैं ।

आचार्यश्री की वाणी मे जो शालीनता और विवेक है वह अद्भुत है । इन गुणो के कारण आपश्री के प्रति कोई भी भक्तिभाव से अभिभूत हुए बिना रहता नही है । श्रोता वर्ग

के सवेदन तन्त्र को अथवा बुद्धिमता को कही भी ठेस नही पहुचती है। आपश्री की वाणी मे विवेक, विचारो मे उच्चता, जीवन मे सादगी, व्यवहार मे निरभिमानता, बातचीत मे सर्वत्र मानव वाचकता–ऐसे अनेक गुणो से अलकृत आचार्य भगवन्त भास्कर के समान जगमगा रहे हैं। पृथ्वी के विरल व्यक्तियो मे ही अनेक गुण होते है। आपश्री अपने आपको पूज्य श्रद्धेय श्री जवाहरलालजी म सा. की चलती हुई पेढी के सेवक के रूप मे ही अपना परिचय देते हैं। यह आपश्री कहने की अपेक्षा से ही कहते है ऐसा नही है, वास्तव मे भी आप ऐसा ही मानते है। 'अधूरे छलकते हैं पूरे नही' यह न्याय सही है। आपश्री अपने नाम के अनुसार अपने आपको भी नाना ही मानते है परन्तु वास्तव मे तो आप वामनरूप विराट है और भाति–भाति के विभिन्न गुणो से युक्त है। हेय गुणो से दूर तथा उपादेय गुणो से भरपूर गुणरत्नो के स्वामी है।

२ डॉ जयश्री मलुकचन्दशाह, बी एस ए एम राणपुर।

पूज्यश्री सरल निस्पृहता से भरे हुए, शात और सौम्य व्यक्तित्व से युक्त हैं। जिनकी आखो मे इतना प्रभाव है कि आपश्री की केवल उपस्थिति का भी ताप लगता है। आपश्री की व्याख्यान वाणी का गहरा प्रभाव छा जाता है। विद्यावती वाणी का गहरा प्रभाविक चरित्र, बारह व्रत आदि सुनने के लिये दिल तडफ उठता था। दिल कहता है कि क्या केवल कृष्ण की बशी मे जादू था जो सुनने वालो पर पूरी तरह छा जाता था ? यही नही शायद इतना ही जादू पूज्यश्री की वीतराग वाणी रूप वशी मे भी है जिसके व्याख्यान रूपी सुर सुनने के लिये दिल तडफ उठता है। बहुमूल्य हीरे का सही मूल्य तो जौहरी ही कर सकता है। गुरुदेव के लिये मैं अल्पज्ञ क्या कह सकती हू ?

३ कु० हसा एम शाह, एम एस सी, बी एड. साहित्यरत्न –
६, कृष्ण सोसायटी, केशव कुज, सरदारनगर–भावनगर

अध्यात्म भाव रूपी नगर मे बसने वाले सत का भावनगर मे पदार्पण हुआ। वायु मण्डल मे एक झोंका उठा। नई चेतना का सदेश मिला। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' की उक्ति के अनुसार आपश्री के पधारते ही दोनो सघो की दरार अदृश्य हो गई; दोनो एक दूसरे से मिल गये। आचार्य भगवन्त ने यह बडा सराहनीय कार्य किया।

आपका परिचय अगर कोई पूछे तो सक्षेप मे एक शात, समता पूर्ति, वैराग्य-विभूति जिसके मुख मण्डल पर सम्यक्ज्ञान की आभा विलस रही है, धीर गम्भीर वदन है, ज्ञान के आलोक से आलोकित नयन हैं। वाक्धारा अस्खलित बहती है।

४ श्री रजनीकात सघवी, आचार्य, एच,एल कालेज आफ कामर्स,
नवरगपुरा–अहमदाबाद

परमपूज्य आचार्य भगवन्त श्री नानालालजी म सा. का अहमदाबाद मे पदार्पण हुआ तब आपका सत्कार करने के लिये जैन जागृति सेन्टर की तरफ से मैं गया था, तब आप

श्री के प्रथम परिचय मे आया । सत्कार का प्रत्युत्तर देते हुए आचार्यश्री ने कहा था—अहमदाबाद तो महानगर है जहा अनेक सत–सतियो के धर्मोपदेश रूपी जल सिंचन से सुन्दर उद्यान खिला हुआ है और मैं तो इस उद्यान के पुष्पो की सुगध लेने के लिये ही आया हू । मुझे उनके इस वक्तव्य मे आचार्यश्री की नम्रता के दर्शन हुए । फिर मेरा आपश्री से सम्पर्क होता ही रहा ।

मधुर व्याख्याता, पूज्य गुरुदेव के पास हिन्दी भाषा पाडित्य तो है ही परन्तु गुजरात मे आने के बाद आपश्री ने गुजराती भाषा पर भी अद्‌भुत प्रभुत्व प्राप्त कर लिया है। श्रोताजन की निज की भाषा मे उद्‌बोधन करने का गुरुदेव का पुरुषार्थ प्रशसा का पात्र है ।

मनुष्य के लिये सन्त समागम का क्या लाभ होता है, उसकी अनुभूति आचार्यश्री के साथ प्राप्त सम्पर्क से ही होती है ।

५ श्री जयन्तीलाल वीरमाया, विश्व प्रेम, जमनाकुण्ड भावनगर –

धीरे-धीरे आचार्य भगवन्त श्री नानालालजी महाराज के पास मैंने जाना शुरू किया । उनके व्यक्तित्व मे मुझे जो कुछ दीखा है उसको शब्दो से समझाना मुश्किल है, फिर भी प्रयास कर रहा हू । मारवाड से साधु भावनगर पधारे और चातुर्मास गुजारे–यह असामान्य घटना है । मात्र मेरे जैसे अनेक जिज्ञासुओ की जिज्ञासा, उन्हे यहा खींच लाई हो ऐसा सयोग लगता है ।

किसी से प्रभावित होना मेरे स्वभाव के विरुद्ध है परन्तु आचार्य भगवन श्री नानालालजी म सा के व्यक्तित्व से मैं प्रभावित हुआ हू–ऐसा कहते हुए सकोच नही है । क्योकि उनकी मृदुता किसी को भी स्पर्श करे ऐसी है, उनके त्याग मे निर्मलता है, उनकी शुद्धि मे पवित्रता है, उनकी वाणी मे अनुभूति की ललकार है, उनकी साधुता के समस्त गुण प्रभावक हैं, वे ध्यान और योग के प्रखर अभ्यासी है,उनकी समझाने की शैली आकर्षक और अद्‌भुत है तथा उनकी प्रस्तुति जैन और जैनेतर सभी के हृदय को प्रभावित करे ऐसी सचोट और स्पष्ट है ।



परिशिष्ट–१०

आचार्य प्रवर का प्रकाशित-अप्रकाशित साहित्य

प्रकाशित–प्रवचन साहित्य

१ पावस प्रवचन भाग १
२ पावस प्रवचन भाग २
३ पावस प्रवचन भाग ३
४ पावस प्रवचन भाग ४
५. पावस प्रवचन भाग ५
६. आध्यात्मिक आलोक
७ आध्यात्मिक वैभव
८ नव निधान
९. शाति के सोपान
१० ताप और तप
११. प्रेरणा की दिव्य रेखाए
१२. प्रवचन–पीयूष
१३ मगलवाणी
१४. जीवन और धर्म
१- अमृत–सरोवर
१६. समीक्षण–धारा
१७. कुकुम के पगलिये (लघु-उपन्यास)

लिपिबद्ध–प्रवचन–साहित्य

१. मन्दसौर	—	वर्षावास
२ ब्यावर	—	"
३ जयपुर	—	"
४. बीकानेर	—	"
५ सरदारशहर	—	"
६. देशनोक	—	"
७ नोखामडी	—	"
८. गगाशहर–भीनासर	—	"
९ जोधपुर	—	"
१०. अजमेर	—	"
११ राणावास	—	"
१२ उदयपुर	—	"
१३. अहमदाबाद	—	"
१४. बम्बई	—	"

अप्रकाशित साहित्य

१ कर्म-प्रकृत्ति-द्वितीय खण्ड
२ मान-समीक्षण
३. माया-समीक्षण
४ लोभ-समीक्षण
५ प्रेय-समीक्षण
६ द्वेष-समीक्षण
७. मोह-समीक्षण
८ गर्भ-समीक्षण
९ जन्म-समीक्षण
१० मृत्यु-समीक्षण
११ नरक-समीक्षण
१२ तिर्यंच-समीक्षण
१३. दु.ख-समीक्षण

अप्रकाशित आगम साहित्य

१. आचाराग–सूत्र–प्रथम श्रुत स्कध
२. भगवती सूत्र –प्रथम भाग (प्रथम-द्वितीय शतक)
३ कल्प–सूत्र
४ अन्तकृद्दशाग सूत्र
५ आचाराग सूत्र (द्वितीय श्रुत स्कध) विवेचनाधीन
६ भगवती सूत्र (द्वितीय भाग-विवेचनाधीन)
७. ज्ञाता धर्मकथाग सूत्र (विवेचनाधीन)
८ उपासक दशाग (विवेचनाधीन)

प्रकाशित साहित्य

- कर्म प्रकृति प्रथम खण्ड
- जिण धम्मो
- गहरी पर्त के हस्ताक्षर
- समता दर्शन और व्यवहार
- समीक्षण-ध्यान प्रयोग विधि
- समता क्राति का आह्वान

प्रकाशित गुजराती भाषान्तरित साहित्य

- समता दर्शन अने व्यवहार
- ऊडाण ना हस्ताक्षर
- समीक्षण ध्यान प्रयोग विधि
- समता क्रान्ति का आह्वान

प्रकाशित–काव्य साहित्य

आदर्श भ्राता चरित्र

अप्रकाशित काव्य साहित्य

पाण्डव–चरित्र

नल दमयन्ति–चरित्र

हरिशचन्द्र तारामति–चरित्र

मजुला–चरित्र

चन्द्रकाता–चरित्र

सुशीला–कुल्टा चरित्र

विद्यावती–चरित्र

आतङ्कसेन चन्द्रसेन–चरित्र

रुक्मणि–मगल चरित्र

सभी काव्य साहित्य मिलकर लगभग ११००० गाथा प्रमाण है।

अप्रकाशित इंग्लिश भाषान्तरित साहित्य

समता दर्शन और व्यवहार

आचार्य प्रवर के निरन्तर अन्तस्तल से प्रादुर्भूत चिन्तन से

संघ व समाज लाभान्वित

हो रहा है।

आचार्य प्रवर से संबंधित प्रकाशित साहित्य

१ अन्तर्पथ के यात्री आचार्यश्री नानेश

२ आचार्यश्री नानेश विचार दर्शन

३ आचार्यश्री नानेश—एक परिचय
(हिन्दी—गुजराती)

४ सफल सौराष्ट्र प्रवास (गुजराती)

५ अविस्मरणीय झलक

६ गुजरात प्रवास—एक झलक

७ अष्टाचार्य एक झलक

परिशिष्ट-११

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म.सा. के आचार्यत्वकाल में अब तक हुए चातुर्मास मे साथ रहे संतों के तथा महासतियाजी म.सा. के नाम

१-सं. २०२०-रतलाम—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, तपस्वी प. मुनिश्री सूरजमलजी म सा सेवाभावी मुनिश्री इन्द्रचन्दजी म सा., श्री कवरलालजी म सा, श्री सेवतलालजो म.सा, श्री शातिलालजो म सा, श्री अमरचन्दजी म सा, श्री हरखचदजो म सा, श्री कवरलालजी म सा ठाणा ६।

महासतियाजी-

महासती श्री तेजकवरजी म सा श्री वल्लभकवरजी म सा, श्री गट्टूजी म सा, श्री दाखाजी म.सा आदि ठाणा ६।

२ सं २०२१-इन्दौर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, तपस्वी मुनि श्री कवरलालजी म सा,(वडे), सेवाभावी मुनिश्री इन्द्रचन्दजी म सा., श्री सेवतलालजी म सा, मुनिश्री वृद्धिचन्दजी म सा, श्री शातिलालजी म सा, श्री अमरचन्दजी म सा, श्री कवरलालजी म सा (छोटे), श्री हरखचन्दजी म सा आदि ठाणा ६।

महासतियांजी—

महासती श्री सुगनकवरजी म सा (व्यावर वाले), श्री छगनकवरजी म सा, श्री राजकवरजी म सा (बीकानेर वाले), श्री वादामकंवरजी म सा, श्री भवरकवरजी म सा, श्री अचरजकवरजी म सा आदि ठाणा ६।

३ सं. २०२२ रायपुर (म.प्र.)—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, सेवाभावी मुनि श्री इन्द्रचन्दजी म सा, मुनि श्री कवरलालजी म सा (बडे), मुनि श्री सेवत मुनिजी म सा, मुनिश्री वृद्धिचन्दजी म.सा, मुनि श्री अमरचन्दजी म सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म.सा, मुनि श्री कवरलालजी म सा आदि ठाणा ८ ।

महासतियांजी—

महासती श्री टीपूजी म सा, श्री राजकवरजी म सा, श्री पेपकवरजी म सा, श्री नगीनाकवरजी म.सा., श्री नानूकंवरजी म सा, श्री फूलकवरजी म.सा., श्री इन्द्रकवरजी म सा, श्री रोशनकवरजी म सा., श्री अनोखाजी म सा, श्री सूरजकवरजी म सा, श्री लीलावतीजी म सा आदि ठाणा ११ ।

४ सं. २०२३ राजनांदगांव—

परम श्रद्धेय प्रातः स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, सेवाभावी मुनिश्री इन्द्रचन्दजी म.सा., मुनि श्री कवरलालजी म सा (बडे), मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा., मुनि श्री अमरचन्दजी म.सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म सा, मुनि श्री कवरलालजी म सा आदि ठाणा ७ ।

महासतियांजी—

महासती श्री टीपूजी म सा, श्री राजकवरजी म सा, श्री पेपकवरजी म सा, श्री फूलकवरजी म सा, श्री नगीनाजी म सा, श्री इन्द्रकवरजी म सा, श्री अनोखाजी म सा, श्री लीलावतीजी म.सा आदि ठाणा ८ ।

५ सं. २०२४ दुर्ग—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, सेवाभावी मुनिश्री इद्रचन्दजी म.सा., मुनिश्री कवरलालजी म.सा. (वडे), मुनि श्री सेवंतमुनिजी म.सा, मुनि श्री अमरचन्दजी म.सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म.सा, मुनि श्री कवरलालजी म सा., मुनि श्री सम्पतराजजी म सा., बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री प्रेममुनिजी म सा, बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री पार्श्वमुनिजी म.सा, मुनि श्री धर्मेशमुनिजी म.सा आदि ठाणा ११ ।

महासतियांजी—

महासती श्री नानूकवरजी म सा, महासती श्री फूलकंवरजी म सा, श्री अनोखा कवरजी म सा., श्री सूर्यकाताजी म सा, श्री जयश्रीजी म सा ठाणा ५ ।

६ स २०२५ अमरावती—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा, मुनि श्री अमरचन्दजी म सा, मुनि श्री कवरलालजी म सा., मुनि श्री सम्पतलालजी म सा, मुनिश्री धर्मेशमुनिजी म सा ठाणा ६ ।

महासतियाजी—

बाल ब्रह्मचारी विदुषी महासती श्री मनोहरकवरजी म सा, श्री सायरकवरजी म सा, श्री सुशीलाजी म सा, श्री कस्तूराजी म सा, श्री चन्दनबालाजी म सा आदि ठाणा ५ ।

७ स २०२६ मन्दसौर —

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा. मुनिश्री सेवतमुनिजी म सा, मुनि श्री अमरचन्दजी म सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म सा, मुनि श्री सम्पतलालजी म सा, मुनि श्री रतनलालजी म सा ठाणा ६ ।

महासतियाजी—

महासती श्री गट्टूजी म सा, श्री मोहनजी म सा, श्री पानकवरजी म सा., श्री मनोहर कवरजी म सा., श्री केशरकवरजी म सा, श्री घापूजी म सा, श्री आनन्दकवरजी म सा, महासती श्री नदकवरजी म सा, श्री सुशीलाकवरजी म सा, श्री कस्तूराजी म सा, श्री चन्दनबालाजी म सा, महासती श्री छगनजी म सा आदि ठाणा १२ ।

८ सं. २०२७ बडीसादडी—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, तपस्वी मुनि श्री ईश्वरचन्दजी म सा, मुनि श्री गोपीलालजी म सा, मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा., मुनि श्री अमरचन्दजी म सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म सा, मुनि श्री कवरचन्दजी म सा., मुनि श्री प्रेमचन्दजी म सा ठाणा ८ ।

महासतियांजी —

महासती श्री छोटेकवरजी म सा, श्री रसालकवरजी म सा, श्री लाडकवरजी म सा., श्री चादकवरजी म सा, श्री इन्द्रकवरजी म.सा, श्री बादामकवरजी म सा, श्री सरदारकवरजी म सा, श्री चन्द्रकवरजी म.सा, श्री धीरजकवरजी म सा, श्री हुलासकवरजी म.सा., श्री लीलावतीजी म सा, श्री वृद्धिकवरजी म सा, श्री प्रेमलताजी म सा, श्री पारसकवरजी म सा, श्री गगावतीजी म सा आदि ठाणा १५ ।

९ सं २०२८ ब्यावर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म.सा, कर्मठ सेवाभावी मुनि श्री इन्द्रचन्दजी म सा, श्री सेवतमुनिजी म सा, श्री कवरचन्दजी म सा.,

श्री सम्पतराजजी म सा, श्री प्रेमचन्दजी म सा, श्री रणजीतमलजी म सा, श्री महेन्द्रकुमारजी म सा आदि ठाणा ८ ।

महासतियाजी—

महासती श्री सूरजकवरजी म सा, श्री सुगनकवरजी म सा. (बीकानेर वाले), श्री सिरेकवरजो म सा, श्री सम्पतकवरजी म सा, श्री गुलाबकवरजी म सा, श्री प्यारकवरजी म सा, श्री धापूजी म सा, श्री ककुजी म सा, श्री पेपकवरजी म सा, श्री नानूकवरजी म सा, श्री गुलावकवरजी म सा (उदयपुर वाले), श्री सूरजकवरजी म सा, श्री उगमजी म सा, श्री शाताजी म सा, श्री झमकूजी म सा, श्री गुलाबकवरजी म सा (इन्दौर वाले), श्री सोहनकवरजी म सा, श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री इन्दुवालाजी म सा, श्री मगलाजी म सा, श्री सुशीलाजी म सा श्री जतनकवरजी म सा, श्री सुशीलाजी म सा (बीकानेर वाले), श्री चन्द्रकवरजी म सा आदि ठाणा २४ ।

१० स. २०२९ जयपुर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, प मुनि श्री गोपीलालजी म सा, मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म सा, मुनि श्री कवरचन्दजी म सा, मुनि श्री रणजीतमलजी म सा, मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी म सा, मुनिश्री गजानन्दजी म सा ,मुनिश्री रमेशकुमारजी म सा., मुनि श्री सुरेन्द्रकुमारजी म सा ठाणा १०

महासतियाजी—

महासती श्री सुगनकवरजी म सा, श्री पानकवरजी म सा, श्री कचनकवरजी म सा, श्री भवरकवरजी म सा, श्री सुमतिकवरजी म सा, श्री अचरजकवरजी म सा, श्री वल्लभकवरजी म सा, श्री चमेलीजी म सा, श्री केसरजी म सा, श्री ताराजी म सा आदि ठाणा १० ।

११ स. २०३० बीकानेर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा., प मुनिश्री गोपीलालजी म सा, मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा, मुनि श्री सम्पतमुनिजी म सा, मुनि श्री पार्श्वमुनिजी म सा, मुनि श्री धर्मेशमुनिजी म सा, मुनि श्री सौभागमुनिजी म सा, मुनि श्री रमेशमुनिजी म सा, मुनि श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा., श्री हुलासमुनिजी म.सा, श्री राजेन्द्र मुनिजी म.सा, श्री विजयमुनिजी म.सा आदि ठाणा १२ ।

महासतियाजी—

महासती श्री जीवनाजी म सा, श्री राजकवरजी म सा., श्री इन्द्रकवरजी म.सा, श्री लीलावतीजी म सा., श्री प्रेमलताजी म.सा, श्री पारसकवरजी म सा, श्री गंगावतीजी म.सा., श्री पुष्पलताजी म.सा., श्री सुमतिकंवरजी म.सा, श्री ललिताजी म.सा आदि ठाणा १० ।

१२ सं. २०३१ सरदारशहर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, मुनि श्री सेवतमुनिजी म सा, मुनि श्री अमरचन्दजी म सा, मुनि श्री शातिमुनिजी म सा, मुनि श्री धर्मेशमुनिजो म सा, मुनि श्री रणजीतमुनिजी म.सा, मुनि श्री महेन्द्रमुनिजी म सा, मुनि श्री गजानन्दजी म सा, मुनि श्री रमेशमुनिजी म सा, मुनि श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा, मुनि श्री हुलास मुनिजी म सा, मुनि श्री विजयमुनिजो म सा., ठाणा १२ ।

महासतियाजी—

महासतो श्री मनोहरकवरजी म सा, श्री अनोखाकवरजी म सा, श्री धीरजकवरजी म सा, श्री सूर्यकाताजी म सा, श्री सुशीलाकवरजी म सा, श्री कस्तूरकवरजी म सा, श्री चन्दन वालाजी म सा, श्री जयश्रीजी म सा, श्री कुसुमलताजी म सा, श्री प्रेमलताजी म सा, श्री विमलाकवरजी म सा, श्री कुसुमकाताजी म सा, श्री पारसकवरजी म सा, श्री स्नेहलताजी म सा, श्री विजयलक्ष्मीजो म सा, श्री ललिताकवरजी म सा आदि ठाणा १६ ।

१३ सं २०३२ देशनोक—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री ईश्वरचन्दजी म सा, श्री सेवतमुनिजी म सा, श्री प्रेममुनिजी म सा, श्री धर्मेशमुनिजो म सा, श्री महेन्द्रमुनिजी म सा, श्री रमेशमुनिजी म सा, श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा, श्री हुलासमुनिजी म सा, श्री जितेन्द्रमुनिजी म सा, श्रो विजयमुनिजी म सा, श्रो पुष्पमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री कस्तूरमुनिजी म सा आदि ठाणा १४ ।

महासतियाजी—

महासती श्री पानकवरजी म सा, श्री सम्पतकवरजी म सा, श्री वापूकवरजी म सा. श्री भूरजकवरजी म सा, श्री सम्पतकवरजी म सा, श्रीगुलावकवरजी म सा, श्री सायरकवरजी म.सा., श्री शाताकवरजी म सा, श्री कमलाकवरजी म सा, श्री रोशनकंवरजी म सा, श्री मगला कवरजी म.सा, श्री सूरजकवरजी म सा, श्री काताजी म सा., श्रो चन्दनवालाजी म सा, श्री भवर कवरजी म सा, श्री प्रभावतीजो म सा, श्री विचक्षणाजी म सा, श्री सुमनप्रभाजी म सा. ठाणा १८ ।

१४ सं. २०३३ नोखामण्डी—

परम श्रद्धेय प्रात. स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री सम्पतमुनिजी म सा, श्री पार्श्वमुनिजी म सा., श्रो महेन्द्रमुनिजी म सा, श्री रमेशमुनिजी म सा, श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा, श्री हुलासमुनिजी म सा., श्री विजयमुनिजी म.सा, श्री नरेन्द्र मुनिजी म सा, श्री पुष्पमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री कस्तूरमुनिजी म.सा, श्री प्रकाशमुनिजी म.सा ठाणा १३ ।

महासतियाजी—

महासती श्री केशरकवरजी म सा, श्री आनन्दकवरजी म सा, श्री नन्दकवरजी म सा, श्री घापूकवरजी म सा, श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री विमलाकवरजी म.सा, श्री ललिताजी म सा. आदि ठाणा ७ ।

१५ सं. २०३४ भीनासर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री सेवतमुनिजी म सा, श्री सम्पतमुनिजी म सा, श्री महेन्द्रमुनिजी म सा., श्री रमेशमुनिजी म. सा, श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा, श्री हुलासमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा., श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री जयवतमुनिजी म सा, श्री गौतममुनिजी म सा ठाणा १२।

महासतियाजी—

महासती श्री राजकवरजी म सा, श्री घापूजी म सा, श्री चादकवरजी म सा, श्री बादामकवरजी म सा., श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री विमलाकवरजी म सा, श्री सुशीलाजी म.सा, श्री सुदर्शनाजी म सा, श्री निरूपमाश्रीजी म सा, श्री आदर्शप्रभाजी म सा आदि ठाणा १० ।

१६ स. २०३५ जोधपुर—

परम श्रद्धेय प्रातः स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री कवरचन्दजी म सा., श्री सम्पतमुनिजी म सा., श्री महेन्द्रमुनिजी म सा, श्री रमेशमुनिजी म. सा, श्री सुरेन्द्रमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म सा. आदि ठाणा ९ ।

महासतियाजी—

महासती श्री नानूकवरजी म सा, श्री सूर्यकाताजी म सा., श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री कल्याणश्रीजी म सा, श्री वसुमतीजी म सा, श्री पुष्पाकवरजी म सा, श्री पारसकवरजी म सा, श्री सुमनलताजी म सा, श्री विजयलक्ष्मीजी म सा आदि ठाणा ९ ।

१७ स. २०३६ अजमेर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री सेवतमुनिजी म सा, श्री रतनमुनिजी म सा, श्री रमेशमुनिजी म मा, श्री विजयमुनिजी म. सा, श्री ज्ञानमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म सा आदि ठाणा ९

महासतियांजी—

महासती श्री सूरजकवरजी म सा, श्री रसालकंवरजी म सा, श्री प्यारकवरजी म सा, श्री पेपकवरजी म सा, श्री लाडकवरजी म सा, श्री फूलकवरजी म सा, श्री सरदारकवरजी म सा, श्री रोशनकवरजी म सा, श्री भमकूकवरजी म सा, श्री इन्दुबालाजी म सा, श्री कमल प्रभाजी म सा, श्री सुशीलाजी म सा, श्री तेजप्रभाजी म सा, श्री राजमतिजी म सा, श्री मञ्जु बालाजी म सा, श्री समताजी म सा आदि ठाणा १६ ।

१८ स. २०३७ राणावास—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा श्री ईश्वरचन्दजी म सा, श्री प्रेममुनिजी म सा, श्री गजानन्दजी म सा, श्री सौभागमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री ज्ञानमुनिजी म सा, श्री बलभद्रमुनिजी म सा, श्री पुष्पमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म सा., श्री जयवतमुनिजी म सा, श्री जितेशमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म सा आदि ठाणा १४ ।

महासतियाजी—

महासती श्री मोहनकवरजी म.सा, श्री टीपूकवरजी म सा, श्री गुलाबकवरजी म सा, श्री कुकुकवरजी म सा,, श्री नगीनाकवरजी म सा, श्री बादामकवरजी म सा, श्री सूरजकवरजी म सा, श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री सुशीलाकवरजी म सा, श्री चन्द्रकाताजी म सा, श्री तारा-कवरजी म सा, श्री विचक्षणाजी म सा., श्री प्रियलक्षणाजी म सा, श्री श्रेयासकवरजी म सा, श्री प्रीतिसुधाजी म सा, श्री निरुपमाजी म सा, श्री सरोजबालाजी म सा, श्री मनोरमाजी म सा, श्री चचलकवरजी म सा, श्री कुसुमकवरजी म.सा आदि ठाणा २० ।

१९ स २०३८ उदयपुर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री सेवतमुनिजी म सा, श्री अमरचन्दजी म सा, श्री शातिमुनिजी म.सा, श्री गजानन्दजी म सा, श्री सौभागमुनिजी म सा, श्री रमेशमुनिजी म.सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री ज्ञानमुनिजी म सा., श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म.सा, श्री अजीतमुनिजी म सा, श्री विनय मुनिजी म.सा, नवदीक्षित श्री चन्द्रेशमुनिजी म.सा. आदि ठाणा १४ ।

महासतियांजी—

महासती श्री नानूकवरजी म.सा, श्री अनोखाकवरजी म.सा, श्री शकुतलाजी म.सा., श्री जतनकवरजी म सा, श्री कल्याणकवरजी म सा., श्री विजयलक्ष्मीजी म.सा, श्री स्नेहलताजी म सा., श्री राजश्रीजी म सा, श्री शशिकाताजी म.सा., श्री कनकश्रीजी म.सा., श्री कुमुदश्रीजी म.सा. ठाणा ११ ।

२० स. २०३९ अहमदाबाद—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म.सा, श्री शातिमुनिजी म सा, श्री भूपेन्द्रमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री ज्ञानमुनिजी म. सा, श्री बलभद्रमुनिजी म.सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म सा, श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा, श्री पकजमुनिजी म सा. आदि ठाणा ११ ।

महासतियाजी

महासती श्री इन्द्रकवरजी म सा, श्री लीलावतीजी म सा, श्री प्रेमलताजी म सा, श्री गगावतीजी म सा, श्री पुष्पलताजी म सा, श्री निरजनाश्रीजी म सा, श्री रजनाश्रीजी म.सा., श्री प्रतिमाश्रीजी म सा, श्री सुप्रभाजी म सा, श्री हर्षिलाजी म सा, श्री अर्चनाश्रीजी म.सा, श्री वदनाश्रीजी म सा, नवदीक्षिता श्री जिनप्रभाजी म सा, श्री मणिप्रभाजी म सा, श्री सिद्धप्रभाजी म सा, श्री विशालप्रभाजीम सा, श्रीकनकप्रभाजी म सा, श्रीसत्यप्रभाजी म सा आदि ठाणा १८ ।

२१ सं. २०४० भावनगर—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म.सा., श्री महेन्द्रमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा., श्री ज्ञानमुनिजी म सा., श्री बलभद्रमुनिजी म.सा, श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म.सा, श्री सुमति मुनिजी म सा, श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा, श्री पकजमुनिजी म सा ठाणा ११ ।

महासतियाजी—

महासती श्री हुलासकवरजी म सा, श्री भवरकवरजी म सा, श्री प्रभावतीजी म.सा., श्री ललिताजी म सा, श्री विचक्षणाजी म सा, श्री सुलक्षणाजी म सा, श्री जयवतश्रीजी म.सा, श्री अरुणाश्रीजी म सा, श्री प्रवीणाश्रीजी म सा आदि ठाणा ६ ।

२२ सं. २०४१ बोरीवली (बम्बई)

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा., श्री शातिमुनिजी म सा, श्री भूपेन्द्रमुनिजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री ज्ञानमुनिजी म. सा, श्री पुष्पमुनिजी म सा., श्री राममुनिजी म सा, श्री प्रकाशमुनिजी म.सा, श्री अजीतमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म सा, श्री सुमतिमुनिजी म सा., श्रीचन्द्रेशमुनिजी म सा. ठाणा १२ ।

महासतियाजी—

महासती श्री पानकवरजी म सा, श्री सूरजकवरजी म सा, श्री रोशनकंवरजी म सा., श्री कस्तूरकवरजी म सा, श्री चन्दनबालाजी म सा, श्री कुसुमलताजी म सा, श्री प्रेमलताजी म मा, श्री कुसुमकाताजी म सा, श्री प्रभावतीजी म.सा, श्री प्रियलक्षणाजी म सा, श्री किरण प्रभाजी म सा, श्री कीर्तिश्रीजी म सा, श्री पद्मश्रीजी म.सा., श्री प्रमोदश्रीजी म सा, श्री कमल

श्रीजी म सा, श्री श्वेताश्रीजी म सा, नवदीक्षिता श्री शारदाश्रीजी म सा, श्री सूर्यमणीजी म सा., श्री रजतमणिजी म.सा. ठाणा १९

२३ सं. २०४२ घाटकोपर (बम्बई)

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा, श्री विजयमुनिजी म सा, श्री ज्ञानमुनिजी म सा, श्री पुष्पमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म.सा., श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री अजीतमुनिजी म सा, श्री विनयमुनिजी म सा, श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा आदि ठाणा ९।

महासतियाजी—

महासती श्री इन्द्रकवरजी म सा, श्री प्रेमलताजी म सा, श्री पारसकवरजी म सा, श्री गगावतीजी म सा, श्री सुमतिकवरजी म सा, श्री ललितप्रभाजी म सा, श्री अजनाश्रीजी म सा, श्री मजुलाश्रीजी म सा, श्री सुलोचनाश्रीजी म सा, श्री वनिताश्रीजी म सा, श्री साधना श्रीजी म सा, श्री कल्पनाश्रीजी म सा, श्री ज्योत्स्नाश्रीजी म सा, श्री पूर्णिमाश्रीजी म सा, श्री दर्शनाश्रीजी म सा आदि ठाणा १५।

२४ सं. २०४३ जलगांव—

परम श्रद्धेय प्रात स्मरणीय पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री नानालालजी म सा., श्री प्रेममुनिजी म सा, श्री सम्पतमुनिजी म सा, श्री नरेन्द्रमुनिजी म सा, श्री राममुनिजी म सा श्री प्रकाशमुनिजी म सा, श्री जितेशमुनिजी म सा, श्री चन्द्रेशमुनिजी म सा आदि ठाणा ८।

महासतियांजी—

महासती श्री भवरकवरजी म सा, श्री अचरजकवरजी म सा, श्री ज्ञानकवरजी म सा, श्री सुशीलाकवरजी म सा, श्री ताराकवरजी म सा., श्री प्रीतिसुधाजी म सा., श्री उर्मिलाकवरजी म सा., श्री सुभद्राश्रीजी म सा, श्री चन्दनाश्रीजी म सा आदि ठाणा ९।



अष्टाचार्य विचारधारा:-

क्रान्ति-पथ

अष्टाचार्य विचारधारा:-

क्रान्ति-पथ

क्रान्ति–पथ

संयमीय साधना के ज्वलत आदर्श अष्टाचार्य के यथा उपलब्ध जीवनवृत्त का आलेखन करने के अनन्तर अन्त मे एक विचार प्रस्फुटित हुआ कि क्यो न उन महापुरुषो के विचारो का भी सलग्न किया जाय। क्योकि जो विचार साधनापूर्ण जीवन से प्रादुर्भूत होते हैं, वे पाठक के अन्तस्तल को छू जाने वाले होते हैं। जीवन मे एक अलौकिक, सुखद मोड लाने वाले होते हैं। पावर (Power) युक्त वैटरी (Battery) के सयुक्त होने पर ही माउथ (Mouth) मे प्रयोग किया गया शब्द लाउडस्पीकर (Loudspeaker) के द्वारा प्रसारित हो सकता है। यदि वैटरी ही नही है तो माउथ मे कितना ही जोर–जोर से वोला जाय, शब्दो का प्रसारण नही हो सकता।

ठीक इसी प्रकार यदि वक्ता चितक किंवा लेखक का जीवन यदि साधना की गहराइयो को छूने वाला नही है। यदि उसमे आत्म–साधना का पावर नही है तो ऐसे वक्ता चिन्तक या लेखक के विचार श्रोता या पाठक के जीवन को विशेष प्रभावित नही कर सकते।

आज के आधुनिक युग मे नये–नये विचारो की भरमार है। नये–नये साहित्यो की सर्जना हो रही है। पुस्तको, ग्रन्थो का अम्बार सा लग गया है किंतु इतना सब कुछ होते हुए भी आज के अधिकाश मानव भौतिकता के प्रवाह मे ही वहते जा रहे हैं।

आज के चिंतनशील मानवो के समक्ष आदर्श नही, जीवन चाहिये। विचार नही आचरण चाहिये। साहित्य नही साधना चाहिये।

आदर्श वह हो जो जीवन के रग–रग को छूता हो, विचार ऐसा हो जो स्वय की गहराइयो से प्रादुर्भूत हो, साहित्य वह हो, जिसके मध्य अनुभूति की ललकार हो। ऐसे ही साधना पूर्ण अनुभूतिपरक विचार हैं–अध्यात्म साधक अष्टाचार्य नरपुगवो के।

यद्यपि आदि के चार आचार्य भगवन्तो के विचार जीवन वृत्त की तरह ही प्रायः अत्यल्प मिलते हैं, तथापि जो कुछ भी उपलब्ध हो पाए हैं, उन्हे तथा अन्त के चार आचार्य भगवतो के विचारो को भी सकलित–परिष्कृत कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

महापुरुषो के विचारों का अध्ययन, चिन्तन, मनन करने के साथ ही अपने जीवन को तदनुकूल रूपान्तरित करनें का प्रयास हो।

आचार्यश्री हुक्मीचन्दजी म. सा.

शाश्वत सत्य की खोज मे सर्वात्मना समर्पित होकर पूज्यश्री ने जनता के समक्ष एक ज्वलन्त आदर्श उपस्थित किया था। जिनके जीवन का प्रखर तेज वर्तमान मे भी सर्वदिश् प्रस्तुत होकर जन–मानस मे एक अभिनव जागृति का सन्देश फूक रहा है। निंदा–प्रशसा से सर्वथा दूर पूज्यश्री निपट अपनी आत्म–साधना मे ही तल्लीन रहते थे। पूज्यश्री का एक-एक चिंतन जीवन के शाश्वत सत्य को उद्‌घाटित करने वाला है।

(१) ससार के बतलाए जाने वाले सुख निस्सार है। गृहस्थ लोग जिन वस्तुओ को पाने के लिये विकल रहते हैं, वे वस्तुए अन्ततोगत्वा दु:ख रूप ही बनती है।

(२) आत्मा–शाश्वत, अव्याबाध, अक्षय तथा अविनाशी है। उसे ये बाहर की पीडाए कैसे विचलित कर सकती हैं ?

(३) आत्म-भाव तो विचलित तब होते है, जब कोई शरीर के ममत्व से ग्रसित होकर, सांसारिक सुख–दु:ख के चक्कर मे पड जाता है।

(४) शरीर की पीडा से आत्मा की दु:खानुभूति वास्तविक नही है। क्योकि शरीर के जलने से आत्मा नही जलती, शरीर के मरने से आत्मा नही मरती।

(५) शरीर मेरा नही है, आत्मा मेरी है और मैं आत्मा हू।

(६) शरीर मे चाहे जैसी व्याधि उत्पन्न हो जाय, किन्तु उससे आत्मा रुग्ण नही होती और न ही ऐसा मानना चाहिये।

(७) आत्मा स्वय ही अपने कर्मों की कर्त्ता है और उन कर्मों की भोक्ता भी है।

(८) शुभ कर्मों मे प्रवृत रहे तो अपनी ही आत्मा अपनी मित्र है। किन्तु यही आत्मा अपनी शत्रु भी होती है, जब इसे अशुभ कार्यों में प्रवृत्त होने दी जाती है।



आचार्यश्री शिवलालजी महाराज साहब

आचार्यश्री जो कुछ कहते, उसे पहले जीवन मे क्रियान्वित करते थे। आपश्री के जीवन मे प्रकाण्ड विद्वत्ता के साथ ही उत्कृष्ट तप सयम का भी दुर्लभ सयोग था। इस दुर्लभ सयोग से उद्भूत विचार कितने सजीव हैं। यह पूज्यश्री के दो चार चिन्तन ही स्पष्ट कर देते हैं।

(१) कहना तभी प्रभावशाली होता है, जब वक्ता स्वय तदनुसार आचरण करता हो।

(२) मुक्ति प्राप्ति के लिये प्रखर ज्ञान के साथ विशुद्ध आचार का परिपालन भी उतना ही आवश्यक है, जितना कि शरीर के लिये अन्न, जल, अनिल।

(३) तपानुष्ठान से आतरिक शुद्धि तो होती ही है किन्तु वह शारीरिक शुद्धि का भी महत्वपूर्ण अंग है।

(४) श्रमण-सस्कृति की सुरक्षा सम्यक् ज्ञान पूर्वक शुद्धाचार के परिपालन पर ही सम्भावित है।



आचार्यश्री उदयसागरजी महाराज साहब

पूज्यश्री के विचार इतने प्रखर थे कि लघु सा लघु निमित्त भी उनके जीवन मे विराट् मोड लाने वाला बन जाता था । पूज्यश्री विचारो की गहराइयो मे उतर करके शाश्वत सत्य पाने मे सक्षम थे । पूज्यश्री के विचारो का अल्पतम सकलन प्रस्तुत है । जिनका एक-२ विचार भी अन्तस्तल को झकझोर देता है ।

(१) मन की स्वस्थ दशा मे आश्रम स्थान कर्मों के बन्धक स्थान भी कर्म निर्जरा मे सहायक बन जाते हैं । स्थान का महत्व उतना नही, जितना आत्मा की स्वस्थ अवस्था का महत्व है ।

(२) लघु सा निमित्त भी जीवन का आमूल-चूल परिवर्तन करने वाला होता है । आवश्यकता है, उस निमित को यथार्थता के परिप्रेक्ष्य मे समझने की ।

(३) विनम्रता ही उन्नति का मूलभूत हेतु है । जितनी विनम्रता होगी, उतनी ही अधिक आत्मा समुन्नत बनेगी ।

(४) श्रमण-सस्कृति को रसातल की ओर ले जाने वाली प्रवृत्ति का अपनी मर्यादा में रहकर भी योग्य प्रतिकार नही करना, एक दृष्टि से उस प्रवृत्ति का अनुमोदन करना है ।

(५) अटल-निश्चय के साथ ही लक्ष्यानुरूप पुरुषार्थ करने पर अवश्यमेव कार्य मे ससिद्धि प्राप्त होती है ।

(६) उपकारी के प्रति सदा कृतज्ञता की अभिव्यक्ति निश्चय ही आत्म-जागरण में समर्थ बनती है ।

(७) नियमो के पालन मे अत्यन्त कठोरता क्यो न बाह्यरूप में वर्तमान की जनता को अप्रीति कर लगे,किन्तु निश्चय मे वह आत्म-शोधक के लिए भविष्य को उज्ज्वल बनाने वाली होती है ।



आचार्यश्री चौथमलजी महाराज साहब

आचार्यश्री चौथमलजी म.सा. सम्यक्ज्ञान के साथ क्रिया मे अत्यन्त कठोर थे । उन्हे आचरण के प्रति तनिक भी उदासीनता कतई अभीष्ट नही थी । एक बार जब उनका शरीर अत्यन्त रोग रुग्ण हो चुका था,तब पूज्यश्री लकडी के सहारे खडे प्रतिक्रमण कर रहे थे,तब प्रबुद्ध श्रद्धालु श्रावको ने आपश्री से निवेदन किया कि ऐसी स्थिति मे आप विराजे–विराजे प्रतिक्रमण कर ले तो उपयुक्त रहेगा । तब आचार्य प्रवर ने क्या फरमाया—

पढिये उनके तेजस्वी विचार

(१) श्रावकजी ! उसी स्थिति मे बैठे–बैठे प्रतिक्रमण कर लू तो हानि जैसी कोई बात नही है । लेकिन मेरा यह छोटा सा आचरण भी हानिकारक होगा । मुझे बैठे–बैठे प्रतिक्रमण करते देखकर मेरे साधु फिर सोए-सोए प्रतिक्रमण करने लगेंगे ।

(२) बडे व्यक्ति जो आचरण करते हैं, छोटा व्यक्ति प्राय. सहज ही उसका अनुसरण करने लगता है । चाहे वह आचरण लाभप्रद हो या हानिकारक ।

(३) निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति का विकास सयमीय–मर्यादाओ पर ही मूलत. आधारित है । मूल के कट जाने पर सयमीय मर्यादाओ का विकास हो नही सकता ।

(४) जीवन की सुरक्षा के लिये सयम का आधार आवश्यक है । आधार की स्वच्छता पर ही आधेय स्वच्छ रह सकता है । सयम की स्वच्छता पर ही आधेय जीवन स्वच्छ निर्मल रह सकता है ।

(६) शरीर और आत्मा का विलग बोध प्राप्त करने पर शारीरिक वेदना आत्मा को विशेष पीड़ित नही कर सकती । यह भेद ज्ञान विकसित होने पर ही एक दिन आत्मा, शरीर से पूर्ण विलग होकर परमात्म स्वरूप को जागृत कर सकती है ।

आचार्यश्री श्रीलालजी महाराज साहब

पूज्यश्री बाल्यकाल से ही विलक्षण एवं विचक्षण प्रतिभा के धनी थे । पूज्यश्री की प्रखर प्रतिभा ने बचपन मे ही कई लोगो को आश्चर्यान्वित कर दिया था । पांच वर्ष की अल्पतम उम्र मे प्रतिक्रमण सूत्र याद हो जाना एव लगभग १३-१४ वर्ष मे तो दीक्षा की तैयारी करना माता एव भाई के लिये प्रेरणा स्रोत बना हुआ है । शरीर के विकास के साथ ही पूज्यश्री का बौद्धिक-वैचारिक स्तर भी निरन्तर बढता गया ।

उस समय श्रावक समाज का ध्यान उन विचारो के सकलन की ओर विशेष आकर्षित नही हो पाया । परिणाम स्वरूप पूज्यश्री के विचारो का विशेष कोई सकलन नही हो सका । तथापि जो कुछ जीवन चरित्र में मिलता है, उन्हे यहा अलग से प्रस्तुत किया जा रहा है ।



भ्राता और माता के साथ चर्चा

माता और बडे भ्राता के साथ हुई चर्चा मे पढिये–आचार्य प्रवर के विचार बाल्य काल मे ही कितने प्रखर एव विकसित थे ।

श्रीजी एक कपडे से भगे उसकी खबर नाथूलालजी को मिलते ही वे तुरन्त उन्हे ढू ढने निकले । वे कपासन, निम्बाहेडा हो खबर मिलते ही पीछे टोक आये । उस समय श्रीजी भी टोक आ पहुचे थे । नाथूलालजी ने श्रीजी से यह गद्‌गद् कठ से कहा–"भाई तुम इस तरह घडी-२ चले जाते हो इसीलिये हमे बहुत हैरान होना पडता है और तुम भी तकलीफ पाते हो ।"

श्रीजी–यह तकलीफ तो दूर करना आपके ही हाथ है, दीक्षा की आज्ञा दो कि सब तकलीफ मिट जाय । माजी(वहा हाजर थे) बोल उठे 'दीक्षा लेनी थी तो ब्याह क्यो किया ? तेरे गए बाद इस विचारी का रक्षक कौन होगा ?'

श्रीजी–क्षमा करना माजी, आठ–दस वर्ष के लडके को बिना उसका अभिप्राय लिये माता–पिता ब्याह देते हैं, तब ब्याह क्यो किया ? ऐसा कहने का हक तो होता ही नही । मेरे ब्याह की (ल्हावा लेने की) इतनी उतावल न की होतो तो यह परिणाम भाग्य से ही आता सो भी मैं आपका दोष नही मानता । सब उसके कर्मानुसार ही हुआ करता है फिर मैं किसीके रक्षक होने का दावा भी नही करता । रक्षण करना न करना उससे शुभ कर्म का ही कारण है । काटेडा मे भी मेरी रक्षा उसीने की थी ।

माजी–मैं बैठो हू तब तक तू ससार मे रह और बाद मे सुख से सयम लेना । महावीर स्वामी ने भी माताजी को दु:खी न करने के लिये वे जीवित रहे वहा तक सयम न लिया था भगवान् जैसों ने भी माता की इच्छा रक्खी थी ।

नाथूलालजी–(बीच मे ही बोल उठे) और भगवान ने बडे भाई की इच्छा भी क्या नही रक्खी थी ? माता के लिये २८ वर्ष रहे तो बड़े भाई (नदीवर्द्धन)के लिये दो वर्ष भी रहे ।

श्रीजी–महावीर प्रभु तो तीन ज्ञान के स्वामी थे और मुझे तो एक पल पश्चात् क्या होने वाला है उसकी भी खबर नही । महावीर ही कह गए हैं कि, समय मात्र का प्रमाद नही करना चाहिये ।

माजी–परन्तु पुत्र, मैं एक दिन भी तुझे नही देखती हू तो मेरा आधा रुधिर ओटा जाता है । मुझे तेरी बहुत फिकर रहा करती है । तुझ तो अपने देह की तनिक भी परवाह

नहीं । ऐसी कडकडाती ठड पडती है उसमे एक ही कपडे से भूखा प्यासा २२ कोस तक चला गया और इतना दु ख उठाया । (माजी की आखों मे अश्रु भर आये)

श्रीजी–एक ही बच्चा हो, मा को प्राण से भी अधिक प्यारा हो, उसके सिवाय उसे दूसरा कोई आधार न हो तो भी निर्दय काल उसे भी उठा ले जाता है । ऐसे अनेक उदाहरण अपने सामने प्रत्यक्ष हैं । यह शरीर छोड कर पुत्र चला जाता है, वह दु ख भी माता को सहन करना पडता है । मैं तो घर छोड़ कर जाता हू । यहां आप मेरी सार सम्भाल करते हो वहा मेरे गुरु मेरी सार सम्भाल लेगें । आप मेरे शरीर की ही चिंता करते हो वे तो मेरे शरीर की, मन की और मेरी अविनाशी आत्मा की भी सम्भाल लेंगे । इसलिये आपको दुखित होने का कोई कारण नहो, राजी होकर मुझे आज्ञा दो, आपके आशीर्वाद से मैं सुखी ही होऊगा ।

माजी–मैं प्रसन्न होकर किसी को अपने नयन निकाल लेनें की आज्ञा दे सकू तो तुझे राजीखुशी से दीक्षा की आज्ञा दे सकू । तू चतुर है इसीसे समझ ले और मेरी दया आती हो तो मेरी आखो के सामने रहकर चाहे जितना धर्म ध्यान कर । तुझे मैं कमाने को नही कहती । प्रभु की दया है और भाई जैसा भाई है, तुझे कुछ दु ख नहीं देगा ।

श्रीजी-माजी, आगे पीछे मुझे यह घर छोडना पडेगा ही और लम्बे पाव पसार कर परवश दूसरो के कन्धो पर चढ इस हवेली से निकलना तो पडेगा ही तो अभी ही खडे पाव से स्वयमेव मुझे इस बदीखाने मे से छूटने दो और सिंह की तरह स्वतन्त्र विचरने दो तो क्या बुरा है ?

श्री मृगापुत्र ने अपनी माता से कहा है कि—

जहा किंपागफलाण परिणामो न सुन्दरो
एव भुत्ताण भोगाणं परिणामो न सुन्दरो

श्री उत्तराध्ययन सूत्र १६ अ०

किंपाक वृक्ष के फल देखने में बडे सु दर हैं परन्तु परिणाम भयकर है । उसी तरह ससार के सुख भोगते समय मिष्ट हैं परन्तु परिणाम भयकर दुर्गति मे ले जाने वाला है । श्री कीर्तिकर मुनि ने भी अपने ससार पक्ष के पुत्र सुकोशलकुमार को कुटुम्ब और संसार का सार समझा, उसका जन्म सार्थक किया था, जिससे पुत्र का श्रेय हो उसमे माता को अन्तराय न देना चाहिये ।

माताजी कुछ बोल न सके उनका हृदय भर आया, आखों से अश्रु प्रवाह प्रारम्भ हुआ नाथूलालजी की चकोर चक्षुओ ने भी माताजी का अनुकरण किया । इस करुणा रसपूरित नाटक के समय श्रीजी के हृदयसागर में तो ऐसी ही तरंगे उठ रही थी कि—

अनित्यानि शरीराणि, विभवो नैव शाश्वतः ।
नित्य सन्निहितो मृत्युस्तस्माद्धर्मं च साधयेत् ।।

श्रीजी बाहर की हवेली मे जाने के लिये उठ खड़े हुए और मातुश्री को आश्वासन देते बोले—मातुश्री, आपके ससार मोह के अश्रु आपकी मस्तिष्क की गर्मी को शात करते हैं तो भी उन्हे देखकर मुझे दु ख होता है ।

परन्तु मातुश्री, आप क्या नही जानते कि बार—बार होते हुए जन्म, जरा और मृत्यु के अनंत दुःखो के सामने यह दु ख किस गिनती मे है । आपको दु ख हुआ इसीलिये क्षमाता हू। माजी, यह तो आपका अनुभव किया हुआ आप भूल जाते हैं कि—

नो मे मित्रकलत्रपुत्रनिकरा नो मे शरीर त्विदम् ।

मित्र, कलत्र, पुत्र, शरीर आदि में से कोई भी अपना नही ।

'सम्बन्धी जन स्वार्थी अर्थी सघला अंते रहे वेगला'

"व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती,
रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति देहम् ।
आयु परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो,
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ।।

जरा बाघनी और रोग शत्रुओ के सदा प्रहार होते भी स्वार्थान्ध मनुष्य गफलत मे पड़े रहते हैं, परिणाम यह होता है कि छिद्र वाले घड़े के जल की तरह यह पुण्यायु कम होता जाता है और मन की मन मे ही रह जाती है ।

माजी, सत्य मानिये कि मेरा वैराग्य मेरा, लाख या काष्ठ के गोला जैसा नही है । परन्तु मिट्टी के गोला जैसा है । उपसर्ग की अग्नि से वह अधिकाधिक परिपक्व होगा । इसलिये अब भी जो परिषह प्राप्त होंगे वे हसमुख से सहन करूगा यह दृढ समझिये । ऐसा कह श्रीजी चले गए ।

इन शब्दो ने माजी और भाई के मान पर बिजली जैसा असर किया, उसके परिणाम मे उन्हे उपाश्रय जाने की परवानगी मिली और किसी प्रकार का परिसह न देना निश्चय किया।

एक समय बातचीत मे श्रीजी ने दर्शाया था कि.—

लक्ष्मी तणो आ वास, ऐवी राज्य गादी ने तजी
भावे थकी भिक्षुक थई, भागी गया को भरत जी ?

अपन तो किस गिनतो मे हैं । अपने भगवान का यही उपदेश है कि, क्षण मात्र भी प्रमाद मत करो कारण कि—

इन्द्रिय सर्व अखंडित छे, तन साव निरोगी अने बल पूरू
बुद्धिविचार, विवेक, सहायक, साधन, अन्य न कोई अधुरू
उठ अरे ? अभिमान तजी कर उद्यम केम रह्यो करजोडी
वेश घणा धरवां तुजने पण पाछल रात रही बहु थोडी
सुंदर आ तन ते क्षणभगुर भाई—अचानक छे पडवानु
'केशव' आलस आज करो पण पाछल थी नही को थवानु

(२)

संयम का सम्बन्ध है

(साधु जीवन के पालन करने और करवाने मे आचार्य प्रवर कितने कठोर थे, यह उनके निम्नोक्त विचारो से स्पष्ट हो जाता है ।)

अपने धर्म की सगाई है अणगार धर्म की मर्यादा मे रहने वाले साधुओ को ही मैं मेरे साधु मान सकता हू । यदि इस मर्यादा का कोई उल्लघन करे तो उसके साथ समाचारी के सम्बन्ध को भग करने मे मैं तनिक भी सकोच न करू इसका कारण यह है कि, जिस कर्तव्य के लिये कुटुम्बियो और ससार के सम्बन्ध को छोड़ा है उस कर्तव्य में अन्तराय करने वाले का साथ और सबध त्याज्य है ।

उचित रीति से विचारे तो मालूम हो कि,सहकार की भी सीमा हो सकती है । शास्त्र की प्रतिष्ठा और चारित्र्य के आदर्श जब तक उज्ज्वल रहे तब तक ही सहकार सम्भव रह सकता है, तत्पश्चात् उसकी हद पूरी होते ही असहकार ही आवश्यक है । छाती पर पत्थर बाधकर अपार समुद्र नहीं तैर सकते । किस हेतु न्याय और कौनसी नीति साधने से सहकार या असहकार करना पडता है इसका गम्भीर विचार किये सिवाय किसी प्रकार भी अनुमान नही कर सकते । भारी और व्यवस्थितशासन के बिना प्रगति असम्भव ही है । किसी भी कार्य मे अव्यवस्था घुसी, असाधुधी और गडबड बढती गई । विष प्रचारक चेप रोकने का उत्तम रामबाण उपाय असहकार है । समाचारी यह सहकार का माप देखने का थर्मामीटर यत्र ही है ।

बहिरंग के साथ अन्तरग में भी साधुत्व हो

शरीर से साधु होने के साथ ही मन से भी साधु हो । मस्तक मुडाने के साथ ही मन को भी मूडा हुआ समझे तभी त्याग का शुद्ध लावा ले सकते हैं । कहा है—श्वेत कपड़े पहिने हैं पर श्वेत दिल नही ।' सत्य कहता हू मैं यारो—निज धर्म को चीन्हा नही ।

संघ एकता

जो समाज को ऐक्यता का सबक सिखाने के लिये ससार त्यागी हुए हैं उनको कतर कर खाने वाला अनैक्यतारूपी कीडा निकल जाय और पूर्ववत् सुख शाति के साथ शासन की

श्रीजी वाहर की हवेली मे जाने के लिये उठ खडे हुए और मातुश्री को आश्वासन देते वोले—मातुश्री, आपके ससार मोह के अश्रु आपकी मस्तिष्क की गर्मी को शात करते हैं तो भी उन्हे देखकर मुझे दु ख होता है ।

परन्तु मातुश्री, आप क्या नही जानते कि बार–बार होते हुए जन्म, जरा और मृत्यु के अनत दु खो के सामने यह दु ख किस गिनती मे है । आपको दु.ख हुआ इसीलिये क्षमाता हू। माजी, यह तो आपका अनुभव किया हुआ आप भूल जाते हैं कि—

नो मे मित्रकलत्रपुत्रनिकरा नो मे शरीर त्विदम् ।

मित्र, कलत्र, पुत्र, शरीर आदि मे से कोई भी अपना नही ।

'सम्वन्धी जन स्वार्थी अर्थी सघला अ ते रहे वेगला'

"व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती,
रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति देहम् ।
आयु परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो,
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ।।

जरा वाघनी और रोग शत्रुओ के सदा प्रहार होते भी स्वार्थान्ध मनुष्य गफलत मे पडे रहते हैं, परिणाम यह होता है कि छिद्र वाले घडे के जल की तरह यह पुण्यायु कम होता जाता है और मन की मन मे ही रह जाती है ।

माजी, सत्य मानिये कि मेरा वैराग्य मेरा, लाख या काष्ठ के गोला जैसा नही है । परन्तु मिट्टी के गोला जैसा है । उपसर्ग की अग्नि से वह अधिकाधिक परिपक्व होगा । इसलिये अब भी जो परिषह प्राप्त होगे वे हसमुख से सहन करूंगा यह दृढ समझिये । ऐसा कह श्रीजी चले गए ।

इन शब्दो ने माजी और भाई के मान पर विजली जैसा असर किया, उसके परिणाम मे उन्हे उपाश्रय जाने की परवानगी मिली और किसी प्रकार का परिसह न देना निश्चय किया ।

एक समय बातचीत मे श्रीजी ने दर्शाया था कि.—

लक्ष्मी तणो आ वास, ऐवी राज्य गादी ने तजो
भावे थकी भिक्षुक थई, भागी गया को भरत जी ?

अपन तो किस गिनती में हैं । अपने भगवान का यही उपदेश है कि, क्षण मात्र भी प्रमाद मत करो कारण कि—

का काम करने वाले को डूबने का डर भी पहिले है उसी प्रकार सैन्य में आगे चलने वाले सेनापति को तीर, भाला, बन्दूक, तलवार आदि शस्त्रास्त्रो के आघात भी सहन करने पड़ते हैं। आगे चलने वाले की हिम्मत धैर्य बहादुरी पर ही पीछेवालों की विजय निर्भर है। आगे चलने वालो की बुद्धि की, पीछे वाले लोगो के हृदय पर परछाई पडती है।

(६)

गृहस्थ से अगम्य, पर साधु के गम्य

ससार व्यवहार मे फसा हुआ प्राणी जो कुछ नही देख सकता है, उसी प्रकार की अपूर्वता त्यागी मुनि देख सकते हैं। उनके अलिप्त रहने से वे सामान्य मनुष्य को अगोचर हो ऐसे भी कुछ-कुछ पदार्थों का अनुभव कर सकते हैं। प्राकृतिक नियमो को स्वय समझने एवं समझाने का उन्हें पूरा अवकाश मिलता है।

(७)

दीक्षार्थी को दिया गया सन्देश

भाई, तुम घर, कुटुब इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु सयम का कार्य महान् दुष्कर है। अनुभव हुए बिना कितनी ही बातें ध्यान मे भी नही आती, इसलिये पूर्ण विचार कर यह साहस करो, फिर दूसरी यह बात भी याद रखना कि जब तक तुम पच महाव्रत शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहा तक मैं तुम्हारा साथी हूं, अगर उसमें जरा भी दोष लगाया कि मैं तुम्हारा साथ छोड दूगा, तुम्हारे और मेरे धर्म की ही सगाई है।

(८)

आलोचना और विद्यार्जन

ग्रीष्म का सख्त ताप और त्याग की दिव्य ज्योति आलोचना से ही देदीप्यमान हो जाती है। गफलत करने से—आलसी रहने से विद्या विदा होने लगती है और विद्या-हीनता से विवेक भ्रष्टता होने से आत्मिक उत्कर्ष को अतराय लगती है।

(९)

किसे सुधारा जाय ?

रोगियो को सुधारने की औषधियों के बदले इस जडवाद के समय में अनीतिवान्, आलसी, व्यर्थ जीवन बिताने वालों को सुधारने की सस्थाए कायम होनी चाहिये। शास्त्र सदुपदेश के श्रवण रूपी औषध सह नीतिमय जीवन का अनुपालन होना चाहिये।

विजय ध्वजा फहरे यह दशा देखकर किसका हृदय हर्ष से आल्हादित न हो। हां किंतु इस हर्ष को सजीवन रखने के लिये महात्मा श्री गांधीजी के निम्नांकित वचनामृत मुनिराजो को अपने हृदय पर अंकित कर लेने चाहिये। ये वचन ऐसे हैं मानो श्री महावीर प्रभु की आज्ञाए ही प्रतिध्वनित हो रही हो। समाधानकर्त्ता को बदले या सौदे के रूप मे मत समझो। मैत्री यह कुछ सौदा नही है। यह तो केवल धर्म और प्रेम सम्बन्ध है। जो सेवा है वही धर्म है और जो धर्म है वही ऋण (फर्ज) है। यदि उस ऋण को नही चुकाना है तो पाप के भागी होइये। अपने सामने वाले के व्यवहार की जिम्मेवारी उसी पर डालना योग्य है। क्योंकि, जितना विशेष दबाव डाला जावेगा उतना ही विशेष विरोध (वैर) होना सम्भव है। इसलिये प्रतिपक्षी (सामने वाले) को वर्ताव की जिम्मेवारी उसके खानदान और कर्तव्य का खयाल करके यह विषय उसी पर छोड़ देने मे ही बडी से बड़ी सेवा भरी हुई है। यह आत्मशुद्धि का मार्ग है। यह तपश्चर्या आत्मयज्ञ है।

(३)

सुमर्यादा ही साधु जीवन है

जैसे जहाज का आधार उसके योग्य कप्तान पर है, रेल्वे ट्रेन का आधार एंजिन की ब्रेक पर है, और घडी का मुख्य आधार उसकी मुख्य कमानी पर है। उसी प्रकार मुनि जीवन का आधार शुद्ध चारित्र पर है। जैसे आकाश मे चन्द्र, सूर्य ग्रहादि अपनी नियमित चाल से चल रहे हैं। उसी प्रकार ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का नियत नियमानुसार ही साधु जीवन होना चाहिये।

(४)

समस्या का समाधान कैसे हो ?

दीर्घ दृष्टि से शांतिपूर्वक समाधान करके समाज की रक्षा करना यह पहिला धर्म है। आवेश के वेग मे और पक्षापक्ष रूपी अंधेरे मे पड़कर अपना लक्ष्य नही चूकना चाहिये। अपने विपक्षी के दोषो (अवगुणो, ऐबो) का प्रदर्शन कराना (बताना) और उसको निर्बलता के गीत गाते रहना यह कुछ चतुराई और विचारशीलता नही है। सासारिक लोगो की दृष्टि मे किसी को गिरा देने की अपेक्षा, यह उस प्रकार की भूलें (गलतिया) पुन. न करें, ऐसा धार्मिक या नैतिक दबाव देना यही बात साधुओ को शोभा देती है और अपने पूर्वजो की महापरिश्रम से रक्षा करके रखी हुई चारित्र–कीर्ति विशेष उज्ज्वल बनाती है।

(५)

आगे कैसे चला जाय ?

शुद्ध सयम का पालना तलवार की धार पर चलने के समान है (वैराग्य पथ खगधार) घोडे पर चढने वाला पडता भी अवश्य है। भोजन बनाने वाला अग्नि से जलता भी है, खलासी

का काम करने वाले को डूबने का डर भी पहिले है उसी प्रकार सैन्य में आगे चलने वाले सेना पति को तीर, भाला, बन्दूक, तलवार आदि शस्त्रास्त्रो के आघात भी सहन करने पड़ते हैं। आगे चलने वाले की हिम्मत धैर्य बहादुरी पर ही पीछेवालो की विजय निर्भर है। आगे चलने वालो की बुद्धि की, पीछे वाले लोगो के हृदय पर परछाई पड़ती है।

(६)

गृहस्थ से अगम्य, पर साधु के गम्य

ससार व्यवहार मे फसा हुआ प्राणी जो कुछ नही देख सकता है, उसी प्रकार की अपूर्वता त्यागी मुनि देख सकते हैं। उनके अलिप्त रहने से वे सामान्य मनुष्य को अगोचर हो ऐसे भी कुछ-कुछ पदार्थों का अनुभव कर सकते हैं। प्राकृतिक नियमो को स्वय समझने एव समझाने का उन्हे पूरा अवकाश मिलता है।

(७)

दीक्षार्थी को दिया गया सन्देश

भाई, तुम घर, कुटुब इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु सयम का कार्य महान् दुष्कर है। अनुभव हुए बिना कितनी ही बातें ध्यान मे भी नही आती, इसलिये पूर्ण विचार कर यह साहस करो, फिर दूसरी यह बात भी याद रखना कि जब तक तुम पच महाव्रत शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहा तक मैं तुम्हारा साथी हूं, अगर उसमे जरा भी दोष लगाया कि मैं तुम्हारा साथ छोड दू गा, तुम्हारे और मेरे धर्म की ही सगाई है।

(८)

आलोचना और विद्यार्जन

ग्रीष्म का सख्त ताप और त्याग की दिव्य ज्योति आलोचना से ही देदीप्यमान हो जाती है। गफलत करने से–आलसी रहने से विद्या विदा होने लगती है और विद्या-हीनता से विवेक भ्रष्टता होने से आत्मिक उत्कर्ष को अ तराय लगती है।

(९)

किसे सुधारा जाय ?

रोगियों को सुधारने की औषधियों के बदले इस जडवाद के समय में अनीतिवान्, आलसी, व्यर्थ जीवन बिताने वालो को सुधारने की सस्थाए कायम होनी चाहिये। शास्त्र सदुपदेश के श्रवण रूपी औषध सह नीतिमय जीवन का अनुपालन होना चाहिये।

(१०)

प्रयत्न क्यों न सफल हो ?

दृढ आत्मवल हो, तुममे अचल आत्मश्रद्धा, आत्मशक्ति का विश्वास हो और तुम परोपकार के लिए आत्मभोग देने को तैयार हो तो तुम्हारा प्रयत्न क्यो न सफल हो ? अवश्य होगा।

(११)

व्यावहारिक शिक्षण

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देश कालानुसार व्यावहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा की योजना होने से उच्च भावना की लहर रग-रग मे प्रसर जाती है। बारह व्रतादि जैन नियम जो व्यवहार वैद्यक और नीति शास्त्र के अनुसार ही योजित हुए हैं उनका सत्य रहस्य समझाने एव इस अमृत के पान के कराने वास्ते जमाने के अनुकूल और आकर्षक शिक्षा पद्धति बाधी जाय तो अपने भविष्य-रत्न उसमे चचुपात करने को अवश्य ललचायेंगे। श्रीयुत देशाई सत्य कहते हैं कि मनुष्य उत्क्राति पाकर पशु आदि प्रवृत्तियो से निवृत्त मनुष्य-जीवन मे दाखल हुआ है उसे दिव्य जीवन कैसे विताना और उस दिव्य जोवन को बिता, सिर्फ आनन्दमय जीवन सत्चिद् घनानदमय जीवन अत मे किस रीति से प्राप्त करना, यही सिखाना धर्म है।

जड़ पर अध्यात्म का आधिपत्य हो

यूरोप मे जड-वल का जोर और आध्यात्मिक वल की अनुपस्थिति लडाई के समय प्रकट हो जाती है। जड़ वल पर आध्यात्मिक बल का प्रभुत्व होना अवश्य जरूरी है, जब तक इस बल की सत्ता न झुकेगी वहा तक कायम को सुलह शाति दृष्टिगोचर नही हो सकती।

कहानी से स्पष्टीकरण

एक सेठ के यहां कई गाये और भैसें थी। सेठानी बहुत भली और दयालु थीं, जिससे ग्राम के लोगो को पोले हाथ छाछ देने लगी। एक दिन सब छाछ खूट गई, बाद एक बाई छाछ लेने आई, तब सेठानी ने निरुपाय हो उसे इन्कार किया। फिर दो चार दिन बाद भी यही हाल हुआ। जिससे वह स्त्री सेठानी पर क्रोधित हो बोली कि ग्राम के सब जनो को छाछ देती है फकत मुझे ही तू बार-बार निराश कर पीछा लौटने को कहती है, परन्तु अब याद रखना ऐसा कहकर क्रोधावेश मे वह चली गई और फिर कभी छाछ लेने न आई।

इस बात को थोडे ही दिन बीते होंगे कि एक दिन वह स्त्री पानी का बेवडा लिये हुए नदी की ओर मे घर को आ रही थी जब सेठ की दुकान के समीप आई तब माथे पर का

]

बेवडा फेंक दिया और खूब जोर से सिर धुनने और होहा करने लगी । बाजार के हजारो लोग इकट्ठे हो गये । मन्त्रवादी, भोपे प्रभृति आये और उसे पूछने से वह कहने लगी कि मैं फला सेठानी हू, गाय भैंस इत्यादि हैं, वे तो मेरे पति (सेठ की) की लाई हुई है, मैं उनकी मालकिन हू किसी को छाछ देना न देना मेरी इच्छा की बात है, यह राड (स्वय) मेरे यहा छाछ लेने आई और मैंने इन्कार कर दिया तो मुझे कई गालिया और श्राप दे चली गई । अब मैं इसे जीवित नही छोड़ूगी । सेठ भी उस भीड मे थे । अपनी स्त्री पर ऐसा कलक आता देख वे शरमिंदा हो गए । बिचारी भली सेठानी इस बात से बिल्कुल अज्ञात थी, वह बिल्कुल निर्दोष थी, छाछ लेने वाली बाई का ही यह सब प्रपच था, तो भी सब ग्राम मे वह सेठानी डाकन के सदृश गिनी जाने लगी और सबने उसके साथ का व्यवहार बद कर दिया । इस तरह अज्ञान और सशयी मनुष्य विचारे निर्दोष व्यक्ति पर मिथ्या आल चढा उसको जिंदगी बर्बाद कर देते हैं, परन्तु बदकाम का नतीजा बद ही होता है, आज तुम्हारे पर किसी ने मिथ्या कलक चढाया है तो तुम्हे कितना दु ख होगा, इसका विचार कर उसके साथ ऐसा व्यवहार रखो कि जैसा व्यवहार दूसरो से तुम अपने साथ रखना चाहते हो । 'आत्मन प्रतिकूलानि परेषा न समाचरेत्' यह मन्त्र खूब याद रक्खो । इसका यह मतलब है कि जो-जो बाते, क्रियाए, चेष्टाए तुम्हारे प्रतिकूल है दूसरो के द्वारा जो व्यवहार होता है वह तुम्हे नापसद हो, उसे अहितकर दु खदाई समझते हो तो तुम वैसा व्यवहार दूसरो के साथ भी मत करो ।

राजाओ के प्रति

आप सूर्यवशी हैं, दिलीप से गोपालक, हरिश्चन्द्र से सत्यवादी और रामचद्रजी से समान धर्मधुरधर महात्माओ ने जिस वश को पावन किया था उसी वश मे आप उत्पन्न हुए हैं। अभी आप रामचद्रजी की गादी पर हैं इसलिये आपको धर्म की पूर्ण रक्षा करनी चाहिए । जीवो की रक्षा करना यह आपका परमधर्म है । जैन धर्म की ओर, जैन साधुओ की ओर आप प्रेम तथा बहुत मान की दृष्टि से देखते हैं यह देख मुझे बडा आनद होता है । आपके पूर्वज भी जैन धर्म की ओर हमेशा सहानुभूति रखते थे और आपके पिताश्री (वर्तमान नरेश) दयाधर्म की ओर पूर्ण ध्यान रखते हैं । महाराणा साहिब के दयामय कार्यों की मैंने बहुत-बहुत प्रशसा सुनी है । उन्होंने धर्म की रक्षा कर शिशोदिया के कुल को दिपाया है, आप भी उनका अनुसरण कर धर्म की रक्षा करेंगे । पूर्व मे धर्म की रक्षा करने से ही मनुष्यदेह, उत्तम कुल और राज्य वैभव मिला है, आप सभी मनुष्यो के राजा हैं, परन्तु धर्म की विशेष रक्षा करने से देवो के राजा (इन्द्र) भी हो सकते हैं ।

आप कर्तव्यपरायण बने, दया पाले और धर्म निबाहे । यही हमारे लिये भारी से भारी लाभ का कारण है ।

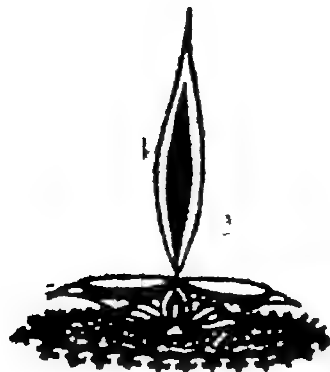


आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.

विलक्षण तेज पुज आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा. यद्यपि साधुमार्गी सघ के ही अनुशासक थे, तथापि आपश्री के आगम सम्मत विश्वव्यापी विचारो का प्रभाव भारत के कोने-२ मे फैला हुआ था।

जिस समय भारत परतत्र था, उस समय देश के बड़े-बड़े राष्ट्रभक्त नेता स्वतन्त्रता के आदोलन मे भाग ले रहे थे। भारत भर मे महात्मा गाधी के अहिसक-आदोलन की एक लहर सी फैल गई थी। उस समय आचार्य प्रवर के राष्ट्र धर्म के प्रति तेजस्वी विचार प्रायः प्रवचनो के माध्यम से मुखरित होते रहते थे। खादी परिधान, अल्पारम्भ-महारम्भ की व्याख्याओ ने भारतीयो के आतरिक जीवन से कितने ही अशो मे परतन्त्रता को हटाने का महत्वपूर्ण योग-दान दिया है। महात्मा गाधी के वाक्य–'भारत मे दो जवाहर हैं। राजनीतिक क्षेत्र मे पण्डित जवाहरलाल नेहरू और धार्मिक क्षेत्र मे आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.।' यह स्पष्ट कर देते हैं कि आचार्य के वैचारिक परिवेश का जनता पर कितना गहरा प्रभाव था।

आचार्य प्रवर ने जैन समाज मे व्याप्त कुपरम्पराओ को हटाने मे ही योगदान नही दिया अपितु भारतीय जनता के दूषित विचारो को हटाने मे भी महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। वर्तमान मे आचार्यश्री के विचारो का सकलन जवाहर किरणावली, सद्धर्ममण्डन, अनुकम्पा विचार आदि ग्रन्थो मे मिलता है। प्रस्तुत में कुछेक विचारो का सकलन ही प्रस्तुत किया जा रहा है।



सच्चा सुख

आनन्द आत्मा का ही गुण है । उसे पर पदार्थों के सयोग मे खोजने का प्रयास करना भ्रम है । सत्य तो यह है कि जितने अ शो मे पर का सयोग होगा उतने ही अ शो मे सुख की न्यूनता होगी । आत्मा जब समस्त सयोगो से पूर्ण से मुक्त हो जाता है तभी उसके स्वाभाविक पूर्ण सुख का आविर्भाव होता है । यह स्वाभाविक सुख ही सच्चा सुख है । पर के निमित्त से सुख होने वाला सुख, सुखाभास है—सुख का मिथ्या सवेदन है ।

आनन्द जीव का स्वभाव है । ससारी जीव उस स्वाभाविक आनन्द का अनुभव नही कर पाते । उसकी ओर उनका बहुत कम ध्यान जाता है । वे विषय जन्य इन्द्रिय सुख मे ही मग्न रहते है । यह इन्द्रियानन्द स्वाभाविक सुख का विकार है । यह सुख परावलम्बी है । प्रथम तो वह ससार की भोग्य वस्तुओ पर अवलम्बित है और दूसरे इन्द्रियो पर आश्रित है । इन दोनो का सयोग मिल जाने पर अगर सुख का उदय होता है तो भी वह क्षणिक है । अल्प काल तक ही ठहरने वाला सुख भी परिमित है और विघ्न बाधाओ से व्याप्त है । न जाने कब, किस क्षण कोई महान् विघ्न उपस्थित हो जाता है और वह सारे सुख को घोर दु ख मे परिणत कर देता है । प्रात काल जहा आनन्द मङ्गल होता है, बधाइया बजती हैं, सध्या समय वहा हाय-हाय मच जाती है ।

कदाचित तीव्र पुण्य के उदय से कोई विघ्न उपस्थित न हो तो भी विषय सुख सदा विद्यमान नही रह सकता । क्योकि यह सुख विषयो के सयोग से उत्पन्न होता है और 'सयोगास्ते हि वियोगान्ता.' सयोग का फल निश्चित रूप से वियोग ही है ।

इस कथन के अनुसार विषय-सामग्री का वियोग हुए बिना नही रह सकता और उस समय मे अथवा जीवन के अन्त मे सुख का नाश अवश्यमेव हो जाता है ।

इस विषय सुख में एक बात और है । बिना आरम्भ-परिग्रह के यह सुख हो ही नही सकता और आरम्भ-परिग्रह पाप के कारण हैं । पाप दु ख का कारण है । अतएव यह सुख दु ख का कारण है ।

मधु से लिप्त तलवार की धार चाटने से जो सुख होता है और उस सुख के फल-स्वरूप जितना दु ख होता है उतना ही दु.ख विषय-जन्य सुख भोगने से होता है । अतएव ज्ञानीजन इस सुख को घृणा की दृष्टि से देखते हैं । उनका मन इस ओर कभी आकृष्ट नही होता । वे अन्तरात्मा के अनिर्वचनीय, असीम, अनन्त और अव्याबाध सुख की खोज मे लगे रहते

है। वही सुख सच्चा सुख है। उसमें दुःख का स्पर्श भी नही होता। यही आत्मा का स्वरूप है और 'आनन्द' शब्द से यहा उसी का ग्रहण किया गया है।

परमात्मा की प्राप्ति

सारा ससार एक भ्रम मे पडा हुआ है। परमात्मपद की प्राप्ति मे जो पदार्थ विघ्न रूप हैं, उन्ही को वह कल्याणकारी मान रहा है। आत्मा स्वय परमात्मा बनना चाहता है, पर ठीक विपरीत दिशा मे प्रयाण करता है। फल यह होता है कि समीपता के बदले दूरी वढती जाती है। अतएव इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि परमात्मा की प्राप्ति के उद्देश्य से हमारा प्रत्येक कदम अनुकूल ही पडे, प्रतिकूल नही। जिन वस्तुओ का ससर्ग इस ध्येय में बाधक हो, उनका परित्याग करना चाहिए। इस प्रकार करने से परमात्मा के साथ भेंट हो सकती है।

भगवद्-भक्ति

अगर मुझसे कोई प्रश्न करे कि परमात्मा को प्राप्त करने का सरल मार्ग क्या है? तो मैं कहूगा—परमात्मा की प्राप्ति का सरल मार्ग परमात्मा की प्रार्थना करना है। अनन्य भाव से परमात्मा की प्रार्थना या भक्ति करने से परमात्मा का साक्षात्कार हो सकता है।

यह पूछा जा सकता है कि परमात्मा की प्रार्थना किस प्रकार करनी चाहिए? वास्तव मे परमात्मा की प्रार्थना की विधि का ज्ञान होना आवश्यक है। किंतु प्रार्थना विधि का परिज्ञान भक्तजनो के चरित्र मे निहित है। भक्त अपना चरित्र छोड़ गये हैं और कह गये हैं कि हम जिस मार्ग पर चले हैं उसी मार्ग पर तुम भी चले आओ और हमने जो स्थिति प्राप्त की है, तुम भी वही स्थिति प्राप्त करो।

राष्ट्र-धर्म

जिस कार्य से राष्ट्र सुव्यवस्थित होता है, राष्ट्र की उन्नति-प्रगति होती है, मानव समाज अपने धर्म का ठीक-ठीक पालन करना सीखता है, राष्ट्र की सम्पत्ति का सरक्षण होता है, सुख-शांति का प्रसार होता है, प्रजा सुखी वनती है, राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढती है और कोई अत्याचारी परराष्ट्र, स्वराष्ट्र के किसी भाग पर अत्याचार नही कर सकता, वह कार्य राष्ट्रधर्म कहलाता है।

सुधार का राजमार्ग

कोई आदमी कितना ही बुरा क्यो न हो, फिर भी वह चण्डकौशिक सर्प सरीखा तो नहीं होगा। भगवान् ने उस विगडे हुए को सुधारने के लिए बन्धुता प्रकट की थी। अतएव मारपीट कर विगडो को सुधारने के लिए बिगडी का मार्ग अपनाना और उससे सुधारने की आशा

करना एकांत भूल है। सुधार का जो मार्ग भगवान् ने अपने जीवन-व्यवहार द्वारा प्रकाशित किया है, वही सुधार का राजमार्ग है।

खादी मे अल्प-आरम्भ

जहा तक तुम गृहस्थ हो, वहा तक महा-आरम्भ का त्याग करने के लिए अल्प-आरम्भ का आश्रय लिए विना काम नही चल सकता। किसी मासाहारी को मास-भक्षण त्यागने का उपदेश दिया जाय, तो यह नही कहा जा सकता कि तुम भूखो मर जाओ। उसे तो यही कहना होगा कि तुम्हारा जीवन अगर शुद्ध और सात्विक आहार से टिक सकता है तो अशुद्ध मास-भक्षण का त्याग करो। मास का त्याग करने वाले को आखिर अन्न का आधार तो चाहिए। इस प्रकार जब महा-आरम्भ का त्याग करना हो तो अल्प-आरम्भ का आश्रय लेने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नही है।

गाधीजी महा-आरम्भ का त्याग कराते हैं। जो स्वय महा-आरम्भ का त्याग करता है और दूसरो से त्याग कराता है, वह अहिंसक है। इस प्रकार हिंसा के त्याग की बात स्वीकार करना जैन दृष्टि से न बुरा है और न पापमय ही। इस बात को भलीभाति समझ कर खादी के और चर्बी लगे कपडो मे से, जिसमे महा-आरम्भ हो उनका विवेक के साथ त्याग कर देना चाहिये। ऐसा करने से तुम्हारा कल्याण होगा।

चर्बी के वस्त्र

साधु-सतो की यह विशेष जिम्मेवारी है कि वे तुम सब से चर्बी के वस्त्रो का त्याग करावें। साधु-सत अपनी जिम्मेवारी को समझें तो अहिंसा का पालन हो सकता है और तुम से चर्बी के वस्त्रो का त्याग भी कराया जा सकता है, किंतु जब तक वे स्वय चर्बी के वस्त्रो का त्याग नही करते, तब तक दूसरो से कैसे करा सकते हैं। अगर त्याग करने का उपदेश भी देवें तो उसका प्रभाव ही क्या पड सकता है? गाधीजी स्वय तो चर्बी के वस्त्र पहने और दूसरो से त्याग करने को कहे तो उनके कथन का जनता पर असर नही पडेगा। इसी प्रकार साधुवर्ग जब तक स्वय चर्बी के वस्त्रो का त्याग नही करता, तब तक उसके उपदेश का रचमात्र भी प्रभाव नही पड सकता।

कोई यह कह सकता है कि-साधु गृहस्थ के घर से वस्त्र लाते हैं। इस अवस्था मे उन्हें जैसे मिल जाते हैं वैसे ही पहनने पडते हैं। पर इस कथन में कोई जान नही है। जब चर्बी के वस्त्र उन्हे मिल जाते हैं, तो तलाश करने पर क्या बिना चर्बी के-खादी के वस्त्र नहीं मिल सकते। अतएव सर्वप्रथम साधुओ को चर्बी के कपडो का त्याग करना चाहिए। बाद मे दूसरो को उनके त्याग का उपदेश देना चाहिए। जिन चर्बी के वस्त्रो के लिए घोर हिंसा की जाती है उन वस्त्रो का त्याग करना ही तुम्हारे लिए उचित है। अगर तुमने अहिंसा को समझा

तुम्हारे सामने कोई आकर बैठ जाय तो इतने से ही तुम्हारा क्रोध उमड पडता है । क्या दया धर्म के अनुयायी होने के कारण ऐसा होता है ? हाथी के मडल मे अनगिनती जानवर घुस आये थे और तिल भर भी जगह न रहने दी थी । बेचारे एक खरगोश को कही जगह न मिलती थी । वह बडी मुसीबत में था । इतने मे ही हाथी ने पैर ऊचा किया । हाथी का पैर ऊचा करना था कि खरगोश उस खाली हुई जगह मे बैठ गया । हाथी चाहता तो खरगोश पर पैर रख देता और कुचल देता, किंतु दया से द्रवित हाथी ने ऐसा नही किया । उसने अपना पैर उचा ही रक्खा । हाथी जानता था, सच्चा घर वही है जहा दीन-दुखियो को विश्राम मिलता है । घर आया अतिथि कष्ट न पावे,इस बात का ध्यान रखने वाला ही सच्चा घर-मालिक है । हाथी को ऐसा उदार विचार आया । इस विचार के कारण हाथी ने बीस प्रहर तक अपना एक पैर अधर उठा रक्खा–नीचा नही किया । हाथी जैसे स्थूल शरीर वाले प्राणी के लिए तीन पैरो पर इतने लम्बे समय तक खडा रहना कितना कष्टकर है । मगर हाथी ने इसे कष्ट नही, आनन्द माना । परिणाम यह हुआ कि हाथी मर कर प्रसिद्ध मगध सम्राट् श्रेणिक का पुत्र हुआ ।

जब इस प्रकार का दयाभाव हृदय मे प्रकट हो तो सम्यक्त्व का सद्भाव समझना चाहिए । सम्यग् दृष्टि इस बात का विचार रखता है कि उसके रहन–सहन, खान–पान आदि से कितने जीवो को क्या कष्ट पहुच रहा है । तुम अपने विषय मे इस प्रकार सावधान रहोगे तो हिंसा से बच सकोगे और अपना तथा दूसरो का कल्याण करोगे ।

वीर्य का दुरुपयोग

देश मे आज जो रोग, शोक, दरिद्रता आदि जहा–तहा दृष्टिगोचर होते हैं उन सब का एकमात्र कारण वीर्यनाश है । आज बेकार वस्तु की तरह वीर्य का दुरुपयोग किया जा रहा है । उसी मे आनन्द माना जा रहा है । ऐसा करने से जब अधिक सतान उत्पन्न होती है तो घबराहट पैदा होती है पर उनसे मैथुन त्यागते नही बनता । भारतीयो को इस प्रश्न पर गहरा विचार करना चाहिए । विदेशी लोग ब्रह्मचर्य की महत्ता भले ही न समझते हो या स्वीकार न करते हो, परन्तु भारत मे तो ऐसे महान् ब्रह्मचारी हो गये हैं जिन्होने ब्रह्मचर्य द्वारा महान् शक्ति लाभ कर जगत् के समक्ष यह आदर्श उपस्थित कर दिया है कि ब्रह्मचर्य ही कल्याण का मार्ग है । यह समझते–बूझते हुए भी विषय-भोग मे सुख मानना और जब सतान उत्पन्न हो तो उसका निरोध करने के लिए कृत्रिम उपाय काम मे लाना, घोर अन्याय है । वीर्य को वृथा बर्बाद करने के समान दूसरा कोई अन्याय नही है ।

हमारे अन्दर जो शाति और साहस है वह वीर्य के ही प्रताप से है, अगर शरीर में वीर्य न हो तो मनुष्य हलन-चलन गमनागमन आदि क्रियाए करने मे भी समर्थ नही हो सकता ।

ब्रह्मचर्य का महत्त्व

जो भाई–बहिन अपने ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे वे ससार को अनमोल रत्न प्रदान करने मे समर्थ हो सकेंगे । हनुमानजी का नाम कौन नही जानता । आलकारिक भाषा मे कहा

है, तुम भगवान् महावीर को समझ पाये हो तो चर्बी के वस्त्रो का त्याग करने से स्वार्थ के साथ परमार्थ भी सधता है। इससे जीवन मे सादगी आती है और अहिंसा की आराधना होती है। चर्बी के वस्त्रों के लिए कैसे-कैसे भयंकर हत्याकाण्ड होते हैं यह सब जानते-बूझते हुए भी उन वस्त्रो का उपयोग करना अहिंसा की अवहेलना करना है।

सुना है, एक गज रेशमी कपडे के लिए हजारो जीवित कीडे उकलते हुए पानी मे उबाल कर मार दिये जाते हैं। तुम भगवान् महावीर के शिष्य हो, अहिंसा के उपासक हो। ऐसी पापमयी वस्तुओ के त्याग मे ही तुम्हारा कल्याण है और इसी मे भगवान् महावीर की उपासना और अहिंसा की आराधना है।

अगर तुम चर्बी लगे मील के वस्त्रो का त्याग करो तो तुम्हारी क्या हानि होगी ? ऐसा करने मे सरकारी रुकावट है, सरकार की ओर से ऐसी कोई रोक-टोक नही है। फिर भी अगर कोई सरकार के डर से चर्बी के कपडे नही छोडता तो वह देवादिक का उपसर्ग उपस्थित होने पर किस प्रकार निर्भय और निश्चल बना रह सकेगा। राजा अगर सच्चा राजा है तो चर्बी के कपडे त्याग कर खादी पहिनने के कारण तुमसे कदापि अप्रसन्न न होगा। कदाचित कोई राजा नाराज हो भी जाय तो अन्त में उसे ठिकाने पर आना ही पडेगा। तुम खादी को पहनने से डरते क्यो हो ? अगर तमाम स्त्रिया और पुरुष खादी पहनने का निश्चय करलें तो क्या हानि होने की सम्भावना है। ऐसा करने से तुम्हारा कौनसा कार्य रुक जाता है। अगर यह बात तुम्हारी समझ मे आ गई तो मिल के वस्त्रो का त्याग करने की प्रतिज्ञा कर सकते हो। पर त्याग केवल देखादेखी नही होना चाहिये। तत्त्व को भलीभाति समझ-बूझकर त्याग करना चाहिए। तुम जिस देश मे जन्मे हो, जहा के अन्न, जल, और वायु से तुम्हारा पोषण हुआ है, उसी देश मे उत्पन्न होने वाली वस्तुओ के अतिरिक्त दूसरी वस्तुओ का तुम्हे परित्याग करना चाहिये। उस वस्तु से तुम्हारा जीवन निर्वाह सरलता से हो सकेगा और साथ ही तुम महा-आरम्भ से भी बच जाओगे। अल्पारम्भ से ही तुम्हारा कार्य चल जायगा।

अहिंसा और सुख

अहिंसा पालन करने से दुःख की सम्भावना ही नही की जा सकती। आज कल जो व्याधियां दृष्टिगोचर हो रही हैं उनका दायित्व अहिंसा पर नही, हिंसा पर है। शास्त्र मलीन रहने का अथवा गदगी भरे रहने का आदेश नही देता। सच तो यह है कि गंदगी एव मलीनता से ही रोग उत्पन्न होते हैं, और यह हिंसा का ही एक प्रकार है।

इसी प्रकार रगडे-झगड़े, क्लेश-द्वेष आदि का मूलकरण भी हिंसा ही है। अहिंसा के कारण आज तक कोई झगड़ा नही हुआ। न्यायालय मे जाकर तलाश करो तो विदित होगा कि अहिंसा के कारण एक भी मुकदमा वहा न पहुचा होगा। अहिंसा सदैव सुख का कारण है।

हाथी के मडल मे, आत्मरक्षा के लिए इतने पशु इकट्ठे हुए थे कि हाथी को पैर रखने की भी जगह न बच पाई। ऐसे अवसर पर हाथी को क्रोध पैदा हो सकता था या नहीं,

तुम्हारे सामने कोई आकर बैठ जाय तो इतने से ही तुम्हारा क्रोध उमड पडता है। क्या दया धर्म के अनुयायी होने के कारण ऐसा होता है? हाथी के मडल मे अनगिनती जानवर घुस आये थे और तिल भर भी जगह न रहने दी थी। वेचारे एक खरगोश को कही जगह न मिलती थी। वह बडी मुसीवत मे था। इतने मे ही हाथी ने पैर ऊचा किया। हाथी का पैर ऊचा करना था कि खरगोश उस खाली हुई जगह मे बैठ गया। हाथी चाहता तो खरगोश पर पैर रख देता और कुचल देता, किंतु दया से द्रवित हाथी ने ऐसा नही किया। उसने अपना पैर ऊचा ही रक्खा। हाथी जानता था, सच्चा घर वही है जहा दीन-दुखियो को विश्राम मिलता है। घर आया अतिथि कष्ट न पावे, इस बात का ध्यान रखने वाला ही सच्चा घर-मालिक है। हाथी को ऐसा उदार विचार आया। इस विचार के कारण हाथी ने वीस प्रहर तक अपना एक पैर अधर उठा रक्खा-नीचा नही किया। हाथी जैसे स्थूल शरीर वाले प्राणी के लिए तीन पैरो पर इतने लम्बे समय तक खडा रहना कितना कष्टकर है। मगर हाथी ने इसे कष्ट नही, आनन्द माना। परिणाम यह हुआ कि हाथी मर कर प्रसिद्ध मगध सम्राट् श्रेणिक का पुत्र हुआ।

जब इस प्रकार का दयाभाव हृदय मे प्रकट हो तो सम्यक्त्व का सद्भाव समझना चाहिए। सम्यग् दृष्टि इस बात का विचार रखता है कि उसके रहन-सहन, खान-पान आदि से कितने जीवो को क्या कष्ट पहुच रहा है। तुम अपने विषय मे इस प्रकार सावधान रहोगे तो हिंसा से बच सकोगे और अपना तथा दूसरो का कल्याण करोगे।

वीर्य का दुरुपयोग

देश मे आज जो रोग, शोक, दरिद्रता आदि जहा-तहा दृष्टिगोचर होते हैं उन सब का एकमात्र कारण वीर्यनाश है। आज वेकार वस्तु की तरह वीर्य का दुरुपयोग किया जा रहा है। उसी मे आनन्द माना जा रहा है। ऐसा करने से जब अधिक सतान उत्पन्न होती है तो घबराहट पैदा होती है पर उनसे मैथुन त्यागते नही बनता। भारतीयो को इस प्रश्न पर गहरा विचार करना चाहिए। विदेशी लोग ब्रह्मचर्य की महत्ता भले ही न समझते हो या स्वीकार न करते हो, परन्तु भारत मे तो ऐसे महान् ब्रह्मचारी हो गये हैं जिन्होने ब्रह्मचर्य द्वारा महान् शक्ति लाभ कर जगत् के समक्ष यह आदर्श उपस्थित कर दिया है कि ब्रह्मचर्य ही कल्याण का मार्ग है। यह समझते-बूझते हुए भी विषय-भोग मे सुख मानना और जब सतान उत्पन्न हो तो उसका निरोध करने के लिए कृत्रिम उपाय काम मे लाना, घोर अन्याय है। वीर्य को वृथा बर्बाद करने के समान दूसरा कोई अन्याय नही है।

हमारे अन्दर जो शाति और साहस है वह वीर्य के ही प्रताप से है, अगर शरीर मे वीर्य न हो तो मनुष्य हलन-चलन गमनागमन आदि क्रियाए करने में भी समर्थ नही हो सकता।

ब्रह्मचर्य का महत्त्व

जो भाई-बहिन अपने ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे वे ससार को अनमोल रत्न प्रदान करने मे समर्थ हो सकेंगे। हनुमानजी का नाम कौन नही जानता। आलकारिक भाषा मे कहा

जाता है कि उन्होने लक्ष्मण जी के लिए द्रोण पर्वत उठाया था । उसी पर्वत का एक टुकड़ा गिर पड़ा, जो गोवर्धन के नाम से प्रसिद्ध हुआ । अलकार का आवरण दूर कर दीजिये और विचार कीजिए तो इस कथन मे हनुमानजी की प्रचण्ड शक्ति का दिग्दर्शन आप पाएगे । हनुमानजी में इतनी शक्ति कहा से आई ? यह महारानी अ जना और महाराज पवन की बारह वर्ष की अखण्ड ब्रह्मचर्य की साधना का प्रताप था । उनके ब्रह्मचर्य पालन ने ससार को एक ऐसा उपहार, ऐसा वरदान दिया, जो न केवल अपने समय मे ही अद्वितीय था, वरन् आज तक भी वह अद्वितीय समझा जाता है और शक्ति की साधना के लिए उसकी पूजा भी की जाती है ।

वहिनो ! अगर तुम्हारी हनुमान सरीखा शक्तिशाली पुत्र उत्पन्न करने की साध है तो अपने पति को कामुक बनाने वाले साज-सिंगार और हाव-भाव त्याग कर स्वय ब्रह्मचर्य की साधना करो और पति को भी ब्रह्मचर्य पालन करने दो ।

ब्रह्मचर्य ही जीवन है

अपूर्ण ब्रह्मचर्य केवल वीर्यरक्षा को कहते है । वीर्य वह वस्तु है कि जिसके सहारे सारा शरीर टिका हुआ है। यह शरीर वीर्य से बना भी है । अतएव आखें वीर्य है । कान वीर्य है । नासिका वीर्य है, हाथ-पैर वीर्य हैं । सारे शरीर का निर्माण वीर्य से हुआ है, अतएव सारा शरीर वीर्य है । जिस वीर्य से सम्पूर्ण शरीर का निर्माण होता है उसकी शक्ति क्या साधारण कही जा सकती है? किसी ने ठीक ही कहा है.-

मरण बिन्दुपातेन, जीवन बिन्दुधारणात् ।

अपूर्ण ब्रह्मचर्य का प्रथम नियम

अपूर्ण ब्रह्मचर्य के दस नियमो मे पहला नियम भावना है । माता-पिता को ऐसी भावना लाना चाहिए कि मेरा पुत्र वीर्यवान् और जगत् का कल्याण करने वाला बने । इस प्रकार की भावना से वहुत लाभ होता है । आप लोगो को—जो यहां वैठे हैं-अलग-अलग तरह के स्वप्न आते होंगे। इसका कारण क्या है ? कारण यही है कि सब की भावना भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है । यह बात प्राय सभी मानते है कि जैसी भावना होती है, वैसा स्वप्न आता है। इसी प्रकार सतान के विषय मे माता-पिता को भावना जैसी होता है, वैसी ही सतान बन जाती है। जिस प्रकार भावना से स्वप्न का निर्माण होता है, इसी प्रकार भावना से सतान के विचारो और कार्यो का निर्माण होता है । नीच विचार करने से खराव स्वप्न आता है और यही बात सतान के विषय मे भी समझनी चाहिए । सतान के विषय मे भी तुम जैसी भावना लाओगे, आगे चलकर सतान वैसी ही बन जायगी । अतएव संतान के लिए और अपने लिए ब्रह्मचर्य की भावना निरन्तर लानी चाहिए ।

दूसरा नियम

ब्रह्मचर्य का दूसरा नियम भोजन सम्बन्धी विवेक है। कुछ लोग ऐसा समझते हैं कि जिस खान–पान मे आनन्द आता है, वही भोजन है, पर यह मान्यता भ्रमपूर्ण है। ब्रह्मचारी के भोजन में और अब्रह्मचारी के भोजन में बड़ा अन्तर होता है। गीता मे रजोगुणी, तमोगुणी और सतोगुणी का भोजन अलग–अलग बताया है। पर आज के लोग जिह्वा के वशवर्ती बनकर भोजन के गुलाम हो रहे हैं। यदि तुम अपनी जीभ पर भी अकुश नही रख सकते तो तुम आगे किस प्रकार बढ सकोगे ? विद्याभ्यास और शास्त्र–श्रवण का फल यही है कि बुरे कामों मे प्रवृत्ति न की जाय। पर आजकल खान–पान के सम्बन्ध मे बड़ी भयकर भूलें हो रही हैं और हालत ऐसी जान पडती है मानो विद्याभ्यास का फल खान-पान का भान भूल जाना ही हो।

वीर्यनाश के कारण

वीर्य नाश का एक कारण एक ही कमरे मे, एक ही बिछौने पर स्त्री-पुरुष का शयन करना भी है। एक ही कमरे मे और एक शय्या पर सोने से वीर्य स्थिर नही रह सकता। शास्त्र मे जहा स्त्री और पुरुष के सोने का वर्णन मिलता है वहा ऐसा ही वर्णन मिलता है कि स्त्री और पुरुष अलग-अलग शयनागार मे सोते थे। पर आज इस विषय मे नियम का पालन होता नजर नही आता।

निष्क्रिय बैठे रहना भी वीर्यनाश का एक कारण है। जो लोग अपने शरीर और मन को किसी सत्कार्य मे सलग्न नही रखते उन लोगो का वीर्य भी स्थिर नही रह सकता। यदि शरीर और मन को निष्क्रिय न रक्खा जाय तो वीर्य को हानि नही पहुचती।

रात्रि मे देर तक जागरण करना, सूर्योदय के बाद भी सोते रहना और अश्लील साहित्य का पढना, ये सब भी वीर्यनाश के कारण हैं। अश्लील चित्र देखने से और अश्लील पुस्तकें पढने से भी वीर्य स्थिर नही रहता। आज जहा–तहा अश्लील पुस्तकें पढने और अश्लील चित्र देखने का प्रचार हो गया है। आजकल लोग महापुरुषो और महासतियो के जीवन-चरित्र पढ़ने के बदले अश्लीलतापूर्ण पुस्तक पढने के शौकीन हो गये हैं। उन्हें यह विचार ही नही आता कि ऐसा करने से जीवन मे कितने विकार आ घुसे हैं। कहावत है कि—'जैसा वाचन वैसा विचार।' इस कहावत के अनुसार अश्लील पुस्तको के पठन से लोगो के विचार भी अश्लील बनते जा रहे हैं।

नाटक–सिनेमा देखना भी वीर्य नाश का कारण है। आजकल नाटक-सिनेमा की धूम मची हुई है। जहा देखो वहा गरीब से लेकर अमीर तक सबको नाटक–सिनेमाओ मे फंसाने का प्रयत्न किया जा रहा है और इस प्रकार सिनेमा वीर्यनाश के साधन बन रहे हैं।

सिनेमा और ग्रामोफोन

आजकल के सिनेमा तो नैतिकता से इतने पतित और निर्लज्जतापूर्ण होते सुने जाते हैं कि कोई भला मनुष्य अपने बाल-बच्चो के साथ उन्हे देख नही सकता । सिनेमाओ के कारण आज लाखो नवयुवक आचरणहीन बन रहे हैं । इन सिनेमाओ की बदौलत भारतीय नारी अपनी महत्ता का विस्मरण कर भारतीय सभ्यता के मूल मे कुठाराघात कर रही है । यह अत्यन्त खेद की बात है । इसी प्रकार ग्रामोफोन को भी आनन्द का साधन समझा जाता है पर उसके द्वारा सस्कारो मे कितनी बुराइया घुस रही हैं, इस ओर कितने लोगो का ध्यान जाता है ?

ब्रह्मचर्य साधन

ब्रह्मचर्य पालने वालो को अथवा जो ब्रह्मचर्य पालना चाहते हैं उन्हे विलासपूर्ण वस्त्रो से, आभूषणो से तथा आहार से सदैव बचते रहना चाहिए । मस्तिष्क मे कुविचारो का अंकुर उत्पन्न करने वाले साहित्य को हाथ भी नही लगाना चाहिए । जो पुस्तकें धर्म, देशभक्ति की भावना जागृत करने वालो और चरित्र को सुधारने वाली होती है उनमे सरकार राजनीति की गन्ध सूघती है और उन्हे जब्त कर लेती है । पर जो पुस्तकें ऐसा गंदा और घासलेटी साहित्य बढाती हैं, प्रजा का सर्वनाश कर रही हैं, उनकी ओर से वह सर्वथा उदासीन रहती है । यह कैसी भाग्यविडम्बना है ?

वीर्य की महिमा

स्वप्नदोष मे भी वीर्य का नाश होता है । कुछ लोग कहा करते हैं कि वीर्यरक्षा से स्वप्नदोष होता है पर यह कथन भ्रमपूर्ण है । इस भ्रामक विचार का परित्याग करके, स्वप्नदोष के असली कारण का पता लगाना चाहिए । फिर उस कारण से बचकर दोष-निवारण का प्रयत्न करना चाहिए । जब तुम सो रहे होओ तब तुम्हारी जेब में से अगर कोई रत्न निकाल कर ले जाने लगे और उस समय तुम जाग उठो तो आखो देखते क्या रत्न निकाल कर ले जाने दोगे ? नही, तो फिर स्वप्नदोष के कारण जान-बूझ कर वीर्य को नष्ट होने देना कहा तक उचित कहा जा सकता है ।

ब्रह्मचर्य और रसनानिग्रह

ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए, साथ ही स्वास्थ्य की रक्षा के लिए जिह्वा पर अंकुश न रखने से अनेक प्रकार की हानियां होती हैं । इससे विपरीत जो मनुष्य अपनी जीभ पर काबू रखता है उसे प्राय वैद्यो और डॉक्टरो के द्वार पर भटकने की आवश्यकता नहीं रहती ।

अनेक लोग ऐसे हैं जिनके लिए जीवन की अपेक्षा भोजन अधिक महत्त्व की वस्तु है । वह जीने के लिए नहीं खाते पर खाने के लिए जीते हैं । भले ही कोई सीधी तरह इस बात को

स्वीकार न करके मगर उसके भोजन व्यवहार को देखने से यह सत्य साफ तौर से प्रकट हुए बिना नही रहेगा । यही कारण है कि अधिकाश लोग जीवन के शुभ-अशुभ की कसौटी की परख नही करते । वह जिह्वा को कसौटी बनाकर भोजन की अच्छाई-बुराई की जाच करते हैं। जो जीवन की दृष्टि से भोजन करता है वह स्वास्थ्यनाशक और जीवन को भ्रष्ट करने वाला भोजन कैसे कर सकता है ? कुशल मनुष्य अज्ञात व्यक्ति को सहसा अपने घर मे स्थान नही देता । तब जिस भोजन के गुण-दोष का पता न हो उसे पेट मे स्थान देना कहा तक उचित कहा जा सकता है ? जो ऐसे भोजन को पेट मे ठूस लेता है, उसके पेट को भोजन-पिटारे के सिवा और क्या कहा जा सकता है ?

एक विद्वान का कथन है कि दुनिया मे जितने आदमी खाने-पीने से मरते हैं खाने-पीने के अभाव मे उतने नही मरते । लोग पहले तो ठूस-ठूस कर खाते हैं, फिर डॉ० की शरण लेते हैं । आज जो आदमी जितने अधिक चीजें अपने भोजन मे समाविष्ट करता है वह उतना ही बड़ा आदमी गिना जाता है, मगर शास्त्र का आदेश यह है जो जितना महान् त्यागी है वह उतना ही महान् पुरुष है । शास्त्र मे आनन्द श्रावक का वर्णन करते हुए कहा गया है कि बारह करोड स्वर्ण मोहरो का और चालीस हजार गायो का धनी होने पर भी उसने अपने खाने पीने के विषय मे पूर्ण सयम रखा,खाने-पीने के विषय मे जो जितना सयम रखता है वह उतना ही महान् है । जिह्वा सयम से स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है । नागरिको को जितना और जैसा भोजन मिलता है, उतना और वैसा किसानो को नही । फिर भी अगर दोनो की कुश्ती हो तो किसान ही विजयी होगा । यह कौन नही जानता कि सभ्य और बड़े कहलाने वाले लोगो की अपेक्षा किसान अधिक स्वस्थ और सबल होता है । इसका एक कारण सादा और सात्विक भोजन है ।

इस प्रकार अधिक भोजन करने से स्वास्थ्य सुधरने के बदले बिगडता है । विकृत भोजन करने से स्वास्थ्य को हानि पहुचती है और चरित्र को भी । इसी कारण विकृत भोजन करने का शास्त्र मे निषेध किया गया है ।

ब्रह्मचर्य का भोजन के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है । भोगी का भोजन और योगी का भोजन एक-सा नहीं हो सकता । ब्रह्मचर्य की साधना करने वालो को ऐसा और इतना ही भोजन करना चाहिए जिससे शरीर की रक्षा हो सके और जो ब्रह्मचर्य मे बाधक न होकर साधक हो। अधिक गरिष्ठ, तेज मसालेदार और परिमाण से अधिक भोजन सर्वथा हानिकारक है ।

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में लोगो की भ्रान्त धारणा

विषय भोग की कामना का नियन्त्रण नहीं हो सकता—यह कामना अजेय है । इस प्रकार की दुर्भावना वाला पुरुष-समाज में एक बार भी पैठ पाता है तो भयंकर अनर्थ होंगे और उन अनर्थों की परम्परा का सामना करना सहज नही होगा । यद्यपि आजकल भी अनेक लोग हैं, जिनकी यह भ्रान्त धारणा हो गई है कि मनुष्य कामभोग की वासना पर विजय नही प्राप्त

कर सकता । सम्भवतः वे लोग मनुष्य को काम–वासना का कीड़ा समझते हैं । पर, प्राचीन आर्य–ऋषियों का अनुभव इस धारणा का विरोध करता है । कोई व्यक्ति विशेष ब्रह्मचर्य का पालन करने मे असमर्थ रहे यह एक बात है और यह कहना कि ब्रह्मचर्य का पूर्ण रूप से पालन करना सम्भव नहीं है, दूसरी बात है । किसी व्यक्ति की असमर्थता के आधार पर किसी व्यापक सिद्धान्त का निर्माण कर बैठना, सच्चाई के साथ अन्याय करना है । इस प्रकार असमर्थता की ओट मे विषयभोगो का प्रचार करना सर्वथा अनुचित है ।

आज भी ससार मे ऐसे व्यक्तियो का मिलना असम्भव नही है जो बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए जन–सेवा कर रहे हैं । फिर भीष्म और भगवान् नेमिनाथ जैसे पवित्र ब्रह्मचारियो का उच्च आदर्श जिन्हे मार्ग प्रदर्शन कर रहा हो, उन भारतवासियो के हृदय मे न जानें यह भूत कैसे घुस गया है कि विषय वासना पर काबू रखना शक्य नहीं है । साधु हुए बिना ब्रह्मचर्य का पालन हो हो नही सकता और गृहस्थ जीवन मे ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान एकदम अशक्यानुष्ठान है । वास्तव मे यह धारणा भ्रमपूर्ण है । मनोबल दृढ होने पर पूर्ण या नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है । यही नही वरन् विवाहित जीवन व्यतीत करते हुए गृहस्थ जीवन मे ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान एकदम अशक्यानुष्ठान है । वास्तव मे यह धारणा सर्वथा भ्रमपूर्ण है । मनोबल दृढ होने पर पूर्णतया नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है । यही नही वरन् विवाहित जीवन व्यतीत करते हुए गृहस्थ जीवन मे भी ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है । ब्रह्मचर्य पालने से किसी भी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं है । यही नही किन्तु अनेक प्रकार के लाभ होते हैं । कहा भी है–

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठाया वीर्यलाभ ।

कुछ महानुभावो ने एक नये सिद्धान्त का आविष्कार किया है । उनकी अनोखी सी समझ यह है कि ब्रह्मचर्य का पालन करने से शरीर मे रोग उत्पन्न होते हैं । पर न तो आज तक यह सुना गया है कि ब्रह्मचर्य–पालन से किसी को किसी रोग का शिकार होना पड़ा है और न ऐसा कोई उदाहरण ही देखा गया है । हा, ठीक इससे उल्टे जो लोग विषयी होते हैं वे ही रोगो द्वारा सताये जाते हैं । यह बात तो प्रत्यक्ष दिखाई देती है । अतएव अपने हृदय से इस भ्राति को निकाल फेंको कि ब्रह्मचर्य से रोग पैदा होते हैं । ब्रह्मचर्य जीवन है । उससे शक्ति का विकास होता है । जहा शक्ति है वहा रोगो का आक्रमण नही होता । अशक्त और दुर्बल पुरुष ही रोगो द्वारा सताये जाते हैं ।

खेद है कि लोगो के मन मे यह भ्रम उत्पन्न हो गया है कि विषय भोग की इच्छा का दमन करना अशक्य है । परन्तु जैसे नैपोलियन ने असम्भवशब्द को कोश मे से निकाल डालने को कहा था । उसी प्रकार तुम अपने हृदय मे से कामभोग की इच्छा का दमन करने की असम्भवता को निकाल बाहर करो । ऐसा करने से तुम्हारा मनोबल सुदृढ बनेगा और तब विषयभोग की कामना पर विजय प्राप्त करना तनिक भी कठिन न होगा ।

विवाह

विवाह तो तुम्हारा हुआ, पर देखना यह चाहिए कि तुम विवाह करके चतुर्भु ज बने हो या चतुष्पद । विवाह करके अगर बुरे काम मे पड गये तो समझो कि चतुष्पद बने हो। अगर विवाह को भी तुमने धर्मसाधना का निमित्त बना लिया है तो निस्सदेह तुम चतुर्भु ज-जो कि ईश्वर का रूप माना जाता है। बने हो इस बात के लिए सतत यत्न करना चाहिए, कि मनुष्य चतुष्पद न बनकर चतुर्भु ज—ईश्वर रूप बने और अन्तत उसमें एवं ईश्वर मे किंचित् भी भेद न रह सके।

स्त्री और पुरुष के स्वभाव मे जहां समता नही होती वहां शातिपूर्वक जीवन-व्यवहार नही चल सकता। विवाह का उत्तरदायित्व अगर माता—पिता अपना समझते हो तो प्रतिकूल स्वभाव वाले पुत्र-पुत्री का विवाह उन्हे नहीं करना चाहिए। लोभ के वश होकर अपनी सतान का विक्रय करके, उनका जीवन दु.खमय बनाना माता—पिता के लिए घोर कलक की बात है।

विवाह मे जहा धन की प्रधानता होगी वहा अनमेल विवाह हो, यह स्वाभाविक है। अनमेल विवाह करके दाम्पत्य जीवन मे सुख-शाति की आशा करना ऐसा ही है, जैसे नीम बोकर आम के फल की आशा करना। ऐसे जीवन मे प्रेम कहा। प्रेम को तो वहा पहले ही से आग लगा दी जाती है।

पुरुष मनचाहा व्यवहार करें, स्त्रियो पर अत्याचार करें, चाहे जितनी बार विवाह करने का अधिकार भोगें, यह सब विवाह—प्रथा से विपरीत प्रवृत्तिया हैं। ऐसे कामो से विवाह की पवित्र प्रथा कलुषित हो गई है। विवाह का आदर्श भी कलुषित हो गया है। विवाह का वास्तविक आदर्श स्थापित करने के लिए पुरुषो को सयम—शील होना चाहिए।

प्राचीनकाल में, विवाह के सम्बन्ध मे कन्या की भी सलाह ली जाती थी और अपने लिए वर खोजने की उसे स्वतन्त्रता प्राप्त थी। माता—पिता इस उद्देश्य से स्वयवर की रचना करते थे। अगर कन्या ब्रह्मचर्य पालन करना चाहती थी तो भी उसे अनुमति दी जाती थी। भगवान् ऋषभदेव की ब्राह्मी और सुन्दरी नामक दोनो कन्याएं विवाह के योग्य हुईं। भगवान् उनके विवाह सम्बन्ध का विचार करने लगे। दोनो कन्याओ ने भगवान् का विचार जाना तो कहा—पिताजी, आप हमारी चिता न कीजिए। आपकी पुत्री मिटकर दूसरे की पत्नी बनना हमसे न हो सकेगा। अन्तत दोनो कन्याएं आजीवन ब्रह्मचारिणी रही।

हा, विवाह न करके अनीति की राह पर चलना बुरा है पर ब्रह्मचर्य पालन करना बुरा नहीं है। ब्रह्मचारिणी रह कर कुमारिकाएं जनसमाज की अधिक से अधिक और अच्छी सेवा कर सकती हैं।

बलात् ब्रह्मचर्य और बलात् विवाह–दोनो बातें अनुचित हैं। दोनों स्वेच्छा और स्वसामर्थ्य पर निर्भर होनी चाहिए।

आजकल धन एव आभूषणो के साथ विवाह किया जाता है। भारत के प्राचीन इतिहास को देखो तो पता चलेगा कि सीता, द्रौपदी का स्वयवर हुआ था। उन्होने अपने लिए आप ही वर पसद किया था। भगवान् नेमिनाथ तीन सौ वष की उम्र तक कुमार रहे। क्या उन्हे कन्या नही मिलती थी? पर उनकी स्वीकृति के बिना विवाह कैसे हो सकता था? इसी कारण उनका विवाह नहीं हुआ। आजकल विवाह के सम्बन्ध मे कौन अपनी सतान की सलाह लेता है।

पाणिग्रहण का प्रधान उद्देश्य

आपने पत्नी का पाणिग्रहण धर्मपालन के लिए किया है। इसी प्रकार स्त्री ने भी आपका। जो नर या नारी इस उद्देश्य को भूलकर खान–पान और भोग विलास मे ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते हैं वे धर्म के पति–पत्नी नही वरन् पाप के पति-पत्नी हैं।

दाम्पत्य

आज राग के वश होकर पति-पत्नी न जानें कैसी-कैसी अनीति का पोषण कर रहे हैं, पर प्राचीन साहित्य देखने से स्पष्ट विदित होता है कि उस समय पति-पत्नी अलग–अलग कमरो में सोते थे–एक ही जगह नही सोते थे। पर आज की स्थिति कितनी दयनीय है। आज अलग–अलग कमरो मे सोना तो दूर रहा। अलग-अलग बिस्तर पर भी बहुत कम पति-पत्नी सोते होगे। इस कारण विषय वासना को कितना वेग मिलता है, यह सक्षेप मे नही बताया जा सकता। अग्नि पर घी डालने से वह बिना पिघले नही रहता, एक ही शय्या पर शयन करने से अनेक प्रकार की बुराइया उत्पन्न होती हैं। वे बुराइया इतनी घातक होती हैं कि उनसे न केवल धार्मिक जीवन निर्मूल्य बनता है, वरन् व्यावहारिक जीवन भी निकम्मा बन जाता है।

लग्न के समय वर-वधू अग्नि की प्रदक्षिणा करते हैं। पति के साथ अग्नि की प्रदक्षिणा करने के पश्चात् सच्ची आर्य महिला अपने प्राणो का उत्सर्ग कर देती है पर की हुई प्रतिज्ञा से विमुख नही होती।

पुरुष भी पत्नी के साथ अग्नि प्रदक्षिणा करते हैं परन्तु जो कर्त्तव्य स्त्री का माना जाता है, वही क्या पुरुष का भी समझा जाता है?

जैसे सदाचारिणी स्त्री, पर पुरुष को पिता एव भाई के समान मानती है, उसी प्रकार सदाचारशील पुरुष वही है जो पर स्त्री को माता-बहन की दृष्टि से देखते हैं।

विधवाओं का कर्त्तव्य

विधवा बहिनो से मेरा यही कहना है कि अब परमेश्वर से नाता जोड़ो । धैर्य को अपना साथी बनाओ । सयम से जीवन व्यतीत करो । संसार के राग-रगों को और आभूषणों को अपने धर्मपालन में विघ्नकारी समझकर उनका त्याग करो । इसी में आपकी प्रतिष्ठा है । आप त्यागशीला देविया हैं । आपको गृहस्थी के ऐसे प्रपचो से दूर रहना चाहिए, जिनसे आपके धर्म-पालन मे बाधा पहुचती है ।

स्वत्व का त्याग

तुम समझते हो हमने तिजोरी मे धन को कैद कर लिया है, पर धन समझता है कि हमने इतने बड़े धनी को अपना पहरेदार मुकर्रर कर लिया है ।

तुम अपनी कृपणता के कारण धन का व्यय नही कर सकते पर धन तुम्हारे प्राणो का भी व्यय कर सकता है ।

तुम धन को चाहे जितना प्रेम करो, प्राणो से भी अधिक उसकी रक्षा करो, उसके लिए भले ही जान दे दो, लेकिन धन अन्त मे तुम्हारा नही रहेगा—नही रहेगा । वह दूसरो का बन जायगा ।

तुम धन का त्याग न करोगे तो धन तुम्हारा त्याग कर देगा । यह सत्य इतना स्पष्ट और ध्रुव है कि इसमे लेशमात्र भी सन्देह नही किया जा सकता । ऐसी स्थिति मे विवेकवान् होते हुए भी इतने पामर क्यो बने जा रहे हो ? तुम्हीं त्याग की पहल क्यो नही करते ? क्यो सत्व के धागे को तोडकर फैंक नहो देते ?

धन के संरक्षक मात्र बनो

मित्रो । अगर आप लोग भी अपनी सम्पत्ति से पाप न करके, उसके ट्रस्टी भर बने रहो तो क्या उस सम्पत्ति को कुछ दाग लग जायगा । हाँ, उस अवस्था मे अपने भोग-विलास के लिए उसका दुरुपयोग न कर सकोगे । लेकिन बहुत लोगो को तो ट्रस्टी बनने की भावना ही नही होती । क्या श्रावक की जिन्दगी ऐसी होती है कि वह धन के कीचड मे फसा रहे और उससे आत्मा को मलिन बना डाले । उसे परोपकार में न लगावे । क्या श्रावक को धर्म पर विश्वास नही है ? बैंक पर विश्वास करके उसमे लाखो रुपया जमा करा देने वालों को धर्म रूपी बैंक पर क्या विश्वास नही है ?

मैं आपका धन नही चाहता । मेरे पास जो कुछ था उसका त्याग कर देना मैंने अपना सौभाग्य समझा है । उससे मुझे शाति और सुख मिला है ; ऐसा करके मैंने निराकुलता

का आनन्द अनुभव किया है। तुम्हे जो त्याग का उपदेश करता हू तो इसीलिए कि तुम भी सुख शाति का इसी उपाय से लाभ कर सकोगे। सम्यग्दृष्टि का लक्ष्य यही है कि वह अपनी सम्पत्ति परोपकार के लिए समझे और आप उससे अलहदा रहता हुआ अपने को उसका ट्रस्टी अनुभव करें।

मित्रो ! आप लोगो के पास जो द्रव्य है उसे अगर परोपकार मे, सार्वजनिक हित मे और दीन-दुखियों को साता पहुचाने मे न लगाया तो याद रखना, इसका व्याज चुकाना भी तुम्हे कठिन हो जायगा। ऐसे द्रव्य के स्वामी वन कर आप फूले न समाते होगे कि चलो हमारा द्रव्य वढ गया है, मगर शास्त्र कहता है और अनुभव उसका समर्थन करता है कि द्रव्य के साथ क्लेश वढा है। जव आप वैक से ऋण मे रुपया लेते हैं तो उसे चुकाने की कितनी चिन्ता रहती है ? उतनी ही चिन्ता पुण्य रूपी वैक से प्राप्त द्रव्य को चुकाने की क्यो नही करते, समझ रक्खो, यह सम्पत्ति तुम्हारी नही है। इसे परोपकार के अर्थ अर्पण कर दो। याद रखो, कि यह जोखिम दूसरे की मेरे पास धरोहर है। अगर इसे अपने पास रख छोडूगा तो यह तो यही रह जायगी, लेकिन इसका वदला चुकाना मेरे लिए वहुत भारी पड जायगा।

तमाखू

डॉक्टरो ने प्रयोग करके यह परिणाम निकाला है कि तमाखू मे विप की मात्रा काफी परिमाण मे होती है। एक जगह मैंने पढा है कि एक वीडी का तमाखू का सत्व निकाल कर सात मेढको को दिया जाय तो उन सातो की मृत्यु हो जायगी। तमाखू मे जो विप होता है, डॉक्टरो ने उसे 'निकोटाइन' सज्ञा दी है। वास्तव मे तमाखू अत्यन्त हेय वस्तु है। उसमे मादक शक्ति है, विप है और इसीलिए वह वुद्धि तथा स्मरणशक्ति का विनाश करती है। उससे रक्त-विकार आदि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, जो जीवन को खतरे मे डाल देते हैं। मैं जव विचार करता हू तो मुझे आश्चर्य होता है कि तमाखू मे आखिर क्या आकर्षण है जिससे आज दुनिया भर मे उसका दौरदौरा हो रहा है। तमाखू मे मिठास नही कटुकता है। इन्द्रिया उसे पहले पहल स्वीकार नही करना चाहती। मनुष्य जव तमाखू को भीतर ठूसना चाहता है तव इन्द्रियां प्रवल विरोध करती हैं। छींक के द्वारा, खासी के द्वारा या वमन के द्वारा अन्दर ठूसी हुई तमाखू को इन्द्रिया वाहर फैक देती हैं। इसी से यह स्पष्ट हो जाता है कि तमाखू शरीर के लिए अस्वाभाविक वस्तु है। फिर भी मनुष्य मानता नही और अपने ऊपर बलात्कार करके तमाखू का सेवन किया करता है। कुछ दिनो तक इन्द्रिया विरोध करके थक जाती हैं और मनुष्य तव स्वच्छन्द होकर शरीर मे तमाखू का जहर घुसेडने लगता है। अन्त मे शरीर तमाखू के विप से विपैला वन जाता है और तव लोग 'शरीर व्याधिमदिर' अर्थात् शरीर रोगो का घर है, यह कहकर अपना रोना रोया करते हैं। कहते हैं कि आध सेर तमाखू मे इतना विप होता है कि उससे मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। मगर मनुष्य थोड़ी-थोडी करके सेवन करता है इसीसे तत्काल इतना उग्र प्रभाव नहीं होता फिर भी उससे भयंकर हानिया होती है।

तमाखू ज्ञानतंतुओ पर विनाशक प्रभाव डालती है। हृदय को दुर्बल बनाती है। मन को भ्रान्त करके स्मरण शक्ति की जड उखाड़ फेंकती है। यह नशीली वस्तु है। इसके नशे मे अनेक बार घोर अनर्थ हो जाते हैं।

इस विषमयी तमाखू के खरीदने मे भारतीयो का लाखो–करोडो रुपया प्रति वर्ष विदेशो मे चला जाता है। जरा अपनी विवेकशीलता का विचार तो करो। एक ओर करोड़ो आदमी भूख के मारे तडफते हैं और दूसरी ओर करोड़ो रुपया तमाखू खरीदने के लिए विदेशो में भेज दिया जाता है और उस रुपये के बदले मे मिलता क्या है—भयकर क्षति, भीषण विनाश शरीरशोषण, बुद्धि भ्रश आदि। इन सब सौगातो के लिए तुम्हारा धन व्यय होता है और वह धन गरीबो के हाथ का कौर छीन कर इकठ्ठा किया जाता है। इस व्यवहार की कहां तक प्रशसा की जाय? वैश्यो की वणिक् बुद्धि भी आज कहां चली गई है।

मित्रो! दूसरो पर दया नही कर सकते तो कम से कम अपने ऊपर तो करो। अपने पैर पर आप कुल्हाडा मत मारो। तमाखू जैसे निन्दनीय पदार्थों के सेवन से बचने का उपाय करो। अपनी वृत्ति को सात्विक बनाओगे तो जीवन का आदर्श तुम्हे सूझ पडेगा। इस समय तुम्हारा हृदय दया से द्रवीभूत होगा। वह दया तुम्हारा परम कल्याण करेगी। वह सच्ची दया जगत् को आनन्द का धाम बना सकती है। दिखावटी दया से काम नहीं चल सकता। अन्त करण को कल्याणमय बनाओ। ऐसा करने से तुम्हारा कल्याण होगा और जगत् का भी कल्याण होगा।

बीड़ी

आजकल लोगो के जेब मे बीडी, सिगरेट और दियासलाई रहती है। कई लोग तो बिस्तर पर पडे–पडे ही मुह मे बीडी डाले रहते हैं। बीडी-पान के पश्चात् ही उठते हैं।

प्रात.काल ईश्वर-स्मरण का अपूर्व समय है। बुद्धिमान पुरुष यह अमूल्य समय बीडी की धुंआधार मे नष्ट नही करता। पर जिनके लिए बीडी ईश्वर से बडी चीज है उनकी बात निराली है।

आप लोग विश्व का कल्याण चाहने वाले हैं। तब अपनी मातृभूमि भारत का बुरा कैसे चाहेगे? भारत का बुरा चाहने वाला भारतीय सपूत नही है। सचमुच भारत की भलाई–बुराई मे अपनी भलाई–बुराई है। भारत का सुख-दु ख अपना ही सुख-दु.ख है। अतएव प्रत्येक भारतीय को भारत के सुख-दु ख का ख्याल रखना होगा। जिस कार्य से भारत का अकल्याण होता है उसे त्याग देना भारतीय का प्रथम कर्तव्य है।

बीड़ी से देश के धन का कितना नाश होता है, जरा हिसाब लगाकर देखिए। भारत की जनसंख्या चालीस करोड है। इसमे करीब आधी सख्या स्त्रियो की अलग निकाल

दीजिए। क्योकि वे प्राय: बीडी नही पीती। बचे हुए वीस करोड़ मनुष्यो मे दस करोड को और कम कर दीजिये। इसमे वालक आदि गिन लीजिए। शेष दस करोड पुरुष रहे। इनमे कई एक तो ऐसे हैं जिनका वीडी खर्च तीस रुपया मासिक है। छह आने प्रतिदिन खर्च करने वाले एक भाई ने मेरे समक्ष वीडो का त्याग किया है। पर सामान्य रूप से दो रुपया मासिक औसत वीडी खर्च समझ लिया जाय तो दस करोड मनुष्यो का प्रतिमास बीडी का खर्च वीस करोड रुपया होता है। एक वर्ष मे यही खच दो अरब और चालीस करोड हो जाता है। इसे हस कर मत टालिये। जरा ध्यान दीजिये। यह हसने का नही, हृदय को चीर डालने वाला हिसाव है। दो अरव, चालीस करोड रुपये किसे कहते हैं? क्या यह उपेक्षणीय धनराशि है? जिस देश मे छह करोड मनुष्यो को पेट भर अन्न नही मिलता वहा इतनी बडी रकम क्या साधारण गिनी जा सकती है?

छोटी-छोटी रकम पर डकैती डालने वालो को सरकार पकडती है और सजा देती है। पर इतनी विशाल धनराशि धुआ होकर उड़ जाती है, इस ओर उसका ध्यान क्यो नही जाता?

यह व्यसन देश रूपी वृक्ष को उदेई लगने के समान है। अगर इसका उचित उपाय न किया गया तो देश रसातल मे चला जायेगा।

कई लोग कहा करते हैं—साहव, अकेला चना क्या भाड फोड़ सकता है? मेरे अकेले के किये क्या हो सकता है? अगर मैंने वोडी पीना छोड भी दिया तो कौनसा देश का भारी उपकार हो जायगा?

यह ख्याल गलत है या अपनी दुर्वलता को दवाने का वहाना है। अकेला सूर्य सारे देश को प्रकाशित करने मे समर्थ होता है।

जो जिस व्यसन के वशीभूत होता है, वह उसका निषेध नही कर सकता। यही नही वरन् वह अपनी मण्डली वढाने की फिक्र मे रहता है। अगर आज एक आदमी भी वीडी पीना छोड देता है तो वह दस दूसरो से भी छुडा सकता है।

मैंने सुना है, एक वीडी मे जितनी तमाखू होती है, उतनी तमाखू का सत्व निकाल कर सात मेढको को खिलाया जाय तो उनकी मृत्यु हो जाती है। जब एक बीडी मे इतना विष है तो आप दिन भर में न जाने कितनी वीड़िया पीते हैं और कितना विष अपने उदर मे भरते हैं। यह विष आपको जीवनी शक्ति को, आखो के तेज को और आपके वुद्धिवल को कितनी क्षति पहुचाता है? एक वार इस बात पर विचार कर देखिए।

वीड़ी पीने वालो की पाचनशक्ति मन्द पड़ जाती है। अन्न पर उन्हें रुचि नही रहती। अन्न पर अरुचि होने से मसालेदार शाको की, चटनियो की और नाना प्रकार के

व्यजनो का आवश्यकता होती है, जिससे रुचि जागृत हो जाय । इसके फलस्वरूप कितने ही नये—नये रोग आते हैं और स्वास्थ्य का अपहरण करते हैं ।

वीडी पीने वालो का नैसर्गिक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है । रक्त उनका दूषित हो जाता है । दात काले पड जाते हैं । मुह से वदवू इतनी निकलती है कि दूसरे से पास बैठा नही जाता । हाथ से भी दुर्गन्ध आने लगती है । यह सव दोष प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं । फिर भी आश्चर्य है कि लोग वीडी के कीडे बने रहने मे ही आनन्द मान रहे हैं ।

कई लोग कहा करते हैं—हमे दस्त साफ नही होता, कब्जी रहती है । अतएव लाचारी से बीडी पीनी पडती है । मगर यह भी मिथ्या सस्कार है । स्त्रियो को यह बिमारी क्यो नहीं होती ? उनका काम कैसे चलता है ? उन्हे वीडी की आवश्यकता नही होती और तुम्हें होती है, इसका क्या कारण है ?

कृषि

लोगो ने कृषि को महापाप और खेती करने वाले को महापापी मान लिया है । पर खेती से उत्पन्न होने वाले अन्न को खाने मे भी पाप मान लिया जाय तो कैसी विडम्वना खडी होगी ? लोग असत्य भाषण, मायाचार, धोखा और जुआ खेलने मे अल्पारम्भ मानते हैं और खेती करने मे महापाप मानते सकोच नही करते । यह उनकी गम्भीर भूल है । खेती मे होने वाला आरंम्भ, आरम्भ तो है ही, पर सौदा-फाटका, कूड-कपट जितना पाप उसमे नही है । अगर किसान के हृदय के साथ व्यापारी के हृदय की तुलना करो तो तुम्हे ज्ञात होगा कि अल्प पापी कौन है और महा पापी कौन है ? व्यापारी तो छल—कपट का आश्रय लेता है पर किसान तो केवल प्रकृति का ही आश्रय लेता । प्राकृतिक वर्षा हो तो वे अपना जीवन धन्य मानते हैं । वर्षा न हो तो दु ख का अनुभव करते हैं ।

दो मार्ग

तुम ऐसी जगह खडे हो, जहा से दो मार्ग कटते हैं । तुम जिधर चाहो, जा सकते हो । एक ससार का मार्ग है, दूसरा मुक्ति का । एक वन्धन का, दूसरा स्वाधीनता का ।

ससार के बन्धन के मार्ग पर चलोगे तो चलने का कभी अन्त ही न आ सकेगा और लक्ष्य तक न पहुच सकोगे । मोक्ष का मार्ग भवभ्रमण का शीघ्र ही अन्त लाता है—शास्त्रकारो ने मोक्षमार्ग पर चलने की प्रेरणा की है ।

सुन्दर रूप

बाहरी चमक—दमक को सुन्दर रूप मत समझो । जिस रूप को देखकर पाप कापता है और धर्म प्रसन्न होता है, वही सच्चा सुरूप है—सौन्दर्य है ।

असली सौन्दर्य आत्मा की वस्तु है । आत्मिक सौन्दर्य की सुनहरी किरणे जो वाहर प्रस्फुटित होती हैं, उन्ही से शरीर की सुन्दरता वढती है ।

आचार्यश्री गणेशीलालजी म.सा.

शान्त क्रान्ति के जन्मदाता आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा सम्यक्ज्ञान और क्रि की ज्योतिर्मय मशाल थे । आपको पद नहीं सयम प्रिय था । सयमीय जीवन की सुरक्षा के लि ही तो ११०० से ऊपर साधु–साध्वियों के संचालक आचार्य पद को भी आपने सहज ही त्य दिया था । आपश्री की दिव्य प्रतिभा गम्भीर से गम्भीर विषय को सरल एवा सहज रूप प्रस्तुत करने मे समर्थ थी । आपश्री के विचारो का भी सघ द्वारा विशेष सकलन नही किया सका । आत्मदर्शन, जैन सस्कृति का राजमार्ग, नवीनता के अनुगामी आदि प्रवचनो की पुस्त जनता के समक्ष आई । यहां आचार्य प्रवर के विचारो का सक्षिप्त मे प्रस्तुतीकरण किया रहा है ।

जैनधर्म और स्याद्वाद

'जैनधर्म आत्म–विजेताओ का महान् धर्म है । जिन्होने रागद्वेष आदि अपने आतरिक विकारो पर विजय प्राप्त करके सयम एव साधना द्वारा निर्मल ज्ञान प्राप्त कर अपनी आत्मा को उत्थान के मार्ग पर अग्रसर किया है । उन्हे हमारे यहा 'जिन' (विजेता) कहा गया है तथा इन विजेताओ द्वारा प्रेरित दर्शन का नामाकन जैन-दर्शन के नाम से हुआ । अत यह दर्शन किसी व्यक्ति विशेष, वर्ग-विशेष या शास्त्र–विशेष की उपज नही, बल्कि इसका विकास उन आत्माओ द्वारा हुआ है जिन्होने सारे सासारिक (जातीय, देशीय, सामाजिक वर्णिय आदि) भेदभावो व यहा तक कि स्व–पर को भी विसर्जित कर अपने जीवन को सत्य के लिए होम दिया । यही कारण है कि इसका यह स्वरूप, इसकी महान् आध्यामिकता व व्यापक विश्वबधुत्व का प्रतीक है ।

मैं यहा पर जैनदर्शन की मौलिक देन स्याद्वाद या अनेकान्तवाद पर कुछ विशेष रोशनी डालना चाहता हू । जिस प्रकार सत्य के साक्षात्कार मे हमारी अहिंसा स्वार्थ–सघर्षो को सुलझाती हुई आगे बढती है, उसी प्रकार यह स्याद्वाद जगत् के वैचारिक सघर्षो की अनोखी सुलझन प्रस्तुत करता है । आचार मे अहिंसा और विचार मे स्याद्वाद यह जैनदर्शन की सर्वोपरि मौलिकता कही है । स्याद्वाद को दूसरे शब्दो मे वाणी व विचार की अहिंसा के नाम से भी पुकारा जा सकता है ।

किसी भी वस्तु या तत्व के सत्य स्वरूप को समझने के लिए हमे किसी सिद्धान्त का आश्रय लेना होगा । एक ही वस्तु या तत्त्व को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखा जा सकता है और इसलिए उसमे विभिन्न पक्ष भी हो जाते हैं । अत उसके सारे पक्षो व दृष्टिकोणो को विभेद की नही, बल्कि समन्वय की दृष्टि से समझकर उसकी यथार्थ सत्यता का दर्शन करना इस सिद्धात से गहनचितन के आधार पर ही सम्भव हो सकता है । विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया है कि एक ही वस्तु की कई बाजुए हो सकती हैं और उनमे भी ऐसी बाजुए अधिक होती हैं, जिनका स्वरूप अधिकतर प्रत्यक्ष न होकर अप्रत्यक्ष ही रहता है । अत' इन सारे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष पक्षो को समझने के बाद ही किसी भी वस्तु के सत्यस्वरूप का अनुभव किया जा सकता है ।

किसी वस्तु विशेष के एक ही पक्ष या दृष्टिकोण को उसका सर्वांग स्वरूप समझकर उसे सत्य के नाम से पुकारना मिथ्यावाद या दुराग्रह का कारण बन जाता है । विभिन्न पक्षों या दृष्टिकोणों के प्रकाश मे जब तक एक वस्तु का स्पष्ट विश्लेषण न कर लिया जाय, तब तक

यह नही कहा जा सकता कि हमनें उस वस्तु का सर्वांग स्वरूप समझ लिया है। अत उस वस्तु को विभिन्न दृष्टिकोणो के आधार पर देखने, समझने व वर्णित करने वाले विज्ञान का नाम ही स्याद्वाद या अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद (सायन्स ऑफ व्हेरीसेटलिटी ऑर रेलिव्हिटी) कहा गया है।

यह स्याद्वादी दृष्टिकोण किसी भी वस्तु के यथार्थ स्वरूप को हृदयगम करने के लिए परमावश्यक साधन है। इसके जरिये सारे दृढवादी या रूढिवादी विचारो की समाप्ति हो जाती है तथा एक उदार दृष्टिकोण का जन्म होता है, जो सभी विचारो को पचा कर सत्य का दिव्य प्रकाश शोधने मे सहायक बनता है।

'एक ही वस्तु के स्वरूप पर विभिन्न लोग अपनी-अपनी अलग-अलग दृष्टियों से सोचना शुरू करते हैं। यहा तक तो विचारो का क्रम ठीक रूप से चलता है। किन्तु उससे आगे होता है कि एक ही वस्तु का विभिन्न दृष्टियो से सोचकर उसके स्वरूप को समन्वित करने की ओर वे नही झुकते। जिसने एक वस्तु को जिस विशिष्ट दृष्टि से सोचा है, वह उसे ही वस्तु का सर्वांग स्वरूप घोषित कर अपना ही महत्व प्रदर्शित करना चाहता है। फल यह होता है कि एकान्तिक दृष्टिकोण व हठधर्मिता का वातावरण मजबूत होने लगता है और वे ही विचार जो सत्य ज्ञान की ओर बढा सकते थे, पारस्परिक समन्वय के अभाव मे विद्वेषपूर्ण सघर्ष के जटिल कारणो के रूप मे परिवर्तित हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति मे स्याद्वाद का सिद्धान्त उन्हे बताना चाहता है कि सत्य के टुकडो को पकडकर उन्हे ही आपस मे टकराओ नही, बलिक उन्हें तरकीब से जोडकर पूर्ण सत्य के दर्शन की ओर सामूहिक रूप से जुट पडो। अगर विचारो को जोड़कर देखने की वृत्ति पैदा नही होती व एकागी सत्य के साथ ही हठ को बाध दिया जाता है तो यही नतीजा होगा कि वह एकागी सत्य सत्य न रहकर मिथ्या मे बदल जायेगा। अत यह आवश्यक है कि अपने दृष्टिबिन्दु को सत्य समझते हुए भी अन्य दृष्टिबिंदुओ पर उदारतापूर्वक मनन किया जावे तथा उनमे रहे हुए सत्य को जोडकर वस्तु के स्वरूप को व्यापक दृष्टियो से देखने की कोशिश की जावे।

सर्व साधारण को स्याद्वाद की सूक्ष्मता का स्पष्ट ज्ञान कराने के लिए मैं एक दृष्टात प्रस्तुत कर रहा हूं।

एक ही व्यक्ति अपने अलग-अलग रिश्तो के कारण पिता, पुत्र, काका, भतीजा, मामा, भानजा आदि हो सकता है। वह अपने पुत्र की दृष्टि से पिता है तो इसी तरह अपने पिता की दृष्टि से पुत्र भी। ऐसे भी अन्य सम्बन्धो के व्यावहारिक उदाहरण आप अपने चारां ओर देखते हैं। इन रिश्तो की तरह एक व्यक्ति मे विभिन्न गुणो का विकास भी होता है। अत यही दृष्टि वस्तु के स्वरूप मे लागू होती है कि वह भी एक साथ सत्-असत् नश्वर-अनश्वर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष क्रियाशील-अक्रियाशील, नित्य-अनित्य गुणो वाली हो सकती है। जैसे एक ही व्यक्ति मे पुत्रत्व व पितृत्व दो विरोधी गुणो का सद्भाव सम्भव है, क्योकि उन गुणो को हम

विभिन्न दृष्टियो से देख रहे हैं। उसी प्रकार एक ही वस्तु विभिन्न अपेक्षाओ से नित्य भी हो सकती है तथा अनित्य भी। जब स्थूल सासारिक व्यवस्था भी सापेक्ष दृष्टि पर टिकी हुई है तो वस्तु के सूक्ष्म स्वरूप को हठ मे जकडकर एकान्तिक बताना कभी सत्य नही हो सकता। यह ठीक वैसा ही होगा कि एक ही व्यक्ति को अगर पुत्र माना जाता है तो वह पिता कहला नही सकता और इसकी असत्यता प्रत्यक्ष. सिद्ध है। चाहे तो यह सासारिक व्यवस्था ले लीजिए या सिद्धान्तो की स्वरूप विवेचना–सब सापेक्ष दृष्टि पर अवलम्बित है। अगर इस दृष्टि को न माना जायेगा व सम्बन्धित सारे पक्षो के आधार पर वस्तु के स्वरूप को न समझा जायेगा तो एक क्षण मे ही जागतिक व्यवस्था मिट-सी जायेगी। आश्चर्य यही है कि स्थूल रूप से जिस सापेक्ष दृष्टि को अपने चारो ओर सासारिक व्यवहार मे देखा जाता है, उसी सापेक्ष दृष्टि को वैचारिक सूक्ष्मता के क्षेत्र मे भूला दिया जाता है और फलस्वरूप व्यर्थ के विवाद उत्पन्न किये जाते हैं।

यहा यह शका की जा सकती है कि एक ही वस्तु मे दो विरोधी धर्म एक साथ कैसे रह सकते हैं ? शकराचार्य ने यह आपत्ति उठाई थी कि एक ही पदार्थ एक साथ नित्य और अनित्य नहीं कहा जा सकता, जैसे शीत और उष्ण गुण एक साथ नही पाए जाते। किंतु शका ठीक नही है। विरोध की शंका तो तब उठाई जा सकती है जबकि एक ही दृष्टिकोण–अपेक्षा से वस्तु को नित्य भी माना जाय और अनित्य भी। जिस दृष्टिकोण से वस्तु को नित्य माना जाये, उसी दृष्टिकोण से यदि उसे अनित्य भी माना जाये तब तो अवश्य ही विरोध होता है, परन्तु भिन्न-भिन्न दृष्टियो की अपेक्षा से भिन्न–भिन्न गुण मानने मे कोई विरोध नही आता, जैसे एक व्यक्ति उसके पुत्र की अपेक्षा से पिता माना जाता है व पिता की अपेक्षा से पुत्र तब पितृत्व व पुत्रत्व के दो विरोधी धर्म एक ही व्यक्ति मे अपेक्षाभेद से रह सकते हैं, उसमे कोई विरोध नही होता। विरोध तो तब हो जब हम उसे जिसका पिता माना है, उसी का पुत्र भी मानें। इसी तरह भिन्न–भिन्न अपेक्षा से भिन्न-२ धर्म मानने मे कोई विरोध नही होता।

जैनदर्शन की मान्यता के अनुसार प्रत्येक पदार्थ उत्पन्न होने वाला व नष्ट होने वाला और फिर भी स्थिर रहने वाला बताया गया है। 'उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्' यह पदार्थ के स्वरूप की व्याख्या है। आश्चर्य मालूम होता है कि नष्ट होने वाली वस्तु भला स्थिर कैसे रह सकती है, किंतु स्याद्वाद ही इसको सुलझा देता है। ये तीनो पर्याय सापेक्ष दृष्टि से कही गई हैं। एक दूसरे के बिना एक दूसरे की स्थिति बनी नही रह सकती है। उदाहरण स्वरूप समझ लीजिये कि एक सोने का कडा है और उसे तुडाकर जंजीर बना ली गई तो वह सोना कडे की अपेक्षा से नष्ट हो गया एव जजीर की अपेक्षा से उत्पन्न हो गया, किन्तु स्वर्णत्व की अपेक्षा से वह पहले भी था और अब भी है, वह उसकी स्थिर स्थिति हुई। पदार्थ की पर्याय बदलती है। उसमे पूर्व-पर्याय का विनाश व उत्तर-पर्याय की उत्पत्ति होती रहने पर भी पदार्थ का द्रव्य स्वरूप उसमे कायम रहता है। इस तरह पर्यायार्थिक नय (दशा परिवर्तन) की अपेक्षा से पदार्थ अनित्य है और द्रव्यार्थिक नय (स्थिर स्थिति) की अपेक्षा से नित्य भी है। यही स्याद्वाद का गौरवपूर्ण एव मार्मिक स्वरूप है।

स्याद्वाद के सिद्धात को जैनदर्शन का हृदय कहा जाता है। जैसे हृदय शुद्ध किया गया रक्त सभी अ गो मे समान रूप से सचारित करता रहे तो शरीर का टिकना सम्भव होगा। उसी तरह स्याद्वाद सभी सिद्धान्तो को समझने मे समन्वय की उदार भावना को बराबर प्रेरणा देता रहता है। जैनदर्शन की सबसे बडी विशेषता तो यह है कि वह अपनी मान्यता के प्रति भी हठवादी (दुर्नयी) नही है। वहा तो सत्य से प्रेम किया जाता है और निरन्तर अपने स्वरूप को सत्य के रग मे रगा रखने मे परम सन्तोष की अनुभूति की जाती है। सत्य की आराधना जैनदर्शन का प्राण है। वह न अपनी मान्यता के विषय मे दुराग्रही है और न दूसरो की मान्यताओ का किसी भी रूप मे तिरस्कार करना चाहता है। वह तो केवल यह चाहता है कि समस्त विश्व पूर्ण सत्य के स्वरूप को समझने के सही राह पर आगे बढे।

स्याद्वाद एक तरह से ससार के समस्त विचारको व दार्शनिको को आह्वान करता है कि सब अपने आपसी हठवाद व एकागी दृष्टिकोणो के कलह को त्याग कर एक साथ बैठो तथा एक दूसरे की विचारधाराओ का स्पष्ट रूप से आदान-प्रदान करो। इस तरह सामूहिक रूप से व शुद्ध जिज्ञासा व निर्णय बुद्धि से सम्मिलित विचार-विमर्श किया जायेगा, उनका मथन होने लगेगा तो जरूर ही छाछ छाछ पैदे मे रह जायेगी और सार रूप मक्खन ऊपर तैर कर आ जायेगा। तब स्याद्वाद का सन्देश है कि उन विचारधाराओ के समूह मे से असत्य अशो को निकाल कर अलग कर दो, हठवाद, एकान्तवाद और अपने ही विचारो मे पूर्ण सत्य मानने की दुराग्रही वृत्तियो को पूरी तौर पर तिलाजलि दे दो। सत्य के भिन्न-भिन्न खण्डो का चयन करो, उन्हे जोड कर पूर्ण सत्य के दर्शन की ओर उन्मुख होओ। सू ड ही हाथी है,पाव ही हाथी है या पीठ ही हाथी है, ऐसा मान सकते रहने से कभी भी हाथी का असली स्वरूप समझ मे नही आयेगा बल्कि ऐसा हठाग्रह करने पर तो मानना एकागी सत्य होने पर भी हाथी के पूर्ण स्वरूप की दृष्टि से असत्य ही कहलायेगा। अत सिद्धातो और विचारो के क्षेत्र मे इसे गम्भीरतापूर्वक समझने व सुलझाने की जरूरत है कि सू ड ही हाथी नही है, पाव ही हाथी नही है या पीठ ही हाथी नही है, बल्कि ये सब अलग-अलग हिस्से मिलकर पूरा हाथी बनाते हैं। आज उन अन्धो की तरह हाथी देखने की मनोवृत्ति चल रही है—क्या तो दार्शनिक क्षेत्र मे और क्या वैचारिक क्षत्र मे, उसे इस स्याद्वाद के प्रकाश मे सुष्ठु बना देने का आज महान् उत्तरदायित्व आ पड़ा है। क्योकि अगर वर्तमान मे फैला हुआ विचार सघर्ष और अधिकाधिक जटिलता का जामा पहनता गया तो आश्चर्य नही कि एक दिन पिछले युद्धो से भी अधिक खौफनाक युद्ध ससार व मानवजाति को विकसित सस्कृति को बुरी तरह तहस-नहस कर डालेगा।

विश्वशाति का प्रश्न धर्म सभ्यता व सस्कृति के विकास तथा समस्त प्राणियो के हित का प्रश्न है। कोई भी व्यक्ति चाहे किसी भी क्षेत्र मे कार्य कर रहा हो, इस प्रश्न से अवश्य ही सम्बन्धित है। इस प्रश्न की सही सुलझन पर ही मानवता की वास्तविक प्रगति का मूल्याकन किया जा सकता है और विश्व शान्ति की नींव को मजबूत करने का आज की परिस्थितियो मे सबसे प्रमुख यही उपाय है कि चारो ओर फैला हुआ विचारो का विषैला विभेद शात किया जाय और एक दूसरे को समझने के उदार दृष्टिकोण का

प्रसार हो सके। ऐसे व्यापक वातावरण का सर्जन जैन दर्शन के स्याद्वाद सिद्धात की सुदृढ आधारशिला पर ही किया जा सकता है। यदि प्रत्येक व्यक्ति व सामूहिक रूप से विभिन्न राष्ट्र व समाज इस स्याद्वाद दृष्टि को अपने वैचारिक क्रम मे स्थान देने लगें तो विश्वशाति की कठिन पहेली सहज ही मे शाति व सद्भावना से हल की जा सकती है। इस महान् सिद्धात के रूप मे जैन धर्म विश्व की बहुत बड़ी सेवा बजाने मे समर्थ है।

'उपसहार रूप में मुझे यही कहना है' जो कि इस शास्त्रवाक्य मे कहा गया है—

"अत्थि सत्थेण परेण पर, नत्थि असत्थ परेण पर"

'सत्य का साक्षात्कार ही जीव का चरम साध्य है। जीवन उन अनुभवो व विभिन्न प्रयोगो का कर्मस्थल है, जहा हम उनके जरिये सत्य की साधना करते हैं, क्योकि सत्य ही मुक्ति है, ईश्वरत्व की प्राप्ति है। जीवन के आचार-विचार की सुघडता व सत्यता मे व्यक्ति, सामाज व विश्व की शाति हुई है तथा शाति के शुभ वातावरण मे ऊचे से ऊचा आध्यात्मिक विकास भी सबके लिए सरल बन सकता है। अत. विचारो की उदारता, पवित्रता, शातिपूर्ण प्रेरणा की जागरूकता के लिए आज स्याद्वाद के सिद्धात को वडी वारीकी से समझने, परखने व अमल मे लाने की विशेष आवश्यकता आ पडी है, जिसके लिए मैं आशा करू कि सब तरफ से उचित प्रयास अवश्य किये जायेंगे।



सर्वोदय की परिभाषा

श्री विनोबाजी गाधीवादी विचारधारा के प्रसारक जननेता थे और सत्य, अहिंसा के सिद्धातो पर एक ऐसे मानव समाज के निर्माण मे सलग्न थे। जिसमे मानव, मानव के नाते अपनी जीवनोपयोगी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिये न्याय–निष्ठा पूर्वक कर्तव्यशील रहकर दूसरे मानवो के प्रति अपने दायित्वो का निर्वाह करे। वर्गसघर्ष, जातिवाद, आर्थिक विषमता और अनैतिक आचार–विचार की सीमा से परे रहकर अपने–अपने विकास के लिये अवसरों की अनुकूलता प्राप्त हो। व्यक्ति की गरिमा का सदुपयोग हो। साम्यभाव के धरातल पर सर्व धर्म-समन्वय का आदर्श अवतरित हो। सर्वतोमुखी जीवन के विकास के लिये सर्वसत्तासम्पन्न विश्व राष्ट्र का निर्माण हो। इस भावना की अभिव्यक्ति का नाम सर्वोदयवाद है।

लेकिन जैनदृष्टि से सर्वोदय की सीमा मानव तक सीमित नही है। उसमे मानव भी अन्य सचेतन प्राणी की तरह एक इकाई है। अत वह प्राणीमात्र के उदय का उदार दृष्टिकोण उपस्थित करती है; उसमे न तो मनुष्य मुख्य है और न अन्य प्राणधारी गौण। सभी को समान स्तर पर रखकर उत्कर्ष की भावना व्यक्त की गई है—

"सर्वापदामन्तकर निरत सर्वोदय तीर्थमिद तवैव"

पूज्यश्री इसी प्रकार के सर्वोदय मे विश्वास करते थे और अपनी निष्ठा को आचार के माध्यम से व्यक्त किया है। सर्वोदय के सम्बन्ध मे आचार्य प्रवर के विचार इस प्रकार हैं—

"जय जय जगत शिरोमणि·····" इसमें कवि ने परमात्मा की जय का नारा लगाया है उसमे परमात्मा के साथ सारे ससार की ही जय का नारा उठता है। लोकरूपी शरीर में सिद्वात्माए शिरोमणि स्वरूप हैं, क्योकि जिनके ज्ञान रूपी प्रकाश मे समस्त लोक 'हस्तामलकवत्' प्रतिभासित होता है। जहा मस्तिष्क की जय है वहां सारे शरीर की भी जय हो ही जाती है, क्योकि मस्तिष्क की जय मे भी सारे शरीर के कार्य का सहयोग छिपा हुआ है तथा छिपी है मस्तिष्क के स्वसचालन के हेतु शरीर को प्राप्त होने वाली सजग प्रेरणा।

"जिस प्रकार भारत के विषय मे केवल उस पर शासन करने वाली सरकार की ही विजय नहीं होती है,किंतु उसके समस्त निवासियो की विजय होती है। उसीप्रकार परमात्मा को जय में ससार के सभी प्राणियो की जय है। इस भावना का नाम ही सर्वोदयवाद है। सबका उदय हो, सब मानवता के रहस्य को समझ कर अपनी अन्यायपूर्ण नीति को छोड़ें और विश्व बन्धुत्व की स्थापना करें। इसी में परमात्मा की जय बोलने का सार रहा हुआ है।

तात्पर्य यह है कि समाज के सहयोग से ही व्यक्ति का विकास होता है और वह उन्नत अवस्था को प्राप्त होता है। जैसे सभी अगो के कारण से मस्तिष्क विचारक्षम व गभीर चिंतन करने वाला होता है, उसी तरह समाज के सरल सौहार्दमय वातावरण मे ही महान् विभूतियो और महात्माओ का जन्म होता है और जैसे मस्तिष्क अधिक विचारक्षम होने के पश्चात् अन्य अगो का विशेष रूप से रक्षण व पोषण करता है उसी प्रकार वे महान् विभूतिया और महात्मा अपना सब कुछ समाज के हितार्थ बलिदान कर देते हैं।

"सभी वर्ग के समुचित सहयोग का प्रश्न समाज के निज के सामूहिक विकास के लिये भी उतना ही महत्वपूर्ण है। जब तक अन्न, वस्त्र आदि जीवनोपयोगी पदार्थों का समाज मे प्रत्यावर्तन होता रहता है तब तक सामाजिक जीवन मे शाति रहती है। किंतु जब यह प्रत्यावर्तन बद हो जाता है या रुक जाता है, चाहे वह समाज मे हो या शरीर मे, तभी स्वास्थ्य बिगडने लग जाता है। जब समाज की उपेक्षा करके व्यक्ति के हृदय मे सग्रह की भावना उत्पन्न होती है तब समाज मे सघर्षपूर्ण विषमता पैदा होती है और वह सामाजिक अशाति का मूल कारण बन बैठती है।"

"सग्रहवृत्ति की राक्षसी मदान्धता ने ही चोरबाजारी, रिश्वत आदि अमानुषिक प्रवृत्तियो को जन्म दिया है। अत जब तक अपनी सचयबुद्धि को त्याग कर अपने द्रव्य का आवश्यकतानुसार सपरित्याग करने की ओर नही झुकेंगे तब तक राष्ट्र और समाज मे विषमता का नाश होकर शाति की स्थापना होना दुष्कर है।"

"अब मैं समाज की वर्तमान व्यवस्था के बारे मे बतलाना चाहता हू कि समाज के विभिन्न अगो मे क्यो भेद उत्पन्न कर दिया गया और इसके कारण जिस प्रकार एक अग पोषण और दूसरा अग पोषण के अभाव मे विकृत हो चला।"

"जैसे शरीर के चार प्रमुख अग होते हैं, उसी प्रकार समाज मे कर्तव्यों को दृष्टि मे रखकर ही चार वर्णों की स्थापना हुई। समाज की सुव्यवस्था को लक्ष्य मे रखकर ही सभवत यह वर्ण विभाग हुआ होगा, किंतु समय प्रवाह के साथ यह वर्ण विभाग विकृति की ओर बढ चला। कर्तव्य की अपेक्षा जातिवाद को अधिक महत्व दिया जाने लगा। अपने को श्रेष्ठ बता कर अपनी ही पूजा प्रतिष्ठा कराने के लिये अन्य वर्णों का तिरस्कार और निरादर किया जाने लगा। जबकि जैन सस्कृति का स्पष्ट दृष्टिकोण है कि—

कम्मुणा बभणो होई, कम्मुणा होई खत्तिओ।
कम्मुणो वइसो होई, सुद्दो हवई कम्मुणा॥

—उत्तराध्ययनसूत्र

कर्म अर्थात् कार्य (आचार-विचार) से ही ब्राह्मणत्व आदि का आरोप किया जा सकता है। जैन संस्कृति वर्ण को बपौती के रूप मे नही मानती। जैन संस्कृति के सामने वर्ण का कतई दृष्टिकोण नही है, उसके सामने तो आत्मिक विकास की महिमा है।

" मेरे कहने का निष्कर्ष यही है कि सर्वोदयवाद के महत्व को समझें और परमात्मा की जय बोलने मे सब प्राणियो के साथ साम्य दृष्टि को अपनायें। वैभव और ये शरीर आदि सब नश्वर हैं, एक दिन नष्ट हो जायेंगे और साथ रह जायेगा वही जो कुछ किया है। जैन-शास्त्रो मे परदेशी राजा का उदाहरण आता है, जिसके हाथ निर्दोषो के खून से सने रहते थे। वह भी केशीश्रमण के उपदेश से त्यागपथ की ओर अग्रसर हुआ। आज भी उसी त्याग की आवश्यकता है, समाज की सघर्षमय विषमता को मिटाने के लिये शोषण का हमेशा के लिये खात्मा कर दिया जाये, इसके लिये अपनी वासनाओ और आवश्यकताओ को सीमित करना चाहिये और अपने वैभव का अमुक हिस्सा दानादि शुभ कार्यों के लिये निर्धारित किया जाना चाहिये।

"अन्त मे यही कहना चाहता हू कि समस्त प्राणियो को आत्मवत् समझें, सबसे प्रेम करें, यही सर्वोदयवाद है और इसी मे परमात्मा की जय यथार्थ रूप से बोली जा सकती है।

[आचार्यश्रीजी के इन विचारो से वर्तमान के जितने भी राजनैतिकवाद, समाजवाद, प्रजातन्त्रवाद, अधिनायकवाद आदि-प्रचलित है,सबका सकलन हो जाता है। इन सबका दृष्टिकोण मानव को सुख-सम्पन्न, समृद्ध बनाना है। लेकिन जैन दृष्टि प्राणिमात्र के उत्कर्ष मे अपना विश्वास व्यक्त करते हुए प्रयत्न करने का आदर्श उपस्थित करती है।]



मानव जीवन की विशिष्टता

"मानव जीवन की विशिष्टता का तभी अनुभव हो सकता है जब कि आत्मा को पतन से वचाकर अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अनुकम्पा, सहानुभूति, उदारता, विशालता, विशुद्धता आदि प्रगतिशील वृत्तियो को ग्रहण करके विकास मार्ग पर कदम वढाये जाते हैं, क्योकि इन वृत्तियो को अपनाने की शक्ति के फलस्वरूप ही ससार के अन्य प्राणियो मे मानव का विशिष्ट स्थान है और यदि मानव ही इन वृत्तियो से हीन रहता है तो वह 'पुच्छविषाणहीन. पशुभि. समान' ही है। परन्तु मेरी दृष्टि मे तो कर्तव्यहीन मानव को पशु की उपमा देना भी पशुत्व का अपमान है, क्योकि पशु तो ज्ञान के दर्जे मे नीचे गिरा हुआ होता ही है लेकिन ज्ञान का ठेकेदार वना आज के वैज्ञानिक युग का मानव जब पशु से भी अधिक बर्बर, अमानुषिक व अज्ञान हो जाता है तव पशु से भी अधिक निकृष्ट ही हुआ। आज के शोषक मानव की राक्षसी जिव्हा रात-दिन निर्दोष प्राणियो के रक्त शोषण हित लपलपाती रहती है और यही विकृत वृत्ति उसे मानवता से गिराये हुए है।"

"अत मानव जीवन की विशिष्टता प्राप्त करने लिये यह आवश्यक है कि आप प्राणि मात्र के सरल प्रेम से अपने हृदय को आप्लावित कर जीवन के प्रत्येक आचरण को अहिंसा के तराजू पर तौलें और यह जानने की चेष्टा करें कि कितने अशो मे आपका जीवन अहिंसामय और त्यागमय वन सका है, उसमे मानवता की प्रधानता स्थापित हो सकी है।

आत्मा से परमात्मा तक के विकास-क्रम का जिन्होने ज्ञान प्राप्त किया है और ज्ञानी होकर उसमे अपनी आस्था जुटाई है, उन्हें सुज्ञानी कहा जायेगा। धर्म और उसके दर्शन की जो धुरी है वह है आत्मा का परमोत्कृष्ट विकास, इसलिये इस विकास का मूल है आत्मा। कैसी आत्मा? जो कि इस ससार के गतिचक्र मे भ्रमण कर रही है अर्थात् जडपुद्गलो के सयोग से जन्म-मरण करती हुई बन्धानुबन्ध करती रहती है तो उस आत्मा का विकास कैसे हो? कौन से कार्य हैं जिनसे आत्मा की भूमिका में उत्थान पैदा होगा और वह उत्थान ऊपर से ऊपर चढती हुई सासारिक सकट की जड़ को ही काट डालेगी, जड और चेतन का सम्बन्ध समाप्त हो जायेगा।

यह जो समस्त ज्ञान है, वही आत्मा की विकास गति को पूर्णतया स्पष्ट करता है और यही आधारगत ज्ञान है, जिसकी रोशनी मे अन्य सारी विचार सरणिया विश्लेषित होती हैं। इसलिये जैनदर्शन मे इस ज्ञान को विशिष्ट महत्व दिया गया है। उसे तत्वज्ञान कहते हैं।

जैन शास्त्रो मे इस तत्वज्ञान का बडा विशद विवरण है और उसमे विस्तार से बताया गया है कि इन तत्वो पर ही आत्मा-परमात्मा और ससार की धुरी घूमती रहती है। यह तत्वज्ञान ससार के मूल से लेकर मुक्ति के मुख तक समाहित माना गया है।

सभ्यता क्या है ?

प्राय सभ्यता को आचार–विचार का विषय माना जाता है और इस दृष्टि से वही देश सभ्य कहलाने का अधिकारी है, जहा के निवासी सत्कर्म निष्ठ नैतिक जीवन बिताने वाले और इन्द्रियो एव आवश्यकताओ का दमन करने वाले होते हैं। सक्षेप में जो भौतिकता के गुलाम नही किंतु भौतिकता जिनकी दासी है, वे ही सभ्य हैं और इन्ही स्रोतो से सुसभ्यता के मधुर प्रवाह प्रवाहित हुआ करते हैं। कोरा भौतिक विकास चाहे बाह्य रूप मे विकास प्रतीत होता हो, किन्तु उसमे आध्यात्मिकता की उच्चता आये विना आत्मोत्थान का मार्ग प्रशस्त नही हो सकता।

यही कहा जा सकता है कि चू कि जीवन–विकास की दीवार नीति, धर्म और चरित्र की नीव पर टिकी हुई रह सकती है, अत उस नीव को उखाड कर कोरी दीवार खडी नही रखी जा सकती है। इसलिये यान्त्रिक प्रसार और व्यवस्था को सही मानव–विकास के अनुकूल नही बनाया गया तो उससे निर्गत सभ्यता विकृति का विषैला वातावरण ही बनायेगी। यान्त्रिक–सभ्यता जीवन–विकास की दिशा मे सहायक बन सके, इसके लिये आध्यात्मिकता को जीवन के सभी क्षेत्रो मे अपनाना कल्याणकारी हो सकेगा।



ईश्वर और उसके प्रकार

कई दर्शन ऐसे हैं जो ईश्वर को इस सृष्टि का कर्ता मानते हैं। उनका कहना है कि ईश्वर ने ही जीवो को बनाया और ससार की समस्त दृष्टिगत वस्तुओ की रचना की। इसके बाद भी ईश्वर इनकी पालना करता है, इनका विनाश करता है और नवीन रचनाएं करता रहता है। ईश्वर की इच्छा के विना पेड का एक पत्ता भी नही हिलता तथा उसके चलाये ही हर पदार्थ गति करता है। इस मान्यता का निष्कर्ष यह हुआ कि ईश्वर, ईश्वर है जो हमेशा एक व नित्य रूप से ईश्वर ही रहता है तथा अन्य जीव, जीव है जो कभी भी अपना विकास कर भगवान् नही वन सकता और भावना सदैव सूत्रधार की तरह इन सव चीजो का निर्माण,पोषण व विनाश करता रहकर क्रीडा व आनन्द करता है। सूत्रधार अपना नाटक खेलकर जिस प्रकार उन पात्रो को समाप्त कर देता है, उसी प्रकार ईश्वर भी इन सव जीवो को क्रीडा कराकर निश्चित अवधि पर समाप्त कर देता है। परन्तु ऐसा मानने पर ईश्वर, ईश्वर नही रहता। यह तो वच्चो के खिलौने की तरह कल्पना कर ली है। जैन दर्शन ईश्वर के स्वरूप को इस प्रकार नही मानता।

आज प्रात मैं वाहर जाकर आ रहा था कि एक भाई मिले। वातचीत के दौरान उन्होने पूछा कि आज किस विषय पर व्याख्यान होगा? मैंने कहा कि मैं हमेशा ईश्वर प्रार्थना वोलता हू सो आज पूरा व्याख्यान ही ईश्वर प्रार्थना पर होगा। वे वोले—जैन और वौद्ध तो ईश्वर को मानते ही नही, फिर आप ईश्वर प्रार्थना के विपय मे व्याख्यान कैसे दोगे? वे भाई ही क्या, दूसरे कई दार्शनिक भी जैन धर्म के तत्व को नही समझने के कारण कह देते हैं कि जैन धर्म अनीश्वरवादी है, अतः नास्तिक है।

जिन लोगो ने ईश्वर को कुम्हार की तरह एकान्त रूप से कर्ता मान लिया है और राजा की तरह उसे नियन्ता मान लिया है, वे अपनी इच्छानुसार ईश्वर को कल्पना मानने वाले को ही ईश्वरवादी आस्तिक समझते हैं एव अन्य लोगो को अनीश्वरवादी व नास्तिक कहते हैं। इसी भ्रान्त धारणा के आधार पर जैन धर्म को अनीश्वरवादी व नास्तिक कहा जाता है, पर वे यह नही समझते कि जैनो के २४ तीर्थंकर हुए हैं तथा उनके नमस्कार मन्त्र में पहले और दूसरे पद पर जिन अरिहत और सिद्धो को नमस्कार किया गया है वे ईश्वर ही हैं।

जैन धर्म मे ईश्वर की जो परिभाषा दी गई है, वही अनुभव के धरातल पर सिद्ध और तर्क की कसौटी पर सत्य ठहरती है। ईश्वर के सत्य स्वरूप को समझने के लिए स्याद्वादी व नयात्मक दृष्टिकोण से जैनधर्म मे ईश्वर तीन प्रकार के माने गये हैं याने कि ईश्वरत्व को तीन रूपों में देखा गया है।

ईश्वर के वे तीन प्रकार इस तरह माने गये हैं–१ सिद्ध, २ मुक्त और ३ बद्ध ।

सिद्ध ईश्वर का स्वरूप निरजन, निराकार, निरामय, ज्योति स्वरूप माना गया है। आचाराग सूत्र मे सिद्ध स्वरूप का विस्तृत वर्णन है । जिनके वर्ण, गन्ध, रस,स्पर्श सहनन, सठान आदि नहीं है व जिनके कोई लिंग नही हैं वे सिद्ध हैं । उनके न राग है, न द्वेष । किसी प्रकार का कर्म फल जिनके सलग्न नही है, उन्होने आत्म स्वरूप की उज्ज्वलता के बाधक अष्टकर्मों को नष्ट कर दिया है और जो शुद्ध आत्म–स्वरूप मे स्थित हो गये हैं । सिद्ध शब्द का शब्दार्थ भी यही है–सिज् वन्धने एवं ध्या अग्नि संयोगे धातुओं से यह शब्द बना है जिसका अर्थ होता है कि प्रकृति के समस्त वन्धनो को नष्ट करने वाले । इस प्रकार जैन धर्म में सिद्ध ईश्वर उन आत्माओ को माना गया है जो अपने स्वरूप को परमोज्ज्वलता को प्राप्त कर संसार से समस्त वधनो से विमुक्त हो निराकार आदि निर्वन्ध रूप मे प्रतिष्ठित हो गई हैं । उन आत्माओ का ससार से कोई सम्वन्ध नहीं रहता, वे ससार की किसी भी प्रवृत्ति को प्रेरित नही करती ।

दूसरा प्रकार है मुक्त ईश्वर का । मुक्त ईश्वर वे आत्माए हैं जिन्होने शरीरों में रहते हुए अपने समस्त विकारो के कलुष को धो डाला है, काम, क्रोध का जिनमे अ श भी नही है–राग–द्वेष की भावना को समूल नष्ट कर दिया है । ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय व अन्तराय कर्मों को क्षय करके जिन्होने अपनी आत्मा के अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन एव अनन्त शक्ति को प्रकटित कर दिया है । ऐसे महापुरुष जो सर्वज्ञ व सर्वदर्शी हैं तथा स्वस्वरूप में रमण करते हैं, वे मुक्त ईश्वर हैं या जिन्हे जीवन मुक्त कह दें । भगवान् महावीर आदि तीर्थंकर इसी भूमिका पर थे । नमस्कार मन्त्र मे पहले पद पर जिन अरिहन्तो को नमस्कार किया है वे मुक्त ईश्वर और दूसरे पद पर जिनको नमस्कार किया गया है वे हैं सिद्ध ईश्वर । सिद्ध ईश्वर के स्वरूप को प्रकाशित करने वाले भी मुक्त ईश्वर ही हैं अत उनका पद पहला रखा गया है ।

तीसरे, बद्ध ईश्वर संसार की समस्त आत्माएं हैं जो चार गति चौरासी लाख जीव योनियों में विखरी हुई हैं । बद्ध याने कर्मों से बधा हुआ है । ये ससार की समस्त आत्माए काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष आदि के कारण अपने आत्म स्वरूप को भूली हुई हैं और आठो प्रकार के कर्मों का वन्ध करती रहती है । यह बद्ध ईश्वर ही सृष्टि का निर्माण करता है । वृक्ष को बीज में रहे हुए आत्मा ने ही बनाया है, पानी मे रहे हुए जीवात्माओ ने पानी की तरलता का निर्माण किया । आज का विज्ञान भी वनस्पति मे तो जीव स्वीकार कर चुका है किन्तु पृथ्वी, पानी, वायु, अग्नि आदि में नही करता । पानी और वायु में केवल उन्हीं त्रस जीवों को वह मानता है जो दूरवीक्षण यत्र से देखे जा सकते हैं पर उनके पिंड नहीं मानता । जैन दर्शन में इन पिंड शरीरो का विस्तृत वर्णन है कि इनमे जीव कैसे हैं और वे जीवात्मा पुद्गलों को ग्रहण करते हुए किस प्रकार इन पदार्थों की रचना करते हैं ? हमारे शरीर को भी हमारी आत्मा ने गर्भ मे माता की रसवाहिनी नाड़ी से रस दे देकर बनाया है तो उसी तरह सारे वाह्य जगत् की जो सृष्टि है–जो मकान, सडक, रैल, मोटर आदि निर्माण कार्यों का जाल विछा हुआ है वह इन्हीं बद्ध आत्माओं की रचना है । पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु, वनस्पति, कीट

पतग, पशु आदि अपने-अपने ढग से संसार के कई पदार्थों की रचना मे योग देते हैं तो मनुष्य ने अपने मस्तिष्क और अपनी बुद्धि से आज के जगत् की विविध दृश्यावलियां निर्मित की हैं। जैन धर्म इस तरह सृष्टि का कर्ता, निर्माता नियन्ता किसी एक का नित्य वा अधूरे ईश्वर को नही मानता, वह तो इस समस्त क्रिया कलापो का कर्त्ता उन सब आत्माओ को मानता है जो इस ससार मे वद्ध हैं और अपने एकाकी वा सामूहिक प्रयासो से सृष्टि की रचना मे योग देते रहते हैं।

और जैन धर्म की सूक्ष्म सिद्धान्त दृष्टि के अनुसार ये सब बद्ध ईश्वर की तरह निश्चय दृष्टि में शुद्ध स्वरूपी है किन्तु तैजस कामर्ण शरीर से वधा हुआ होकर अपने शुद्ध स्वरूप को भूला हुआ है। जैन दर्शन की इस मान्यता के पीछे आतमाओ को अपने विकास के लिए प्रेरणा का अद्भुत स्रोत वहा रहा है। यह नही कि आत्मा सिर्फ ईश्वर की छाया है, उसका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नही, वलिक सभी आत्माए पूर्ण विलग व स्वतन्त्र हैं तथा उन सव वद्ध आत्माओ मे ईश्वरत्व छिपा पडा है। वे सव शक्तिधारिणी हैं, आवश्यकता है कि वे अपनी आत्माओ पर लगे कर्म मैल को पूरी तरह धोकर अपनी शक्ति को चमका दें। सयम और साधना का पुरुषार्थ करते हुए ये वद्ध ईश्वर ही मुक्त ईश्वर हो जाते हैं और शरीर के अन्तिम वन्धनो को छोडकर ये ही सिद्ध ईश्वर के चरम स्वरूप को प्राप्त कर लेते हैं। भगवान् महावीर आदि तीर्थंकर भी पहिले वद्ध ईश्वर थे फिर त्याग व तपश्चर्या से अपना विकास साधते हुए मुक्त ईश्वर हुए तथा उसके बाद सिद्ध ईश्वर हो गये ज्योतिस्वरूप निर्मल।

जैन धर्म का जो यह ईश्वरवाद है, वह वडा गूढ है और उसमे स्वय कर्तव्य की एक उदात्त भावना छिपी हुई है। वद्ध से लेकर सिद्ध स्थिति तक जो आत्मस्वरूप वर्णित किया है उसका स्पष्ट निष्कर्ष है कि प्रारम्भ से कोई एक ही ईश्वर नही है जो आत्मा सिद्ध होकर ईश्वर हो जाता है वे अपनी समस्त ज्ञानादि अनन्त शक्तियो को प्राप्त करके अपने स्वतन्त्र निज स्वरूप रमण मे तल्लीन रहती हैं और अन्य सिद्ध परमात्माओ की पूर्ण ज्योति के सदृश ज्योतिस्वरूप वन जाती हैं। तदनंतर उनका ससार से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नही रहता है फिर कर्ता और नियन्ता होने की वात तो कतई दूर है।

ससार को वनाती, बिगाडती या बदलती है ये वद्ध आत्माएं, जो जब सत्कार्यों में प्रवृत्त होती हैं अधिकतया तब ससार मे जिसे सतयुग कहें या कुछ और नीति और धर्म का युग चलता है और जब इन वद्ध आत्माओ मे विकृतियां वढती हैं तब अनीति और अन्याय का क्रम चलता है। इन बद्ध आत्माओ मे विकास की गति एक ओर ससार मे सामूहिक रूप से अच्छा वातावरण पैदा करती है तो दूसरी ओर इन वद्ध आत्माओ मे से ही जो उच्चतम विकास साध लेती हैं, वे मुक्त और सिद्ध अवस्थाओ की ओर आगे बढती हैं।

तो संसार में रहा हुआ हर वद्ध आत्मा अपने में एक प्रेरणा का उत्साह ला सकता है क्योंकि वास्तविक रूप से वह किसी एक ईश्वर की शक्ति की कठपुतली नहीं, स्वय अपने विकास का कर्ता, नियन्ता और निर्माता है-पुरुषार्थ करने से अनादि से वद्ध आत्मा भी विकास करते हुए मुक्त और सिद्ध हो सकता है। निष्कर्ष यह हुआ कि हम भी मुक्त होकर सिद्ध हो सकते हैं।

बालिकाओं के लिये उद्बोधन

आज जैसी समाज की परिपाटी है, बालिकाए जिस घर मे पैदा होती हैं, वयस्क होने पर उन्हे उस घर को छोडकर दूसरे घर मे अपने पति के घर मे प्रवेश करना पडता है। उस घर मे अपना स्थान बनाकर समूचा जीवन वही व्यतीत करना पडता है। कन्या, भार्या और माता के रूप मे आप लोगो के अपने जीवन मे विभिन्न कर्तव्य होते हैं और एक सन्नारी का कर्तव्य होता है कि वह उन विभिन्न कर्तव्यो को विवेक व सद्‌विचार के आधार पर निभाती रहे।

यहा पुरुष से नारी का उत्तरदायित्व भार-विशेष प्रतीत होगा। पुरुष तो जिस घर मे पैदा होता है, वही रहता है और उस दृष्टि से उसे नये वातावरण मे अपना स्थान बनाने की जिम्मेदारी नही निभानी पडती, जो कि एक नारी को करना पड़ता है। दूसरे, जब तक मा के कर्त्तव्यो का बोझ उस पर आता है तो वह उत्तरदायित्व और भी महान् होता है। वह उत्तर-दायित्व न स्वय उस घर के लिये बल्कि समूचे समाज व राष्ट्र के लिये भी कम महत्व का उत्तरदायित्व नही होता।

इसलिये यह नि संकोच कहा जा सकता है कि एक बालक के सुशिक्षण से भी एक बालिका का सुशिक्षण ज्यादा महत्व रखता है—प्राथमिकता का अधिकारी होता है। एक बालिका सुशिक्षित होकर न केवल अपने ही जीवन का नवनिर्माण करेगी, बल्कि अपनी सतान को सुसस्कारित बनायगी, अपने घर मे एक नये स्वस्थ वातावरण की सृष्टि करेगी। एक माता हजार शिक्षको से भी अधिक प्रभावशाली होती है। शिशु की सारी कल्पनाओ, सारे सस्कारों और सारी अनुभूतियो का स्रोत उसकी माता का जीवन होता है। सस्कारित माताओ का देश होनहारो का देश होता है।

तो आपका इस समय का शिक्षण सारे जीवन की आधार-शिला का निर्माण कर रहा है, क्योकि बाल्यावस्था वह समय है, जब बालक या बालिका का हृदय उस कच्ची गीली मिट्टी की तरह होता है जिसे कुशल कुभकार विभिन्न आकर्षक रूपो मे बदल डालता है। अध्यापिकाओं या अध्यापको का कार्य उस कुंभकार जैसा है, जिनके द्वारा आपको अच्छे रूपो मे घडने के प्रयास किये जाते हैं। इस समय जैसे भी सस्कार हृदय पर अपनी छाप डाल देते हैं, वह छाप जीवन भर नहीं छूटती और इस समय की निर्मित मनोवृत्तियां ही आगे के विकास पथ का निर्देश करती रहती हैं।

आप बालिकाओ के हृदय को सफेद काच की शीशी की उपमा दी जा सकती है। सफेद कांच की शीशी की तरह आपके हृदय इस समय स्वच्छ हैं, सरल हैं और उनमें किसी

तरह का विशिष्ट प्रभाव नहीं होता है। अब कल्पना कीजिये कि तीन शीशियां हो—एक मे इत्र भरा हुआ हो, दूसरी मे शुद्ध जल और तीसरी शीशी मे गटर का बदबू देता हुआ पानी। शीशिया एक-सी हैं किन्तु तीनो अलग–२ पदार्थों के सयोग से अलग–२ गुण वाली बन जाती हैं। इत्रवाली शीशी स्वय सुन्दर दिखती हुई अपने दूर-२ तक के वातावरण को भी सुवासित कर देती है। शुद्ध जल वाली शीशी दूसरो को आकृष्ट नही कर सकती किन्तु अपने आप मे तो पवित्र अवश्य रहती है लेकिन तीसरी शीशी अपनी दुर्गन्धमय अशुद्धता से सारे वातावरण को भी दूषित बना देती है।

अब मैं आपसे पूछू कि आप अपने खाली शीशी के समान हृदय मे इन तीनो मे से क्या भरना चाहती हैं? क्योकि जैसा भी पदार्थ उसमे भरो, उसे भरने का समय यही है। इस समय अपने चरित्र एव सस्कार निर्माण की दृष्टि से आप अपने शिक्षणकाल मे पग–पग पर सतर्क नही रहती हैं तो सारे जीवन के निर्माण-कार्य मे अधूरापन रह जायगा, जो भविष्य मे विकृति की दुर्गन्धभरी सडान बनकर आपको अत्यन्त ही दुखी बना सकता है।

इसलिये इस शिक्षणकाल मे आप पर अपना समूचा जीवन बनाने की जिम्मेदारी होती है। जीवन मे महत्वाकाक्षी होना भी किसी अपेक्षा से एक बहुत बडा सद्गुण है। आपमे से प्रत्येक बालिका यदि अपने निश्चय को दृढ और सुव्यवस्थित बना ले तो ऊचा से ऊचा विकास कर सकती हैं। ऊपर जो शीशियो का उदाहरण दिया गया है, उसके अनुसार आपका जीवन तो इत्र की शीशी की तरह होना चाहिये ताकि आपकी सुविद्या का सुगन्ध से सारे घर व समाज का वातावरण मधुरता एव सुन्दरता की ओर उन्मुख हो सके। अगर आपमे ऐसा प्रभाव पैदा नही हुआ तो आपका नारीत्व भी शिष्टता एव सौजन्य मे नही ढल सकेगा, आपका मातृत्व का कर्तव्य अधूरा रहेगा और एक तरह से समूचे जीवन मे चरित्र की जो कान्ति झलकनी चाहिये, वह उतनी आभा के साथ झलक नही सकेगी। यही अवस्था है जबकि आप एक सफल गृहिणी और सफल माता के कर्तव्यो का भलीभाति ज्ञान करके निज को उसके लिये पूर्ण योग्य बनाने की ओर मजबूत कदम बढा सकती है।

यह तथ्य आपको समझ लेना चाहिये कि आज का सामाजिक वातावरण जीवन निर्माण के अधिक अनुकूल नही और उस पर पाश्चात्य सभ्यता का कुप्रभाव आज की शिक्षा पद्धति को भी घेरे हुए है। अतः इस परिस्थिति मे जीवन के सद्विकास के प्रयत्न और भी अधिक कठिन होंगे, किन्तु दृढ निश्चय और अटल कर्त्तव्य भावना के समक्ष कोई भी शक्ति नही जो सफलता को रोक सके। आपको गटर के गन्दे पानी वाली शीशी का अनुकरण नही करना है कि जिससे जीवन को दूषित बना कर दुःखी बना सके और अपने साथ दूसरों को भी ले डूबें। इसीलिये मैं कहता हूं कि बालकों से भी बालिकाओ की सुशिक्षा अधिक आवश्यक व महत्त्व–पूर्ण है।

श्रेष्ठ शिक्षा से पवित्र आचरण के ढाचे में ढलने वाली बालिकाए घर, समाज और राष्ट्र को स्वर्ग बना देती हैं। यह शिक्षा केवल शाब्दिक जगत् में ही चक्कर काटने वाली

नहीं, बल्कि जीवन के मूलभूत अनुभवो एव सिद्धांतो पर आधारित होती है। जीवन के विशिष्ट उतार-चढाव इसमे चित्रित किये जाते हैं और एक क्रियात्मक तरीके से शिक्षार्थी के हृदय मे सत्साहस की उत्पत्ति की जाती है जिसे लेकर वह जीवन के बीहड वन को सजगता, सरलता एव सहिष्णुता से पार कर सके। उस शिक्षा के अप्रतिम प्रभाव से वह एक ऐसे मार्ग की रचना कर सके जिस पर पिछली पीढिया भी चल कर अपने विकास पथ को सुरक्षित बना लें। इसी साधना द्वारा महापुरुषत्व का निर्माण होता है, जिस महापुरुषत्व की जडें ही इसी बाल्यकाल मे लगी हुई होती हैं।

आप बालिकाओ को अपने जीवन के विभिन्न विभागो मे विभिन्न कर्तव्य पूरे करने होंगे अत आपके लिये विशेष प्रकार की निपुणता की आवश्यकता है ताकि नारी जीवन और मातृ जीवन तथा दुर्भाग्य मे वश हो तो विधवा जीवन भी पवित्रता एव शुद्धाचारिता से व्यतीत हो सके।

भारतीय सस्कृति के अनुसार विवाह के समय कन्या को अपना जन्मगृह, अपने माता पिता व सम्बन्धियो आदि को त्याग कर एक नये घर एक कुटुम्ब मे प्रवेश करना होता है। विवेक और ज्ञान की अपरिपक्व अवस्था मे नये घर मे अपनत्व पैदा करना—इसमे भारतीय नारी का आदर्श रहा हुआ है। अत प्रारम्भ मे कन्याएं ऐसे शिष्ट और नम्र सस्कारो की छाप अपने हृदय पर डालें कि जो भी उनके सम्पर्क मे आवें, उनके सुष्ठु व्यवहार से प्रभावित हुए बिना न रहे। आचार और विचारो की शुद्धता आधुनिक युग मे भी भारतीय नारी की प्राचीन प्रतिष्ठा स्थापित करवा सकती है।

प्राचीनकाल मे भारत के सामाजिक, धार्मिक व राष्ट्रीय जीवन मे नारी के योग्य नारी का एक सम्मान भरा समुचित स्थान था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे अद्भुत शौर्य व तेज प्रकट करने वाली नारियो के जीवन-चरित्र आज भी इतिहास के पृष्ठो पर जैसे स्वर्णाक्षरो से अकित हैं। आप ही की वे बहिने चारित्र्य रक्षा के लिये विपदाओ से लडी, मौत से खेली—राष्ट्र रक्षा के लिये खड्ग लेकर युद्धस्थल पर गईं और उन्होने अन्यायियो से डट कर मुकाबला किया। नारी ने कई स्थानो पर अपने अनुरूप सफल नेतृत्व किया।

आज उसी विगत गौरव को फिर से जगाने की जिम्मेदारी आपके कधों पर है। नारी फिर से आत्म-विकास द्वारा समाज व धर्म का पूर्ण उपयोगी अग बने—ऐसी दिशा मे आपको नव-सत्प्रयत्न करने हैं। वर्तमान समाज की विकृति को दूर हटाने मे आप बालिकाएं महत्व का रचनात्मक सत्कार्य कर सकती हैं। पुरुष के प्रभाव से नारी का प्रभाव क्षेत्र एक अपेक्षा से अवश्य ही विशाल होता है। अत आपकी आज की सुशिक्षा और सुसस्कारिता समाज एव धर्म के लिये अधिक उपयोगी तथा लाभदायक सिद्ध हो सकेगी। आपके जीवन की सुदृढ सत्कर्मण्यता गृह, समाज और देश मे राम-राज्य की सुन्दर कल्पना को साकार बना सकती है और आप लोगो का जीवन—विकास सही माने मे धार्मिक सदाचरण की भी प्रतिष्ठा कर सकेगा।

समाज मे नारी का आज जो निम्न स्थान बन गया है और उसके व्यक्तित्व को जिस तरह निरादृत किया जाता है, उसके पीछे एक विशेष कारण भी है और वह है आर्थिक दृष्टि मे नारी का सर्वथा पुरुष पर आश्रित होना । यह इस प्रकार की आर्थिक परतन्त्रता नारी को घर की गुडिया बनाये रखती है और उसकी बहुमुखी आत्मिक शक्तियों को विकसित होने से रोकती है । आज समाज मे अपने लिये समुचित स्थान का निर्माण करने हेतु और देश के साथ धर्म की सम्मानपूर्ण सेवा करने मे एव धर्म-क्षेत्र को प्रसारित करने मे नारी समाज को हिचकिचाने की कोई आवश्यकता नही । केवल इहलौकिक घर की चारदिवारी मे बन्द रहने से समाज, राष्ट्र व धर्म को नारी का आवश्यक सक्रियात्मक सहयोग नही मिल पाता और इस तरह सभव है कई महान् शक्तिया छिपी हुई ही रह कर समाप्त हो जाती हो । उन नारियो के उदाहरण आप भी जानती हैं, जिन्होने इस समय भी देश और धर्म की जटिल सेवा मे हाथ बटाकर अपने प्राचीन गौरव को जगाया है ।

इस अवसर पर दो शब्द आपकी अध्यापिकाओ से भी कहू कि आप बालिकाओ की नई जिन्दगी बनाने की अपनी जिम्मेदारी को कम न समझे । आप अपने प्रभावशाली निर्देशन एव सहज सम्पर्क मे इन बालिकाओ के हृदय मे विकास का नई ज्योति प्रकाशित कर सकती हैं । इस जिम्मेदारी को आप कितनी कुशलता व सहृदयता से पूरा करती हैं—इसी पर आपको प्रतिष्ठा टिकी हुई है । ये नन्ही-२ बालिकाए उस छोटे बीज के समान है जिन्हे आपको लगाना, खाद देना, सींचना और पनपाना है । इस कार्य मे अगर आपकी कुछ भी अयोग्यता या आलस्य रहा तो वह इन बालिकाओ के जीवन की पूर्णता को ठेस पहुचावेगा । अत. आपको अपने जीवनक्रम पर भी खास नजर रखनी चाहिये, क्योकि बच्चा पढाने से जितना नही पढता, उतना देखने से, अनुकरण करने से पढ जाता है—इसलिये आप जो कहती है उससे उसका अधिक महत्व व असर होता है कि आप करती क्या हैं ? ये नन्ही बालिकाए तो आपके जीवन को अधिक देखना और उससे बहुत कुछ ग्रहण करना ज्यादा जानती है । आप कच्ची रुई के समान इन बालिकाओ को इस तरह सुयोग्य व मृदु-स्वभावी बना सकती है, जैसे कि कोई कुशल कारीगर उस कच्ची रुई से ऐसा सुन्दर एव उपयोगी वस्त्र बना देता है जो सभी मौसमो मे देह को सुख पहुंचाता है ।

आप अध्यापिकाए ख्याल रखें कि इन बालिकाओ के संस्कार इस तरह ढलें कि ये अभक्ष्य खान-पान मे बचें, फैशन मे पड कर विकृति के मार्ग पर पैर न बढ़ावें और अपने सरल हार्दिक सद्व्यवहार से सबको प्रभावित करती रहें । इस समय आपका सुन्दर सम्पर्क इनके जीवन को अति सुन्दर बना देगा । इसी मे आपकी सच्ची कला है और यही जीवन बनाने की कला आपको प्रतिष्ठित कलाकार का पद प्रदान करेगी ।

बालिकाए भी अपने कर्तव्यो की ओर सजगतापूर्ण दृष्टि रखें कि उन्हे अपने जीवन को किस तरह ऊचा एव उपयोगी बनाना है ? आज देशवासियों का अपना ही राज है फिर

भी इसके साथ ही सारे क्षेत्रो मे विकृति का समावेश भी कम नही है अत भारत के प्रत्येक नागरिक के लिय–चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, बालिका हो या बालक–विशेष सद्भावना एव सहयोग से अपनी सत्सेवाए देने का समय है ।

अत यह ध्यान रखें कि आपको भी इस सेवाकार्य मे आगे रहना है । आपकी सुन्दरता की रक्षा इन क्रीम, पाउडर और तेलो से नही होने वाली है । फैशन में भारी अपव्यय करके देश की आर्थिक स्थिति को और अधिक बिगाडने के सिवाय आप और कुछ नही कर सकती । आपकी सुन्दरता तब बढेगी जब आप धार्मिक एवं जीवन विकास के सही लक्ष्य को स्थिर करके सरल, सत्य एव सत् स्नेहमय भावनाओ से आप्लावित होगी, आपके चेहरो पर एक प्राकृतिक आभा चमक उठेगी और आपके हृदयो मे सेवा एव सत्संस्कारो का तरल प्रकाश छिटकता होगा ।

आप इस शिक्षणकाल मे अपनी आवश्यकताएं सीमित व सादी रखें ताकि विकृति भरी कमजोरिया आप पर आक्रमण न कर सके । अपने सयमी जीवन को हर तरह से पुष्ट बनाने की ओर आपका ध्यान जावे ताकि आप अपने सच्चे जीवन से विभिन्न उत्तरदायित्वो को कुशलतापूर्वक निबाह कर देश, समाज व धर्म का गौरव बढा सके ।



आचार्यश्री नानालालजी महाराज साहब

आचार्य प्रवर बाल्यकाल से अन्तर की गहराइयो मे प्रवेश पाने के सहज अभ्यासी रहे हैं। किसी भी विषय के मूल तक पहुच जाना आपश्री के लिये सहज बात थी।

चरम उन्नति या चरम अवनति क्रमश धर्म या अधर्म की गहराइयो मे उतरने पर ही होती है। आचार्य प्रवर ने उन्नति के चरम छोर को छूने के लिये आत्मा की गहराइयो में डुबकी लगाना प्रारम्भ कर दिया। परिणाम स्वरूप स्वात्म साधना के साथ परमात्माओ के लिये भी अनुभूतिपरक अभिनव उपलब्धिया उभर कर आने लगी।

जहा आचार्य प्रवर के चिन्तन जीवन की प्रत्येक समस्या का समाधान करने के लिये सशक्त अवलम्बन है तो समतादर्शन, व्याप्त विषमता को हटाकर अखिल विश्व मे शांति प्रसारित करने मे समर्थ है। यही नही समीक्षण ध्यान साधना व्यक्ति को तनावो से मुक्त कर आत्मशाति प्राप्त करानेवाली सजीवनी औषध है। आचार्यश्री की अमृत-मयी देशनाधारा तो जनता के संतप्त मन को प्रक्षालित कर एक विलक्षण आनन्द प्राप्त कराने वाली है। इसी शृ खला मे आचार्य प्रवर के विचार प्रस्तुत हैं।

चिन्तन-करण

आत्मवत् दृष्टि

आत्मन् ! जैसा तुम बनना पसन्द करते हो वैसा ही प्रत्येक व्यक्ति को देखो। तुम ईश्वर बनना चाहो तो हर व्यक्ति को ईश्वर के रूप मे देखो। तुम्हारे साथ कोई नीचता का व्यवहार करता है, तो तुम उसकी नीचता को, नीचता रूप को मत देखो, अपितु उसको विकास की शक्ति के रूप मे देखो। कोई अच्छा कहे या बुरा कहे, इसका ख्याल मत करो, बल्कि पवित्र हृदय क्या कहता है, उस पर विशेष ध्यान दो।

प्रभावक शब्द

स्वच्छ मन एव शात मस्तिष्क से प्रकट किये गये विचार अमूल्य एव कल्याणप्रद होते हैं। स्वानुभूतिपूर्वक प्रयुक्त सीधे–सादे वाक्य जितने असरकारक होते हैं, उतने इधर-उधर के लिए हुए पाडित्यपूर्ण वाक्य नही। वचन एक दर्पण है। चतुर पुरुष वचनो के अन्दर इन्सान का आतरिक प्रतिबिम्ब देख सकते हैं।

निष्काम कर्म

धैर्य कभी नही छोड़ना चाहिये। कर्त्तव्यनिष्ठा से सत्यकर्म करने वाले को आपत्तिया आने पर भी सफलता अवश्य मिलती है। निष्काम भाव से कर्त्तव्य पालन करने वाले को सर्वतोमुखी फल अवश्य मिलता है, जिससे वह उन्नति के शिखर पर पहुच सकता है।

अमुक कार्य करू, पर मेरे पास साधन नही हैं ऐसा चिन्तन उसके मन की अपरिपक्वता का द्योतक है। अगर वह सच्चे दिल से उस कार्य मे लग जाय सभी प्रकार के साधन, मिठाइ पर चीटियो की तरह सहज ही उसके पास आ जायेंगे।

आत्मावलोकन

हे आत्मन् ! सारा ससार भी यदि तुम्हारी निन्दा, भर्त्सना व तिरस्कार करे तो तू लेशमात्र भी उत्तेजना व उदासीनता मत ला, बल्कि इसके विपरीत तू यह चिन्तन कर कि यह सब किस कारण से हो रहा है ? अगर उसमे कोई वास्तविक कारण मालूम हो जाय तो उसको दूर करने की कोशिश कर और अपनी निन्दा आदि को सहायक रूप मे देख।

प्रशंसा

प्रशंसा जहरीले सर्प के समान है। अगर इसका विष तुझे चढ गया तो तू नष्ट हो जायेगा।

जीवन का मूल

ब्रह्मचर्य जीवन का मूल है। इसी से जीवन की सारी रौनक है। आधुनिकता के भुलावे मे आकर इसकी उपेक्षा नही करनी चाहिये। इसकी उपेक्षा करना सारे जीवन की महत्ता को तिलाजलि देना है।

आवेश

आवेश दिल की कमजोरी का सूचक है। आवेश मे आकर किया जाने वाला कार्य त्रुटिपूर्ण होता है। अत सत्यान्वेषक को आवेश से दूर रहना चाहिए।

सच्चा प्रेम

जिस प्रेम से शक्ति का संचय होता है, वही वस्तुत. सच्चा प्रेम है। जिससे शक्ति का नाश होता है, वह प्रेम नही है।

मृत्यु प्रत्येक देहधारी की वृत्ति है। इस पर विजय पाना मृत्यु को परास्त करना है।

मानसिक स्नान

मनुष्य प्रात.काल उठकर पानी से स्नान करता है। उसमे जीवन मे कुछ स्फूर्ति आती है। मगर उसी समय विचारो से मानसिक स्नान कर लिया जाय तो चिरस्थायी जीवन-विकास की स्फूर्ति प्राप्त हो सकती है।

कृत्रिमता बनाम स्वाभाविकता

कृत्रिमता देखने मे सुन्दर मालूम होने पर भी अहितकर होती है। स्वाभाविकता देखने मे अच्छी मालूम न होने पर भी हितकर होती है।

किसी अभिलाषा से किसी की प्रशंसा करना इन्सानियत से गिरना है।

दुनिया के पीछे चलने वाला प्राणी अपना विकास नही कर सकता है। उसका जीवन अनुकरणीय नहीं होता है।

रूढि तोड़ना साहस कार्य

रूढि पूर्ण विनाशकारी परम्पराओ को सामान्य मनुष्य नही हटा सकता । उसे हटाने मे वास्तविक ज्ञान व साहस की अत्यधिक आवश्यकता होती है ।

अनुवादित पदार्थों का उतना महत्व नही जितना आविष्कृत पदार्थों का है ।

आत्म साक्षी

दुनिया क्या देख रही है इस पर विचार मत करो । तुम क्या देख रहे हो इसी का विचार करो । 'इस काम से दुनिया क्या कहेगी' यह न सोचकर मेरी पवित्रात्मा क्या कहेगी, यह सोचो ।

सफलता की सीढी

अतीत अवस्था का स्मरण, वर्तमान का अनुभव, भविष्य का चित्रण सामने रखकर प्रवृत्ति करने वाला व्यक्ति जीवन मे हमेशा सफलता का अनुभव करता है ।

नेत्र प्रेम और नेत्र मोह

नेत्र-प्रेम और नेत्र-मोह, दोनो मे महान् अन्तर है । नेत्र प्रेम भातृ-भाव और विश्व वात्सल्य से ओत-प्रोत होता है । जबकि नेत्र मोह व्यक्ति-भाव, शत्रु-भाव और वैयक्तिक वात्सल्य से । पहला मित्र है-आगे बढाने वाला है और दूसरा शत्रु है नीचे गिराने वाला ।

व्यक्ति स्वातन्त्र्य

व्यक्ति-स्वातन्त्र्य जीवन का स्वाभाविक अधिकार है । इस पर प्रतिबन्ध कही पर नही होना चाहिये, मगर समाज के सामान्य नियमो से व्यक्ति को अलग भी नही होना चाहिये । व्यक्ति-समूह ही समाज है । विकास व साधन की दृष्टि से उसकी परम आवश्यकता है, मगर वह प्रामाणिक व्यक्तियो का समाज हो । प्रामाणिकता सद्आचरण से आ सकती है कहने मात्र से नही ।

प्रभावक उपदेश

जो व्यापार के तौर पर उपदेश देता है, वह उसे जीवन में बहुत कम उतारता है, क्योकि उसका लक्ष्य उपदेश द्वारा यश अथवा सम्पत्ति कमाना होता है । जो व्यापार के तौर पर नहीं, अपितु स्वानुभूति को जिज्ञासुओ के समक्ष रखता है वह अपने जीवने मे अधिक

आचरण करने वाला होता है, क्योकि उसका लक्ष्य जीवन सुधार का होता है न कि प्रशंसा प्राप्ति का ।

पशु बनाम मानव

पशु-पक्षियो मे भी समाज-व्यवस्था देखी जाती है । उनमे किसी को अपराध करने पर सामूहिक या व्यक्तिगत दड मिलता है । पशु-पक्षियो मे जैसे भी अनुकूल या प्रतिकूल साधन होते हैं, उनका वे यथावसर उपयोग करते हैं । जब कभी विजातीय आक्रमण होता है, तो स्व-जातीय अपराधो को गौण कर वे सामूहिक एकता से प्रत्याक्रमण करते हैं । उनमे भी साम्राज्य वाद वृत्ति और समाजवाद वृत्ति दोनो ही पाई जाती हैं । अनुशासन-व्यवस्था इनमे अच्छी होती है । उनमे ईमानदारी अधिक होती है, बेईमानी बहुत कम । उनमे प्रेम और मुग्धता भी अपेक्षाकृत अच्छी होती है । उनकी अपनी साकेतिक भाषा होती है । आज का मानव जरा तुलना करे अपने आपकी उनसे ।

मानापमान

सुख और सम्मान के लिए लालायित मत रहो । अपमान और दुःख से दूर मत भागो । जहा अपमान होता हो, चित्त को दुःख और सक्लेश पैदा करने वाले उत्तेजनात्मक वर्ताव हो, वहा तुम जाओ और अपने मन-मस्तिष्क की परीक्षा करो कि ऐसी अवस्था मे तुम्हारा मस्तिष्क कितना शात रहता है, तुम्हारे मन मे कितनी पवित्रता बनी रहती है । उस समय यदि तुम्हारा मस्तिष्क शांत रहे, मन मे अपवित्रता न आये और कर्त्तव्य कर्म पर मजबूत रह सको तो समझ लो कि तुमने कुछ इसानियत प्राप्त की है ।

परिवर्तन प्रगति का प्रतीक

देश, काल, ऋतु के परिवर्तन के साथ वातावरण और वायुमण्डल का भी परिवर्तन होता है । इसके साथ जो इसान अपने जीवन का परिवर्तन करता रहता है, वह सदा विजयी रहता है और जो सभी अवस्थाओ में समयानुसार परिवर्तन करने मे असमर्थ रहता है, वह सदा पश्चात्ताप करता हुआ ह्रास की ओर अग्रसर होता है, प्रगति की ओर नही ।

सन्त जीवन: निष्पक्ष दृष्टि

यह मेरा सत्कार करेगा, मुझे नमस्कार करेगा, मेरी प्रशसा करेगा, अत मैं उसे प्रेम की दृष्टि से देखू मधुर शब्दो मे बातचीत करू—जो ऐसा विचार कर, ऐसा ही आचरण करता है और अपने आपको महात्मा समझता है, तो यह उसका आत्म-पतन है । वह व्यर्थ मे समय और शक्ति बर्बाद करता है । महात्मा का प्रेम निष्काम और निर्मल होता है । वह किसी

आकांक्षा से किसी को नही देखता न मधुर शब्दो मे वार्तालाप ही करता है। उसकी दृष्टि स्वाभाविक रूप मे किसी पर पड़ जाती है, तो उसको आत्मीय रूप से देख लेता है फिर वह प्राणी कोई भी हो। उसकी दृष्टि मे जाति का, ऊच-नीच का, पापी-धर्मी का भेदभाव व घृणा नही होती है। वह प्राणी-हित की दृष्टि से समय आने पर सभी से बातचीत करेगा। बिना अवसर किसी से बातचीत नही करेगा। उसकी समय-शक्ति व्यर्थ नही जाती। वह मनुष्यो की निगाह से अपने को नही देखता अपितु स्वय की पवित्र निगाह से अपने आपको देखता है।

प्रेम बनाम मोह

आज का मानव समाज प्राय गुलाम मनोवृत्ति से चल रहा है। रूढि तथा परम्परा मानव-जीवन की सगिनी बन गई है। बुद्धि काम-सम्राट् के किले मे बन्द-सी मालूम होती है। साहित्यकार, कलाकार, अध्यापक, पत्र-सम्पादक आदि मे से अधिकाश लोगो ने अपने जीवन का चरम लक्ष्य प्रेम के नाम पर मोह का सम्पादन ही मान रखा है। उनको वही साहित्य, वही कला, वही कहानी, वही समालोचना पसन्द आयेगी जिसमे पशु वृत्ति से भी निंदित प्रणय-प्रसगो का रोचक वृत्तात पाया जाता हो। इस वृत्तात का जो व्यक्ति अधिक रोचक ढग से सम्पादन करता है, उसी को सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार माना जाता है। पुरस्कार भी उसी को अधिक मिलता है। वह युग का स्रष्टा समझा जाने लगता है। ऐसी अवस्था मे कौन व्यक्ति ऐसे श्रेष्ठ पद को पाने हेतु लालायित नही होगा? प्रत्येक व्यक्ति येन-केन-प्रकारेण इसी पद को पाने के लिए आकाश मे उडने की कोशिश करता है। वैसा ही साहित्य, वैसी ही गोष्ठी, वैसी ही सोसायटी और वैसे ही वायुमण्डल मे वह अपने को धन्य समझता है। उसकी बुद्धि उसी दायरे के अन्दर चक्कर काटती है। उस घेरे से बाहर रह जाने पर वह अपने को अभागा, पुण्यहीन समझता है और यह दावा करता है कि मैं विकास कर रहा हू। यही अवस्था अधिकाश व्यष्टि एव समष्टि मे बनी हुई है। इसको आधुनिक मानव-समाज की गुलामी न कहे तो क्या कहे?

आत्म-गर्व

आत्म-गर्व विकास के लिये होना चाहिये न कि दूसरो को नीचा दिखाने के लिये।

प्रत्येक कार्य मे स्वावलम्बी एव स्वतन्त्र इसान ही कुछ कर सकता है।

जनहितकारी मौलिक विचार ही सच्चे रूप मे जनता का प्रतिनिधित्व कर सकते हैं।

जय-विजय-विचार-विमर्श में

हार-जीत की दृष्टि से किया हुआ विचार-विमर्श कभी भी निर्दोष नही हो सकता, क्योंकि उसमें बुद्धि स्वच्छ एव निष्पक्ष नही रह सकती।

जिस विचार से हिंसक वृत्ति की प्रधानता का उद्गम होने लगता है, वह विचार इंसानियत के विपरीत है।

मन की आकर्षण शक्ति

मन का अन्तर्जगत् के साथ सम्बन्ध है । जिस मन मे जितना अधिक आकर्षण होगा, उतना ही वह अन्तर्जगत् को अपनी ओर आकर्षित कर सकेगा । आकर्षण शक्ति किसी-किसी मे नैसर्गिक होती है पर उसको अधिक महत्त्व नही दिया जा सकता, क्योकि वह रह भी सकती है और चली भी जाती है । अत ज्ञानपूर्वक प्राप्त की गई आकर्षण शक्ति को ही अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिये, क्योकि वह स्वाधीन होती है ।

बीती ताहि बिसार दे

जो बात बीत चुकी, उसका स्मरण कर ग्लानि लाने की आवश्यकता नही, किन्तु नवीन उत्साह पैदा करने की जरूरत है । वास्तविक लक्ष्य मे तन्मय होकर कर्त्तव्य कार्य मे लग जाने पर कोई कार्य असाध्य नही । व्यतीत अवस्था से भी अच्छी अवस्था प्राप्त की जा सकती है । प्रकृति के अन्दर सभी शक्तिया विद्यमान हैं । इसका स्वभाव ही बुराई को दूर कर अच्छाई की ओर ले जाना है । यह किसी प्रकार की बुराई को सहन नही करती है, उसे साफ करने की कोशिश करती है ।

वैचारिक प्रभाव

वायुमडल के अन्दर भी सघर्षमय वातावरण विद्यमान रहता है । जिस स्थान मे जिस विचारधारा का प्राबल्य होगा उसकी ही विजय होगी । अपनी बात मनवाने के पहले वायुमण्डल को शुद्ध करो, फिर जिन विचारो को तुम श्रेष्ठ समझते हो और यदि ये वास्तविक रूप से जनहितकारी एव कल्याणप्रद हैं, तो निष्काम भाव से दुनिया के सामने रख दो । वे विचार शीघ्रताशीघ्र कार्य रूप मे परिणत हो जायेंगे ।

तुम प्रसन्नचित्त रहो, चिंता करने की आवश्यकता नही, किंतु स्वय अपने जीवन में जिन-जिन बातो की त्रुटिया या कमजोरियां अनुभव करो उनको शीघ्रताशीघ्र दृढ सकल्प के साथ दूर कर दो । फिर तुमको कभी किसी विफलता के दर्शन नही होंगे ।

महात्मा

सच्चे महात्मा कभी अपने आपको प्रकट नही करते, मान-प्रतिष्ठा एव पूजा के लिये कभी अपनी जिह्वा को नही हिलाते और न मन मे ही इस प्रकार का सकल्प आने देते हैं । उनका ध्यान सदा वास्तविक कर्त्तव्य-कर्म मे रहता है । वे मान और अपमान, मित्र और शत्रु, सुख और दुःख, प्रिय एव अप्रिय को अपने निर्विकार मन-मस्तिष्क के परीक्षण के रूप मे देखते हैं । उनके प्रति अनुराग या द्वेष कभी नही लाते, वे सदा प्रसन्नचित्त रहते हैं ।

आत्म-प्रवंचना

मैं यदि किसी से चालाकी से बात करता हूं और मन में यह समझता हूं कि मैं बड़ा चतुर हूं—उसको चकमा दिया कि वह समझ भी नही सका, यह मेरा भ्रम है, आत्म

प्रवचना है और मूर्खता का नमूना है। वह ऊपर से किसी कारणवश न समझ पाया हो, किंतु उसकी अन्तरात्मा पर मेरे कुटिल भावों की छाप अवश्य पड़ेगी, वह समय पाकर प्रतिक्रिया के रूप मे सामने आयेगी और उससे वायुमण्डल दूषित होगा, जो कि मेरे और विश्व के लिये अहितकर है। अतएव जीवन मे प्रत्येक बात का ध्यान रखना चाहिये और ऐसा ही कार्य करना चाहिये किसी का अहित न हो।

प्रगति-पथ

बहते पानी की तरह अभ्यस्त विचारधाराओं को रोककर अनभ्यस्त नवीनकार्य की ओर ले जाना प्रगति का चिह्न है। अभ्यस्त मार्ग से तो अंधा, बच्चा, मूर्ख और सामान्य बुद्धि के अन्य प्राणी भी यन्त्रवत् चलते ही हैं, उसमे कोई विशेषता नही। अभ्यस्त मार्ग पर आपत्तिया नही के समान आती हैं, मगर अनभ्यस्त मार्ग से चलने पर अनेक आपत्तियां आती हैं और वे अस्वाभाविकसी भी मालूम होती हैं। किंतु जो विवेकपूर्वक उनका सामना करता हुआ आगे बढता रहता है, वह अवश्य सफल हो सकता है। वही वस्तुत प्रगति कही जा सकती है।

प्रगतिशील पुरुष

जो केवल एक ही अवस्था मे रहता है वह वास्तविक अनुभव के बिना प्रगति नही कर सकता। जब तक विविध विपरीत परिस्थितियों का सामना होने पर उनमें क्षीर-नीर की तरह सावधानीपूर्वक विश्लेषण कर गुणावगुण का निर्णय नही किया जाता, तब तक वही अवस्था रहती है।

बीज-तक्षण

जिस सद्विचार धारा का बीज-वपन करते हो, उसको सावधानी के साथ विकसित एव प्रफुल्लित करो। उसके अनुकूल वायुमण्डल से उसका सिंचन करो। उसकी देखरेख पूर्ण शक्ति के साथ तब तक करो जब तक कि वह परिपक्व एवं मजबूत न बन जाय, अन्यथा उसकी विपरीत विचारधारायें उसको समाप्त कर देंगी।

सफलता बनाम भाग्य

कुछ व्यक्ति यह कहा करते हैं कि हमने अमुक कार्य के लिये बहुत प्रयत्न किये मगर उसमे सफलता नही मिली। क्या करे? हमारे भाग्य अच्छे नही हैं और जब तक भाग्य अनुकूल नहीं होता तब तक प्रयत्न करना व्यर्थ है। देखिये ना, पहले लोग मेरी इज्जत किया करते थे और अब मुझे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। वही मैं हू, जो पहले था और वही मेरा कार्य है जो पहले था। फिर भी यह अवस्था जो हुई, यह सब भाग्य का चमत्कार है। पर ये सब बातें अंतर का सूक्ष्म निरीक्षण नही होने से कही जाती हैं। वस्तुतः देखा जाय तो विफलता

का कारण अपनी वृत्तियों के प्रति सतत जागरूक नहीं रहना है। इन्सान कुछ भी सत्कार्य प्रारम्भ करता है उस समय उसकी उस कार्य में तल्लीनता रहती है और उसी समय प्रारम्भिक सफलता की रौनक उसके सामने आती है। उस रौनक को देखकर वह अपने आप पर काबू नहीं रख सकता। वह यह अनुभव करने लगता है कि मैं ही ससार मे सब कुछ हू, मेरे सामने कौन व्यक्ति ठहर सकता है। मैं सभी दृष्टियों से परिपूर्ण हो चुका हू–आदि। ये ही विचार उसकी विफलता के कारण बनते हैं और उसी समय वह–रास की ओर चल पड़ता है।

संघर्ष और जीवन

जो मनुष्य सघर्ष मे भय खाता है और उससे अलग–अलग रहना चाहता है, वह अपनी कायरता को पुष्ट करता है। सघर्ष कोई बुरी वस्तु नही है, वह जीवन विकास का मुख्य साधन है। जिस जीवन मे सघर्ष नही, उसे जीवन नही कहा जा सकता। अनुकूल और प्रतिकूल दोनो सघर्षों के बीच निर्लेप, प्रसन्नतापूर्वक खेलने वाला व्यक्ति ही विकास की ओर बढ सकता है। हा, एकागी सघर्ष से भी कुछ विकास हो सकता है, पर वह स्वेच्छापूर्वक नही कहा जा सकता।

मुहुर्त की प्रतीक्षा

चिन्ता करने से कोई लाभ नही होता, बल्कि हानि हीं होती है। अगर कुछ करना है तो प्रसन्नतापूर्वक उसमे लग जाना चाहिये। समय या मुहूर्त की अनावश्यक प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। कार्यारम्भ का वही समय या मुहर्त अति उत्तम है, जिस समय पूर्ण उत्साह हो। बिना उत्साह अच्छे मुहूर्त मे आरम्भ किया हुआ कार्य भी सफल नही हो पाता।

क्षमायाचना बनाम दिखावा

जो पवित्र दिल से सदा सबका हित चाहता है, कभी भी किसी के प्रति दुर्भाव नहीं आने देता, और अगर कभी किसी के प्रति कोई दुर्भाव आ भी गया तो तुरन्त उनको दूर करने की शक्ति रखता है, उस व्यक्ति के लिये सदा हो क्षमायाचना का दिन समझना चाहिये, किन्तु जो व्यक्ति अधिकांश रूप से अपने दिल और दिमाग को बुरे विचारो मे रखता है और यही सोचा करता है कि मैं कैसे सबसे श्रेष्ठ कहलाऊ और कैसे दूसरो को नीचा दिखाऊं प्राय· इन्ही विचारो को कार्यान्वित करने के लिये बाह्य दिखावे के तौर पर नम्र बनता है या क्षमा–याचना का उच्चारण करता है, वह क्षमायाचना के सवत्सरी पर्व को लजाता है एव कपट-क्रिया की वृद्धि भी करता है। ऐसे व्यक्ति आत्मशुद्धि से दूर रहते हैं।

विश्व–कुटुम्ब

प्रत्येक इन्सान को नियमित रूप से एव व्यवस्थित रूप मे विश्व–हितकारी कुछ न कुछ कार्य करना चाहिये। बिना कुछ किये विश्व मे सहायता लेना उचित नही कहा जा सकता।

इंसान को विश्व के पदार्थों से जो भी शारीरिक, मानसिक एव वाचिक शक्ति प्राप्त हुई है, उसका सदुपयोग तभी समझा जा सकता है जबकि इंसान विश्व के लिये कुछ करता है। अगर वह ऐसा कुछ भी नही करता और व्यक्तिगत स्वार्थ मे ही इस शक्ति का व्यय करता है, तो वह विश्व मे दूसरो को कष्ट देने वाला एवं कृतघ्न की श्रेणी मे आ जाता है।

स्वयं को छलना

मनुष्य अपने स्वार्थ को छिपाने की कोशिश करता है। उसकी भावना यह रहती है कि ऊपर से मैं परमार्थ की बातें या परमार्थ के कार्य दिखलाऊ ताकि लोग मुझे परमार्थी कहे और मेरा स्वार्थ भी सिद्ध हो जाय। मगर यह उसका भ्रम है। वह उन्ही लोगो को धोखा दे सकता है, जो विशेपज्ञ नही है। स्वार्थी व्यक्ति मे निर्भयवृत्ति का अभाव-सा रहता है। वह अपनी वृत्ति को छिपाने की कितनी ही कोशिश क्यो न करे, मगर विवेकशील पुरुप के सामने वह छिपी नही रह सकती।

उत्तेजना

किसी कार्य मे अति शीघ्र उत्तेजना आना अत्यधिक अपूर्णता का द्योतक है। ऐसे व्यक्ति हिताहित के सोचने मे असमर्थ रहते हैं। वे तात्कालिक फलाफल को देखकर अपनी शक्ति को पतगे की तरह झोक देते हैं। जो ऐसा नही करता है वह उनकी दृष्टि मे कायर या भीरु दिखाई पडता है। मगर जो दूरदर्शितापूर्वक कार्य करने मे तत्पर है वह कायर और भीरु की श्रेणी मे नही आ सकता।

ब्रह्मचर्य एक अनुचिन्तन

ब्रह्मचर्य के वास्तविक परमार्थ को यदि सम्मुख रखा जावे तो जीवन का नक्शा कुछ और ही बन सकता है ।

शरीर से निकलने वाला वीर्य प्रवाह निष्कारण नही होता । उसमे कारण अनेको हो सकते हैं । पर मुख्य कारण दो होते हैं । एक विचार और दूसरा वय यानी शरीर की अवस्था विशेष ।

इन दोनो मे भी विचारो की ही प्रमुखता मानी जा सकती है । क्योकि विचारो के भी दो रूप सक्षिप्त मे रहते है, जिनको ज्ञात और अज्ञात के नाम से भी पुकारा जा सकता है । उनमे से यानो ज्ञात और अज्ञात विचारधाराओ मे मे किसी भी अवस्था मे अब्रह्मचर्य की ओर मुडने पर वीर्य पदार्थ के स्खलित होने का प्रसग प्राय बनता है । यद्यपि विचारो के मोड़ मे अनेकानेक कारण हैं पर उनमे भी शरीर के अवयवो की एक अवस्था विशेप को प्रवल कारण कहा जा सकता है । जिससे विचारो का मोड प्राय बन जाया करता है ।

ब्रह्मचर्य शारीरिक प्रभाव

शारीरिक अवस्था को व्यवस्थित रखना भी आत्मशक्ति पर निर्भर है । यद्यपि पौद्गलिक कार्य पदार्थ के अन्दर विचित्र स्वभाव बनता है तथापि उस स्वभाव का समय पर परिपाक भी हो जाता है । उस परिपाक के फलस्वरूप विचार आदि अवस्थाओ पर असर भी हो सकता है । लेकिन उस वक्त या उस परिपाक के पूर्व ही विचारो का पुट दिया जाय, तो पदार्थो के पूर्व रस मे परिवर्तन आ सकता है । जिस भी अवस्था के विचार परिपक्व होंगे उसी अवस्था मे पदार्थो का परिवर्तन किया जा सकता है । अर्थात् इस विराट् विश्व मे आत्म-शक्ति सर्वोपरि है । उसका मोट सही दिशा की ओर हो तो समग्र वायुमण्डल मे इच्छानुसार परिवर्तन लाया जा सकता है ।

इस शक्ति का सही अनुभवकर्ता स्वय के शरीर में व्याप्त वीर्य के नाम के धातु को स्वलित नहीं होने देकर अन्य शक्ति मे परिवर्तित कर देगा । स्खलित होने देना या नही, इसका नियत्रण आत्मीय शक्ति पर निर्भर है ।

आत्मीय विशेप शक्ति के जागृत नहीं होने तक ही अन्य शक्तिया अपना-अपना कार्य कर गुजरती हैं और ये विभिन्न प्रकार की हो जाने से विभिन्नता पैदा कर देती हैं । यही अवस्था प्राय. प्राणीवर्ग में चल रही है ।

ब्रह्मचर्य मानसिक प्रभाव

मानसिक वृत्ति की समग्र धारायें यदि अब्रह्मचर्य की ओर जरा भी झुके और वास्तविक निर्धारित कार्य मे निरन्तर सलग्न बन जायें तो यह सुनिश्चित रूप से कहा जा सकता है कि द्रव्य वीर्य रूप धातु की परिस्खलना नही हो पाती । क्योकि द्रव्य वीर्य रूप धातु की परिस्खलना भाव वीर्य रूप आन्तरिक आभ्यन्तरीय शक्ति पर निर्भर है ।

भाव रूप आभ्यन्तरीय शक्ति अपने समग्र परिवार के साथ जिस भी कार्य मे निमग्न होगी उसी कार्य की साधिका रूप अन्य भौतिक शक्ति मे द्रव्य वीर्य रूप धातु व्याप्त होती रहेगी । यानी भाव रूप आभ्यन्तरीय वीर्य शक्ति से द्रव्य रूप वीर्य नामक धातु को परिवर्तित परिवर्धित, सक्रमित, रूपान्तरित आदि अनेक अवस्थाओ मे सस्थापित किया जा सकता है। बशर्ते कि इस प्रकार की सही विधि समग्र पहलुओ से जान कर सही दृढतर अत्यन्त विश्वसनीय सकल्प पूर्वक निरन्तर अभ्यास मे लाई जाय ।

यह कार्य मानवीय जीवन की सही दिशा को निर्मल परिस्थिति मे शक्य किया जा सकता है । अशक्य स्थिति की कल्पना निराधार है ।

शिक्षा: एक दृष्टि

नई तालीम दी जाय, मगर नई तालीम का नक्शा वास्तविक शाति का हो। बुनियादी आवश्यकताओ के साधनो का विकेन्द्रीकरण होकर अन्न-वस्त्र आदि जरूरी चीजो मे स्वावलम्वी एव स्वतन्त्र हो जाय फिर भी जब तक प्रत्येक प्राणी एक-दूसरे का अग है, एक कुटुम्बी है, एक ही प्रकृति माता की सतान सहोदर भाई है और उसके साथ मेरा वही कर्त्तव्य है जो कि स्वशरीर के साथ है, ऐसी विश्वव्यापी एकात्मीयता की शिक्षा नई तालीम के नक्शे मे नहीं रखी जायेगी तब तक वर्ग-विहीन, शोषण-विहीन एव शासन रहित स्थायी शांति नही हो सकती ।

शासन एक स्पष्टीकरण

शासन से अभिप्राय उस शासन से है जो शासन शोषण या हिंसा से मुक्त हो, जिसमें विचार स्वातन्त्र्य का दमन नही किया जाता हो । शासन इन्सानियत से वचित रखने वाला नही हो , बल्कि प्रेम या अहिंसा का शासन अवश्य हो । इसके बिना प्रगति नहीं की जा सकती ।

वातावरण का प्रभाव

समय और परिस्थिति के अनुसार इन्सान परिवर्तित होता है । उसके सामने जैसा वातावरण होता है वह उसी के अनुकूल अपने विचारों को ढालता है और प्रतिकूल वातावरण

को समय अनुसार बदलने की चेष्टा करता है । वह उसको परिवर्तित कर सकता है, किन्तु सर्वथा नष्ट नही कर पाता । यह सब मध्यम श्रेणी के विचारको की परिस्थिति है । मगर जो वस्तुत. सत्य-शोधक एव विवेकशील पुरुष है, वह स्वय पवित्र अन्त करण को सामने रखकर निर्लिप्त, विशाल दृष्टि से नवीन वातावरण तैयार करता है । वह किसी प्रवाह या उत्तेजित वातावरण मे नही बहता किंतु निश्चल धैय के साथ आगे बढता है ।

उपयोग विचार शक्ति का

विचार–शक्ति का सदुपयोग करना चाहिये, उसे व्यर्थ की बातो मे नष्ट नही करना चाहिये । यह एक ऐसा शस्त्र है जिसके सदुपयोग करने से स्वपर की रक्षा और दुरुपयोग से स्वपर का नाश होता है । अगर इन्सान यह सोचता है कि मेरी उन्नति मे अमुक व्यक्ति बाधक है, उसको कैसे हटाऊ या उसका कैसे खात्मा हो एव उसको दु ख और आपत्ति मे कैसे गिराऊ ? तो वह अपनी विचार–शक्ति का दुरुपयोग करता है । विचार-शक्ति का सदुपयोग करने वाला सोचता है कि मुझ आपत्ति मे डालने वाला कोई नही है । जो मेरी उन्नति मे बाधक दिखता है वह बाधक नहीं, साधक है । वह चारो ओर से विचारो को केन्द्रित कर सत्य के मार्ग में गति और कर्तव्य को देखता है । अगर मेरी गति एव कर्तव्य निरन्तर रूप से जारी है तो विश्व का कोई भी पदार्थ मुझे रोक नही सकता, ऐसा सोचना विचारो का सदुपयोग है ।

प्रभाव आचरण का

कितना ही सुन्दर सिद्धान्त हो और उसका शाब्दिक प्रचार सारे ससार में भी क्यो न कर दिया गया हो, उसे वास्तविक प्रचार नही कहा जा सकता । वास्तविक प्रचार जितना आचरण द्वारा हो सकता है, उतना अन्य साधनो मे नही । चाहे उनके आचरणकर्ताओ की सख्या कम ही क्यो न हो, मगर वही स्थायी होता है ।

व्यक्तित्व का प्रभाव

दिल एव दिमाग का असर शरीर पर पडता है और वह शरीर के प्रत्येक अग से बाह्य वायुमण्डल मे फैल जाता है । बिना बोले वह सूक्ष्म रूप से प्रत्येक पदार्थ पर असर करता रहता है । जिस भाव की जितनी प्रबल शक्ति होगी वह जन साधारण पर उतना ही अधिक असर करेगी और समय पाकर अपने ढांचे मे ढाल देगी । विचारक पुरुषो के साथ उसका सघर्ष होगा । उसमें या तो प्रबल शक्ति विजय प्राप्त कर लेगी या तीसरी शक्ति की सृष्टि होगी ।

पदलिप्सा बनाम देशद्रोह

छोटी–छोटी बातो को लेकर पद-लिप्सा से कोई गुट या पार्टी बनाना जनता के प्रति धोखा करना है । यह देश या समाज की दुर्व्यवस्था की ओट में देश व समाज के प्रति द्रोह

भोग-लिप्सा और जघन्य परिग्रह मे झोक दें। अतः धन और भोग के साधनो के अन्ध सग्रह की जो लिप्सा है, वह मानवीय पुरुषार्थ की निकृष्टतम अभिव्यक्ति, पाशविक अधोगति और सोचनीय दुर्घटना है। परिग्रह की अहन्ता और उसी पर आस्था मानव के विषम मन के कारण ही जीवन मे जड जमाते हैं। परिग्रह तब तक जीवन के लिये होता है, तब तक वह सात्विक होता है, किन्तु जब जीवन को परिग्रह के लिये झोका जाता है तब विषमता का जन्म होता है। जब जीवन मे उच्चतर अर्थ प्रकाशित नही हो पाते, तब विकृत जीवन ही परिग्रह मे लिप्त होता है। यह मानव–जीवन ही दुर्घटना है। हिंसा शोपरण, अनैतिकता पाखण्ड, अनाचार और प्रपच, आदि विपम परिग्रह की ही शाखाए प्रशाखाए हैं। मानव मन के विकृत हुए वगैर ये उसे रुचिकर नही हो सकते। अत जघन्य परिग्रह के वशीभूत मानव के हिंसक आवेग पर नियत्रण स्थापित करना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक है उसे आत्मन की दिशा में जागृत करना। इतिहास साक्षी है कि मानव जब कभी और जहा कही भी अपने चैतन्य के प्रति सजग हुआ है, जडत्व की परवशता उसके जीवन से स्वत. झड गई है। वह करुणा, अहिंसा, सदाशयता, सहानुभूति, सेवा और प्राणी मात्र के मगल का अजस्त्र स्त्रोत बन गया है, तथा परिग्रह की चट्टाने भी उसके मानवीय वेग को रोक नही सकी हैं। अत. विषमता के उन्मूलन के लिये जो क्रान्ति उठे, उसमे यह भाव होना चाहियें कि परिग्रह द्वारा ग्रस्त मानव भी दयनीय है और उसके उद्धार और जागरण की व्यवस्था होनी चाहिये। इससे उस क्रान्ति का आशय विस्तृत होगा। समता क्रान्ति की यही सदाशयता उसकी व्यापक सफलता का आधार बनेगी। उसमे नियत्रण और सुधार के साथ ही उद्धार का आग्रह भी होगा।

चेतन और जड के मिलन का नाम ससार है। आत्मा का स्वरूप ज्ञानमय चेतना है। चेतना शरीर के साथ सयुक्त है। जड पदार्थ जीवन सचालन का निमित्त है। मानव चेतना मे जड के प्रति स्वामित्व बोध अनादि है। यह स्वामित्व बोध धीरे–धीरे ममत्व बोध मे ढलता है, फिर आशक्ति वश पदार्थ के भोग और उस पर निर्भयता का उदय होता है। पदार्थ पर निर्भरता का पहला चरण परवशता है। इस प्रकार चेतन पर जड का शासन स्थापित हो जाता है और व्यक्ति जड पदार्थों का कठपुतला बन जाता है।

जड–पदार्थ जीवन सचालन का निमित्त है। किंतु जड़त्व के व्यामोह से अपनी आत्म–चेतना की ओर से मानव–मन जब विचलित हो जाता है, तब उसमे असीम भोग लिप्सा का आवेग जागृत हो उठता है। यह भोग लिप्सा ही धन लिप्सा और सत्ता-लिप्सा का रूप धारण करती है। राग और द्वेप की तीव्रतावश यह उग्र परिग्रह–भाव, हिंसा, शोपण, निदयता असत्य और दुराचार मे समझौता करके व्यक्ति को भी विपम बना देता है और समाज मे भी विपमता–जनित सघर्प छिड जाता है। उस पाशविक परिग्रह को मानव–चेतना की मूर्च्छना कहा गया है–

मुच्छा परिग्गहो वुत्तो।

आत्मचेतना का स्वरूप सच्चिदानन्दमय है । उसका प्रकाश, दया, करुणा, शान्ति, त्याग, सदाशयता और सहानुभूति के रूप में प्रस्फुटित होता है । जड पदार्थों के प्रति व्यामोह जहा विषमता का कारण है, वही चेतनाशील जगत के प्रति क्रियाशील आस्था समता का आधार है ।

मानव यदि अपने आत्म स्वरूप के प्रति जागृत हो जाय, तो चेतना के प्रति आस्था का विकास होने लगता है और उसी अनुपात मे जडत्व मोह क्षीण होता जाता है । जड पदार्थों के प्रति अनासक्ति से आत्मा की शुद्धि होती जाती है । पूर्ण शुद्धि को मोक्ष कहा गया है ।

ममता की स्थिति मे जडत्व के प्रति जितना तामसिक आकर्षण होता है । समता की स्थिति बनते ही जीवन और चेतना के प्रति उतना ही सात्विक और आत्मीय लगाव हो जाता है । आत्मानुभूति और आत्म-जागृति के प्रकाश को ही निर्णायक शक्ति कहा जाता है । मन के तल पर समता आने से दृष्टिकोण समतामय हो जाता है और तब कर्म भी सौम्यतामय हो जाता है ।

विश्व की समस्त आत्माए मूल स्वरूप मे एक समान है । उनमे भेद कर्मावरण के कारण है । परिग्रह तथा उसके अनिवार्य अनैतिक अवयवो से मुक्ति के लिये आत्म जागरण की आवश्यकता है ।

हिंसा, शोषण और अनाचार परिग्रह के अनिवार्य अ ग है । और फिर परिग्रह ही दुराचार, अनैतिकता और कपट को व्यक्ति की चेतना से जोड देता है । यह एक प्रत्यक्ष सच्चाई है, ससार के चिन्तको ने कहा है और विषमता के रूप मे मानव जाति का भोगा हुआ यथार्थ भी है । इसके लिये शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं हां, शास्त्र और धर्म इतनी सहानुभूति अवश्य छोडते हैं कि इसे चेतना मूर्च्छना कहते है । नैतिक अर्जन मे धन-बाहुल्य सम्भव नही होता अर्थात् धन का बाहुल्य अनैतिकता का बाहुल्य ही है ।

दासत्व से स्वामित्व तक—

❀ परिग्रह से त्याग तक ❀

परिग्रह मे ममत्व तीव्र होता है और वह मनुष्य की भोग-लिप्सा की तुष्टि का साधन होता है, अतः व्यक्ति को भ्रम हो जाता है कि वह अपने सग्रह का स्वामी है । उसकी वास्तविक स्थिति एक दास की होती है और ये परिग्रहित साधन मे आत्म-चेतना की चरम ऊ चाइयो से खीचकर भोग, दुराचार और अनीति के पक में आपादमस्तक डुबोये रहते हैं । उसकी दासता इतनी सवेदनशील हो जाती है कि उसके परिग्रह पर आई हुई चोट उसकी अपनी चेतना को झकझोर जाती है । यह मालिक की हैसियत तो कदापि नहीं है । स्वामित्व-बोध की परख तो त्याग में है । स्वामी ही त्याग कर सकता है, चिपकाव गुलामी का लक्षण

भोग-लिप्सा और जघन्य परिग्रह मे झोक दें। अतः धन और भोग के साधनो के अन्ध संग्रह की जो लिप्सा है, वह मानवीय पुरुषार्थ की निकृष्टतम अभिव्यक्ति, पाशविक अधोगति और सोचनीय दुर्घटना है। परिग्रह की अहन्ता और उसी पर आस्था मानव के विषम मन के कारण ही जीवन मे जड जमाते हैं। परिग्रह तब तक जीवन के लिये होता है, तब तक वह सात्विक होता है, किन्तु जब जीवन को परिग्रह के लिये झोका जाता है तब विषमता का जन्म होता है। जब जीवन मे उच्चतर अर्थ प्रकाशित नही हो पाते, तब विकृत जीवन ही परिग्रह मे लिप्त होता है। यह मानव-जीवन ही दुर्घटना है। हिंसा शोषण, अनैतिकता पाखण्ड, अनाचार और प्रपच, आदि विषम परिग्रह की ही शाखाए प्रशाखाए हैं। मानव मन के विकृत हुए बगैर ये उसे रुचिकर नही हो सकते। अत जघन्य परिग्रह के वशीभूत मानव के हिंसक आवेग पर नियत्रण स्थापित करना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक है उसे आत्मन की दिशा मे जागृत करना। इतिहास साक्षी है कि मानव जब कभी और जहा कही भी अपने चैतन्य के प्रति सजग हुआ है, जडत्व की परवशता उसके जीवन से स्वत झड गई है। वह करुणा, अहिंसा, सदाशयता, सहानुभूति, सेवा और प्राणी मात्र के मगल का अजस्त्र स्त्रोत बन गया है, तथा परिग्रह की चट्टाने भी उसके मानवीय वेग को रोक नही सकी हैं। अत विषमता के उन्मूलन के लिये जो क्रान्ति उठे, उसमे यह भाव होना चाहिये कि परिग्रह द्वारा ग्रस्त मानव भी दयनीय है और उसके उद्धार और जागरण की व्यवस्था होनी चाहिये। इससे उस क्रान्ति का आशय विस्तृत होगा। समता क्रान्ति की यही सदाशयता उसकी व्यापक सफलता का आधार बनेगी। उसमे नियत्रण और सुधार के साथ ही उद्धार का आग्रह भी होगा।

चेतन और जड के मिलन का नाम ससार है। आत्मा का स्वरूप ज्ञानमय चेतना है। चेतना शरीर के साथ सयुक्त है। जड़ पदार्थ जीवन सचालन का निमित्त है। मानव चेतना मे जड के प्रति स्वामित्व बोध अनादि है। यह स्वामित्व बोध धीरे-धीरे ममत्व बोध मे ढलता है, फिर आशक्ति वश पदार्थ के भोग और उस पर निर्भयता का उदय होता है। पदार्थ पर निर्भरता का पहला चरण परवशता है। इस प्रकार चेतन पर जड का शासन स्थापित हो जाता है और व्यक्ति जड पदार्थों का कठपुतला बन जाता है।

जड-पदार्थ जीवन सचालन का निमित्त है। किंतु जड़त्व के व्यामोह से अपनी आत्म-चेतना की ओर से मानव-मन जब विचलित हो जाता है, तब उसमे असीम भोग लिप्सा का आवेग जागृत हो उठता है। यह भोग लिप्सा ही धन लिप्सा और सत्ता-लिप्सा का रूप धारण करती है। राग और द्वेष की तीव्रतावश यह उग्र परिग्रह-भाव, हिंसा, शोषण, निदयता असत्य और दुराचार से समझौता करके व्यक्ति को भी विषम बना देता है और समाज मे भी विषमता-जनित सघर्ष छिड़ जाता है। उस पाशविक परिग्रह को मानव-चेतना की मूर्च्छना कहा गया है—

मुच्छा परिग्गहो वृत्तो।

आत्मचेतना का स्वरूप सच्चिदानन्दमय है। उसका प्रकाश, दया, करुणा, शान्ति, त्याग, सदाशयता और सहानुभूति के रूप मे प्रस्फुटित होता है। जड पदार्थों के प्रति व्यामोह जहा विषमता का कारण है, वही चेतनाशील जगत के प्रति क्रियाशील आस्था समता का आधार है।

मानव यदि अपने आत्म स्वरूप के प्रति जागृत हो जाय, तो चेतना के प्रति आस्था का विकास होने लगता है और उसी अनुपात मे जडत्व मोह क्षीण होता जाता है। जड पदार्थों के प्रति अनासक्ति से आत्मा की शुद्धि होती जाती है। पूर्ण शुद्धि को मोक्ष कहा गया है।

ममता की स्थिति मे जडत्व के प्रति जितना तामसिक आकर्षण होता है। ममता की स्थिति बनते ही जीवन और चेतना के प्रति उतना ही सात्विक और आत्मीय लगाव हो जाता है। आत्मानुभूति और आत्म-जागृति के प्रकाश को ही निर्णायक शक्ति कहा जाता है। मन के तल पर समता आने से दृष्टिकोण समतामय हो जाता है और तब कर्म भी सौम्यतामय हो जाता है।

विश्व की समस्त आत्माए मूल स्वरूप मे एक समान है। उनमे भेद कर्मावरण के कारण है। परिग्रह तथा उसके अनिवार्य अनैतिक अवयवो से मुक्ति के लिये आत्म जागरण की आवश्यकता है।

हिंसा, शोषण और अनाचार परिग्रह के अनिवार्य अंग है। और फिर परिग्रह ही दुराचार, अनैतिकता और कपट को व्यक्ति की चेतना से जोड़ देता है। यह एक प्रत्यक्ष सच्चाई है, ससार के चिन्तको ने कहा है और विषमता के रूप मे मानव जाति का भोगा हुआ यथार्थ भी है। इसके लिये शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं हां, शास्त्र और धर्म इतनी सहानुभूति अवश्य छोडते हैं कि इसे चेतना मूर्च्छना कहते हैं। नैतिक अर्जन से धन-बाहुल्य सम्भव नही होता अर्थात् धन का बाहुल्य अनैतिकता का बाहुल्य ही है।

दासत्व से स्वामित्व तक—

❀ परिग्रह से त्याग तक ❀

परिग्रह मे ममत्व तीव्र होता है और वह मनुष्य की भोग-लिप्सा की तुष्टि का साधन होता है, अत: व्यक्ति को भ्रम हो जाता है कि वह अपने संग्रह का स्वामी है। उसकी वास्तविक स्थिति एक दास की होती है और ये परिग्रहित साधन से आत्म-चेतना की चरम ऊंचाइयो से खीचकर भोग, दुराचार और अनीति के पंक मे आपादमस्तक डुबोये रहते हैं। उसकी दासता इतनी संवेदनशील हो जाती है कि उसके परिग्रह पर आई हुई चोट उसकी अपनी चेतना को झकझोर जाती है। यह मालिक की हैसियत तो कदापि नही है। स्वामित्व-बोध की परख तो त्याग में हैं। स्वामी ही त्याग कर सकता है, चिपकाव गुलामी का लक्षण

समता दर्शन और उसके सिद्धान्त

विषमता का ज्वालामुखी सर्वत्र प्रज्वलित हो रहा है। मानव जीवन अशान्त, विक्षिप्त और विशृंखल हो विकृति के गर्त की ओर अग्रसर हो रहा है। अमावस्या की रात्रि के घने अंधकार की तरह विषमता व्यक्ति से लेकर परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व तक विस्तृत होकर, मानव हृदय की सृजनता तथा शालीनता का नाश करती हुई, प्रलयकारी विक-राल दृश्य उपस्थित कर रही है।

विषमता का उद्भवः

सर्व विनाशिनी इस विषमता का मूल उद्भव स्थल मानव की मनोवृत्ति है। जिस प्रकार वटवृक्ष का बीज राई के समान सूक्ष्म होता हुआ भी उपयुक्त साधन मिलने पर विशाल रूप धारण कर लेता है, उसी प्रकार मानव की मनोवृत्ति से समुत्पन्न विषमता का बीज भी हर क्षेत्र मे अपनी शाखा-प्रशाखाए प्रसारित कर देता है, जिससे दलन, शोषण और उत्पीडन की चोटें सहन करता हुआ प्राणी चैतन्य से जडत्व की ओर बढता जाता है।

धरती की समानता तथा सर्वत्र एक रूप मे वर्षा होने पर भी एक ही क्षेत्र मे एक ओर सुस्वादु इक्षु व दूसरी ओर मादक अफीम का वपन किया जाय तो इनका प्रस्फुटन ऐसा होगा कि एक जीवन-रक्षण मे सहायक है तो दूसरी मृत्यु का कारण, इसी प्रकार दो हृदय एक से होने पर भी यदि एक मे समता का और दूसरे मे विषमता का बीज वपन किया जाय तो दोनो की अवस्था गन्ने एव अफीम के सदृश होगी। समता जीवन का सर्जन करती है तो विषमता जीवन की मानसिक, वाचिक, कायिक, अवस्था को विषमय करती हुई, उसको विनाश के कगार पर पहुचा देती है। कहा है—

> अज्ञान कर्दमे मग्न. जीव' ससार सागरे।
> वैषम्ययेण समायुक्त, प्राप्तुमर्हति नो सुखम् ॥

अर्थात्—ससार-सागर मे अज्ञान रूपी कीचड़ मे लीन, विषमता से युक्त जीव कभी भी सुख को प्राप्त नही कर सकता है।

अत मानव समाज मे जितने भी दुर्गुण हैं, वे सभी विषमता की जड़ से ही उत्पन्न हुए हैं और मानव के द्वारा सिंचित होकर विराटता का रूप धारण कर रहे हैं।

महावीर का समता सिद्धान्तः

भगवान् महावीर ने कहा कि सभी आत्माए समान हैं । सभी को जीने का अधिकार है । कोई भी किसी की सुख-सुविधा का अपहरण नही कर सकता । जिस प्रकार चोरी करने वाला दण्डित किया जाता है, क्योकि उस वस्तु पर उसका अधिकार नही है, वैसे ही किसी अन्य के जीवन, इन्द्रिय, शरीर पर किसी का कोई अधिकार नही है । सभी को समान रूप से जीने का अधिकार है । अत किसी का प्राण व्यपरोपणादि करना अपराध है। एतदर्थ भगवान् का मूल उद्‌घोष है–'जीओ और जीने दो' इस सिद्धान्त को ज्ञान आचरणपूर्वक अपनाने मे अवश्य ही जीवन मे समता रस की प्राप्ति हो सकती है ।

आचार्य नानेश द्वारा समता प्रसारः

विषमता के इस वातावरण मे व्यक्ति और विश्व के जीवन मे शान्ति का सौरभमय वातावरण उपस्थित करने के लिये समता प्रचार–प्रसार अत्यन्त आवश्यक है । सम्पूर्ण जगत् के प्राणियो की, चाहे वे ऋद्धिवान् हो या निर्धन, सेठ हो या किंकर, तिर्यञ्च हो या मनुष्य देव हो या नारकी, गुरु हो या शिष्य, सभी की आत्मा समान है । कर्मावरण से किसी की आत्मा अधिक आच्छादित है तो किसी की अल्प किन्तु आत्म विषयक विभेद नही है । 'स्थानाङ्ग सूत्र' मे भगवान् ने स्पष्ट फरमाया है—'एगे आया' आत्मा एक है ।

आत्मा की समानता का ज्ञान सुगमता से करने के लिये एक दीपक का दृष्टान्त दिया जाता है । जिस प्रकार दीपक कमरे मे रखा हुआ यथाशक्ति प्रकाश फैलाता है, वैसे ही उसे छोटे से छोटे स्थान मे स्थापित करने पर भी उसके प्रकाश मे कोई व्याघात की स्थिति नही आती । डिब्बे मे स्थित किया जाएगा तो वह उसी स्थान को प्रकाशित करेगा, बाहर नही । वैसे ही आत्मा को अल्पतम पिपीलिका का शरीर प्राप्त होगा तो वह उसी शरीर मे व्याप्त हो जाएगी, बाहर नही । तद्वत हाथी का शरीर प्राप्त होने पर दीपक के प्रकाश की भाति वह सम्पूर्ण गज देह मे व्याप्त हो जाएगी । इसी प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति विकलेन्द्रिय, पशु–पक्षी, मनुष्यादि मे भी जानना चाहिये । एतदर्थ सुख-शांति की अभिलाषा रखने वाले मानव को चाहिये कि वह सम्पूर्ण जीव जगत् पर समता का सुभाव रखे । समता के चार मुख्य सिद्धान्त है जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. सिद्धान्त–दर्शन

२. जीवन–दर्शन

३ आत्म–दर्शन

४ परमात्म–दर्शन

सिद्धान्त-दर्शन:

समता का सैद्धातिक स्वरूप है कि सम-सोचें, सम-जानें, सम-माने, सम-करें। जीवन के प्रत्येक कार्य में समभाव का होना अत्यन्त आवश्यक है। एतद् विषयक एकता के लिये भोगविलास से हटकर जीवन में त्याग-वैराग्य संयमित अवस्था की अपेक्षा है। सयम से तात्पर्य मुण्डित होना ही नही, किन्तु मन-इन्द्रियो को सयमित-सुरक्षित रखना है। मनोज्ञ-अमनोज्ञ शब्दादि पहुचने पर राग-द्वेष की भावना उत्पन्न न करना, श्रोत्रेन्द्रिय को सयमित करना है। इसको वश मे न करने से बहुत अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। महाभारत का युद्ध इसी का परिणाम है। द्रौपदी ने दुर्योधन से यही कहा था कि 'अधे के पुत्र अधे ही होते हैं।' इस शब्द के तीव्र व्यग्यबाण का आघात दुर्योधन सहन नही कर सका जिससे कि हजारो-लाखो निरपराध प्राणियो का सहार हो गया। अत श्रवणेन्द्रिय को वशीभूत रखना आवश्यक है। इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय के आगे किसी भी प्रकार का अच्छा-बुरा, श्लील-अश्लील चित्र आए, नाक मे अच्छी या बुरी गध आए, जिह्वा द्वारा खट्टा-मीठा कोई भी स्वाद आए, शरीर का स्पर्श कठोर या रूक्ष हो, राग-द्वेष की उत्पत्ति न होना समता का सच्चा स्वरूप एव सिद्धांत है। कहा है-

गृह्णाति हृदि भद्रेण, त्यागवैराग्यसयमम्।
लभते समसिद्धान्त, जीवनोन्नतिकारकम्॥

अर्थात्—त्याग, वैराग्य, सयम को सरलता से हृदय मे जो ग्रहण करता है, वह जीवन उन्नतिकारक समता सिद्धान्त को प्राप्त करता है।

२. जीवन-दर्शन:

विषमता के घने अन्धकार मे समता की एक ज्योति ही आशा का संचार करती है। जिस प्रकार एक दीपक अनेक दीपको को अपनी शक्ति से प्रज्वलित कर देता है, वैसे ही सज्जन ज्ञान सहित आचरण से स्वय के जीवन को प्रज्वलित करते हुए अनेकों के जीवन का भी नव-निर्माण करते हैं। इसके लिये सप्त कुव्यसनो का त्याग करते हुए जीवनोपयोगी, आत्म-दर्शन की साक्षात् कराने वाली उपादेय वस्तुओ का आचरण यथा-शक्ति करना चाहिये। "आत्मवत्सर्व भूतेषु" के सिद्धान्त को समक्ष उपस्थित कर जीवन का सर्जन करना समता का द्वितीय सोपान जीवन-दर्शन है। कहा भी है-

पल सुरापणास्तेय, चौर्यं वेश्यापराङ्गना।
सप्तव्यसननत्याग:, दर्शन जीवनस्य तत्॥

अर्थात्—सप्त कुव्यसनों का आचरण नहीं करना तथा जीवन को सदा सादा, शील-वान, अहिंसक बनाये रखना समता-जीवन दर्शन है।

३. आत्म–दर्शनः

जब जीवन पूर्ण रूप से सयमित हो जाता है तब आत्म–दर्शन की अवस्था प्राप्त होती है । एक मानव शरीर, जिसे हम चैतन्य कहते हैं, उसमे तथा अपर मृत मानव शरीर में क्या अन्तर है ? एक क्षण पूर्व जिसकी इद्रिया सजग एव जागरूक थी, मन चिन्तन में रत था, वचन से शब्द परिस्फुटित हो रहे थे, काया से परिस्पन्दन हो रहा था, दूसरे ही क्षण हृदयगति रुकी और वह मृत हो गया । निष्कर्ष यह कि चेतना शक्ति जब तक शरीर के अन्दर रहती है, तब तक देह का सचार चलता रहता है । ज्योही चेतना शक्ति शरीर से बाहर निकल जाती है, तत्क्षण शरीर को मृत कहा जाता है । पौद्गलिकता के कारण शरीर की उत्पत्ति तथा विनाश होता रहता है, जिसे मृत या जीवित की सज्ञा दी जाती है, किन्तु आत्मा का न कभी नाश हुआ है न कभी उत्पत्ति । वह अनादि काल से एक रूप मे चली आ रही है । कर्म की विचित्रता से सूर्य पर मेघपटल की तरह आवरण आता रहता है जिससे चैतन्य प्रकाश आच्छादित हो जाता है । कर्म के क्षयोपशम होने पर पुन प्रकट सूर्य की तरह चैतन्य-प्रकाश प्रकट हो जाता है, किंतु आत्मा सदा तिर्यच, मनुष्य, नरक, देव और भूत, भविष्य, वर्तमान मे एक समान रहती है । वह अपने कर्मों का स्वय कर्ता-भोक्ता है, यह प्रमाणो से सिद्ध है । कहा भी है—

प्रमाणसिद्धचैतन्य., कर्ताभोक्ता फलाश्रित ।
निजदेहप्रमाणे य., स आत्मा जिनशासने ॥

उपर्युक्त लक्षण से युक्त आत्मा की आवाज को जो सुन लेता है और तदनुसार आचरण करता है, वह अवश्य ही आत्म-विकास की अवस्था को प्राप्त कर लेता है । उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति आपके स्वागतार्थ नोटो की गड्डिया गिनता हुआ, उन्हें छोडकर जलपान की सामग्री के लिये बाहर चला जाता है, तब आपके हृदय मे जड मन और चैतन्य आत्मा का युद्ध होता है । मन कहता है कि कुछ नोट उठा लिये जावें, तभी आत्मा की आवाज उठती है कि यहचोरी है, अन्याय है, अपराध है, जिसकी आत्मा जागृत हो उठती है तो वह जडत्व भावना को परास्त कर आत्म–दर्शन मे लीन हो जाता है । कहा है—

अहिंसासत्यमस्तेय, ब्रह्मचर्यमकिञ्चनं ।
यश्चपालयते नित्य, सप्राप्नोत्यात्मदर्शन ॥

अर्थात्—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह को जो सर्व रूप से सयमित हो पालन करता है, वह आत्म-दर्शन को प्राप्त करता है ।

४. परमात्म-दर्शनः

जब आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है तब त्वरित रूप से परमात्म अवस्था की भी प्राप्ति हो जाती है । जैन–दर्शन परमात्मा को कोई अलग से नही मानता । उसकी तो यही

मान्यता है कि आत्मा ही ससार से विरक्त होकर सर्वांगीण रूप से कर्मजाल को हटाकर, गुण स्थानो की अन्तिम श्रेणी अयोगी केवली की अवस्था की प्राप्ति हो जाने पर पाच ह्रस्व अक्षर के उच्चारण मात्र मे जितना समय लगता है, उतने ही समय मे, नीरोग, निरुपम, स्वाभाविक, अवाधित, निरजन, निराकार, अर्हन्त से परमात्मपद की प्राप्ति कर लेती है। इसे विश्व का कोई भी प्राणी क्यो न हो, वह यदि पूर्वोक्त गुणो से युक्त हो तो वह परमात्म पद को प्राप्त कर सकता है। इस सिद्धान्त से प्राणियो मे स्वाभिमान जागृत होता है और वे अपने पुरुषार्थ से जीवन को अनादिकालीन ससार से हटाने मे प्रयत्नशील होते हैं। यही आत्मा से परमात्म पद का साक्षात्कार करना है। कहा है—

> कर्मणश्च विनाशेन, सप्राप्यायोगिजीवन ।
> ससारे लभते प्राणी, परमात्मपद, कलम् ॥

क्रोध को विफलता के सूत्र

भीतर मे उठते ही क्रोध की चिनगारी को कैसे बुझा दी जाय और क्रोध को बढकर बाहर प्रकट हो सकने का अवसर ही न मिले—यह साधक की आभ्यन्तर विकास–दशा पर निर्भर करता है। क्रोध को विफलता के सूत्र उसके आन्तरिक चिन्तन से ही उद्भूत होते हैं।

जब साधक पर विषमता का किसी व्यक्ति अथवा वृत्ति द्वारा आक्रमण हो तो उसमे चिन्तन की धारा इस प्रकार चलनी चाहिये कि ये विषम वृत्तियो वाले व्यक्ति अपनी विषमता का प्रयोग मेरे ऊपर करके मेरी सहिष्णुता की परीक्षा करना चाहते हैं। यदि मैं असहिष्णु बन जाऊंगा तो फिर ये अधिक विषम प्रहार करना प्रारम्भ कर देंगे। मैं उनके विरोध मे जितना क्रोध और रोष करूंगा, तिरस्कार और ताडना तक बढूंगा उतना ही मेरा अमूल्य जीवन-सत्त्व नष्ट होता जायगा तथा मेरी सफल साधना छिन्न-भिन्न हो जायगी क्योकि क्रोध जनित क्रिया–प्रतिक्रियाओ का क्रम तभी टूटता है जबकि जीवन की ऊर्जा विलुप्त हो जाती है। मेरा क्रोध मेरे ही रक्त को विषाक्त बना देगा, मस्तिष्क के ज्ञानकेन्द्रो को आग लगा देगा और दीर्घ आयुष्य को क्षति पहुचायेगा। सद्गुणो की फसल उगाने वाली मेरी मानस भूमि को यह विनाशकारी क्रोध ऊसर बना देगा। मैं अपने सशक्त साधनों से दुनिया को अपने क्रोध की जीत भी दिखा दूगा तो क्या वह जीत वास्तविक होगी? क्या मैं उस जीत के बाद अपने ही अन्त करण मे नगा और उद्दण्ड नही दिखाई दूगा? विषम वृत्ति वाले व्यक्तियो को बाहर से पछाड करके भी क्या मैं उनकी विषम वृत्ति को पछाड सकूगा? वह विषम वृत्ति तो तब अधिक प्रति–शोधात्मक बन जायगी। दूसरी ओर क्या मैं भी विषम वृत्ति की आग मे नही जलने लगूगा? तब फिर ऐसे क्रोध को मैं उठने ही क्यो दू? क्यों न उसको उठती हुई पहली चिनगारी को ही भीतर ही भीतर बुझा दू और भीतर बाहर की अपनी शाति को तनिक भी भंग न

होने दू ? फिर को क्रोध तो विफल बना देने वाला यह सूत्र विषम वृत्ति वाले व्यक्तियों को भी प्रभावित करेगा और उन्हे समवृत्ति की दिशा मे नया मोड देगा ।

साधक की चिन्तन धारा पहले किये गये क्रोध के परिमार्जन रूप मे भी चलती रहे कि मैंने व्यर्थ ही क्रोध किया तथा रोष के वशीभूत होकर अपने व्यवहार को विकृत बनाया । मैंने इस प्रकार अपने शरीर की दुर्दशा की तो अपने जीवन को भी दूषित किया । मेरा पारिवारिक गौरव खडित हुआ, मेरी सामाजिक प्रतिष्ठा आहत हुई और मैं राष्ट्र की गरिमा को भी भूल गया । मैं तो सिर्फ अपने ही अह भाव तथा ममत्व मे डूब गया और इस प्रकार अपने आभ्यन्तर विकास की महान् क्षति के नीचे दब गया । अहकार के नशे को ही मैं अपनी जीत मान रहा था यह कैसी विडम्बना थी ? यह तो मेरी हार थी, क्योकि विजय तो उस पुरुष की हुई जिसने मेरे विद्वेष पूर्ण वचनो तथा क्रोध की फुफकारो के उपरान्त भी प्रतिकारात्मक रूप से एक भी शब्द नही कहा, बल्कि मुस्कराता रहा । उसने तो अपनी समता की शक्ति बढा ली और मैं विषम बन कर समता की शक्ति खो बैठा, यह मैंने भयकर भूल की है । मैं सकल्प करू कि आगे से ऐसी भूल फिर कभी भी न हो ।

यह विचारणा क्रोध को विफल करने मे बडी प्रभावशाली सिद्ध होगी । इस विचारणा मे आन्तरिक सघर्ष मे सम शक्तियो को बल मिलेगा तथा विषम शक्तिया दुर्बल बनकर धीरे-धीरे विलीन हो जायेगी । साधक की यह विचारणा जितनी अधिक पुष्ट होती जायगी, वह भविष्य मे अधिकाधिक सुदृढ भी बनती जायेगी । तब साधक की चिन्तन धारा इस रूप मे प्रवाहित होने लगेगी कि मैं अन्तरग मे रहने वाली विषम वृत्तियो को रूपातरित कर लूं । जिससे आसक्ति जनित केन्द्र, उपकेंद्र तथा उनकी प्रणालिया सक्रिय न हो सकें और न वे मेरे शरीर तथा मेरी मासपेशियो को उत्तेजित बना सकें । बाहरी प्रबल निमित्त पाकर भी ये प्रणालिया निष्क्रिय बन जाय । क्योकि हार मे बारूद भले भरा हो लेकिन अगर बाहर का कोई निमित्त उसको भडकाने वाला नही पैदा होता है तो उस बारूद से घर का कोई बिगाड नहीं हो सकता है । बाहर के निमित्त से ही बारूद भडक कर घर को क्षत-विक्षत कर सकता है । अन मैं किसी बाहरी निमित्त को आग की चिनगारी न बनने दू । इसके साथ ही बारूद रूपी विषम वृत्तियो को मैं सम मे रूपातरित करना आरम्भ कर दू ताकि घर को कभी भी कोई खतरा न हो । तब मेरी आभ्यन्तर शक्ति एक विशाल सागर का रूप ले लेगी, जिसमे कितने ही आग के गोले फेंके जाय सागर का कुछ नही बिगडेगा और वे आग के गोले भी बुझकर फेंकने वालो को शान्ति की राह दिखा सकेंगे । जब मैं समता मय रूपातरण को पूर्णतया सफल बना दू गा तब क्रोध को पूरी तरह विफल भी कर दूंगा और सच्चा 'कोहदसी' भी बन जाऊ गा । यही मेरी सच्ची विजय होगी ।

इस प्रकार का समीक्षण ध्यान यदि साधक निरन्तर करने लगे तो अल्पावधि मे ही वह क्रोध-समीक्षण कर लेगा तथा क्रोधजयी बन जायगा ।

क्रोध की तात्कालिक विफलता के भी पाच सूत्र बताये गये हैं–

१–एकांत मे चले जावें. क्रोध के भडकते ही सबके बीच में से उठकर एकात में चले जावें ताकि क्रोध को बरसने का अवकाश नही रहेगा । जब कोई लक्ष्य सामने नहीं रहेगा तो स्वत' ही वह शात हो जायगा ।

२–मौन हो जावें: उस समय मौन भी धारण करलें ताकि वाचिक एव कायिक प्रभाव तो समाप्त हो ही जाएगा ।

३–क्रोध विरोध चिंतन आरम्भ कर दें तब मानसिक सकल्पो को भी उत्तेजित होने से रोकने के लिये क्रोध विरोधी चिन्तन आरम्भ कर दें, ताकि क्रोध का विस्तार सभी द्वारो से बन्द हो जाय ।

४–कार्य मे प्रवृत्त हो जावें अपेक्षाकृत शात भाव आते ही किसी भी कार्य मे लग जाय ताकि क्रोध का अवशिष्ट प्रभाव भी थोडे समय मे समाप्त हो जाय ।

५–श्वास निरोधी क्रिया करें शरीर और मन पर से क्रोध के बाहरी विषाक्त प्रभाव को दूर करने के लिये दो–चार मिनट तक श्वास निरोध क्रिया सचालित करें ताकि हल्कापन लौट आवे ।

निर्विकार अन्तर्दृष्टि:

निर्विकार अन्तर्दृष्टि ऐसी दृष्टि को कहेंगे, जिस मे विकार का अ श ' मात्र भी न हो उसके सामने चाहे जितना विकारपूर्ण प्रदर्शन उपस्थित हो जाय, इन्द्रियों के माध्यम से व्यक्ति के भीतर में सुपुप्त विकार भले स्मृति पटल पर उभरने लगें, पर वे विकार काय रूप मे परिणत नही हो सकें । उनको कार्यान्वित न होने देने की क्षमता जिस अनुभूतिमय दृष्टि मे पैदा हो गई है, वही निर्विकार दृष्टि का रूप ले लेती है, क्योकि वह दृष्टि उन विकारपूर्ण दृष्टियो की प्रचुरता मे से ही विकसित होती है । इसलिये विकारो के क्या और कैसे दुष्परिणाम होते हैं–उसका वह दृष्टि प्रत्यक्ष अनुभव ले चुकी होती है । पूर्वानुभव के कारण ही ऐसी निर्विकार दृष्टि विकारपूर्ण वृत्तियो का कुप्रभाव शरीर की मासपेशियो पर नहीं होने देती है । स्मृति-पटल पर ही वे विकार सशोधित-परिवर्तित हो जाते हैं । उनमे से निस्सार वृत्तियां विलग हो जाती हैं तथा सारपूर्ण वृत्तियां उसी अनुभूति की पुष्टिकारक बन जाती हैं ।

प्रतिदिन नियत समय पर एकाग्रतापूर्वक यत्न किया जाय तो ऐसी निर्विकार अन्तर्दृष्टि का शनैः-शनैः विकास किया जा सकता है । प्रारम्भ मे विकारी वृत्तियो को अनावृत करने के लिये परिपूर्ण निर्विकारी तत्त्व का ध्यान करना होता है । जिस केन्द्र पर उसका ध्यान करने का प्रसंग आता है, उसी पर प्रतिदिन नियत समय पर ध्यान लगाने की आवश्यकता होती है । शुरु में एकाग्रता जमने में कठिनाई आती है, क्योंकि वहां कुछ भी दिखाई नहीं पडता है । परन्तु साधक दृढ़ सकल्प के साथ परिपूर्ण उत्साह से भरकर उपयोग को वहां टिकाये रखने की

कोशिश करता है तो कुछ समय बाद वहां उनकी काली छाया दीखने लगती है जैसी कि अन्धकार से परिपूर्ण रात्रि के समाप्त होने के समय दिखाई देती है जिसे देखते–देखते वही कालिमा धीरे–धीरे लालिमा मे रूपातरित होती हुई प्रतीत होती है । तब ध्यान के समय मे कभी काली छाया तो कभी लालिमा आती–जाती रहती है । फिर धीरे-धीरे कालिमा हल्की होती जाती है तथा लालिमा चमकदार बनती जाती है । उसी चमक की वृद्धि के साथ फिर सूर्य की किरणें दिखाई देती है । उस केन्द्र पर काले रग के बाद उसके स्थान पर नीला तथा फिर हरा रग प्रकट होता है । यह हरा रग गहरा होकर हरीतिमा के समान मनोहर हो जाता है । तदनन्तर विचित्र प्रकार के रगो की स्थिति प्रकट होती रहती हैं और उन्ही के बीच मे जाज्वल्यमान ज्योति प्रतिभासित होती है । उसके पश्चात् यदि साधक धैर्य का सम्बल लेकर गम्भीरतापूर्वक इनको पचाता हुआ दीपक के तुल्य लालिमा मे प्रवेश करने की योग्यता अर्जित कर लेता है तो निर्विकार अन्तर्दृष्टि की किरणें स्पष्ट रूप से दृश्यमान होने लगती हैं ।

यदि साधक इस अभ्यास क्रम को बिना किसी थकान मे बढाता रहे और अकुर के रूप मे प्रकट हुई निर्विकार दृष्टि का प्रतिदिन सपोषण एव सवर्धन करता रहे तो उसकी निर्विकार दृष्टि निरतर बढती रहती है । उसका प्रभाव तब अन्य केन्द्रो पर भी पडने लगता है । पहले पहल कुछ समय तक उसमे उपयोग स्थिरता को प्राप्त करनी होती है । फिर उस काल की वृद्धि होने पर साधना के नियत समय से भी आगे परिपूर्ण समय तक उपयोग की स्थिरता बन जाती है । उसके बाद उसी अभ्यास क्रम से उसमे प्रगाढ आनन्दानुभूति एव शत्रु–मित्र के प्रति समभाव की वृत्ति इतनी सु-व्यवस्थित हो जाती है कि साधना काल के अतिरिक्त समय मे भी उसी प्रसन्नता के साथ निर्विकार दृष्टि का अनुभव होने लगता है । साधक इसी गति से आगे बढता रहे तो चलते–फिरते, खाते–पीते, उठते–बैठते, सोते–जागते आदि प्रत्येक अवस्था में उसे निर्विकार दृष्टि की सुखद अनुभूतिया होने लगेगी । तब एक प्रकार से साधक का जीवन उन अनुभूतियो के साथ एकमेक हो जाता है ।

फिर उस साधक के सामने कोई भी प्रसग आवे, कितनी ही विकट परिस्थितियां पैदा हो, कैसा भी दूषित वातावरण बनने लगे, परन्तु उसकी आनन्दानुभूति मे कोई भी किसी प्रकार की स्खलना नही पहुचा सकते हैं । यह सब उस साधक की स्वय के नियन्त्रण की स्थिति बन जाती है । वह अवस्था उसके जीवन को सफलीभूत बनाने मे सक्षम हो जाती है । उस निर्विकार दृष्टि मे निर्विकार तत्त्व ही भासित होने लगते हैं । विकारी तत्वो के भीतर मे भी वह दृष्टि निर्विकार अ श को ही सम्मुख रखकर उस का प्रकटीकरण करती है । अतएव घनीभूत विकारो मे भी वह यत्किंचित् निर्विकार तत्त्व ही ग्रहण करती है । जैसे रत्नो का वास्तविक पारखी काच के टुकडो मे से रत्न को खोज निकालता है या ककडो के बीच मिट्टी से लिप्त होने पर भी रत्न को खोज लेता है, अथवा कीचड मे दबे रत्न रत्न को भी पहिचान लेता है, परन्तु उन काच के टुकड़ों, मिट्टी ककड़ो या कीचड से अपने आप को विकृत नही होने देता है। उसकी दृष्टि पवित्र रत्न को खोजने मे ही लगी रहती है । अतएव दुर्गन्धमय अशुचि से लिपटे रत्न को भी वह उठा लेता है, पर अशुचि से घृणा और विद्वेष नही करता । वैसे ही निर्विकार

दृष्टि से सम्पन्न उपरोक्त प्रकार का साधक गदे से गदे शरीर वाले व्यक्ति को देखकर भी उससे किंचित् मात्र भी घृणा नही करता चाहे वह भयकर कुष्ठ रोग से ही पीडित क्यो न हो। उसके शरीर मे रहने वाले निर्विकार तत्त्व को भी महत्त्व देता है। रोगी की दुर्गन्धमय अवस्था को देखकर भी वह अपनी निर्विकार दृष्टि मे किसी भी प्रकार की घृणा विद्वेषादि की विकृति नही आने देता है। वह उसकी शारीरिक अवस्था के कारणो को तटस्थ भाव से चिन्तन मे लेता है। वह सोचता है कि इस आत्मा ने पूर्व मे घृणा, विद्वेष, क्लेश आदि विकारपूर्ण वृत्तियो से अपने अन्त करण को कालिमामय बनाया होगा जिसके फलस्वरूप ही उसके ऐसे कर्मों का बन्धन हुआ अब उन्ही कर्मों के उदय का प्रसग आया लगता है। यह आत्मा इन रोगो की उपस्थिति मे दु ख पा रही है और हाय विलाप करते हुए कर्मो का भोग ले रही है तो कुध्यान करते हुए पुन वैसा ही कर्म बधन कर रही है। अज्ञानी आत्माओ के लिये ऐसा सिलसिला चालू रहता है। रोग की रोग से वृद्धि होती है क्योकि रोग के हेतुभूत भावो मे विषमता होने से कर्म बधन भी पुन वैसे ही होते हैं। फिर उन कर्मों का उदय आने पर पुन वैसा ही कुध्यान चलता है। उस समय अधिक क्लिष्टता आने से कभी-कभी पूर्वापेक्षा भी अधिक जटिल कर्मो का बध हो जाता है। यह मिथ्यात्वी आत्माओं की दशा की अनादिकालीन शृ खला चक्रव्यूह की तरह अटूट रूप से चलती रहती है।

कभी सत्पुरुषो के सम्पर्क से अथवा सत्शास्त्रों के वाचन से अथवा काल लब्धि की समाप्ति से ऐसी आत्माओ को सद्बोध प्राप्त हो सकता है। उस सद्बोध मे सम्यक् दृष्टि के साथ भावो का परिमार्जन होने लगता है। वे तब अपने आप मे स्थिर होने की कला भी सीख लेती हैं तो उस अनादिकालीन मिथ्यात्व दशा की शृ खला को तोडकर स्व-स्वरूप की ओर अग्रसर होने लगती है। जिन कारणो से कर्मबन्धन का सिलसिला चल रहा था, उन कारणो को तब वे समाप्त करने की कोशिश करती हैं। फिर वे अपनी भावशुद्धि, वचन शुद्धि तथा आचरण शुद्धि भी करती रहती हैं।

शांति और प्रेम का वायुमंडल

क्रोध समीक्षण एव क्रोध त्याग के अभ्यास क्रम के पश्चात् उस व्यक्ति के चारो तरफ का वायुमण्डल शांति और प्रेम के अनुभावो से ओतप्रोत होने लगता है। अपने अभ्यास क्रम मे वह व्यक्ति क्रोध का अविवेकपूर्ण दमन नही करता, वल्कि पूरे विवेक एव सद्भाव से उसका शमन करता है। वह समता पूर्वक चिन्तन करता है कि विकृत अथवा विषम निमित्तो को देखकर या उनके समीप मे रहकर भी मैं अपने परिणामो मे विद्वेष और कलुषिता को नही आने दूंगा—चाहे वे मुझे कितना ही तिरस्कृत और अपमानित करें और मेरे प्रति घोर अन्याय का व्यवहार करें। मैं अपने समभावो को तनिक भी खडित नहीं होने दूंगा। मैं तो उनके प्रति अपनी पूर्ण सद्भावना ही व्यक्त करूंगा। मेरे शब्द मधुर ही रहेंगे तथा कार्य नीतिपूर्ण हो। जैसे भी होगा मैं उन्हें भी सशोधित करने का पूरा प्रयत्न करता रहूंगा। मैं उभय पक्ष का हित ही साधूंगा जिसमें अशुभ भाव जनित कर्म बधन न हों।

इस रूप मे शान्ति, प्रेम एव सौहाद का वायुमण्डल बनने से उभय पक्ष के साथ-२ अनेकानेक व्यक्तियो का भी हित-सम्पादन हो सकेगा । समझे कि एक व्यक्ति घी का बर्तन लेकर चल रहा है और दूसरा व्यक्ति उसे उत्तेजित करके उस अमृत तुल्य घी को मिट्टी मे मिला देना चाहता है तो क्या पहले व्यक्ति को यह विवेक नही चाहिये कि वह अपने घी को बर्बाद होने से बचाले यह तो बाह्य पदार्थ घी की बात है किन्तु क्रोध से उत्तेजित होकर कोई भी व्यक्ति आसानी मे इतना अविवेकी बन जाता है कि अपनी मानसिक, वाचिक एव कायिक शक्ति को तो नष्ट करता ही है किन्तु साथ ही अपने आस-पास के वायुमण्डल को भी घृणा विद्वेष तथा शत्रुता से कलुषित बना देता है । अत क्रोध की उत्तेजना मे बुद्धि को निष्क्रिय नही बना देनी चाहिये ।

अपनी बुद्धि का सदुपयोग करते हुए पूरी समझ के साथ क्रोध का शमन करते रहना चाहिये । क्रोध शमन के तात्कालिक पाच उपाय बताये गये हैं—

१—पूर्व प्रतिज्ञा विचारें—क्रोध न करने तथा समभाव रखने की जो पहले प्रतिज्ञा हुई हो उस पर पुन विचार करें ।

२—पूर्व प्रतिज्ञा दृष्टि मे लें—विचार के साथ उस प्रतिज्ञा को जैसे स्वय द्रष्टा बन कर देखें ।

३—प्रतिज्ञा का बार-बार स्मरण करें—जब तक क्रोध शमित न हो जाय, उस प्रतिज्ञा का बार-बार स्मरण करते रहे तथा दड लेने का सकल्प करें ।

४—मन कार्य की दिशा बदलें—मन मे अन्यान्य शुभ विचारो को लावें तथा कोई नया शुभ काम हाथ मे ले ताकि क्रोध का विस्मरण होकर शमन हो जाय ।

५—पंच परमेष्ठि का ध्यान करें—आखें बन्द करके नवकार महामन्त्र एव पचपरमेष्ठि का एकाग्रतापूर्वक जाप करना आरम्भ कर दें ।

क्रोध त्यागें, अजातशत्रु बनें

जिस पुरुष ने मानव तन तथा आत्मा के तत्त्वो को समझा है, चिन्तन-मनन के क्षणों में उन तत्त्वो की उपलब्धि करने का निर्णय लिया है, इसी तन-मन से उन तत्त्वो के साक्षात्कार की सम्भावना मान ली है तथा अपने ध्यान योग को उस दिशा में उत्तम साधना के साथ मोड़ लिया है, वह साधक अपनी साधना की सिद्धि एक न एक दिन पा लेता है । इस साधना का आरम्भ होता है, क्रोध त्याग ये जो प्रगति करती हुई सभी विषम-कषायो को समाप्त करती है तथा समभाव, समदृष्टि तथा समीक्षण ध्यान से विभूषित बन कर साधक को अजात शत्रु बना देती है ।

मानव तन के भीतर रहा हुआ आत्म-तत्त्व मूल रूप से अविनाशी परिणामी तथा अजात शत्रु स्वभावी होता है। इस तत्त्व के मूल रूप को प्रकाशित कर देना ही साधना का चरम लक्ष्य होता है। जब साध्य स्पष्ट और अविनाशी हो और साधना एकनिष्ठ तत्त्व सिद्धि स्वयमेव समीप चली आती है। नाशवान पदार्थों के प्रति ममत्व का जब परित्याग किया जायगा तो क्रोध के प्रकट होने के अवसर ही प्राय समाप्त हो जायेंगे। यदि नाशवान से विरक्ति लेंगे तो अविनाशी के प्रति ध्यान अधिक केन्द्रित होगा। उस अविनाशी स्वभाव की परिणति तब मानस तंत्र पर उभारनी होगी। तब उसके अनुरूप निर्मित होनेवाली भावनाओं के प्रभाव से वाणी "माहणो" के रूप मे अभिव्यक्त होगी। तब वे ही भावनाएं कार्यों मे उतर कर सब ओर प्रेम की वर्षा करने लगेगी। समूचे वायुमण्डल मे मैत्री की सुगंध फैल जायगी। विभिन्न पर्यायो मे परिणित विभिन्न आत्माओं को आत्मवत् जानते हुए शत्रु भाव को पूर्णतया विनष्ट कर देंगे जब कोई शत्रु नहीं होगा तो यही कहा जायगा कि सभी शत्रु विजित कर लिये गये हैं। इस अवस्था मे ही किसी को अजात शत्रु कहा जा सकता है।

अभय बनें, अभय बनावें

अविनाशी आत्म स्वरूप की साधना से जब अजात शत्रुत्व प्राप्त हो जाता है तो वह साधक पूर्ण रूप से भयरहित हो जाता है। वह मृत्यु-भय तक को जीत लेता है। वह सर्व प्रकारेण अभय बन जाता है। साधक के मानस तंत्र मे व्याप्त अभय भावना तब व्यापक रूप से क्रियाशील बन जाती है। वह भावना विनाश रूप परिणति से भयाक्रान्त अवस्था वाले प्राणियो को अभयदान प्रदान करने के रचनात्मक कार्य मे परिणमित होती है। मानस तंत्र की उभय प्रणालिया उस समय मे दूसरो को भी इस प्रकार के कार्य की प्रेरणा देती है एवं अभय भावना के अनुरूप पर्यायो को जानकर प्रफुल्लित होती है।

अभय भावना की यही परिणति वाचिक शक्ति में परिवर्तित होकर समस्त आत्माओं को उद्बोधन देती है। उसके उद्बोधन का यह आशय होता है कि मैं स्वयं नाश के भय को उपस्थित नही करूंगी और दूसरो के माध्यम से भी ऐसा नही करवाऊंगी अतः तुम सभी मेरे से पूरी तरह निर्भय रहो। अन्तरात्मा की ऐसी नाद-ध्वनि विश्व में रहने वाले समस्त प्राणियों के मानस तन्त्र को प्रभावित करती है। इस क्रिया की तदनुकूल प्रतिक्रिया उस साधक के साध्य के अनुरूप साधन मे सहायक होगी। क्योंकि सृष्टि के अन्तर्तंत्र मे सूक्ष्म रूप से क्रिया और प्रतिक्रिया बनती रहती है यथा ध्वनि की प्रतिध्वनि ध्वनि के अनुरूप ही होती है।

साधनो की प्रमाणिकता

साधन का दूसरा पक्ष प्रामाणिकता है। इसके बिना साधनो की समुचित पालना हो ही नहीं सकती। साधक द्वारा सर्वदा अपनी मर्यादाओं का उपयोग रखना तथा साधना को साध्याभिमुखी बनाये रखना अन्तःकरण की साक्षी के बिना सम्भव नही होता है। यह अन्तःकरण

की सच्ची साक्षी ही साधनो की प्रामाणिकता को बताये रखती है । अन्त करण की प्रामाणिकता ही वाचिक और कायिक रूपो मे ढलकर एक साधक के व्यक्तित्व को प्रामाणिकता से प्रतिष्ठित बनाती है ।

इस रूप मे प्रामाणिकता की प्रतिष्ठा उस साधक का रक्षा कवच बन जाती है क्योकि जब कभी उसकी साधना मे कोई दुर्बलता के क्षण आते हैं तो उसके मन मे विचार उठता है कि यदि वह अपनी दुर्बलता को प्रारम्भ मे ही समाप्त नही कर देगा तो उसकी प्रामाणिकता को ठेस पहुचेगी । प्रतिष्ठित प्रामाणिकता का निर्वाह उसकी सर्वतोमुखी सुदृढता का कारणभूत बन जाता है । ऐसी सुदृढता ही साधना के सघन वृक्ष को मूल रूप से सिंचन करने वाली सहायिका होती है । इस सिंचन के द्वारा उसकी साधना सिद्धि रूपो फल प्राप्त करने की दिशा मे अग्रगामी बनती है ।

अतएव साधक को अपने साधन रूप मे सग्रहीत प्रामाणिकता के प्रथम पक्ष को मानसिक धरातल पर अखण्डित रखना चाहिये । साधन के द्वितीय पक्ष का अवलोकन भी साधक के लिये जरूरी है । बाह्य जीवन के भी सभी पक्षों में प्रामाणिकता की पूर्ण आवश्यकता रहती है । इसी प्रामाणिकता से व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को निखार सकता है तो पारिवारिक जीवन मे भी प्रामाणिकता का सचार करता हुआ सामाजिक एव राष्ट्रीय जीवन मे प्रामाणिकता का महत्त्वपूर्ण वायुमण्डल निर्मित कर सकता है । प्रामाणिकता का दीपक आभ्यन्तर एव बाह्य दोनो प्रांगणो को प्रकाशित करने वाला है । इस प्रकाश के बिना किसी भी क्षेत्र मे परिपूर्ण सफलता नहीं मिल सकती है ।

प्रवचनांश

बन्दर की पकड़—

एक बन्दर घरो की अट्टालिकाओ पर इधर से उधर छलागें लगा रहा था । छलागें लगाते—लगाते उसने एक मकान की छत पर छोटे मुंह वाली मटकी मे चने (भूगडे) पडे हुए देखे । जिसे देखकर वह ललचा गया, उन्हे पाने के लिए बन्दर ने मटकी मे हाथ डाला और मुट्ठी भर ली लेकिन जब वह मुट्ठी बाहर निकालने की कोशिश करने लगा तो वह निकल ही नही पाती है । तब वह ची—ची करता है ।

जब तक हाथ मटकी मे नही डाला था, मुट्ठी नहीं भरी थी तब तक वह सुखी था, स्वतन्त्र था, कोई तनाव नही था, लेकिन ज्योही मुट्ठी भरी और उसे नही निकाल पाने के कारण दुखी हो गया, परतन्त्र हो गया, मानसिक टेन्सन से ग्रस्त हो गया ।

बन्धुओ ! वह तो विवेक विकल बन्दर था, लेकिन आज के अधिकांश मानव क्या कर रहे हैं ? क्या वे भी इसी तरह तो मुट्ठी नही भर रहे हैं, आज धन की पकड, परिवार की

पकड, न मालूम यह पकड कितनी अधिक बढती जा रही है, जब तक यह पकड रहेगी, तब तक कोई भी मानव सुखी नही हो सकता। बन्दर की एक पकड ने ही उसे दुखी बना दिया, तो आज के पुरुषो ने न मालूम कितनी पकड कर रखी है।

सुखी बनने के लिए भौतिकता की पकड छोडनी होगी।

जैन और जैनत्व–

आज के बुद्धिवादी वर्ग मे यह आम चर्चा बन गई है कि जैन धर्म के सिद्धात इतने साइन्टिफिक होते हुए भी उसके अनुयायी बहुत कम है, यह कैसे ? इस बात का स्पष्टीकरण मैं स्व आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा के साथ विनोबा भावे की चर्चा से कर देना चाहता हू।

आचार्यश्री गणेशीलालजी म सा के साथ चर्चा करते हुए विनोबा भावे ने बतलाया– आचार्यश्री ! आप यह सोचते होगे कि जैन धर्मानुयायी बहुत कम हैं, हा, नाम मात्र के जैनानुयायी कम हो सकते हैं, किन्तु जैन सिद्धान्त–जैनत्व पूरे विश्व मे दूध मे मिश्री की तरह फैलता जा रहा है, जिस प्रकार दूध मे मिश्री घुलकर उसे मीठा बना देती है, तब मिश्री का स्वतन्त्र अस्तित्व दिखलाई नही देता।

ठीक इसी प्रकार जैनत्व, जैन धर्म के सिद्धान्त–अहिंसा, सत्य अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, स्याद्वाद आदि इतने ही अधिक फैलते जा रहे हैं। आज विश्व के प्रत्येक राष्ट्र के मूलभूत नियम इन्हीं सिद्धातो पर बने है। हमे प्रत्यक्ष रूप से इन सिद्धातो की स्थिति परिलक्षित नही हो रही है, किन्तु यदि अहिंसा, सत्य आदि को राष्ट्रीय नियमो से निकाल दिया जाय तो कोई भी राष्ट्र एक क्षण के लिए भी व्यवस्थित नही चल सकता।

अत स्पष्ट है कि जैनत्व की दृष्टि से जैन–दर्शन विश्व व्यापक है। हा जैनानुयायी अल्प परिलक्षित हो सकते हैं।

सयोग–उपभोग–

एक व्यक्ति के पास भोजन की सारी सामग्री उपलब्ध थी—आटा, दाल, घी सभी पदार्थ पर्याप्त मात्रा मे थे। उसे बहुत तेज भूख लग रही थी, वह जोर–जोर से चिल्लाने लगा मुझे भूख लग रही है, मुझे भूख लग रही है। उसकी यह स्थिति देखकर उसके एक वृद्ध मित्र ने कहा–अरे तुम चिल्ला क्यो रहे हो, यदि तुम भूखे हो तो तुम्हारे पास भोजन की सारी सामग्री पडी हुई है, जब सारी वस्तुओ का सयोग है तो इसका उपयोग क्यो नही करते। लेकिन वह व्यक्ति बोला–मेरे पास संयोग है, किन्तु उसका उपयोग करना नही आता।

इसीलिए तुम भूखे मर रहे हो, मित्र ने कहा।

क्षुधा तृप्ति के लिए सयोग के साथ उपयोग भी होना चाहिये ।

वर्तमान की स्थिति भी कुछ ऐसी ही वन रही है । आज प्राणी को श्रेष्ठतम वस्तु, मानव तन प्राप्त हो गया है । आवश्यकता है, इस सयोग को सही दिशा मे उपयोग करने की। केवल सुख के चिल्लाने मात्र से सुख प्राप्त नही हो सकता ।

पानी सभी का है–

सरिता मे प्रवाहित शीतल नीर किसी व्यक्ति विशेष से ही अपना सम्बन्ध स्थापित नही करता । ऐसा कभी नही होता कि पानी सम्राट के पीने पर तो उसकी प्यास शान्त कर दे और रक के पीने पर उसकी प्यास शात न करे । श्रीमत पीये तो उसकी प्यास बुझ जाए, निर्धन की न वुझे ।

पानी मे ऐसा कोई पक्षपात नही होता उसको पीने वाला कोई भी व्यक्ति क्यो न हो, मानव हो या पशु, रक हो या राजा, धनी हो या निर्धन, वह सबकी प्यास तृप्त करता है ।

ठीक इसी प्रकार अर्हंत–सिद्धान्त अहिंसा आदि सार्वजनीन, सार्वभौमिक हैं । ये सिद्धात किसी व्यक्ति विशेप या वर्ग से आबद्ध नही हैं, जो भी व्यक्ति इन सिद्धान्तो को व्यव–स्थित रूप से अपनाता है, निश्चित रूप से उसे जीवन मे शीतल सुखद अनुभूति होने लगती है ।

आधुनिक शिक्षा–

आज के आधुनिक युग मे शिक्षा का वहुत प्रचार–प्रसार हो रहा है । सरकार भी अपनी सम्पत्ति का वहुत कुछ व्यय इस दिशा मे कर रही है । इस आधुनिक शिक्षा को प्राप्त करके कई युवक ग्रेजुएट होते जा रहे हैं और वडे–वडे पदो पर भी कार्य कर रहे हैं ।

जिस प्रकार वडे–२ पदो पर कार्य करने से पहले शिक्षण–प्रशिक्षण लेते हैं । वर्षों तक अध्ययन करने के वाद ग्रेजुएट वन पाते हैं । तो क्या मैं आपसे पूछू कि जब आपने सतति प्रजनन प्रारम्भ किया, उससे पूर्व पिता के कर्तव्यो का अध्ययन किया ?

महिलाओ ने माता वनने से पूर्व अपनी सतति के प्रति कर्तव्यो का अध्ययन किया ?

वतलाइये, क्या लिया है ऐसा कोई प्रशिक्षण ? अरे, आप सब मौन क्यों हो गये ?

वस भूल मूलत. यही से हो रही है । अपने कर्तव्यो का वोध प्राप्त करने से पहले ही किये जाने वाला सम्बन्धित कार्य हानिकारक होता है । आज स्थिति यह वनती जा रही है, माता–पिता को ही जव अपनी सतति के प्रति क्या कर्तव्य होते है, इसका भान नही है, तो

फिर उनकी सतति को अपनी माता-पिता के प्रति क्या कर्तव्य होने चाहिये ? इसका बोध कैसे हो पायेगा ?

देवकी महारानी को पुत्रो के प्रति माता का क्या कर्तव्य होता है, इस बात का पूर्ण विवेक था। इसी का परिणाम आया कि महारानी को दुखित देखते ही श्रीकृष्ण का हृदय भी दुखित हुआ और उन्होने हर कीमत पर माता के दु ख को दूर करने का निर्णय कर लिया और उन्होने दु ख दूर भी किया।

श्रवण कुमार को अपने कर्तव्य का बोध था, इसका परिणाम कि माता-पिता को कावड मे बिठाकर भी यात्रा करवाई। माता मदालसा ने अपने पुत्रो के प्रति अपना कर्तव्य निभाया था, परिणामस्वरूप महारानी मदालसा की इच्छानुसार सभी पुत्र यशस्वी बने थे।

अत. पारिवारिक जीवन सुखमय बनाने के लिये जनक-जननी, पुत्र-पुत्रियो को अपने अपने कर्तव्य का बोध करना अत्यन्त आवश्यक है।

शाश्वत सत्ता आत्मा की-

जिस प्रकार व्यक्ति वस्त्र परिवर्तन करता है, किन्तु वस्त्रो के परिवर्तन होने मात्र से मानव मे कोई परिवर्तन नही होता, उसी प्रकार यह आत्मा भी वस्त्र परिवर्तन की तरह भव भ्रमण करती रहती है, किन्तु इस भव भ्रमण से उसकी आत्मा मे कोई परिवर्तन नही आता अर्थात् आत्मा जड के रूप मे परिवर्तित नही होती।

वस्त्र परिवर्तन की तरह ही शरीर परिवर्तन होता है। अत. उस शरीर मे रहने वाली आत्मा को वैभाविक स्थिति से हटाने पर आत्मिक जागरण हो सकता है। आज का अधिकाश मानव जड तत्त्व सोना-चादी आदि के साथ सम्पर्क जोड रहा है, लेकिन उन तत्त्वों मे कभी भी शाति प्रस्फुटित होने वाली नहीं है, आज तक किसी भी व्यक्ति को इन तत्त्वों से शान्ति उपलब्ध नही हो पाई है।

स्वधर्मी-वात्सल्य-

शरीर के भीतर मे भी और भीतर में जाइये, माता के गर्भ मे और अधिक गर्भ मे जाइये, उस भीतर मे बैठा हुआ है आत्मा का गर्भ, जो प्राणी मात्र के साथ समान व्यवहार करने की ओर इंगित करता है।

आत्मिक दृष्टि से विचार किया जाय तो ससार की समस्त आत्माएं परस्पर स्वधर्मी हैं, क्योंकि सभी आत्माओं का मौलिक गुण चैतन्य सभी मे विद्यमान है, इस व्यापक तथ्य का वर्गीकरण किये जाने पर तिर्यञ्च-तिर्यञ्च स्वधर्मी है, मनुष्य-मनुष्य स्वधर्मी हैं ऐसे भेद बनते हैं। एक-दूसरे स्वधर्मी का परस्पर मे अत्यन्त स्नेह भाव होना चाहिये।

आत्म शुद्धि की ओर बढने वाले साधको के लिए यह सबसे पहला कर्तव्य होता है कि वह एक दूसरे का परस्पर सत्कार सम्मान करे, उन्हे आदर की दृष्टि से देखें, गुण ग्रहण की दृष्टि बनाए आदि ।

स्वधर्मी के प्रति इस प्रकार का वात्सल्य होने पर ही विश्व के सभी प्राणियो के प्रति वात्सल्य भाव जागृत होगा, विश्व के सभी प्राणियो के प्रति वात्सल्य भाव जागृत होने पर ही आत्मा मे परमात्मा का जागरण हो सकता है ।

सशोधन हो, जीवन का–

गट्टर के पानी को देखकर किसी ने कह दिया गट्टर बह रहा है, लेकिन वास्तव में पानी गट्टर नही है, दूषित–तत्त्व मिल जाने से गदगी मिल गई है, इसी प्रकार आज के अधिकाश लोगो की चित्तवृत्तिया, विकृतियो की गदगी मे मिलती जा रही हैं ऐसे समय मे पूरा जीवन गदगी पूर्ण नही है अपितु दूषित तत्त्व गदे हैं । उन दूषित तत्त्वो को हटाकर चित्त वृत्तियो को स्वच्छ बनाना चाहिए ।

मोड़ दो वासना का प्रवाह-

कभी–कभी इजीनियर बहते पानी को रोकने के लिए/मोड देने के लिए सामने बहुत बडी सशक्त दिवाल खडी करते हैं । लेकिन वेगवाही पानी का प्रवाह इस दिवाल को भी तोड डालता है तो भी वह इंजीनियर घबराता नही है पुन साहस के साथ दिवाल खडी करता है और आखिर वह पानी की दिशा को मोड ही देता है । ठीक इसी प्रकार अनन्त काल से आने वाली वासना का जो प्रवाह है उस प्रवाह को आप मोड दें, घबरायें नही । यदि साहस के साथ आप प्रयत्न करेंगे तो निश्चय ही वासना का प्रवाह मुड जायगा और जीवन के अन्दर सुखद अनुभूति हो सकेगी । इसे मोड देने के लिए जीवन का समीक्षण आवश्यक है ।

आवरण के मध्य-

भयानक दुर्गन्ध के नाले मे गन्दगी से लथ–पथ मादा को देखकर सजातीय नर-सुअर उसे अपना आकर्षण का केन्द्र मान बैठता है, उसी प्रकार जो व्यक्ति हाड, मास, रुधिर आदि भयानक दुर्गन्ध और अशुचि से भरे स्त्री पिंड को पापमय कीचड से लथपथ देखकर भी उसपर आकर्षित होता है तो उस गदे नाले के सुअर एव उस पाप वृत्ति वाले मनुष्य मे अन्तर ही क्या रह जाता है? यह शरीर उस दुर्गन्धित गट्टर के तुल्य है, जिसके ऊपर तो चमक-दमक हो, टाइल्स लगी हो । सुगन्धित इत्र-फलेल का छिडकाव हो और भीतर मे नीचे भयानक दुगन्ध पूर्ण अशुचि भरी हो, यह शरीर भी क्यो न बाह्य चर्म की अपेक्षा से सुन्दर परिलक्षित होता है । किंतु भीतर मे तो वह भयानक दुर्गन्ध मे परिपूर्ण है ।

जिस प्रकार सुज्ञ व्यक्ति वाह्य रूप से सुन्दर लगने वाले गट्टर मे भी विना कारण बैठने की वात तो दूर, जाना भी पसन्द नहीं करता, तो फिर उसी बुद्धि से यह भी सोचना चाहिये कि यह शरीर उस गट्टर के तुल्य है, उस पर क्यो आसक्ति बढाई जा रही है, जो कि एक दिन महान् घातक सिद्ध होगी।

श्वान वृत्ति-

अज्ञ श्वान हड्डी को देखकर उसे पाने के लिए मचल उठता है, उसे पाने के लिए चाहे उसे अपने भाइयो मे सघर्ष भी करना पडे तो करता है लेकिन उस हड्डी को पाकर श्वान दातो तले दवाता है, पर जब उसे कुछ नही प्राप्त होता है, तब उसे और जोर से दवाता है, इस दवाव से उसी के मसूडो से रक्त झरने लगता है, जिसे देखकर श्वान सोचता है मैं हड्डी का रक्त पी रहा हू।

ठीक उसी प्रकार आधुनिक युग के अधिकाश मानव भी भौतिक तत्त्वो मे शाति प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, उन्हे सेक्स मे आनन्द की अनुभूति होने लगती है, लेकिन यह आनन्द की अनुभूति उन तत्वो से नही, अपितु स्वय से ही प्राप्त होती है परन्तु वे इस तथ्य को समझ नही पा रहे हैं, इसीलिए अपनी महत्त्वपूर्ण शक्ति का हनन करते जा रहे हैं।

जब श्वान को यह ज्ञात हो जाता है कि हड्डी मे मुझे रक्त नही मिल रहा है, वल्कि यह रक्त मेरे मसूडो का है तो उसमे उपेक्षित हो सकता है। ठीक उसी प्रकार आपको भी इस बात का बोध करवाया जा रहा है, आनन्द की अनुभूति कभी इन भौतिक तत्त्वो मे नहीं हो सकती है अत. इन भौतिक तत्वो मे उपेक्षित होकर आत्म समीक्षण की ओर गति करनी चाहिये। श्वान तो अज्ञ है, किन्तु मानव तो विज्ञ है। अत उसे इस दिशा मे अपनी बुद्धिमत्ता का प्रयोग करना चाहिये।

रिक्तता वने विभाव से-

अन्य पर्वो में वैभाविक वृत्तियो के उभरने का प्रसग अधिक रहता है। दीपावली, होली आदि पर्वो मे पेट को मिठाइयो मे भरते रहते हैं, इन्द्रियो को अपने-अपने विषय मे पोषित करने मे लगे रहते हैं। काम-विकार मे मन को भर देते हैं। सासारिकता मे रचे-पचे रहते हैं, लेकिन पावन पर्व सवत्सरी भरने का नही अपितु खाली करने का प्रेरणा देता है।

सबसे पहले पेट को रिक्त रखने के लिए आज के रोज भोजन का सर्वथा परित्याग कर दें, पेट को रिक्त रखने पर अन्य इन्द्रियो का पोषण भी अल्प होगा। नाक, कान आदि इन्द्रियो को अपने विषय से सकुचित करने का प्रयास करना होगा।

जब वैभाविक वृत्तियो का पोषण कम होगा, तब स्वभाविक वृत्तियों का जागरण प्रारम्भ होगा।

सवत्सरी इस बात का प्रतीक है कि साधक आत्म–साधना के लिए उन वैभाविक वृत्तियो से अपने आपको रिक्त बना लें । वैभाविक वृत्तियो से जितने रिक्त बनेंगे, उतना ही स्वभाविक वृत्तियो का जागरण होगा ।

सवत्सरी महापर्व हमे विशेषत: यही सकेत देता है कि, इन्द्रियो व मन के माध्यम से वैभाविक तत्त्वो को सग्रहीत करने की लालसा मे जो आत्मिक शक्ति खर्च हो रही है, उस शक्ति को उर्ध्वमुखी बनाने के लिए विभाव से हटिये एव स्वभाव की ओर बढिये ।



अष्टाचार्य गौरवगंगा

शुद्धि-पत्र

प्रथम खण्ड-

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१०	जानना	जाना
३१	१२	आचार्य	युवाचार्य
१८	३३	१८८०	१६८०
६१	१	खादीसर	वीदासर
६८	२३	कुद	कुन्दन
१२७	१६	मेर एक	मेरे नाम के
१३२	२२	उसमे पर	उसमे भी
१४८	३०	प्रतिपामक	प्रतिपालक
१७६	२०	वीकानेर	वाकानेर
२०५	६	२५०	२५००
२१६	३	वर्तमान आचार्य	तात्कालीन युवाचार्य

आ० गणेश द्वितीय खण्ड

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
१६	३०	दयावान	दयादान
४५	७	किन्तु मतभेद	किन्तु मनभेद
६३	१५	शेष जाएगा	शेष रह जाएगा
६०	८	दे	है
११३	३	घासीलालजी	गणेशीलालजी
१२०	२०	सश्रम	सक्षम

आ. नाना

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
३१	१	नामक	नायक
४०	५	युवाचार्य	युग प्रधान
४५	१	दगा	दगा
६०	१३	मोपल	गोपन
७४	१२	कोठी	कोठी
८५	१३	गण प्रमुख किन्तु	किन्तु गण प्रमुख
१०८	२१	उन्होंने	उन्होंने

क्रान्तिपथ

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१६	सत्व	स्वत्व
६१	६	वह रास	वह ह्रास
६४	१	अब्रह्मचर्य	ब्रह्मचर्य
७६	१	फिर को क्रोध	फिर तो क्रोध को
७६	२१	हार	घर
८१	१४	मम रहित	भय रहित

आ०जवाहरलालजी

१६९	३	जाती थी ऐसी रूढि प्रचलित थी अब भी	पहले एक ऐसी रूढि प्रचलित थी और अब भी है कि



क्र०	नाम	ग्राम	माता	पिता
४४	श्री लीलावतीजी	निकुम्भ	झमकवाई	श्री मोतीलालजी
४५.	श्री कस्तूरकवरजी (द्वितीय)	पीपल्यामडी	राजीवाई	श्री पन्नालालजी
४६.	श्री हुलासकवरजी	चिकारडा	गट्टूवाई	श्री फूलचन्दजी
४७	श्री ज्ञानकवर (द्वितीय)	मालदामाडी	घीसीवाई	श्री चम्पालालजी
४८.	श्री विरदीकवरजी	वीकानेर	चुन्नीवाई	श्री रावतमलजी
४९	श्री ज्ञानकवरजी (द्वितीय)	राणावास	धापूवाई	श्री वीरमानजी
५०	श्री प्रेमलताजी (प्रथम)	सुरेन्द्रनगर	जवेरीवहिन	श्री चमनभाईशा
५१	श्री इन्दुवालाजी	राजनांदगाव	कमलावाई	श्री भवरलालजी
५२	श्री गगावतीजी	डोगरगाव	गट्टूवाई	श्री हमीरमलजी
५३.	श्री पारसकवरजी	कलंगपुर	मोहीवाई	श्री हीरालालजी
५४.	श्री चन्दनवालाजी	पीपल्या	कस्तूरावाई	श्री अमरचन्दजी
५५.	श्री जयश्रीजी	मद्रास	पानीवाई	श्री हमीरमलजी
५६	श्री सुशीलाकवरजी (द्वितीय)	मालदामाडी	घीसीवाई	श्री चम्पालालजी
५७	श्री मगलाकवरजी	वडावदा	सूरजवाई	श्री सौभाग्यमल
५८	श्री शकुन्तलाजी	वीजा	प्यारीवाई	श्री सम्पतलालजी
५९	श्री चमेलीकवरजी	वीकानेर	राजकवरवाई	श्री किशनलालजी
६०	श्री सुशीलाकवरजी (तृतीय)	वीकानेर	फत्तावाई	श्री सन्तोषचन्दजी
६१.	श्री चन्द्राकवरजी	रतलाम	सज्जनवाई	श्री सुगनचन्दजी
६२.	श्री कुसुमलताजी	मन्दसौर	मोहनवाई	श्री चान्दमलजी
६३.	श्री प्रेमलताजी	मन्दसौर	मोहनवाई	श्री चान्दमलजी
६४.	श्री विमला कवरजी	पीपल्या	कचनवाई	श्री चान्दमलजी
६५.	श्री कमलाकवरजी	जेठाना	गवरावाई	श्री नौरतमलजी
६६	श्री पुष्पलताजी	वडीसादडी	सज्जनवाई	श्री चम्पालालजी
६७.	श्री सुमतिकवरजी	वडीसादडी	मोसरवाई	श्री प्यारीमानजी

गोत्र	पति	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
मोगरा	श्री शोभालालजी	स २०२० फा०शु० २	निकुम्भ
मेहता	श्री अमरचन्दजी	स २०२० वै०शु० ३	पीपल्यामण्डी
चण्डालिया	श्री दीपचन्दजी	स २०२१ वै०शु० १०	चिकारडा
मुणोत	बालब्रह्मचारिणी	स २०२१ आ०शु० ८	पीपलियाकला
सेठिया	श्री आसकरणजी	स २०२३ वै०शु० ८	बीकानेर
मुणोत	श्री हजारीमलजी	स २०२३ आ०शु० ४	राजनादगाव
कोठारी	बालब्रह्मचारिणी	स, २०२३ आ०शु० ४	,
श्रीश्रीमाल	"	स २०२३ आ०शु० ४	"
लोढा	श्री भीकमचन्दजी	स. २०२३ मि०शु० १३	डोगरगाव
पोरख	श्री जीवनलालजी	स २०२३ मि०शु० १३	"
पोमेचा	बालब्रह्मचारिणी	स. २०२३ मा०शु० १०	पीपल्यामण्डी
सेठिया	श्री धर्मचन्दजी	स. २०२३ फा०कृ० ६	रायपुर
मुणोत	बालब्रह्मचारिणी	स २०२४ मा०शु० २	जावरा
सांड	"	स. २०२४ मा०शु १	दुर्ग
मांखला	"	स. २०२४ मि०कृ० ६	दुर्ग
गोलेच्छा	श्री आसकरणजी	स २०२५ फा०शु० ५	बीकानेर
वैद	बालब्रह्मचारिणी	सं २०२५ फा०शु० ५	"
फिरोदिया	श्री कान्तिलालजी	स २०२६ वै०शु ७	ब्यावर
कुदाल	बालब्रह्मचारिणी	स २०२६ आ०शु० ४	मन्दसौर
कुदाल	बालब्रह्मचारिणी	सं. २०२६ आ०शु० ४	"
धांगावत	"	स. २०२७ का०कृ० ८	बड़ीसादडी
लोढा	श्री रणजीतमलजी	स. २०२७ का०कृ० ८	बडीसादडी
जारोली	श्री मूलचन्दजी	सं. २०२७ का०कृ० ८	"
मुणोत	बालब्रह्मचारिणी	सं २०२७ का०कृ० ८	"

क्र०	नाम	ग्राम	माता	पिता
१३९	श्री पंकजश्रीजी	बीकानेर	कंचनदेवी	श्री लूणकरणज
१४०.	श्री मधुश्रीजी	इन्दौर	पारसबाई	श्री सोहनलालज
१४१.	श्री पूर्णिमाश्रीजी	बड़ीसादड़ी	चौरसबाई	श्री श्यानीरामस
१४२	श्री प्रवीणाश्रीजी	मन्दसौर	कलावतीबाई	श्री सागरमलज
१४३	श्री दर्शनाश्रीजी	देशनोक	कमलादेवी	श्री जयचन्दजी
१४४	श्री वन्दाश्रीजी	गंगाशहर	आणादेवी	श्री किशनमलज
१४५	श्री प्रमोदश्रीजी	ब्यावर	नजरादेवी	श्री रतनलालज
१४६	श्री उर्मिलाश्रीजी	रायपुर	सोनीबाई	श्री नथमलजी
१४७	श्री सुभद्राश्रीजी	बीकानेर	ममलादेवी	श्री किशनचन्दज
१४८	श्री हेमप्रभाश्रीजी	केसींगा	मानीबाई	श्री हुलसीचन्दज
१४९.	श्री ललितप्रभाजी	बिनोता	—	श्री भंवरलालज
१५०.	श्री वसुमतीजी	अलाय	रतनबाई	श्री पूनमचन्दज
१५१	श्री इन्द्रप्रभाश्रीजी	बीकानेर	कमलादेवी	श्री केशरीचन्दज
१५२.	श्री ज्योतिप्रभाश्रीजी	गंगाशहर	धापूदेवी	श्री सूरजमलजी
१५३	श्री रचनाश्रीजी	उदयपुर	—	श्री मदनलालज
१५४.	श्री रेखाश्रीजी	जोधपुर	विमलादेवी	श्री पारसमलजी
१५५	श्री चित्राश्रीजी	नोहावट	—	श्री सम्पतलालज
१५६.	श्री लघिमाश्रीजी	गंगाशहर	सुन्दरदेवी	श्री धूडचन्दजी
१५७	श्री विद्यावतीजी	सवाईमाधोपुर	—	श्री बाबूलालजी
१५८.	श्री चित्ताश्रीजी	बिनोता	—	श्री नक्षत्रमलजी
१५९.	श्री जिनप्रभाश्रीजी	राजनांदगांव	हेलाबाई	श्री राजमलजी
१६०.	श्री समिताश्रीजी	रतलाम	सूरजबाई	श्री हस्तीमलजी
१६१.	श्री विनयश्रीजी	दुरखसान	रेशमीदेवी	श्री गेन्दमलजी
१६२.	श्री श्वेताश्रीजी	फेफाना	सम्पतबाई	श्री मोतीलालज

गोत्र	पति	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
सुखाणी	बालब्रह्मचारिणी	स. २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
सुराणा	"	स २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
मुणोत	"	स २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
पोरवाड	"	स २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
छल्लाणी	"	स. २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
सोनावत	"	स २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
कोठारी	"	स २०३६ चै०शु० १५	ब्यावर
भावक	"	स २०३७ जे०शु० ३	बुसी
पुंगलिया	"	स २०३७ आ०शु० ११	राणावास
वरड़िया	"	स २०३७ आ०शु० ३	राणावास
डोसी	"	स २०३८ वै०शु० ३	गगापुर
सकलेचा	"	स २०३८ आ०शु० ८	मलाय
बोथरा	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
छाजेड़	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
गादिया	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
सकलेचा	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
कोठारिया	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
बोथरा	"	स २०३८ का०शु० १२	उदयपुर
पोरवाल	"	स २०३८ मि०शु० ६	हिरणमगरी
लोढा	"	सं २०३८ मा०कृ० ३	बम्बोरा
गिडिया	"	स. २०३९ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
श्रीश्रीमाल	"	स २०३९ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
सांखला	"	स. २०३९ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
सुराणा	"	स २०३९ चै०कृ० ३	अहमदाबाद

गोत्र	पति	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
ीश्रीमाल	बालब्रह्मचारिणी	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
द	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
चा	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
हर	,,	स. २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
ोस्तवाल	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
ण्डालिया	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
साली	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
नगुलिया	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
,,	,,	स २०३६ चै०कृ० ३	अहमदाबाद
मलाणी	पारसमलजी कवाड	स २०४० आ०सु० २	भावनगर
ीम	बालब्रह्मचारिणी	स. २०४० आ०सु० २	भावनगर
्वा	,,	स २०४० आ०सु० २	भावनगर
	,,	सं २०४० आ०सु० २	भावनगर
गलिया	सूरणकरणजी बाठिया	सं. २०४० फा०सु० २	रतलाम
नवामा	बालब्रह्मचारिणी	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
न	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
्सारणी	,,	सं २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाधी	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ी	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाली	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाक्षा	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाणी	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
लिया	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाते	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम

क्र०	नाम	ग्राम	माता	पिता	थान
१८७.	श्री सुयशमणिजी	गम्भसहर	रतनीवाई	श्री मेघराजज	व्यावर
१८८.	श्री चित्तरजनाजी	रतलाम	रोशनवाई	श्री रखबचन्द	व्यावर
१८९.	श्री मुक्ताश्रीजी	बीकानेर	पुष्पावाई	श्री लूणकरए	व्यावर
१९०.	श्री सिहमणिजी	वेंगू	सोहनवाई	श्री शातिला	व्यावर
१९१.	श्री रजमणिश्रीजी	बगुमुण्डा	शातिदेवी	श्री नुनियाम	व्यावर
१९२.	श्री अर्पणाश्रीजी	कानोड	कमलादेवी	श्री गुलावचन्द	व्यावर
१९३.	श्री मजुलाश्रीजी	भीनासर	जेठीदेवी	श्री तोलाराम	व्यावर
१९४	श्री गरिमाश्रीजी	चौथका बरवाडा	प्रभादेवी	श्री दौलतरा	बुसी
१९५	श्री हेमश्रीजी	नोखामण्डी	भवरीवाई	श्री रुगलाल	णावास
१९६.	श्री कल्पमणिजी	पीपलिया	प्रभादेवी	श्री सुन्दरला	णावास
१९७.	श्री रविप्रभाजी	जावरा	कान्तावाई	श्री छगनलाल	गगापुर
१९८.	श्री मयकमणिजी	पीपलिया मडी	घीसीबाई	श्री कन्हैयाल	मलाय
					उदयपुर
					उदयपुर
					उदयपुर
					उदयपुर
					उदयपुर
					उदयपुर
					णमगरी
					म्बोरा
					मदाबाद
					मदावाद
					मदावाद
					मदाबाद

क्र०	नाम	ग्राम	माता	पिता
१६३	श्री गुचिताश्रीजी	रतलाम	सूरजबाई	श्री हस्तीमलजी
१६४	श्री मणिप्रभाश्रीजी	गगाशहर	रेवन्तीबाई	श्री भवरलालजी
१६५	श्री सिद्धप्रभाजी	नागोर	मीराबाई	श्री जवरीलालजी
१६६	श्री नम्रताश्रीजी	जगदलपुर	जमुनाबाई	श्री उत्तमचन्दजी
१६७	श्री सुप्रतिभाश्रीजी	राजनांदगाव	शातिबाई	श्री आशकरणजी
११८.	श्री मुक्ताश्रीजी	कपासन	सावरबाई	श्री मोहनलालजी
१६६	श्री विशालप्रभाजी	गगाशहर	कमोलबाई	श्री मूलचन्दजी
१७०.	श्री कनकप्रभाजी	बीकानेर	मगलाबाई	श्री गुलाबचन्दजी
१७१.	श्री सत्यप्रभाजी	"	"	"
१७२.	श्री रक्षिताश्री	पाली	भीकीबाई	श्री जमराजजी
१७३.	श्री महिमाश्रीजी	अहमदाबाद	जव्वरबाई	श्री सम्पतलालजी
१६४	श्री मृदुलाश्रीजी	वैशालीनगर	प्रेमलताबाई	श्री समर्थमलजी
१७५.	श्री वीणाश्रीजी	"	"	"
१७६	श्री प्रेरणाश्रीजी	बीकानेर	राजकवरबाई	श्री इन्द्रचन्दजी
१७७	श्री गुणरजनाश्रीजी	उदयपुर	मोरमबाई	श्री मदनलालजी
१७८.	श्री सूर्यमणिजी	मन्दसौर	सागरबाई	श्री समरथमलजी
१७६	श्री सरिताश्रीजी	कलकत्ता	रतनदेवी	श्री डूगरमलजी
१८०.	श्री सुवर्णाश्रीजी	रतलाम	चन्दाबाई	श्री नाथलालजी
१८१	श्री निरुपणाश्रीजी	उदयपुर	जतनकुवरबाई	श्री दयालालजी
१८२.	श्री शिरोमणिश्रीजी	डोंडीलोहारा	कमलादेवी	श्री हजारीमलजी
१८३	श्री विकासप्रभाजी	बीकानेर	कचनदेवी	श्री सुलतानचन्दजी
१८४	श्री सरलताजी	चित्तौड़	मोहनकवरबाई	श्री भवरलालजी
१८५	श्री करुणाश्री	मोढी	सौभाग्यबाई	श्री सूरजमलजी
१८६.	श्री प्रभावनाश्रीजी	बड़ागेडा	दाखबाई	श्री मिश्रीलालजी

	गोत्र	पति	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
	लूणावत	वालब्रह्मचारिणी	स २०४० फा०मु० २	रतलाम
ो	पिरोदिया	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ी	वाठिया	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
ी	पोखरणा	,,	म २०४० फा०सु० २	रतलाम
जी	गग	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
जी	भाणावत	,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
ो	सेठिया	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
जी	पोरवाल	,,	स २०४० फा०सु० २	रतलाम
ो	काकरिया	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ाजी	कछारा	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
जी	काठड	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम
ा	पीतलिया मण्डी	,,	स. २०४० फा०सु० २	रतलाम

